प्राचीन भारत का ऐतिहासिक भूगोल

HISTORICAL GEOGRAPHY OF ANCIENT INDIA

मूल लेखक—

बिमल चरण लाहा

BIMAL CHURN LAW

एम० ए०, एल०, एल०, बी०,
पी० एच० डी०, डी०, लिट्०

भूमिका लेखक—

प्रोफेसर लुई रेनो

अनुवादक—

राम कृष्ण द्विवेदी

प्राचीन इतिहास, पुरातत्व एवं संस्कृति विभाग
इलाहाबाद विश्वविद्यालय
इलाहाबाद—2

उत्तर प्रदेश हिंदी ग्रंथ अकादमी

लखनऊ

प्रथम संस्करण

1972.

पुस्तक-क्रम संख्या 15

मूल्य : 15.00

प्रकाशक
उत्तर प्रदेश हिंदी ग्रंथ अकादमी
लखनऊ.

मुद्रक
इलाहाबाद लॉ जर्नल प्रेस
इलाहाबाद.

प्राक्कथन

शिक्षा आयोग (1964-66) की संस्तुतियों के आधार पर भारत सरकार ने 1968 में शिक्षा संबंधी अपनी राष्ट्रीय नीति घोषित की और 18 जनवरी, 1968 को संसद के दोनों सदनों द्वारा इस संबंध में एक संकल्प पारित किया गया। उस संकल्प के अनुपालन में भारत सरकार के शिक्षा एवं युवक सेवा मंत्रालय ने भारतीय भाषाओं के माध्यम से शिक्षण की व्यवस्था करने के लिए विश्वविद्यालय स्तरीय पाठ्य-पुस्तकों के निर्माण का एक व्यवस्थित कार्य-क्रम निश्चय किया। उस कार्य-क्रम के अंतर्गत भारत सरकार की शतप्रतिशत सहायता से प्रत्येक राज्य में एक ग्रंथ अकादमी की स्थापना की गई। इस राज्य में भी विश्वविद्यालय-स्तर की प्रमाणिक पाठ्य पुस्तकें तैयार करने के लिए हिन्दी ग्रंथ अकादमी की स्थापना 7 जनवरी, 1970 को की गई।

प्रमाणिक ग्रंथ निर्माण की योजना के अंतर्गत यह अकादमी विश्वविद्यालय स्तरीय विदेशी भाषाओं की पाठ्य पुस्तकों को हिंदी में अनूदित करा रही है और अनेक विषयों में मौलिक पुस्तकों की भी रचना करा रही है। प्रकाश्य ग्रंथों में भारत सरकार द्वारा स्वीकृत पारिभाषिक शब्दावली का प्रयोग किया जा रहा है।

उपर्युक्त योजना के अंतर्गत वे पांडुलिपियाँ भी अकादमी द्वारा मुद्रित कराई जा रहीं हैं जो भारत सरकार की मानक ग्रंथ योजना के अंतर्गत इस राज्य में स्थापित विभिन्न अभिकरणों द्वारा तैयार की गई थीं।

प्रस्तुत पुस्तक मूल रूप में अंग्रेजी में डा० बी० सी० लाहा ने लिखी थी। यह बहुत ही विद्वतापूर्ण और प्रमाणिक संदर्भ ग्रंथ है। विद्वान् लेखक ने प्राचीन भारतीय ऐतिहासिक स्थानों की पुरानी और आधुनिक स्थिति अनेक स्रोतों से संग्रह की है। संस्कृत के महाकाव्यों, पुराणों आदि से पुराने नामों के बारे में सूचनाएँ मिलती हैं। फिर शिला लेखों, ताम्र पत्रों, अभिलेखों आदि से भी इन स्थानों के बारे में थोड़ी-बहुत जानकारी प्राप्त होती है। विशाल बौद्ध और जैन साहित्य में भी उनका उल्लेख मिलता है और अनेक विदेशी लेखकों के संस्मरणों से भी उनकी जानकारी प्राप्त होती है। इन सारे बिखरे हुए स्रोतों से सामग्री संकलन करना, उनके परस्पर विरुद्ध लगने वाले अंशों की विसंगति

का कारण खोजना और सुविचारित निष्कर्षों पर पहुँचना बहुत कठिन कार्य है। डा० बी० सी० लाहा ने बड़ी सूझ-बूझ और कुशलता के साथ इन प्राचीन भौगोलिक नामों का इतिवृत्त भी बताया है और आधुनिक नामों से उनको पहचानने का भी प्रयत्न किया है। इस विषय में अब भी निरंतर शोध जारी है। इसलिए कुछ स्थानों के बारे में नई जानकारी के आलोक में थोड़ा बहुत मतभेद होने की संभावना है, परन्तु फिर भी यह पुस्तक विद्वानों में प्रमाणित रूप में अब भी उतना सम्मान पाती है जितना किसी अन्य समय पाती थी। उसका अनुवाद श्री रामकृष्ण द्विवेदी ने किया है। उत्तर-प्रदेश हिंदी ग्रंथ अकादमी लेखक और अनुवादक दोनों ही विद्वानों के प्रति आभारी हैं। आशा है कि इस पुस्तक के प्रकाशन से प्राचीन भारतीय एवं पुरातत्व के गंभीर अध्ययन को बल मिलेगा।

डा० रामकुमार वर्मा के कार्य-काल में ही यह पुस्तक प्रेस में दे दी गई थी। प्रकाशित अब हो रही है। इसे मुद्रणोचित रूप देने में भाषा एवं विषय-संपादन का कार्य डॉ० यू० एन० राय ने किया है।

हजारी प्रसाद द्विवेदी
अध्यक्ष
शासी मंडल
उत्तर-प्रदेश हिंदी ग्रंथ अकादमी

"शिक्षा तथा समाज कल्याण मंत्रालय, भारत सरकार की विश्वविद्यालय ग्रंथ
योजना के अंतर्गत उ० प्र० हिंदी ग्रंथ अकादमी द्वारा प्रकाशित"

श्री बिमल चरण लाहा डी ला सोसायटे आशियाटीके डी पारीस के अवैतनिक सदस्य; रायल एशियाटिक सोसायटी ऑव ग्रेट ब्रिटेन व आयरलैंड के सदस्य; रायल एशियाटिक सोसायटी, लंकाशाखा के अवैतनिक सदस्य; रायल एशियाटिक सोसायटी ऑव बंगाल के फेलो एवं ट्राइब्स इन ऐश्येंट इंडिया; हिस्ट्री ऑव पालि लिटरेचर; ज्यॉग्रेफी ऑव अर्ली बुद्धिज्म्; ज्यॉग्रेफिकल एसेज; द मगधाज इन ऐश्येंट इंडिया आदि ग्रंथों के लेखक थे।

भूमिका

श्री बिमल चरण लाहा की कृतियाँ, जिनकी गणना करना प्रायः असंभव है, अधिकांशतया भारत के प्राचीन ग्रंथों में संनिहित भूगोल, इतिहास और समाज-विषयक प्रायः सभी ठोस सूचनाओं के युक्तियुक्त वर्गीकृत संकलन प्रस्तुत करती हैं। साहित्यिक एवं धार्मिक स्रोतों में प्रारंभिक तथ्यों के प्रति की गयी विकृतियों पर जब हम विचार करते हैं, तब यह प्रयास सुगम नहीं प्रतीत होता है। लेखक-गण अपने समक्ष विद्यमान इन तथ्यों को एक पौराणिक परिवेश देने का लोभ-संवरण नहीं कर पाये हैं।

एकमात्र इसी कारणवश इन तथ्यों का विश्लेषण एवं वर्गीकरण अत्यावश्यक है। अध्ययन की अनेक दृष्टियों के बावजूद कभी-कभी अपरिपक्व कृति, समन्वय एवं किसी प्रणाली के प्रति बिना किसी पूर्वाग्रह के स्रोतों का संकलन अपरिहार्य बन जाता है। श्री बिमल चरण लाहा के रूप में इस कार्य को संपादित करने के लिए एक अध्यवसायी एवं सुयोग्य लेखक मिला है, जिसमें प्रकल्पना-शील और इस कार्य का बीड़ा उठाने का उत्साह है। उन्होंने विशेष रूप से बौद्ध स्रोतों पर ध्यान दिया है जो इस विषय में अधिक मुखर हैं।

प्रस्तुत ग्रंथ में एतद्विषयक उनकी पूर्वकालिक कृतियों का सार समाविष्ट है और साथ ही बहुत सारी नूतन सामग्री भी प्रस्तुत की गयी है। संक्षेप में उसमें वेदों से लेकर सबसे बाद के पुराण तक, तथा भारतीय विद्या के सूत्रपात के समय से आजकल ज्ञात उन सभी सूचनाओं की उपेक्षा किये बिना जैन एवं बौद्ध आगम-ग्रंथों, महाकाव्यों, स्मृतियों और संस्कृत पुरालेखों तथा यूनानी इतिहास या भूगोल-वेत्ताओं, चीनी तीर्थयात्रियों एवं अरब यात्रियों के विवरणों से प्राप्त सूचनाओं का समाहार है, जिनके अभिनव अन्वेषण के परिणामस्वरूप प्रायः अलग-अलग ग्रंथ बन जाते हैं। इसमें इस संपूर्ण लिखित सामग्री का समावेश हुआ है।

श्री बि० च० लाहा ने यह कामना व्यक्त की है कि यह पुस्तक पेरिस की एशियाटिक सोसायटी के तत्वावधान में प्रकाशित हो। सोसायटी प्रसन्नतापूर्वक इसका स्वागत करती है।

लुई रेनो
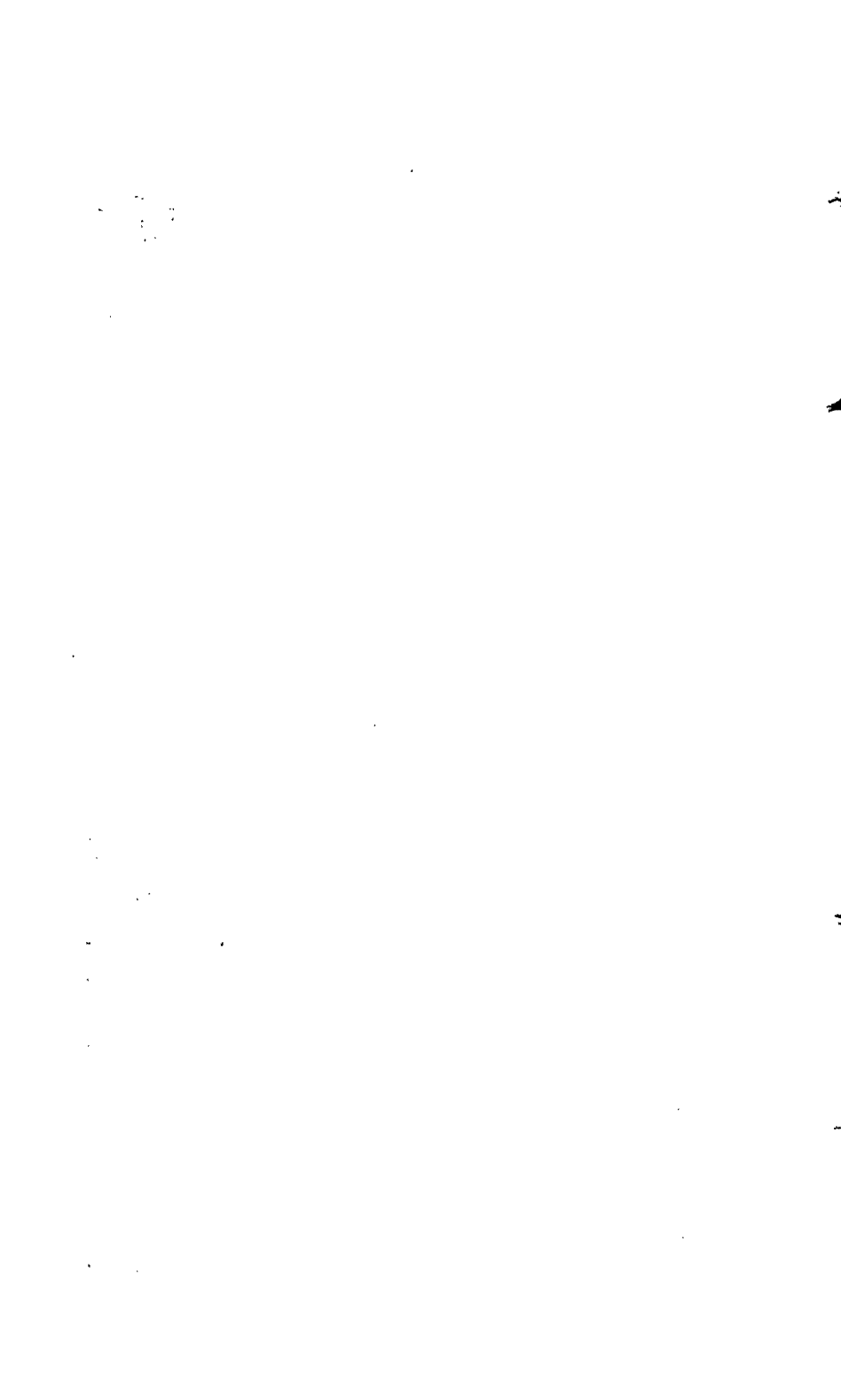
लेखक का वक्तव्य

प्राचीन भारत के एक क्रमबद्ध और सर्वांगसंपन्न ऐतिहासिक-भूगोल की निस्संदेह अत्यधिक आवश्यकता है। पुरालिपि से प्राप्त तथ्य सामग्री पर आधारित इस प्रकार के भूगोल को पूरा करने के उद्देश्य से मैंने यह पुस्तक जो मेरे प्राचीन भारतीय भूगोल के सतत् अध्ययन का फल है, प्रस्तुत करने का प्रयास किया है। मैंने भौगोलिक नामों को वर्णानुक्रम से रखा है और यथोचित वर्ग के अंतर्गत् उनका पूर्ण विवरण दिया है। मैंने संस्कृत (वैदिक और लौकिक), पालि, प्राकृत, सिंहली, बर्मी, तिब्बती और चीनी मूल ग्रंथों का उपयोग किया है और पुरालिपि, पुरातत्त्व, मुद्राशास्त्र, यूनानी पर्यटकों और चीनी तीर्थ-यात्रियों के विवरणों जैसे अन्य अनेक स्रोतों से अमूल्य सहायता प्राप्त की है। विषय से संबद्ध आधुनिक साहित्य तथा गवेषणाओं पर भी यथोचित ध्यान दिया गया है। इस दिशा में सर एलेग्ज़ेंडर कनिंघम, सर विलियम जोंस, लास्सेन, वीवियन द सेंट मार्टिन, स्टानिस्लास जूलियन, बुकेनन हैमिल्टन, मैकेंजी, सर आरेल स्टाइन, किर्फेल, दे, एस० एन० मजुमदार, राय चौधरी तथा अन्य विद्वानों के अनुसंधान अवधारणीय हैं परंतु, इन्हें पूर्ण तथा अद्यतन बनाने के लिए इनका सावधानी से पुनर्निरीक्षण आवश्यक है। मेरे पिछले प्रकाशनों ने इस विस्तृत ग्रंथ के प्रणयन में मुझे अत्यधिक सहायता दी है। निस्संदेह, यह कार्य कठिनाइयों से पूर्ण है, परंतु मैंने इन्हें दूर करने की भरसक चेष्टा की है। मैंने अपने विषय-प्रतिपादन को क्रम-बद्ध, पूर्ण विशद्, तथा उपयोगी बनाने में कोई प्रयत्न उठा नहीं रखा है। पाठकों के निर्देश के लिये इस पुस्तक में तीन रेखा-मानचित्र दिये गये हैं। यदि यह पुस्तक प्राचीन भारतीय भूगोल के अनुसंधान में प्रवृत्त भूगोल-वेत्ताओं के लिए अत्यधिक सहायक हो, तो मैं अपने परिश्रम को पुष्कल रूप से पुरस्कृत समझूँगा। पुस्तक की प्रस्तावना के लिए मैं प्रो० लुई रेनो का अत्यधिक आभारी हूँ। पेरिस की 'द सोसाएती आशिआतिक' ने इस पुस्तक को अपना प्रकाशन बनाना स्वीकार कर मुझे अपना चिर ऋणी बना दिया है।

43 कैलास बोस स्ट्रीट,
कलकत्ता–6, भारत
1 अगस्त, 1954.

बि० च० लाहा

संक्षेपण

आर्क्० स० इं०	आर्क्यॉलॉजिकल सर्वे ऑव इंडिया
आर्क्० स० रि०	आर्क्यॉलॉजिकल सर्वे रिपोर्ट
आर्क्० सं० इं० रि०	आर्क्यॉलॉजिकल सर्वे रिपोर्ट ऑव इंडिया, रिपोर्ट
अ० भं० ओ० रि० इं०	अनल्स ऑव भंडारकर ओरियंटल रिसर्च इंस्टीट्यूट
आर्क्० स० वे० इं०	आर्क्यॉलॉजिकल सर्वे ऑव वेस्टर्न इंडिया
आर्क्० स० वे० स०	आर्क्यॉलॉजिकल सर्वे ऑव वेस्टर्न सर्किल
अ० हि० इं०	अर्ली हिस्ट्री ऑव इंडिया-
इं० ऐं०	इंडियन ऐंटिक्वेरी
इं० हि० क्वा०	इंडियन हिस्टॉरिकल क्वार्टर्ली
इं० क०	इंडियन कल्चर
एपि० इं०	एपिग्रेफिया इंडिका
एपि० क०	एपिग्रेफिया कर्नाटिका
ऐं० ज्यॉ० इं०	ऐंश्येंट ज्यॉग्रफी ऑव इंडिया
ऐं० इं० हि० ट्रे०	ऐंश्येंट इंडियन हिस्टॉरिकल ट्रेडिशन
ए० रि० आर्क्० स०	ऐनुअल रिपोर्ट ऑव द आर्क्यॉलॉजिकल सर्वे
क्वा० ज० मि० सो०	क्वार्टली जर्नल ऑव मिथिक सोसायटी
का० इं० इं०	कार्पस इंस्क्रिप्शनम् इंडिकेरम
कैं० हि० इं०	कैंब्रिज हिस्ट्री ऑव इंडिया
ज० ए० सो० बं०	जर्नल एशियाटिक सोसायटी बंगाल
ज० रा० ए० सो०	जर्नल रायल एशियाटिक सोसायटी
ज० रा० ए० सो० बं०	जर्नल रायल एशियाटिक सोसाइटी बंगाल
ज० पं० हि० सो०	जर्नल पंजाब हिस्टॉरिकल सोसाइटी
ज० बां० ब्रां० रा० ए० सो०	जर्नल बांबे ब्रांच ऑव रायल एशियाटिक सोसायटी
ज० बि० उ० रि० सो०	जर्नल बिहार उड़ीसा रिसर्च सोसायटी
ज० इं० हि०	जर्नल इंडियन हिस्ट्री

ज० यू० पी० हि० सो०	जर्नल ऑव यू० पी० हिस्टॉरिकल सोसायटी
ज० इं० सो० ओ० आ०	जर्नल इंडियन सोसाइटी ऑव ओरियंटल आर्ट
तु०	तुलनीय
ने० बु० लि०	नेपालीज़ बुद्धिस्ट लिटरेचर
पृ०	पृष्ठ
पृ० सं०	पृष्ठ संख्या
पा० टि०	पाद टिप्पणी
पा० टे० सो०	पालि टेक्स्ट्स सोसायटी
पो० हि० ऐं० इं०	पोलिटिकल हिस्ट्री ऑव ऐंश्येंट इंडिया
बु० स्कू० ओ० अ० स्ट०	बुलिटिन ऑव द स्कूल ऑव द ओरियंटल ऐंड अफ्रीकन स्टडीज़
म० एपि० रि०	मद्रास एपिग्रेफिकल रिपोर्ट
मे० आर्क्० स० इं०	मेमायर्स ऑव आर्क्यॉलॉजिकल सर्वे ऑव इंडिया
सा० इं० इं०	साउथ इंडियन इंस्क्रिप्शंस
सै० बु० ई०	सैक्रेड बुक ऑव द ईस्ट
सं०	संख्या

विषयानुक्रम

प्राचीन भारत
हिमालय पर्वत
सौराष्ट्र
मालव
दक्षिण कोसल
वनवासी
त्रिपुर
अंग्रेज़ी मील

प्रस्तावना

I. स्रोत

प्राचीन भारत के क्रमबद्ध भूगोल के पुनर्लेखन में वैदिक साहित्य, ब्राह्मण-ग्रंथों, उपनिषदों, धर्म-सूत्रों एवं धर्मशास्त्रों द्वारा हमें कुछ सहायता प्राप्त होती है। ऋग्वेद में उल्लिखित भौगोलिक नामों में केवल नदियों के नामों का ही सुगम एवं निश्चित समीकरण संभव है। प्राचीन भारत-विषयक भौगोलिक सूचनाओं के हेतु महाकाव्यों एवं पुराणों को भी समृद्ध कोश के रूप में स्वीकार किया गया है। उनमें कुछ ऐसे भी अध्याय हैं जो न केवल भारत के विभिन्न भू-भागों का ही वरन् उसकी नदियों, पर्वतों, झीलों, वनों, मरुस्थलों, नगरों, देशों एवं जातियों का भी अपेक्षाकृत अधिक यथार्थ विवरण प्रस्तुत करते हैं। महाभारत के तीर्थ-यात्रा, दिग्विजय एवं जम्बूखण्ड-विनिर्माण पर्व तथा रामायण का किष्किन्ध्या काण्ड भौगोलिक सूचनाओं से संपन्न हैं। पुराणों के भुवन-कोष, जम्बूद्वीप वर्णन, कूर्मविभाग खण्ड, बृहत्संहिता, पराशरतंत्र और अथर्वपरिशिष्ट मूल्यवान भौगोलिक सूचनाओं के संकलन के लिए समानरूप से महत्त्वपूर्ण हैं। प्राचीन भारतीय भूगोल के अध्ययन के लिए पाणिनि की अष्टाध्यायी (IV, 1-173; 178; IV, 2-76; IV, 2-133; V. 3-116—117 आदि), पतञ्जलि का महाभाष्य, कौटिल्य का अर्थशास्त्र और योगिनीतंत्र कुछ कम उपादेय नहीं हैं।

विभिन्न पुराणों के भौगोलिक विवरण न्यूनाधिक समान हैं और एक पुराण के विवरण की पुनरावृत्ति प्रायः दूसरे में की गयी है। कुछ दशाओं में किसी विशद् विवरण को एक लघुत्तर विवरण के रूप में संक्षिप्त किया गया है। वायु, मत्स्य एवं मार्कण्डेय पुराणों की सूची बृहत् है, जब कि विष्णु पुराण की बहुत संक्षिप्त। देशों एवं जातियों की पौराणिक तालिकाएँ महाभारत में भी कभी-कभी अधिक विस्तृत रूप में प्राप्त होती हैं। महाभारत के भीष्मपर्व में (श्लोक संख्या, 317-78) दिया गया भारत देश का विवरण पुराणों के ब्यौरे के समान है, परंतु कुछ स्थितियों में अतिरिक्त सूचनाएँ भी समाहृत की जा सकती हैं। स्पष्ट है कि ये तालिकाएँ पूर्वकाल से चले आने वाले किसी परंपरागत् विवरण

का अनुसरण करके तैयार की गयी हैं। तथापि यह अवश्य स्वीकार किया जाना चाहिए कि ये विवरण यथार्थतः निर्दोष हैं। जैसा कि कनिंघम ने बतलाया है, कल्पना-तत्त्व नियमतः बाहरी देशों तक ही सीमित हैं और शुद्ध भारतीय स्थान-वृत्तों के प्रति उनके संकेत सामान्यतया संयत हैं।

विष्णु पुराण में दी गयी देशों की सूची अतीव संक्षिप्त है। बिना किसी क्रम के ही महाभारत में अपेक्षाकृत एक विस्तृत सूची प्राप्त होती है। पद्म पुराण की स्थिति भी यही है। फिर भी, भारत के देशों एवं जातियों की एक विशद् तालिका मार्कण्डेय, स्कन्द, ब्रह्माण्ड एवं वायु पुराणों में दी गयी हैं। मार्कण्डेय पुराण में जम्बूद्वीप तथा मेरु के चतुर्दिक् स्थित पर्वतों, वनों एवं झीलों का वर्णन दिया गया है। उसमें भारत के नौ खण्डों, सप्तपर्वत-मेखला और बाइस पृथक् पहाड़ियों का वर्णन किया गया है। इसमें गंगा नदी के प्रवाह-मार्ग तथा भारत की प्रसिद्ध नदियों का वर्णन, उनके स्रोतभूत पर्वत-मालाओं के आधार पर वर्गीकरण करते हुये किया गया है। पुराणों से प्राप्त अधिकांश देशों एवं जातियों के नाम मार्कण्डेय पुराण के नद्यादि-वर्णना खण्ड से उपलब्ध नामों से बहुत कुछ साम्य रखते हैं, किन्तु इसमें ऐसे नामों की भी एक बहुत बड़ी संख्या है, जो पूर्णतः नवीन एवं मौलिक हैं। मार्कण्डेय पुराण (अध्याय, 57), जिसमें वस्तुतः दूसरे प्रमुख पुराणों में वर्णित वास्तविक भौगोलिक सूचनाएँ संनिहित हैं, के कूर्मविभाग नामक खण्ड में भारत के देशों एवं जातियों की एक सूची है, जिसके चयन का आधार, देश (भारत) की कच्छप के रूप में की गयी परिकल्पना है जो विष्णु के ऊपर जल पर अवस्थित है और पूर्वाभिमुख है।[1] यह चयन पूर्वकालीन ज्योतिष-ग्रंथों तथा पराशर एवं वराहमिहिर की कृतियों पर आधृत है। यह अध्याय स्थान-वर्णन के दृष्टिकोण से अमूल्य है। भागवत पुराण में भी कुछ भौगोलिक सूचनाएँ संनिहित हैं। इस प्रकार हम यह देखते हैं कि प्राचीन भारत के भौगोलिक अध्ययन के लिए पुराण वास्तव में अत्यंत महत्त्वपूर्ण हैं।

असंख्य माहात्म्यों का भौगोलिक दृष्टिकोण से सतर्कतापूर्वक अध्ययन करना आवश्यक है। विशाल माहात्म्य-साहित्य में—जिसके अंतर्गत् पुराणों एवं संहिताओं के अंश संमिलित हैं—विविध तीर्थों की भौगोलिक विशेषताओं के वर्णन प्राप्त होते हैं। महत्त्वपूर्ण स्थानों की स्थिति-निर्णय के साक्ष्यों की दृष्टि से उनका बहुत अधिक भौगोलिक महत्त्व है। तीर्थों के पौराणिक इतिहास का

---

[1] यह अवधारणा भारत की भौगोलिक विशेषताओं संबंधी हमारे वर्तमान ज्ञान से पूर्णतः संगत है।

परिशीलन श्रम-साध्य है, किंतु किसी भूगोलवेत्ता के लिए यह कभी एक निष्फल अध्ययन नहीं होगा।

उत्तरकालीन संस्कृत साहित्य भौगोलिक सूचनाओं से संपन्न है। उदाहरणार्थ, राजशेखर की काव्यमीमांसा (पृ० 93) में भारत के परंपरानुगत् पाँच भागों का स्पष्टतया उल्लेख किया गया है। इसमें उत्कल, सुह्म, निषध तथा कश्मीर (अध्याय, 17), अङ्ग, वङ्ग, पुण्ड्र, वाल्हीक, पाञ्चाल और शूरसेन, आदि (अध्याय, 3) के विषय में उपयोगी भौगोलिक सूचनाएँ प्राप्त होती हैं। रघुवंश (चतुर्थ सर्ग, श्लोक, 35, 38), श्रीहर्ष द्वारा विरचित नैषधीयचरित (पंचमसर्ग, श्लोक, 50, 98), कालिदास के मेघदूत (पूर्वमेघ, श्लोक, 24, 25, 26), दण्डिन् के दशकुमारचरित '(षष्ट उच्छ्वास), बाणभट्ट के हर्षचरित (षष्टम् एवं सप्तम् उच्छ्वास) और धोयीकृत पवनदूत (27) का उपयोग हमारे भौगोलिक ज्ञान के लिए किया जा सकता है। कालिदास के भूगोल-ज्ञान का एक स्पष्ट वोध हम उनकी रचनाओं से प्राप्त कर सकते हैं।

बुद्ध एवं बुद्धोत्तरकालीन भारत का पूर्ण भौगोलिक चित्र प्रस्तुत करने के लिए निस्संदेह पालि साहित्य सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण है। लगभग बुद्धकाल से अशोक महान् के समय तक प्राचीन भारत की ऐतिहासिक एवं भौगोलिक सूचनाओं का मुख्य स्रोत निश्चय ही प्रारंभिक बौद्ध-साहित्य है, यत्र-तत्र जिसके पूरक जैन एवं ब्राह्मण साक्ष्य हैं। पूर्वकालीन बौद्ध साहित्य में विशुद्ध ऐतिहासिक या भौगोलिक प्रकार के पाठों या आख्यानों का नितांत अभाव है, तथापि यत्किंचित ऐतिहासिक या भौगोलिक सूचना जो उससे संकलित की जा सकती है, वह आनुषंगिक किंतु अत्यधिक विश्वसनीय है। इस प्रकार बुद्ध के आविर्भाव के पूर्व एवं पश्चात् भारतीय इतिहास एवं भूगोल के सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण अध्याय षोडश् महाजनपदों के उत्कर्ष एवं विपर्यय के इतिहास, भौगोलिक स्थिति तथा अन्य विवरणों के लिए जैनग्रंथ भगवती-सूत्र एवं महाभारत के कर्ण-पर्व से अनुपूरित पालि-ग्रंथ अंगुत्तर निकाय हमारी जानकारी का प्रमुख स्रोत है। बाद के युगों के लिए, जब कि हमारे पास प्रचुर अभिलेखीय, पुरातत्त्वीय तथा विशेषत: ब्राह्मण साहित्य के साक्ष्य, यूनानी एवं लैटिन भूगोलवेत्ताओं के विवरण तथा चीनी यात्रियों के वृत्तांत हैं— पालि एवं संस्कृत बौद्ध साहित्य में संनिहित भौगोलिक सूचनाएँ अतीव उपयोगी हैं।[1] कुछ भौगोलिक सूचनाएँ तिब्बती ग्रंथों से भी प्राप्त की जा सकती हैं।

---

[1] द्रष्टव्य, लाहा, ज्यॉग्रेफी ऑव अर्ली बुद्धिज्म् ऐंड ज्यॉग्रेफिकल एसेज़, प्रथम परिच्छेद।

पालि. पिटकों, विशेषतया विनय एवं सुत्त में बौद्धधर्म के क्रमिक प्रसार से संबंधित नगरों एवं स्थानों के प्रति प्रासंगिक उल्लेख प्राप्त होते हैं। वे मध्यदेश और उसके सीमांत पर स्थित प्रदेशों के विषय में प्रचुर सूचना प्रदान करते हैं। मिलिन्दपञ्हो और महावस्तु में—जो क्रमशः पालि और अतिविशिष्ट संस्कृत बौद्ध ग्रंथ हैं—अनेक महत्त्वपूर्ण भौगोलिक सूचनाएँ संनिहित हैं। पालि भाष्य, विशेषतः बुद्धघोष की टीकाएँ और लंका के वृत्तांत मुख्यतः दीपवंस एवं महावंस बौद्धों के भौगोलिक ज्ञान विषयक सूचनांश प्रदान करते हैं।

संस्कृत बौद्ध ग्रंथों में, तिथिक्रम में जो पालि ग्रंथों के बाद की रचनाएँ हैं, कुछ भौगोलिक सूचनाएँ प्राप्त होती हैं। उनमें काल्पनिक नगरों का, जो यथार्थ जगत् के अंग नहीं हैं—वर्णन पाया जाता है। उनमें उल्लिखित रत्नद्वीप एवं खण्डद्वीप जैसे देशों, बंधुमती एवं पुण्यवती जैसे नगरों एवं त्रिशंकु तथा धूमनेत्र जैसे पर्वतों के समीकरण की बहुत कम गुंजाइश है, और ये संस्कृत बौद्ध ग्रंथों में प्राप्त विवरणों में अभिव्याप्त आख्यानात्मक अंशों का अभिवर्धन करने में केवल सहायक हैं। संस्कृत बौद्ध ग्रंथ जो धार्मिक एवं दार्शनिक दृष्टिकोणों से अधिक महत्त्वपूर्ण हैं—किसी ऐतिहासिक या भौगोलिक कोटि की अधिक सूचनाएँ नहीं प्रकाश में लाते। महावस्तु में अधिकतर बुद्ध के जीवन का वर्णन किया गया है। ललितविस्तर एवं बुद्धचरितकाव्य में भी महात्मा बुद्ध के जीवन का ही वर्णन प्राप्त होता है। बोधिसत्वावदानकल्पलता में महात्मा बुद्ध के विगत जीवन से संबद्ध कई कहानियाँ दी गयी हैं, जब कि अशोकावदान में अशोक एवं उसके युग का वर्णन किया गया है। बहुत कम संस्कृत बौद्ध ग्रंथों का अधिक संपुष्टिकारक महत्त्व है। यथार्थतः वे भौगोलिक दृष्टि से विशिष्ट नहीं हैं। ये ग्रंथ अधिकतर छठवीं शती से लेकर बारहवीं-तेरहवीं शती ई० के मध्य लिखे गये थे। निस्संदेह धर्म के इतिहास के विषय में उनमें सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण तत्कालीन साक्ष्य संनिहित हैं, किंतु भौगोलिक दृष्टि से वे सुदूर भूत का वर्णन करते हैं, क्योंकि छठवीं, सातवीं शती ई० तक प्रमुख भागों एवं उपभागों, नगरों, देशों, प्रांतों, नदियों, पहाड़ों आदि सहित संपूर्ण भारतवर्ष से यहाँ के निवासी बहुत व्यापक रूप से परिचित हो चुके थे। तत्कालीन अभिलेखीय, साहित्यिक एवं स्मारकों के साक्ष्य नाना भौगोलिक विवरणों की सूचनाओं से परिपूर्ण हैं। अपिच्, उक्त शताब्दियों में, भारतीयों ने अपने राजनीतिक, सांस्कृतिक एवं व्यापारिक बहिपद एवं उपनिवेश, न केवल सुवर्णभूमि (अवर बर्मा) में ही वरन् जावा, सुमात्रा, चम्पा एवं कम्बोज में भी स्थापित किये थे। उनके पुरोहितों एवं धर्म-प्रचारकों ने संस्कृत बौद्ध ग्रंथों के साथ पहले ही चीन एवं मध्य-एशिया की यात्रा की थी।

परंतु उनमें अपेक्षाकृत अतिव्यापक भौगोलिक ज्ञान एवं तद्युगीन दृष्टिकोण का कोई आभास प्राप्त करना दुष्कर है। यहाँ तक कि भारतवर्ष की भी तत्कालीन भौगोलिक सूचनाएँ उनमें पूर्णरूप से निरूपित नहीं हो सकी हैं।

आदि जैनग्रंथों में भौगोलिक एवं स्थान-वृत्त संबंधी अनेक उल्लेख प्राप्त होते हैं। अचारांग-सूत्र, भगवतीवियाह-पण्णत्ति, नायाधम्मकहाओ, उवासगदसाओ, अन्तगडदसाओ, अणुत्तरोववैया-दसाओ, पण्हावागरनैम, विवाग-सूय, ओववैय-सूत्र, रायपसेनैय-सूय पण्णवणा, जम्बुद्दीवपण्णत्ति, निरयावलिय-सूय, निसीह एवं महानिसीह-सूय, कल्प, उत्तराध्ययन और आवश्यक सूत्रों में भौगोलिक सामग्री संनिहित है। जैनियों के छठवें उपांग जम्बुद्दीवपण्णत्ति में जम्बूद्वीप एवं भारतवर्ष का वर्णन प्राप्त होता है। इसमें जम्बूद्वीप के सात मुख्य खण्डों के अवयवरूप सप्तवर्षों या देशों का वर्णन किया गया है। यद्यपि इसमें हमें जैनियों के पौराणिक भूगोल का वर्णन मिलता है, तथापि इसमें प्राचीन भारत के भूगोल-शास्त्रियों के लिए बहुत कुछ मूल्यवान सामग्री प्राप्य है। निस्संदेह यह भूगोल-विषयक एक रोचक जैनग्रंथ है और इसका अध्ययन विविध-तीर्थकल्प के साथ किया जाना चाहिए, जिसकी गणना जैन-शास्त्रों में नहीं की जाती। जिनप्रभुसूरि के विविधतीर्थकल्प में तथ्य-मिश्रित आख्यान हैं। अवितथ भौगोलिक चित्र प्रस्तुत करने के लिए तथ्य को कल्पना से पृथक् करने में बहुत सतर्कता बरती जानी चाहिए।[1]

अशोक के, एवं उड़ीसा के खण्डगिरि तथा उदयगिरि से प्राप्त अभिलेख भी हमारी प्रचुर सहायता करते हैं। कभी-कभी मुद्राएँ भी हमें किसी जाति या राष्ट्र-विशेष का स्थान-निर्धारण करने में सहायक सिद्ध होती हैं। उदाहरणार्थ, चित्तौड़ से ग्यारह मील दूर उत्तर में नागरी नामक एक छोटे से कस्बे से प्राप्त कुछ ताम्र-मुद्राओं से हमें सिवि जातक में वर्णित राजा सिवि के राज्य की स्थिति ज्ञात करने में योग मिलता है।

प्राचीन यूनानी एवं लैटिन भूगोल-वेत्ताओं में मिलेटस-वासी हिकेटियस (ई० पू० 549-486) प्रथम यूनानी भूगोलशास्त्री था जो पारसीक साम्राज्य की सीमा सिन्धु नदी के पार के देशों से परिचित नहीं था। अपर-सिंधु नदी पर स्थित गंधारि नामक जाति से उसका परिचय था। सीमांत पहाड़ियों के निवासी अन्य भारतीय जनों के नामों से वह अवगत था (कैंब्रिज हिस्ट्री ऑव इंडिया, प्रथम भाग, 394)। हेरोडोटस (484-431 ई० पू०) ने भारत के विषय में लिखा

---

[1] **लाहा, सम जैन कैनॉनिकल सूत्राज, परिशिष्ट, II.**

है, जिसका अधिकांश हिकेटियस से ग्रहण किया गया था। वह जानता था कि भारत की जनसंख्या बड़ी है।[1] वस्तुत: भारत-विषयक उसके अधिकांश उल्लेख धारयद्वसु और जर्जीस के समय के प्रति संकेत करते हैं (वही, I, 329)। हेरोडोटस के एक अनुच्छेद (IV. 44) से ऐसा प्रतीत होता है कि अपने उपरि-प्रवाह से समुद्र तक पंजाब एवं सिन्धु समेत, सिन्धु नदी की घाटी या तो पारसीकों द्वारा अधिकृत कर ली गयी थी, या उनके शासन-क्षेत्र में मिला ली गयी थी (वही, I, 336)। 325 ई० पू० से 300 ई० की मध्यावधि में भारत के लघु-राज्यों के विषय में उसने कुछ सूचना दी है (वि० च० लाहा, इंडोलॉजिकल स्टडीज़, भाग, II)। टेसियस (ई० पू० 398) ने अपने निवास-काल में भारत पर एक पुस्तक लिखने के लिए सामग्री संकलित की। अभाग्यवश उसका विवरण अनेक कपोल-कल्पनाओं के कारण कलुषित है और भारत तथा उसके निवासियों के विषय में प्रथम बार पाश्चात्य जगत् के समक्ष अपेक्षाकृत अधिक ठीक विवरण प्रस्तुत करने का कार्य सिकंदर के अनुगामियों के लिए शेष रह गया।

यह महान् विजेता अपने साथ अपनी उपलब्धियों को इतिहासबद्ध कराने के लिए वैज्ञानिक व्यक्तियों को लाया था और उन्होंने उसके द्वारा आक्रांत देशों का वर्णन किया है। उसके कुछ अधिकारी साहित्यिक-संस्कारों के व्यक्ति थे। उसके साथियों में तीन ने अपनी कृतियों द्वारा भारत के प्रति यूनानी अवधारणा की अभिवृद्धि की। नियर्कस उनमें से एक था। उसकी पुस्तक में भारत के विषय में प्रचुर आनुषंगिक सूचनाएँ संनिहित थीं (कै० हि० इं०, I, 398)। सिकंदर के भारतीय अभियान के परिणामस्वरूप भारत से संबंधित वृत्तांत एवं संस्करण बहुत बड़ी संख्या में लिखे गये। ये सभी ग्रंथ लुप्त हो गये हैं और उनके सारांश संक्षेप में स्ट्रैबो, प्लिनी एवं एरियन की कृतियों में प्राप्त होते हैं। कुछ परवर्ती लेखकों ने भारत-विषयक सूचना में यथेष्ट परिवृद्धि की है, जिनमें डायोडोरस, स्ट्रैबो, कर्टियस और सिकंदर के इतिहासकारों में सर्वश्रेष्ठ एरियन तथा जस्टिनस का उल्लेख किया जा सकता है।[2] सिकंदर के यूनानी एवं रोमन इतिहासकार हमारे भौगोलिक ज्ञान को गन्धार की पूर्वी सीमा झेलम (Hydaspes) के पार पूरब की ओर ब्यास नदी (Hyphasis) तक अभिवृद्ध करते हैं (कै० हि० इं०, I, पृ० 58-59)।

---

[1] कैंब्रिज हिस्ट्री ऑव इंडिया, भाग 1, पृ० 395.

[2] मैक्रिंडिल, ऐंश्येंट इंडिया ऐज़ डिस्क्राइब्ड बाई मेगस्थनीज़ ऐंड एरियन, पृ० सं० 5 और आगे।

स्ट्रैबो के भूगोल से हमें सुविख्यात अस्सक या अश्मक जाति के विषय में सूचना प्राप्त होती है। यद्यपि स्ट्रैबो गंडराई-देश (Gandarai) का वर्णन करता है किंतु सिकंदर के किसी भी इतिहासकार ने गन्धार देश का नामोल्लेख नहीं किया है। स्ट्रैबो के अनुसार तक्षशिला| सिन्धु एवं झेलम (Hydaspes) नदियों के मध्य स्थित था। अच्छे कानूनों द्वारा प्रशासित यह एक महानगर था। उसके अनुसार वरिष्ठ पोरस का केकय देश विस्तृत एवं उर्वर था और इसमें कोई तीन सौ शहर थे। कनिष्ठ पोरस के प्रदेश का नाम गंडरिस (Gandaris) था। किंतु इस नाम को हम सर्वथा निर्णीत न स्वीकार करें। उसका कथन है कि वह प्रदेश जहाँ सौभूति (Sophytes) शासन करता था, कल्क-युक्त उत्पत्ति वाले खनिज नमक के पहाड़ के लिए प्रसिद्ध था, जिसमें संपूर्ण भारत के निवासियों की आवश्यकता पूर्ण करने के लिए पर्याप्त नमक निकलता था। और आगे वह कहता है कि सौभूति राज्य में कुत्ते अपने विलक्षण साहस के लिए विख्यात थे। उसने मूशक (Mousikanos) के राज्य के निवासियों का एक रोचक विवरण दिया है। उसने तथा डायोडोरस ने आक्सीकेनोस (Oxykanos) राज्य के नरेश को पोर्टिकेनोस (Portikanos) नाम से अभिहित किया है। वह लिखता है कि पार्थियनों (Parthians) ने यूक्रेटाइडीज़ (Eukratides) को बैक्ट्रियाना के एक भाग से वंचित कर दिया। उसके अनुसार बाख्त्री-यवनों (Bactrian-Greeks)) की विजय अंशतः मेनेंडर (दूसरी शती ई० पू० का मध्य) और अंशतः यूथेडेमस (लगभग 190 ई० पू०) के पुत्र डिमिट्रियस द्वारा प्राप्त की गयी थी। अन्य विवरणों के साथ ही इस प्रकार की ऐतिहासिक-भौगोलिक सूचना उसके भूगोल से प्राप्त होती है।

मेगस्थनीज़ ने जो भारत में बहुत दिनों तक था, हमें अत्यधिक महत्त्वपूर्ण भौगोलिक सामग्री प्रदान की है। वह चन्द्रगुप्त मौर्य के दरबार में राजदूत होकर आया था। उसने स्वयं कहा है कि उसने भारतीयों के सबसे बड़े राजा सैंड्रोकोट्टस (Sandrokottos) से बहुधा भेंट की थी। एरियन के अनुसार वह राजा पोरस से भी मिला था। उसकी 'इंडिका' (Indika) के अंशों से हमें भारत, उसके निवासियों, नदियों, प्रदेशों, नगरों एवं उनके आकारों, भूमि की उर्वरता, वन्य पशुओं, घोड़ों और हाथियों, भारतीय वृक्षों और जनों, जातियों, कबीलों और वंशों, उद्यमों, भारतीय दार्शनिक, श्रमणों एवं ब्राह्मणों आदि के विषय में अमूल्य सामग्री प्राप्त होती है।

एरियन, जिसने एक इतिहासकार के रूप में ख्याति अर्जित की थी, सिकंदर महान् के एशियाई अभियान के विवरण का प्रसिद्ध लेखक था। उसने भी भारत

का एक उत्कृष्ट वर्णन प्रस्तुत किया है। उसकी 'इंडिका' (Indika) में तीन खंड हैं। प्रथम खंड में भारत का सामान्य निरूपण प्राप्त होता है जो मुख्यतया मेगस्थनीज़ एवं इरैटोस्थनीज़ के देश-वर्णन पर आधारित है। दूसरे भाग में क्रीट-निवासी नियर्कस की सिन्धु से पास्टीग्रिस तक की समुद्र यात्रा का विवरण दिया गया है जो स्वयं नियर्कस द्वारा ही लिखित उसकी संयात्रा के वृत्तांत पर प्रधानतः आधारित है। तृतीय भाग में यह सिद्ध करने के लिए पर्याप्त साक्ष्य प्रस्तुत किये गये हैं कि विश्व के दक्षिणी भाग अतीव आतप के कारण आवास-योग्य नहीं हैं। अपनी 'इंडिका' में वह सिन्धु नदी के पार पश्चिम में स्थित प्रदेशों का उल्लेख करता है, जिनमें दो भारतीय जातियाँ अश्टक (Astakenoi) एवं अश्वक (Assakenoi) निवास करती थीं। उसने सिन्धु के पूर्व में स्थित प्रदेशों को मुख्य भारत की संज्ञा दी है। उसने भारत के विस्तार, उसकी नदियों तथा जातियों आदि का वर्णन किया है। उसने भारतीय जनता को लगभग सात जातियों में विभक्त किया है और भारतीयों द्वारा वन्य-पशुओं आदि के शिकार का उल्लेख किया है।

इरैटोस्थेनीज़ ने एक वैज्ञानिक भूगोल की रचना की। उसने सिकंदर के इतिहासकारों के प्रमाण के आधार पर भारत का वर्णन किया है।

प्लिनी ने भारत के भूगोल का वर्णन अपने 'नैचुरल हिस्ट्री' नामक ग्रंथ में किया है, जिसको उसने वेस्पैसियन के पुत्र और उसके साम्राज्य के उत्तराधिकारी टाइटस (Titus) को समर्पित किया है। इस ग्रंथ के प्रथम दस खंड संभवतः 77 ई० में प्रकाशित किये गये थे। इस पुस्तक के तीसरे से छठें खंड में भूगोल एवं जातिवृत्त का वर्णन किया गया है। उसकी विवेचना आलोचनात्मक नहीं है, तथापि उसके द्वारा प्रस्तुत आनुषंगिक तथ्यों के विचार से यह अत्यधिक महत्त्व-पूर्ण है।

किसी अज्ञात लेखक द्वारा प्रणीत 'पेरिप्लस ऑव द इरिथ्रियन सी', अफ़्रीका के समुद्र-तट और लाल सागर से पूर्वी द्वीपसमूह ((East Indies) या आधुनिक इंडोनेशिया के मध्य होने वाले व्यापार एवं वाणिज्य के विवरण की प्रदर्शिका है। वस्तुतः सीमावर्ती समुद्रों सहित लाल सागर और फारस की खाड़ी के लिए यह एक स्थानसूचक पुस्तक है। इन बंदरगाहों द्वारा संचालित व्यापार की सामग्री का उल्लेख पेरिप्लस में किया गया है (डब्ल्यू० एच० शॉफ द्वारा अनूदित, 1912, पृ० सं० 284-288)। पेरिप्लस के अनुसार मिश्र के जहाजों द्वारा टिन सोमाली लैंड एवं भारत को भेजा जाता था। भारत और मिस्र दोनों से ही आबनूस रोम में मँगायी जाती थी। शक-आधिपत्य के काल में भारत के कुछ नगरों को

अस्थायी रूप से 'मिन्नगर' नाम दिया गया था। भारो-शक सत्ता (Indo-Scythian) के पतन के पश्चात् उन नगरों ने अपने प्राचीन नाम एवं स्वाधीनता पुनः प्राप्त कर ली थी। इस परिचय-पुस्तिका में सिन्धु नदी, सिरास्ट्रेन (सुराष्ट्र) बैरीगाज़ा (आधुनिक भड़ौंच), माही नदी (माइस), नर्मदा (नैमेडस), अरा-कोशी (आधुनिक कन्दहार का निकटवर्ती प्रदेश), गंडराई (गन्धार), ओज़ेनी (उज्जैन), तगर (आधुनिक टेर), सुप्पार (आधुनिक सोपारा), केल्लियेन (वर्तमान कल्याण) और पाण्ड्य राजधानी (पाण्ड्य) आदि के विषय में कुछ सूचनाएँ समाविष्ट हैं।

टॉलेमी की 'ज्यॉग्रेफी' एक महत्त्वपूर्ण कृति है। अपनी विषय-सामग्री के लिए टॉलेमी, टायर के मैरिनस (Marinus of Tyre) का ऋणी है। उसकी कृति आठ स्कंधों में विभक्त है। उसके द्वारा दिया गया गंगा-घाटी के भारतीय प्रदेश का वर्णन तथा देशों, नगरों, कस्बों, नदियों, पहाड़ और पहाड़ियों आदि विषयक उसके विवरण अधिक सतर्कतापूर्वक अध्ययन किये जाने के योग्य हैं। गंगा के पार भारत की स्थिति, मध्यदेश के नगर एवं ग्राम, सप्त-पर्वत-मेखला, सिन्धु नदी-समूह, तथा नदियों की घाटियों के आधार पर किया गया भारतीय जन एवं जनपदों का वर्गीकरण—कुछ ऐसे विषय हैं जिनका विवेचन उसने योग्यतापूर्वक किया है। उसकी 'ज्यॉग्रेफी' निस्संदेह प्राचीन भारत के भूगोल-वेत्ताओं के लिए बहुत उपादेय है।

प्राचीन भारत के भूगोल के स्रोत रूप में चीनी तीर्थयात्रियों के वृतांत अपार महत्त्व के हैं। संपूर्ण उत्तरी भारत का पर्यटन करने वाले फा-ह्यान एवं य्वान-च्वाङ् के विवरण बहुत महत्त्वपूर्ण हैं; सातवीं शती ई० में भारत आने वाले य्वान-च्वाङ् का विवरण अपेक्षाकृत अधिक विशद् एवं पूर्ण है। पाँचवीं एवं सातवीं शती ईस्वी के मध्य उत्तरी भारत के यथार्थ एवं विस्तृत भूगोल के लिए उन दोनों तीर्थयात्रियों के वृत्तांत हमारी जानकारी के सबसे महत्त्वपूर्ण साधन हैं। एक अन्य चीनी तीर्थयात्री आठवीं शती ई० में भारत आया था। उसका नाम ऊ-कांग (U-Kong) था (कलकत्ता रिव्यू, अगस्त, 1922)। अन्य चीनी तीर्थयात्री सुंग युन (Sung Yun) और हवीसेंग (Hwiseng) के विवरण संक्षिप्त हैं, और वे पश्चिमोत्तर भारत के केवल कुछ ही स्थानों का वर्णन करते हैं। इत्सिग, जिसने 673 ई० में प्राचीन भारत के अनेक विशिष्ट स्थानों का भ्रमण किया था, ने एक विस्तृत विवरण लिखा है। वांग-ह्वेन-त्सी नामक एक दूसरा चीनी यात्री—जैसा कि उसने स्वयं अपने वृत्तांत में लिखा है—643 ई० में भारत आया था, और उसने महात्मा बुद्ध से संबंधित क्षेत्रों का परिभ्रमण

किया था।[1] वह मगध गया और गृध्र-कूट (Ke-tche-Kiu) पहाड़ी पर चढ़ा, और वहाँ पर उसने एक अभिलेख उत्कीर्ण करवाया। गया में स्थित महाबोधि भी वह आया था जैसा कि उसके यात्रा-वृत्तांत में कहा गया है। उसने पंच-भारत का पर्यटन किया। तिब्बती एवं नेपाली अश्व-सेना के अध्यक्ष के रूप में उसने मगध की ओर कूच किया; भारतीय सेना को पराजित किया, राजधानी पर अधिकार और राजा को बंदी बनाकर, विजयोन्माद में उसे चीन ले गया। वह स्वयं नेपाल और तिब्बत गया था। उसका तिब्बत (Tou-fan) वर्णन रोचक है। इसी चीनी तीर्थयात्री ने अपने अवकाश के क्षणों में 'एकाउंट ऑव द वायेज़' (Account of the Voyage) नामक एक पुस्तक लिखी। उस समय प्रचलित मगध के एक कानून का उसने रोचक वृत्तांत दिया है। यदि कोई भी व्यक्ति अपराधी होता था, तब उसे डंडे से न पीटा जाकर एक आश्चर्य-जनक तौल का सहारा लिया जाता था। गृध्र-कूट पर और महाबोधि में उत्कीर्ण उसके अभिलेखों का अनुवाद शैवेनीज़ ने किया है। भारत में उसके द्वारा देखे गये स्थानों का विवरण भौगोलिक दृष्टिकोण से बहुत अधिक उपयोगी है।

मुसलमान लेखकों के भौगोलिक वृत्तांत समान रूप से उपयोगी हैं। अल-बेरुनी ने, जो 973 ई० में आधुनिक खीव के प्रदेश में था, स्वयं विज्ञान और साहित्य के क्षेत्र में विशिष्टता प्राप्त की थी। भारत के विषय में लिखी गयी, अपनी पुस्तक 'तहकीक-ए-हिंद' में उसने यहाँ के भूगोल का वर्णन किया है, जो भूगोल-वेत्ताओं के लिए निश्चय ही कुछ सहायक होगी। जहाँ तक उसकी जानकारी थी, भारत ब्राह्मणधर्मानुयायी था न कि बौद्ध। 11 वीं शती ई० के पूर्वार्द्ध में, लगता है कि मध्य-एशिया, खुरासान, अफ़गानिस्तान और पश्चिमोत्तर भारत से बौद्ध धर्म के सभी चिन्ह लुप्त हो गये थे। वहाँ पर बौद्ध धर्म-विषयक उसके विवरण स्वल्प हैं। उस समय भारतीय शिक्षा के दो केन्द्र वाराणसी और कश्मीर थे। उसको य्वान-च्वाङ् के समान भारत यात्रा करने का सुयोग नहीं मिला था। इस कारण उसके भौगोलिक विवरण उतने अधिक विशद् नहीं हैं। भारत के विषय में लिखी गयी अपनी 'इंडिया' नामक पुस्तक में (डॉ० ई० सी० सचाउ का अंग्रेजी संस्करण, 18वाँ अध्याय) उसने मध्यदेश, प्रयाग, स्थानेश्वर, कान्यकुब्ज, पाटलिपुत्र, नेपाल, कश्मीर एवं अन्य देशों और नगरों, नदियों, पशुओं,

---

[1] **जर्नल एशियाटीक्, 1900, में प्रकाशित, सिलवाँलेवी के निबंध** "Les Missions de Wang-Hiuen-Tse dans l' Inde".**में यह बात कही गयी है। हाल में ही इस निबंध को डॉ० एस० पी० चटर्जी ने अंग्रेजी में अनूदित किया है।**

भारत के पश्चिमी एवं दक्षिणी सीमांत तथा पश्चिमी सीमा के पर्वतों, द्वीपों और वर्षा आदि का वर्णन किया है। उसने भारत के विभिन्न भागों में दूरी निश्चित करने की हिंदू-पद्धति का भी उल्लेख किया है।

बारहवीं शती ई० के सुविज्ञात् कश्मीरी इतिहासवृत्त, कल्हण की राजतरंगिणी का उपयोग सतर्कतापूर्वक किया जाना चाहिए, क्योंकि इसमें भ्रांतिमूलक प्राचीन अनुश्रुतियों की बड़ी संख्या समाविष्ट है। विंसेंट स्मिथ के मतानुसार यह एक महत्त्वपूर्ण ग्रंथ है, क्योंकि इसमें स्थानीय घटनाओं का एक विश्वसनीय विवरण दिया गया है (अर्ली हिस्ट्री ऑव इंडिया, चतुर्थ संस्करण, पृ० 10)।

प्रसिद्ध वेनिस-यात्री, मार्कोपोलो तेरहवीं शती ई० में मध्य एशिया और दक्षिण भारत आया था। उसका यात्रा-वृत्तांत उपयोगी हो सकता है (द्रष्टव्य, रॉयल एशियाटिक सोसायटी, बंगाल से प्रकाशित इंट्रोड्यूसिंग इंडिया, भाग 1 में, मुद्रित एल० आर० फाकस द्वारा लिखित 'ट्रेवेल्स ऑव मार्कोपोलो' नामक निबंध)।

भारत के ऐतिहासिक भूगोल के परिचय के लिए अन्य साधन हैं, जैसे इंपीरियल और प्राविंशियल गज़ेटियरों में समाविष्ट प्रारंभिक सर्वेक्षण जो वास्तव में सूचना के बड़े कोश हैं। आर्कियोलॉजिकल सर्वे ऑव इंडिया की रिपोर्ट, एपिग्रेफिया इंडिका में आये हुए भौगोलिक उल्लेख, कार्पस इंस्क्रिप्शनम् इंडिकेरम और एपिग्रेफिया कर्नाटिका में सर्वाधिक प्रामाणिक एवं विस्तृत भौगोलिक ज्ञान संनिहित है। भारतीय जनगणना की रिपोर्ट भी समानरूप से महत्त्वपूर्ण है।

इंपीरियल गज़ेटियर ऑव इंडिया में (नवीन संस्करण, भाग 1, ऐतिहासिक, भारतीय साम्राज्य, पृ० सं० 76-87) भूगोल पर डॉ० जे० एफ० फ्लीट की आकर्षक टिप्पणी निस्संदेह शोधकर्ताओं के लिए सहायक सिद्ध होगी। उन्होंने भारत के प्रारंभिक भूगोल के अध्ययन का महत्त्व बतलाया है और अध्ययन की इस रोचक दिशा के प्रमुख साधनों का निर्देश किया है।

भारतीय पुरातत्त्व-सर्वेक्षण के वार्षिक प्रगति-पत्रों में इस विभाग द्वारा विभिन्न प्रसिद्ध ऐतिहासिक स्थलों पर किये गये उत्खनन के विस्तृत विवरण दिये गये हैं, और वे भौगोलिक महत्त्व के स्थानों यथा, बेसनगर, भीटा, कसिया, पाटलिपुत्र, राजगृह, सारनाथ, वैशाली और तक्षशिला का सविस्तार भौगोलिक वर्णन करते हैं। 1907-08 की वार्षिक रिपोर्ट में ऐहोड़ के स्थान-वृत्त के साथ ही वहाँ के प्राचीन मंदिरों का विवरण दिया गया है। 1915-16 की रिपोर्ट में एम० बी० गर्दे ने पद्मावती के विषय में एक लेख लिखा है, जो विष्णु पुराण में उल्लिखित नागों की तीन राजधानियों में से एक थी और जिनका वर्णन

भवभूति के मालती-माधव में उस स्थान के रूप में किया गया है, जहाँ पर काव्य के नायक माधव को उसके पिता ने विदर्भ में कुण्डिनपुर से भेजा था। पद्मावती की पहचान सिन्ध और पार्वती नदी के संगम पर स्थित आधुनिक पवैय्या नामक स्थान से की जाती है। 1927-28 की रिपोर्ट में चन्द्रवर्मन के सुसुनियाँ अभिलेख में वर्णित पुष्करण के समीकरण के विषय में के० एन० दीक्षित का एक लेख प्रकाशित हुआ है। उक्त अभिलेख का पुष्करण (एच० पी० शास्त्री द्वारा, एपि०, इं०, जिल्द,XIII, पृ० 133 में संपादित) सुसुनियाँ से 25 मील पश्चिमोत्तर में स्थित पोखरन नामक ग्राम से समीकृत किया गया है। 1925-26, 1927-28 और 1928-29 के रिपोर्टों में राजशाही जिले में स्थित पहाड़पुर के उत्खनन के विवरण दिये गये हैं, जब कि 1928-29 की रिपोर्ट में उत्तर बंगाल के बोगरा जिले में स्थित, प्राचीन पुण्ड्रवर्द्धन नामक स्थान से समीकृत महास्थान के[1] उत्खनन का विवरण दिया गया है।

भारतीय पुरातत्त्व-सर्वेक्षण द्वारा प्रकाशित, उनके 64 वें ग्रंथ, ए० एच० लांगहर्स्ट द्वारा लिखित, द बुद्धिस्ट ऐंटिक्विटीज़ ऑव नागार्जुनिकोंड, मद्रास प्रेसिडेंसी, में गुंटूर जिले के पलनाड तालुक[2] में कृष्णा नदी के दाहिने किनारे पर स्थित नागार्जुन की पहाड़ी से उपलब्ध बौद्ध-पुरावशेषों का एक रोचक विवरण दिया गया है। वहाँ के जीर्ण-स्तूपों से प्राप्त सुंदर अध्युचित्रों के अधिकांश दृश्य बुद्ध के जीवन से संबंधित सुविज्ञात कहानियों से चित्रित हैं। इन वास्तु-चित्रों में विभिन्न दृश्यों का प्रत्यभिज्ञान करने के लिए लेखक ने कठिन परिश्रम किया है। उसने हमें उस स्थान का एक अत्यधिक सुपाठ्य विवरण और रोचक इतिहास दिया है। अन्वेषण-प्रक्रिया में प्राप्त प्रमुख भवन और पुरावशेष लेखक के सावधान मनोयोग से नहीं बच सके और उसने हमें उनका एक अति सुंदर विवेचन प्रस्तुत किया है। इस प्रबंध में संनिहित उसके सतर्क अन्वेषण के लाभकर परिणाम प्राचीन भारत के भूगोल के प्रत्येक विद्यार्थी द्वारा निश्चय ही प्रसंशित होंगे।

भारतीय पुरातत्त्व सर्वेक्षण के अड़तालीसवें ग्रंथ के रूप में प्रकाशित एन० जी० मजुमदार द्वारा लिखित, 'एक्सप्लोरेशंस इन सिन्ध' प्राचीन भूगोल के प्रति एक महत्त्वपूर्ण देन है। इसमें सिन्ध की जलवायु और उसके प्रख्यात भौगोलिक विशेषताओं का वर्णन प्राप्त होता है। 1927-28, 1929-30 और 1930-31 में इस स्थान पर किये गये उत्खनन-कार्य का भी उसमें विवेचन है।

---

[1] संप्रति पूर्वी पाकिस्तान में स्थित है।

[2] संप्रति आंध्रप्रदेश राज्य में स्थित है।

II. भारत के विभिन्न नाम

उत्तर में उत्तुंग पर्वत-मालाओं और शेष अन्य तीन ओर से शक्तिमान सागरों एवं महासागरों से परिवेष्टित भारत स्वयं एक स्वतंत्र भौगोलिक इकाई है। प्राणि एवं वनस्पति जगत् , वंशों एवं भाषाओं, धर्मों एवं संस्कृतियों की अपरिमित विविधता सहित उस देश की विशालता उसे उचित ही एक महान् उपमहाद्वीप कहलाने के योग्य बनाती है। इस महान् देश के दूरस्थ भागों ने प्राचीन युग के अन्वेषकों एवं पर्यवेक्षकों के संमुख अपने को केवल क्रमश: शनै:-शनै: व्यक्त किया है। इसी कारण प्राचीनतम लेखों में संपूर्ण देश को लक्षित करने के लिए कोई व्यापक शब्द हमें नहीं मिलता है। 'इंडिया' शब्द सिंधु नदी या Indus नाम से व्युत्पन्न है।[1] चीन-निवासी भी शिन-टुह (Shin-tuh) या सिन्धु को ही भारत का प्राचीन नाम जानते थे।[2] ऋग्वेद (VIII. 24-27) में इसको 'सप्तसिन्धवः' या नदियों का देश कहा गया है । निस्संदेह यह संज्ञा अवेस्ता बेंडीडाड में प्राप्त शब्द हप्त-हिंदु के समान है।[3] धारयद्वसु के पर्सीपोलिस और नक्श-इ-रुस्तम के प्रसिद्ध अभिलेखों में सिंधु तथा उसकी सहायक नदियों द्वारा सिंचित संपूर्ण प्रदेश केवल 'हिंदु' नाम से अभिहित किया गया है।[4] हेरोडोटस ने इसे 'इंडिया' कहा है, जो पारसीक साम्राज्य का बीसवाँ प्रांत था। तथापि यह विचारणीय है कि वैदिक सप्तसिन्धवः और पारसीक 'हिंदु' केवल पश्चिमोत्तर में स्थित भारत के एक विशेष भू-भाग को ही लक्षित करते थे। परन्तु हेरोडोटस द्वारा प्रयुक्त शब्द 'इंडिया' पहले से ही व्यापक अर्थ धारण करता जा रहा था, क्योंकि इस यूनानी इतिहासकार ने उन भारतीयों का वर्णन किया है, जो दक्षिण में पारसीकों से बहुत दूर रहते थे और कभी धारयद्वसु के अधीन नहीं रहे।[5]

वस्तुत: संपूर्ण देश का अन्वेषण लगभग चौथी शती० ईसा पूर्व तक हो चुका था। तत्कालीन यूनानी और भारतीय दोनों ही साहित्य दक्षिण भारत में न केवल पाण्ड्यों के राज्य से ही वरन् ताम्रपर्णी या लंका से भी परिचित थे।[6] उत्तर में

---

[1] कैंब्रिज हिस्ट्री ऑव इंडिया, I, पृ०, 324.

[2] लाहा, ज्यॉग्रेफी ऑव अर्ली बुद्धिज्म्, पृ० XVI; लेग्गे, फा-ह्यान, पृ० 26.

[3] कैंब्रिज हिस्ट्री ऑव इंडिया, I, पृ० 324.

[4] वही, पृ० 324.

[5] रायचौधरी, स्टडीज इन द इंडियन ऐंटिक्विटीज, पृ० 81.

[6] भंडारकर, कार्माइकेल लेक्चर्स, (1918) पृ० 6 और आगे; कै० हि० इं०, I, पृ० 423 और आगे।

हिमालय से लेकर दक्षिण में समुद्र तक फैले हुए प्रदेश को अभिहित करने के लिए जनसामान्य को एक व्यापक शब्द की आवश्यकता प्रतीत हुयी। यह शब्द जम्बूद्वीप था, जो उस समय प्रयुक्त होता था। बौद्ध साहित्य में जंबूद्वीप या तो चार महाद्वीपों में से एक या अपने केंद्र में सिनेरु (सुमेरु) पर्वत से युक्त भारत सहित चारों महाद्वीपों के लिए व्यवहृत होता था। जम्बूद्वीप के अंगद्वीप नाम से विख्यात एक खण्ड में वायु पुराण (48, 14-18) के अनुसार म्लेच्छ रहा करते थे।

चाइल्डर्स (पालि डिक्शनरी, पृ० 165) का मत है कि सीहल दीप के संमुख जम्बूद्वीप भारत का वाचक था।[1] इस विषय में निश्चित होना कठिन है। संस्कृत बौद्ध ग्रंथों में हम जम्बूद्वीप के उल्लेख पाते हैं।[2] अशोक के प्रथम लघु शिला-लेख में जम्बूद्वीप का उल्लेख प्राप्त होता है[3] जो उस महान् सम्राट् द्वारा प्रशासित विशाल देश को लक्षित करता है। महाकाव्यों एवं पुराणों में जम्बूद्वीप सात समुद्रों द्वारा परिवेष्ठित सात समकेंद्रिक द्वीपों में से एक बतलाया गया है।[4] इन सात द्वीपों में से जम्बूद्वीप का ही विभिन्न स्रोतों में सबसे अधिक उल्लेख किया गया है, और वही एक ऐसा द्वीप है जो अपने सीमित अर्थ में भारतवर्ष या भारतीय प्रायद्वीप से समीकृत किया जाता है।[5]

जम्बूद्वीप (पालि, जंबूदीप) का रोचक विवरण पालि बौद्ध ग्रंथों एवं भाष्यों में प्राप्त होता है। जम्बूवृक्ष के नाम पर जंबूद्वीप का नामकरण हुआ है (विसुद्धि-मग्ग, I, 205-206, तुलनीय विनयग्रंथ I, 127; अट्ठसालिनी, पृ० 298)। मज्झिम निकाय की टीका पपंचसूदनी के अनुसार इसे वन कहा जाता था (भाग 1, पृ० 423)। इसको सुदर्शनद्वीप भी कहा गया है, जिसका नाम यहाँ पर उगने वाले सुदर्शन नामक वृक्ष से गृहीत है, जिसकी शाखाएँ 1,000 योजन तक फैलती हैं (ब्रह्माण्ड०, 37.28-34; 50, 25-27; मत्स्य० 114,

---

[1] लाहा, ज्यॉग्रेफी ऑव अर्ली बुद्धिज्म्, पृ० XVI, ज्यॉग्रेफिकल-एसेज, पृ० 51.

[2] महावस्तु, III, 67; ललितविस्तर, अध्याय 12; बोधिसत्वावदानकल्पलता, 78 वाँ पल्लव, 9.

[3] रा० कु० मुकर्जी, अशोक, पृ० 110.

[4] लाहा, ज्यॉग्रेफी ऑव अर्ली बुद्धिज्म्, पृ० XVI; कनिंघम, ऐंश्येंट ज्यॉग्रेफी ऑव इंडिया, पृ० XXXVI.

[5] महाभारत, VI. 6.13; ब्रह्माण्ड पुराण, 37. 27-46; 43.32.

74-75; महाभारत, VI, 5, 13-15; VI, 7, 19-20)। सर्वोच्च गिरिशृंग सिनेरु—युगन्धर, ईसधर, कारविक, सुदस्सन, नेमिधर, विनतक और अस्सकण्ण नामक सात दिव्य पर्वत मालाओं द्वारा परिवृत था। जम्बूद्वीप एक कमल की भाँति दिखलायी पड़ता है, जिसका करणिक (वीजकोष) मेरु है और भद्राश्व, भारत, केतुमाल, और उत्तरकुरु वर्ष या महाद्वीप इसकी चार पंखुड़ियों के समान हैं।[1] विश्रुत पालि भाष्यकार बुद्धघोष का मत है कि जम्बूद्वीप दस हजार योजन विस्तृत था और इसे महाद्वीप कहा जाता था।[2] जम्बूद्वीप को सिंचित करने के उपरांत पाँच बड़ी नदियाँ गंगा, यमुना, सरयू, अचिरवती और मही समुद्र में गिरती थीं।[3] चक्कवत्तिसीहनाद सुत्तांत को कहते समय बुद्ध ने भविष्य-वाणी की थी, "जम्बूद्वीप शक्तिशाली और समृद्ध होगा, ग्राम, नगर और राज-धानियाँ इतने समीप होंगे कि कौआ एक से उड़कर दूसरे में जा सकेगा।" सुमंगलविलासिनी (भाग II, पृ० 449) के अनुसार जम्बूद्वीप में पाँच सौ द्वीप थे। जम्बूद्वीप में रमणीक उद्यान, सुखद वाटिकाएँ, रम्य स्थल एवं झीलें थीं, किंतु उनकी संख्या अधिक नहीं थी। इनके अतिरिक्त वहाँ पर अनेक दुरारोह ढालू चट्टानें, वितरणीय नदियाँ, दुर्गम पहाड़ और कँटीली झाड़ियों के गहन निकुंज थे।[4] संपूर्ण जम्बूद्वीप से सोना इकट्ठा किया जाता था।[5] अशोक ने संपूर्ण जम्बूद्वीप में चौरासी हजार विहारों का निर्माण कराया था।[6] यहाँ पर सांख्य, योग, न्याय, और वैशेपिक दर्शन पद्धतियाँ, अंकगणित, संगीत, औषधि-विज्ञान, चतुर्वेद, पुराणेतिहास, खगोल-शास्त्र, जादू-टोने, वशीकरण, युद्धकला, काव्य और हस्तांतरण-लेखन आदि विद्याएँ सिखायी जाती थीं।[7] यहाँ पर कला और विज्ञान के विपय में वाद-विवाद होते थे।[8] जम्बूद्वीप का बहुत अधिक महत्त्व था, क्योंकि मज्झिद के अतिरिक्त यहाँ पर प्रायः गौतम बुद्ध आया करते

---

[1] महाभारत, VI. 6.3-5 पर नीलकंठ की टीका, मार्कण्डेय० 55, 20 और आगे; ब्रह्माण्ड० 35.41; 44-45.

[2] सुमंगलविलासिनी, II, 429.

[3] वही, पृ० 17.

[4] अंगुत्तर निकाय, I, 35.

[5] पपंचसूदनी, II, 123.

[6] दीपवंस, पृ० 49; विसुद्धिमग्ग, I, 201.

[7] मिलिंदपञ्ह, पृ० 3.

[8] थेरीगाथा भाष्य, पृ० 87.

थे।[1] कथावस्तु (पृ० 99) के अनुसार जम्बूद्वीप के निवासी सदाचारी जीवन व्यतीत करते थे। संपूर्ण जम्बूद्वीप सानु द्वारा अनुप्राणित था, जो त्रिपिटकों में निष्णात किसी उपासिका शिष्या का एकमात्र पुत्र था।[2] चूलवंश में (जिल्द 1, पृ० 36) जम्बूद्वीप में स्थित विशाल बो-वृक्ष (Bo Tree) का उल्लेख किया गया है। यहाँ पर भिक्षु और विधर्मी रहा करते थे और विधर्मियों की उच्छृंखलता इतनी अधिक बढ़ गयी थी कि भिक्षुओं ने सात वर्ष तक उपोसथ संस्कार का अनुष्ठान बंद कर दिया था।[3] यहाँ पर एक बार भीषण दुर्भिक्ष पड़ा था।[4]

भारतवर्ष जम्बूद्वीप का निर्माण करने वाले नव प्रमुख भागों में से केवल एक वर्ष या देश था। जैन ग्रंथ जंबुद्दीवपण्णत्ति में जंबूद्वीप के अंगभूत सात वर्षों का वर्णन है। महाकाव्य और पुराणकारों के अनुसार जम्बूद्वीप पहले सात वर्षों में विभक्त था। कालांतर में पहले के सात वर्षों में दो वर्ष और जोड़ दिये गये और इस प्रकार वर्षों की कुल संख्या बढ़कर नौ हो गयी।[5] इस प्रकार जैन और ब्राह्मण लेखकों के विचारानुसार एक महाद्वीप के रूप में जम्बूद्वीप बौद्धों को ज्ञात जंबुदीप की अपेक्षा अत्यधिक विस्तृत था। जम्बूद्वीप के वर्षों में भारतवर्ष अधिकांशतः दक्षिण में स्थित था। महाभारत[6] और पुराणों से संमत जंबुद्दीव-पण्णत्ति में भी भारतवर्ष का नाम राजा भरत से जो मनु स्वयंभव[7]—जिसकी प्रभुसत्ता उसके ऊपर थी,[8] के पुत्र प्रियव्रत का वंशज था—से गृहीत मानी गयी है। पौराणिक संसृति-विज्ञान के अनुसार भारतवर्ष नव खण्डों में विभाजित था, जो समुद्रों द्वारा पृथक् और एक दूसरे के लिए अगम्य थे।[9] परन्तु वर्तमान

[1] दीपवंस, पृ० 65.

[2] धम्मपद कामेंट्री, IV, 25.

[3] महावंस, पृ० 51.

[4] धम्मपद कामेंट्री, III, 368, 370, 374.

[5] लाहा, इंडिया ऐज डिस्क्राइब्ड इन अर्ली टेक्स्टस ऑव बुद्धिज्म् ऐंड जैनिज्म्, पृ० 1, नोट; लाहा, ज्यॉग्रेफिकल एसेज, पृ० 119 और आगे; कनिंघम, ऐंश्येंट ज्यॉग्रेफी ऑव इंडिया, पृ० 8, 749 और आगे।

[6] महाभारत, भीष्मपर्व, III, 41.

[7] भागवत पुराण, 11, 2. 15 और आगे।

[8] बि० च० लाहा, इंडिया ऐज डिस्क्राइब्ड इन अर्ली टेक्स्टस ऑव बुद्धिज्म् ऐंड जैनिज्म्, पृ० 14.

[9] कनिंघम, ए० ज्यॉ० इं०, पृ० 751; लाहा, ज्यॉग्रेफिकल एसेज, पृ० 121; मार्कण्डेय, 575—नवद्वीप।

भारतवर्ष—जैसा कि हम इसे जानते हैं—'न तो देश के भीतर समुद्रों द्वारा अलग है, और न तो एक दूसरे के लिए अगम्य ही'। अतएव यह भारतवर्ष वर्तमान भौगोलिक क्षेत्र पर फैला हुआ हमारा भारत नहीं है। उसके नव खण्डों में से आठ, वास्तविक भारतवर्ष के भाग के रूप में नहीं निर्दिष्ट हैं। वे भारतवर्ष के अनेक प्रांत नहीं—वरन् वृहत्तर भारत के प्रांत, द्वीप और देश हैं जो भारतीय प्रायद्वीप को परिवेष्टित किये हुए हैं।[1] बहुत पहले अल्बेरुनी और अबुल फज़ल-जैसे विद्वानों ने इस तथ्य की भी सूचना दी थी।[2] नवें द्वीप या खण्ड को पुराणों में समुद्र से परिवेष्टित (सागर-सम्वृतः) कुमारी अथवा कुमारिकाद्वीप बताया गया है। इसके पूर्वी सीमांत पर किरात और पश्चिमी सीमांत पर यवन लोग रहते थे और इसके बीच में ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र बिखरे हुए थे तथा यही क्षेत्र असली भारत प्रतीत होता है।[3]

पूर्ववर्ती यूनानी लेखक सिन्धु नदी को भारत की पश्चिमी सीमा मानते थे, किंतु वे काबुल तथा उसकी सहायक नदियों की घाटियों में स्थित भारतीय संनिवेशों से परिचित थे। अतः कुछ लेखक कोफेस (काबुल नदी) को पश्चिम की ओर भारत की दूरतम सीमा मानते हैं।[4] संभवतः काबुल के समीप निवास करने वाले योनों या यवनों तथा पश्चिमोत्तर सीमाप्रांत में आधुनिक पेशावर एवं पश्चिमी पंजाब में रावलपिंडी के आधुनिक जिलों में (संप्रति पश्चिमी पाकिस्तान में) स्थित गन्धार जनों को महाभारत और पुराणों में उत्तरापथ के निवासियों के अंतर्गत संमिलित किया गया है। इससे यह व्यंजित होता है कि एक समय भारत की सीमाओं के भीतर न केवल सिन्धु के ठीक पश्चिम में स्थित देश वरन् ईरानी अधित्यका के उत्तर-पूर्वी कोने पर स्थित देश भी संमिलित थे। आम्राकार लंका द्वीप[5] जो मुख्य भारत का अंग नहीं है—भौगोलिक और सांस्कृतिक दोनों ही दृष्टियों से इससे घनिष्ट रूप से संबद्ध है।

---

[1] कनिंघम, ऐंश्येंट ज्यॉग्रफी ऑव इंडिया, परिशिष्ट I, पृ० 749-754.

[2] रायचौधरी, ऑप. सिट. पृ० 78, पा० टि० 4.

[3] लाहा, ज्यॉग्रेफिकल एसेज, पृ० 121.

[4] मैक्रिंडिल, ऐंश्येंट इंडिया ऐज डिस्क्राइब्ड बाई मैगस्थनीज ऐंड एरियन, पृ० 146.

[5] महानामन् द्वितीय के अभिलेख में आम्रद्वीप (कार्पस इंस्क्रिप्शनम् इंडिकेरम, जिल्द III)

III. भारत का आकार और उसके भाग

प्राचीन भारतीयों को अपने देश के वास्तविक आकार-प्रकार का बहुत यथार्थ ज्ञान था। सिकंदर के ज्ञापकों ने इस देश के निवासियों से अपनी जानकारी प्राप्त की और उन्होंने भारत को एक समप्रतिभुज अथवा विषम चतुर्भुज के आकार का बतलाया है, जिसके पश्चिम में सिन्धु नदी, उत्तर में पहाड़ और दक्षिण में तथा पूर्व में समुद्र स्थित थे।[1] महाभारत में भारतवर्ष का आकार चार छोटे समबाहु त्रिभुजों में विभाजित एक समबाहु त्रिभुज के रूप में बतलाया गया है।[2] कनिंघम का मत है कि यदि हम भारत की सीमाओं को उत्तर-पश्चिम में गजनी तक बढ़ा दें और त्रिभुज के शेष अन्य दो विंदुओं को कन्याकुमारी और असम में सदिया पर निर्धारित करें तब यह रचना भारत के सामान्य आकार से अच्छी तरह से मेल खाती है (कनिंघम, एं० ज्यॉ० इं०, पृ० 6)। सबसे पहले पराशर और वराहमिहिर ने यह बतलाया है कि भारतवर्ष नव खण्डों में विभक्त है। बाद में यह धारणा कुछ पुराणों के लेखकों ने ग्रहण किया।[3] कूर्मनिवेश खण्ड में भारतवर्ष का धरातल लेटे हुए पूर्वाभिमुख कूर्म के ऊपरी पृष्ठ के समान उत्तल आकार वाला बतलाया गया है। कुछ पौराणिक अंशों से यह व्यंजित होता है कि प्राचीन भारतीय लोग भारत के चतुर्विध संरूप से परिचित थे। भारत-विषयक पूर्ववर्ती यूनानी विवरणों से भी यह व्यक्त होता है। स्ट्रैबो के विवरण से हमें ज्ञात होता है कि सिकंदर ने संपूर्ण देश का वर्णन ऐसे लोगों के द्वारा कराया था जो इससे सुपरिचित थे। निस्संदेह वे भारतीय थे। थोड़े ही समय बाद, पाटलिपुत्र के महान् मौर्य राजाओं के दरबार में अधिकृत हेलेनिस्टिक राजदूतों ने भी अंशतः भारतीय स्रोतों से गृहीत सूचनाओं के आधार पर भारतवर्ष के वृत्तांत लिखे। टालेमी की ज्यॉग्रफी में कन्याकुमारी में भारतीय प्रायद्वीप के दो समुद्रतटों के मिलने से बनने वाला न्यूनकोण लगभग सिन्धु नदी के मुहाने से गंगा नदी के मुहाने तक सीधी जाने वाली एक तट-रेखा के रूप में परिवर्तित हो गया है।[4] पूर्वकालीन बौद्धों के अनुसार भारतवर्ष उत्तर में चौड़ा है जब कि दक्षिण में यह किसी बैलगाड़ी के अगले भाग के आकार का है, और सात समान भागों

---

[1] कनिंघम, एं० ज्यॉ० इं०, पृ० 2.

[2] वही, पृ० 5.

[3] वही, पृ० 6-7.

[4] वही, पृ० 9.

में विभक्त है।[1] भारतवर्ष का यह आकार इस देश के वास्तविक स्वरूप से वहुत बड़ी सीमा तक मिलता है, जो कि उत्तर में चौड़ा है जहाँ हिमालय पूर्व से पश्चिम तक फैला हुआ है, और जो दक्षिण में त्रिभुजाकार है। यह चीनी लेखक फाह्-किया-लिह्-तो (Fah-Kai-lih-to) द्वारा दिये गये इस देश के आकार-वर्णन से अद्भुत रूप से मिलता है। इसके मतानुसार यह देश उत्तर की ओर चौड़ा और दक्षिण की ओर संकीर्ण है। चीनी यात्री युवान-च्वांङ्, जो सातवीं शती ईस्वी में भारत आया—ने इस देश को अर्धचंद्राकार बतलाया है जिसका व्यास या चौड़ा वाला भाग उत्तर में और छोर दक्षिण में है। मुख्यतया उसकी यात्राएँ भारत के उत्तरी भाग तक ही सीमित थीं जो अर्धचंद्र के सदृश कहा जा सकता है विन्ध्य जिसका आधार है, और अपनी दो भुजाओं को दो दिशाओं में फैलाये हुए हिमालय जिसका व्यास है। भारतवर्ष के आकार के विषय में मेगस्थनीज़ और डायमेकस का मत है कि दक्षिण समुद्र से काकेशस तक इसकी दूरी 20,000 स्टेडिया[2] से भी अधिक है।[3] मेगस्थनीज़ के अनुसार भारत की सबसे कम चौड़ाई 16,000 और इसकी न्यूनतम लम्बाई 22,300 स्टेडिया है।[4] संस्कृत बौद्ध ग्रंथों में हमें भारत के आकार-प्रकार के विषय में कोई झलक नहीं मिलती है।

पूर्वकालीन भारतीय ग्रंथों के अनुसार हमें भारत के पाँच परंपरानुगत भाग ज्ञात हैं। काव्यमीमांसा (पृ० 93) में यह स्पष्ट उल्लेख है कि प्राच्य देश वाराणसी के पूर्व में; माहिष्मती (नर्मदा के तट पर मान्धाता से समीकृत) के दक्षिण में दक्कन या दक्षिणापथ; देवसभा के पश्चिम में पश्चिमीदेश; पृथूदक (थानेश्वर के लगभग 14 मील पश्चिम में स्थित, वर्तमान पेहोआ) के उत्तर में उत्तरापथ स्थित है और गंगा-यमुना के संगम तक के अंतवर्ती प्रदेश को अन्तर्वेदी कहा गया है। उस समय जव काव्यमीमांसा लिखी गयी थी, आर्यों ने पहले से ही मध्यदेश की प्राचीन सीमाओं का अतिक्रमण कर लिया था और आर्य प्रदेश वाराणसी तक फैल चुका था।

जैसे ब्राह्मण मतानुयायी आर्यों के लिए वैसे ही बौद्धों के लिए भी, आर्यावर्त्त—

---

[1] दीघ०, II, पृ० 235.

[2] 1 स्टेडिया=202 गज।

[3] मैक्रिंडिल, ऐंश्येंट इंडिया ऐज़ डिस्क्राइब्ड बाई मेगस्थनीज़ ऐंड एरियन, पृ० 49.

[4] वही, पृ० 50.

जिसका उल्लेख पतञ्जलि ने अपने महाभाष्य (12, 4, 1, पृ० 244) में किया है—धर्मसूत्रों एवं धर्मशास्त्रों में—पश्चिम में विनशन (जहाँ सरस्वती नदी विनष्ट होती है) से लेकर पूर्व में कालक वन तक, तथा उत्तर में हिमालय से लेकर दक्षिण में पारिपात्र तक फैला हुआ बतलाया गया है। लगभग सभी ब्राह्मण ग्रंथ भारतवर्ष के सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण भाग मध्यदेश या आर्यावर्त्त का वर्णन करते हैं। ब्राह्मण धर्मावलंबी आर्यों या बौद्धों ने अपनी संपूर्ण जीवन-लीला मध्यदेश के आश्रयस्थल पर ही अभिनीत की। पुराणों के भुवन-कोष खण्ड में प्रदर्शित भारत के पाँच भाग काव्यमीमांसा में वर्णित भागों के समान हैं। ये भाग निम्नलिखित हैं—

1. मध्यदेश
2. उदीच्य या उत्तरापथ (उत्तरी भारत)
3. प्राच्य (पूर्वी भारत)
4. दक्षिणापथ (दक्कन), और
5. अपरान्त (पश्चिमी भारत)

पाणिनि ने अपनी अष्टाध्यायी (8. 3. 75) में प्राच्य-भारत देश का वर्णन किया है। प्रारम्भिक ब्राह्मण और बौद्ध ग्रंथों में मध्यदेश अथवा मज्झिम-देश की सीमाओं का उल्लेख एवं स्पष्टीकरण किया गया है। बहुत पहले सूत्रों के युग में आर्यदेश का वर्णन जो वस्तुतः उत्तरकालीन मध्यदेश ही है—बौधायन धर्मसूत्र में किया गया है जो सरस्वती नदी के विनशन प्रदेश के पूर्व, प्रयाग के निकट कहीं पर स्थित कालक वन क्षेत्र के पश्चिम,[1] पारिपात्र के उत्तर और हिमालय के दक्षिण में[2] जैसा कि पहले बतलाया जा चुका है स्थित है। इस प्रकार न केवल वर्तमान बंगाल का प्रदेश वरन् बिहार भी—जिसमें प्राचीनकाल में संपूर्ण मगध देश संमिलित था —इसकी पूर्वी सीमा के बाहर था। मनु के धर्मशास्त्र में सूत्रों के आर्यावर्त्त को मध्यदेश कहा गया है। मनु ने इसकी सीमा उत्तर में हिमालय से लेकर दक्षिण में विन्ध्य तक, और पश्चिम में विन्ध्य से लेकर पूर्व में प्रयाग तक निर्धारित की है।[3] सूत्रों का आर्यावर्त्त और मनु का मध्यदेश काव्यमीमांसा (पृ० 93) के अनुसार अन्तर्वेदी के नाम से विश्रुत है, जो पूर्व में वाराणसी तक फैला हुआ है। मध्यदेश की पूर्वी सीमा समय की प्रगति के

---

[1] कनिंघम, एं० ज्यॉ० इं०, इंट्रोडक्शन, पृ० XLI और XLII, पा० टि० 1.

[2] बौधायन, I, 1, 2, 9; वशिष्ठ, I, 8.

[3] हिमवद्-विन्ध्ययोर्मध्यं यत् प्राक् विनशनादपि प्रत्यगेव प्रयागाश्च मध्यदेशः।

भारत के कुछ पर्वत एवं नदियाँ

साथ शनैः-शनैः बढ़ती रही जिसके फलस्वरूप इसमें वे स्थान भी संमिलित हो गये जो ब्राह्मण धर्म की लपेट में आकर पवित्र हो गये थे। महावग्ग (जिल्द, V, पृ० 12-13) में दी गयी बौद्ध मज्झिमदेश की सीमाएँ—पूर्व में कजंगल नगर तक (जो युवान-च्वांङ् के का-चु-वेन-कि-लो से समीकृत किया गया है) जिसके आगे महासाल नगर स्थित था; दक्षिणपूर्व में सल्लवती नदी (शरावती नदी) तक; दक्षिण में शतकर्णिक नगर तक; पश्चिम में थून (स्थानीश्वर से समीकृत) के ब्राह्मण जिले तक, और उत्तर में उसीरध्वज पर्वत (जिसे कनखल, हरद्वार, के उत्तर में स्थित उसीरगिरि पर्वत से समीकृत किया गया है) तक फैली हुयी बतलायी गयी है। किन्तु दिव्यावदान (पृ० 21-22) में मज्झिमदेश की पूर्वी सीमा पूर्व की ओर और आगे बढ़ा दी गयी है, जिससे उसके अंतर्गत पुण्ड्रवर्द्धन जिसमें प्राचीनकाल में वर्तमान उत्तर बंगाल का वरेन्द्र प्रदेश शामिल था—संमिलित हो गया। दिव्यावदान में दी गयी शेष अन्य सीमाएँ महावग्ग में वर्णित सीमाओं के समान हैं। भोजवर्मन के बेलाव तथा विजयसेन के बैरकपुर ताम्र-पत्रों (न० गो० मजुमदार, इंसक्रिप्शंस ऑव बंगाल, III, पृ० 16 और आगे) में उल्लिखित मध्यदेश, अश्वघोष के मतानुसार हिमालय और पारिपात्र पर्वत जो मध्यदेश की दक्षिणी सीमा रेखा है—के मध्य स्थित बतलाया गया है (सौन्दरनन्दकाव्य, II, श्लोक, 62)। ब्राह्मण और बौद्ध ग्रंथों में कहीं भी उत्तरापथ की चारों सीमाओं का उल्लेख नहीं किया गया है। काव्यमीमांसा में संगृहीत ब्राह्मण अनुश्रुतियों के अनुसार उत्तरापथ पृथूदक के पश्चिम ओर स्थित था (पृथूदकात्परतः उत्तरापथः)। ऋग्वेदिक आर्यों के देश का एक विशाल भाग बहरहाल जो उत्तरापथ में शामिल था, ब्राह्मणों द्वारा निर्धारित आर्यावर्त्त की सीमा के बाहर था। काव्यमीमांसा के अनुसार सिन्धु नदी की संपूर्ण घाटी जो ऋग्वेदिक सभ्यता एवं संस्कृत की आश्रयस्थली थी—उत्तरापथ में संमिलित थी। वशिष्ठ एवं बौधायन के धर्मसूत्रों तथा मनु के धर्मशास्त्र में यह संकेत किया गया है कि उत्तरापथ उस स्थान के पश्चिम में स्थित है, जहाँ पर सरस्वती नदी अदृश्य होती है। बौद्धों का उत्तराखण्ड भी ब्राह्मण मतानुयायी थून या थानेश्वर विषय के पश्चिम में स्थित था। खारवेल के हाथीगुम्फा अभिलेख में वर्णित उत्तरापथ कदाचित् मथुरा समेत मगध तक इसके दक्षिणी-पूर्वी प्रसार के प्रदेशों को द्योतित करता है। ऐसा अनुमान किया जा सकता है कि मूलतः उत्तरापथ एक विशाल व्यापारिक मार्ग या दूसरे शब्दों में उत्तरी जन-पथ रहा होगा जो सावत्थी से गन्धार में तक्कसिला तक जाता था। यह पूर्णतः असंभाव्य नहीं कि पालि साहित्य में वर्णित उत्तरापथ पूर्व में अङ्ग से उत्तरपश्चिम में गंधार और

उत्तर में हिमालय से लेकर दक्षिण में विन्ध्य तक सम्पूर्ण उत्तरी भारत को भी द्योतित करता रहा हो। ऐसा प्रतीत होता है कि हर्षचरित के लेखक बाणभट्ट की दृष्टि में उत्तरापथ में उत्तर प्रदेश के पश्चिमी भाग, पंजाब और भारत तथा पाकिस्तान के पश्चिमोत्तर सीमांत प्रदेश संमिलित थे।

काव्यमीमांसा (पृ० 93) के अनुसार देवसभा के पश्चिम में स्थित प्रदेश पश्चात् देश या पश्चिमी देश के नाम से विश्रुत था।[1] पालि ग्रंथ सासनवंश (पृ० 11) के अनुसार अपरान्तक का पश्चिमी भारत अपर इरावती नदी के पश्चिम में स्थित था। सर रा० गो० भंडारकर के मतानुसार उत्तरीकोंकण ही अपरान्त था शूर्पारक या आधुनिक सोपारा जिसकी राजधानी थी। भगवान-लाल इंद्रजी के विचारानुसार भारत का पश्चिमी समुद्रांचल अपरान्तक या अपरान्तिक के नाम से विख्यात था। महाभारत (भीष्मपर्व, IX, 335; वनपर्व, CCXVII, 7885-6; शान्तिपर्व, XLIX, 1780-82) में अपरान्त का प्रायः उल्लेख किया गया है। मार्कण्डेय पुराण (अध्याय, 58) के अनुसार अपरान्त सिन्धु-सौवीर प्रदेश के उत्तर में स्थित प्रतीत होता है। दे० रा० भंडारकर के अनुसार एरियाके (Ariake) अपरान्तिक था। अशोक के पंचम शिलालेख में अपरान्त का उल्लेख है। ल्यूडर्स की तालिका के 965 वें अभिलेख में भी इसका वर्णन किया गया है। गौतमी बलश्री के नासिक-अभिलेख से हमें यह ज्ञात होता है कि उसके पुत्र ने अपरान्त के ऊपर अपना आधिपत्य स्थापित किया जो कालांतर में पश्चिमी भारत के शक-क्षत्रप रुद्रदामन द्वारा पुनः जीत लिया गया जैसा कि 150 ई० में लिखित जूनागढ़ अभिलेख के साक्ष्य से प्रकट होता है। और अधिक विवरण के लिए लाहा द्वारा लिखित 'ट्राइब्स इन ऐंश्येंट इंडिया, पृ० 392 और 'इंडोलॉजिकल स्टडीज़', जिल्द I, पृ० 53 द्रष्टव्य हैं।

जैसा पहले संकेत किया जा चुका है काव्यमीमांसा के अनुसार दक्षिणापथ वह प्रदेश है जो मान्धाता से समीकृत माहिष्मती के दक्षिण में स्थित है। कुछ लोगों की धारणा है कि यह प्रदेश राम के सेतु और नर्मदा नदी के मध्य में स्थित है। (हल्टश्, सा० इं० इं०, I, पृ० 58; फ्लीट, इंडियन ऐंटिक्वेरी, VII, पृ० 245)। धर्मसूत्रों से यह तथ्य सिद्ध होता है कि दक्षिणापथ, सामान्यतया विन्ध्य के एक भाग से समीकृत पारिपात्र के दक्षिण में स्थित है। विनयपिटक के महावग्ग और दिव्यावदान में दक्षिणजनपद सतकर्णिक नगर के दक्षिण में स्थित बतलाया

---

[1] देवसभायाः परतः पश्चात्देशः, तत्र देवसभा-सुराष्ट्र दसेरक-त्रवन-भृगुकच्छ-कच्छीय-आनर्त ब्राह्मणवाह यवन-प्रभृतयो जनपदाः।

गया है। प्रसिद्ध बौद्ध भाष्यकार बुद्धघोष ने गंगा के दक्षिण में स्थित भू-भाग को दक्कन या दक्षिणापथ बतलाया है (सुमंगलविलासिनी, I, पृ० 265)। सुत्त-निपात (पंचम भाग के आमुख, विनय-महावग्ग, V, 13; विनयचुल्लवग्ग, XII, 1) में गंगा के दक्षिण और गोदावरी के उत्तर में स्थित संपूर्ण भू-भाग को दक्षिणापथ कहा गया है। संस्कृत बौद्ध ग्रंथों में दक्षिणापथ शरावती नदी और पारिपात्र पर्वत के पार दक्षिण में फैला हुआ बतलाया गया है।

दमिड़—गंगा के दोनों ओर जिनके दो संनिवेश थे, तमिलों से समीकृत किये गये हैं। ये युद्धप्रिय थे और समय-समय पर ये लंकाद्वीप को अत्यधिक पीड़ित करते थे। उन्हें असभ्य (अनरिया) बतलाया गया है। "जिसकी लाठी उसकी भैंस" उनकी नीति थी जिसका पालन वे दृढ़ता से करते थे, जिसके परिणाम-स्वरूप वे लंका-निवासियों से प्राय: सभी युद्धों में पराजित हुए और उनकी निर्मम हत्या कर दी गयी (महावंसटीका, पृ० 482; लाहा, ट्राइब्स इन ऐंश्येंट इंडिया, पृ० 168 और आगे; लाहा, ज्यॉग्रेफिकल एसेज, अध्याय IV,)। बौद्ध स्तूपों के प्रति वे अश्रद्धालु थे (महावंसटीका, पृ० 447)।

प्राच्य देश मध्यदेश के पूर्व में स्थित था, किन्तु जैसे समय-समय पर मध्यदेश की पूर्वी सीमा परिवर्तित होती गयी, वैसे प्राच्यदेश की पश्चिमी सीमा घटती गयी। धर्मसूत्रों के अनुसार प्राच्यदेश प्रयाग के पूर्व में स्थित था। काव्यमीमांसा के अनुसार यह वाराणसी के पूर्व में, जबकि वात्स्यायन सूत्र के भाष्यानुसार यह अङ्ग देश के पूर्व में स्थित था। पूर्वदेश की पश्चिमी सीमा और भी अधिक संकुचित हो गयी और विनय महावग्ग के अनुसार यह कजंगल तक अथवा दिव्यावदान के अनुसार पुण्ड्रवर्द्धन तक फैली हुयी थी।

संस्कृत बौद्ध ग्रंथों में भारतवर्ष के तीन भागों, मध्यदेश, उत्तरापथ, और दक्षिणापथ का उल्लेख किया गया है। पाणिनि ने अपनी अष्टाध्यायी (5.1.77) में उत्तरापथ का उल्लेख किया है। पतञ्जलि ने भी अपने महाभाष्य में इसका वर्णन किया है। दण्डिन ने अपने काव्यादर्श (I. 60; I. 80) में दक्षिणात्य और अदक्षिणात्य जनों का उल्लेख किया है। अंतिम दो भागों के केवल नाममात्र का उल्लेख किया गया है। न तो उनकी सीमाओं का ही स्पष्टीकरण किया गया है और न ही उन देशों या प्रदेशों का कोई वर्णन है, जो उन भू-भागों के अंगभूत हैं। दो अन्य भू-भागों—अपरान्त या पश्चिमी तथा प्राच्य—का नामोल्लेख तक नहीं है किंतु दिव्यावदान में दी गयी मध्यदेश की सीमा से उनका आभास मिलता है।

चीनियों ने भी भारतवर्ष का पाँच प्रांतों में विभाजन ग्रहण कर लिया था।

सातवीं शताब्दी ई० के थंग (Thong) वंश के शासकीय प्रलेखों में भारतवर्ष को पाँच भागों वाला देश बतलाया गया है, जिनके नाम प्राच्य, प्रतीच्य, उदीच्य, दक्षिण और मध्य हैं, और जो सामान्यतः पंचभारत (Five Indies) के नाम से विख्यात थे (कनिंघम, एं० ज्यॉ० इं०, पृ० 11)। पाँच भागों में विभाजन की चीनी पद्धति स्वल्प रूपांतरों के साथ प्रत्यक्ष रूप से पुराणों में वर्णित हिंदू ब्राह्मण प्रथा से ग्रहण की गयी थी। आधुनिक भारतवर्ष और निकटस्थ देशों को अपनी सुविधानुसार इस प्रकार विभाजित किया जा सकता है—

1. उत्तरी भारत जिसमें सरस्वती नदी के पश्चिम में स्थित वर्तमान सतलज नदी के इधर के प्रदेश और सिन्धु नदी के उस पार संपूर्ण पूर्वी अफ़गानिस्तान, निकटवर्ती पहाड़ी राज्यों सहित कश्मीर और मुख्य पंजाब के प्रदेश संमिलित हैं। सिन्धु नदी की संपूर्ण घाटी उत्तरी भारत में संमिलित है।

2. पश्चिमी भारत जिसमें सिन्ध और पश्चिमी राजपूताना (संप्रति राजस्थान में) कच्छ और गुजरात तथा नर्मदा नदी के निचले प्रवाह के समीप तट का एक भाग संमिलित था।

3. मध्य देश (Mid-India or Central India) जिसमें थानेश्वर से लेकर गंगा के डेल्टा तक गंगा नदी के संपूर्ण प्रदेश और हिमालय पर्वत से लेकर नर्मदा नदी के तट तक के प्रदेश संमिलित थे।

4. पूर्वी भारत, जिसमें मुख्य बंगाल और असम सहित गंगा नदी का संपूर्ण डेल्टा, संबलपुर, उड़ीसा और गंजम के प्रदेश संमिलित थे।

5. दक्षिण भारत—बरार, तेलंगाना, महाराष्ट्र और कोंकण के आधुनिक क्षेत्र तथा हैदराबाद, मैसूर, ट्रावनकोर-कोचीन के पृथक् भूतपूर्व रियासतों सहित दक्षिण-भारत, जिसमें पश्चिम नासिक और पूर्व में गंजम से लेकर दक्षिण में कन्याकुमारी तक का संपूर्ण प्रायद्वीप या नर्मदा और महानदी नदियों के दक्षिण में स्थित संपूर्ण प्रायद्वीप के भाग संमिलित थे (कनिंघम, एं० ज्यॉ० इं०, पृ० 13-14)।

दक्षिण भारत का आकार एक उलटे त्रिभुज की भाँति है जिसका शीर्ष दक्षिण में भूमध्यरेखा के 8° उत्तर में कन्याकुमारी पर स्थित है। प्रायद्वीप के दोनों किनारे पश्चिम में अरब सागर और पूर्व में बंगाल की खाड़ी से परिवृत हैं। त्रिभुज का आधार विन्ध्यपर्वत है, जो इसकी उत्तरी सीमा है। विन्ध्य और सत-पुड़ा पर्वतों के साथ ही अजंता और अरावली पर्वतों का उल्लेख किया जा सकता है। अजंता के दक्षिण में हैदराबाद का प्रदेश स्थित है। सतपुड़ा और अन्य पहाड़ियों के दक्षिण में दण्डकारण्य नामक एक अभेद्य जंगल था। सुदूर दक्षिण

में तमिल देश, आंध्र देश और मलयालम क्षेत्र हैं। मलयालम क्षेत्र के उत्तर में मुख्य प्रदेश है और उसके पार महाराष्ट्र का देश।

भारत के ये परंपरानुगत क्षेत्र देश को विविध भागों में विभाजित करने की किसी नई योजना बनाने में अत्यधिक सहायक सिद्ध होंगे।

IV. प्राकृतिक विशेषताएँ

भौगोलिक दृष्टि से भारत की स्थिति बड़ी लाभकर है। यह पूर्वी गोलार्ध के मध्य में और दक्षिणी एशिया के केंद्रीय प्रायद्वीप के रूप में स्थित है। इस प्रकार इसकी सामुद्रिक स्थिति हिंद महासागर के आसपास स्थित देशों से व्यापार के लिए सर्वथा अनुकूल है। पुनश्च, सुनिश्चित प्राकृतिक सीमाएँ प्रदान करने में प्रकृति किसी अन्य देश की अपेक्षा भारत के अधिक अनुकूल रही है। इसके पूर्वी, पश्चिमी और दक्षिणी—तीनों किनारे क्रमशः बंगाल की खाड़ी, अरब सागर और हिंद महासागर से प्रक्षालित हैं। उत्तर, पश्चिमोत्तर और उत्तर-पूर्व में यह देश चीनी तुर्किस्तान और तिब्बत, ईरानी पठार और बलूचिस्तान तथा बर्मा की चिंदविन और इरावदी नदियों की घाटियों से एक विशाल प्राचीर द्वारा विभक्त है। विभाजन के पूर्व भारत की सीमाओं के भीतर संमिलित पूरा क्षेत्र लगभग पंद्रह लाख वर्गमील था, जो यूरोप के एक तिहाई भाग के आकार से अधिक है। फेनिल तरंगों द्वारा प्रताड़ित इसका समुद्रतट लगभग 3,000 मील से भी अधिक लंबा है। यह प्रायः अविच्छिन्न है और इसमें ऐसी बहुत कम खाड़ियाँ या आखात हैं, जिनका प्रयोग प्राकृतिक बंदरगाहों के रूप में किया जा सकता है।

भारत के आकार की विशालता इसकी प्राकृतिक विशेषताओं की विलक्षणता के बिलकुल अनुरूप है। हिमालय की गौरवशाली ऊँचाइयों से लेकर अदृश्य रूप से समुद्र में विलीन हो जाने वाले निम्न देशों तक, और असम की वर्षायुक्त पहाड़ियों से सिन्ध के शुष्क मरुस्थल तक परिलक्षित होने वाली अपनी जलवायु-परक विविधता सहित भारत प्राणि एवं वनस्पति जगत् के प्रचुर वैचित्र्य से अनुग्रहीत रहा है। इस ऐतिहासाहिक देश में बसने वाली तथा अगणित भाषाएँ बोलने वाली असंख्य मानव जातियाँ कुछ कम उल्लेखनीय नहीं हैं। सचमुच, भारत संपूर्ण विश्व का प्रतिरूपक है। अन्य देशों की भाँति भारत का इतिहास भी इसके भूगोल द्वारा प्रभावित रहा है। अतएव इसकी कुछ प्रमुख प्राकृतिक विशेषताओं का विशद् अध्ययन आवश्यक है।

अ. पर्वत

उत्तर में उस पर्वत-प्राचीर में जिसका उल्लेख हमने ऊपर किया है,

हिमालय, हिमालय के पार के पर्वत और उसकी पूर्वी तथा पश्चिमी प्रशाखाएँ संमिलित हैं।

हेमवत (पालि हिमवा, हिमालय और हिमवंत पदेस, संस्कृत हैमवत्)—इस पर्वत का उल्लेख, जिसें कालिदास ने नगाधिराज (कुमारसम्भव, I) कहा है, ऋग्वेद (X. 121. 4) और अथर्ववेद (XII. 1. 2) में है। तैत्तिरीय संहिता (V. 5. 11. 1) वाजसनेयि संहिता (XXIV. 30; XXV. 12) और ऐतरेय ब्राह्मण (VIII. 14. 3) में भी इसके प्रति संकेत है। महाभारत (वनपर्व, अ०. 253) के अनुसार हैमवत्-क्षेत्र नेपाल-विषय के ठीक पश्चिम में स्थित था और इसमें मुख्यरूप से कुलिन्दविषय (टालेमी का Kunindrae) संमिलित था जिससे उन ऊँचे पहाड़ों वाले क्षेत्र का बोध होता था, जिसमें गंगा, यमुना और सतलज के स्रोत स्थित थे। इस प्रकार इसमें हिमालय-प्रदेश और देहरादून के कुछ भाग संमिलित माने जा सकते हैं। भागवत और कूर्मपुराण में (30. 45-48) इसका उल्लेख है। योगिनीतंत्र (1. 16) में इस पर्वत का वर्णन है। कालिकापुराण (अध्याय, 14. 1) में भी इसका उल्लेख किया गया है। कालिकापुराण (अ० 14. 51) में पर्वतों के राजा के रूप में इसका वर्णन किया गया है। महाकाव्यों और पुराणों में हिमवंत को वृषपर्वत और मर्यादापर्वत—दोनों ही कोटि में रखा गया है। मार्कण्डेय पुराण का लेखक हिमवंत को धनुष की प्रत्यंचा के समान पूर्वी समुद्र से पश्चिमी समुद्र तक फैला हुआ मानता था (कार्मुकस्य यथागुणः, 54, 24; 57, 59)। मार्कण्डेय पुराण का विवरण महाभारत (VI. 6. 3) और कुमारसंभव (I. 1)द्वारा पुष्ट होता है। असम और मणिपुर तक फैला हुआ पूर्वी हिमालय क्षेत्र मोटे रूप से जम्बूद्वीप का हिमवत् संभाग था, जिसके बारे में अशोक ने अपने तेरहवें शिलालेख में नामकों और नामपंतियों का प्रथम बार प्रयोग किया है (बरुआ, अशोक ऐंड हिज़ इंस्क्रिप्शंस, भाग 1, पृ० 101)। जम्बूद्वीप का हिमालय क्षेत्र (पालि में हिमवंतपदेस) पालि विवरणों के अनुसार उत्तर की ओर सुमेरु पर्वत (पालि में सिनेरु) के दक्षिण ओर तक फैला था। भारत के हैमवत् संभाग की दक्षिणी सीमा कालसी वर्ग के शिलालेखों, अशोक के लुम्बिनी, निग्लीव और चंपारण के स्तंभों से संकेतित होती है (वही, पृष्ठ 81-82)। हैमवत पदेस को कुछ लोगों ने तिब्बत, फर्ग्युसन ने नेपाल और रीज़ डैविड्स ने केंद्रीय हिमालय से समीकृत किया है। प्राचीन भूगोल-वेत्ताओं के अनुसार हिमवंत की संज्ञा उस संपूर्ण पर्वत-माला को दी गयी थी जो पंजाब के पश्चिम में सुलेमान से होकर पूर्व में असम एवं अराकान, पर्वत-श्रेणियों तक भारत की संपूर्ण उत्तरी सीमा तक फैली हुयी थी। बुद्ध ने शाक्य

और कोलिय-गण को हिमालय भेजा था और उन्होंने उनको हिमालय प्रदेश के विभिन्न पर्वतों की ओर संकेत किया था। कैलास पर्वत हिमालय पहाड़ का एक भाग था किंतु मार्कण्डेय पुराण में इसे एक पृथक् पर्वत बतलाया गया है। अल्बेरुनी के अनुसार मेरु और निषध हिमालय की पर्वत-शृंखला से संबद्ध थे। हिमालय पर्वत वह स्रोत है जहाँ से दस नदियों का उद्गम हुआ है (मिलिन्द०, 114)। टालेमी ने बताया है कि इमाओस (Imaos=हिमालय पर्वत) गंगा, सिन्धु, कोआ (Koa) और स्वात नदियों का स्रोत है। अपदान में पर्वतराज नाम से भी विश्रुत हिमवन्त (अंगुत्तर निकाय, I, 152) के निकट के कुछ अन्य पहाड़ों का उल्लेख है, यथा कदम्ब (पृ० 382), कुक्कुर या कुक्कुट (पृ० 178), भूतगण (पृ० 179), कोसिक (पृ० 381), गोतम (पृ० 162), पद्रुम (पृ० 382), भरिक (पृ० 440), लम्बक (पृ० 15), वसभ (पृ० 166), समंग (पृ० 436) और सोभित (पृ० 328)। भारतवर्ष की भौगोलिक सीमाओं के अंतर्गत हिमालय ही अकेला वर्षपर्वत है (द्रष्टव्य, वि० च० लाहा, ज्यॉग्रेफी ऑव अर्ली बुद्धिज्म्, 27, 41-42); अधिक विवरण के लिए देखिए, वि० च० लाहा, इंडिया ऐज़ डिस्क्राइब्ड इन द अर्ली टेक्सट्स ऑव बुद्धिज्म् ऐंड जैनिज्म्, पृ० 5 और आगे; वि० च० लाहा, ज्यॉग्रेफिकल एसेज़, पृ० 82; वि० च० लाहा, माउंटेंस ऑव इंडिया, पृ० 4 और आगे। ल्यूडर्स की तालिका, क्रम संख्या 834 में हिमवंत पर्वत का नाम आया है। देवपाल के मुंगेर दान-पत्र में केदार का उल्लेख है, जो हिमालय में अवस्थित है। कालिकापुराण से (अध्याय, 14. 31) ज्ञात होता है कि शिव और पार्वती हिमालय पर्वत में स्थित महाकौशिकी नदी के उद्गम तक गये थे।

विश्व की सर्वोच्च पर्वत-श्रेणी हिमालय की बनावट एक वृत्ताकार चाप की भाँति है जिसका उन्नतोदरत्व, पश्चिम में सिन्धु और पूर्व में ब्रह्मपुत्र नदियों के मध्य भारत की ओर उलटा हुआ है। इसमें विभिन्न ऊँचाइयों वाले प्रायः तीन समानांतर शैल-कूट हैं, जिनके नाम बृहद् हिमालय (The great Himalaya), लघुत्तर हिमालय (The lesser Himalaya) और बाह्य हिमालय (The outer Himalaya) हैं। बृहद् हिमालय में सबसे ऊँची पर्वतश्रेणी समाविष्ट है और यह समुद्रतल से 20,000 फीट अथवा अविरत हिम-सीमाओं से भी अधिक ऊँची है। सौ से अधिक शिखर इस सीमा का अतिक्रमण करते हैं और उनमें नग्न पर्वत (26,620 फीट), तुमकुम (23,410 फीट), नन्दादेवी (25,645 फीट), त्रिशूल (23,360 फीट), नन्दकोट (22,510 फीट), दुनगिरि (23,184 फीट), बद्रीनाथ (23,190 फीट), केदारनाथ (22,770

फीट), नीलकण्ठ (21,640 फीट), गंगोत्री (21,700 फीट), श्रीकण्ठ (20,120 फीट), बन्दरपूँछ 20,720 फीट), संपूर्ण विश्व में सबसे अधिक ऊँची चोटी-गौरीश्रृंग अथवा ऐवरेस्ट शिखर (29,002 फीट), कांचनचंगा (28,143 फीट), धौलगिरि (26,795 फीट), मकलु (22,790 फीट), गोसांईथान (26,291 फीट) और नम्च बरवा (25,495 फीट) सबसे अधिक विश्रुत हैं। गौरीश्रृंग या गौरीशंकर, कांचनजंगा और धौलगिरि नेपाल हिमालय के सर्वोच्च शिखर हैं जो कुमाऊँ हिमालय की पूर्वी सीमा से यथासंभव तिस्ता नदी तक फैला है। नम्च बरवा आसाम-हिमालय में संमिलित है जो तिस्ता नदी से भारत के सबसे पूर्वी सीमांत तक फैला हुआ है। गौरीशंकर वास्तव में नेपाल-तिब्बत सीमा पर स्थित है। यह देवधुंग, कोमो कंकर, कोमो लुंगमा, कोमो-उरी, चेलुंगोन और मि-ति-गु-ति-च-पु लोंगंग आदि अनेक नामों से विश्रुत है। हिमालय के इस शिखर ने अपनी उच्चता और स्थानीय नाम—दोनों के ही संबंध में पूर्णता के लिए किये गये थोड़े से प्रयत्न को तुच्छ ही समझा है। इस सर्वोच्च पर्वत-शिखर के वास्तविक अन्वेषक के विषय में मत-वैभिन्न्य है। कुछ लोग राधानाथ सिकदार को इसका अन्वेषक होने का दावा करते हैं, किन्तु अन्य लोगों की धारणा है कि भारतीय सर्वेक्षण विभाग ((Department of Survey of India) के संमिलित प्रयत्नों के कारण इसका अन्वेषण हो सका। भारतवासी तेनजिंग और न्यूजीलैंडवासी हिलारी—जो दोनों ही ब्रिटिश माउंट ऐवरस्ट अभियान दल के सदस्य थे—1953 में ऐवरेस्ट पर्वत के शिखर पर चढ़ने वाले प्रथम व्यक्ति थे।

लघुत्तर हिमालय में बृहद् हिमालय के दक्षिणी पर्वत-प्रक्षेप और बृहद् हिमालय पर्वतमाला के समानांतर यथासंभव सिवालिक पर्वत की बाहरी श्रेणियों तक फैली हुयी निचली ऊँचाइयों वाली पर्वत मालाएँ संमिलित हैं। इसकी औसत चौड़ाई 50 मील है। कश्मीर-घाटी के दक्षिण से, ब्यास नदी के स्रोत के पार पूर्व की ओर बढ़ता हुआ पीरपंजल बृहद् हिमालय पर्वत माला में थोड़ा और आगे पूरब में मिलता है। जम्मू में उधमपुर के निकट से पश्चिम में शिमला पहाड़ियों तक फैली हुयी धवलाधर पर्वतमाला पीरपंजल के दक्षिण में स्थित है, और बृहद् हिमालय पर्वतमाला से बद्रीनाथ के निकट मिलती है। बाह्य हिमालय में वे निचली पहाड़ियाँ संमिलित हैं जो सिन्धु से ब्रह्मपुत्र तक फैली हुयी बृहद् हिमालय पर्वत श्रेणी के प्रायः समानांतर हैं। पश्चिम में ये सिवालिक पहाड़ियों के नाम से विख्यात हैं, जो ब्यास से गंगा नदी तक लगभग 200 मील तक फैली हुयी हैं, और जिन्हें प्राचीन भूगोल-वेत्ता मैनाक पर्वत के नाम से जानते थे। तराई के

आगे निचले देश की पट्टियाँ हैं, और सिवालिक के पीछे उत्तर प्रदेश का सुविज्ञात देहरादून जिला स्थित है। हिमालय-पार के क्षेत्र में हिन्दूकुश, काराकोरम और कैलासपर्वत समाविष्ट है। हिन्दूकुश पर्वत, जिसे प्राचीन भारतीय माल्यवत् और यूनानी, भारतीय काकेशस की संज्ञा से जानते थे—हिमालय के पश्चिमोत्तरी छोर से प्रारंभ होता है और पहले भारत को अफ़गानिस्तान से अलग करते हुए और फिर उत्तर-पूर्वी अफ़गानिस्तान में होते हुए, दक्षिण-पश्चिम की ओर फैला है।

मुख्य श्रेणी से अनेक पर्वत-प्रक्षेप जैसे आक्सस को कोकचा से अलग करने वाली बदखशाँ और कोकचा पर्वत-माला को कुन्दुज़ से विभक्त करने वाली कोकचा निःसृत हैं। पूर्वी खंड में हिन्दूकुश की ऊँचाई 14,000 से 18,000 फीट के मध्य घटती-बढ़ती रहती है। काराकोरम—जिसे प्राचीन भूगोल-वेत्ता कृष्ण-गिरि के नाम से जानते थे, पश्चिम में लगातार हिन्दूकुश के साथ है। यह कश्मीर की उत्तरी सीमा है। इसकी क्रोड़ में गाडविन आस्टिन (28,250 फीट) की ऊँची चोटी स्थित है। दक्षिण-पूर्व की ओर काराकोरम की एक शैलबाहु का अनुसरण करते हुए हम, मानस-सरोवर पर छाये हुये कैलास पर्वत पर पहुँचते हैं। आधुनिक भूगोल-वेत्ताओं के अनुसार यह पर्वत पहले ही उठा था और इस-लिए खास हिमालय से अधिक पुराना है। यह हरकीनियन (Hercynian Age) युग का है, और इसके उन्नत होने के बाद इसमें अत्यधिक घाटियाँ एवं स्तरभ्रंश हुये। मानस-सरोवर के पूर्व में बृहत्तर हिमालय के समानांतर लदख श्रेणी नामक एक ऊँची पर्वत माला है। मुख्यतया यह स्फटिक प्रस्तर का बना हुआ और लगभग पचास मील चौड़ी एक घाटी द्वारा बृहत्तर हिमालय से अलग किया गया है। लदख श्रेणी के पचास मील पीछे उसके समानांतर कैलास पर्वत-माला स्थित है। इसमें संयुक्त-शिखरों के अनेक समूह हैं। इस प्रकार का एक समूह मानस-सरोवर के निकट है और इन समूहों में कैलास शिखर (22,028 फीट) सर्वोच्च है, जिसे प्राचीन भूगोल-वेत्ता वैद्यूतपर्वत कहते थे। ज़सकर पर्वत-माला नंपा के निकट महान् हिमालय पर्वत माला से दो शाखाओं में बँट जाती है। इसमें कामेत शिखर (25,447 फीट) संमिलित है। इसके अतिरिक्त और भी अन्य शिखर हैं, और यह श्रेणी उत्तर-पश्चिम में सिन्धु नदी के पार तक फैली हुयी है।

सिन्धु नदी की घाटी को बलूचिस्तान की पहाड़ियों से पृथक् करती हुयी और पश्चिम में देहरा-इस्माइल खाँ से समुद्रतट तक फैली हुयी एक ऊँची पर्वत-माला भारत के उत्तर-पश्चिम में है। इस पर्वतमाला के उत्तरी भाग को सुलेमान पर्वत कहा जाता है, जिसे प्राचीन भूगोल-वेत्ता अञ्जन नाम से जानते थे। इसका

दक्षिणी भाग, किरथर पर्वत, मूल नदी की कृश धारा से दक्षिण की ओर समानांतर शैल-शिलाओं की एक शृंखला में 190 मील तक फैला हुआ है।

भारत के उत्तर-पूर्व में घाटीयुक्त पर्वतों का लगभग एक अविराम कूट—जिसकी रचना हिमालय के सदृश है, बिल्कुल बंगाल की खाड़ी तक के समुद्रतट तक फैला हुआ है और बर्मा को भारत से पृथक् करता है। उत्तर से दक्षिण तक इसमें मिश्मी पर्वत, पटकाई व नाग पहाड़ियाँ, बरैल श्रेणी, लुशाई पहाड़ियाँ, और अराकान योमा संमिलित हैं। प्राचीन भारतीय वाङ्मय में हमें इन पहाड़ियों एवं पर्वतों का उल्लेख नहीं प्राप्त होता, क्योंकि प्राचीन काल के भूगोल-वेत्ताओं द्वारा इनका अन्वेषण पूर्णरूप से न किया जा सका था। उत्तर-पूर्व में स्थित पर्वत प्राचीर से पश्चिम में असम की ओर एक बड़ी शाखा निकलती है। इस शाखा से जैन्तिया, खासी और गारो पहाड़ियों की रचना हुई है।

चूँकि इसका मुख्य शिखर अविरत तुषार-सीमा से ऊँचा है, अतएव प्राचीन भारत के भूगोल-वेत्ताओं ने सुचित्यरूप से उसका नामकरण हिमवंत या हिमालय किया था। एक विशालकाय धनुष की प्रत्यंचा के साथ हिमालय के आकार की तुलना हिमालय के रुख-विषयक हमारे वर्त्तमान ज्ञान से श्लाघनीय रूप से संगत है। हिमालय की यह ठीक स्थिति और भारतीय मैदानों की ओर उन्मुख इसकी उत्तलता दक्षिण से आने वाली प्रमुख स्पर्शरेखीय संभंग के कारण हो सकती है।

हिमालय से पहले बहुत दूर तक पर्वतमाला के रुख के समानांतर बहती हुयी, मुख्य शृंखलाओं को काटकर हिमालय से निकली हुयी नदियाँ, गहरी, टेढ़ी-मेढ़ी कृशधाराओं के रूप में देखी जाती हैं। सिन्धु और ब्रह्मपुत्र नदियाँ इसके सर्वोत्कृष्ट उदाहरण हैं।

भू-वृत्त के आधार पर हिमालय को तीन क्षेत्रों में विभाजित किया जा सकता है—तिब्बत, हिमालय और अधःहिमालय अंचल । पुरा एवं मध्य जीवकल्पीय युग के प्रस्तरिल तल तिब्बत-अंचल में सुविकसित हैं। हिमालय अंचल मुख्यतः मणिभ और परिवर्तनशील चट्टानों से निर्मित हैं। अधःहिमालय अंचल में पूर्णतया तृतीय युग के तल संन्निहित हैं।

एवरेस्ट के उत्तर की ओर राँगबुक हिमनद लगभग 16,500 फीट की ऊँचाई पर समाप्त हो जाता है। कंचनजंगा समूह में इन हिमनदों की ऊँचाई 13,000 फीट जब कि कुमायूँ में 12,000 फीट और कश्मीर में विशेष परिस्थितियों में 8,000 फीट तक नीचे आ सकती है। हिमालय की वनस्पतियों एवं पशुओं का एक महत्त्वपूर्ण अध्ययन किया जा सकता है। भूमध्यसागरवर्ती यूरोपीय वनस्पतियाँ हिमालय तक आती हैं। एवरेस्ट अभियानों द्वारा व्यक्त किये गये विचारों से

हिमालय क्षेत्र के वनस्पतिजगत्-विषयक हमारे ज्ञान में काफी अभिवृद्धि हुयी है। हिमालय का पक्षी-जीवन समृद्ध है। वहाँ की तितलियाँ अपने रूप-सौंदर्य एवं सुषमा के लिए विख्यात् हैं। यहाँ नाना प्रकार के अजगर, फणिधर, छिपकली एवं मेढक पाये जाते हैं।

भारत का भाग्य-विधान करने में हिमालय पर्वतकुल का बड़ा महत्त्व प्रतीत होता है। यह इस देश को एशिया के अन्य भागों से पृथक् करता है और स्थल पर विदेशों के विरुद्ध एक प्रभावशाली अवरोध के रूप में कार्य करता है। इसके उत्तर में कई दर्रे हैं, जिनको तीन वर्गों में विभक्त किया जा सकता है, यथा—शिपकी-वर्ग, अल्मोड़ा तथा दार्जिलिंग-सिक्किम समूह। इनसे भारत एवं तिब्बत के मध्य व्यापार होने से सुगमता होती है। उत्तरपूर्व में वर्मा जाने के लिए कई पृष्ठद्वार हैं जो असम में उत्तरी-पूर्वी कोने, मणिपुर राज्य और अराकान से होकर गुजरते हैं। पश्चिमोत्तर सीमांत से भारत में प्रवेश कराने वाले अनेक दर्रों में खैबर, कुर्रम, तोची, गोमल और वोलन प्रमुख हैं।

स्वयं अपने को एक चौड़े पठार के रूप में फैलाये हुए वनराजियुक्त पहाड़ियों का एक समूह भारत के पश्चिम में खंभात की खाड़ी से लेकर पूरब में राजमहल तक तिर्यक् रूप से फैला हुआ है। पहाड़ियों का यह वर्ग इस देश को दो पृथक् भागों, यथा—उत्तर में गंगा की घाटी तथा दक्षिण में दक्कन के पठार में विभक्त करता है। पश्चिम से पूर्व की ओर उनके उत्तरी भाग में विंध्य तथा गया के निकट से गुजरती हुयी राजमहल के निकट समाप्त होनेवाली भारनेर एवं कैमूर की संयुक्त श्रेणियाँ संमिलित हैं। दक्षिण में और उसी दिशा में प्रायः एक समानांतर रेखा में सतपुड़ा, महादेव पहाड़ी, मैकाल श्रेणी एवं छोटा नागपुर की पहाड़ियाँ फैली हुयी हैं। विंध्य-श्रेणियों के पार, पश्चिम में काठियावाड़ प्रायद्वीप के मध्य में गिरनार पर्वत जो गुजरात में जूनागढ़ के निकट रैवतक नाम से भी विश्रुत है, स्थित है। अरावली श्रेणी जो राजस्थान के आर-पार पश्चिम से पूर्वी दिशा में जाती है और इस प्रदेश को दो समान भागों में विभक्त करती है, विंध्य माला से दक्षिणी राजपूताना और मध्यभारत (संप्रति मध्यप्रदेश में) के चट्टानी शैल-कूटों के माध्यम से घनिष्ठ रूप से संबद्ध है। राजस्थान के सिरोही जिले[1] में

---

[1] **संप्रति, मध्यभारत** (CentraI india) **प्रांत राज्यपुर्नगठन के पश्चात् (1956) भारत के मानचित्र पर से हट गये हैं। इसी प्रकार सिरोही राज्य वर्तमान राज्यस्थान में, तथा मध्यभारत, मध्यप्रदेश एवं महाराष्ट्र में बँट गया है। आगे अनुवाद में नये भौगोलिक संदर्भों का ही उल्लेख है।**

आबू का शैलद्वीप जिसे अर्बुद भी कहा जाता है, स्थित है। यद्यपि इसे अरावली श्रेणी का एक अंग समझा जाता है, किंतु दक्षिण-पश्चिम में यह इससे एक घाटी द्वारा पूर्णतः विच्छिन्न है। मेगस्थनीज़ एवं एरियन के अनुसार आबू पर्वत कैपिटेलिया (Capitelia) से समीकृत किया जा सकता है जो 6,500 फीट ऊँचा है। अरावली श्रेणी के अंतर्गत यह किसी अन्य शिखर से कहीं अधिक ऊँचा है।[1]

पारिपात्र अथवा पारियात्र, ऋक्षवत और विंध्य मध्यप्रदेश के पर्वत हैं। पारिपात्र का प्रथम उल्लेख बौधायन धर्मसूत्र[2] में प्राप्त होता है। इसमें इसे आर्यावर्त्त की दक्षिणी सीमा पर स्थित बतलाया गया है। स्कंदपुराण में इसे भारतवर्ष के केंद्र कुमारीखण्ड की दूरतम सीमा बतलाया गया है। पार्जिटर ने पारिपात्र को वर्तमान विंध्यश्रेणी के उस भाग से समीकृत किया है जो मध्यप्रदेश में भोपाल के पश्चिम, अरावली पर्वत के साथ स्थित है, जिसे टालेमी ने अपोकोपा (Apokopa) से समीकृत किया है।[3]

ऋक्षवत् की पहचान टालेमी के आक्सेंटन (Ouxenton) के साथ की गयी है। यह टाउंडिन, डोसारन और अडमस, नदियों का स्रोत है। डोसारन को दशार्ण नदी (मध्यप्रदेश में सागर के निकट वर्तमान धसन) से समीकृत किया गया है, जो टालेमी के अनुसार ऋक्ष से निःसृत बतलायी गयी है। ऋक्ष या ऋक्षवंत से उसका आशय नर्मदा के उत्तर में स्थित वर्तमान विंध्य-श्रेणी के मध्यवर्ती क्षेत्र से था।

विंध्यपर्वत टालेमी का औंडोन (Ouindon) है। यह नेमेडोस (Namados) तथा ननगौना (Nangouna) जिनकी पहचान नर्मदा और ताप्ती नदियों से की जाती है, का उद्गम-स्थल था। टालेमी के अनुसार औंडोन विंध्य के केवल उस भाग का नाम था, जहाँ से नर्मदा एवं ताप्ती नदियाँ निकलती हैं। विंध्यपर्वत के विभिन्न भाग विभिन्न नामों से जाने जाते हैं। विंध्यपाद-पर्वत टालेमी द्वारा वर्णित सार्डोनिक्स (Sardonyx) पर्वत है। इसे सतपुड़ा श्रेणी से समीकृत किया जा सकता है जिस से ताप्ती निकलती है।

---

[1] मैक्रिंडिल, ऐंश्येंट इंडिया ऐज़ डिस्क्राइब्ड बाई मेगस्थनीज़ ऐंड एरियन, पृ० 147.

[2] बौधायन, 1.1.25.

[3] मैक्रिंडिल, ऐंश्येंट इंडिया ऐज़ डिस्क्राइब्ड बाई टालेमी, एस० एन० मजुमदार संस्करण, पृ० 355.

सतपुड़ा वैदूर्य पर्वत है। महाभारत में यह पयोष्णी (ताप्ती की एक सहायक नदी) और नर्मदा नदियों से संबंधित है।[1] नर्मदा के दक्षिण में स्थित पर्वतों को अब सतपुड़ा कहा जाता है। मैकाल-श्रेणी मध्यप्रांत[2] के गोंडवाना में स्थित प्राचीन मेकल-पर्वत के लिए व्यवहृत है। इस कारण नर्मदा को मेकल-सुता कहा गया है।[3] इसकी पूर्वी चोटी अमरकण्टक, सोमपर्वत और सुरथाद्रि या सुरथ-गिरि के नाम से भी विश्रुत है।[4] अमरकण्टक तीन बड़ी नदियों, यथा, नर्मदा शोण, और महानदी का स्रोत है।

चित्रकूट पर्वत को बुंदेलखंड में काम्तानाथगिरि से समीकृत किया गया है। यह पैसुनी या मंदाकिनी नदी के तट पर स्थित एक अकेली पहाड़ी है। यह सेंट्रल रेल्वे के चित्रकूट स्टेशन से लगभग चार मील दूर है। कालंजर—जिसे बुंदेलखंड क्षेत्र (उ० प्र०) के बाँदा जिले में स्थित कालिंजर के पहाड़ी दुर्ग से समीकृत किया गया है, गंगा एवं विंध्यपर्वत के मध्य स्थित था। जैनग्रंथों में भी इसका उल्लेख है (आवश्यक चूर्णि, पृ० 461)।

प्राचीन काल में मध्यप्रदेश के ये वनाच्छादित पर्वत संपूर्ण देश के एकीकरण के लिए गहन अवरोध थे, क्योंकि उस समय चट्टानों एवं जंगलों की इस चौड़ी पट्टी को किसी विक्रांत सेना को साथ लेकर पार करना सरल नहीं था।

गयाशीर्ष (गयासीर, गयासीस) गया की प्रमुख पहाड़ी है। विनय पिटक[5] के अनुसार गया की प्रमुख पहाड़ी गयासीस वर्तमान ब्रह्मयोनि है। इसकी पहचान महाभारत[6] तथा पुराणों[7] में वर्णित गयाशीर से की गयी है। प्राचीन बौद्धभाष्य-कारों ने हाथी के सिर (गज-सीस) से इसके आकार की अद्भुत समानता के कारण इसकी नामोत्पत्ति का उल्लेख किया है।

प्राचीन पालि ग्रंथों से मगध की पुरातन राजधानी को परिवृत्त करने वाली इसिगिलि (ऋषिगिरि), वेभार (वैहार), पण्डव, वेपुल्ल (विपुल) गिज्झकूट

---

[1] III. 121, पृ० 16-19.

[2] संप्रति पुराना (Central Province) मध्यप्रांत स्थूल रूप से मध्यप्रदेश में समाविष्ट है।

[3] पद्मपुराण, अध्याय 6.

[4] मार्कण्डेयपुराण, अध्याय 57.

[5] विनय पिटक, I, पृ० 35 और आगे; II, 199.

[6] महाभारत, III, 95.9.

[7] बरुआ, गया एँड बुद्ध गया, I, 68.

(गृध्रकूट) नामक पाँच पहाड़ियों के एक समूह का ज्ञान हमें प्राप्त होता है। ये वेपुल्ल के दक्षिण में स्थित थीं। महाभारत में हमें दो तालिकाएँ मिलती हैं, जिनमें से एक में इन पहाड़ियों का नाम वैहार, वाराह, वृषभ, ऋषिगिरि और सुभचैत्यक[1] तथा दूसरी में पाण्डर, विपुल, वाराहक, चैत्यक, और मातङ्ग[2] दिया गया है। गया के उत्तर और राजगृह के पश्चिम में गोरथगिरि (वर्तमान बराबर पहाड़ियाँ) स्थित हैं[3] जिसका वर्णन अशोक के द्वितीय और तृतीय गुहालेख तथा पतञ्जलि के महाभाष्य में खलतिक पर्वत के नाम से किया गया है।[4] कोई व्यक्ति गोरथगिरि या गोरधगिरि से मगध की पूर्वकालीन राजधानी गिरिव्रज का दृश्यावलोकन कर सकता है।[5] बेगलर के अनुसार, हजारीबाग जिले के उत्तर में शुक्तिमत श्रेणी स्थित है।[6] इसकी स्थिति के विषय में मतभेद है। कनिंघम ने इसे छतीसगढ़ को बस्तर से अलग करने वाली सेहोआ और कांकर के दक्षिण में स्थित पहाड़ियों से समीकृत किया है।[7] पार्जिटर के अनुसार इसे गारो, खासी और तिपरा पहाड़ियों से समीकृत किया जा सकता है।[8] कुछ लोगों ने उसे पश्चिमी भारत में स्थित बतलाया है और काठियावाड़ श्रेणी से इसकी पहचान की है।[9] दूसरों ने इसे सुलेमान पर्वतमाला से समीकृत किया है।[10] रायचौधरी नें इस नाम का प्रयोग मध्यप्रदेश के रायगढ़ में स्थित सक्ति से फैली हुयी पर्वतमालाओं समेत, कुमारी नदी द्वारा सिंचित मानभूम में डल्मा पहाड़ियों के लिए तथा संभवत: बाबला की सहायक सरिताओं द्वारा सिंचित संथाल परगना क्षेत्र में स्थित पहा-

---

[1] सभापर्व, अध्याय XXI, श्लोक 2.

[2] वही, XXI, श्लोक 11.

[3] द्रष्टव्य, ज० बि० उ० रि० सो०, खंड 2, भाग 1, पृ० 162 में जैकसन द्वारा गोरधगिरि का समीकरण; बे० मा० बरुआ, ओल्ड ब्राह्मी इंस्क्रिप्शंस ऑन द उदयगिरि ऐंड खण्डगिरि केव्स, पृ० 224.

[4] I, ii, 2.

[5] महाभारत, सभा०, अध्याय XX, 29-30 : गोरथं गिरम् आसाद्य ददर्श मगधं पुरम्; तु० बील रिकार्ड ऑव द वेस्टर्न वर्ल्ड, भाग 2, पृ० 104.

[6] आर्क० स० रि० VIII, 124-5.

[7] वही, XVII, 24, 26.

[8] मार्कण्डेय पुराण, 285-306, टिप्पणियाँ।

[9] चि० वि० वैद्य, एपिक इंडिया, पृ० 276.

[10] Z. D. M. G. 1922, पृ० 281, टिप्पणी।

ड़ियों के लिए भी किया है।[1] स्टाइन ने कुक्कुटपादगिरि या गुरुपाद पर्वत की पहचान सोमनाथ शिखर से की है। कुछ लोगों ने इसे बोधगया से 100 मील आगे स्थित गुरपा पहाड़ी से समीकृत किया है।[2] संथाल परगना में राजमहल पहाड़ियों से समीकृत अन्तरगिरि, बुद्धगया से लगभग 26 मील दक्षिण में कलुहा पहाड़ी से समीकृत मकुलपर्वत, हजारीबाग जिले में चात्रा से लगभग 16 मील दूर उत्तर में पाथरघाटा पहाड़ी जहाँ प्राचीन शिला-संगम या विक्रमशिला-संघाराम था, छोटा नागपुर में परेशनाथ पहाड़ी से समीकृत मल्लपर्वत, जिसे यूनानी मल्लेउस (Maleus) पर्वत[3] कहते थे तथा भागलपुर जिले की बाँका तहसील में स्थित मेगस्थनीज द्वारा उल्लिखित मंदर पहाड़ी या एरियन की मल्लुस पहाड़ी —पूर्वी भारत की कुछ अन्य उल्लेखनीय पहाड़ियाँ तथा पर्वत हैं।

दक्षिण भारतीय पर्वत प्रणाली में पश्चिमी तथा पूर्वीघाट और नीलगिरि की पहाड़ियाँ संमिलित हैं। खानदेश में कुण्डैबरी दर्रे से लेकर कन्याकुमारी तक, बिना किसी व्यवधान के लगभग 100 मील तक, समुद्र-तल से औसतन 4,000 फीट ऊँचा पश्चिमी घाट पश्चिमी समुद्रतट के समीप फैला हुआ है। यहाँ से कई शैलबाहु निकलकर दक्कन-पठार के अंतर में फैले हुए हैं, जिनमें अजंता एवं बालाघाट पर्वतमालाएँ सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण हैं। समुद्र की ओर ये अतिशय ढालू एवं दुरारोह हैं। नासिक के निकट थलघाट, पूना के पास बोरघाट और नीलगिरि के आगे, पलघाट या कोयंबटूर के दर्रों से होकर प्रांतरवर्ती भागों से यातायात किया जाता है। दक्षिणी अंतराय के आगे कन्याकुमारी तक के पर्वत का क्रम निरंतर अन्नमलाई और कार्डमम पहाड़ियों द्वारा बना हुआ है।

भारत के प्राचीन भूगोल-वेत्ता कोयंबटूर के अंतराय के ऊपर स्थित पश्चिमी घाट को 'सह्याद्रि' कहते थे। सह्याद्रि पहाड़ियाँ कन्याकुमारी से ताप्ती नदी की घाटी तक पश्चिमी समुद्रतट के प्रायः समानांतर फैली हुयी थीं। टालेमी ने इसे दो भागों में विभक्त किया है: उत्तरी भाग को ओरुडियन (Oroudian) (जो वैदूर्य पर्वत से समीकृत किया गया है) और दक्षिणी भाग को अडीसाथ्रोन (Adeisathron) कहा जाता था। पश्चिमी घाट से संबद्ध पहाड़ियों में त्रिकूट जिससे त्रैकूटक अपना नाम ग्रहण करते हैं), गोवर्धन (नासिक पहाड़ी),[4] कृष्ण-

[1] स्टडीज इन इंडियन ऐंटिक्विटीज, 113-120.

[2] ज० ए० सो० बं०, 1906, पृ० 77.

[3] मैक्रिंडिल, मेगस्थनीज ऐंड एरियन, पृ० 62, 139.

[4] रैप्सन, आन्ध्र क्वायंस, पृ० XXIX; XLVII, LVI.

गिरि[1] (वर्तमान कन्हेरी), ऋष्यमूक (पम्पा पर प्रलंबित, जिसे हांपी से समीकृत किया गया है) किष्किन्ध्या देश के माल्यवत् (जिसे पार्जिटर ने कूपर, मुद्गल और रायचूर की निकटवर्ती पहाड़ियों से समीकृत किया है), प्रश्रवण (गोदावरी एवं मन्दाकिनी[2] से संबद्ध) और गोमन्त का उल्लेख किया जा सकता है। ऋष्यमूक और गोमन्त को भी सह्य पर्वत से संबद्ध किया जा सकता है। पार्जिटर ने ऋष्य-मूक को अहमदनगर से तालद्रुग और कल्याणी के आगे तक फैली हुयी पर्वत-शृंखला से समीकृत किया है। उन्होंने गोमन्त को, नासिक के दक्षिण या दक्षिण-पूर्व की ओर स्थित पहाड़ियों से समीकृत किया है।[3] रायचौधरी के अनुसार गोमन्त के उत्तर में वनवासी स्थित था और इसीलिए गोमन्त पहाड़ी मैसूर क्षेत्र में स्थित रही होगी।[4]

पूर्वीघाट लगभग 2,000 फीट की औसत ऊँचाई वाली विश्लिष्ट पहाड़ियों के रूप में न्यूनाधिक भारत के पूर्वी समुद्रतट के समानांतर स्थित हैं। ये पृथक् पहाड़ियाँ देश के विभिन्न भागों में विभिन्न नामों से विज्ञात् हैं। इनके उत्तरी छोर पर उन पहाड़ियों को मलियाह (Maliahs) कहा जाता है, जो समुद्र तक पहुँचती है। गंजम, विजगापट्टम और गोदावरी प्रदेशों में ये मलियाह अधिक विश्लिष्ट हैं और कुर्नूल जिले में अतीव विस्तारित हैं। कूर्नूल में पूर्वीघाट को नल्लमलाई पहाड़ियों के नाम से पुकारते हैं और आगे दक्षिण में पूर्वीघाट को पलकोण्ड पहाड़ी की संज्ञा दी गयी है, और पूर्वीघाट का दक्षिणी छोर मद्रास राज्य के कोयंबटूर जिले में नीलगिरि पठार में मिल जाता है। इस छोर का स्थानीय नाम बिलगिरि रंगम पहाड़ी है। शैवराय पहाड़ियाँ सलेम जिले की एक विश्लिष्ट पर्वत-माला है।

रामायण[5] से ऐसा प्रतीत होता है कि पूर्वीघाट को महेन्द्रपर्वत कहते थे। महेन्द्र श्रेणी उस संपूर्ण पर्वतमाला के प्रति संकेत करती प्रतीत होती है, जो गंजम और सुदूर दक्षिण में पाण्ड्य देश से पूर्वीघाट की समस्त पर्वत-श्रेणी तक फैली हुयी है। महेन्द्र गिरि या महेन्द्र पर्वत गंगा-सागर-संगम और सप्तगोदावरी[6] के बीच में

[1] रामायण VI, 26, 30.

[2] रामायण, आरण्यकाण्ड, 64, 10-14.

[3] मार्कण्डेय पुराण, पृ० 289, टिप्पणी।

[4] स्टडीज इन इंडियन ऐंटिक्विटीज, पृ० 133.

[5] किष्किन्ध्या काण्ड, 41, 18-20; लंका काण्ड, 4, 92-94.

[6] भागवत पुराण, X, 79.

स्थित है। गंजम के निकट पूर्वीघाट के एक भाग को आज भी महेंद्र पर्वत कहा जाता है। तिन्नेवली जिले में भी एक महेन्द्रगिरि है।[1] पार्जिटर के मतानुसार केवल महानदी, गोदावरी और वैनगंगा के बीच में स्थित पहाड़ियों के लिए ही महेंद्रगिरि संज्ञा का व्यवहार किया जाना चाहिए, और संभवतः इसमें गोदावरी के उत्तर में स्थित पूर्वीघाट के कुछ भाग संमिलित किये जा सकते हैं।[2] पार्जिटर के विचारानुसार रामायण और पुराणों में वर्णित महेन्द्रगिरि दो विभिन्न पर्वत-मालाएँ हैं, किंतु रायचौधरी का विचार है कि रामायण के प्रणेता एवं पुराणकारों का आशय एक ही पर्वत-माला से था।[3] कुर्नूल जिले में कृष्णा नदी के किनारे स्थित श्रीपर्वत[4] पुष्पगिरि (कुड्डापा के उत्तर में), वेंकटाद्रि (मद्रास से लगभग 72 मील दूर उत्तर-पश्चिम में, उत्तरी अर्काट जिले में तिरुपति या त्रिपटी के निकट तिरुमलाई पर्वत), अरुणाचल (कम्पा नदी पर)[5] और ऋषभ[6] (महाभारत के अनुसार पाण्ड्य देश में) महेन्द्र पर्वत से संबद्ध कुछ लघु पहाड़ियाँ हैं।

पूर्वी और पश्चिमीघाट दक्षिण में नीलगिरि नामक एक पर्वत-समूह में मिलते हैं। पार्जिटर ने प्राचीन मलय पर्वत को ठीक ही नीलगिरि से कन्याकुमारी तक फैले हुए पश्चिमीघाट के एक भाग से समीकृत किया है। कावेरी के आगे, पश्चिमीघाट का दक्षिणी प्रसरण, जिसे आजकल त्रावणकोर पहाड़ी कहा जाता है, वास्तव में मलयगिरि का पश्चिमी छोर है। क्रमशः हर्षचरित[7] और चैतन्य-चरितामृत से सिद्ध होता है कि सुदूर दक्षिण में मदुरा तक फैली हुयी महेंद्र पहाड़ियाँ मलयगिरि से मिलती थीं। मलयपर्वत को श्रीखण्डाद्रि और चन्दनाद्रि भी कहते थे।[8] यही पोडिगेई या पोडिगाई है, जिसे टालेमी ने बेट्टिगो (Bettigo) कहा है। मलय कूट या मलयश्रेणी के शिखर पर अगस्त्य ऋषि का आश्रम था।[9] मलय

---

[1] तिन्नेवली डिस्ट्रिक्ट गजेटियर, I, पृ० 4.

[2] मार्कण्डेयपुराण, पृ० 305, टिप्पणी।

[3] स्टडीज इन इंडियन ऐंटिक्वटीज, पृ० 108-109.

[4] अग्नि पुराण,CXIII, 3-4; पार्जिटर, मार्कण्डेय पुराण, 290, टिप्पणी।

[5] स्कन्द पुराण, अध्याय III, 59-61; IV 9.13.21.37.

[6] महाभारत, III, 85, 21; भागवत पुराण, X, 79.

[7] हर्षचरित, VII.

[8] तु० धोयी कृत पवनदूत।

[9] भागवत पुराण XI, 79.

से संबद्ध दर्दुर[1] नामक पहाड़ी है जिसकी पहचान नीलगिरि या पलनी पहाड़ियों से की जा सकती है।

प्राचीन भारतीय भूगोल-वेत्ता महेन्द्र, मलय, सह्य, शुक्तिमत, ऋक्ष, विन्ध्य, और पारिपात्र नामक पर्वत-समूह को कुलचालों की संज्ञा देते थे।[2] प्रत्येक पर्वत को किसी देश या जाति विशेष से संबंधित होने के कारण इन्हें कुलाचल कहा जाता था। इस प्रकार महेन्द्र कलिंगों का सर्वोत्कृष्ट पर्वत, मलय पांड्यों का, सह्य अपरान्तों का, शुक्तिमत भल्लाट[3] जनों का, ऋक्ष माहिष्मती[4] के निवासियों का, विन्ध्य आटव्यों और मध्यप्रदेश की अन्य वन्यजातियों का तथा पारिपात्र या पारियात्र निषादों[5] का पर्वत था।

भागवत पुराण[6] में कुछ पर्वतों का उल्लेख है जिनका प्रत्यभिज्ञान करना कठिन है। वे निम्नलिखित हैं : सुरस, शत, श्रृंग वामदेव, कुण्ड, कुमुद, पुष्प, वर्ष, सहोस्र, देवानीक, कपिल, ईषाण, शतकेशर, देवपाल और सहस्रोत,।

ब. गुफाएँ

संपूर्ण विश्व में उपलब्ध होने वाली प्रागैतिहासिक गुहाएँ अधिकांशतः आंशिक रूप से मानवीय हाथों द्वारा सँवारी गयी प्राकृतिक गुफाएँ हैं। उनमें से कुछ में उपकक्ष बने हुए हैं और बहुतों की दीवारें प्राकृतिक विषयों और पशुओं के चित्रों से अलंकृत हैं। ये गुफाएँ मनुष्यों के लिए जीवन और मृत्यु के अवसर पर आश्रयस्थली के रूप में काम आयी हैं। इन गुफाओं में ही हमारे दूरस्थ पूर्वजों ने हमारी संस्कृति और सभ्यता को विभिन्न रूपों में विकसित किया। पूर्वकालीन बौद्धग्रंथों में प्रथम बार धार्मिक एकांत स्थलों के रूप में इन गुफाओं का उल्लेख किया गया है। उपनिषदों में वर्णित 'गुहा' धार्मिक एकांतवास का स्थान नहीं वरन् हृदय की गुफा का द्योतक है। वन, उन्मुक्त स्थान, सड़कें, वृक्षों की छाया, विजन घर, श्मशान और गिरि गुहाएँ तापसों के अतिरिक्त भारतीय पलायन-

---

[1] महाभारत, II, 52, 34; वही, XIII. 165, 32; रामायण, लंकाकाण्ड, 26, 42; रघुवंश IV, 51.

[2] मार्कण्डेय पुराण, 57, 10.

[3] महाभारत, II, 30, 5 और आगे।

[4] हरिवंश०, 38, 19.

[5] रायचौधरी, स्टडीज इन इंडियन ऐंटिक्विटीज, पृ० 105-106.

[6] स्कन्द०, V, अध्याय 20.

वादियों, संन्यासियों और परिव्राजकों के अस्थायी आवासों और एकान्तवास के स्थलों के रूप में महत्त्वपूर्ण हो गये। उन गुफाओं ने संन्यासियों के चिंतन के लिए उचित स्थानों का काम किया। ये गुफाएँ सचमुच शीत-ताप, वायु और धूप, वन्य-पशुओं और वर्षा के सुरक्षा का साधन थीं।[1]

प्राचीन गुफाएँ और कंदराएँ अधिकांशतः राजगृह नामक प्राचीन नगर के चतुर्दिक् स्थित पहाड़ियों से संबद्ध थीं। उनमें से केवल एक कौशाम्बी के समीप स्थित थी। राजगृह की गुफाओं और कंदराओं में इन्द्रसाल-गुहा और सप्तपर्णी गुफाएँ सबसे अधिक विख्यात हैं। विनय पिटक के अनुसार मानवीय हाथों के स्पर्श द्वारा सँवारी या मानवीय बुद्धि द्वारा सज्जित किये जाने के बाद कोई भी प्राकृतिक गुफा 'लेण' कही जा सकती है। प्राचीन गुफाओं को गुहा-शिल्प के उदाहरणों के रूप में ग्रहण करना कठिन है। भारतीय गुफाओं को अशोक के समय से शैल्पिक महत्त्व मिला। उड़ीसा के राजा खारवेल के समय तक यह महत्त्व निरंतर बना रहा। गया नगर से लगभग 20 मील उत्तर खलतिक या बराबर पहाड़ियों में अशोक द्वारा आजीविकों को निवेदित चार, नागार्जुनि पहाड़ियों में दशरथ द्वारा प्रदत्त तीन तथा उदयगिरि एव खण्डगिरि की युगल पहाड़ियों में जैन श्रमणों के लिए सर्मापित सभी गुफाओं का उद्देश्य वर्षा में आवास प्रदान करना था। उनमें से कुछ गुफाएँ मध्ययुग में दक्षिण भारत में समाधि के रूप में प्रयोग की जाने लगी थीं। आन्ध्रवंशीय सातकर्णियों के समय से भारतीय गुफाएँ विहार और चैत्यों के रूप में विकसित होने लगीं। यह उक्ति कार्ले, भाजा, अजन्ता, एलोरा, औरंगाबाद, एलीफैंटा और बाघ की गुफाओं के विषय में चरितार्थ होती है। एलोरा का कैलास-मंदिर शिला में तराशा गया एक भव्य मन्दिर है जिसका विकास धार्मिक गुहा-मंदिरों की परंपरा में हुआ। भारतीय गुफाओं की तुलना में लंका के 'लेण' जिनके लिए सही अर्थों में 'गुहा' संज्ञा का प्रयोग उपयुक्त नहीं है, मानवीय हाथों द्वारा केवल स्पृष्ट और अनगढ़ ढंग से सँवारी गयी शिलाओं के तिरछे ढालों के अतिरिक्त और कुछ नहीं है। कुछ महत्त्वपूर्ण भारतीय गुफाओं का संक्षिप्त विवरण देना उपयुक्त होगा।

इन्दसाल गुहा

बुद्धघोष[2] की व्याख्या के अनुसार इस गुहा का नामकरण इसके प्रवेशद्वार पर

---

[1] **विनय चुलवग्ग, VI, 1, 3-4.**

[2] **सुमंगलविलासिनी, III, 697.**

स्थित इंदसाल वृक्ष के आधार पर किया गया था। भरहुत के एक प्रतिमा-चित्र मैं इस वृक्ष के साथ गुहा का भी अंकन किया गया है। कालांतर में यह इंद्रशैलगुहा के नाम से भी विख्यात हुयी, क्योंकि स्पष्टतः यही वह स्थल था जहाँ सकपञ्ह सुत्त नामक प्रसिद्ध पालि-प्रवचन दिया गया था जिसमें देवराज इन्द्र या सक्क ने अपने प्रश्नों का संतोषप्रद उत्तर पाने के लिए बुद्ध का साक्षात्कार किया था। दीघ निकाय में हम देखते हैं कि इस गुफा की स्थिति अंबसंड ग्राम (आम्रवन) के उत्तर में थोड़ी दूर पर स्थित वेदियक पर्वत में बतलायी गयी है।[1] वेदिय्रक पर्वत को अब राजगृह नगर (वर्तमान राजगिर)[2] से छह मील दूर स्थित गिरयक पर्वत से समीकृत किया जाता है। बुद्धघोष के अनुसार यह दो पहाड़ियों के मध्य से पहले ही स्थित एक गुहा थी जिसके द्वार पर एक इन्द्रसाल वृक्ष था। वह विशेष पहाड़ी जिससे यह संबद्ध थी, वेदियक या वेदिय कही जाती थी क्योंकि यह वेदिकाकार नीली-चट्टानों से परिवृत्त थी।[3]

पालि-ग्रंथों[4] को देखने से ज्ञात होता है कि जब बुद्ध ने इस गुहा में पदार्पण किया, तब यह गुहा पहले असमतल थी, समतल हो गयी, जो संकीर्ण थी, चौड़ी हो गयी और जो अंधकारयुक्त थी, प्रकाशमय हो गयी—जैसे देवताओं की दिव्य शक्तियों द्वारा यह सब हुआ हो। अलौकिकता के इस तत्त्व का पूर्ण समाधान बुद्धघोष ने यह बतला कर किया है कि यह गुफा एक चित्रमय गुहा-वास के रूप में परिवर्तित कर दी गयी थी जिसके चारों ओर दरवाजों एवं खिड़कियों से युक्त एक दीवाल थी, जिसके ऊपर 'चूनम' का पलस्तर था और जो बेलबूटों एवं पुष्पीय चित्रों से अलंकृत थी।[5] भरहुत के गोलाकार चित्र में इसे एक पहाड़ी गुफा के रूप में चित्रित किया गया है, जिसकी फर्श चट्टानी और भीतर में डाटदार और मुक्त मुँहवाला एक महाकक्ष है। भीतर की ओर इसमें पालिश की हुयी है। इसके ऊपर इंद्रसाल वृक्ष प्रदर्शित किया गया है। इसमें बंदर घातीय-शिलाओं पर बैठें हुए, और चयन की गयी शिलाओं के मध्य से दो रीछ झाँकते हुए प्रदर्शित किये गये हैं।[6] बोध-गया की पाषाण वेदिका पर इस गुहा का मुख खुला हुआ

---

[1] दीर्घ निकाय, II, 263-4.

[2] कनिंघम, ऐंश्येंट ज्यॉग्रेफी ऑव इंडिया, पृ० 540-41.

[3] सुमंगलविलासिनी, III, 967.

[4] दीघ निकाय, II, 269-70.

[5] सुमंगलविलासिनी, III, 697.

[6] कनिंघम, स्तूप ऑव भरहुत, XXVII, 4, पृ० 88-89.

प्रदर्शित किया गया है और इसके भीतर एक महराबदार महाकक्ष[1] है जो एक बौद्ध-वेदिका से घिरा हुआ है। पालि-ग्रंथों में दिये गये विवरण से यह अनुमान लगाना कठिन है कि इस गुहा को कभी किसी मानवी हाथ ने सँवारा होगा।

पिप्फलि गुहा

इस एकाकी गुहा का नामकरण इसके प्रवेशद्वार पर स्थित पिप्फलि[2] या पिप्पलि वृक्ष के आधार पर किया गया है। यह गुहा थेर महाकस्सप का प्रिय स्थान थी।[3] इस गुहा का प्रयोग एकांत चिंतन के लिए किया जाता था।[4] फा-ह्यान के अनुसार दोपहर के भोजन के पश्चात् मौन-चिंतन के लिए महात्मा बुद्ध इस शैल-गुहा में निरंतर आते रहे।[5] चीनी यात्री इसे पिप्फल गुफा कहते थे, और मंजुश्रीमूलकल्प के लेखक ने इसे 'पैपल गुहा' की संज्ञा दी है।[6] इस गुहा की स्थिति विवाद का विषय है। अभी तक यह सिद्ध करने के लिए कोई साक्ष्य नहीं है कि यह गुफा कभी किसी मानवीय हाथ द्वारा सज्जित की गयी थी।

सत्तपण्णि गुहा

यह सतपण्ण गुहा (सप्त-पर्ण) नाम से भी विख्यात थी। स्पष्टतः इसका नामकरण, इसके परिज्ञान में सहायक सप्तपर्णी लता के आधार पर हुआ है। वेभार या वैहार पर्वत से संबंधित सभी अनुश्रुतियाँ—महावस्तु[7] और चीनी यात्री[8] निश्चित रूप से इसकी अवस्थिति उक्त पहाड़ी के उत्तर में बतलाते हैं। बाद के विवरण में इस विशाल गुहा को प्रथम बौद्ध संगीति का स्थान बताया गया है।

---

[1] बरुआ, गया ऐंड बुद्धगया, II, चित्र सं० 55, 73, 73 A

[2] उदानवण्णना (स्यामी संस्करण), पृ० 77.

[3] उदान०, I, पृ० 4.

[4] धम्मपद कामेंट्री, II, 19-21.

[5] लेग्गे, फा-ह्यान, पृ० 85.

[6] पटल 1 iii पृ० 588; मगधानं जने श्रेष्ठे कुशाग्रपुरी वासीनम पर्वतं तत्समीपन्तु वराहं नाम नामतः। तत्रासौ ध्यायते भिक्षुः गुहालिनोऽथ पैपले।

[7] जिल्द 1, पृ० 70.

[8] लेग्गे, फा-ह्यान, पृ० 85; वाटर्स, ऑन युवान च्वाङ, II, 160.

दूसरी ओर, विनय पिटक से ज्ञात होता है कि संगीति की सत्रावधि में इसके पाँच सौ प्रतिनिधियों के लिए राजगृह और उस समय प्राप्त आवासों, विहारों और कंदराओं में रुकना अपेक्षित था। हमें यह भी बतलाया गया है कि इन आवासों की मरम्मत भी करायी गयी थी, जिससे ये वर्षाऋतु में आश्रय-स्थलों के रूप में प्रयोग के योग्य हो जाते थे। सिंहली ग्रंथों के अनुसार केवल सप्तपर्णी गुहा की ही मरम्मत इस उद्देश्य से करायी गयी थी। इस गुहा की स्थिति अब भी संदिग्ध है। फा-ह्यान ने इसको पिप्ल या पिप्फल गुहा से लगभग एक मील पश्चिम में स्थित बतलाया है।[1] कनिंघम ने इसे वैहार पर्वत के दक्षिण की ओर स्थित सोन-भाण्डार-गुहा से समीकृत किया है।[2] इस समीकरण की पुष्टि पालि साक्ष्य दीघ निकाय[3] से होती है जिसमें इस गुफा को इसिगिलि (ऋषिगिरि) के निकट स्थित बतलाया गया है। यद्यपि उक्त पालि वृत्तांत में इस गुहा को वैहार पर्वत से संबद्ध और इसी के समीप एक ओर स्थित (वेभारपास्से) बतलाया गया है किंतु यह निश्चित रूप से नहीं कहा गया है कि उक्त गुहा किस ओर स्थित थी। वर्तमान स्थिति में भी सोन-भाण्डार-गुहा संगीति के लिए आदर्श स्थान है। उसके अतिरिक्त मानवीय कौशल से निर्मित होने के स्पष्ट चिह्नों से युक्त यह एक सुखकर एवं विस्तृत गुहावास है। इतनी अधिक आदर्श स्थिति और सौंदर्ययुक्त अन्य कोई गुहा राजगृह में नहीं है।

वराहगुहा

गिज्झकूट पर्वत पर स्थित यह एक प्राकृतिक गुहा (सुकरखात) थी, जो बौद्ध संन्यासियों और परिव्राजकों के लिए एक आश्रयस्थल थी। दीघनख नामक परिव्राजक इस गुफा में बुद्ध से मिला था।[4] शूकरों के रहने का स्थान होने के कारण स्पष्टतः यह वराह-गुफा के नाम से विख्यात हुयी।

पर्वतों में सभी प्राकृतिक गुफाओं को 'कंदरा' कहा जाता था। तिंदुक कंदरा

---

[1] वही, पृ० 84-85.

[2] कनिंघम, ऐंश्येंट ज्यॉग्रेफी ऑव इंडिया (एस० एन० मजूमदार संस्करण), पृ० 531.

[3] महापरिनिब्बानसुत्तान्त (दीघ० II)।

[4] मज्झिम निकाय, I, दीघनख सुत्त; मललसेकर, डिक्शनरी ऑव पालि प्रापर नेम्स, II, 1271-1272; पपंचसूदनी, III, पृ० 203, सारत्थप्पकासिनी, III, पृ० 249.

अपने निकट स्थित तिंदुक वृक्ष के आधार पर लक्षित की जाती थी।[1] तपोदस या उष्ण जल के स्रोतों के समीप स्थित होने के कारण तपोद कंदरा का नामकरण हुआ था। गोमत कंदरा का नामकरण किस आधार पर हुआ यह अज्ञात है। कपोत-कंदरा निश्चय ही कबूतरों का एक प्रिय स्थान थी।[2] उदान[3] ने इसे राजगृह से कुछ दूर पर, जब कि युवान-च्वाङ् ने इसे इन्द्रशैल गुहा से लगभग 9 या 10 मील उत्तर-पूर्व में स्थित बतलाया है।[4]

पालि-धर्मग्रंथों में पिलक्ख वृक्ष (लहरदार पत्तियोंवाला अंजीर का वृक्ष—प्लक्ष (Ficus Infectoria) द्वारा लक्षित की जाने वाली पिलक्ख गुहा का उल्लेख प्राप्त होता है। यह वर्षा-जल से धरती में बना हुआ एक गड्ढा अथवा खोढ़र बताया जाता है। वर्षा ऋतु में वहाँ एकत्रित हुए जल के कारण यह एक तालाब जैसा प्रतिभासित होता था जो गरमी में सूख जाता था। सन्दक नामक कोई परिव्राजक अपने 500 अनुगामियों के साथ ग्रीष्म ऋतु में इसके ऊपर स्तंभों या थूनों पर आश्रित, अस्थायी छत डालकर इसमें रहा करता था।[5]

अब हम शिला में काटकर बनायी गयी गुफाओं का परिचय देंगे, जिनमें से कुछ उड़ीसा और कुछ दक्षिणी एवं पश्चिमी भारत में स्थित हैं। पूर्वी भारत में स्थित गुफाएँ, कलिंग के महान् जैन सम्राट् खारवेल, उनकी मुख्य राजमहिषी, पुत्र तथा अन्य राज्याधिकारियों एवं कर्मचारियों से संबंधित हैं। पश्चिमी एवं दक्षिणी भारत में स्थित गुफाएँ सातकर्णि राजाओं के नाम से संबद्ध हैं। प्राचीन कौशाम्बी से समीकृत, कोसम से लगभग दो मील पश्चिम में स्थित पभोसा की गुहा को प्रायः इसी युग में रखा जा सकता है। इसे अहिच्छत्र के राजा आषाढसेन ने काश्यपीयों के तत्कालीन एक धार्मिक संप्रदाय को समर्पित किया था।

उदयगिरि और खण्डगिरि की युगल पहाड़ियों में स्थित जैन गुफाओं के दाताओं के धार्मिक विश्वासपरक साक्ष्य, समर्पण अभिलेखों और खण्डगिरि की दो गुफाओं में तीर्थंकरों की मध्ययुगीन धार्मिक प्रतिमाओं से प्राप्त होते हैं। संप्रति कोई

---

[1] इस वृक्ष का ठीक-ठीक परिज्ञान नहीं किया जा सकता। यह डायोस्पाइरास इंब्रायोप्टेरी या स्ट्राइक्नास नक्स वॉमिका' (Diospyrus empryopteri or Strychnos Nux Vomica) हो सकती है।

[2] उदानवण्णना (स्यामी संस्करण), पृ० 307.

[3] IV, 4.

[4] वाटर्स, ऑन युवान च्वाङ्, II, पृ० 175.

[5] पपंचसूदनी, (सिंहली संस्करण), II, पृ० 687.

35 उत्खनित गुहाएँ दृष्टिगत होती हैं। शिल्प एवं कला के दृष्टिकोण से खण्डगिरि की अनन्तगुफा और उदयगिरि की राणीगुम्फा, गणेशगुम्फा, और जय-विजय गुफाएँ अत्यधिक उल्लेखनीय हैं। स्वयं खारवेल द्वारा खुदवायी गयी हाथीगुम्फा कृत्रिम रूप से काटकर बढ़ायी गयी एक प्राकृतिक कंदरा है। यह किसी बड़े शिला-खंड का चौड़े मुखवाला एक बंकिम ढाल है। इसके बाईं ओर दोमंजिली मंचपुरी गुहा स्थित है। निचली मंजिल में खंभोयुक्त एक बरामदा है जिसके पीछे काटकर बनाये गये कमरे हैं। इसके ऊपरी मंजिल उसी नमूने और आकार की है। पहली मंजिल के बरामदे में एक गोलाचित्र है, जिसमें उड़ता हुआ कोई देव-दूत चित्रित किया गया है। ऊपरी मंजिल में एक ओर ढालू छतवाला एक बरामदा था जो परिकक्ष का काम देता था। किसी पूरी लेण में अग्रभाग में खंभों या बिना खंभोंवाला एक बरामदा (Facade) होता था, जिसे 'पासाद'; पीछे और एक ओर काटकर बनाये गये कमरे जिन्हें 'कोठा', और एक ओर ढालू छत होती थी, जिसे 'जिया' कहते थे—हुआ करते थे। पहली मंजिल के बाएँ पार्श्व में राजकुमार वडुख द्वारा प्रदत्त दो गुफाएँ हैं। प्रांगण के सामने एक दीवाल बनी हुयी है। हाथीगुम्फा के निकट कई और छोटी गुफाएँ हैं। उनमें से एक 'व्याघ्रगुम्फा' नाम से पुकारी जाती है, जो मुँह फुलाये हुए व्याघ्र की आकृति के समान लगती है। सर्पगुम्फा नामक एक दूसरी गुफा के ऊपरी सिरे पर साँप का फन चित्रित किया गया है। प्रायः इन्हीं कारणों से दो अन्य गुफाओं का नामकरण अजगरगुम्फा और भेकगुम्फा किया गया है। उदयगिरि पहाड़ी के ढाल पर किसी इमारत की तरह लगने वाली छोटी हाथीगुम्फा नामक एक मंजिली गुफा है, जिसके प्रांगण में हाथियों के दो छोटे चित्र बने हुए हैं। खण्डगिरि वर्ग की अनन्तगुफा मंचपुरी गुफा के नमूने पर परिकल्पित एक एकमंजिली गुफा है। गुफा के दरवाज़ों के अलंकरण-युक्त महराबों में विविधि उच्चित्र बने हुए हैं। उदयगिरि की राणीगुम्फा अतिशय कलापूर्ण ढंग से अलंकृत है।

नासिक गुफाएँ जिन्हें पाण्डुलेण कहा जाता है, सड़क से लगभग 300 फीट ऊँचाई पर स्थित हैं। उनका निर्माण हीनयान बौद्धों के भद्रयानिक संप्रदाय के लिए किया गया था। यहाँ हमें प्रायः तेइस गुफाएँ मिलती हैं। उनमें सर्वाधिक प्राचीन चैत्यगुहा है। पहली गुफा एक अपूर्ण विहार है। दूसरी गुहा में बाद में अनेक परिवर्तन हुए हैं। इसमें दो काष्ठ-स्तंभ और एक बरामदा है। तीसरी गुफा एक बड़ा विहार है जिसमें अनेक कोठरियाँ और एक महाकक्ष है। साँची के तोरण की भाँति इसका प्रवेशद्वार शिल्प-सज्जित है। यह गौतमीपुत्र सातकर्णि द्वारा खुदवायी गयी थी। दसवीं गुफा भी विहार है। इसमें खंभेदार एक बरामदा

है। सत्रहवीं गुफा में 23 फीट चौड़ा और 32 फीट गहरा एक महाकक्ष है। दो केंद्रीय अठपहल खंभों के मध्य स्थित , सामने से आधी दर्जन सीढ़ियाँ चढ़कर इसके बरामदे में पहुँचते हैं। इसकी पिछली दीवाल में खड़े हुए बुद्ध की एक प्रतिमा है।

बंबई और पूना के मध्य बोरघाट पहाड़ियों में कार्ली और भाजा के सुप्रसिद्ध बौद्ध गुहा-मंदिर स्थित हैं। इनमें उत्कीर्ण अभिलेख सिद्ध करते हैं कि ये नहपाण और उषवदात के समय में समर्पित की गयी थीं। कार्ले गुफा के प्रवेशद्वार पर एक स्तंभ है जो अशोक के सारनाथ-स्तंभ की भाँति चारों दिशाओं की ओर मुख किये हुए, खुले हुए मुखवाले चार सिंहों की आकृतियों से मंडित हैं। इनमें दाहिनी ओर शिव मंदिर है और इसके निकट ही धर्मचक्र के प्रतीकमान चक्र से मंडित एक दूसरा स्तंभ है। इसमें प्रवेश के लिए एक गलियारे के नीचे तीन दरवाजे हैं। भाजा की पहली गुफा एक प्राकृतिक कंदरा है। दूसरी से छठे नंबर तक सभी गुफाएँ सादे विहार हैं। यहाँ पर एक चैत्य है जो गुहा शिल्प के सर्वोत्कृष्ट प्रतीकों में से एक है। चार खंभों पर बौद्ध प्रतीक स्पष्ट रूप से देखे जा सकते हैं। इसकी छत महराबदार है। इसके सामने अलंकृत महराव, दोहरी वेदिकाएँ और अनेक लघु विहार हैं।

महाराष्ट्र में औरंगाबाद से लगभग 16 मील और दौलताबाद से 10 मील पश्चिमोत्तर में एलोरा की महत्त्वपूर्ण बौद्ध गुहाएँ स्थित हैं। इनमें तीन विभिन्न धर्मों का प्रतिनिधित्व मिलता है : दक्षिणी वर्ग की चौदह गुफाएँ -बौद्ध; मध्यवर्ग की ब्राह्मण और सबसे उत्तरी वर्ग में जैन धर्मों से संबंधित गुफाएँ हैं। बौद्ध वर्ग की गुफाओं में एक वास्तविक मंदिर और विशाल चैत्य है, जो अजंता के दो महा-कक्षों (संख्या 19 एवं 26) की ही तरह एक विशाल चैत्य मंदिर है। कुछ बौद्ध गुफाओं में परवर्ती महायान धर्म के कुछ स्पष्ट चिह्न संनिहित हैं। तीसरी एक विहार गुहा है। पाँचवीं गुफा एक विशाल विहार की तरह है। इनमें ब्राह्मण और जैन धर्मों से संबंधित गुफाएँ भी हैं। दसवीं एक सुंदर चैत्य गुफा है। इसका अग्रभाग अतिशय अलंकृत है और इस पर की गयी नक्काशियाँ अतीव सुंदर हैं। ग्यारहवीं और बारहवीं गुफाओं की दीवालों में कोठरियाँ बनी हैं और इनमें महायान धर्म के चिह्न दिखाई पड़ते हैं।

मध्यप्रदेश में धार के पश्चिम में लगभग चालीस मील दूर बौद्ध गुफाओं का एक रोचक समूह बाघ की गुहाएँ स्थित हैं। इन गुफाओं का उत्खनन गुप्त काल में किया गया था। नर्मदा की घाटी से उत्तर में उन्नत एक पहाड़ी की ढालू-चट्टान में तराशी गयी ये सभी विहार गुफाएँ हैं। इन गुफाओं में यत्र-तत्र प्राप्त बुद्ध की

प्रतिमाएँ स्पष्टत: बाद के समय की हैं। इनका शिल्प नासिक की गुफाओं के समान नहीं है।

महाराष्ट्र में औरंगाबाद के उत्तर-पश्चिम में 60 मील दूर पर, बौद्ध शैल-गुफाओं का एक अन्य उल्लेखनीय समूह, अजंता की गुफाएँ स्थित हैं। सभी छब्बीस गुफाओं का निर्माण तथा अलंकरण एक साथ एक ही समय पर नहीं किया गया था। उनमें से केंद्रीय समूह की सात गुफाएँ प्रारंभिक शैली की हैं, जबकि शेष गुफाओं में प्राचीन काल की सरलता के एकदम विपरीत अलंकरण की प्रचुरता परिलक्षित होती है। वी० ए० स्मिथ के अनुसार अजंता के अधिकांश चित्रों को अवश्यमेव छठी शताब्दी ई० अर्थात् महान् चालुक्य नरेशों के काल में रखा जा जा सकता है। 9 वीं और 10 वीं गुहाएँ प्राचीनतम हैं तथा ये दूसरी और पहली शताब्दी ई० पूर्व में बनायी गयी होंगी। अजंता की गुफाएँ चैत्य और विहार शैली की हैं।

डॉ० फोगेल के अनुसार औरंगाबाद की गुफाएँ विहार गुफा-मंदिरों के निर्माण शिल्प की दीर्घ-कालीन-विकास-परंपरा की चरम सीमा का प्रतिनिधित्व करती हैं। अपवाद स्वरूप प्राचीन शैली के एक भग्न चैत्य-मंदिर को छोड़कर ये अज्ञात गुहा-मठ, कालक्रम की दृष्टि, स्पष्टत: अजंता की सबसे बाद की गुफाओं के सम-कालीन हैं। अपनी बढ़ती हुयी प्रधानता के कारण, बुद्ध की अगणित प्रतिमाओं के पार्श्व में स्थापित की गयी बोधिसत्वों की प्रतिमाएँ इन परवर्ती गुफाओं की एक उल्लेखनीय विशेषता है।

अपोलो बंदर से लगभग छह मील उत्तर-पूर्व में स्थित एलीफैंटा की गुफाओं पर बौद्ध और ब्राह्मण प्रभाव परिलक्षित होता है। इसके प्रमुख महाकक्ष की दीवाल पर त्रिमूर्ति (ब्राह्मण धर्म के त्रिदेव की मूर्तियाँ) नक्काशी गयी हैं। एक गुफा में बौद्ध चैत्य बना हुआ है।

यद्यपि अब इन गुफाओं का प्रयोग उन उद्देश्यों से नहीं किया जाता जिनके लिए ये बनवायी या प्रदान की गयी थीं, किंतु अब भी उनमें भारत के गौरवशाली अतीत की पूरी स्मृतियाँ सँजोयी हुयी हैं।

स-नदियाँ

भारत की नदियाँ असंख्य हैं, जो वास्तव में देश का जीवन-रक्त जल का वहन और वितरण करने वाली धमनियाँ हैं। कभी पर्वतमालाओं से होकर घाटियाँ बनाती हुयी कभी धरती पर और बहुधा अपने तल को बदलती हुयी, ये नदियाँ विविध दिशाओं में समतल की ओर बहती हैं। वे विभिन्न तरंगिणी और कल-

नादिनी सरिताओं के रूप में बहती हैं और झरने, झील तथा द्वीप बनाती हैं।[1] भारत की समृद्धि एक बड़ी सीमा तक उसकी नदी-व्यवस्था पर निर्भर करती है। इन नदियों के तटों और उनके निकटवर्ती क्षेत्रों में हम जातीय संन्निवेशों और शक्तिशाली राज्यों, समृद्धनगर और उर्वर ग्राम, धार्मिक मंदिर और शांत तपोवनों का विकास देख सकते हैं। भारत की उर्वरता बहुत कुछ इसकी नदियों के कारण है और उनमें से अनेक नदियाँ वाणिज्य और व्यापार का मुख्य पथ भी रही हैं।

मार्कण्डेयपुराण (LVII-30) में स्वाभाविक रूप से कहा गया है—"सभी नदियाँ पवित्र हैं, सभी समुद्र की ओर बहती हैं, संसार के लिए सभी मातृ-वत् हैं और सभी पापनाशिनी हैं।" भागवत पुराण (स्कन्ध, V, अध्याय 20) में कुछ ऐसी नदियों का उल्लेख किया गया है, जिनका समीकरण कठिन प्रतीत होता है। वे निम्नलिखित हैं——अनुमती, सिनिवाली, कुहु, रजनी, नन्दा, मधु-कुल्या मित्रविन्दा, मंत्रमाला, आयुर्दा, अपराजिता, श्रुतविन्दा, सहस्रश्रुति और देवगर्भा।

यह एक रोचक तथ्य है कि वैदिक युग से ही, शनैःशनैः बढ़ते हुए आर्यक्षेत्र को सप्तसिन्धु, सरस्वती, गंगा या नदियों के नाम से वर्णन करने की प्रायः एक परंपरा सी बन चुकी थी। इस प्रकार ऋग्वैदिक आर्यों के संपूर्ण प्रदेश को ऋग्वेद में 'सप्तसिन्धवः' (सात नदियों यथा सिन्धु तथा एक अन्य नदी, सरस्वती, कुभा या आमू सहित पंजाब की पाँच नदियों का देश) कहा गया है। जब आर्य-क्षेत्र का विस्तार संपूर्ण भारत में हो गया , तब गंगा, यमुना, गोदावरी, नर्मदा, सिन्धु और कावेरी[2] नामक सात नदियों द्वारा उसे द्योतित किया जाने लगा। बौद्ध मध्यप्रदेश की सात पवित्र नदियों के अंतर्गत बाहुका (बाहुदा), अधिकक्का, गया (फल्गु) संदरिका, सरस्सती, पयाग (गंगा-यमुना का संगम) और बाहुमती की गणना की गयी है।[3] एक अन्य पाठ में गंगा, यमुना, सरभू (सरजू), सरस्वती, अचिर-वती, मही और महानदी के नाम उल्लिखित हैं।[4]

कालिदास ने जो कुछ भी अपने 'रघुवंश' में कहा है, उस पर विचार करना रोचक होगा। सुदूरपूर्व में पूर्वसागर,—वर्तमान बंगाल की खाड़ी—स्थित था

---

[1] ऋग्वेद, X, 75-4.

[2] **गंगा च यमुना चैव गोदावरी सरस्वती।**
नर्मदा-सिन्धु-कावेरी-जलेऽस्मिन् सन्निधिम कुरु॥

[3] **मज्झिम निकाय, I, पृ० 39.**

[4] **विसुद्धिमग्ग, I, पृ० 10.**

(रघुवंश IV, 32)। इसके तट पर गंगा की निचली घाटी में रहनेवाले प्राच्य जन सुह्म और वंग स्थित थे (वही, IV. 35-36)। यह हिंद महासागर (महोदधि) तक प्रसरित था, जो सुदूर दक्षिण तक फैला हुआ था। इस प्रकार भारतीय प्राय-द्वीप के प्रायः तीनों दक्षिणी छोरों को परिवृत्त करते और इसको विशाल बनाते हुए—यह सुदूर दक्षिण में फैले हुए हिंद महासागर (महोदधि) तक विस्तीर्ण था। (प्राप तालीवनस्यामेमूपकण्ठम महोदधे—रघुवंश, IV, 34)। सुदूर दक्षिण और दक्षिण-पूर्व में समुद्र तट पर ताड़ के वृक्षों की विस्तृत वनराजि थी, (वही, IV, 34)। दक्षिण की ओर फैले हुए पूर्वी समुद्रतट पर कलिंग और पाण्ड्य नामक भारत की कुछ सर्वशक्तिशाली जातियाँ रहती थीं, (वही, IV, 49)। दक्षिण-पश्चिमी समुद्रतट पर केरल जन रहते थे (वही, IV, 54)। संपूर्ण पश्चिमी समुद्र तट अपरान्त प्रदेश कहा जाता था।

(I) सिन्धुनदी-समूह

ऋग्वैदिक काल से ही भारतीय (Indus) 'इण्डस' को सिन्धु नदी के नाम से जानते थे। इसे सम्भेद और संगम भी कहा जाता था। इसकी गणना दिव्य-गंगा की सातधाराओं में की गयी है। अपने उद्गमस्थल पर सिन्धु दो नदियों की एक संयुक्त धारा है जिनमें एक धारा तो कैलास पर्वत के उत्तर पश्चिम से निकलकर पश्चिमोत्तर दिशा में प्रवाहित होती है और दूसरी कैलास के उत्तरपूर्व में स्थित एक झील से निकलकर पहले पश्चिमोत्तर दिशा में और बाद में दक्षिणपश्चिम की ओर बहती है। इस संगमस्थल से प्रारंभ होकर पश्चिमोत्तर में एक लंबी दूरी तय करने के पश्चात् कराकोरम पर्वत-माला से यह दक्षिण की ओर मुड़ जाती है।

इस स्थान से दक्षिण पूर्व दिशा में अरब सागर तक प्रायः एक टेढ़ी-मेढ़ी धारा के रूप में प्रवाहित होती हुयी, यह अपने मुहाने पर दो सुप्रसिद्ध डेल्टाओं का निर्माण करती है। प्लिनी को ज्ञात सिन्धु-समूह में, सिन्धुसहित अन्य उन्नीस नदियाँ संमिलित थीं, जिनमें अपनी चार सहायक नदियों सहित झेलम (Hydaspes) सबसे अधिक विख्यात थी। सामान्यतया सिन्धु नदी भारत की पश्चिमी सीमा मानी जाती थी।[1] एरियन हमें सूचित करता है कि सिन्धु नदी कई स्थलों पर झीलों की भाँति फैली हुयी थी, जिसके परिणामस्वरूप समतल धरातल पर उसके तट एक दूसरे से बहुत दूर दिखाई देते थे। सिन्धु उत्तरापथ की प्रसिद्ध सबसे महती नदी थी।

[1] **मैक्रिंडिल, ऐंश्यंट इंडिया, पृ० 28, 43.**

इसके आधार पर सिन्धु-नदी समूह का नामकरण किया गया है। वैदिक आर्यों की दृष्टि में यह एक अद्वितीय नदी थी, जब कि मेगस्थनीज़ और अन्य ग्रैको -लैटिन लेखकों की दृष्टि में गंगा के अतिरिक्त अन्य कोई नदी इसके समान नहीं थी। ऋग्वेद (X.75) में कहा गया है कि अपने ओजस् में सिन्धु नदी प्रवाहशील सभी नदियों से बढ़-चढ़ कर है। यह पृथ्वी की प्रपातशील चट्टानों पर से प्रवाहित होती थी और 'गतिशील सरिताओं की राज्ञी' एवं अग्रणी थी।

अलबेरुनी के अनुसार चेनाब (चन्द्रभागा) नदी के संगम के पहले तक सिन्धु के केवल ऊपरी प्रवाह को ही सिन्धु नदी कहा जाता था; उस स्थल के नीचे अरोर तक इसे पंचनद और अरोर से समुद्र तक के इसके प्रवाह को मिहरन कहा जाता था।[1] धारयद्वसु के बेहिस्तून-अभिलेख में इसे 'हिन्दु' और वेंडीडाड में 'हेन्दु' (Hindu and Hendu) कहा गया है। सिन्धु नदी के आधार पर उस प्रदेश का जहाँ से यह बहती थी, सिन्धुदेश नामकरण हुआ है।[2]

ऋग्वेद के नदी-स्तुति-सूक्त में सिन्धु की अनेक सहायक नदियों का वर्णन किया गया है।[3] पश्चिम में सिन्धु की कुछ सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण सहायक नदियों को पहचानना कठिन नहीं है। कुभा नदी निश्चय ही आधुनिक काबुल नदी है, जिसे एरियन ने कोफेस (Kophes) प्लिनी ने कोफेन (Kophen), टालेमी ने कोआ (Koa), और पुराणों ने 'कुहु' कहा है। पूर्व में, आधुनिक पंजकोरा से समीकृत अपनी दो सहायक नदियों—सुवास्तु या स्वात (एरियन की साओस्तोस नदी, (Saostos) और गौरी (एरियन की गैरोइया नदी, Garroia) तथा एक अन्य नदी जिसे एरियन ने मलमन्तोस कहा है, और जो संभवतः इसकी (काबुल) सबसे बड़ी सहायक नदी कामेह (Kameh) या खोनर (Khonar) से समीकृत की जाती है, को अपने में मिलाती हुयी यह (काबुल नदी) अटक (संस्कृत, हाटक) के कुछ ऊपर सिन्धु में मिलती है। वैदिक क्रुमु आधुनिक कुरम नदी है जो ताची नामक अपनी सहायक नदी से आपूरित है। सिन्धु नदी की सहायक गोमती वर्तमान गोमल है। इसकी कुछ अन्य पश्चिमी सहायक नदियाँ हैं।[4]

---

[1] इंडिया, I, 260.

[2] तु० बील, बुद्धिस्ट रेकार्ड्स ऑव द वेस्टर्न वर्ल्ड, I, पृ० 69; ज० ए० सो० बं०, 1886, II, पृ० 323.

[3] बि० च० लाहा, रिवर्स ऑव इंडिया, पृ० 9-10.

[4] अधिक विवरण के लिए बि० च० लाहा की पुस्तक रिवर्स ऑव इंडिया, पृ० 15-16, द्रष्टव्य।

सिन्धु की चार प्रमुख पूर्वी सहायक नदियों में जो संमिलित होकर चन्द्रभागा या चेनाब नाम से बहती हैं, सबसे पश्चिमी वितस्ता, वितम्सा या झेलम है। दो पहाड़ी सरिताओं से संगमित होकर चेनाब या चन्द्रभागा किश्तवर के ठीक ऊपर बहती प्रतीत होती है। किश्तवर से रिश्तवर तक इसका प्रवाह दक्षिणोन्मुख है। जम्मू तक बहने के पश्चात् अपने और झेलम के मध्य दोआब बनाते हुए इसका प्रवाह दक्षिण-पश्चिमोन्मुख हो जाता है। यही ऋग्वेद की असिक्णी नदी है; इसी को एरियन ने एकेसिनीज़ (Akesines), टालेमी ने सन्दबल या सन्दबग (Sandabal या Sandabaga) कहा है। काँगड़ा जिले में बार लाछ दर्रे के विपरीत दिशाओं से चन्द्र और भाग नदियाँ निकलती हैं। दो संगमित सरिताओं के रूप में रावी या इरावती, जिसे यूनानी हाइड्राओटीज़, (Hydraotis) एड्रीस (Adris) या रोनाडीस (Ronadis) नामों से पुकारते थे, कश्मीर में छम्बा के दक्षिण-पश्चिमी कोण पर सबसे पहले दिखलायी पड़ती है। दक्षिण-पश्चिमोन्मुख दिशा में छम्बा से लाहौर तक प्रवाहशील यह नदी चेनाब या वितस्ता और चन्द्रभागा की संयुक्त धारा से निकली है। ब्यास (विपाशा) रावी के उद्गमस्थल के समीप रोहतंग दर्रे पर पीर पंजल पर्वतमाला से निकलती है। हिमालय पर्वतमाला से निकलकर उत्तर-पूर्व और दक्षिण-पूर्व से बहनेवाली दो सरिताओं के संगमित प्रवाह के रूप में यह नदी सबसे पहले हमें कश्मीर में छम्बा के दक्षिणी-पश्चिमी कोण पर दृष्टिगोचर होती है। छम्बा से दक्षिण-पश्चिम दिशा में बहती हुयी यह नदी कपूरथला के दक्षिण-पश्चिम कोण पर शतद्रु (सतलज) से मिलती है। इसका समीकरण यूनानियों को ज्ञात हाइपैसिस (Hypases) या हाइफैसिस (Hyphasis) नदी से किया जाता है।

शतद्रु या सतलज का उद्गमस्थल मानस-सरोवर की पश्चिमी झील के पश्चिमी प्रदेश में है। शतलज, जिसे टालेमी ने ज़रड्रोस (Zaradros) और प्लिनी ने हेसीड्रस (Hesydrus) कहा है, पूर्व में सिन्धु नदी की सबसे महत्त्वपूर्ण आप्लाविका है। शिमला पहाड़ियों और कामेत पर्वत के थोड़ा पहले यह नदी कुछ दक्षिण-पश्चिम की ओर मुड़ जाती है, जहाँ से दक्षिण-पश्चिम दिशा में टेढ़ी-मेढ़ी गति से बिलासपुर से बहती हुयी उसके उत्तर-पश्चिमी कोण से यह पुनः दक्षिण की ओर घूम जाती है और फिर रूपर से उस स्थान तक जहाँ यह कपूरथला के दक्षिण पश्चिम कोण पर ब्यास नदी को आत्मसात करती है, यह पश्चिमाभिमुख होकर प्रवाहित होती है। ये संयुक्त सरिताएँ तब दक्षिण-पश्चिम की ओर बहती हैं और अलीपुर तथा उच के मध्य चेनाब नदी से मिल जाती है। इन चार या पाँच नदियों की संयुक्त धारा चेनाब नाम से दक्षिण-पश्चिम की ओर प्रवाहित होती है,

और पंजनद में सिन्धु नदी से मिलती है। प्राचीन काल में सिन्ध प्रदेश की सीमा तक इसका एक स्वतंत्र प्रवाह था (पार्जिटर, मार्कण्डेय पुराण, पृ० 291, टिप्पणी)।

(II) सरस्वती-दृषद्वती-समूह (मरुभूमि की नदी-पद्धति)

सरस्वती और दृषद्वती उत्तरापथ की दो ऐतिहासिक नदियाँ हैं, जो सिन्धु नदी-समूह से पूर्णतः असंबद्ध स्वतंत्र रूप से प्रवाहित होती हैं। मनु के अनुसार इन दो पवित्र सरिताओं के मध्य ब्रह्मावर्त्त-प्रदेश स्थित है। पूर्व वैदिक काल की पवित्र सरिता सरस्वती को मिलिन्दपञ्हो में हिमालय से निकलने वाली नदी कहा गया है। इसका उद्गम-स्थल हिमालय पर्वत-श्रेणी में शिमला पहाड़ी के ऊपर बताया गया है। दक्षिण की ओर उन्नत धरातल बनाती हुयी यह शिमला और सिरमौर से होकर बहती है। यह पटियाला होकर प्रवाहित होती हुयी, सिरसा से कुछ दूर राजपूताना के मरुस्थल के उत्तरी भाग में विनष्ट हो जाती है। सरस्वती के अदृश्य होनेवाले स्थान को मनु ने विनशन कहा है। कहीं दृश्य और कहीं पर अदृश्य रहने वाली नदी के रूप में सरस्वती का ठीक ही वर्णन किया गया है (सिद्धान्त शिरोमणि, गोलाध्याय, भुवनकोष)। थोड़ी देर के लिए यह चलौर गाँव के समीप बालू में अदृश्य हो जाती है और भवानीपुर में पुनः प्रकट होती है। बालछापर में यह पुनः लुप्त हो जाती है, किन्तु बराखेरा में फिर प्रकट होती है; पेहोआ के निकट इसमें मारकण्डा नदी मिलती है और यह संयुक्त धारा सरस्वती के नाम से ही अंत में सरस्वती के निचले प्रवाह घग्घर या घर्घर से मिल जाती है। महाभारत[1] में भी कहा गया है कि अदृश्य होने के पश्चात् सरस्वती नदी तीन स्थानों यथा, चमसोद्भेद, शिरोद्भेद, और नागोद्भेद[2] में पुनः प्रकट होती है। आज भी अस्तित्वशीला यह नदी सतलज और जमुना के मध्य बहती है। वैदिक आर्यों को ज्ञात सरस्वती एक ओजवती नदी थी जो समुद्र में गिरती थी।[3] कात्यायन[4], लाट्यायन[5], आश्वलायन[6] और सांख्यायान

---

[1] वनपर्व, अध्याय, 82; नं० ला० दे, ज्यॉग्रेफिकल डिक्शनरी, पृ० 180 और आगे; पंजाब गजेटियर, अम्बाला डिस्ट्रिक्ट, अध्याय 1.

[2] महाभारत, वनपर्व, 82.

[3] मैक्समूलर, ऋग्वेद संहिता, पृ० 46.

[4] XII, 3·20; XXIV, 6·22.

[5] X. 15.1; 18·13; 19·4.

[6] XII 6·2·3.

श्रौतसूत्रों[1] में इसके तट पर किये गये यज्ञों का बड़ा महत्त्व और पवित्रता बतायी गयी है।

पुण्यसलिला दृषद्वती यमुना के अधिक निकट बहती है। इसका स्रोत सिरमौर पहाड़ियों में खोजा जा सकता है। नहम तक इसका प्रवाह पश्चिम की ओर है और वहाँ से यह दक्षिण की ओर अपना पथ बदल कर अम्बाला और शाहाबाद जिलों से होकर बहती है। सिरसा में यह सरस्वती से मिलती हुई प्रतीत होती है। इसके आगे दोनों ही सरिताएँ अदृश्य हो जाती हैं। पृथूदक नामक प्राचीन नगर (आधुनिक पेहोआ) इसी नदी के तट पर स्थित है। मनुसंहिता (II. 17) के अनुसार यह नदी ब्रह्मावर्त्त की दक्षिणी और पूर्वी सीमा थी, जब कि इसकी पश्चिमी सीमा सरस्वती नदी थी। महाभारत के वनपर्व में दृषद्वती और कौशिकी के संगम को अत्यंत पुनीत माना गया है। वामनपुराण (34) में कौशिकी को दृषद्वती की एक शाखा बताया गया है। कनिंघम ने दृषद्वती को थानेश्वर के दक्षिण-पश्चिम से बहनेवाली वर्तमान रापि नदी से समीकृत किया है। एलफिंस्टन और टॉड के अनुसार यह घग्घर नदी है, जो अम्बाला और सिन्ध से होकर बहती है। रैप्सन के अनुसार, इसे हम सरस्वती के समानांतर प्रवाहित होनेवाली चित्रंग, चंटांग या चिटांग नदी से समीकृत कर सकते हैं। ऋग्वेद में दृषद्वती और सरस्वती के मध्य आपया नामक एक नदी का वर्णन प्राप्त होता है। लुडविग इसे आपगा से समीकृत करने के पक्ष में हैं, जो गंगा नदी का एक दूसरा नाम है, किन्तु त्सिमर इसे ठीक ही सरस्वती के निकट स्थित बताते हैं (एल्टिंडिशेज लेबेन, 18)। पिशेल ने इसे कुरुक्षेत्र में बताया है आपया जहाँ की एक प्रसिद्ध नदी है।[2]

(III) गंगा-यमुना-समूह

गंगा भारत की सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण पवित्र नदियों में से एक है। प्राचीन बौद्धों को परिज्ञात मध्यदेश की नदियाँ गंगा नदी समूह का निर्माण करती हैं। इसकी सहायक नदियों की संख्या जैसा कि ग्रीक-लैटिन लेखकों को ज्ञात थी, उन्नीस थी।[3] यद्यपि वे गंगा और सिन्धु को भारत की दो बड़ी नदियों के रूप में जानते थे, किंतु गंगा को वे सिन्धु से अधिक बड़ी मानते थे। गंगा विष्णुपदी,

---

[1] XIII. 29.

[2] महाभारत, III. 83·68.

[3] मैक्रिंडिल, ऐंश्यंट इंडिया, पृ० 136 और आगे।

जाह्नवी, मन्दाकिनी और भागीरथी आदि विभिन्न नामों से विश्रुत थी।[1] महाभारत में बिन्दुसर को, जब कि जैनग्रंथ जम्बुद्विवपण्णत्ति में पद्महृद को गंगा का उद्गमस्थल बतलाया गया है। पालि-ग्रंथों में अनोतत्त झील के दक्षिणी मुख को गंगा का स्रोत बतलाया गया है। आधुनिक भूगोल-वेत्ताओं के अनुसार भागीरथी सर्वप्रथम गढ़वाल क्षेत्र में गंगोत्री के समीप दृष्टिगत होती है। देवप्रयाग में बाईं ओर से आकर इसमें अलकनन्दा नदी मिल जाती है। देवप्रयाग से इस संयुक्त प्रवाह को गंगा कहा जाता है। देहरादून से हरिद्वार तक इसका अवतरण प्रायः वेगपूर्ण है, जिसे गंगाद्वार भी कहा जाता है। हरिद्वार से बुलंदशहर तक गंगा का प्रवाह दक्षिणोन्मुखी, और उसके बाद प्रयाग तक जहाँ यमुना नदी आकर इसमें मिलती है, इसका प्रवाह दक्षिणपूर्वाभिमुखी है। इलाहाबाद के आगे राज-महल तक यह पूर्व दिशा में और इसके बाद यह पुनः दक्षिणपूर्वोन्मुखी होकर बहती है। अलकनन्दा नदी, गंगा के ऊपरी प्रवाह का प्रतिनिधित्व करती है। मन्दाकिनी अलकनन्दा की एक सहायक नदी है और इसका समीकरण गढ़वाल में केदार पर्वत से निःसृत होने वाली मन्दाकिनी या कालिगंगा से किया जा सकता है। जिस स्थान पर इसमें मन्दाकिनी मिलती है, वहाँ से गंगा नदी, गंगा-भागीरथी की संज्ञा धारण करती है। फर्रुखाबाद के ठीक पहले गंगा में नुत नामक सहायक नदी मिलती है। फर्रुखाबाद और हरदोई के बीच में इसमें रामगंगा नामक एक अन्य सहायक नदी मिलती है। गोमती (आधुनिक गुम्ती या गोम्ती) वाराणसी (बनारस) और गाजीपुर के बीच गंगानदी में मिलती हैं। पुराणों में प्रसिद्ध धूतपापा पूर्वी गोमती की एक सहायक नदी थी। तमसा या पूर्वी टोंस आजमगढ़ से बहती हुयी, बलिया के पश्चिम में गंगा नदी में मिलती है। गंगा की सहायक नदी सरयू छपरा जिले में गंगा में मिलती है। यह बड़ी ऐतिहासिक नदी अब घर्घरा (घाघरा) नाम से विश्रुत है। बहराइच जिले से होकर बहती हुयी कुछ महत्त्वहीन सहायक नदियाँ गोंडा जिले में घर्घरा में मिलती हैं। आरा जिले की पश्चिमी सीमा पर छोटी गंडक नदी घर्घरा (सरयू) में मिलती है। प्राचीन अयोध्या नगर सरयू-तट पर स्थित था। छोटी गण्डक जिसे हिरण्यवती या अजितवती भी कहते हैं, गोरखपुर जिले से होकर बहती हुई घाघरा या घर्घरा (सरयू) में गिरती है। सरयू की बड़ी सहायक नदी अचिरवती बहराइच, गोंडा और बस्ती जिलों से बहती हुयी गोरखपुर जिले में बरहज के पश्चिम में सरयू या घर्घरा में मिलती हैं। ककुत्था, हिरण्यवती या छोटी गण्डक की एक सहायक

[1] योगिनीतंत्र, 2, 3, पृ० 122 और आगे; 2.7.8, पृ० 186 और आगे।

नदी थी। गण्डकी (आधुनिक गण्डक) गंगा की ऊपरी उपनदी है। गण्डक की प्रमुख धारा (प्रमुख गण्डक नदी) आरा जिले में सोनपुर तथा मुज़फ्फ़रपुर जिले में हाजीपुर के बीच में गंगा में मिलती है। शतपथ-ब्राह्मण[1] में वर्णित सदानीरा को कुछ विद्वानों ने गण्डक और अन्य ने ताप्ती से समीकृत करने की चेष्टा की है। कुछ अन्य ने इसे करतोया से समीकृत किया है। महाभारत के अनुसार इसे गण्डकी और सरयू के मध्य स्थित बतलाया गया है। पार्जिटर ने इसे राप्ती नदी से समीकृत किया है।[2] बड़ी गण्डक, जो गंगा की ऊपरी उपनदी है, मुंगेर जिले में घाघरा के पश्चिम में गंगा से मिलती है। नेपाल में बाहुमती या बागमती बौद्धों की एक पवित्र नदी है। सात नदियों से इसके संगम पर तीर्थ स्थान स्थित हैं।[3] कमला नदी गंगा की एक उपरली उपनदी है। कौशिकी (आधुनिक कुशी) भागलपुर और पूर्णिया जिले में होकर बहती है और पूर्णिया जिले में मानहरी के दक्षिणपूर्व में गंगा नदी में मिलती है। रामायण-ख्याति की ऐतिहासिक नदी तमसा (आधुनिक दक्षिण टोंस) ऋक्ष पर्वत से निकलकर उत्तरपूर्व में बहती हुयी इलाहाबाद के आगे गंगा में मिलती है। गंगा की सबसे बड़ी निचली सहायक नदी सोन है [जिसे एरियन की सोनोस (Sonos) तथा आधुनिक सोन से समीकृत किया जाता है] जो जबलपुर में मेकल पर्वतश्रेणी (मैकाल) से निकलकर उत्तरपूर्व की ओर बघेलखण्ड, मिर्जापुर और शाहाबाद जिलों में बहती हुयी पटना में गंगा से मिलती है। पाँच सहायक नदियाँ सोन को आपूरित करती हैं। एक दक्षिणी उपनदी, पुनपुन्न (आधुनिक पुनपुन) गंगा में पटना के ठीक आगे मिलती है। एक अन्य दक्षिणी उपनदी फल्गु मुंगेर जिले में लक्खीसराय के उत्तर-पूर्व में गंगा में मिलती है। सकुटि से समीकृत सक्रि नदी मुंगेर और पटना के बीच गंगा में गिरती है। पूर्व में अंग और पश्चिम में मगध की सीमा चम्पा नदी कदाचित् भागलपुर के उपकण्ठ में स्थित चम्पानगर और नाथनगर के पश्चिम में स्थित नदी ही है।

गंगा नदी को उसके अवर प्रवाह में पश्चिमी बंगाल में भागीरथी-हुगली और पूर्वी बंगाल में पद्मा-मेघना कहा जाता है। गंगा राजमहल और माल्दा के बीच बंगाल में प्रवेश करती है और मुर्शिदाबाद जिले के थोड़ा इधर ही दो शाखाओं में बँट जाती है।

---

[1] **एगेंलिग, इंट्रोडक्शन टु द शतपथ-ब्राह्मण, सै० बु० ई०, जिल्द XII, पृ० 104.**

[2] **मार्कण्डेय पुराण, पृ० 194.**

[3] **स्वयंभू पुराण, अध्याय, V; वराह पुराण, 215.**

गंगा की भागीरथी शाखा में मुर्शिदाबाद जिले में बंसलोई नामक पहली सहायक नदी दाहिनी ओर से मिलती है। अजया नामक एक अन्य महत्त्वपूर्ण सहायक नदी बर्दवान जिले में कटवा नामक स्थान पर भागीरथी में मिलती है और बर्दवान बीरभूम जिलों के मध्य प्राकृतिक सीमा का निर्माण करती है। भागीरथी के निचले प्रवाह में दाहिनी ओर से दामोदर नामक सुप्रसिद्ध सहायक नदी मिलती है जो कई धाराओं में बँटकर मिदनापुर जिले में हुगली नदी में मिलती है। दामोदर हज़ारीबाग जिले में बगोदर के निकट स्थित पहाड़ियों से निकलती है और मानभूम तथा संथाल परगना जिले से बहती हुयी बाद में बर्दवान और हुगली जिलों से होकर बहती है। गंगा की भागीरथी शाखा की एक अन्य महत्त्वपूर्ण सहायक नदी रूपनारायण बाँकुड़ा, हुगली और मिदनापुर जिलों से बहती हुयी तामलुक के निकट हुगली नदी में मिलती है। हुगली में दाहिनी ओर से हल्दी और केशाई नदियों की संयुक्त धाराएँ मिल जाती हैं। बंगाल में गंगा की मुख्य धारा की पहली सहायक नदी पनार नवाबगंज के आगे गंगा में मिलती है।

माल्दा जिले में कंसवती और पूर्णभव पनार की दो सहायक नदियाँ हैं। राजशाही जिले में आत्रायी (आत्रेयी) और छोटी यमुना परस्पर मिलती हैं। ये पनार की सहायक नदियाँ भी हैं। गोलुण्डो में गंगा में बड़ी यमुना मिलती हैं जो पूर्वी बंगाल से बहने वाले ब्रह्मपुत्र के मुख्य प्रवाह के अतिरिक्त और कुछ नहीं है। इस संयुक्त प्रवाह को अब पद्मा कहते हैं। यह मेघना के सागरसंगम में फरीदपुर जिले के पूर्व में मिलती है। फरीदपुर जिले में पानसा के पहले गंगा से निकलने वाली गराई नदी मधुमती नाम से बहती है और बाकरगंज जिले में हरिघाटा आरियालखाल नदी जो गंगा की सहायक नदी है, फरीदपुर कस्बे के आगे पद्मा की दाहिनी ओर से निकलती है, और फरीदपुर की मदारीपुर तहसील तथा बाकरगंज जिले से बहती हुयी खाड़ी में गिरती है। आरियालखाल और मधुमती एक छोटी नदी द्वारा जुड़ी हुयी है जो मदारीपुर कस्बे के थोड़ा पहले ही आरियालखाल से निकलती है और मदारीपुर तहसील में गोपालगंज के थोड़ा पहले ही मधुमती में मिलती है। फरीदपुर जिले के राजनगर में राजा राजवल्लभ के भवनों एवं इमारतों को ध्वस्त करने के कारण पद्मा का निचला प्रवाह कीर्तिनाशा (प्रसिद्ध कार्यों की विनाशक) नाम से विश्रुत हो जाता है।

भागीरथी और पद्मा के अतिरिक्त गंगा का जल अनेक अन्य सरिताओं द्वारा समुद्र में ले जाया जाता है। गंगा के डेल्टा के समुद्रांत छोर ने वनाच्छादित एक विस्तृत दलदली क्षेत्र को घेर कर रखा है जिसे सुन्दरबन कहा जाता है।

गंगा की पहली तथा बड़ी पश्चिमी सहायक नदी मुख्य यमुना है, जिसका उल्लेख योगिनीतंत्र में प्राप्त होता है (2-5, पृ० 139-40)। यह हिमालय पर्वतमाला में कामेत पर्वत के आगे से निकलती है। दक्षिण की ओर गंगा के समानांतर बहने के लिए उत्तरी भारत के मैदानों में प्रवेश करने के पूर्व यह सिवालिक श्रेणी और गढ़वाल में बहती हुयी एक घाटी का निर्माण करती है। मथुरा के आगे प्रयाग या इलाहाबाद में गंगा के प्रसिद्ध संगम तक यह दक्षिण-पूर्व दिशा में प्रवाहिती होती है। देहरादून जिले में पश्चिम की ओर से इसमें दो सहायक नदियाँ मिलती हैं, जिनमें से एक का नाम उत्तरी टोंस है। आगरा और इलाहाबाद के मध्य बाईं ओर से इसमें चार सहायक नदियाँ मिलती हैं। इसके तट पर भारत के अनेक तीर्थ-स्थान स्थित हैं। चीनी यमुना को येन-मौ-ना (Yen-mou-na) कहते हैं। बौद्धों के अनुसार यह पाँच बड़ी नदियों में से एक है। यह शूरसेन और कोशल तथा , और आगे कोशल एवं वंश में सीमा का कार्य करती है। यमुनोत्री जो यमुना का स्रोत मानी जाती है कुरसौली से आठ मील दूर है। इसकी पहचान यूनानी इरैन्नबोस (Erannaboas) (हिरण्यवाह या हिरण्यवाहु) से की जाती है। स्कन्दपुराण में वालुवाहिनी नामक इसकी एक सहायक नदी का उल्लेख प्राप्त होता है।

(IV) ब्रह्मपुत्र-मेघना नदी-समूह

आधुनिक भौगोलिक अन्वेषणों के अनुसार ब्रह्मपुर अथवा लौहित्य (रोहित) का उद्गमस्थल मानस सरोवर के पूर्वीक्षेत्र में है। मानस सरोवर से नम्चा बरवा तक ब्रह्मपुत्र का प्रवाह यथावत् पूर्व की ओर बना हुआ है और नम्चा बरवा से यह दक्षिण की ओर मुड़ जाती है और फिर हिमालय-श्रेणी के पूर्वी छोर से बहती हुयी सदिया नामक उत्तरपूर्वी सीमांत जिले में असम की घाटी में प्रवेश करती है। सदिया से गारो पहाड़ियों के पहले तक यह दक्षिण पूर्वाभिमुख होकर बहती है और फिर दक्षिण की ओर बहती हुयी यह गोलुण्डोघाट के कुछ पहले गंगा में मिलती है। दक्षिण तिब्बत की अधित्यका से प्रवाहित होने वाला ब्रह्मपुत्र का प्रवाह त्सांगपो (Tsangpo) नाम से विज्ञात है। मानस सरोवर से लगभग 200 मील दूर पर इसमें एक महत्त्वपूर्ण ऊपरी सहायक नदी मिलती है। और आगे इसमें एक अन्य ऊपरी उपनदी मिल गयी है। इसके और आगे, इसमें हिमालय श्रेणी से निकलने वाली तीन अवर सहायक नदियाँ मिलती हैं। वह बड़ी सहायक नदी जो सदिया जिले में ब्रह्मपुत्र में मिलती है उसका नाम लोहित है। बाईं ओर दूसरी महत्त्वपूर्ण सहायक नदी जो लखीमपुर के दक्षिण में ब्रह्मपुत्र में

मिलती है बड़ी डिहिंग है और आगे बढ़ने पर बाईं ओर पटकई पहाड़ियों से निःसृत दिसरा सिबसागर कस्बे के पश्चिमोत्तर में, पश्चिमोत्तर और पश्चिम की ओर से बहती हुयी ब्रह्मपुत्र में मिलती है। लखीमपुर और सिबसागर जिलों के मध्य ब्रह्मपुत्र मजुली नामक एक द्वीप का निर्माण करती है। मणिपुर के उत्तर में नागा पहाड़ियों से निकलने वाली धनश्री नामक सहायक नदी ब्रह्मपुत्र में मिलती है और आगे, बाईं ओर ब्रह्मपुत्र में कलंग की दो सरिताएँ इसकी सहायक नदियों के रूप में नवगाँव जिले में मिलती हैं। तेजपुर के पहले और आगे दाहिनी ओर से दो नदियाँ ब्रह्मपुत्र में मिलती हैं। गोलपारा जिले में दामरा के कुछ पहले गारो पहाड़ियों से बहनेवाली कृष्णाई ब्रह्मपुत्र में मिलती है। दाहिनी ओर से ब्रह्मपुत्र में मानस नामक बड़ी उपनदी मिल जाती है।

गोलुण्डोघाट के कुछ पहले बड़ी यमुना से संगमित होने के पश्चात् गंगा पद्मा का नाम धारण कर लेती है। यह यमुना पूर्वी बंगाल से होकर बहने वाली वर्तमान ब्रह्मपुत्र नदी की मुख्यधारा के अतिरिक्त और कुछ नहीं है जब कि इसका प्राचीन प्रवाह मेमनसिंह कस्बे से होकर, असम की सुरमा, बराक और पुइनी नामक तीन नदियों की संयुक्त धारा की प्रतिनिधित्व मेघना में मिलता है।

ब्रह्मपुत्र की प्राचीनधारा और मेघना का संगम मेमनसिंह जिले में किशोर गंज तहसील में भैरवबाजार के कुछ आगे होता है। बंगाल में प्रविष्ट होने के पश्चात् ब्रह्मपुत्र दो शाखाओं में विभक्त हो जाती है। ब्रह्मपुत्र की यमुना शाखा में घोड़ाघाट के निकट दाईं ओर से तिस्ता (त्रिस्रोत) उपनदी के रूप में मिलती है। और आगे ब्रह्मपुत्र की यमुना शाखा में, दाईं ओर से करतोया नामक एक अन्य महत्त्वपूर्ण उपनदी मिलती है, जो कभी बंगाल और कामरूप के बीच की सीमा थी (महाभारत, वनपर्व, अध्याय 85)। रंगपुर जिले में दोमार के पहले करतोया का उद्गमस्थल है। धलेश्वरी जो निचली ब्रह्मपुत्र की सहायक नदी है, ढाका जिले (पू० पाकिस्तान में) की एक बहुत महत्त्वपूर्ण नदी है। बहुत चौड़ी होकर मेघना में मिलने से पूर्व, हबीगंज के आगे इसमें लक्ष्या नदी मिलती है। बड़ी गंगा धलेश्वरी की प्रशाखाओं में से एक है। इचामती जो ढाका जिले की सर्वप्राचीन नदियों में से एक है, धलेश्वरी और पद्मा के बीच में प्रवाहित होती है। पहले यह रंपल के निकट ब्रह्मपुत्र में मिलती थी। आजकल कई चक्कर काटकर यह धले-श्वरी में मिलती है।

लक्ष्या जो ढाका जिले की सबसे रम्य नदी मानी जाती है, पुरानी ब्रह्मपुत्र से निकली हुयी तीन सरिताओं से बनी है। असम की दूसरी महत्त्वपूर्ण नदी सुरमा, पूर्वी बंगाल की प्रसिद्ध नदी मेघना का ऊपरी प्रवाह है। हबीगंज के पश्चिम

में बराक से इसके संगम के पहले इसमें बाईं ओर से पाँच सहायक नदियाँ मिलती हैं। सुरमा में मिलने के पूर्व, बराक का प्रवाह पश्चिमाभिमुख है। मनु नदी टिपरा पहाड़ी से निकलती है और उत्तर की ओर बहती हुयी सिलहट में बराक से मिलती है। मेघना सामान्यतया ढाका जिले से होकर बहने वाली सुरमा नदी के निचले प्रवाह का नाम है। यह राजाबारी के निकट वेगवती पद्मा में मिलती है। क्षुद्र ब्रह्मपुत्र नदी जो पहले प्रमुख ब्रह्मपुत्र नदी थी और जो अब ब्रह्मपुत्र नाम से मेमनसिंह कस्बे से होकर बहती है, किशोरगंज तहसील में मेघना में मिलती है। मुंशीगंज के थोड़ा आगे घलेश्वरी में मिलने के स्थान तक, ढाका और टिपरा जिले के मध्य मेघना का प्रवाह टेढ़ा-मेढ़ा हो जाता है। पद्मा और मेघना की संमिलित धारा दक्षिणाभिमुख होकर नोआखाली और बाकरगंज जिलों के बीच मेघना नाम से बंगाल की खाड़ी में गिरती है और सागर-संगम पर कुछ दोआबों का निर्माण करती है। अपने संगम के स्थान पर इन दोनों बड़ी नदियों का अतिव्यापक प्रसारयुक्त रूप बहुत भयाक्रांत करने वाला है।

ब्रह्मपुत्र-मेघना नदी-समूह के पूर्व में कुछ तटीय नदियाँ हैं। अपने ऊपरी प्रवाह में उत्तर में टिपरा पहाड़ी और दक्षिण में चटगाँव जिले में , तथा निचले प्रवाह में चटगाँव और नोआखाली जिलों के बीच की सीमा बनाती हुयी, फेनी नदी टिपरा पहाड़ियों से निकलकर संद्वीप के सामने खाड़ी में मिलती है। नफ भी एक सीमा-नदी है, जो चटगाँव की काक्स-बाजार तहसील को अराकान जिले से अलग करती है। चटगाँव और चटगाँव-पहाड़ी के इलाकों की तीन मुख्य नदियों में कर्णफूली सबसे लंबी नदी है। यह चटगाँव-पहाड़ी के इलाकों और दक्षिणीपश्चिमी भाग को मिलाने वाली लुशाई पहाड़ियों से निकलती है और दक्षिण-पश्चिम की ओर चटगाँव-पहाड़ी के इलाके के मुख्यावास राँगामाटी की ओर बहती है। यह पश्चिम की ओर मुड़कर हाल्दा के मुहाने तक सीधी बहती है और फिर दक्षिण की ओर घूमकर चटगाँव कस्बे से होकर बहती है जो इसके दाहिने तट पर स्थित है। राँगामाटी और चटगाँव कस्बों के बीच कर्णफूली को कई छोटी उपनदियाँ आपूरित करती हैं। मातामुरी काक्स-बाजार तहसील की एक छोटी भीतरी नदी है जो कुतुबदिया द्वीप के सामने खाड़ी में गिरती है।

यहाँ पर यह उल्लेखनीय है कि मिदनापुर की सुवर्णरेखा पूर्वी भारत की एक महत्त्वपूर्ण नदी है जो मानभूम जिले से निकलती है, तथा जमशेदपुर एवं और आगे दलभूम तथा मिदनापुर से होकर बहती हुयी खाड़ी में गिरती है।

(V) लुनी-चम्बल समूह

अरावली पर्वतमाला के पश्चिम में केवल लुनी ही एक महत्त्वपूर्ण नदी है।

यह अजमेर की पहाड़ियों से निकलती है और दक्षिणपश्चिमोन्मुखी दिशा में बहती हुयी राजपूताना[1] और कच्छ प्रायदीप की सीमा पर पहुँचती है। इसके बाद यह नदी सीधे दक्षिण की ओर अपने मुहाने पर एक बड़ा डेल्टा बनाती हुयी समुद्र में मिलने के लिए उन्मुख होती है। यह 6 सहायक नदियों द्वारा आपूरित है। दाहिनी ओर लुनी में एक सोता मिलता है। बाँई ओर से लुनी में मिलने वाली पहली सहायक नदी बन्दी है, जो अरावली पर्वतमाला से निकलती है। बनास एक उल्लेखनीय बाईं सहायक नदी है जो वरहाई के दक्षिण में लुनी में मिलती है। कच्छ की खाड़ी की ओर बहती हुयी लुनी में, सरस्वती नदी बाईं ओर से अरावली पर्वतमाला से निकलकर मिलती है ।

चम्बल या चर्मण्वती इंदौर के उत्तरपश्चिम में अरावली पर्वतमाला से निकलती है और उत्तरपूर्व की ओर पूर्वी राजस्थान से बहती हुयी यमुना में मिलती है। कालीसिन्ध विंध्यपर्वतमाला से उत्तर में बहती हुयी पिपरदा के कुछ उत्तर में दाहिनी ओर से चम्बल में मिलती है। पार्वती इंदौर की एक स्थानीय नदी है, जो उत्तरपश्चिम की ओर बहती हुयी दाहिनी ओर से चम्बल में मिलती है। कनिंघम के अनुसार यह पुराणों में वर्णित पारा नदी है। कुनु चम्बल की दाहिनी निचली सहायक है और मेज इसकी पहली बाईं उपनदी है। चम्बल की एक अन्य सहायक नदी बेराच अरावली पर्वतमाला से निकलती है। वह स्थान जहाँ बेराच में ढुण्ड नदी मिलती है, बनास (संस्कृत वर्णाशा) नाम से विज्ञात है। गंगापुर के पूर्व में बहने वाली चम्बल के पहले गम्भीर यमुना की एक सहायक नदी है। वेत्रवती (आधुनिक वेतवा) पारिपात्र पर्वत से निकलती है। यमुना की ओर इसके प्रवाह-पथ में अनेक सहायक नदियाँ मिलती हैं। केन [एरियन के अनुसार कैनस (Cainas)] वेत्रवती के आगे यमुना की एक महत्त्वपूर्ण सहायक नदी है। पारिपात्र पर्वत से निकलने और अरब सागर में गिरने वाली क्षुद्र नदियों में सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण नदी मही है। यह खंभात की खाड़ी में गिरती है। बंसवारा तक इसका प्रवाह दक्षिणपश्चिमाभिमुख है और बाद में यह दक्षिण की ओर मुड़ कर गुजरात से बहती है। साबरमती पारिपात्र पर्वत से निकलती है और अहमदाबाद से बहती हुयी खंभात की खाड़ी में गिरती है। विहला और वेगवती सुराष्ट्र में ऊर्जयन्त पर्वत से संबंधित है। काठियावाड़ की भदर नदी अरब सागर में गिरती है। इसका उद्गम स्थल काठियावाड़ की मण्डब पहाड़ियों में है। दशार्ण वेत्रवती की सहायक नदी है। निर्विन्ध्या विदिशा और उज्जयिनी,

---

[1] वर्तमान राजस्थान ।

दूसरे शब्दों में कालिदास के अनुसार दशार्णा (घसन) और शिप्रा के मध्य एक नदी है। इसका समीकरण आधुनिक कालीसिन्ध से किया जाता है, जो चम्बल की एक सहायक नदी है। शिप्रा ग्वालियर जिले की एक स्थानीय नदी है, जो सितमन के थोड़ा आगे चम्बल में मिलती है। यह वह ऐतिहासिक नदी है जिसके किनारे उज्जयिनी का प्राचीन नगर स्थित था। कालिदास ने इसको अमर बना दिया है।

(VI) नर्मदा-ताप्ती समूह

नर्मदा जो मध्य तथा पश्चिम भारत की सबसे महत्त्वपूर्ण नदी है, मैकल पर्वतमाला से निकलती है और मध्यभारत तथा भोपाल[1] की प्राकृतिक सीमा बनाती हुयी दक्षिण-पश्चिम दिशा में बहती है। तब यह नदी इन्दौर से बहती हुयी बम्बई के रेवाकण्ठ से गुजरती है और भड़ौंच में समुद्र में मिलती है। चूँकि यह नदी विंध्य और सतपुड़ा की दो बड़ी पर्वतमालाओं के बीच से प्रवाहित होती है, यह कई छोटी सहायक नदियों द्वारा आपूरित है। इन्दौर में प्रवेश करने के पूर्व ही इसमें तेरह सहायक नदियाँ मिलती हैं। इन्दौर से होकर इसके प्रवाह-पथ में सात और सहायक नदियाँ—चार बाईं ओर से और तीन दाईं ओर से मिलती हैं। समुद्र तक इसके शेष प्रवाह-पथ में और कोई सहायक नदी नहीं मिलती। नर्मदा (टालेमी की नेमेडोस Namados) रेवा, समोदमवा और मेकलसुता-जैसे अन्य नामों से भी प्रसिद्ध है। अंतिम नाम इसके स्रोत के प्रति संकेत करने के कारण महत्वपूर्ण है, जो आधुनिक मैकाल पर्वतमाला है जिसमें मेकल के प्राचीन क्षेत्र का नाम सुरक्षित है। मैकाल पर्वतमाला जो स्पष्टतः ऋक्ष का एक भाग है, बड़ी नदी सोन का भी उद्गमस्थल है। रेवा का स्रोत विंध्यपर्वतमाला से मिली हुयी अमरकण्टक पहाड़ियों में है। माँडला के थोड़ा पहले नर्मदा और रेवा का संगम होता है, जहाँ से वे दोनों ही नामों से आगे बढ़ती है। महाभारत के अनुसार नर्मदा अवन्ती के प्राचीन राज्य की दक्षिणी सीमा बनाती थी। मत्स्य पुराण (अध्याय 193) के अनुसार जहाँ नर्मदा समुद्र में गिरती है वह एक तीर्थस्थल है।

महादेव पहाड़ियों के पश्चिम में मुल्ताई पठार ताप्ती या तापी नदी का स्रोत है और यह नदी मध्यभारत तथा बरार[2] के पश्चिमोत्तर छोर की प्राकृतिक

---

[1] मध्यभारत और भोपाल दोनों ही अब मध्यप्रदेश में समाविष्ट हैं।

[2] मध्यभारत संप्रति मध्यप्रदेश में ही संमिलित है और बरार महाराष्ट्र प्रदेश में।

सीमा के रूप में पश्चिम की ओर प्रवाहित होती है। यह नदी बुरहानपुर से होकर गुजरती हुयी तथा महाराष्ट्र में प्रवेश करने और सूरत में समुद्र में गिरने के पहले मध्यप्रदेश की सीमा पार करती है। मध्यप्रदेश में ही महादेव पहाड़ियों से निकलने वाली चार सहायक नदियाँ इसमें मिली हैं। पूर्वी खानदेश में इसमें पूर्णा नामक एक बहुत महत्त्वपूर्ण नदी मिलती है। समुद्र में गिरने के पहले, ताप्ती में बाईं ओर से छह और नदियाँ मिलती हैं। दाईं ओर से इसमें केवल दो सहायक नदियाँ मिलती हैं। पूर्णा विंध्यपर्वतमाला की सतपुड़ा शाखा से निकलती है और बुरहान-पुर के थोड़ा आगे ताप्ती में मिलती है। पद्मपुराण (अध्याय XLI.) के अनुसार यह एक प्राचीन नदी है। गिरणा सह्याद्रि या पश्चिमीघाट से निकलती है और उत्तरपूर्व की ओर बहती हुई खानदेश में चोपदा के थोड़ा पहले ताप्ती में मिलती है। यह दो सरिताओं द्वारा आपूरित है। बोरी पश्चिमी घाट में निकलती है और अमलनेर के कुछ पहले ताप्ती में मिलती है। पन्झ्रा एक महत्त्वपूर्ण निचली सहायक नदी है, जो पश्चिमीघाट से निकलती है और खानदेश में शिरपुर के थोड़ा आगे ताप्ती में मिलती है।

(VII) महानदी-समूह

महानदी उड़ीसा की सबसे विशाल नदी है, जो बरार के दक्षिण-पूर्वी कोने पर स्थित पहाड़ियों से निकलती है। यह सिहोआ से बहती हुयी मध्यप्रदेश में बस्तर से गुजरती है। सम्बलपुर में उड़ीसा में प्रवेश करने के पहले यह बिलासपुर एवं रायगढ़ से होकर बहती है। तब यह दक्षिणपूर्वी दिशा में प्रवाहित होती है और कटक शहर से गुजरती हुयी फाल्स प्वाइंट पर एक विस्तृत डेल्टा बनाती हुयी (बंगाल की) खाड़ी में गिरती है। यह पाँच सहायक नदियों द्वारा आपूरित है। देवी और प्रोची दाईं ओर महानदी की दो सहायक नदियाँ हैं, जो पुरी जिले में दो त्रिकोणीय नदियाँ बनाती हैं। गंजम जिले के उत्तर में स्थित पहाड़ियों में से छोटी महानदी निकलती है और चन्द्रपुर में खाड़ी में मिलती है। वंशधरा जो गंजम की एक आंतरिक नदी है, कलिंगपटम में खाड़ी में मिलती है। लाङ्गूलिनी (आधुनिक लांगुलिया) कालाहण्डी पहाड़ियों से निकलती है, और दक्षिण की ओर गंजम जिले से बहती हुयी शिकाकोले के आगे खाड़ी में गिरती है। ऋषि-कुल्या गंजम जिले की सबसे उत्तरी नदी है जो गंजम शहर से बहती हुयी खाड़ी में गिरती है। त्रिसामा (जिसे त्रिभागा या पितृसोमा भी कहा जाता था) और ऋषिकुल्या पुराणों में दो अलग नदियों के रूप में वर्णित हैं। परंतु ऐसा प्रतिभा-सित होता है कि वह एक ही नदी है जिसे तीन ऊपरी सरिताओं की संयुक्त धारा

के ऋषिकुल्या नाम को द्योतित करने के लिए त्रिसामा-ऋषिकुल्या का वर्णनात्मक नाम दिया गया है।

करकई का निचला प्रवाह बरबलंग, बलसोर जिले से होकर बहती है। सलन्दी क्योंझर[1] में स्थित पहाड़ियों से निकलती है और वैतरणी के पहले बलसोर जिले से होकर गुजरती है। कुमारी जो आधुनिक कुमारी से समीकृत की जाती है मानभूम में डाल्मा पहाड़ियों को सींचती हुयी बहती है। पलासिनी (आधुनिक परास) छोटा नागपुर में कोयल की सहायक नदी है।

वैतरणी जो भारत की अत्यंत पवित्र नदियों में से एक है, सिंहभूम जिले के दक्षिणी भाग में स्थित पहाड़ियों से निकलती है। यह उत्तरपश्चिम से दक्षिण-पूर्व की ओर बलसोर जिले से होकर बहती है और धामरा में खाड़ी में गिरती है। जहाँ पर यह उड़ीसा में प्रवेश करती है उससे थोड़ा आगे इसमें दो सहायक नदियाँ मिलती हैं। हिंदुओं के अनुसार ब्राह्मणी समान रूप से पवित्र है और यह वैतरणी के समान ही बल्सोर जिले से बहती हुयी उत्तर-पश्चिम से दक्षिणपूर्व की ओर बहती है। अंगुल के पूर्व में इसमें टिक्किरा (अन्त:शिरा या अंत्यागिरा से समीकृत) नामक एक महत्त्वपूर्ण सहायक नदी मिलती है।

(VIII) गोदावरी नदी समूह

गोदावरी दक्षिणभारत की सबसे लंबी-चौड़ी नदी है। यह पश्चिमी घाट से निकलती है। यह महाराष्ट्र में स्थित नासिक पहाड़ियों से नि:सृत है और आन्ध्रप्रदेश राज्य के एक बड़े भाग को काटती हुयी बहती है। यह लगभग 900 मील लंबी है। विंध्यपर्वतमाला के आगे पूर्वीघाट को काट कर घाटी बनाती हुयी यह दक्षिणपूर्व दिशा में बहती है। गोदावरी जिले में अपने मुहाने पर विस्तृत डेल्टा बनाती हुयी यह तीन प्रमुख धाराओं में बंगाल की खाड़ी में गिरती है। आन्ध्रप्रदेश से गुजरते हुए इसके प्रवाह में दस सहायक नदियाँ बाईं ओर से और ग्यारह दाहिनी ओर से मिलती हैं, जिनमें पूर्णा, कदम, प्राणहिता तथा इन्द्रावती बाईं ओर की और मंजीरा, सिन्दफना, मनेर और किनरसिनी दाईं ओर की महत्त्व-पूर्ण नदियाँ हैं। पूर्णा सह्याद्रि पर्वत से दक्षिण-पूर्व की ओर महाराष्ट्र के नन्देर जिले की पश्चिमी सीमा पर गोदावरी में मिलती हैं। विंध्यपर्वत की निर्मल श्रेणी से कदम नदी निकलती है और कोरतला के उत्तर में गोदावरी में मिलती है।

---

[1] संप्रति उड़ीसा में स्थित है। यह पहले एक रियासत थी। अब एक जिला है।

प्राणहिता गोदावरी की दो ऊपरी सहायक नदियों में से एक है, जो वैनगंगा, वरदा तथा पेनगंगा (पेन्नर) की संगमित धाराओं के संयुक्त प्रवाह का प्रतिनिधित्व करती है। उड़ीसा की कालाहण्डी पहाड़ियों से इन्द्रवती नदी निकलती है। यह दक्षिण-पश्चिम दिशा में बहती हुयी भोपाल-पटनम के आगे गोदावरी में मिलती है। सिंदफना गोदावरी की पश्चिमी निचली सहायक नदी है। मंजीरा भी एक निचली उपनदी है जो बालाघाट पर्वतमाला से निकलती है और दक्षिणपूर्व तथा उत्तर में बहती हुयी गोदावरी में मिलती है। मनेर उत्तरपूर्व में बहती हुयी मन्थनी के पूर्व में गोदावरी में मिलती है। बस्तर में भद्राचलन के सामने किनरसिनी गोदावरी में समाहित होती है।

(IX) कृष्णानदी समूह

कृष्णा दक्षिण भारत की एक प्रसिद्ध नदी है, जिसका उद्‌गम स्थल पश्चिमीघाट में है। दक्कन के पठार से होकर पूर्व की ओर बहती हुयी और एक कृश धारा के रूप में पूर्वी घाट को भेदती हुयी यह बंगाल की खाड़ी में गिरती है। यह महाराष्ट्र, मैसूर और आन्ध्रप्रदेश राज्यों से होकर प्रवाहित होती है। आलमपुर के उत्तरपूर्व में जगय्यपेट के आगे तक कृष्णा नदी हैदराबाद (आन्ध्रप्रदेश) की दक्षिणी प्राकृतिक सीमा बनाती हुयी प्रवाहित होती है। आन्ध्रप्रदेश होकर बहती हुयी उसके प्रवाह में पंद्रह सहायक नदियाँ बाईं ओर से और चार दाहिनी ओर से मिलती हैं। इसका उद्‌गमस्थल महाबलेश्वर के निकट है। कृष्णा की एक सहायक नदी धोन पश्चिमीघाट से निकलती और कृष्णा में मिलती है। भीमा जो पुराणों में एक सह्य नदी के नाम से विख्यात है, दक्षिणपूर्वाभिमुख होकर बहती हुयी मैसूर राज्य के रायचूर जिले के उत्तर में कृष्णा नदी में मिलती है। पलर नलगोण्डा के उत्तर में स्थित पहाड़ियों से निकली और कृष्णा में मिली है। मुनर कृष्णा की बिल्कुल पूर्वी ऊपरी सहायक नदी है। यह अमरावती के सामने कृष्णा में मिलती है। कृष्णा की निचली सहायक नदियों में तुंगभद्रा सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण है। तुङ्गा और भद्रा मैसूर की पश्चिमी सीमा पर पश्चिमीघाट से निकलती हैं और उनकी संयुक्त धारा तुंगभद्रा नाम से प्रवाहित होती है। वरदा, जो तुंगभद्रा की एक सहायक नदी है अनंतपुर के उत्तर में पश्चिमीघाट से निकलती है और तुंगभद्रा में मिलती है। हिन्द्री जो तुंगभद्रा की अवर उपनदी है, करनूल शहर में तुंगभद्रा से मिलती है। कोलेरून त्रिचनापल्ली से निकल कर खाड़ी में गिरती है। उत्तरी पेन्नर, आन्ध्रप्रदेश के अनंतपुर जिले में पमिडी तक, उत्तर और उत्तरपूर्व में बहती है और तब दक्षिणपूर्व की ओर मुड़कर कोरोमण्डल तट पर

नेलोर जिले में बंगाल की खाड़ी में मिलती है। दक्षिण-पेन्नर सेंट डेविड फोर्ट में बंगाल की खाड़ी में मिलती है। उसका निचला प्रवाह पोन्नेय्यार नाम से विख्यात है।

(X) कावेरी नदी-समूह

कावेरी जो दक्षिण भारत की एक प्रसिद्ध नदी है, कुर्ग में पश्चिमीघाट की पहाड़ियों से निकलती है और दक्षिणपूर्व में मैसूर से बहती हुयी मद्रास राज्य के तंजौर जिले में बंगाल की खाड़ी में गिरती है। यह अपने मुहाने पर एक विस्तृत डेल्टा बनाती है। इसमें बाईं ओर से दस और दाईं ओर से आठ उपनदियाँ मिलती हैं। कावेरी, जो प्राचीनकाल में मोती निकालने के लिए विख्यात थी, प्राचीन चोल राज्य के दक्षिणी भाग से बहती हुयी समुद्र में गिरती थी। चोलों की राजधानी प्राचीन उरगपुर (आधुनिक उरैयुर) कावेरी के दक्षिणी तट पर स्थित थी। कावेरी, मैसूर राज्य में श्रीरंगपटनम, शिवसमुद्रम तथा त्रिचनापल्ली के निकट श्रीरंगम जैसे पवित्र स्थानों से होकर बहती है।

दक्षिण भारत की चार महत्त्वपूर्ण मलय नदियाँ उल्लेखनीय हैं। वे कृतमाला (कूर्मपुराण की ऋतुमाला और वराहपुराण की शतमाला), ताम्रपर्णी (ब्रह्म पुराण की ताम्रवर्णा), पुष्पजा और सुत्पलावती (उत्पलावती) हैं। ताम्रपर्णी और पाण्ड्य कपाट मोती निकालने के लिए दो प्रसिद्ध नदियाँ हैं। ताम्रपर्णी एक विशाल मलय-नदी है, जो निश्चय ही पाण्ड्य राज्य की दक्षिणी सीमा के आगे बहती थी। इसे आधुनिक ताम्ब्रवरी या ताम्ब्रवरी तथा चित्तर के संयुक्त प्रवाह से समीकृत किया जा सकता है। टालेमी के अनुसार इसके मुहाने पर कोरकै बन्दरगाह स्थित था। कृतमाला को वैगाई से समीकृत किया जा सकता है जो मदुरा (पाण्ड्य राज्य की राजधानी, प्राचीन मधुरा) शहर से होकर बहती है। वैगाई मदुरा जिले की प्रमुख नदी है। यह चुम्बुम और वरुशनद घाटियों को सिंचित करने वाली दो सरिताओं से निकलती है। यह मदुरा शहर से होकर बहती है। आधुनिक भू-चित्रावलियों में मलय पर्वतमाला से पूर्व की ओर बहने-वाली आठ और पश्चिम की ओर प्रवाहित होनेवाली ग्यारह नदियाँ दृष्टिगोचर होती हैं।

द. झीलें

प्राचीन या आधुनिक भारत उतनी विस्तृत और प्रभावोत्पादक शोभनीय झीलों की विद्यमानता की गर्वोक्ति नहीं कर सकता, जितनी एशिया, अफ्रीका,

यूरोप और अमरीका के कुछ भागों में प्राप्त होती हैं। किंतु जल के लंबे और छोटे फैलाव जिन्हें झील कहा जाता है, भारत में सर्वथा दुष्प्राप्य नहीं हैं। आधुनिक काल में उनमें से कुछ प्राकृतिक धसकन है, जो निकटवर्ती जिलों के जल-निर्गमों द्वारा आपूरित है; कुछ नदी के पेटों में बाँध बनने से कृत्रिम रूप से निर्मित हैं; और कुछ जैसा एरियन ने बतलाया है, नदियों के प्रवाह के केवल प्रसार मात्र हैं। उसके अनुसार सिन्धु नदी अपनी एकमात्र प्रतिद्वंद्वी गंगा के समान कई स्थानों पर झीलों के रूप में फैली हुयी है।

मध्यदेश में कुणाल नामक एक झील थी।[1] इस झील की पहचान अभी तक नहीं की जा सकी है। वैशाली में मरकट नामक एक झील थी जहाँ बुद्ध गये थे।[2] उत्तरापथ में अनोतत्त नामक कोई झील थी जहाँ बुद्ध कई बार पधारे थे। यह झील सामान्यतया रावण ह्रद या लंग मानी जाती है। हिमालय की सात बड़ी झीलों में से यह एक थी।[3] महावंस-टीका (पृ० 306) के अनुसार अनोतत्त झील का पवित्र जल राज्याभिषेक के समय प्रयोग किया जाता था।

आधुनिक भारत में सर्वाधिक सुरम्य झीलें कश्मीर में पायी जाती हैं। वुलर, डल और मनसबल झीलें सबसे अधिक रमणीय हैं। बुलर झील का क्षेत्र $12\frac{1}{2}$ वर्गमील है। कुछ लोगों के अनुसार इसका प्राचीन नाम महापद्मसर है। वुलर नाम संस्कृत शब्द 'उल्लोल' का अपभ्रंश माना जाता है, जिसका तात्पर्य कोलाहल पूर्ण या अशान्त है। डल, कश्मीर की राजधानी श्रीनगर के समीप स्थित है। इसका दृश्य सुरम्य है। मुगल सम्राटों ने इसके चारों ओर चबूतरेदार उद्यान लगवाकर इस स्थान की बहुत सौंदर्य-वृद्धि की। श्रीवर द्वारा प्रणीत विवरण में इसका नाम डल बताया गया है। इस झील में दो छोटे द्वीप हैं। कश्मीर की अन्य झीलों में हम श्रीनगर के निकट अंचर, कोस नाग, नन्दन सर, नील नाग, सरबल नाग और क्युम का उल्लेख कर सकते हैं।

गढ़वाल में कुछ झीलें हैं। घोन झील महत्त्वपूर्ण है। सुरम्य कोल्लरकहर झील पंजाब की नमक की पर्वतमाला के मध्य स्थित है। सिंध के लरकाना (संप्रति पश्चिमी पाकिस्तान में) जिले की मनचर झील पश्चिमी नर के प्रसार से निर्मित और कई पहाड़ी सरिताओं द्वारा आपूरित है।

नमक की कई झीलें राजस्थान में विकीर्ण हैं, जिनमें साँभर, दिदवन और

---

[1] जातक V. 419; अंगुत्तर IV. 101.

[2] दिव्यादान, पृ० 200.

[3] अंगुत्तर, IV, 101.

पुष्कर महत्त्वपूर्ण हैं। साँभर जोधपुर और जयपुर (अब राज्य नहीं वरन् जिले), की सीमा पर स्थित हैं। पुष्कर झील की पुण्यशीलता बहुत है। सबसे बड़ा पापी भी इसमें स्नान करके अपने पापों का निवारण कर सकता है। राजस्थान में कुछ कृत्रिम झीलें भी हैं। उदयपुर (उदयपुर अब राजस्थान में एक जिला मात्र है) में देबर या जयसमंद, राजसमंद और पिछोला, किशेनगंज में गुण्डोलाओ और धोलपुर में मचकुन्द महत्त्वपूर्ण झीलें हैं।

उत्तर प्रदेश में नदियों के पुराने पेटों में निर्मित कुछ प्राकृतिक झीलें और धसकनें प्राप्त होती हैं। नैनीताल की घाटी में नाशपाती के आकार की एक झील है। सगरताल एक सुन्दर झील है। झाँसी जिले के तलबहट में दो छोटे बाँधों द्वारा निर्मित 528 एकड़ भूमि पर फैली हुयी एक झील है। बलिया शहर (बलिया जिला) के चार मील उत्तर में एक अर्ध-चंद्राकार झील है। बस्ती (उत्तरप्रदेश) जिले में भी कुछ झीलें हैं। बखिरा ताल भारत में ताजे पानी की सबसे बढ़िया झील है। अजस्र झीलों में कुछ यथा, नंदौर, रनगढ़, नरहर, चिलेर, और ब्योरीताल गोरखपुर जिले में स्थित है।

ललसरया, सेरहा और ततरिया बिहार के चंपारन जिले में स्थित हैं। चटगाँव पहाड़ी के इलाके की रामक्री; राजशाही और पबना जिले की सीमाओं पर स्थित चलन बिल; बंगाल के फरीदपुर जिले का ढोलसमुद्र दलदल; नवगाँव जिले की पकरिया , पोट और कलंग झीलें; असम के गोलपारा जिले की सरस झील और मणिपुर की लोगतक झील उल्लेखनीय हैं।

भारत के सुदूरपश्चिम, गुजरात और महाराष्ट्र में अहमदाबाद से 37 मील दूर दक्षिण-पश्चिम में स्थित नल, शोलापुर जिले की करम्बई, कोरेगाँव और पन-गाँव झीलें तथा अहमदनगर की भटोदी झील का उल्लेख किया जा सकता है। पंचमहल में गोधरा के निकट एक बाँधी गयी झील है।

मध्यप्रदेश में भोपाल शहर पुख्ता-पुल-तलाव नामक एक विशाल झील के किनारे स्थित है। यहाँ पर बड़ा तलाव नामक एक अन्य झील है। महोबा में किरतसागर और अहल्यासागर नामक दो कृत्रिम झीलें हैं। मैहर में भी झीलें हैं।

दक्कन पठार के पूर्वी समुद्रतट पर चिल्का नामक झील है। बालू का एक लंबा टीला इसे बंगाल की खाड़ी से अलग करता है। चिल्का झील के कई दृश्य अतिशय मनोरम हैं। कोलैर (कोल्लेरु या कोलर) झील आन्ध्रप्रदेश राज्य की ताजे पानी की अकेली एक प्राकृतिक झील है। यह कित्स्ना (कृष्णा) जिले में स्थित है, और आकार में प्रायः चिपटी है। अधिकांश कोरोमण्डल तट प्रवालयुक्त

झीलों से परिवेष्ठित हैं, जिनमें मद्रास के ठीक उत्तर में स्थित पिलिकट झील सबसे बड़ी है। आन्ध्रप्रदेश (भूतपूर्व हैदराबाद राज्य) राज्य में कृत्रिम जल-विस्तार हैं, जिन्हें झील कहा जाता है, जिनमें वारंगल जिले के नरसमपेत तालुक में स्थित पखल झील सबसे अधिक विशाल और बड़ी है। महाराष्ट्र के बुलडाना में दक्कन के पठार के वृत्ताकार धसकन पर लोनर झील है। दक्कन पठार के पश्चिमी तट पर कोचीन के निकट प्रवालयुक्त झीलों की निरंतर शृंखला, जो प्रायः समुद्र के समानांतर फैली हुयी है और पश्चिमीघाट से निकलने वाली अनेक सरिताओं के जल को आत्मसात कर लेती है—वहाँ की एक उल्लेखनीय प्राकृतिक विशेषता है। इस क्षेत्र में एनमवकल और मनकोडडी नामक दो ताजे पानी की झीलें हैं।

ई. जंगल

प्राचीन काल में संपूर्ण भारत में जंगल थे। लकड़ी और इमारती लकड़ियों के लिए वृक्ष काटे जाते थे। बहुत लोग वनों में पशुओं का आखेट पसंद करते थे। जालों के माध्यम से पक्षियों को पकड़ना एक स्थायी उद्योग था। छठीं शताब्दी ईसा पूर्व में मध्यदेश में कुछ प्राकृतिक वन (स्वयंजातवन) स्थित थे। उदाहरणार्थ कुरु प्रदेश में कुरुजांगल एक वन्य क्षेत्र था, जो सुदूर उत्तर में काम्यक वन तक फैला हुआ था। उत्तर-पंचाल राज्य इसी जंगली क्षेत्र में स्थापित किया गया था। साकेत में अंजनवन तथा वैशाली और कपिलवस्तु में महावन प्राकृतिक जंगल थे। वैशाली नगर के बाहर महावन निरंतर हिमालय तक फैला हुआ था। विस्तृत क्षेत्र पर फैले होने के कारण उसे महावन कहा जाता था।[1] कपिलवस्तु में महावन भी एक प्रसरण में ही हिमालय की तराई तक फैला हुआ था।[2] कौशाम्बी से कुछ दूर और श्रावस्ती के तट में पारिलेय्यकवन था जिसमें हाथी रहते थे।[3] रोहिणी नदी के तट पर स्थित लुम्बिनीवन भी एक प्राकृतिक जंगल था।[4] वज्जि जनपद में नागवन, कुसीनारा के मल्लों का शालवन, भर्ग जनपद में भेसकलावन, कौशाम्बी में सिंसपावन, कोशल में सेतव्या के उत्तर में तथा आलवी के निकट स्थित वन और मोरियों का पिप्फलिवन प्राकृतिक वनों के कुछ प्रकारात्मक

---

[1] सुमंगलविलासिनी, I 309; संयुक्त०, I, 29-30.

[2] सुमंगलविलासिनी, I, 309.

[3] संयुक्त०, III, 95; विनय०, I, 352; उदान, IV, 5.

[4] जातक, I, 52 और आगे; कथावत्थु, 97, 559; मनोरथपूरनी, I, 10.

दृष्टांत बताये जा सकते हैं।[1] विंध्य पर्वतमाला के चतुर्दिक् स्थित वनों को विंझाटवी कहते थे जिसके बीच से पाटलिपुत्र से ताम्रलिप्ति जाने का पथ गुजरता था।[2] इसमें मनुष्यों के आवास का लेश भी नहीं था[3] (अगामकं अरण्णं)। दीपवंस में विंध्यवन का उल्लेख है, जिसे पाटलिपुत्र जाते समय पार करना पड़ता था (XV. 87)।

वत्स में (अथवा चेति में) पारिलेय्यक नामक एक आरक्षित वन था। कौशाम्बी से वहाँ जाने का पथ दो गाँवों से होकर गुजरता था।[4] जैसा कि चीनी यात्री युवान-च्वाङ् ने बतलाया है, प्रयाग से कौशाम्बी जाने का मार्ग किसी जंगल से होकर गुजरता था।[5]

देवीपुराण (अध्याय, 74) के अनुसार वहाँ सैंधव, दण्डकारण्य, नैमिष, कुरुजांगल, उत्पलारण्य (या उपलावृत-अरण्य) जम्बूमार्ग, पुष्कर और हिमालय नामक नौ पवित्र वन (अरण्य) थे। पार्जिटर के अनुसार, बुंदेलखंड से कृष्णा तक के सभी जंगल दण्डकारण्य में संमिलित थे।[6] रामायण (उत्तरकांड, अध्याय, 81) के अनुसार यह विन्ध्य और सैवल पर्वतों के मध्य स्थित था। इसके एक भाग को जनस्थान कहा जाता था। रामचंद्र ने यहाँ पर बहुत दिनों तक निवास किया था। उत्तररामचरित (अंक 1) के अनुसार यह जनस्थान के पश्चिम में स्थित था। कुछ लोगों के अनुसार यह नागपुर सहित महाराष्ट्र का ही प्रदेश था। ललितविस्तर (पृ० 316) में दक्षिणापथ में दण्डकवन का उल्लेख है। कई वर्षों तक यह वन जल कर खाक बना रहा। यहाँ तक कि इसमें घास भी नहीं उगती थी।

नैमिषारण्य एक पवित्र जंगल था जहाँ साठ हजार ऋषि रहते थे। कई पुराणों की रचना यहीं हुयी थी। यह आधुनिक नीमसार है जो सीतापुर से 20

---

[1] अंगु०, IV, 213; दीघ०, II, 146 और आगे; मज्झिम०, I, 95; वही, II, 91; संयुक्त०, V, 437; दीघ०, II, 316, 164, और आगे।

[2] महावंश, XIX. 6; दीपवंश, XVI, 2.

[3] समंतपासादिका, III, 655.

[4] बि० च० लाहा, इंडिया ऐज डिस्क्राइब्ड इन अर्ली टेक्स्ट्स ऑव बुद्धिज्म् ऐंड जैनिज्म्, पृ० 39.

[5] वार्टर्स, ऑन युवान-च्वाङ्, I, 366.

[6] ज० रा० ए० सो०, 1894, 242; तु० मिलिन्द०, 130.

[7] रा० गो० भंडारकर, अर्ली हिस्ट्री ऑव द दकन, खंड, II.

मील और लखनऊ से 45 मील दूर उत्तरपश्चिम में स्थित है। यह हिंदुओं का एक तीर्थस्थान है जहाँ भारत के सभी भागों से तीर्थयात्री आते रहते हैं। रामायण (उत्तरकाण्ड, अध्याय 91) के अनुसार यह गोमती के बाएँ तट पर स्थित है। कुरुजाङ्गल हस्तिनापुर के उत्तरपश्चिम, सरहिन्द में स्थित एक वन्य प्रदेश था। महाभारत (आदिपर्व, अध्याय, 26) के अनुसार कुरुओं की राजधानी हस्तिनापुर, कुरुजाङ्गल में स्थित थी। जैसा हमें वामनपुराण (अध्याय, 32), और महाभारत (आदिपर्व, अध्याय, 201) से ज्ञात होता है, संपूर्ण कुरुदेश इसी नाम से विश्रुत था। महाभारत (वनपर्व, अध्याय, 87) के अनुसार उत्पलारण्य पंचाल में स्थित था। इसे उत्पलवन भी कहते थे। यहाँ सीता ने लव और कुश को जन्म दिया था। कुछ लोगों ने इसे कानपुर से 14 मील दूर बिठूर नामक स्थान से समीकृत किया है, जहाँ बाल्मीकि का आश्रम स्थित था।

अग्निपुराण (अध्याय, 109) के अनुसार पुष्कर और आबू पर्वत के मध्य जम्बूमार्ग स्थित था। पुष्करवन अजमेर से 6 मील दूर स्थित है। महाभारतकाल में पुष्कर के निकट और हिमालय में कुछ म्लेच्छ जातियाँ निवास करती थीं (सभापर्व, अध्याय, 27, 32)

हिमालय में स्थित वन वन्य-पशुओं से आकीर्ण थे। बताया जाता है कि उनमें बहुत बड़ी संख्या[1] में यूथचर हाथी, सरीसृप, अजगर, साँप और पक्षी आदि पाये जाते थे। पर्वतों और पहाड़ियों की खोह उनके लिए माँदों का कार्य करती थी।[2] गोदावरी नदी के दक्षिणपश्चिम और उत्तरपश्चिम में इन्द्रवती नदी की शाखा गौलिया के बीच में कलिंगारण्य स्थित था।[3] रैप्सन के मतानुसार यह महानदी और गोदावरी के बीच में स्थित था।[4]

सोलह महाजनपद

प्राचीन भारत के ऐतिहासिक भूगोल के अति महत्वपूर्ण विषयों में जम्बूद्वीप

---

[1] मैक्रिंडिल, ऐंश्येंट इंडिया ऐज डिस्क्राइब्ड बाई मेगस्थनीज ऐंड एरियन, पृ० 42.

[2] बि० च० लाहा, इंडिया ऐज डिस्क्राइब्ड इन अर्ली टेक्स्टस ऑव बुद्धिज्म् ऐंड जैनिज्म्, पृ० 64 और आगे।

[3] कनिंघम, ऐंश्येंट ज्यॉग्रफी, 591.

[4] ऐंश्येंट इंडिया, पृ० 116.

के सोलह महाजनपदों का विवरण एक है। यहाँ पर उनका एक योजनाबद्ध और संक्षिप्त विवरण देने का प्रयत्न किया गया है।

पालि सुत्त पिटक के अंगुत्तर निकाय[1] में जंबुदीप के 16 महाजनपदों का वर्णन किया गया है। वे निम्नलिखित हैं—

अङ्ग, मगध, काशी, कोशल, वज्जि, मल्ल, चेति, वंश, कुरु, पञ्चाल, मच्छ, सूरसेन, अस्सक, अवन्ती,[2] गन्धार और कम्बोज।

इनमें से प्रत्येक का नामकरण इसमें बसने वाले या उपनिवेश बनाने वाले जनों के आधार पर किया गया है। इसमें से चौदह महाजनपद मध्यदेश में ही संमिलित बताये जाते हैं और शेष दो देश—गन्धार और कम्बोज उत्तरापथ में स्थित बतलाये गये हैं। दीघ निकाय[3] में अंतिम चार जनपदों को छोड़कर, केवल बारह जनपदों की सूची दी गयी है, जब कि चुल्लनिद्देस[4] में इस तालिका में कलिंग जोड़ दिया गया है और गन्धार के लिए 'योन' शब्द प्रयुक्त होता है। इन्द्रियजातक[5] में निम्न-लिखित जनपदों का वर्णन प्राप्त होता है : सुरट्ठ (सूरत), लंबचूलक, अवन्ती दक्खिणापथ, दण्डकारण्य (दंडकिरञ्ञो) कुंभवतीनगर और मज्झिमपदेस में अरंजर (अरंजरगिरि) का पहाड़ी इलाका।

यह एक रोचक बात है कि मार्कंडेय पुराण (अध्याय 57, 32-35) के अनु-सार मध्यदेश में मत्स्य, कुशुल, कुल्य, कुन्तल, काशी, कोशल अर्बुद, पुलिन्द, समक, वृक और गोवर्धनपुर देश थे। अवन्ती अपरान्त में संमिलित है।

जैनग्रंथ भगवतीसूत्र (जिसे व्याख्याप्रज्ञप्ति भी कहां जाता है) में कुछ एक दूसरे प्रकार की सूची दी गयी है। वह इस प्रकार है : अंग, बंग, (वङ्ग), मगह

---

[1] अंगुत्तर०, ज़िल्द I, पृ० 213; जिल्द IV, 252, 256, 260.

[2] स्पष्ट रूप से प्राचीन बौद्ध ग्रंथों में वर्णित, कम से कम यदि अवन्ती को नहीं तो अस्सक को दक्खिणापथ या दक्कन में स्थित माना जाना चाहिये क्योंकि बौद्ध ग्रंथों में वर्णित दोनों ही संनिवेश मज्झिमदेस की सीमाओं के बाहर थे।

[3] दीघ०, II, पृ० 202-203, अंग-मगध, कासी-कोसल, वज्जी-मल्ल, चेति-वंस, कुरु-पञ्चाल और मच्छ-सूरसेन।

[4] निद्देस, पा० टे० सो० संस्करण, II, पृ० 37, अंगा च मगधा च कलिंगा च कासी च कोसला च वज्जी च मल्ला च चेती च वंसा च कुरू च पञ्चाला च मच्छ च सूरसेना च अस्सका च अवन्ती च योना च कम्बोजा च।

[5] जातक III, 463.

(मगध), मलय, मालव, अच्छ, वच्छ (पालि, वंस) कोच्छ, पाढ (?) लाढ (राढ़), बज्जि (पालि, वज्जि) मोलि (मल्ल?) कासी[1], कोसल, अवह, (अवाह?) और सम्मुत्तर या सुमुत्तर (सुह्मोत्तर)। जैन सूची अगुंत्तर निकाय में दी गयी बौद्ध सूची से बाद की प्रतीत होती है।

महावस्तु में जम्बुद्वीप के परंपरागत सोलह महाजनपदों का उल्लेख तोहै किंतु इसमें तालिका नहीं दी गयी है (जम्बुद्वीपे सोडशहि महाजनपदेहि)।[2] परंपरानुगत सूची के बिना ललितविस्तर में इसी प्रकार का एक उल्लेख प्राप्त होता है (सर्वस्मिन् जम्बुद्वीपे षोडश जानपदेषु—पृ० 22)। महावस्तु के सतर्कतापूर्ण अध्ययन से ज्ञात होता है कि एक दूसरे संदर्भ में इसमें सोलह बड़े महाजनपदों की गणना की गयी है।[3] इसमें बताया गया है कि गौतम ने अंग, मगध, वज्जी, मल्ल, काशी, कोशल, चेदि, वत्स, मत्स्य, शूरसेन, कुरु, पञ्चाल, सिवि, दशार्ण, अस्सक और अवन्ती के निवासियों में ज्ञान का प्रसार किया। इसमें और पालि सूची में अंतर है क्योंकि इसमें गन्धार और कम्बोज का उल्लेख नहीं किया है, वरन् सिवि और दशार्ण का वर्णन है। गणना का क्रम भी कुछ अलग प्रकार का है।

महाभारत के कर्णपर्व में विभिन्न जनपदों में रहने वाले जनों की जातिगत विशेषताओं का एक रोचक विवरण प्राप्त होता है। इसमें निम्नलिखित जातियाँ अपने ही नामों के आधार पर रखे गये अपने विशिष्ट जनपदों में रहती हुयी बतायी गयी हैं—कौरव, पञ्चाल, शाल्व, मत्स्य, नैमिष, चेदि, शूरसेन, मगध, कोशल, अङ्ग, गन्धर्व और मद्रकगण।

अङ्ग

अङ्ग जनपद की राजधानी चम्पा थी जो उसी नाम की एक नदी[4] (आधुनिक चान्दन) और गंगा के[5] तट पर विदेह की राजधानी मिथिला[6] से 60 योजन

---

[1] वेबर के र्बालन कैटेलाग, जिल्द, II, पृ० 439, सं० 2, सं० 13 के अनुसार कोसी होगा।

[2] जिल्द, II, पृ० 2.

[3] जिल्द, I, पृ० 34.

[4] जातक, संख्या 506.

[5] वार्टस, ऑन युवान च्वाङ्, II, 181; दशकुमारचरित, II, 2.

[6] जातक, VII, 32.

दूर स्थित थी। चम्पा का प्राचीन नाम मालिनी अथवा मालिन था।[1] इसका निर्माण महागोविंद ने किया था।[2] इसकी वास्तविक स्थिति अब भी भागलपुर के समीप चम्पानगर और चम्पापुरी नाम गाँवों से लक्षित होती है। चम्पा शनै-शनैः समृद्धिशाली हुयी और व्यापार के लिए यहाँ से व्यापारी सुवर्णभूमि (अवर वर्मा) की ओर जाते थे। यह भारत के छह बड़े नगरों में से एक थी। यह एक बड़ा शहर था न कि एक गाँव, क्योंकि आनन्द ने बुद्ध से किसी बड़े शहर में परिनिर्वाण प्राप्त करने की प्रार्थना करते समय चम्पा का उल्लेख एक महानगर के रूप में किया था।[3] इसमें प्रहरी-स्तम्भ, प्राचीरें एवं तोरण थे।[4] अंग जनपद में 80,000 गाँव थे और चम्पा उनमें से एक था।[5] दीघ निकाय (II, 235) के अनुसार भारत के सात राजनयिक भागों में, अङ्ग एक था जिसकी राजधानी चम्पा थी। चम्पा में अशोक के पुत्र महिन्द और उसके पुत्रों एवं प्रपौत्रों का शासन था।[6] यहीं पर बुद्ध ने भिक्षुओं को पादुकाओं का प्रयोग करने की आज्ञा दी थी।[7]

महाभारत के अनुसार अङ्ग में भागलपुर और मुंगेर जिले संमिलित प्रतीत होते हैं और उत्तर में यह कोसी नदी तक फैला हुआ था। एक समय अङ्ग जनपद में मगध संमिलित था और यह संभवतः समुद्र तक फैला हुआ था। महाभारत से ज्ञात होता है कि यहाँ के राजा अङ्ग[8] के नाम के आधार पर इसका नामकरण अङ्ग किया गया था, जो ऐतरेय ब्राह्मण (VIII. 4. 22) में उल्लिखित अंग वैरोचनी से समीकृत किया जाता है। रामायण के अनुसार यहीं पर कामदेव का अंगदहन होने के कारण, इसका नाम अङ्ग पड़ा है। अंगुत्तराप में स्थित 'आपन' नगर का वर्णन मही नदी के उत्तर में उसके दूसरे तट पर स्थित एक क्षेत्र के रूप में हुआ है जो स्पष्टतः अंग का भाग था (परमत्थजोतिका, II, 437; मललसेकर, डिक्श-

---

[1] महाभारत, XII, 5, 6-7; मत्स्य०, 48, 97; वायु० 99, 105-6; हरिवंश०, 32, 49.

[2] दीघ०, II, 235.

[3] वही, II, 146.

[4] जातक, संख्या 539.

[5] विनय पिटक, I, 179.

[6] दीपवंस, 28.

[7] विनय, I, 179 और आगे।

[8] आदिपर्व, CIV. 4179 और आगे।

नरी ऑव पालि प्रापर नेम्स, पृ० 22)। भद्दिय से आपन तक जाने का मार्ग अंगुत्तराप होकर था (विनय, I, 243, और आगे; धम्मपद कामेंट्री, III, 363)।

बुद्ध-काल के पूर्व अंग एक शक्तिशाली जनपद था। किसी समय मगध अंग के अधीन था (जातक VI, 272) अङ्ग और मगध के मध्य एक नदी थी जिसमें एक नागराजा रहता था। उसने अंग को पराजित और वहाँ के राजा की हत्या करके उसे अपने अधीन बनाने में मगध के राजा की सहायता की थी। ब्रह्मवद्धन (वाराणसी का एक अन्य नाम) के राजा मनोज ने अङ्ग और मगध को जीत लिया था। बुद्ध के समय में अङ्ग की राजनीतिक शक्ति इसके हित के लिए समाप्त हो गयी थी। इस युग में अङ्ग और मगध में निरंतर युद्ध होते रहे (जातक IV. 454-5)। अङ्ग श्रेणिय बिम्बिसार के अधीन था। यह तथ्य इस बात से सिद्ध होता है कि सोनदण्ड नामक एक ब्राह्मण चम्पा में राजा बिम्बिसार के अनुदानों पर आश्रित था और राजा द्वारा दिये गये उस नगर के राजस्व का भोग करता था (दीघनिकाय, I, 111)।

चम्पा की रानी गग्गरा ने गग्गरापोखरणी नामक एक तालाब खुदवाया था (सुमंगलविलासिनी I, पृ० 279)। बुद्ध ने अपनी चम्पा-यात्रा के समय भिक्षुओं के एक विशाल समूह के साथ इसके तट पर निवास किया था (दीघ, I, 111 और आगे) अङ्ग और चम्पा में उनके कार्यों का विवरण हमें विनयपिटक (I. 312–15) से प्राप्त होता है। अङ्ग जनपद के अस्सपुर नगर में रहते समय बुद्ध ने भिक्षुओं के प्रति महा और चुल्ल अस्सपुर सुत्तांतों का प्रवचन किया था (मज्झिम, I, 281 और आगे)। राजगृह से कपिलवस्तु तक बुद्ध की यात्रा के क्रम में अङ्ग एवं मगध के अनेक गृहस्थ-पुत्रों ने उनका अनुगमन किया था (जातक, I, 87)। अङ्ग के काल-चम्पा नगर में हिमालय के ऋषि पके हुए भोजन का रसास्वादन करने के लिए आया करते थे (जातक, VI, 256)। कोसलाधिप पसेनदि के पिता महाकोसल के पुरोहित अग्गिदत्त गार्हस्थ्य जीवन का परित्याग करने के पश्चात् अङ्ग और मगध में रहते थे और उनको दोनों जनपदों के लोग दान दिया करते थे (धम्मपद कामेंट्री, III, 241 और आगे)।

अङ्ग अनेक व्यापारियों द्वारा निवसित एक समृद्धिशाली देश था, जो व्यापारिक मालों से लदे हुए कई सार्थों को लेकर व्यापार करने के लिए सिंधु-सोवीर देश तक जाया करते थे (विमानवत्थु कामेंट्री, 332, 337)।

अशोकावदान (रा० ला० मित्र, नेपालीज़ बुद्धिस्ट लिटरेचर, पृ० 8) के अनुसार चम्पापुरी के एक ब्राह्मण ने सुभद्रांगी नामक एक पुत्री उपहारस्वरूप राजा बिन्दुसार को दी थी जब वह पाटलिपुत्र पर शासन कर रहा था। ललित-

विस्तर (पृ० 125-126) में अङ्ग देश की एक लिपि या वर्णमाला का उल्लेख है जिसमें बोधिसत्व ने दक्षता प्राप्त की थी।

मगध

स्थूल रूप से मगध बिहार के आधुनिक पटना और गया जिलों का प्रतिसंबंधी है। इसका वर्णन सब प्रकार के रत्नों से युक्त एक सुंदर नगर के रूप में है।[1] वैदिक ब्राह्मण और सूत्र-युगों में मगध आर्य एवं ब्राह्मण संस्कृति के अंचल के बाहर समझा जाता था और इसीलिए, ब्राह्मण ग्रंथों के लेखक इसे उपेक्षा की दृष्टि से देखते थे। किंतु बौद्धों के पवित्र क्षेत्र के रूप में मगध सदैव मध्यदेश में संमिलित रहा है।

इसकी सर्वप्राचीन राजधानी गिरिव्रज या प्राचीन राजगृह थी। इसके अन्य नाम वसुमती,[2] बार्हद्रथपुरी,[3] मगधपुर,[4] वराह, वृषभ, ऋषिगिरि, चैत्यक,[5] बिम्बिसारपुरी[6] और कुशाग्रपुर थे।[7] ऋग्वेद में कीकट नामक एक क्षेत्र का वर्णन प्राप्त होता है जो उत्तरकालीन ग्रंथों के मगध के सदृश बतलाया जाता है।[8]

ऐसा प्रतीत होता है कि मगध देश की एक अलग वर्णमाला थी जिसमें बोधिसत्व ने दक्षता प्राप्त की थी।[9] गिरिबज्ज (संस्कृत गिरिव्रज), इसिगिलि, वेपुल्ल (वंकक और सुपन[10]), वेभार, पाण्डव और गिज्झकूट[11] नामक पाँच पहाड़ियों से परिवृत्त था।

बिम्बसार के राज्यकाल में मगध में 80,000 गाँव समाविष्ट थे और तपोद

---

[1] दिव्यावदान, 425.

[2] रामायण, I, 32, 7.

[3] महाभारत, II, 24-44.

[4] वही, II, 20, 30.

[5] पो० हि० ऑव एं० इं०, पृ० 70.

[6] बि० च० लाहा, द लाइफ ऐंड वर्क ऑव बुद्धघोष, पृ० 87, टिप्पणी।

[7] बील, द लाइफ ऑव युवान च्वाङ्, पृ० 113.

[8] भागवतपुराण, I, 3, 24, तु० अभिधानचिन्तामणि, कीकटा-मागधाः व्हयाः।

[9] ललितविस्तर, 125-126.

[10] संयुक्त० II, 191-92.

[11] विमान वत्थु कामेंट्री, पृ० 82.

प्राचीन भारत के महाजनपद
आमू नदी
वाह्लीक
काबुल
कुभा नदी
गांधार
काराकोरम पर्वत
कम्बोज
तक्षशिला
केकय
हेलमंद नदी
मद्र
परुष्णी नदी
शतद्रु नदी
सरस्वती न०
सिंधु नदी
गोमती नदी
कुरु
हस्तिनापुर
इन्द्रप्रस्थ
विराट
मत्स्य
मथुरा
शूरसेन
पञ्चाल
कोसल
अयोध्या
मल्ल
जनकपुर
विदेह
वज्जि
वैशाली
प्राग्ज्योतिष
कामरूप
लौहित्य नदी
कौसांबी
कासी
पाटलिपुत्र
मगध
राजगृह
वत्स
चेदि
अवन्ति
उज्जयिनी
नर्मदा नदी
भृगुकच्छ
ताप्ती नदी
पयोष्णी न०
विदर्भ
आनर्त
सुराष्ट्र
सौवीर
लूनी नदी
अंग
सुह्म
समतट
वंग
किरात जन
महानदी
कलिंग
गोदावरी नदी
अश्मक
आंध्र
कृष्णा नदी
तुंगभद्रा नदी
पेन्नार नदी
कावेरी नदी
अँग्रेजी मील
० १०० २०० ३०० ४००
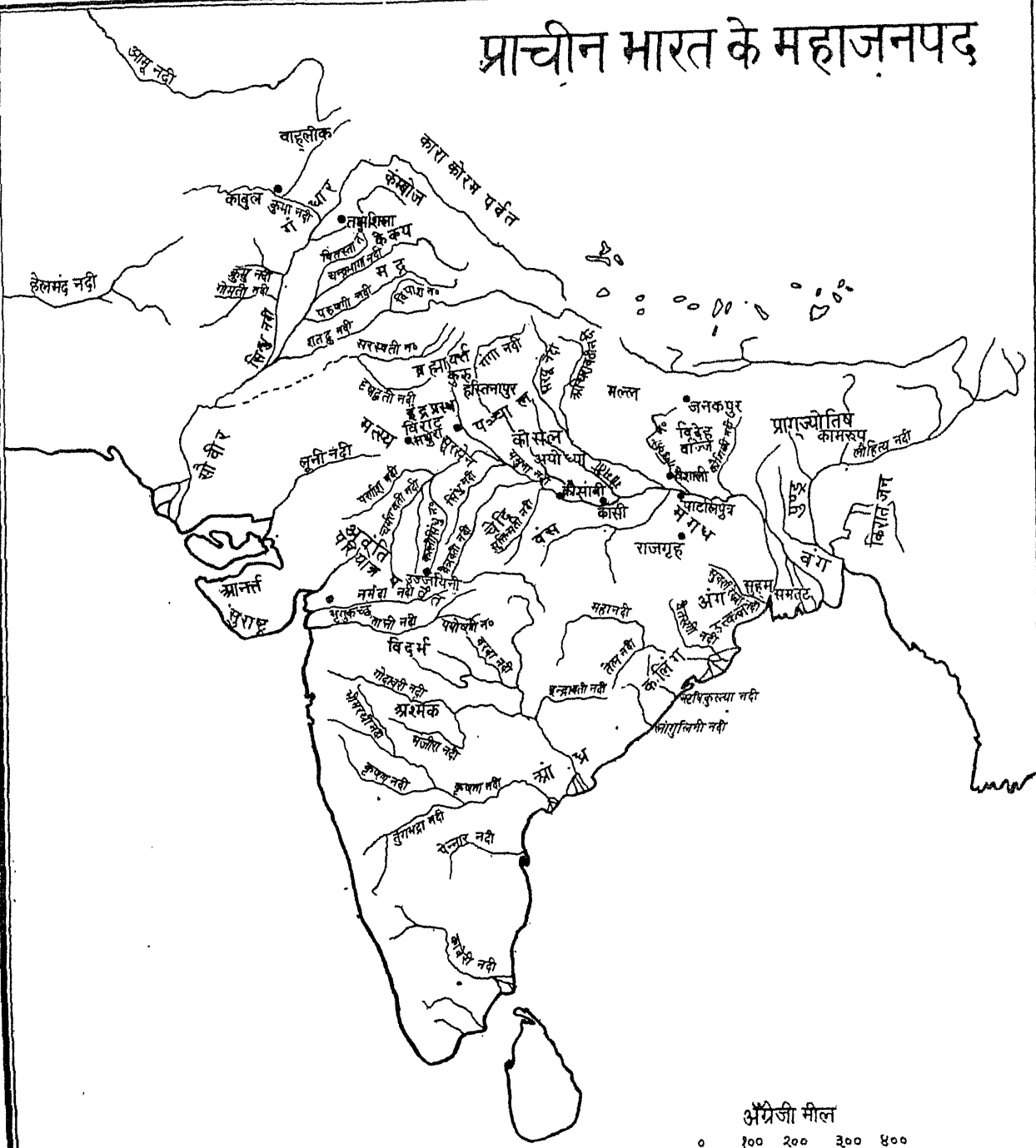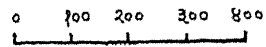
नदी इस प्राचीन नगर के किनारे बहती थी।[1] मगध के कुछ ग्रामों में सेनानीगाम[2] जो मगध का एक बहुत अच्छा गाँव था, एकनाला[3] भारद्वाज सहित जिसमें ब्राह्मण लोग रहते थे जिसको कालांतर में बुद्ध ने अपने धर्म में दीक्षित कर लिया था[4]; नालकगाम जहाँ सारिपुत्त ने जम्बुखादक नामक एक परिव्राजक मुनि को प्रवचन दिया था, ब्राह्मणों द्वारा निवसित खानुमत[5] और सिद्धत्तगाम[6] उल्लेखनीय हैं।

मगध बौद्ध धर्म का एक महत्त्वपूर्ण केंद्र था। यहाँ सारिपुत्त और मोग्गलान को बुद्ध ने अपने धर्म में दीक्षित किया था।[7] प्रायः सभी धर्मप्रचारक जो अशोक के धम्मप्रचार के लिए विभिन्न स्थानों को भेजे गये थे, मगध के निवासी थे।[8] बिम्बिसार बुद्ध का एक कट्टर अनुयायी था। जब बुद्ध राजगृह में थे, उन्होंने राजा से वैशाली जाने की अपनी इच्छा व्यक्त की। तब राजा ने बुद्ध के लिए एक सड़क बनवायी और राजगृह से गंगा तक की भूमि को समतल करवाया।[9]

बिम्बिसार के शासनकाल में आग लग जाने के कारण राजगृह जलकर राख हो गया था। उस समय नव-राजगृह नामक एक नयी राजधानी का निर्माण करवाया गया। युवान च्वाङ् ने बतलाया है कि जब कुशागारपुर या कुशाग्रपुर[10] (संभवतः मगध के प्राचीन राजा कुशाग्र के नाम के आधार पर लक्षित) आग से भस्म हो गया था, तब राजा बिम्बिसार श्मशान में गये और नये राजगृह नगर का निर्माण करवाया। फाह्यान कहता है कि नये नगर का निर्माण अजातशत्रु ने करवाया था न कि बिम्बिसार ने।

राजगृह में एक बौद्ध-संगीति हुयी थी।[11] राजगृह में एक तोरण था जो शाम को बंद कर दिया जाता था और कोई भी व्यक्ति यहाँ तक कि राजा भी इसमें

---

[1] विनयपिटक, I, 29; IV, 116-117.

[2] मज्झिम, I, 166-67.

[3] संयुक्त०, I, 172-73.

[4] वही, IV, 251-260.

[5] दीघ०, I, 127 और आगे।

[6] राकहिल, लाइफ ऑव द बुद्ध, पृ० 250.

[7] कथावत्थु, I, 89.

[8] समन्तपासादिका, I, 63.

[9] धम्मपद कामेंट्री, III, 439-40.

[10] पार्जिटर, एं० इं० हि० ट्रे०, पृ० 149.

[11] चुल्लवग्ग, 11वाँ खन्धक।

प्रवेश नहीं कर सकता था।[1] इसमें एक दुर्ग भी था जिसकी मरम्मत एक बार अजातशत्रु के अमात्य वस्सकार ने करायी थी। यथार्थतः राजगृह में 64 फाटक लगाये गये थे।[2]

राजगृह में स्थित वेलुवन और कलन्दकनिवाप का उल्लेख प्रायः बुद्ध के आवासों के रूप में किया गया है। राजगृह नगर में या उसके समीप नारदग्राम,[3] कुक्कुटाराम विहार,[4] गृध्रकूट पहाड़ी, यष्टिवन[5], उरुविल्वग्राम, प्रभासवन[6] और कोलितग्राम, सभी बुद्ध या बौद्ध धर्म से घनिष्ट रूप में संबंधित महत्त्वपूर्ण स्थान हैं।

अशोक के समय में पाटलिपुत्र मगध की राजधानी थी। इस नगर के चार पुर-द्वारों से अशोक की दैनिक आय 4,000 कहापण बतलायी जाती है।[7]

प्राचीन बौद्धकाल में , मगध एक महत्त्वपूर्ण व्यापारिक एवं राजनीतिक केंद्र था और उत्तर भारत के सभी भागों से लोग व्यापार और वाणिज्य-कर्म के लिए इस नगर में एकत्र होते थे। अनेक व्यापारी इस शहर से होकर गुजरते थे या व्यापार के लिए यहीं रहते थे।

मगध औचित्यपूर्वक अपने एक नागरिक के रूप में जीवक पर गर्व कर सकता है जो तक्षशिला विश्वविद्यालय से एक चिकित्सक के रूप में निष्णात् हो जाने के पश्चात्[8] राजा बिम्बिसार का राजवैद्य हो गया था।[9] मगध-नरेश बिम्बिसार द्वारा भेजे जाने पर उसने अवन्ती के राजा प्रद्योत को पाण्डुरोग से मुक्त किया था।

गंगा, मगध तथा लिच्छवियों के गणराज्य के मध्य की सीमा थी। मगधवासियों और लिच्छवियों, दोनों के ही इस नदी पर समान अधिकार थे।[10] अङ्ग

---

[1] विनयपिटक, IV, 116-17.

[2] बि० च० लाहा, राजगृह इन एंश्येंट लिटरेचर, पृ० 8 और आगे।

[3] रा० ला० मित्र, ने० बु० लि०, पृ० 45.

[4] वही, पृ० 9-10.

[5] महावस्तु, III, 441.

[6] रा० ला० मित्र, ने० बु० लि० पृ० 166.

[7] समन्तपासादिका, I, 52.

[8] विनय टेक्स्ट्स, सै० बु० ई०, II, 174.

[9] विनय पिटक, II, 184-85.

[10] दिव्यावदान, पृ० 55.

और मगध के बीच होकर वहनेवाली चम्पा नदी दोनों जनपदों के वीच की सीमा थी।[1]

अङ्ग एवं मगध के दोनों जनपदों में यदा-कदा युद्ध हुआ करते थे।[2] एक बार वाराणसी के राजा ने अङ्ग और मगध दोनों का जीत लिया था।[3] एक बार मगध जनपद अङ्ग की सत्ता के अधीन हो गया था।[4] कोसलाधिप पसेनदि और मगध-नरेश अजातसत्तु में एक युद्ध हुआ था, जिसके परिणामस्वरूप लिच्छवियों की सहायता से[5] अजातसत्तु ने मगध-निवासियों पर भी अपनी सत्ता का प्रसार कर लिया था। अजातसत्तु के राज्यकाल में मगध और वैशाली के वज्जियों का संघर्ष भी प्रारंभ हुआ। बिम्बिसार और अजातसत्तु के काल में मगध का इतना उत्कर्ष हुआ कि सदियों बाद, अशोक के कलिंगयुद्ध तक, वस्तुतः उत्तर भारत का इतिहास मगध का इतिहास है।

मगध ने वैवाहिक और अन्य प्रकार की संधियों के माध्यम से न केवल उत्तरी पड़ोसियों से वरन् गन्धार महाजनपद के साथ मैत्रीपूर्ण संवंध बनाये रखा जिसके राजा पकुस्साति ने उसके पास राजदूत और एक पत्र भेजा था।

काशी

काशी सोलह महाजनपदों में एक था। वाराणसी काशी-जनपद की राजधानी थी। यह पुरी अन्य विभिन्न नामों यथा-सुरुन्धन, सुदस्सन, ब्रह्म-वढ्ढन, पुप्फवती, रम्म और मोलिनी से विज्ञात थी।[6] यह बारह योजन विस्तृत थी।[7] वाराणसी को वरुणा नदी के तट पर स्थित वतलाया गया है।[8] यह नगर समृद्ध, विस्तृत और जनाकीर्ण था।[9] यह कपटी और कलहप्रिय व्यक्तियों द्वारा नहीं उत्पीड़ित था।[10]

---

1 जातक, IV, 454.

2 वही, IV, 454-55.

3 जातक, V, 315 और आगे।

4 जातक, VI, 272; दीघनिकाय, I,—सोनदण्ड सुत्तांत।

5 संयुक्त निकाय, I, 83-85.

6 जातक, IV, 119-20; IV, . 15.

7 वही, VI, 160.

8 महावस्तु, III, 402.

9 दिव्यावदान, पृ० 73.

10 वही, पृ० 98.

एक जन के रूप में काशी का सर्वप्राचीन उल्लेख अथर्ववेद के पैप्पलाद संस्करण में प्राप्त होता है। पतञ्जलि ने अपने महाभाष्य (कीलहार्न संस्करण, जिल्द, II, पृ० 413) में काशेयक वस्त्र का उल्लेख किया है। काशी नगर वरणावती नदी के तट पर स्थित बतलाया गया है।[1] रामायण के अनुसार काशी एक राज्य था, न कि नगर।[2] वायुपुराण के अनुसार, काशी का राज्य गोमती नदी तक फैला हुआ था। बुद्ध के पूर्व, काशी एक महान् राजनीतिक सत्ता थी। संपूर्ण उत्तर भारत में यह सर्वशक्तिशाली राज्य था।[3] कभी काशी का आधिपत्य कोशल के ऊपर हो जाता था और कभी कोशल काशी को जीत लेता था, किंतु बुद्ध के समय में इसकी राजनीतिक शक्ति समाप्त हो गयी थी। कुछ काल तक यह कोशल और कुछ समय तक मगध के राज्य में समाविष्ट था। काशी पर अधिकार करने के लिए कोशल के पसेनदि और मगध के अजातसत्तु में लड़ाइयाँ हुयी थीं। अंत में काशी को पराजित करने के अनंतर इसे मगध-राज्य में मिला लिया गया था। कोसल जन को पराजित करने के पश्चात् अजातसत्तु उत्तर भारत का सबसे शक्तिशाली राजा बन गया था।[4]

वाराणसी नगर बुद्ध के पदार्पण से पवित्र हो गया था। वह यहाँ अपने श्रेष्ठ मत का प्रवचन करने आये थे। यहीं पर वाराणसी के निकट मृगवन में उन्होंने धम्मचक्क-विषयक अपना प्रथम उपदेश दिया था, (मज्झिम, I, 170 और आगे; संयुक्त, V, 420, और आगे; कथावत्थु, 97, 559; सौन्दरनन्दकाव्य, III, श्लोक; 10-11; बुद्धचरित काव्य, XV, श्लोक 87; ललितविस्तर, 412-13)। बुद्ध ने अपने जीवन का एक बड़ा भाग वाराणसी में व्यतीत किया और यहीं पर उन्होंने कुछ अत्यंत महत्त्वपूर्ण प्रवचन दिये थे तथा अनेक व्यक्तियों को अपने धर्म में दीक्षित किया था (अङ्गुत्तर, I, 110 और आगे, 279-280; III, 320-322, 392-399 और आगे; संयुक्त०, I, 105-106; विनय टेक्स्टस, I, 102-108, 110-112)।

वाराणसी व्यापार और वाणिज्य का एक बड़ा केंद्र था। इस नगर के धनी व्यापारी, व्यापारिक माल से लदे हुए जहाजों-सहित विस्तृत समुद्र के पार जाया

[1] कैंब्रिज हिस्ट्री ऑव इंडिया, पृ० 117.

[2] आदि काण्ड, XII, 20.

[3] जातक, III, 115 और आगे; विनय टेक्स्टस, भाग II, पृ० 30 और आगे; जातक, I, 262 और आगे।

[4] संयुक्त० I, 82-85.

करते थे (तु० महावस्तु, III, 286)। एक धनी व्यापारी व्यापार करने के उद्देश्य से वाराणसी आया था (महावस्तु, 166-167)। श्रावस्ती और वाराणसी तथा वाराणसी और तक्षशिला के मध्य व्यापारिक संबंध थे (धम्मपद कामेंट्री, III, 429; I, 123)। वाराणसी के लोग कलाओं और विज्ञानों को सीखने के लिए तक्षशिला जाया करते थे (जातक, II, 47)।

कोशल

प्राचीन बौद्धकाल में कोशल एक महत्त्वपूर्ण जनपद था। प्राचीन कोशल जनपद दो भागों में विभाजित था जिनके मध्य सरयू नदी विभाजक रेखा थी : उत्तर की ओर स्थित भाग को उत्तर कोशल और दक्षिणी भाग को दक्षिण कोशल कहा जाता था (रा० ला० मित्र, ने० बु० लि०, पृ० 20)। बुद्ध ने अपना अधिकांश समय कोशल की राजधानी श्रावस्ती में बिताया था। उन्होंने कोशल के साला नामक एक ब्राह्मण गाँव में कई प्रवचन-मालाएँ दी थीं और ब्राह्मण-गृहस्थों को इस नूतनमत में परिवर्तित कर लिया था (मज्झिम, I, 285 और आगे)। कोशल के नगरविन्द नामक एक अन्य ब्राह्मण गाँव के ब्राह्मणों को बुद्ध ने अपने मत में दीक्षित कर लिया था (मज्झिम० III, 290 और आगे)। वेनागपुर नामक ब्राह्मण-गाँव के ब्राह्मण गृहस्थों ने भी बौद्धमत को स्वीकार कर लिया था (अंगुत्तर, I, 180, और आगे)। कोशल के बावरी नामक एक प्रसिद्ध अध्यापक ने अस्सक राज्य में गोदावरी नदी के तट पर एक आश्रम का निर्माण किया था। वह एक अन्य ब्राह्मण के साथ अपने किसी विवाद को तय कराने के लिए बुद्ध से मिला था जिस समय वे कोशल में थे (सुत्तनिपात, 190-192)। निकटवर्ती सत्ताओं के साथ कोशल के वैवाहिक संबंध थे। कोशल के एक राजकुमार ने वाराणसी के राजा की एक पुत्री से विवाह किया था (जातक, III, 211-213)। पसेनदि के पिता महाकोसल ने अपनी पुत्री का विवाह मगध-नरेश बिम्बिसार के साथ किया था (जातक, II, 237; IV, 342 और आगे)। महाकोशल और बिम्बिसार के पुत्रों, क्रमशः पसेनदि और अजातसत्तु में एक भयंकर युद्ध हुआ था। किंतु दोनों ही नरेशों ने एक प्रकार का समझौता कर लिया। अजातसत्तु ने पसेनदि की पुत्री वाजिरा से विवाह कर लिया और फलतः काशी पर उसका अधिकार हो गया (संयुत्त, I, 82-85; जातक, IV, 342 और आगे)। कपिलवस्तु के शाक्य, कोशल के राजा पसेनदि के अधीन हो गये थे (डायलाग्स आव द बुद्ध, भाग III, पृ० 80)।

श्रावस्ती और साकेत कोशल की राजधानियाँ थीं। महाकाव्यों और कुछ

बौद्ध ग्रंथों के अनुसार, अयोध्या सबसे पुरानी और तदनंतर साकेत दूसरी राजधानी थी। बुद्ध के काल में अयोध्या एक महत्त्वहीन नगर हो गया था (बुद्धिस्ट इंडिया, पृ० 34)। किंतु साकेत और श्रावस्ती भारत के छह महानगरों में से दो थे (तु० महापरिनिव्बान सुत्तांत)। कुछ लोगों का विचार है कि साकेत और अयोध्या एक ही थे, किन्तु रीज डेविड्स ने यह बतलाया है कि बुद्ध के समय में दोनों ही नगरों का अस्तित्व था। साकेत और श्रावस्ती के अतिरिक्त खास कोशल में सेतव्य और उकट्ठ जैसे अन्य छोटे नगर थे। श्रावस्ती में बुद्ध ने स्त्रियों को बौद्ध संघ में प्रवेश करने की आज्ञा दी (मज्झिम, III, 270 और आगे)। महाश्रेष्ठी अनाथपिण्डिक और अति उदारमना महिला विसाखा-मिगारमाता, श्रावस्ती के निवासी थे। अनाथपिण्डिक ने अपने जेतवन का दान बुद्ध को दिया था। बुद्ध ने एक बार वहाँ पर निवास किया था (महावस्तु, III, 101)।

श्रावस्ती में प्रसिद्ध भिक्षु-भिक्षुणियों की एक विशाल संख्या थी (धम्मपद कामेंट्री, II, 260 और आगे; 270 और आगे; वही, I, 115; थेरगाथा, पृ० 2; थेरीगाथा, पृ० 124)।

वज्जिगण

वज्जिगण, आठ प्रसंघक कुलों में (अट्ठकुल) संमिलित थे जिनमें से विदेह, लिच्छवि और वज्जिगण प्रसिद्ध हुए। अन्य प्रसंघक कुल संभवतः ज्ञांत्रिक, उग्र भोज और ऐक्ष्वाकुगण थे। आठवाँ कुल अज्ञात है। वज्जि (वृज्जि) का उल्लेख पाणिनि ने अपनी अष्टाध्यायी (IV 2,131) में किया है। कौटिल्य ने वृज्जिकों और लिच्छवियों में अंतर माना है। वृज्जिक केवल संघ का ही नाम नहीं, वरन् इस संघ के एक प्रसंघक कुल का नाम भी था। लिच्छवियों की भाँति वज्जिगण भी प्रायः वैशाली से संबंधित थे, जो न केवल लिच्छवियों की राजधानी वरन् संपूर्ण महासंघ की महानगरी थी। इसकी विशालता के कारण ही इसे वैशाली कहा जाता था।[1] इसमें तीन विषय (जिले) थे। इसे बिहार के मुज़फ़्फरपुर जिले में बसाढ़ से समीकृत किया जा सकता है। बुद्ध के समय में यह नगर तीन प्राचीरों से परिवेष्टित था, जो परस्पर एक गावुत पर स्थित थीं, और तीन स्थानों पर इनमें प्रहरियों के अट्टालकयुक्त (बुर्जदार) तोरण और भवन थे। लिच्छिवियों द्वारा आमंत्रित किय जाने पर बुद्ध यहाँ पर एक बार पधारे थे। यह नगर प्रमुदित, ऐश्वर्यपूर्ण, समृद्ध एवं जनसंकुल, आकर्षक एवं आनंदपूर्ण

---

[1] **पपंचसूदनी, II, पृ० 19.**

था। इसमें अनेक इमारतें, कँगूरेदार भवन, प्रमदवन और पुष्कर[1] विजय-तोरण और छाये हुये प्रांगण आदि थे। यह नगरी सौंदर्य में वस्तुतः अमरावती को लज्जित करती थी।[2] खाद्यान्नों से यह सुपूरित थी। भिक्षाएँ सुलभ थीं और खलिहान प्रचुर थे। कोई भी व्यक्ति भिक्षाटन से ही या लोगों के प्रसाद से अपना जीविकोपार्जन कर सकता था।[3] वैशाली के निवासियों ने एक यह नियम बनाया था कि वहाँ के व्यक्तियों की पुत्रियाँ गणभोग्या होनी चाहिये और इसलिए उनका विवाह नहीं किया जाना चाहिये।[4]

एक सड़क वैशाली से राजगृह को और दूसरी वैशाली से कपिलवस्तु को जाती थी। अनेक शाक्य वारांगनाएँ बुद्ध से दीक्षा ग्रहण करने के लिए यहाँ आईं थीं जिस समय वे महावन में निवास कर रहे थे।[5] बौद्ध धर्म के इतिहास में वैशाली में आयोजित बौद्ध संगीति महत्त्वपूर्ण है।[6] वैशाली के लिच्छवियों ने बुद्ध एवं बौद्ध संघ को कई चैत्य प्रदान किये थे। वैशाली की प्रसिद्ध नगरवधू आम्रपाली ने भी अपना आम्रकुंज बौद्धसंघ को दान दे दिया था।[7]

बुद्ध का कार्यक्षेत्र न केवल मगध और कोशल तक ही सीमित था, वरन् वैशाली तक भी था। उनके कई प्रवचन या तो यहीं पर अम्बपाली के आम्र-कुंज में या महावन के कूटागारशाला में दिये गये थे।

वज्जियों ने संघ या गण का निर्माण किया था। दूसरे शब्दों में, वे संघटित पौरसंघ द्वारा प्रशासित होते थे।[8] लिच्छवियों में परस्पर सौहार्द्र और ऐक्य था।[9] बुद्ध ने यह भविष्यवाणी की थी कि जब तक लिच्छविगण कर्मठ, अध्यवसायी, उत्साही और सक्रिय रहेंगे, तब तक समृद्धिश्री उनके अनुकूल रहेगी, न कि विपत्ति। उन्होंने यह भी भविष्यवचन किया था कि यदि लिच्छविगण विलासी

---

[1] विनय टेक्स्टस, सै० बु० ई० II, 171; लेफमन द्वारा संपादित ललित-विस्तर, अध्याय III, पृ० 21.

[2] महावस्तु, I, 253 और आगे।

[3] विनय टेक्स्टस, II, पृ० 117.

[4] बोधिसत्त्वावदान-कल्पलता, 20वाँ पल्लव, पृ० 38.

[5] विनय टेक्स्टस, II, 210-11; III, 321 और आगे।

[6] वही, III, 386 और आगे।

[7] लाहा, महावस्तु, पृ० 44.

[8] मज्झिम, I, 231.

[9] बुद्धिस्ट सुत्ताज, सै० बु० ई०, जिल्द, XI, पृ० 3-4.

एवं आलसी हो जायेंगे तब निश्चय ही वे मगध-नरेश अजातसत्तु से पराजित होंगे।[1]

मगध एवं वैशाली के राजनीतिक संबंध मैत्रीपूर्ण थे। अजातसत्तु वैदेहीपुत्र नाम से यह प्रकट होता है कि बिम्बसार ने एक लिच्छवि-कुमारी से विवाह करके लिच्छिवियों के साथ वैवाहिक संबंध स्थापित किया था।[2] कोशल-नरेश प्रसेनजित् के साथ भी लिच्छवियों का मैत्रीपूर्ण संबंध था।[3]

मगध-नरेश अजातसत्तु ने वज्जि-सत्ता को नष्ट करने का संकल्प किया था। अजातसत्तु और लिच्छवियों में युद्ध के प्रारंभ का प्रत्यक्ष कारण गंगा के समीप स्थित एक बंदरगाह था जिसके अर्धभाग पर अजातसत्तु और शेष अर्ध पर लिच्छवियों का अधिकार था। यहीं निकटवर्ती पर्वतोपकंठ में बहुमूल्य रत्नों की एक खान थी। अजातसत्तु ने देखा कि अति शक्तिशाली लिच्छविगण दुर्दांत हैं। इसलिए, उसने अपने मंत्री सुनीध और वस्सकार को उनमें फूट डालने के लिए भेजा। वस्सकार लिच्छवि-राजकुमारों में विभेद उत्पन्न करने में सफल रहा। इस प्रकार लिच्छवि अजातसत्तु द्वारा नष्ट किये गये।[4]

मल्ल—मल्लों का जनपद दो भागों में विभक्त था जिनकी राजधानियाँ कुशावती या कुशीनारा तथा पावा थीं। कुशीनारा को गोरखपुर जिले के पूर्व में छोटी गंडक के तट पर स्थित कसिया और पावा को कसिया से बारह मील उत्तर-पूर्व की ओर पडरौना नामक गांव से समीकृत किया जा सकता है। मल्लों का शाल्वन जहाँ बुद्ध की मृत्यु हुयी थी, सभवतः गंडक से समीकृत हिरण्यवती के समीप स्थित था।[5] जब मल्लों का संविधान राजतंत्रात्मक था, तब उनकी राजधानी का नाम कुशावती था किन्तु बुद्ध के समय में जब राजतंत्रात्मक संविधान की जगह उनका संविधान गणतंत्रात्मक हो गया, तब इसका नाम बदल कर कुशीनारा हो गया। महापरिनिब्बान-सुत्तांत में कुशीनारा को एक उपनगर बतलाया गया है, किंतु बुद्ध ने इसके प्राचीन वैभव का वर्णन करते हुये इसे अपने निर्वाण

---

[1] संयुत्त० II, पृ० 267-68.

[2] संयुत्त० II, 268; सुमंगलविलासिनी, I, 47; पपंचसूदनी I, 125; सारत्थपकासिनी, II, 215; दिव्यादान, पृ० 55.

[3] मज्झिम० II, पृ० 100-101.

[4] दीघ निकाय, II, 72 और आगे।

[5] स्मिथ, अ० हि० इं० 167, टिप्पणी।

की प्राप्ति का स्थल चुना। उन्होंने स्वयं कहा है कि कुशीनारा प्राचीन कुशावती थी।[1]

मल्लों का संघराज्य था। मल्लों एवं लिच्छवियों का संबंध कुल मिला कर मैत्रीपूर्ण था, किंतु कभी-कभी उनमें संघर्ष भी हो जाते थे।[2] मल्लों में भी बौद्ध धर्म के अनेक अनुयायी हुए।[3]

चेदि—प्राचीन चेदि देश यमुना के निकट स्थित था। यह स्थूल रूप से आधुनिक बुंदेलखंड और सन्निकटस्थ क्षेत्रों को द्योतित करता है। चेदि देश की राजधानी सोत्थिवती नगरी थी जो संभवतः महाभारत की शुक्तिमती नामक नगरी से समीकृत की जा सकती है।[4] सहजाति और त्रिपुरी चेदि राज्य के अन्य महत्त्वपूर्ण नगर थे।[5] काशी से चेदि तक का मार्ग असुरक्षित था।[6] वेस्सन्तर के जन्मस्थान जेतुत्तरनगर से 30 योजन दूर पर चेतराष्ट्र स्थित था।[7] बौद्धधर्म का यह एक महत्वपूर्ण केंद्र था।[8] चेदियों के बीच रहते हुये, अनुरुद्ध ने अर्हत पद प्राप्त किया था।[9] बुद्ध अपने मत का प्रचार करने के लिए चेदि गये थे।[10]

वंस—वंसों या वत्सों के जनपद की राजधानी कौशाम्बी थी, जो इलाहाबाद के समीप आधुनिक कोसम से समीकृत की जा सकती है। सुंसुमारगिरि के भर्गों का राज्य इसके अधीन था।[11] कौशाम्बी नगर कुशाम्ब नामक एक यती के आश्रम-स्थल पर बसाया गया था।[12] वत्सजन काशी के किसी राजा के

---

[1] दीघ, II, पृ० 146-47.

[2] तु० बन्धुल की कहानी; लाहा, सम क्षत्रिय ट्राइब्स ऑव ऐंश्येंट इंडिया, पृ० 160-61.

[3] विनय टेक्स्टस, III, 4 और आगे; II, 139; साम्स ऑव द ब्रदेरन, 80, 90.

[4] महाभारत, III, 20, 50 और XXV, 83, 2.

[5] अंगुत्तर, III, 355.

[6] जातक, संख्या, 48.

[7] जातक, VI, 514-15.

[8] अंगुत्तर, III, 355-56; V, 41 और आगे; 157-61.

[9] वही, VI, 228 और आगे।

[10] दीघ , II, 200, 201, 203.

[11] भंडारकर, कार्माइकेल लेक्चर्स, 1918, पृ० 63; जातक, सं० 353.

[12] लाहा, सौन्दरनन्द-काव्य बँगला, अनुवाद, पृ० 9.

वंशज[1] बतलाये जाते हैं। कौशाम्बी उन महानगरों में से एक बतलाया गया है जहाँ बुद्ध को महापरिनिब्बान प्राप्त करना चाहिये। जटिलों के नेता बावरी के अनुयायी कौशाम्बी नगर गये थे।[2] पिण्डोल भारद्वाज कौशाम्बी में स्थित घोषिताराम में रहते थे। वह कौशाम्बी-नरेश उदेन (उदयन) के राज-पुरोहित का पुत्र था।[3] कौशाम्बी-नरेश उदेन और पिण्डोल भारद्वाज में धार्मिक विषयों पर एक वार्ता हुयी थी।[4] जब बुद्ध घोषिताराम में थे, उन्होंने धम्म, विनय आदि विषयों पर प्रवचन दिया था।[5]

कुरु—कुरु नामक एक जनपद था और यहाँ के राजा भी कुरु नाम से पुकारे जाते थे।[6] प्राचीन साहित्य में उत्तर एवं दक्षिण कुरु नामक दो कुरु प्रदेशों का वर्णन प्राप्त होता है। बुद्ध ने कुरुओं के प्रति कुछ गंभीर प्रवचन कम्मासधम्म नामक एक कुरु-नगर में किये थे। थेर रट्ठपाल एक कुरु-भद्र था, कौरव्य-नरेश से जिसके धार्मिक-विवाद का उल्लेख मज्झिम निकाय में प्राप्त होता है।[7] कुरुओं की उत्पत्ति के विषय में यह कहा जाता है कि जंबुद्वीप के मान्धाता नामक एक चक्कवत्ती नरेश ने पुब्ब विदेह (पूर्व विदेह) अपरगोयान् और उत्तरकुरु देशों पर विजय प्राप्त की थी। उत्तरकुरु से लौटते समय वहाँ के निवासी बहुत बड़ी संख्या में मान्धाता का अनुगमन करते हुये जंबुद्वीप आये और वह स्थान जहाँ पर वे बस गये, कालांतर में कुरुराष्ट्र के नाम से विख्यात हुआ।[8] बुद्ध के अनेक धार्मिक प्रवचनों को सुन कर कुरुदेश के अधिकतर निवासियों ने बौद्धमत ग्रहण कर लिया था।[9]

प्राचीन कुरु देश में कुरु-क्षेत्र या थानेश्वर समाविष्ट बतलाया जाता है।

---

[1] हरिवंश, 29-73; महाभारत, XII 49, 80.

[2] सुत्तनिपात कामेंट्री, II, 584.

[3] साम्स ऑव द ब्रेदेरन, पृ० 110-111.

[4] संयुक्त० IV, पृ० 110-112.

[5] विनय टेक्स्टस, III, पृ० 233.

[6] पपंचसूदनी, I, 25.

[7] मज्झिम०, II, 65 और आगे।

[8] पपंचसूदनी, I, 225-26.

[9] अंगुत्तर०, V, 29-32; संयुत्त० II, 92-93, 107 और आगे; मज्झिम, I,55 और आगे, 501 और आगे; II, 261 और आगे; दीघ०, II, 55 आगे।

इस प्रदेश में सोनपत, अमीन, करनाल और पानीपत, संमिलित थे और यह उत्तर में सरस्वती तथा दक्षिण में दृषद्वती के मध्य स्थित था। कुरुप्रदेश 300 लीग विस्तृत था और इसकी राजधानी इंद्रप्रस्थ 7 लीग विस्तृत थी।[1]

बोधिसत्त्वावदान-कल्पलता[2] में निश्चित रूप से यह बतलाया गया है कि हस्तिनापुर कुरु राजाओं की राजधानी थी। हस्तिनापुर के राजा अर्जुन की यह आदत थी कि वह उन संतों की हत्या करवा देता था जो उसके प्रश्नों का उत्तरों द्वारा समाधान नहीं कर पाते थे।[3] हस्तिनापुर का एक अन्य राजा सुधनु जो सुबाहु का पुत्र था, सुदूर देश की एक किन्नरी से प्रेमाबिद्ध हो गया था और वह उसको साथ लेकर राजधानी में लौटा, जहाँ पर राजकार्य में वह अपने पिता का बहुत दिनों तक सहयोग करता रहा।[4]

पंचाल—पंचाल देश उत्तर और दक्षिण दो भागों में विभक्त था। भागीरथी इनके मध्य की विभाजक रेखा थी। वैदिक ग्रंथों में प्राच्य पंचाल एवं उसके पश्चिमी भागों का उल्लेख प्राप्त होता है।[5] शतपथ ब्राह्मण में पंचालों को क्रिवि कहा गया है। दिव्यावदान (पृ० 435) के अनुसार उत्तर पंचाल की राजधानी हस्तिनापुर थी किंतु कुम्भकार जातक में काम्पिल्य नगर (कम्पिल्लनगर) इसकी राजधानी बतलायी गयी है।[6] महाभारत (138, 73-74) के अनुसार उत्तर पंचाल की राजधानी अहिच्छत्र थी जिसे बरेली जिले में आधुनिक रामनगर से समीकृत किया जाता है। दक्षिण पंचाल की राजधानी काम्पिल्य थी जिसकी पहचान फर्रुखाबाद जिले के आधुनिक कंपिल से की जा सकती है। कभी उत्तर पंचाल कुरुराष्ट्र में संमिलित रहता था[7] और इसकी राजधानी हस्तिनापुर होती थी, किंतु कभी यह काम्पिल्यराष्ट्र का एक अंग होता था।[8] कभी काम्पिल्यराष्ट्र के राजा उत्तर पंचालनगर में अपना दरबार करते थे, किंतु कभी उत्तर पंचालराष्ट्र

---

[1] जातक, संख्या, 537.

[2] तृतीय पल्लव, 116; 64वाँ पल्लव, पृ० 9.

[3] महावस्तु, III, 361.

[4] वही, II, 94-95.

[5] वैदिक इंडेक्स, I, 469, संहितोपनिषद्ब्राह्मण।

[6] कावेल, जातक, III, 230.

[7] जातक, संख्या, 505.

[8] वही, 323, 513, 520.

के नरेश काम्पिल्य में अपना दरबार करते थे।[1] विशाख, जो पंचाल-नरेश की लड़की का लड़का था, अपने पिता की मृत्यु के पश्चात् राज्याधिकारी हुआ था। उसने धम्म पर बुद्ध का प्रवचन सुनने के पश्चात् संन्यास ले लिया था।[2]

पंचाल मूलत: दिल्ली से पश्चिम और उत्तर में हिमालय की तराई से चंबल तक का प्रदेश था। स्थूल रूप से यह आधुनिक बदायूँ, फर्रुखाबाद और निकटवर्ती जिलों को द्योतित करता है।

मत्स्य—मत्स्य देश में वर्तमान जयपुर का क्षेत्र संमिलित था। इसमें भरत-पुर के एक खंड सहित वर्तमान अलवर का संपूर्ण प्रदेश समाविष्ट था। ऋग्वेद[3] के अनुसार मत्स्य देश इन्द्रप्रस्थ के दक्षिण या दक्षिणपश्चिम में और शूरसेन के दक्षिण में स्थित था। मत्स्यों के राजा विराट की राजधानी होने के कारण, इसकी राजधानी का नाम भी विराटनगर या वैराट था।

शूरसेन—यमुना-तट पर स्थित मथुरा शूरसेनों की राजधानी थी। वर्तमान् मथुरा नगर से 5 मील दक्षिण पश्चिम की ओर स्थित महोली से मथुरा का समीकरण किया जाता है। इसे मद्रास में वैगाई नदी के तट पर स्थित पाण्ड्य राज्य की दूसरी राजधानी मदुरा या मधुरा से पृथक् समझना चाहिये। इन्होंने धनंजय कोरव्य और पुण्णक यक्ष के पासे के खेल को देखा था।[4] प्राचीन यूनानी लेखकों ने शूरसेन देश को सूरसेनोइ (Soursenoi) और इसकी राजधानी को मेथोरा (Methora) कहा है। कई शताब्दियों तक बौद्ध धर्म मथुरा में प्रबल रहा। महाकच्चायन ने मथुरा में जाति-विषय पर एक प्रवचन दिया था।[5] मथुरा से वेरञ्जि की ओर जाते समय बुद्ध ने एक पेड़ के नीचे विश्राम किया था, जहाँ पर अनेक गृहस्थों ने उनकी पूजा की थी।

राम के भाई शत्रुघ्न ने मथुरा की स्थापना की थी। शत्रुघ्न के एक पुत्र का नाम शूरसेन था जिसके नाम पर इस देश का नाम पड़ा है।[6] कंस द्वारा यादवों को

---

[1] जातक, संख्या 408; पो० हि० एं० इं०, पृ० 85.

[2] साम्स ऑव द ब्रेदेरन, पृ० 152-153; तु० थेर-थेरी गाथा (पा० टे० सो०) पृ० 27.

[3] VII, 18, 6; तु० गोपथ-ब्राह्मण, I, 2, 9 बिब्लियोथेका इंडिका सीरीज, पृ० 30, रा० ला० मित्र संस्करण।

[4] कावेल, जातक, I, 137.

[5] मज्झिम निकाय, II, 83 और आगे।

[6] कनिंघम, एं० ज्यॉ० इं०, पृ० 706.

आक्रांत करके मथुरा का अधिपति बनने की और श्रीकृष्ण द्वारा उसकी हत्या की महाकाव्य एवं पुराणों से उल्लिखित कहानी का वर्णन न केवल पतञ्जलि ने किया है, वरन् घट-जातक[1] में भी उसका वर्णन किया गया है।

जब मेगस्थनीज़ ने शूरसेनों के विषय में लिखा था तब मथुरा अवश्य ही मौर्य साम्राज्य का एक भाग रहा होगा। कुषाणों के आधिपत्य-काल में यह पुनः बौद्ध-धर्म एवं संस्कृति का एक महत्त्वपूर्ण केंद्र हो गया था। बुद्धों एवं बोधिसत्त्वों की अनेक प्रतिमाएँ यहाँ से प्राप्त हुयी हैं।[2]

अस्सक—अस्सक जम्बुद्वीप का एक महाजनपद था जिसकी राजधानी पोतन या पोतलि थी। पोतन महाभारत (I, 77. 47) में वर्णित पौदन्य था। सुत्त-निपात (V. 977) में दक्षिणापथ में स्थित एक अन्य अस्सक देश का वर्णन प्राप्त होता है। अलक या मूलक के समीप अस्सक देश में गोदावरी नदी के तट पर बावरी ब्राह्मण रहता था। दन्तपुर-नरेश कालिंग और पोतन-नरेश अस्सक के संबंध मैत्रीपूर्ण नहीं थे, किन्तु बाद में वे प्रेमभाव से रहने लगे थे।[3] अस्सक देश के एक राजा को महाकच्चायन ने दीक्षा दी थी।[4] राजा खारवेल के हाथीगुम्फा अभिलेख से हमें यह ज्ञात होता है कि खारवेल ने पश्चिम की ओर अस्सक या असिक नगर में संत्रास उत्पन्न करने के लिए एक विशाल सेना भेजी थी। चुल्लकालिंग जातक का अस्सक और हाथीगुम्फा अभिलेख में उल्लिखित असिक नगर संभवतः, सुत्तनिपात का अस्सक ही है, जो गोदावरी के तट पर स्थित है। अस्सक, संस्कृत अश्मक या अश्वक का वाचक है जिसका उल्लेख असंग ने अपने सूत्रालंकार में सिंधु नदी की घाटी में स्थित एक देश के रूप में किया है।

अतएव असंग का अश्मक, यूनानी लेखकों का अस्सकेनस-राज्य ही प्रतीत होता है, जो सरस्वती के पूर्व में, समुद्र से 25 मील दूर, स्वात की घाटी में स्थित था। मार्कण्डेयपुराण एवं बृहत्संहिता के लेखकों ने अश्मकों को पश्चिमोत्तर में स्थित बतलाया है। प्राचीन पालिग्रंथों में अस्सक को सदैव अवन्ती से संबद्ध बतलाया गया है। कौटिलीय अर्थशास्त्र के भाष्यकार भट्टस्वामी ने अश्मक को महाराष्ट्र से समीकृत किया है। वस्तुतः बौद्धों का अस्सक देश चाहे यह

---

[1] जातक, संख्या, 454.

[2] ज० रा० ए० सो० बं०, लेटर्स, भाग XIII, संख्या 1, 1947 में लाहा का 'मथुरा इन ऐंश्येंट इंडिया' नामक लेख।

[3] जातक, III, 3-5.

[4] विमानवत्थु कामेंट्री, 259 और आगे।

महाराष्ट्र से समीकृत हो या गोदावरी तट पर स्थित हो मध्यदेश के बाहर स्थित था।

अवन्ती—अवन्ती षोडश-महाजनपदों में से एक था जिसकी राजधानी उज्जयिनी थी; इसका निर्माण अच्चुतगामी ने कराया था।[1] अवन्ती स्थूल रूप से आधुनिक मालवा, निमाड़ और मध्यप्रदेश के समीपस्थ जिलों को द्योतित करता था। दे० रा० भंडारकर ने ठीक ही बतलाया है कि प्राचीन अवन्ती दो भागों में विभक्त था। उत्तरी भाग की राजधानी उज्जयिनी और दक्षिणी भाग, जिसे अवन्ती दक्षिणापथ कहा जाता था, की राजधानी माहिष्मती थी।[2] दीघनिकाय के महागोविंदसुत्तांत के अनुसार, माहिस्सती अवन्ती की राजधानी थी, जिसका राजा वेस्सभु था। स्पष्टतः यह दक्षिणापथ में स्थित अवन्ती देश के प्रति संकेत करता है। महाभारत (II, 31, 10) में अवंती और माहिष्मती दो अलग देश बतलाये गये हैं।

अवन्ती बौद्ध धर्म का एक महत्त्वपूर्ण केंद्र था। अनेक प्रसिद्ध थेर एवं थेरियाँ या तो यहाँ उत्पन्न हुयी थीं या यहीं रहती थीं।[3] महाकच्चायन उज्जयिनी में चण्डपज्जोत (चण्डप्रद्योत) के पुरोहित के परिवार में पैदा हुआ था। उसने राजा को बौद्ध धर्म में दीक्षित किया था। इसिदत्त का धर्म-परिवर्तन भी महाकच्चायन ने ही किया था।[4] वह अवन्ती का निवासी था। सोण कुटिकण्ण भी उसी के द्वारा दीक्षित हुआ था।[5] बुद्धकाल में भारत छोटे स्वतंत्र राज्यों में विभक्त था। इन राज्यों में बिम्बिसार एवं अजातशत्रु के राज्यकाल में मगध, पसेनदि के अधीन कोसल, पज्जोत (प्रद्योत) के अधीन अवन्ती और उदेन की अधीनता में कोसाम्बी ने छठीं एवं पाँचवीं शती ई० पू० में भारतीय राजनीति के रंगमंच पर महत्त्वपूर्ण भूमिकाएँ अदा की थीं। इन राजाओं में विद्वेष था और प्रत्येक राज्य एक दूसरे के मूल्य पर अपनी सत्ता के प्रसार के लिए प्रयत्नशील था। पज्जोत (प्रद्योत) उदेन (उदयन) पर अपना आधिपत्य स्थापित करना चाहता था, किंतु उसे अपने

---

[1] दीपवंस, 57.

[2] कार्माइकेल लेक्चर्स, 1918, पृ० 54.

[3] थेरगाथा कामेंट्री 39; थेरीगाथा कामेंट्री 261-264; थेरगाथा, 120; उदान, V, 6; संयुत्त, III, 9; IV, 117; अंगुत्तर, I, 23; V, 46; मज्झिम, II, 194, 223; विनय टेक्स्टस, भाग II, पृ० 32; थेरगाथा 369.

[4] साम्स ऑव द ब्रेदेरन, पृ० 107.

[5] धम्मपद कामेन्ट्री, IV, 101.

उद्देश्य में सफलता न मिली। उसने उदयन के साथ अपनी पुत्री वासभदत्ता (वासवदत्ता) का विवाह कर दिया। इस वैवाहिक संबंध ने कौसाम्वी को पज्जोत की अधीनता से बचाया। उदयन ने मगध-नरेश के साथ भी वैवाहिक संधि की थी। ये दोनों राज-विवाह, कौशाम्वी जो अवंती एवं मगध का अंतस्थ राज्य था, की राजनीतिक स्वाधीनता के स्थायित्व के लिए आवश्यक थे।

गन्धार—यह षोडश महाजनपदों की तालिका में संमिलित है। गन्धार लोग एक प्राचीन जन थे जिनकी राजधानी तक्षशिला थी। मोग्गलिपुत्त तिस्स ने थेर मज्झन्तिक को कश्मीर-गन्धार में बौद्ध धर्म का प्रचार करने के लिए भेजा था।[1] गन्धार में उत्तर-पंजाब के पेशावर और रावलपिंडी (प० पाकिस्तान) के जिले समाविष्ट हैं। कश्मीर-गन्धार एवं विदेह में व्यापारिक संबंध थे।[2] गन्धार-नरेश पकुस्साति मगध-नरेश बिम्बिसार का समकालीन था। बताया जाता है कि उसने एक राजदूत और पत्र अपनी मित्रता के परिचय के रूप में अपने समकालीन मगध-नरेश के पास भेजा था। उसने अवन्ती-नरेश प्रद्योत से युद्ध किया था और उसे पराजित किया था।

धारयद्वसु (Darius) (516 ई० पू०) के बेहिस्तुन अभिलेख में पारसीक साम्राज्य के एक अधीनस्थ राज्य के रूप में गडर या गन्धार का उल्लेख है। छठीं शती ई० पू० के उत्तरार्ध में गन्धार-जनपद पर सारवामनीप राजाओं ने विजय प्राप्त कर ली थी। अशोक के काल में गन्धार उसके साम्राज्य का एक भाग था। गन्धार का उल्लेख अशोक के पाँचवें शिलालेख में किया गया है।

कम्बोज—यह षोडश महाजनपदों में से एक था। यह सुंदर घोड़ों के लिए विख्यात था।[3] कम्बोज लोग स्थूल रूप से पश्चिमोत्तर सीमांत प्रदेश के हजारा जिले सहित राजौरी या प्राचीन राजपुर के निकट रहते थे। थेर महारक्खित ने कम्बोज तथा अन्य स्थानों पर बौद्ध-धर्म की स्थापना की थी।[4]

द्वारका, कम्बोज के साथ वर्णित है। यह स्पष्ट रूप से नहीं कहा गया है कि वस्तुत: यह कम्बोज देश की राजधानी थी। प्रारंभिक या उत्तरकालीन पालि-ग्रंथों में कम्बोजों की राजधानी का उल्लेख नहीं प्राप्त होता है। यह निश्चित है कि कम्बोज गन्धार के समीप ही पश्चिमोत्तर भारत में स्थित था। कम्बोजों

---

[1] **महावंस, अध्याय XII, V, 3.**

[2] **जातक, III, पृ० 363-69.**

[3] **सुमंगलविलासिनी, I, 124.**

[4] **सासनवंस, 49.**

का एक नगर, नन्दिपुर था जिसका वर्णन ल्यूडर्स की अभिलेखों की तालिका, संख्या 176 एवं 472 में किया गया है।

कम्बोज अपनी मौलिक आर्य-परंपराओं को भुलाकर बर्बर हो गये थे।[1] भूरिदत्त जातक[2] से हमें यह ज्ञात होता है कि अनेक अनार्य कम्बोजों ने यह बतलाया है कि लोग कीटों, मक्खियों, सांपों, मधुमक्खियों और मेढक आदि की हत्या करके शुद्ध किये जाते थे। जातक-परंपरा की पुष्टि यास्क के निरुक्त और युवान-च्वाङ् के राजपुर और पश्चिमोत्तर भारत में स्थित उसके समीपस्थ देशों के वर्णन से होती है।[3]

प्राचीन भारतीय भूगोल पर महत्त्वपूर्ण प्रकाशन

इस समय हमारे पास प्राचीन भारत के भूगोल पर कुछ उपयोगी ग्रंथ हैं। कनिंघम की 'एंश्येंट ज्यॉग्राफी ऑव इंडिया' मुख्यतया फा-ह्यान, युवान-च्वाङ् तथा यूनानी लेखकों के विवरणों पर आधारित है। इसमें लेखक की निजी, महत्त्व-पूर्ण पुरातत्त्वीय खोजें भी समाहित हैं। इस पुस्तक का टिप्पणियों एवं आमुख-सहित, पुर्नसंपादन एस० एन० मजुमदार ने किया है (कलकत्ता, 1924)। नंदलाल दे की 'ज्यॉग्रेफिकल डिक्शनरी ऑव एंश्येंट ऐंड मेडिवल इंडिया' यद्यपि एक क्रमबद्ध ग्रंथ नहीं है, तथापि यह एक बहुत उपयोगी शब्दकोष एवं पुस्तिका है। यह दोषपूर्ण है, क्योंकि इसमें सामान्यरूप से समीकरण के आधारों को छोड़ दिया गया है। इसमें दक्षिण भारत का भूगोल भी उपेक्षित कर दिया गया है। इस पुस्तक का प्रथम संस्करण कलकत्ता से 1899 में और द्वितीय संस्करण मेसर्स ल्युजक ऐंड कंपनी द्वारा लंदन से 1927 में प्रकाशित हुआ था। ये दोनों ग्रंथ संबद्ध अभिलेखीय दत्तसामग्री से विहीन हैं। वि० च० लाहा की 'ज्यॉ-ग्रेफी ऑव अर्ली बुद्धिज्म' में पालि बौद्ध ग्रंथों के आधार पर प्रथम बार प्राचीन भारत का भौगोलिक चित्र प्रस्तुत करने का प्रयत्न किया गया है। यहाँ यह कहा जा सकता है कि इसी लेखक ने उक्त ग्रंथ के एक परिशिष्ट के रूप में 'ज्यॉग्रेफिकल डाटा फ्रॉम संस्कृत बुद्धिस्ट लिटरेचर' नामक एक शोध-पत्र लिखा है, जो 'अनल्स ऑव द भंडारकर ओरियंटल रिसर्च इंस्टीट्यूट' (XV, 1934, अक्टूबर-जनवरी) में प्रकाशित हुआ था और जो बाद में मेसर्स ल्युजक ऐंड कंपनी द्वारा 1937 में

---

[1] जातक (कावेल संस्करण), VI, 110, पाद टिप्पणी, 2.

[2] जातक, VI, 208, 110.

[3] वाटर्स, ऑन युवान च्वाङ्, I, 284 और आगे।

प्रकाशित उनके 'ज्यॉग्रेफिकल एसेज़' नामक ग्रंथ में समाविष्ट कर लिया गया था। 'ज्यॉग्रेफिकल एसेज़,' जिल्द, I, भौगोलिक एवं स्थानवृत्त विषयक सूचना प्रदान करने वाले निबंधों का एक संकलन है जो विशेषतः प्राचीन भारत के भूगोल-वेत्ताओं के लिए उपयोगी सिद्ध होगा।

स्वर्गीय प्रो० ए० ए० मैकडानेल एवं ए० बी० कीथ द्वारा विरचित 'वैदिक इंडेक्स ऑव नेम्स ऐंड सब्जेक्ट्स' में अतिप्राचीन संस्कृत ग्रंथों में संनिहित सभी भौगोलिक सूचनाएँ समाविष्ट हैं। सोरेंसन की 'इंडेक्स टु द महाभारत" एवं मललसेकर की 'डिक्शनरी ऑव पालि प्रापर नेम्स' भौगोलिक दृष्टि से बहुत उपादेय है।

बि० च० लाहा द्वारा प्रणीत 'सम क्षत्रिय ट्राइब्स ऑव एंश्यंट इंडिया (1923), मिड इंडियन क्षत्रिय ट्राइब्स (1924), एंश्यंट इंडियन ट्राइब्स, जिल्द, I एवं II, तथा ट्राइब्स ऑव इंडिया (1941) में बड़ी संख्या में क्षत्रिय कबीलों के इतिहास एवं ऐतिहासिक भूगोल का वर्णन किया है। इनमें प्रत्येक कबीले द्वारा अधिकृत प्रदेश और विभिन्न युगों में उनके राज्य के विस्तार का विशद् वर्णन प्राप्त होता है।

बि० च० लाहा की 'हिस्टॉरिकल ग्लीनिंग्स' (1922) नामक पुस्तक प्राचीन भारत के भौगोलिक अध्ययन के लिए उपयोगी सिद्ध हो सकती है।

बि० च० लाहा की कलकत्ता ज्यॉग्रेफिकल सोसायटी द्वारा 1940 में प्रकाशित 'होली प्लेसेज़ ऑव इंडिया' नामक पुस्तक में हिंदू, बौद्ध एवं जैनियों के प्रायः सभी महत्त्वपूर्ण तीर्थ-स्थानों का एक संक्षिप्त विवरण दिया गया है, जिसका चयन क्षेत्र के आधार पर किया गया है और जो मानचित्रों एवं रेखाचित्रों द्वारा सुसज्जित है।

कलकत्ता की ज्यॉग्रेफिकल सोसायटी द्वारा 1944 में प्रकाशित बि० च० लाहा के 'माउंटेंस ऑव इंडिया' और 'रिवर्स ऑव इंडिया' नामक ग्रंथ ऐतिहासिक भौगोलिक अध्ययन हैं, जिनमें भारतीय साहित्य, यूनानी भूगोल-वेत्ताओं के विवरणों एवं चीनी तीर्थयात्रियों के यात्रावृत्तांतों पर आधारित भारत की नदियों एवं पर्वतों का क्रमबद्ध विवरण प्रस्तुत किया गया है।

ग्वालियर (भूतपूर्व राज्य) के पुरातत्त्व विभाग द्वारा 1944 में प्रकाशित बि० च० लाहा की 'उज्जयिनी इन ऐंश्यंट इंडिया' में मूल साहित्यिक स्रोतों, चीनी-यात्रियों के यात्रावृत्तांतों एवं यथोचित अभिलेखीय एवं मुद्राशास्त्रीय साक्ष्यों पर आधारित उज्जयिनी के प्राचीन नगर का क्रमबद्ध विवरण प्राप्त होता है।

1941 में बि० च० लाहा द्वारा प्रणीत इंडिया ऐज डिस्क्राइब्ड इन अर्ली

टेक्स्ट्स ऑव बुद्धिज्म ऐंड जैनिज्म, और 1949 में बांबे ऑव रॉयल एशियाटिक सोसायटी द्वारा प्रकाशित उनकी 'सम जैन कैनॉनिकल सूत्राज़' नामक पुस्तक भूगोल-वेत्ताओं के लिए बहुत उपयोगी सिद्ध होगी।

भारत सरकार के पुरातत्त्व विभाग से उनके 50, 58, 60 एवं 67 वें संस्मरण के रूप में प्रकाशित बि० च० लाहा द्वारा लिखित 'श्रावस्ती इन इंडियन लिटरेचर, राजगृह इन ऐंशेंट लिटरेचर, कौशाम्बी इन ऐंश्येंट लिटरेचर और पञ्चालाज ऐंड देयर कैपिटल अहिच्छत्र' नामक ग्रंथों में साहित्यिक, अभिलेखीय, मुद्राशास्त्रीय तथा यूनानी एवं चीनी यात्रियों के वृत्तांतों पर आधारित चार प्राचीन भारतीय नगरों का दक्षतापूर्वक विशद एवं क्रमबद्ध विवरण प्रस्तुत किया गया है, जो पुरातात्त्विकों एवं इतिहासकारों के लिए लाभप्रद है।

बि० च० लाहा द्वारा प्रणीत इंडोलोजिकल स्टडीज़, भाग, I, प्राचीन भारतीय भूगोल के अध्ययन के लिए एक लाभप्रद सहायक है।

पार्जिटर की ऐंश्येंट इंडियन हिस्टॉरिकल ट्रेडिशन एवं उनके द्वारा अनूदित मार्कण्डेय पुराण तथा विल्सन द्वारा अनूदित विष्णु पुराण में पुराणों से प्राप्त भौगोलिक सूचनाएँ संकलित की गयी हैं।

हे० च० रायचौधरी की स्टडीज इन इंडियन ऐंटिक्वेरी (कलकत्ता विश्वविद्यालय, 1932) असंबद्ध निबंधों का संकलन है, जिसमें से पाँच भूगोल से संबंधित हैं।

प्रोफेसर किरफेल की 'डी कास्मोग्रफी डेर इंडेर' एक महत्त्वपूर्ण ग्रंथ है जो भूगोल से बहुत मिला-जुला है और जिसका प्रतिनिधित्व बौद्ध-पिटकों में भी किया गया है।

सिलवाँ लेवी, ज्याँ प्रेज्लुस्की और जुलेस ब्लारव द्वारा फ्रांसीसी भाषा में लिखे गये निबंधों के संकलन को 'प्रि-आर्यन ऐंड प्रि-द्राविडियन इन इंडिया' की संज्ञा दी गयी है, जिसका अनुवाद अंग्रेजी में प्र० चं० बागची ने किया है (कलकत्ता विश्वविद्यालय 1929)। इस पुस्तक में सिलवाँ लेवी का 'प्रि-आर्यन ऐंड प्रि-द्राविडियन' नामक एक लेख है, जो पहले जर्नल एशियाटिक, टोम, CC III, (1923) में प्रकाशित हुआ था। यह इस वाक्य से प्रारंभ होता है : "प्राचीन भारत की भौगोलिक नामावली में प्रायः सम-युग्मक शब्दों की एक निश्चित संख्या प्राप्त होती है जिनमें परस्पर उनके प्रारंभिक व्यंजनों के आधार पर ही अंतर किया जा सकता है। यहाँ मैं उनमें से कुछ का अनुशीलन करना चाहता हूँ : (1) कोसल-तोसल (2) अङ्ग-वङ्ग (3) कलिङ्ग-त्रिलिङ्ग (4) उत्कल-मेकल (5) पुलिन्द-कुलिन्द (6) कामरूप-नामरूप आदि।

ज्याँ प्रेजलुस्की का 'नेम्स ऑव इंडियन टाउंस इन द ज्यॉग्रेफी ऑव टालेमी' नामक लेख प्रथम बार 1926 में वुलिटिन दा ला सोसायटी द लिंग्विस्टीक में प्रकाशित हुआ था। कोडुम्वर या औदुम्वर जर्नल एशियाटिक 1926 में प्रकाशित ज्याँ प्रजलुस्की के Un ancien peuple du punjab : Les Udumbara नामक लेख से किया गया था। सिल्वाँ लेवी द्वारा लिखित 'पलौरा दन्तपुर' नामक लेख प्रथम बार जर्नल एशियाटिक CCVI, 1925 (नोट्स इंडियेन्नीज) में प्रकाशित हुआ था। सिलवाँ लेवी का पिथुण्ड, पिथुड तथा पितुण्ड्र नामक लेख भी (जर्नल एशियाटिक CCVI, 1925-26) इस पुस्तक में संमिलित है। ढाका विश्वविद्यालय द्वारा 1943 में प्रकाशित 'हिस्ट्री ऑव बंगाल', जिल्द I में वङ्ग से संबंधित बहुत भौगोलिक सूचनाएँ समाहित हैं।

हमारे प्राचीन भूगोल के क्रमबद्ध अध्ययन के लिए ग्रीक एवं लैटिन लेखकों के ग्रंथ बहुत उपयोगी हैं। वे अधोलिखित हैं : नोट्स ऑन द इंडिका ऑव टेसियस, लेखक एच० एच० विलसन (आक्सफोर्ड, 1836) ; Etude sur la geographie Grecque et Latine de l' Inde et en particulier sur l' Indes de Ptolemee. लेखक, विवियेन डी सेंट मैटिन; ऐंश्येंट इंडिया ऐज डिस्क्राइब्ड बाई मेगस्थनीज़ ऐंड एरियन' लेखक—जे० डब्ल्यू० मैक्रिंडिल (इंडियन ऐंटिक्वेरी, कलकत्ता 1876-1877 से पुनर्मुद्रित; नया संस्करण, कलकत्ता, 1926);

—'कामर्स ऐंड नैविगेशन ऑव दी इरिथ्रियन सी' लेखक, जे० डब्ल्यू० मैक्रिंडिल (इंडियन ऐंटिक्वेरी, कलकत्ता, 1879 से पुनर्मुद्रित)।

—ऐंश्येंट इंडिया ऐज डिस्क्राइब्ड बाई टालेमी, लेखक, जे० डब्ल्यू० मैक्रिंडिल (इंडियन ऐंटिक्वेरी, 1884 से पुनर्मुद्रित, कलकत्ता 1885)।

—टू नोट्स ऑन टालेमीज ज्यॉग्रेफी ऑव इंडिया, लेखक, इ० एच० जॉन्स्टन (ज० रा० ए० सो०, 1941)।

—नोट्स ऑन टालेमी, लेखक, जे० पीएच० फोगेल (बु० स्कू० ओ० अ० स्ट०, XII, XIII और XIV, भाग I)।

—ऐंश्येंट इंडिया ऐज डिस्क्राइब्ड बाई टेशियस द निडियन, लेखक, जे० डब्ल्यू० मैक्रिंडिल (इंडियन ऐंटिक्वेरी, 1881 से पुनर्मुद्रित, कलकत्ता, 1882)।

—द इनवेजन ऑव इंडिया बाई अलेक्जेंडर द ग्रेट, लेखक, जे० डब्ल्यू० मैक्रिंडिल, नूतन संस्करण, 1896.

—अलेक्जेंडर्स पैसेज ऑव झेलम, लेखक, सर ऑरेल स्टाइन (द टाइम्स, 5 अप्रैल, 1932)।

—द संगल ऑव अलेक्जेंडर हिस्टोरियंस, लेखक, हचिसन (जर्नल ऑव दी पंजाब हिस्टॉरिकल सोसायटी, जिल्द, I)।

—एंश्येंट इंडिया ऐज डिस्क्राइब्ड इन क्लासिकल लिटरेचर, लेखक, जे० डब्ल्यू० मैक्रिंडिल, 1901.

—पेरिप्लस ऑव द इरिथ्रियन सी, अनूदक एवं टीकाकार, डब्ल्यू० एच० शाफ, लंदन, 1912.

—ल ज्योग्रेफाइ डी टाल्मी ल इंडे (VII, 1-4), लेखक, लु० रेनु, पेरिस 1925.

—एच० जी० रॉलिन्सन द्वारा विरचित 'दी शेट्स ऑव इंडिया (लंदन, 1910) और सर ऑरेल स्टाइन द्वारा प्रणीत 'ऑन अलेक्जेंडर्स ट्रैक टु द इंडस', (लंदन, 1929) तथा ज्योग्रैफिकल जर्नल, लंदन, जिल्द, LXX, 1927, नवंबर-दिसंबर, पृ० 417 और आगे तथा 515 और आगे में प्रकाशित उनका 'ऑन अलेक्जेंडर्स कैम्पेन ऑन नार्थ वेस्ट फ्रंटियर' नामक लेख उल्लेखनीय हैं।

विभिन्न पत्रिकाओं में प्रकाशित उल्लेखनीय अवदानों की एक सूची नीचे दी गई है :

जर्नल ऑव दी रॉयल एशियाटिक सोसायटी

1873. युवान-च्वाङ् की पटना से वल्भी तक की यात्रा, लेखक, जे० फर्ग्युसन।
1893. सरस्वती और भारतीय मरुभूमि की लुप्त नदी, लेखक, ऑल्डम।
1894. राम के वनवास का भूगोल, लेखक, एफ० ई० पार्जिटर।
1897. गौतम बुद्ध का जन्मस्थान, लेखक, वी० ए० स्मिथ।
1897. पिष्टपुर, महेन्द्रगिरि और अच्युत, लेखक, वि० स्मिथ।
1898. कर्तृपुर का राज्य, लेखक, ऑल्डम।
1898. कौशाम्बी और श्रावस्ती, लेखक, वी० स्मिथ।
1898. बौद्ध ग्रंथों में कपिलवस्तु, लेखक, टी० वाटर्स।
1898. कंदहार अभिलेख में भूगोल, लेखक, जे० बीम्स।
1902. वैशाली, लेखक, वि० स्मिथ।
1902. कुशीनारा या कुशीनगर तथा अन्य बौद्ध तीर्थस्थल, लेखक, वि० स्मिथ।
1903. कौशाम्बी, काशपुर और वैशाली, लेखक, डब्ल्यू० वोस्ट।
1903. रामगाम से कुशीनारा तक, लेखक, डब्ल्यू० वोस्ट।
1903. सेतव्या या टो-वा, लेखक, डब्ल्यू० वोस्ट।
1903. मालवा कहाँ पर स्थित था? लेखक, ए० एफ० आर० हार्नले।

1904. कौशाम्बी, लेखक, डब्ल्यू० वोस्ट एवं वी० ए० स्मिथ ।
1904. प्राचीन भारत का मध्यदेश, लेखक, टी० डब्ल्यू० रीज़ डेविड्स ।
1905. साकेत, शा-ची या पि-सो-किया, लेखक, डब्ल्यू० वोस्ट ।
1905. मो-ला-पो, लेखक, आर० बर्न ।
1906. गौडदेश, लेखक, वि० च० मजुमदार ।
1906. कपिलवस्तु, लेखक, डब्ल्यू० होय ।
1907. वेठद्वीप, लेखक, जी० ए० ग्रियर्सन ।
1907. भारतीय नगरों और देशों के आवास, लेखक, जे० एफ० फ्लीट ।
1908. श्रावस्ती, लेखक, जे० पी० एच० फोगल ।
1909. नालंदा का आधुनिक नाम, लेखक, टी० ब्लाख ।
1910. महिष्मण्डल और माहिष्मती, लेखक, जे० एफ० फ्लीट ।
1912. कम्बोज-जन, लेखक, ग्रियर्सन ।
1913. पेरिप्लस में उल्लिखित दक्षिण भारत के दो स्थानों के नामों का प्रस्तावित समीकरण, लेखक, डब्ल्यू० एच० शाफ ।
1916. 'पेरिप्लस ऑव द इरिथ्रियन सी' पर कुछ टिप्पणियाँ, लेखक जे० केनेडी ।
1917. ऋग्वेदिक नदियों के कुछ नाम, लेखक, एम० ए० स्टाइन ।

सर आरल स्टाइन ने ऋग्वेद की प्रसिद्ध नदी-स्तुति (X, 75) सूक्त में वर्णित नदियों के समीकरण का विवेचन किया है। उन्होंने मरुद्वृधा को मरुवर्दवान, अस्किनी को अन्ग और सुषोमा को सोहन से समीकृत किया है।

एफ० डब्ल्यू० टामस ने उद्यान और पतञ्जलि में उल्लिखित औरदायानी रूप से व्युत्पन्न उरदि आदि पर संक्षिप्त टिप्पणियाँ लिखी हैं (1918)। पार्जिटर ने 1918 में 'मगध और विदेह' लिखा है।

श्री एस० वी० वेंकटेश्वर ने अशोक के दूसरे शिलालेख में वर्णित सतियपुत्त को काञ्ची या कांजीवरम के रीतिबद्ध नाम सत्यव्रत क्षेत्र से समीकृत किया है (1918)। एस० कृष्णस्वामी आयंगर ने उक्त समीकरण का खंडन किया है और यह निष्कर्ष निकाला है कि ये सतियपुत्र पश्चिमी जन थे और पश्चिमी पहाड़ियों के समीप केरलों एवं राष्ट्रिकों के मध्य कहीं पर स्थित थे और यह संभव है कि सतपुते उनके आधुनिक प्रतिनिधि हैं। यदि ऐसा है तब क्या यह संभव नहीं कि वर्तमान मलाबार और कनाड़ा जिलों के तुलु एवं नायर जैसे विविध मातृ-प्रधान समुदायों का यह सामूहिक नाम रहा हो (1919)।

वि० स्मिथ ने यह स्वीकार किया है कि सतियपुत्रों को, कोयंबटूर के सत्य-

मंगलम तालुक से समीकृत किया जाना चाहिये जो पश्चिमी घाट में कुर्ग के समीपस्थ है (1918)।

सगर और हैहय, वशिष्ठ और और्व, लेखक एफ० ई० पार्जिटर। लेखक ने हैहयों, माहिषिकों, दार्वों, खसों, चूलिकों, शकों, यवनों, पर्लवों कम्बोजों, द्रुह्यु आदि की भौगोलिक स्थितियों का विवेचन किया है (1919)।

चीनी लेखकों के का-पि-लि देश का समीकरण, लेखक वी० स्मिथ (1920)।

दक्षिण भारत का एक अनभिज्ञात प्रदेश, लेखक के० वी० सुब्रह्मण्य अय्यर (1922)। इसमें महाभारत, विष्णु पुराण, भरत-नाट्यशास्त्र और खारवेल के अभिलेख तथा पश्चिमी चालुक्य-नरेश मंगलीश रणविक्रांत आदि के महाकूट स्तंभ लेख में वर्णित प्राचीन मूपक राज्य का समीकरण तुलु या दक्षिण कनाड़ा से केरल राज्य तक फैले हुये दक्कन के पश्चिमी तट पर स्थित इरामकुडम से किया गया है।

एस० कृष्णस्वामी आयंगर ने यह अस्वीकार किया है कि अशोक के समय में कोसर नामक कोई ऐसी जाति थी जो तुलु देश से इतनी घनिष्ठ रूप से संबंधित थी कि उनके नाम के आधार पर उस क्षेत्र का नामकरण हुआ होगा (1923)।

दयाराम साहनी द्वारा लिखित 'कौशाम्बी' (1927)। इसमें इलाहाबाद जिले में स्थित कोसम नामक गाँव से प्राचीन कौशाम्बी का समीकरण, जिसे सबसे पहले सर अलेक्जैंडर कनिंघम ने प्रस्तावित किया था, पूर्णतः सिद्ध किया गया है।

सीताराम द्वारा लिखित कौशाम्बी (1928)।

प्राचीन भारत के भूगोल पर दो टिप्पणियाँ, लेखक जे० पीएच० फोगल (1929)।

हथुर और अरुर, लेखक ज्वाला सहाय (1932)। लुधियाना के निकट हथुर जैनख्याति वाले अर्हतपुर से और हथुर के निकट अरुर अहिच्छत्र से समीकृत किया गया है।

इंडियन ऐंटिक्वेरी

पौण्ड्रवर्धन पर नोट, लेखक, ई० वी० वेस्टमैकाट (1874)। भारत में इब्न-बतूता की यात्राओं का भूगोल, लेखक कर्नल एच० युले (1874)।

भारत के संस्कृत भूगोल में वर्णित स्थानों के समीकरण के विषय में, लेखक, जे० बेर्गस (1885)।

बृहत्संहिता की भौगोलिक सूची, लेखक, जे० एफ० फ्लीट (1893)।

भागवत पुराण की भौगोलिक सूची, लेखक, जे० ई० अब्बाट (1899)।

नासिक-गुहालेखों में वर्णित चार गाँव, लेखक, वाइ० आर० गुप्ते (1912)।

कोंल्लिपक, लेखक, लेविस राइस (1915)।

इसिपतन मिगिदाय (सारनाथ) विषयक कुछ साहित्यिक संदर्भ, लेखक, बि० च० भट्टाचार्य (1916)।

नासिक-गुहालेख में वर्णित गौतमी पुत्र के साम्राज्य का विस्तार, लेखक, दे० रा० भंडारकर (1918)।

भारत के प्राचीन भूगोल के अध्ययन के लिए अवदान, लेखक, एस० एन० मजुमदार (1919 और 1921)।

सातवाहन-युगीन दक्कन, लेखक दे० रा० भंडारकर (1920)।

गंगा का प्राचीन प्रवाह, लेखक, नंदलाल दे (1921)।

कार्तवीर्य की माहिष्मती, मुंशी कन्हैयालाल, (1922)।

भारत के कुछ स्थानों की भौगोलिक स्थिति, लेखक, वाई० एम० काले (1923)।

काठियावाड़ और गुजरात के उल्लेखनीय प्राचीन नगरों एवं उपनगरों का इतिहास, लेखक, ए० एस० अल्तेकर (1924)।

त्रिलिंग और कुलिंग, लेखक, जी० रामदास (1925)।

नहपान की राजधानी, लेखक वी० एस० बाखले (1926)।

कालिदास के मेघदूत में वर्णित देवगिरि पर्वत का एक संभव समीकरण, लेखक, ए० एस० भंडारकर (1928)।

समतट के पूर्व, लेखक, एन० एन० दास गुप्ता (1932)।

पंजाब और सिंध की नदियों का प्रवाह, लेखक आर० बी० ह्वाइटहेड, (1932)।

मंदार पहाड़ी, लेखक, आर० बोस, (जिल्द, I)।

अजंता की गुफाओं का स्थापत्य एवं भित्तिचित्र, जिल्द I, II, III, XXII, XXXII, XL)।

नीलगिरि (जिल्द, II तथा IV)।

रामगढ़ पहाड़ी (जिल्द, II और XXXIV)।

कुम्भकोणम (जिल्द III)।

खानदेश (जिल्द, IV)।

चम्पा का विवरण (जिल्द, VI)।

नेपाल (जिल्द XIII, XIX, XXII)।

टालेमी के भूगोल पर एक टिप्पणी, लेखक, वी० बाल, (जिल्द XIV)।

नंदिकेश्वर का समीकरण (जिल्द XIX)।

कांग-किन-ना-पु-लो का कर्नूल से प्रस्तावित समीकरण (जिल्द, XXIII)।

मंदसार का पुरातत्त्वीय वैभव (जिल्द, XXXVII)।

रामटेक, जिला नागपुर (जिल्द, XXXVII)।

मालवा की बौद्ध गुफाएँ (जिल्द, XXXIX)।

वत्सभट्टि की मंदसोर-प्रशस्ति (जिल्द, XLII)।

प्राचीन ताम्रपत्रों में उल्लिखित नासिक जिले के कुछ स्थानों पर एक टिप्पणी, लेखक, वाई० आर० गुप्ते (जिल्द, XLII)।

चंद्र की बंगाल विजय, लेखक, रा० गो० बसाक (जिल्द, XLVIII)।

भारत के प्राचीन भूगोल के अध्ययन के लिए अवदान, लेखक एस० के० भूयन, (जिल्द XLIX)।

एशियाटिक रिसर्चेज

—एलोरा की निकटस्थ गुहाओं का विवरण, लेखक, सी० मैलेट (जिल्द I)।

—तगर नगर पर टिप्पणियाँ, लेखक, लेफ्टिनेंट एफ० विलफोर्ड (जिल्द I)।

—एलीफैंटा द्वीप में स्थित कुछ गुफाओं के विवरण, लेखक, जे० गोल्डिंघम (जिल्द IV)।

—बंगाल से गंगा के प्रवाह के विषय में, लेखक, मेजर आर० एच० कोलब्रुक (जिल्द VII)।

—हिमालय के प्रमुख शिखर, लेखक, जे० हाग्सन और जे० डी० हर्बर्ट (भाग XIV)।

—असम का भूगोल, लेखक जे० बी० न्यूफविले (जिल्द XVI)।

जर्नल ऑव द एशियाटिक सोसाइटी ऑव बंगाल

—तिब्बत का भौगोलिक पर्यवेक्षण, लेखक, सासा दी कोरोस (ज० ए० सो० बं०, जिल्द I)।

—सहारनपुर के समीप वेहुत से प्राप्त प्राचीन नगर के अवशेषों का अतिरिक्त विवरण, लेखक, कैप्टन पी० टी० काटले, जिल्द III.

—बिहार के राजगृह नामक नगर का वर्णन, लेफ्टिनेंट टी० रेन्नी, जिल्द III.

—संध्याकर नंदी के रामचरित के द्वितीय अध्याय के प्रारंभ में वर्णित राम-पाल के सामंतों एवं मित्रों द्वारा प्रशासित स्थानों के नामों का हर प्रसाद शास्त्री

द्वारा किया गया समीकरण (जिल्द III) उल्लेखनीय है। रा० दा० बनर्जी द्वारा भी उक्त स्थानों का समीकरण किया गया है (जिल्द IV)।

—पटना के 13 कोस और सिंधिया के 6 कोस उत्तर में प्राचीन नगर बाखरा नामक स्थान एवं उसके अवशेषों की यात्रा, लेखक, जे० स्टीफेंसन (जिल्द IV)।

—उपरोक्त पर टिप्पणी, जेम्स प्रिंसेप (जिल्द IV)।

—महाबलिपुरम् या सामान्यतया सातपगोडा के नाम से विख्यात वास्तु-चित्रों के कुछ विवरण, ले०, जे० गोल्डिंघम (जिल्द V)।

—ओजीन या उज्जयिनी की प्राचीन एवं वर्तमान दशाओं का अवलोकन, लेखक, ले० एडवर्ड कोनोल्ली, (जिल्द VI)।

—नर्मदा नदी का प्रवाह, लेखक ले० कर्नल ओसीले (जिल्द XIV)।

—बिहार के विहारों एवं चैत्यों पर टिप्पणी, (जिल्द XVI)।

—भारत के प्राचीन भूगोल पर एक तुलनात्मक निबंध, लेखक, कर्नल एफ० विलफोर्ड (जिल्द XX)।

—राजमहल पहाड़ियाँ, लेखक, डब्ल्यू० एस० शेरविल (जिल्द XX)।

—उड़ीसा के जेपुर के पुरातत्त्वीय वैभव का विवरण, लेखक, सी० एस० बनर्जी, (जिल्द XL)।

—स्वतंत्र सिक्किम, लेखक, डब्ल्यू० टी० ब्लाफोर्ड (जिल्द XL)।

—बंगाल के इतिहास और भूगोल के प्रति अवदान, लेखक, सी० जे० ओ' डोनेल (जिल्द XLIV)।

—कैमूर पर्वतमाला, लेखक सी० एस० बनर्जी, (जिल्द XLVI)।

—देवघर के मंदिरों के विषय में, ले०, डॉ० राजेन्द्र लाल मित्र, (जिल्द LII)।

—गया का पुरातत्त्वीय वैभव, ले०, टी० एफ० पेप्पे और सी० हार्ने, ज० ए० सो० बं० (1865)।

—बैराट, अजमेर, ग्वालियर, खजुराहो और महोबा का पुरातत्त्वीय वैभव, ले०, मेजर जनरल, ए० कनिंघम (1865)।

—कश्मीर के कुछ मंदिरों पर टिप्पणी, ले०, बिशप काटन (1865)।

—नर्मदा पर स्थित माहिष्मती या महेश्वर (महेसर) पर नोट और युवान च्वाङ् के महेश्वरपुर का समीकरण, ले०, पी० एन० बोस (1873)।

—पूर्व बंगाल के सुनारगाँव पर टिप्पणी, ले०, जेम्स वाइज़ (1874)।

—बलूचिस्तान के प्राचीन आवास और मकबरे, ले०, कैप्टन ई० माकलर (1876)।

—बगुरा (बोगरा) का पुरातत्वीय वैभव, ले०, एच० बेवेरीज़ (1878)।

—पूर्वी भारत के प्राचीन देश, ले०, एफ० ई० पार्जिटर (1897)।

—सारन जिले के चिराँद पर नोट, ले० नंदलाल दे (1903)।

—हुगली जिले या प्राचीन राढ़ के इतिहास पर टिप्पणियाँ, ले० नंदलाल दे (1910)।

—पूर्व बंगाल का एक विस्मृत राज्य, ले०, एन० के० भट्टसालि (1914)।

—प्राचीन अंग या भागलपुर जिले पर टिप्पणियाँ, ले०, नंदलाल दे (1914)।

—पालि साहित्य में अंग और चंपा, ले०, बि० च० लाहा, (1915)।

जर्नल ऑव द बांबे ब्रांच ऑव रॉयल एशियाटिक सोसाइटी

—महाबलेश्वर के मंदिर पर टिप्पणियाँ, ले०, वी० एन० मांडलिक (1871-74)।

—चौल के पुरातत्त्व के इतिहास पर टिप्पणियाँ, ले०, जे० गेरसन डा कुन्हा (1876)।

—गिरनार-अभिलेखों की सुदर्शन झील (ई० पू० 300-450 ई०), ले०, आर्देसीर जमशेद जी (1890)।

—बेसनगर, ले०, एच० एच० लेक, (1914)।

—प्राचीन पाटलिपुत्र, ले०, जे० जे० मोदी, (1916-17)।

—पूना जिले का पुरातत्त्व-वैभव, ले०, दे० रा० भंडारकर (1930)।

जर्नल ऑव द बिहार ऐंड उड़ीसा रिसर्च सोसायटी

—महाभारत का मगधपुर, ले०, सर जार्ज ग्रियर्सन, (जिल्द, II)।

—बुद्ध और उनके शिष्य से संबद्ध राजगिरि के स्थल, ले०, डी० एन० सेन, (जिल्द, III)।

—दक्षिण-बिहार में युवान-च्वाङ् का पथ, बुद्धवन पर्वत का समीकरण और कुक्कुटपादगिरि के अति संभावित स्थान पर विवाद, ले०, वी० एच० जैक्सन, (जिल्द, IV)।

—कंगोद देश पर टिप्पणी, ले० विनायक मिश्र (जिल्द, XII)।

—स्कंदगुप्त का अजपुर और बिहार के निकटस्थ क्षेत्र, ले०, पी० सी० चौधरी (जिल्द, XIX)।

इंडियन हिस्टॉरिकल क्वार्टर्ली

—राढ़ या प्राचीन गंगाराष्ट्र, ले० नं० ला० दे।

—वाल्मीकि-रामायण में दो कोशलों का उल्लेख, ले०, एल० पी० पांडेय शर्मा (जिल्द III)।

—प्राचीन भारतीय भूगोल का अध्ययन, ले०, एच० सी० राय चौधरी, (जिल्द, IV)।

—प्राचीन भूगोल का एक अध्ययन, ले०, एच० वी० त्रिवेदी (जिल्द IV)।

—पूर्वी भारत और आर्यावर्त, ले०, ह० च० चक्लादार (जिल्द IV)।

—टालेमी द्वारा वर्णित करूरा, ले०, के० वी० कृष्ण अय्यर (जिल्द, V)।

—ब्रह्मोत्तर का समीकरण, ले०, के० एम० गुप्ता (जिल्द VIII)।

—प्राचीन राढ़ के कुछ जनपद, ले०, पी० सी० सेन (जिल्द VIII)।

—उदयपुर नगर, ले०, दि० च० सरकार (जिल्द IX)।

—पुण्ड्रवर्द्धन का स्थल, ले०, पी० सी० सेन (जिल्द IX)।

—उड्डीयन और साहोर, ले०, एन० एन० दास गुप्त, (जिल्द XI)।

इंडियन कल्चर

—वंग, ले०, बि० च० लाहा (जिल्द I, सं० 1)।

—कौटिल्य का भूगोल, ले०, हरिहर वि० त्रिवेदी (जिल्द I सं० 2)।

—प्राचीन भारत के जनों पर कुछ टिप्पणियाँ, ले०, बि० च० लाहा (जिल्द I सं० 2)।

—प्राचीन भारतीय अभिलेखों में यवन, ले०, ओ० स्टाइन (जिल्द, I, सं० 3)।

—कुछ प्राचीन भारतीय कबीले, ले०, बि० च० लाहा (जिल्द, I, सं० 3)।

—कौशिका और कुशियारा, ले०, के० एल० बरुआ (जिल्द I, सं० 3)।

—कोशल, ले०, बि० च० लाहा (जिल्द, I, सं० 3)।

—रामायण से संकलित दक्कन एवं दक्षिण भारत की भौगोलिक सामग्री, ले०, वा० रा० रामचंद्र दीक्षितार (जिल्द, I, सं० 4)।

—सतियपुत का समीकरण, ले०, बी० ए० सालेतोर, (जिल्द, I, सं० 4)।

—चंद्रद्वीप, ले०, एन० एन० दास गुप्ता, (जिल्द, II, सं० 1)।

—शकों पर टिप्पणियाँ, ले०, स्टेनकोनो, (जिल्द, II, सं० 2)।

क्वार्टर्ली जर्नल ऑव द आंध्र रिसर्च सोसाइटी

—लाढ़ों के अगम्य देश, ले०, बी० सिंहदेव (जिल्द, II)।

—तोसली और तोसल, ले०, बी० सिंहदेव (जिल्द, III)।

—हिप्पोकौरा और सातकर्णि, ले०, ज्यॉं प्रेज्लुस्की, (जिल्द, IV)।

—बृहत्फलायनों की राजधानी, ले०, दि० च० सरकार, (जिल्द, VII)।

क्वार्टर्ली जर्नल ऑव द मिथिक सोसाइटी

—पुराणों के सप्त-द्वीप, ले०, वी० वेंकटचेल्लम अय्यर, जिल्द (XVI और XVII)।

—शृंगेरी मठ, ले०, के० रामवर्मा राजा (जिल्द, XVI)।

—यूनानी लेखकों के सोपत्मा और फूरिशन का समीकरण, ले०, एस० सोमसुन्दर देसिकर, (जिल्द, XXI)।

सीलोन हिस्टॉरिकल रिव्यू

—पालि आख्यानों का भौगोलिक पक्ष, ले०, बि० च० लाहा।

I

उत्तरी भारत

अबैस्टेनोई (Abastanoi)—अबैस्टेनोई संस्कृत अम्बष्ठों का वाचक है जो डायोडोरस के सैंबेस्टाई (Sambastai), कर्टियस के सेबेरकाइ (Sabarcae) और ओरोसियस के सबग्राइ का (Sabagrae) समानार्थक है। सिकंदर के काल में वे अवर-अकेसिनीज (अस्किन्नी) प्रदेश में रहते थे तथा उनकी शासन-प्रणाली गणतंत्रात्मक थी। सिकंदर ने उन्हें पराजित किया था (मैक्रिंडिल, इनवेजन ऑव इंडिया, पृ० 292 और आगे; लाहा, इंडोलॉजिकल स्टडीज़ I, 31 और आगे)।

अचिरावती—अचिरावती नदी अजिरवती या ऐरावती नाम से भी विख्यात थी।[1] चीनी तीर्थयात्री युवान-च्वाङ् ने इसे अ-चि-लो नाम से पुकारा है जो श्रावस्ती नगर से दक्षिण-पूर्व की ओर बहती थी।[2] इत्सिंग के अनुसार अजिरवती का तात्पर्य अजि (Dragon) नदी से है।[3] जैन ग्रंथों में इसको एरावै कहा गया है।[4] इसे गोरखपुर मंडल की आधुनिक राप्ती नदी से समीकृत किया गया है जिसके पश्चिमी तट पर कोसल की तृतीय या अंतिम राजधानी श्रावस्ती[5] का प्राचीन नगर स्थित था। यदि राप्ती के दाहिने तट पर स्थित आधुनिक सहेठ-महेठ श्रावस्ती है, तब यह ध्रुव है कि बौद्ध ख्याति की अचिरावती आधुनिक राप्ती के अतिरिक्त और कुछ नहीं है। दशकुमारचरितम् का लेखक किसी नदी के तट पर स्थित इस नगर से परिचित था, जो अनुमानतः अचिरावती या राप्ती हो सकती है। हमारे इस लेखक ने दुर्भाग्य से उक्त नदी का नाम नहीं बतलाया है।[6]

अचिरावती सरयू की एक सहायक नदी है, जो हिमालय पर्वतमाला से निक-

---

[1] अवदानशतक, I, 63; II, 60; पाणिनि की अष्टाध्यायी, IV, 3. 119.

[2] वाटर्स, ऑन युवान-च्वाङ्, I, 398-99.

[3] ट्रेवेल्स, पृ० 156.

[4] कल्पसूत्र, पृ० 12; बृहत्कल्पसूत्र, 4, 33.

[5] इसे आधुनिक सहेठ-महेठ से समीकृत किया गया है।

[6] वेबर, उबेर दास दशकुमारचरितम् इन इंडिशे स्ट्रीफेन, बर्लिन 1868.

लती है। पालि-भाष्यों में अनोतत्त झील से गंगा, यमुना, अचिरावती, सरयू और मही नामक पाँच नदियों के उद्गम का एक विशद् विवरण प्राप्त होता है।[1] सुत्त-निपात के भाष्य में किन्हीं पाँच सौ नदियों का वर्णन प्राप्त होता है।[2] मिलिन्दपञ्हो[3] के अनुसार उनमें से केवल दस उल्लेखनीय हैं। इन दस नदियों[4] में से अचिरावती उन पाँच बड़ी नदियों[5] में से एक थी, जो गंगा-नदी समूह में संमिलित थी और शेष अन्य नदियाँ सिन्धु-समूह में थीं। अचिरावती बौद्ध-मध्यदेश की एक पवित्र नदी थी।[6] समुद्र में गिरने के समय इसका पुराना नाम समाप्त हो जाता था और इसे समुद्र ही कहा जाता था।[7] संयुक्त-निकाय[8] के अनुसार अचिरावती गंगा, यमुना, सरयू और मही सहित पूर्व की ओर बहती, कटाव करती और अग्रसर होती थी। यह एक गहरी नदी थी क्योंकि इसका जल अगाध था।[9]

बुद्ध अचिरावती के तट पर अनेक संभ्रांत एवं प्रतिष्ठित ब्राह्मणों द्वारा निवसित मनसाकट गाँव के उत्तर में स्थित कोशल के उक्त ब्राह्मण गाँव के एक आम्रवन में रुके थे।[10] इस नदी के तट पर अंजीर के वृक्षों का एक बाग था।[11] श्रावस्ती की सुतनु नामक एक छोटी सरिता, जहाँ बुद्ध के शिष्य अनुरुद्ध गये थे, निश्चय ही इसमें गिरती थी।[12]

अचिरावती नदी बहराइच, गोंडा और बस्ती जिलों से हो कर बहती है और

---

[1] पपंचसूदनी, सिंहली संस्करण, II, 586; मनोरथपूरणी, सिंहली संस्करण II, 759-60; सुत्तनिपात कामेंट्री, पा० टे० सो० 437-439.

[2] परमात्थजोतिका, II, 437.

[3] ट्रेंक्नर द्वारा संपादित, पृ० 110.

[4] मार्कण्डेयपुराण, 57, 16-18.

[5] पंचमहानदियो।

[6] विनय, II, पृ० 239; विसुद्धिमग्ग, I, पृ० 10.

[7] विनय, II, पृ० 239; अंगुत्तर, V, पृ० 22; वही, IV, 198-199, 202-गंगा यमुना अचिरवती सरभू मही ता महासमुदमपत्ता जहन्ति पुरिमानि नामगोत्तानि महासमुद्दो त्वेव संखम गच्छन्ति।

[8] II, 135; तु० संयुक्त, V, 39, 134.

[9] न सुकरम उदकस्स पमाणम गणेतुं—संयुत्त० V, 401.

[10] दीघ० I, 235 और आगे।

[11] सुत्तनिपात कामेंट्री, I, पृ० 19.

[12] संयुत्त०, V, 297.

गोरखपुर जिले में बरहज के पश्चिम में सरयू या घर्घरा (घाघरा) में मिलती है। चीनी तीर्थयात्री युवान च्वाङ् के अनुसार यह श्रावस्ती से गुजरती हुयी दक्षिण-पूर्व की ओर बहती है।[1] गोरखपुर जिले में बाँईं ओर से तीन उपनदियाँ तथा दाँईं ओर से एक छोटी सी सरिता इसे आपूरित करती है। ग्रीष्म ऋतु में बालुकामय नदी-तल छोड़ कर यह सूख जाती है।[2] श्रावस्ती के दो वैरागी इस नदी के तट पर आये थे। स्नानोपरांत वे बालू में खड़े हो कर धूप-सेवन कर रहे थे और परस्पर आनंदपूर्वक वार्तालाप कर रहे थे।[3] यह नदी छोटी तरणियों के माध्यम से पार की जाती थी।[4] तट पर स्थित गेहूँ के खेतों को यह सींचती थी।[5] श्रावस्ती-निवासी एक ब्राह्मण ने इसके तटवर्ती वृक्षों को उस भूमि को जोतने के लिए काट डाला था। इस पर फसल हुयी थी, किंतु बाढ़ ने सारी फसल को समुद्र में बहा दिया।[6] थेर आनंद कुछ भिक्षुओं के साथ इस नदी में स्नान करने के लिए आये थे। स्नानोपरांत अपना शरीर सुखाने के लिए वह एकवसन हो कर खड़े रहे।[7] श्रावस्ती के एक गृहस्थ ने जो संन्यासी हो गया था, अचिरवती नदी तक जा कर स्नान किया और वहाँ पर उसने दो कलहंसों को उड़ते हुए देखा।[8] पांडुपुर के एक मछवाहे ने श्रावस्ती जाते समय इस नदी के तट पर कुछ कच्छप-अंडों को देखा था।[9] चव्वग्गिय भिक्षु लोग इस नदी को पार करती हुयी गायों की सींग, कान गर्दन या पूँछ पकड़ते थे या उनकी पीठ पर चढ़ जाते थे।[10] इस नदी-तट के निवासी जाल

---

[1] वाटर्स, ऑन युवान च्वाङ्, I, 398-99.

[2] अंगुत्तर, IV, 101.

[3] जातक, II, 366, अचिरवतीम् गन्त्वा नहात्वा वालिकापुलिने आतपं तप्पमाना सारणीयकथम कथेन्ता अट्ठंसु।

[4] विनय, III, 63.

[5] सुत्तनिपात कामेंट्री, पा० टे० सो०, पृ० 511—अचिरवतीनदीतीरे थवं वपिस्सामीति खेत्तं कसति।

[6] जातक, IV, पृ० 167, सब्बम सस्सम समुद्द पवेसेसि।

[7] अंगुत्तर, III, पृ० 402.

[8] जातक, I, पृ० 418.

[9] धम्मपद कामेंट्री III, 449.

[10] विनय, I, पृ० 190-191 चव्वग्गिया भिक्खु अचिरवतीया नदिया गावीनम तरन्तीनम विसानेसु पि गण्हन्ति, कण्णेसुपि गण्हन्ति, गीवायपि गण्हन्ति, चेप्पायपि गण्हन्ति, पिठ्ठिमपि अभिरुहन्ति।

फेंक कर मछली पकड़ने में अभ्यस्त थे।[1] प्राचीन बौद्ध ग्रंथों में पशुओं द्वारा इस नदी को तैर कर पार करने के उल्लेख प्राप्त होते हैं।[2]

बुद्ध के सारिपुत्त नामक एक प्रसिद्ध शिष्य ने इस नदी में स्नान किया था।[3] आम्र-कुंज में प्रवेश करने के पूर्व एक धनी व्यापारी की चार पुत्रियों ने भी इस नदी में स्नान किया था।[4] नग्न वेश्याओं के साथ-साथ इस नदी में भिक्षुणियाँ भी स्नान करती थीं।[5]

कोई एक देहाती भिक्षु अचिरावती में स्थित तरणी के समीप आया और उसने नाविक से उसकी तरणी के सहारे इस नदी को पार करने की अपनी इच्छा व्यक्त की। नाविक ने उससे प्रतीक्षा करने को कहा, परंतु उसने अस्वीकार कर दिया। अंत में उसने उसे अपनी नाव में बैठाया। खराब पतवारों के कारण उसके वस्त्र भींग गये और दूसरे तट पर पहुँचने के पहले ही रात हो गयी।[6] कोसल-नरेश पसेनदि के राज-प्रासाद के चबूतरे से यह नदी दिखलायी पड़ती थी।[7] इस नदी के तट पर आनेवाले पाँच सौ युवक वहीं पर कुश्ती लड़ा करते थे।[8] पसेनदि के पुत्र विडूडभ की मुठभेड़ शाक्यों से इस नदी के तट पर हुई थी और उसने उनका पूर्ण उन्मूलन किया था।[9] कभी-कभी यह नदी इतनी अधिक बढ़ जाती थी कि इसमें भयंकर बाढ़ें आ जाती थीं, जिसमें कभी अपनी सेना सहित विडूडभ समुद्र में बह गया था।[10] श्रावस्ती के महाश्रेष्ठि अनाथपिण्डिक की इस नदी के तट पर सिंचित अठारह करोड़ की धनराशि इसकी सत्यानाशी बाढ़ में बह कर नष्ट हो गयी थी।[11] एक व्यापारी का कोष इस नदी के तट पर गड़ा हुआ था। इस नदी

---

[1] उदान कामेंट्री, पृ० 366.

[2] विनय, I, 191.

[3] अंगु० कामेंट्री, सिंहली संस्करण, पृ० 315.

[4] जातक, III, पृ० 137.

[5] विनय, I, 293—इधभन्ते भिक्खुणियो अचिरवतीया नदिया वेसियाहि सधिम नग्गा एकात्तित्थे नहायन्ति।

[6] जातक, III, 228.

[7] विनय, IV, 111-112.

[8] जातक, II, पृ० 96.

[9] धम्मपद कामेंट्री, I, 359-60.

[10] दीघ, I, 244-245; जातक, IV, 167; धम्मपद कामेंट्री I, 360.

[11] धम्मपद कामेंट्री, III, पृ० 10—अट्ठारसकोटि-धनम।

का कगार कट जाने पर उसका कोप समुद्र में बह गया।[1]

अद्रैस्टि देश (Adraisti) —यह हाइड्राओटीज (रावी) (Hydraotis) के पूर्वी तट पर स्थित था। इनकी राजधानी पिम्प्रामा थी। महाभारत के द्रोण-पर्व (अध्याय 159, 5) में वर्णित अद्रिजगण यूनानियों के अद्रैस्टि से समीकृत माने गये हैं। कहा जाता है कि अद्रैस्टि या अधृष्ट-गण सिकंदर की सेना से पराजित हुए थे (कैंब्रिज हिस्ट्री ऑव इंडिया, I, 371 और पाद टिप्पणी, 2; बि० च० लाहा, इंडोलॉजिकल स्टडीज, I, पृ०, 21-22)।

अगरु (Agaru)—चन्द्रकान्त एवं सूर्यकान्त पर्वतों के मध्य कुरु-देश में स्थित यह एक वन है (वायु, 45, 31)।

अग्रोहा—यह हिस्सार से फतेहाबाद जाने वाली पक्की सड़क पर, हिस्सार से 14 मील दूर पर स्थित है। इसका उल्लेख संभवतः टालेमी ने किया था और उसने इसे अगर (Agara) कहा है। यहाँ पर किये गये उत्खनन से मुद्राएँ, मनके, भग्न वास्तु एवं मृण्प्रतिमाएँ प्राप्त हुयी हैं। (बिस्तृत विवरण के लिए द्रष्टव्य, एक्सकेवेशंस ऐट अग्रोहा, पंजाब, लेखक, एच० एल० श्रीवास्तव, मे० आ० स० इं०, संख्या 61)।

अहिच्छत्र—यह उत्तर पञ्चाल की राजधानी थी (महाभारत, आदिपर्व, अध्याय 140; तु० रैप्सन, पृ० 167)। भागीरथी नदी उत्तर एंव दक्षिण पञ्चाल के मध्य विभाजक-रेखा थी। वैदिक ग्रंथों में इस देश का एक पूर्वी एवं पश्चिमी भाग बताया गया है (वैदिक इंडेक्स, I, 469)। पतञ्जलि ने अपने महा-भाष्य (कीलहार्न संस्करण, II, पृ० 233) में इसका उल्लेख किया है। योगिनी तंत्र (2/4, पृ० 128-29) में इसका वर्णन आता है। दिव्यावदान के अनुसार (पृ० 435), उत्तरपञ्चाल की राजधानी हस्तिनापुर थी, किंतु कुंभकार जातक में (कावेल, जातक, III, 230) कम्पिल्लनगर को इसकी राजधानी बतलाया गया है।

पञ्चाल मूलतः दिल्ली के उत्तर-पश्चिम में हिमालय की तराई से चंबल नदी के मध्य का प्रदेश था, (तु० कनिंघम, एं० ज्यॉ० इं०, पृ० 413, 1924 संस्करण)। दक्षिण पञ्चाल की राजधानी काम्पिल्य थी[2] (महाभारत, 138, 73-74) जिसे उत्तरप्रदेश के फर्रुखाबाद जिले में स्थित आधुनिक कंपिल से समीकृत किया जाता

---

[1] **जातक, I, 230—अचिरवतीनदीतीरे निहितधनम नदीकुले भिन्ने समुद्दम पविट्ठम अठ्ठि।**

[2] **बि० च० लाहा वाल्यूम, जिल्द, II, 1946, पृ० 239-42.**

है। उदाककालीन (?) पभोसा गुहा-लेख में, बहसतिमित्र यहाँ का राजा बतलाया गया है, जिसकी मुद्राएँ रामनगर (उत्तरप्रदेश के बरेली जिले में स्थित पञ्चाल की राजधानी प्राचीन अहिच्छत्र) और कोसम (उत्तरप्रदेश के इलाहाबाद जिले में स्थित वत्सों की राजधानी प्राचीन कौशाम्बी) से प्राप्त हुयी है। इसी अभिलेख से हमें ज्ञात होता है कि अहिच्छत्र पर सौनकायनि राज्य करता था। समुद्रगुप्त के प्रयाग-स्तंभ लेख में अच्युत नामक एक शक्तिशाली राजा का उल्लेख है, जिसकी मुद्राएँ अहिच्छत्र (उत्तरप्रदेश के बरेली जिले में स्थित आधुनिक रामनगर) से प्राप्त हुयी हैं। 7 वीं शताब्दी ई० में भी, जब युवान-च्वाङ् यहाँ आया था, यह एक उल्लेखनीय नगर था।[1] चीनी तीर्थयात्री के अनुसार, इस देश की परिधि, 3,000, ली से भी अधिक थी और इसकी राजधानी की परिधि 17 या 18 ली थी। इस देश में अन्न उपजता था, अनेक जंगल एवं स्रोत थे तथा स्वास्थ्यवर्द्धक जलवायु थी। यहाँ के निवासी ईमानदार और ज्ञानार्जन के लिए अध्यवसायी थे। यहाँ पर दस से अधिक बौद्ध बिहार थे। यहाँ पर नौ देवमंदिर (वाटर्स, ऑन युवान च्वाङ्, 331) कनिंघम के अनुसार अहिच्छत्र का इतिहास 1430 ई० तक प्राप्त होता है।

इसका नाम अहिक्षेत्र या अहिच्छत्र लिखा जाता है। अहिच्छत्र इसका वास्तविक नाम प्रतीत होता है।[2] अहिच्छत्र का प्राचीन नाम अधिछत्र था (जो ल्यूडर्स की ब्राह्मी अभिलेखों की सूची की अनुक्रमणिका के एक अभिलेख में अब भी सुरक्षित है) जो टालेमी के यूनानी अदिसद्र (Adisadra) के अधिक समीप है (मैक्रिंडिल, ऐंश्येंट इंडिया ऐज़ डिस्क्राइब्ड बाई टालेमी, पृ० 133)। इसे छत्रवती भी कहा जाता था (महाभारत, आदिपर्व, अध्याय 168)। आषाढसेन के पभोसा गुहा-लेख में, जो लगभग ईसवी सन् के प्रारंभ का है, अधिछत्र नाम प्राप्त होता है (एपिग्रेफिया इंडिका, II, पृ० 432; ल्यूडर्स की तालिका, संख्या 90 एवं 905; गौतमी मित्र का अभिलेख, न० गो० मजुमदार, इं० हि० क्वा०)। अर्जुन ने युद्ध में द्रुपद को पराजित करने के पश्चात् अहिच्छत्र और काम्पिल्य नगरों को द्रोण को दे दिया था। दोनों नगरों को स्वीकार करके विजेताओं में श्रेष्ठ द्रोण ने काम्पिल्य को पुनः द्रुपद को वापस लौटा दिया था (हरिवंश, अध्याय, XX, 74-75)। विविधतीर्थकल्प (पृ० 14) के अनुसार इसका प्राचीन नाम संख्यावती था। पार्श्वनाथ

---

[1] स्मिथ, अर्ली हिस्ट्री ऑव इंडिया, चतुर्थ संस्करण, पृ० 391-392.

[2] कनिंघम, ऐंश्येंट ज्यॉग्रेफी ऑव इंडिया, एन० एन० मजुमदार संस्करण पृ० 412.

इस नगर में परिभ्रमण करते थे। पार्श्वनाथ के शत्रु कण्ठासुर ने संपूर्ण पृथ्वी को आप्लावित करने वाली अबाध वर्षा करायी थी। पार्श्वनाथ आकंठ जल में डूब गये थे। उनकी रक्षा करने के लिए स्थानीय नागराज अपनी पत्नियों के साथ वहाँ गये, उनके सिर पर अपना सहस्र-फन फैलाया और उनके शरीर के चारों ओर कुंडली मारकर लपेट लिया। इसीलिए इस नगर का नाम अहिच्छत्र पड़ा।

आधुनिक काल में, सबसे पहले कैप्टन हाग्सन अहिच्छत्र पहुँचे थे, जिन्होंने इसको कई मीलों तक फैले हुये किसी प्राचीन दुर्ग का भग्नावशेष बतलाया है, जिसमें संभवत: 34 अट्टालक थे और जिसे पाण्डु दुर्ग कहा जाता था (मैक्रिंडिल, ऐंश्येंट इंडिया ऐज़ डिस्क्राइब्ड बाई टालेमी, पृ० 134)। इस स्थान के समीकरण के लिए, एपिग्रेफिया इंडिका, XXVI, भाग 2, अप्रैल 1941, पृ० 90 द्रष्टव्य है। विस्तृत विवरण के लिए देखिये बि० च० लाहा द्वारा लिखित, पंचालाज ऐंड देयर कैपिटल अहिच्छत्र, मे० आ० स० इं०, संख्या 67; आर्क० स० इं०, रिपोर्ट, I, पृ० 255 और आगे; प्रोग्रेस रिपोर्ट ऑव द एपिग्रेफिकल ऐंड आर्किटेक्चुरल ब्रांचेज ऑव नार्थ-वेस्टर्न प्राविंसेज़ ऐंड अवध, 1891-92, और आगे; बि० च० लाहा, सम जैन कैनानिकल सूत्राज़, 169-70; बि० च० लाहा, ट्राइब्स इन ऐंश्येंट इंडिया, पृ० 34; बील, बुद्धिस्ट रिकार्डस् ऑव द वेस्टर्न वर्ल्ड, I, पृ० 200-201; मैक्रिंडिल, ऐंश्येंट इंडिया ऐज डिस्क्राइब्ड बाई टालेमी, पृ० 134.

अजयगढ़—इसका समीकरण उत्तर प्रदेश के बाँदा जिले से किया जाता है (इंस्क्रिप्शंस ऑव नार्दर्न इंडिया रिवाइज्ड बाइ दे० रा० भंडारकर, सं० 408, V, 1243.

अजुधन—यह प्राचीन नगर पुरानी सतलज नदी के तट पर देपालपुर के 28 मील दक्षिण पश्चिम में और उक्त नदी के वर्तमान प्रवाह से 10 मील दूर स्थित है (कनिंघम, एं० ज्यॉ० इं०, 1924, पृ० 245)।

अलकनंदा—यह गढ़वाल हिमालय में गंगा का ऊपरी प्रवाह है। यह गन्धमादन पर्वत से निकलती है (भागवतपुराण, IV, 6, 24; ब्रह्माण्डपुराण, III, 41, 21; 56, 12; विष्णुपुराण, II, 2, 34, 36; वायुपुराण, 41, 18; 42, 25-35)। यह गंगा के ऊपरी प्रवाह को द्योतित करता है। पिंडा एवं एक अन्य नदी इसकी ऊपरी सहायक नदियाँ हैं, जिनके संगम पर गढ़वाल में श्रीनगर स्थित है। इसकी एक सहायक नदी मंदाकिनी है जिसे काली गंगा या मंदाग्नी से समीकृत किया जा सकता है, जो गढ़वाल में केदार पर्वत से निकलती है। देवप्रयाग में अलकनन्दा, भागीरथी-गंगा में बाँई ओर से मिली है (बि० च० लाहा, रिवर्स ऑव इंडिया, पृ० 19)। जहाँ पर मंदाकिनी गंगा में मिलती है, वहाँ से इसका नाम गंगा-भागीरथी

पड़ जाता है (लाहा, रिवर्स ऑव इंडिया, पृ० 21; इंपीरियल गजेटियर ऑव इंडिया, जिल्द, I, पृ० 125; मंदाकिनी के विषय में देखिये, कनिंघम, आर्क्योलॉजिकल सर्वे रिपोर्ट, XXI, II)।

अलसंद (Alasanda)—यह यवन देश (Yona) का प्रमुख नगर था। गाइगर ने इसे पैरोपनिसदाइ देश में काबुल के निकट सिकंदर द्वारा स्थापित एलेक्जेंड्रिया नामक नगर से समीकृत किया है (गाइगर द्वारा अनूदित महावंश, पृ० 194)। मिलिन्दपञ्हो में एक द्वीप के रूप में इसका वर्णन किया गया है, जहां राजा मिलिन्द कलसिगाम नामक एक गांव में पैदा हुआ था (ट्रेंकनर संस्करण, पृ० 82-83; कैंब्रिज हिस्ट्री ऑव इंडिया, I, पृ० 550)।

अमरनाथ—इस्लामाबाद से लगभग 60 मील दूर हिमालय की भैरवघाटी पर्वतमाला में, शिव का एक विख्यात मंदिर अमरनाथ स्थित है। हिंदुओं की दृष्टि में यह एक तीर्थस्थान है (विस्तृत विवरण के लिए द्रष्टव्य लाहा, होली प्लेसेज ऑव इंडिया, पृ० 31)।

अम्बष्ठ देश—अम्बष्ठों का देश अवर चेनाब की घाटी में स्थित था। महाभारत (II, 48, 14) और भागवतपुराण (X, 83, 23) में इसका उल्लेख प्राप्त होता है। ब्रह्माण्ड (III, 74, 22), मत्स्य (48, 21), वायु (99, 22) तथा विष्णु पुराणों (II, 3, 18) में इसका वर्णन मिलता है। पाणिनि ने अपने एक सूत्र (VIII, 3, 97) में इसका उल्लेख किया है। ऐतरेय ब्राह्मण (VII, 21-3) के काल तक संभवतः ये लोग पंजाब में बस गये थे। महाभारत (II, 52.14-15) में पश्चिमोत्तर पंजाब की एक कबीले के रूप में उनका वर्णन किया गया है। ये शिवियों एवं यौधेयों से घनिष्ठ रूप से संबंधित थे और पंजाब की पूर्वी सीमा पर रहते थे (पार्जिटर, एंश्येंट इंडियन हिस्टॉरिकल ट्रेडिशन, पृ० 109, 264)। दूसरी शताब्दी ई० के प्रथम चतुर्थांश में भूगोलवेत्ता टाल्मी ने इन्हें पैरोपनिसादाई देश के पूर्व में स्थित एक कबीला बतलाया है (मैक्रिंडिल, एंश्येंट इंडिया ऐज डिस्क्राइब्ड बाई टालेमी, पृ० 311-12)। कालांतर में ये मेकल पहाड़ी के पास जो नर्मदा का स्रोत था, आकर बस गये (वि० च० लाहा, ट्राइब्स इन एंश्येंट इंडिया, पृ० 97, 374)। विस्तृत विवरण के लिए, वि० च० लाहा, इंडोलॉजिकल स्टडीज़ I, पृ० 31 और आगे, द्रष्टव्य है।

अन्धवन—यह श्रावस्ती में स्थित था। वहाँ जाने पर थेर अनुरुद्ध बीमार पड़ गये थे। भिक्षुगण उनके पास गये और उनके शारीरिक कष्ट का कारण पूछा (संयुत्त, V. 302)।

अञ्जनपर्वत (अञ्जनगिरि)—यह महावन में स्थित था (जातक, V.133)।

इसका उल्लेख रामायण (किष्किंध्याकाण्ड, 37, 5) और मार्कण्डेयपुराण (58, 11) में प्राप्त होता है। जैन आवश्यक चूर्णी (पृ० 516) में भी इसका उल्लेख प्राप्त होता है। स्कन्दपुराण (अध्याय 1, श्लोक 36-48) में इसे स्वर्ण-निर्मित बतलाया गया है। यह पंजाब की सुलेमान पर्वत श्रेणी है। सुलेमान पर्वतमाला, जिसे प्राचीन भूगोल-वेत्ताओं ने अंजनगिरि कहा है, पश्चिमोत्तर सीमांतप्रदेश एवं पंजाब को बलूचिस्तान से अलग करती है। इसके उत्तर में गोमल नदी और दक्षिण में सिन्ध नदी है। तख्त-ए-सुलेमान (सोलोमन का सिंहासन) इसका सर्वोच्च शिखर है (11,295 फीट)। मुख्य पर्वतमाला का दक्षिणी भाग बलुआ पत्थर और उत्तरी भाग चूर्ण-प्रस्तर से निर्मित है। इस पर्वतमाला में कुश-धारायुक्त कई दर्रे हैं, जिनसे हो कर भारत से बलूचिस्तान जाने का रास्ता गया हुआ है।

अञ्जनवन—साकेत में स्थित यह एक मृग वन था जहाँ बुद्ध रुके थे। जब बुद्ध यहाँ थे, तब कुंडलिय नामक एक पारिव्राजक ने उनसे धार्मिक एवं दार्शनिक विषयों पर विवाद किया था (संयुत्त, I, 54; V.73 और आगे)।

अनोम—यह पर्वत हिमालय से अधिक दूर पर स्थित नहीं प्रतीत होता है (अपदान, पृ० 345)।

अनोमा—(चीनी हो-नन-मो चि अंग) अनोमा गोरखपुर जिले की औमि (आमी) नदी है। कार्लाइल ने इसे उत्तर-प्रदेश के बस्ती जिले की कुडवा नदी से समीकृत किया है। कपिलवस्तु छोड़ने के पश्चात् बुद्ध इस नदी के तट पर आये और तब उन्होंने भिक्षुजीवन ग्रहण किया (धम्मपद कामेंट्री, I, 85)।

अनोतत्त-(चीनी, अ-नाओ-त)—यह झील रावणहृद या लंगा से समीकृत की जा सकती है। बुद्ध यहाँ पर अनेक बार गये थे (अंगुत्तर, IV, 101)। शुइ-चिंग-चू के अनुसार, अनवतप्त (जो गरम न हो) नामक अन्य अभिधान से विख्यात यह झील हिमालय के शीर्ष पर स्थित थी। इस झील से पूर्व की ओर गंगा, दक्षिण की ओर सिन्धु, पश्चिम की ओर वंक्षु (Oxus) और उत्तर की ओर सीता (Tarim) नामक चार नदियाँ निकलती हैं (नार्दर्न इंडिया एकार्डिंग टु द शुइ-चिंग-चू, पृ० 14)।

अंशुमती—कुरुक्षेत्र की एक नदी के रूप में इसका वर्णन ऋग्वेद (VI. 27, 5, 6; VIII, 85, 13) में किया गया है।

अन्तर्वेदी—स्कंदगुप्त (466 ई०) के इंदौर ताम्रपत्र अभिलेख में वर्णित

परम्परानुगत अन्तर्वेदी, गंगा-यमुना[1] तथा प्रयाग एवं हरद्वार के मध्य में स्थित प्रदेश था। इस अभिलेख के अनुसार, इन्द्रपुर के सूर्य-मंदिर में देवविष्णु नामक किसी ब्राह्मण के अजस्र धर्मस्व के माध्यम से द्वीप जलाया जाता था (कार्पस इंस्क्रिप्शनम् इंडिकेरम्, जिल्द III)। बुलंदशहर वस्तुतः इस अन्तरर्वेदी में स्थित है।

अनुपिय-अम्बवन—यह मल्लों के राज्य में स्थित था। महाभिनिष्क्रमण के पश्चात् राजगृह जाते समय बुद्ध ने अपने प्रथम सात दिन यहीं व्यतीत किये थे (जातक, पृ० 65-66; विनय, II, पृ० 180)।

अपव-वशिष्ठ-आश्रम—यह हिमालय के निकट स्थित था (योग वाशिष्ठ रामायण, I.)। अपव-वशिष्ठ ने अपना आश्रम जला देने के कारण कार्त्तवीर्यार्जुन को शाप दिया था।

अरैल—यह प्राचीन गाँव यमुना के दाहिने तट पर गंगा-यमुना के संगम पर स्थित है '(इलाहाबाद डिस्ट्रिक्ट गजेटियर, ले० नेविल, पृ० 221)।

अरिष्टपुर (पालि अरिट्ठपुर)—पाणिनि ने अपने एक सूत्र में (VI. 2.100) में इसका उल्लेख किया है। यह शिवि के राज्य की राजधानी थी। यहाँ के राजा की शिक्षा तक्षशिला में हुयी थी। वह अपने पिता के राज्यकाल में प्रांताधिपति बनाया गया था और अपने पिता की मृत्यु के पश्चात् वह सिंहासनारूढ़ हुआ। उसने धर्मपूर्वक अपने राज्य का शासन किया। अपने नगर के चारों द्वारों तथा स्वयं अपने द्वार पर उसने छह धर्मशालाएँ बनवायी थीं। प्रतिदिन वह 6,00,000 मुद्राएँ वितरित किया करता था। निश्चित् दिवसों पर वह स्वयं धर्मशालाओं में जाता और यह देखता था कि दान दिया जा रहा है या नही।

शिवि-राज्य को पंजाब के शोरकोट प्रदेश से समीकृत किया जा सकता है—यही प्राचीन शिविपुर या शिवपुर था (वि० च० लाहा, ज्यॉग्रेफी ऑव अर्ली बुद्धिज्म, पृ० 52)। प्राचीन यूनानी लेखक पंजाब में सिवोइ (Siboi) नामक एक देश का उल्लेख करते हैं। अधिक विवरण के लिए, देखिए, वि० च० लाहा द्वारा लिखित, इंडोलॉजिकल स्टडीज़, I, पृ० 24 और आगे।

अरुणाचल—यह पर्वत कैलाश पर्वतमाला के पश्चिम में स्थित है (लाहा,

---

[1] तु० भविष्य पुराण, भाग III, अध्याय 2. अन्तर्वेदी, इन दोनों नदियों के बीच का दो-आब था। काव्यमीमांसा (93) में सूत्रों के आर्यावर्त्त और मनु के मध्यदेश को अन्तर्वेदी कहा गया है जो वाराणसी (बनारस) तक फैला हुआ है—(विनशन प्रयागयोः गंगा-यमुनयोश्च अन्तरम् अन्तर्वेदी)।

माउंटेंस ऑव इंडिया, पृ० 3; स्कन्दपुराण, अध्याय, III, 59-61; IV, 9, 13, 21, 37 भी द्रष्टव्य)।

असिताञ्जननगर—यह कंस नामक विषय में स्थित था, यहाँ पर महाकंस नामक राजा राज्य करता था (जातक, IV, पृ० 79)।

अस्नि—यह गाँव उत्तरप्रदेश के फतेहपुर जिले से लगभग 10 मील दूर स्थित है जहाँ पर एक स्तंभ लेख प्राप्त हुआ है (इं० एं० XVI, 173 और आगे)।

अशोक—यह पर्वत हिमालय से बहुत दूर पर स्थित नहीं था (अपदान, पृ० 342)।

अस्पैसियन देश (Aspasian)—सिकंदर के समय में यह एक छोटा सा राज्य था। ईरानी संज्ञा 'अस्प' संस्कृत अश्व या अश्वक की समानार्थक है (लाहा, इंडोलॉजिकल स्टडीज I, पृ० 1) यूनानियों द्वारा अभिहित यह अस्पैसियन कबीला, अश्वक या अश्मक जाति की किसी पश्चिमी शाखा को द्योतित करती है (कैंब्रिज हिस्ट्री ऑव इंडिया, I, 352, टिप्पणी, 3)। उनका देश पूर्वी अफगानिस्तान में स्थित था (लाहा, ट्राइब्स इन एंश्येंट इंडिया, पृ० 180)। कुछ विद्वानों के अनुसार यह सुवास्तु (आधुनिक स्वात की घाटी)[1] में स्थित था। सिकंदर के आक्रमण का सामना करने वाले अश्मक प्रथम भारतीय जन थे। अस्पैसियन देश का एक नगर यस्प्ला (Euspla) के तट पर या इसके समीप स्थित बताया जाता था, जिसे काबुल नदी की सहायक[2] कुनर नदी से समीकृत माना जाता है।

अष्टापद—यह एक महान् जैन-तीर्थ था। इसे कैलास पर्वत से समीकृत किया गया है। विविधतीर्थकल्प के अनुसार अनेक ऋषियों और ऋषभ के पुत्रों ने यहाँ निर्वाण प्राप्त किया था।[3]

औदुम्बर—पाणिनि ने अपनी अष्टाध्यायी (4.1.173) में इनका उल्लेख किया है। यह देश पठानकोट क्षेत्र में स्थित बताया जाता है।[4]

अयोध्या—यह हिंदुओं के सात तीर्थस्थानों में से एक है, जो अयोज्झा या अयुधा नामक दूसरी संज्ञा से विख्यात है। इस नगर का एक अन्य नाम विनीता

---

[1] रायचौधरी, पो० हि० एं० इं०, चतुर्थ संस्करण, पृ० 197.

[2] लाहा, इंडोलॉजिकल स्टडीज, जिल्द I, पृ० 1 और आगे।

[3] बि० च० लाहा, सम जैन कैनानिकल सूत्राज, पृ० 174.

[4] विस्तृत विवरण के लिए बि० च० लाहा, ट्राइब्स इन एंश्येंट इंडिया, पृ० 355 द्रष्टव्य।

था।[1] यह प्रथम एवं चतुर्थ तीर्थकरों का जन्मस्थान था।[2] फा-ह्यान ने इसे शा-चे (Sha-Che) और टालेमी ने सोगेड (Sogeda) कहा है। ब्राह्मण साहित्य में इसका वर्णन एक गाँव के रूप में किया गया है।[3] इस नगर का नाम साकेत, इक्ष्वाकुभूमि (आवस्सक निर्ज्जुति, 382) रामपुरी और कोशल भी था।[4] भागवत पुराण (IX. 8.19) में इसका उल्लेख एक नगर के रूप में किया गया है। स्कन्द पुराण[5] के अनुसार अयोध्या मत्स्याकार है। उसका विस्तार पूर्व-पश्चिम में एक योजन, सरयू से दक्षिण में और तमसा से उत्तर में भी एक-एक योजन है। समुद्रगुप्त के जाली गया ताम्रपत्र अभिलेख में उत्तरप्रदेश (अवध) की घाघरा नदी से समीकृत सरयू[6] के तट पर स्थित इस प्राचीन नगर का वर्णन प्राप्त होता है जो फैजाबाद रेल्वे स्टेशन से लगभग 6 मील दूर पर स्थित है। इस अभिलेख के अनुसार अयोध्या, बहुत पहले समुद्रगुप्त के काल में ही गुप्तों का एक जयस्कन्धावार था। बुद्ध के काल में यह एक महत्त्वहीन नगर था।[7] रामायण में कोशल की प्राचीन राजधानी के रूप में इसका वर्णन किया गया है। कुछ विद्वानों के अनुसार साकेत और अयोध्या एक ही थे, किन्तु रिज़ डेविड्स ने सफलतापूर्वक यह सिद्ध किया है कि इन दोनों नगरों का अस्तित्व बुद्ध के समय में था।[8] जैन विवरणों के अनुसार, अयोध्या बारह योजन लंबी और नौ योजन चौड़ी थी।[9] यह ऋषभ, अजित, अभिनन्दन, सुमति, अनन्त और अचलभानु का जन्मस्थान था। यहाँ भगवान् आदि-गुरु ने निर्वाण प्राप्त किया था। चालुक्य-नरेश कुमारपाल ने इस नगर में एक जैन प्रतिमा स्थापित की थी। अब भी यहाँ नाभिराज का मंदिर स्थित है।[10] अल्बेरूनी के अनुसार यह कन्नौज से लगभग 150 मील दक्षिणपूर्व में स्थित है। बौद्धकाल

[1] आवस्सक कामेंट्री, पृ० 244.

[2] आवस्सक निर्जुति, 382.

[3] ऐतरेय ब्राह्मण, VII, 3 और आगे; साङ्ख्यायन श्रौतसूत्र, XV, 17-25; तु० ज० रा० ए० सो० 1917, 52, पाद टिप्पणी।

[4] विविधतीर्थ-कल्प, पृ० 24.

[5] अध्याय, I, 64-65.

[6] तु० विनय, II, 237; अंगुत्तर, IV, 101; संयुत्त, II, 135; उदान, श्लोक 5.

[7] बुद्धिस्ट इंडिया, पृ० 34.

[8] बि० च० लाहा, ज्यॉग्रेफी ऑव अर्ली बुद्धिज्म, पृ० 5.

[9] विविधतीर्थकल्प, अध्याय 34.

[10] बि० च० लाहा, सम जैन कैनॉनिकल सूत्राज, पृ० 173.

में कोसल उत्तर और दक्षिण कोसल में विभक्त था। दक्षिण कोसल की राजधानी अयोध्या थी।

अयोध्या पुष्यमित्र शुंग के राज्य में संमिलित प्रतीत होती है। यहाँ से प्राप्त एक अभिलेख में इसके राज्यकाल में पुष्यमित्र शुंग द्वारा दो अश्वमेध यज्ञों के संपादन के तथ्य का वर्णन किया गया है।[1]

चीनी तीर्थयात्री फा-ह्यान ने जो पाँचवीं शताब्दी ईसवी में अयोध्या गया था, बौद्धों एवं ब्राह्मणों में सौहार्द्र नहीं देखा था। उसने वहाँ पर एक स्तूप देखा, जहाँ चार बुद्ध टहलते और बैठते थे।[2] एक दूसरा चीनी तीर्थयात्री—युवान-च्वाङ् जो सातवीं शताब्दी ईसवी में भारत आया था, 600 ली से भी अधिक यात्रा करने और दक्षिण की ओर गंगा नदी पार करने के पश्चात् अयुधा (Ayudha) या अयोध्या पहुँचा था। उसके मतानुसार अयोध्या असंग एवं वसुबन्धु का अस्थायी निवास-स्थान था। उसने अयुधा को ही साकेत या अयोध्या कहा है। इस देश में अच्छी पैदावार होती थी और यह सदैव प्रचुर हरीतिमा से आच्छादित रहता था। इसमें वैभवशाली फलों के बाग थे और यहाँ की जलवायु स्वास्थ्यवर्द्धक थी। यहाँ के निवासी शिष्ट आचार वाले, क्रियाशील और व्यावहारिक ज्ञान के उपासक थे। यहाँ पर 100 से अधिक बौद्ध विहार और 3,000 से अधिक भिक्षु थे जो महायान एवं हीनयान के अनुयायी थे। वहाँ पर 10 देवमंदिर थे और अबौद्धों की संख्या बहुत कम थी। राजधानी में ही प्राचीन विहार था जहाँ वसुबन्धु ने विविध शास्त्रों की रचना की थी। इन भग्नावशेषों में एक महाकक्ष था जहाँ पर वसुबन्धु दूसरे देशों से आने वाले राजकुमारों एवं भिक्षुओं को बौद्ध धर्म की व्याख्या करते थे। गंगा के समीप अशोक के स्तूप से युक्त एक विशाल बौद्धविहार था, जो उस स्थान को लक्षित करता था, जहाँ बुद्ध ने अपने श्रेष्ठ धर्म पर प्रवचन किया था। इस विहार से चार अथवा पाँच ली पश्चिम में बुद्ध का अस्थियुक्त एक स्तूप था और इस स्तूप के उत्तर में उस प्राचीन विहार के अवशेष थे, जहाँ पर सौत्रान्तिक-विभासा-शास्त्र की रचना की गयी थी। नगर के 5 या 6 मील दक्षिण-पश्चिम में किसी आम्रवन में एक प्राचीन विहार स्थित था जहाँ पर असंग ने शिक्षा ग्रहण की थी और जहाँ वह शिक्षक था। मैत्रेय ने असंग को तीन बौद्ध शास्त्र बतलाये थे जिनका उल्लेख युवान-च्वाङ् ने किया है। उपर्युक्त आम्रकुंज के पश्चिमोत्तर में 100 कदम आगे बुद्ध का अस्थियुक्त एक स्तूप था। चीनी तीर्थ-

---

[1] एपि० इं०, XX, पृ० 57.

[2] लेग्गे, ट्रैवेल्स ऑव फा-ह्यान, पृ० 54-55.

यात्री के अनुसार असंग ने अपना धार्मिक जीवन महीशासक के रूप में प्रारंभ किया था, परंतु बाद में वह महायानधर्मावलंबी हो गया था। वसुवन्धु ने सर्वास्तिवादिन् संप्रदाय के अनुयायी के रूप में अपना जीवन प्रारंभ किया था। असंग की मृत्यु के पश्चात् वसुबन्धु, जिन्होंने महायान धर्म का प्रचार एवं मंडन करते हुये कई भाष्य लिखे थे, 83 वर्ष की अवस्था में अयोध्या में मरे थे।[1]

रामायण के अनुसार अयोध्या एक धन-धान्यवती नगरी थी। इसमें सुसिंचित और पुष्पालंकृत चौड़ी गलियाँ एवं सड़कें थीं। दरवाजों एवं कावलों से सज्जित इसमें उन्नत तोरण थे। यह पूर्णतः सुरक्षित था। यहाँ पर शिल्पी एवं कारीगर रहते थे। इसमें राज-प्रासाद, हरित-निकुंज एवं आम्रकुंज थे। यह नगर जल से भरी हुई एक गहरी परिखा से परिवृत्त होने के कारण अभेद्य था। यहाँ बड़ी संख्या में कँगूरेदार घर एवं सातमंजिली ऊँची इमारतें थीं। यह एक जनसंकुल नगर था और प्रायः वाद्य-यंत्रों की ध्वनि से प्रतिध्वनित होता था। इस नगर में कम्बोजीय अश्व एवं शक्तिशाली हाथी थे।[2] महाभारत में इसे 'पुण्यलक्षणा' या शुभ लक्षणों से युक्त कहा गया है। पृथ्वी पर यह एक रमणीय स्थान था।[3] रामायण के अनुसार अयोध्या के समाज में चातुर्वर्ण्यव्यवस्था थी; यथा ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, एवं शूद्र। उन्हें अपने विशिष्ट धर्मों एवं दायित्वों का निर्वाह करना पड़ता था।[4]

जैन एवं बौद्ध धर्मों के इतिहास में अयोध्या उल्लेखनीय है।[5] इक्ष्वाकुवंश में अयोध्या के सिंहासन के उत्तराधिकार का प्रश्न सामान्यतः ज्येष्ठाधिकार के नियम से निश्चित किया जाता था।[6] अयोध्या के अनेक विख्यात राजा हुये हैं।[7] अयोध्या के नरेश वशिष्ठ गोत्र से संबंधित थे। वशिष्ठ उनके वंशानुगत पुरोहित थे।[8]

---

[1] वाटर्स, आन युवान च्वाङ्, I, 354-9.

[2] रामायण, पृ० 309, श्लोक, 22-24.

[3] वही, पृ० 6, श्लोक, 90-98.

[4] वही, पृ० 114, श्लोक 32.

[5] एस० स्टीवेंसन, हार्ट ऑव जैनिज्म, पृ० 50-51; संयुत्त, III, 140 और आगे; सारत्थपकासिनी, II, पृ० 320.

[6] रामायण, पृ० 387, श्लोक, 36.

[7] महाभारत, 241, 2; वायु, 99, 270; मत्स्य, 50, 77; वायु, 85, 3-4; अग्नि पुराण, 272, 5-7; कूर्म, I, 20, 4-6; हरिवंश, II, 660, पद्म V, 130-162 आदि आदि।

[8] विष्णु, IV, 3. 18; पद्म, VI, 219-44.

अयोध्या का राज्य युवनाश्व द्वितीय एवं विशेषत: उसके पुत्र मान्धातृ के समय में बहुत विख्यात हुआ।[1] कालांतर में अयोध्या के प्रभुत्व का ह्रास हुआ और राजा जह्नु के राजत्व में कान्यकुब्ज के राज्य का समुत्कर्ष हुआ। हैहयों ने अयोध्या को पराजित किया और उनकी विजय के उपरांत वहाँ पर विदेशी जातियाँ बस गयीं। अयोध्या पुन: भगीरथ एवं अम्बरीष नाभागि के राज्यकाल में प्रसिद्ध हुयी।[2] दशरथ ने अंग के बर्बर ऋष्यश्रृंग से सहायता माँगी थी।[3] अयोध्या में दशरथ के अश्वमेध में पूर्वी तथा दक्षिणी देशों एवं सुदूर पंजाब के नरेश आमंत्रित थे। पार्जिटर ने बतलाया है कि तब अयोध्या एवं वशिष्ठों का सुसंस्कृत ब्राह्मण क्षेत्र से कोई संबंध न था।[4] कथासरित्सागर में अयोध्या में नन्द के स्कंधावार का उल्लेख प्राप्त होता है।[5] योगिनीतंत्र में इस नगर का उल्लेख है (2।4, पृ० 128-129)। पालि ग्रंथों में अयोध्या के कुछ और राजाओं का उल्लेख प्राप्त होता है।[6] अयोध्या में मुद्राओं की बहुत बड़ी संख्या प्राप्त हुई है और अधिक विवरणों के लिए, द्रष्टव्य, लाहा, इंडोलॉजिकल स्टडीज, भाग, III)।

अयोमुख—कनिंघम के मतानुसार यह प्रतापगढ़ से 30 मील दक्षिण-पश्चिम स्थित था।[7]

आलवी—कनिंघम एवं हार्नले ने इसे उत्तरप्रदेश के उन्नाव जिले में स्थित नेवल या नवल से समीकृत किया है। कुछ लोगों ने इसे इटावा से 27 मील उत्तर-पूर्व में स्थित अविव से समीकृत किया है।[8] आलवी नगर के समीप अग्गालव नामक एक मंदिर था, जहाँ पर बुद्ध एक बार रुके थे। अनेक नारी उपासिकाएँ और भिक्षुणियाँ यहाँ पर सत्य प्रवचन सुनने के लिए आयी थीं।[9]

---

[1] महाभारत, III, 126.

[2] वायु, 88, 171-72; पद्म, VI, 22, 7-18; लिंग, I, 66, 21-22 आदि

[3] रामायण, I, 9 और 10.

[4] ऐंश्येंट इंडियन हिस्टॉरिकल ट्रेडिशन, पृ० 314.

[5] टानी संस्करण, I, पृ० 37.

[6] जातक, (फासबॉल), IV, पृ० 82-83; वंसत्थप्पकासिनी (पा० टे० सो०), जिल्द, I, पृ० 127.

[7] कनिंघम, आ० स० रि० XI, 68; कनिंघम, ऐंश्येंट ज्यॉग्रेफी ऑव इंडिया, पृ० 443 और आगे; पृ० 708.

[8] बि० च० लाहा, ज्यॉग्रेफी ऑव अर्ली बुद्धिज्म, पृ० 24.

[9] जातक, I, 160.

आपया—यह ऋग्वेद (III. 23, 4) में वर्णित एक नदी है, जो दृषद्वती एवं सरस्वती के मध्य बहती थी। कुछ विद्वानों ने इसे गंगा के दूसरे नाम आपगा से समीकृत किया है। त्सिमर के अनुसार यह सरस्वती के निकट स्थित है।[1] थानेश्वर से गुजरने वाली यह एक छोटी उपनदी है। कुछ विद्वान् इसे चितंग नदी की एक शाखा के रूप में जानते हैं।[2] इस नदी का उल्लेख महाभारत (III, 83, 68) में भी है।

बदरी—वराह पुराण (141.1) के अनुसार हिमालय-क्षेत्र में यह एक एकांत स्थल है। यहाँ पर इन्द्रलोक एवं पंचशिख (141.10; 141. 14) नामक दो तीर्थ हैं। पद्म पुराण में (अध्याय 133) बदरी में सारस्वत तीर्थ का वर्णन किया गया है।

बदरिकाराम—महाराज वैश्रवण के काल के कोसम-अभिलेख में कौशाम्बी के समीप स्थित इस स्थान का उल्लेख प्राप्त होता है (एपि० इं० XXIV, भाग IV, पृ० 147)। यह एक बौद्ध विहार था जहाँ पर बुद्ध एक बार रुके थे। यहाँ पर थेर राहुल ने भिक्षुओं के नियमों के पालन में अपना मन लगाया था (जातक I, 160; III, 64)। खेमक नामक एक थेर यहाँ पर अपने आवासकाल में बहुत बीमार पड़ गया था। इस अवसर पर घोषिताराम में निवास करने वाले स्थविरों ने दासक नामक एक थेर को उसके पास यह जानने के लिए भेजा था कि वह कैसे पीड़ा सहन कर लेता है (संयुत, III, 126 और आगे)।

बदरिकाश्रम—महाभारत (90, 27-34) में इसका उल्लेख प्राप्त होता है। इसमें बदरिकातीर्थ का भी वर्णन प्राप्त होता है (85, 13; तु० पद्म पुराण, अध्याय 21, तीर्थ माहात्म्य)। योगिनीतंत्र में (2.6.167 और आगे) इस आश्रम का उल्लेख है। बाण की कादम्बरी के अनुसार अर्जुन एवं कृष्ण यहाँ आये थे (पृ० 94)। स्कन्द पुराण(अध्याय 1, 53-59)के अनुसार इस तीर्थ में जाने से पापी पापों से मुक्त हो जाता है। यहाँ पर एक महती पूजा होती है, परंतु प्रतिवर्ष 6 मास तक जब यह हिमाच्छादित रहता है, यहाँ पर कोई पूजा नहीं होती (पद्म पुराण, उत्तरखंड, 2.1.7)।

बद्रीनाथ—यह गढ़वाल में स्थित है। यह मुख्य हिमालय पर्वतमाला की की एक चोटी है जो श्रीनगर से 55 मील उत्तर-पूर्व में स्थित है। अलकनन्दा नदी के स्रोत के समीप ही इसके पश्चिमी तट पर नर-नारायण का मंदिर बनाया गया

---

[1] **आल्टिडिशेज लेबेन,** 18.

[2] **ज० रॉ० ए० सो०,** 1883, पृ० 362.

था। आठवीं शताब्दी ईसवी में यह मंदिर शंकराचार्य द्वारा बनवाया गया बतलाया जाता है (लाहा, होली प्लेसेज़ ऑव इंडिया, पृ० 18; इंपीरियल गजेटियर ऑव इंडिया, ले०, डब्ल्यू० डब्ल्यू० हंटर, पृ० 287 और आगे)।

बाँसखेड़ा—यह शाहजहाँपुर से लगभग 25 मील दूर है। यहाँ पर हर्ष का एक ताम्रपत्र अभिलेख प्राप्त हुआ था (एपि० इं० IV, 208)।

बर्बरिक (टालेमी का बर्बरायी)—स्पष्टतः यह पेरिप्लस ऑव दी इरीथ्रियन सी' में उल्लिखित बार्बेरिकम (Barbaricum) या बार्बेरिकन (Barbaricon) नामक मंडी थी। यह एक व्यापारिक नगर (बाजार) एवं बंदरगाह था जो सिन्धु नदी के मध्यवर्ती मुहाने पर स्थित था। सिन्धु-डेल्टा के द्वीपों पर स्थित नगरों में से यह एक था (मैक्रिंडिल, ऐंश्येंट इंडिया ऐज डिस्क्राइब्ड बाई टालेमी, मजूमदार द्वारा संपादित, पृ० 148)।

बर्बरसदेश (बर्बरदेश) अरबसागर तक विस्तृत प्रतीत होता है। महाभारत में बर्बरदेश के निवासियों को शकों एवं यवनों से संबंधित बतलाया गया है (महाभारत, सभापर्व, XXXI, 1199, वनपर्व, CCLIII, 15254; शान्तिपर्व, CCVII, 7560-61,)। मार्कण्डेय पुराण (LVII. 39) में इन्हें सिंधु-देश में स्थित बतलाया गया है और बृहत्संहिता में इसका उल्लेख उत्तरी या उत्तरपश्चिमी जाति के रूप में किया गया है। (और अधिक विवरण के लिए लाहा की पुस्तक ट्राइब्स इन ऐंश्येंट इंडिया, पृ० 92, दृष्टव्य)।

बसही—उत्तर प्रदेश के इटावा जिले की बिन्धुना तहसील के मुख्यावास से दो मील उत्तर-पूर्व में स्थित यह एक गाँव है। यहाँ से एक अभिलेख प्राप्त हुआ है, जो विष्णु की स्तुति से प्रारंभ होता है और तत्पश्चात् इसमें महियाला से मदनपाल तक की वंशावली दी गयी है (इंडियन ऐंटिक्वेरी, XIV, 101-104)।

बटेश्वर—आगरा से 35 मील दक्षिण-पूर्व, आगरा जिले में यमुना के दाहिने तट पर स्थित यह एक कस्बा है, जहाँ पर एक प्राचीन टीला मिलता है (एपि० इं०, I, 207)।

बाहुदा (बाहुका या बहुका)—पार्जिटर ने इसे आधुनिक रामगंगा से समीकृत किया है जो कन्नौज के समीप, बाँईं ओर से गंगा नदी में मिलती है (पार्जिटर, मार्कण्डेय पुराण, पृ० 291-92)। कुछ विद्वानों ने इसे धवला, जिसे अब धुमेला अथवा बड़ी राप्ती कहते हैं और जो अवध में राप्ती की सहायक नदी है—से समीकृत किया है (नं० ला० दे, ज्यॉग्रेफिकल डिक्शनरी, पृ० 16)। दक्कन में इसी नाम की एक अन्य नदी थी (महाभारत, भीष्मपर्व, 9, 322; अनुशासनपर्व, 165, 7653; रामायण, किष्किन्ध्या काण्ड, 41, 13)। इस नदी में स्नान करने के

कारण लिखित नामक ऋषि को उनकी विच्छिन्न बाहु पुनः प्राप्त हुयी थी जिसके कारण इसका बाहुदा नाम पड़ा है (महाभारत, शान्तिपर्व, 22; हरिवंश, 12)। मार्कण्डेय पुराण (अध्याय, 57) में इसे गंगा-यमुना के साथ ही हिमालय पर्वत से संबंधित बतलाया गया है। शिवपुराण के अनुसार, अपने पति प्रसेनजित् द्वारा अभिशप्त होने के कारण गौरी बाहुदा नदी के रूप में परिवर्तित हो गयी थी। मज्झिमनिकाय (I, पृ० 39) के अनुसार बाहुदा को बाहुका भी कहा जाता है। बुद्ध ने इस नदी में स्नान किया था। इस नदी में अवगाहन करने से बहुत से लोग अपने पापों को नष्ट कर सके थे (वही, I, पृ० 39)। जातक (V. 388, और आगे) में गया, दोण और टिम्बरू के साथ ही इसका उल्लेख किया गया है; अंतिम दो नामों का समीकरण नहीं किया जा सकता है।

बाहुमती—बाहुमती को नेपाल में बौद्धों की पवित्र नदी बागमती से समीकृत किया जा सकता है। लास्सेन ने एरियन की ककंथिस (Kakanthis) को नेपाल की बागमती नदी से समीकृत किया है। बागमती को बाचमती भी कहा जाता है, क्योंकि इसका निर्माण बुद्ध क्राकुच्छन्द ने अपनी नेपाल यात्रा के मध्य अपने मुख-वचन से किया था। मरदारिका, मणिरोही, राजमञ्जरी, रत्नावली, चारुमती, प्रभावती और त्रिवेणी नामक नदियों के साथ इसका संगम होने पर क्रमशः शांता शंकर, राजमञ्जरी, प्रमोदा, सुलक्षणा, जया एवं गोकर्ण नामक तीर्थ बनते हैं (वराह-पुराण, अध्याय 215; तु० स्वयंभू-पुराण, अध्याय V)। बागमती नदी के तट पर वत्सला स्थित है (नेपाल महात्म्य, अध्याय I, 39)।

वाराणसी—देखिए काशी।

बेलखर—उत्तरप्रदेश के मिर्जापुर जिले में चुनार के दक्षिणपूर्व में लगभग 12 मील दूर स्थित यह एक गाँव है। बेलखर प्रस्तर स्तंभलेख इसी गाँव से मिला था, जिस पर गणेश की एक छोटी आकृति बनी हुयी है।[1]

भद्दावतिका—यह व्यापारिक नगर पारिलेय्यक वन से श्रावस्ती जाने वाले मार्ग में पड़ता था। श्रावस्ती में वर्षाऋतु व्यतीत करने के पश्चात्, बुद्ध भिक्षाटन के लिए निकले और यहाँ आये थे। इस बाजार के समीप एक बाग था, जहाँ पर बुद्ध ने निवास किया था। इस नगर से वह कोसाम्बी गये थे।[2]

भद्रशिला—यह एक वैभवशील, संपन्न एवं जनसंकुल नगर था। लंबाई और

---

[1] आर्क० सर्वे० रिपोर्ट, XI, 128 और आगे; ज० ए० सो० बं०, 1911, पृ० 763 और आगे।

[2] जातक, I, 360.

चौड़ाई में यह 12 योजन, चार तोरण में सुविभक्त, तथा ऊँचे महराबों एवं खिड़कियों से अलंकृत था। इस शहर में एक राजोपवन था।[1] बोधिसत्त्वावदान-कल्पलता के अनुसार, यह नगर हिमालय पर्वत के उत्तर में स्थित था (पंचम पल्लव, पृ० 2 और 6)। कालांतर में यह नगर तक्षशिला नाम से विख्यात् हुआ क्योंकि यहाँ पर एक ब्राह्मण भिक्षु ने यहाँ के राजा चंद्रप्रभ का शिरोच्छेदन किया था।[2]

भरद्वाज आश्रम—भरद्वाज ऋषि का आश्रम प्रयाग या इलाहाबाद में गंगा-यमुना के संगम पर स्थित था।[3] राम ने स्वयं यह स्वीकार किया था कि यह आश्रम अयोध्या से दूर नहीं था।[4] दण्डकारण्य जाते समय रामचन्द्र यहाँ आये थे और उन्होंने हनुमान को भरत के पास भेजा था।[5] राम, लक्ष्मण एवं सीता के साथ यहाँ आये थे। उन्होंने तब ऋषि का यथोचित सत्कार किया था और उनको यह बतलाया कि वे अपने पिता के वचनों को पूर्ण करने के लिए 14 वर्ष के वनवास में जा रहे थे। भरत राम की खोज में भ्रमण करते हुए, अपने कुल-गुरु वशिष्ठ के साथ यहाँ आये थे। वीतिहव्यों से युद्ध में पराजित होने के पश्चात् राजा दिवोदास ने इस आश्रम में शरण ली थी।

भर्ग—अपने प्रमुख नगर सुंसुमारगिर के सहित भर्गों का देश वत्स के अधीन हो गया था।[6] कुछ विद्वान् इसे श्रावस्ती एवं वैशाली के मध्य स्थित बतलाते हैं, किंतु उस स्थान की स्थिति अनिश्चित है।

भाष्कर क्षेत्र—नुतिमदुगु से उपलब्ध ताम्रपत्र अभिलेखों में इसका वर्णन प्राप्त होता है। यह बेलारी जिले में स्थित हांपी नामक स्थान है।[7] नं० ला० दे ने इसको, बिना कोई निश्चित कारण बतलाये हुये ही, प्रयाग से समीकृत किया है।[8]

भेसकलावन—यह भर्गों के सुंसुमारगिरि या सुंसुमारगिर के समीप था—

---

[1] दिव्यावदान, पृ० 315.

[2] रा० ला० मित्र, ने० बु० लिट्०, पृ० 310.

[3] रामायण, अयोध्याकाण्ड, अध्याय, 54, श्लोक, 9.

[4] वही, सर्ग 54, श्लोक, 24.

[5] वही, आदि काण्ड, प्रथम सर्ग, श्लोक, 87.

[6] अंगुत्तर, II, 61; विनय II, 127.

[7] एपि० इं० XXV, भाग IV.

[8] ज्यॉ० डिक्श० ऑव ऐंश्येंट ऐंड मेडिवल इंडिया, द्वितीय संस्करण, 32.

जहाँ पर बुद्ध रुके थे।[1] यह केसकलावन नाम से भी विख्यात था।[2] यह एक महत्त्व-पूर्ण बौद्ध आवास तथा वत्स जनपद में बौद्ध-मत का एक प्राचीन केंद्र था। स्पष्टत: यह वन राजकुमार बोधि से संबंधित था, जो बुद्ध के कट्टर उपासक अनुयायी हो गये थे।[3]

भीतरगाँव—यह कानपुर जिले में है, जहाँ पर एक विशाल मंदिर है। भितरी-गाँव नाम से भी विख्यात यह गाँव कानपुर से 20 मील दक्षिण और कोड़ा जहानाबाद से 10 मील उत्तर-पश्चिम में, कानपुर तथा हमीरपुर के बीच में स्थित है।[4]

भितरी—स्कन्दगुप्त के भितरी स्तंभलेख में वर्णित यह गाँव गाजीपुर जिले[5] की सैदपुर तहसील के मुख्य शहर सैदपुर के लगभग 5 मील पूर्वोत्तर में स्थित है।

भीटा—इसे वीरचरित्र में उल्लिखित प्राचीन विटभय पट्टन नामक नगर से समीकृत किया गया है, जो महावीर के समय में विकसित हुआ था: इस ग्रंथ में विटभय पट्टन को राजा उदयन की राजधानी बतलाया गया है, जिसने जैन धर्म ग्रहण कर लिया था।[6] इलाहाबाद के निकट भीटा के प्राचीन अवशेष का वर्णन जनरल कनिंघम ने जो यहाँ पर 1872 ई० में आये थे, किया है।[7] अधिक विवरण के लिए, आर्क० सर्वे० ऑव इं०, एनुअल रिपोर्ट, 1909-10, पृ० 40; 1911-12, पृ० 29-94.

भृगु-आश्रम—महाभारत में इसे भृगु-तीर्थ कहा गया है। इस ऋषि का आश्रम उत्तरप्रदेश में बलिया में था, जो गंगा एवं सरयू के तट पर स्थित था। परशु-राम ने राम दाशरथी द्वारा अपहृत अपनी शक्ति को यहाँ पर पुन: प्राप्त किया था।[8] भागे हुये राजा वीतहव्य ने इस आश्रम में शरण ली थी। भृगु की सत्कृपा से राजा वीतहव्य एक ब्राह्मण बने थे।[9]

---

[1] अंगुत्तर, II, पृ० 61; III, पृ० 295; IV, पृ० 85, 228, 232, 268; मज्झिम II, 91; जातक III, 157; मज्झिम, I, 513 और आगे।

[2] मज्झिम, II, 91; जातक, III, 157.

[3] मज्झिम, I, 513 और आगे।

[4] आर्क० सर्वे० इं०, एनुअल रिपोर्ट, 1908-9, पृ० 5 और आगे।

[5] का० ई० इं०, जिल्द, III.

[6] नेविल, इलाहाबाद डिस्ट्रिक्ट गजेटियर, पृ० 234.

[7] आर्क० सर्वे० रि०, जिल्द, III, पृ० 46-52.

[8] महाभारत, III, 99, 8650.

[9] तु० मैटिन, ईस्टर्न इंडिया, II, 340.

बिलसद—बिलसद नामक एक अन्य नाम से विख्यात इस गाँव का वर्णन कुमार गुप्त के बिलसद स्तंभलेख में किया गया है। यह एटा जिले में अलीगंज के लगभग चार मील उत्तर-पश्चिम में तीन भागों यथा—पूर्वी बिलसद, पश्चिमी बिलसद और आंचलिक बिलसद के रूप में स्थित है।[1]

बिठूर—यह कानपुर से 14 मील दूर स्थित है और वहाँ पर वाल्मीकि ऋषि का आश्रम है।

ब्रह्मपुर—पंजाब में यह चंबा[2] राज्य की प्राचीन राजधानी थी। यहाँ पर तीन प्राचीन मंदिर हैं, जिनमें सबसे बड़ा प्रस्तर निर्मित है और शिव के अवतार मणिमहेश को ; दूसरा प्रस्तर निर्मित मंदिर विष्णु के नरसिंहावतार और तीसरा जो अधिकांशतः काष्ठ निर्मित है, लक्ष्मणदेवी को समर्पित है। कनिंघम के मतानुसार ब्रह्मपुर विराटपत्तन का एक अन्य नाम था। यहाँ की जलवायु थोड़ी ठंडी बतलायी जाती है और वैराट की स्थित से भी मेल खाती है। युवान-च्वाङ् ने ब्रह्मपुर राज्य की परिधि 667 मील बतलायी है। इसमें अवश्यमेव अलकनन्दा एवं कर्णाली नदियों के मध्य का संपूर्ण पहाड़ी प्रदेश संमिलित रहा होगा।[3] ब्रह्मपुर को पो-लो-लिह्-मो-पु-लो भी कहा जाता था।[4] कनिंघम के मतानुसार ब्रह्मपुर गढ़वाल और कुमाऊँ जिलों में स्थित था। इन जिलों में कतुर या कतुरिया राजा शासन करते थे, जो समुद्रगुप्त के प्रयाग स्तंभ लेख के कर्तृपुर से संबंधित थे।[5]

बूढ़ी गंडक—इसका स्रोत नेपाल में हरिहरपुर की पहाड़ियों में है। चंपारन जिले में मोतीहारी के उत्तरपूर्व में इसमें मिलने वाली पहली पश्चिमी उपनदी छह नदियों के संयुक्त प्रवाह के अतिरिक्त और कुछ नहीं है। यह मुंगेर जिले में गोगरी के पश्चिम में गंगा में मिलती है। और अधिक विवरण के लिए बि० च० लाहा की पुस्तक रिवर्स ऑव इंडिया, पृ० 24 द्रष्टव्य।

चन्दपहा—यह कोसम्ब पट्टल में स्थित एक गाँव है जिसे कर्णदेव ने पंडित शांतिशर्मन् को दिया था।[6]

---

[1] का० इं० इं० जिल्द, III.

[2] अधुना छंब हिमाचल प्रदेश राज्य में समाविष्ट है।

[3] कनिंघम, एं० ज्यॉ० इं०, 407 और आगे।

[4] वाटर्स, ऑन युवान च्वाङ्, I, पृ० 329.

[5] ज० रा० ए० सो०, 1898, 199; कनिंघम, एं० ज्यॉ० इं०, 704.

[6] एपि० इं०, XI, पृ० 139 और आगे; ज० रा० ए० सो० 1927, पृ० 94 और आगे भी द्रष्टव्य।

चन्द्रभागा—एक पालि-धर्मग्रंथ—अपदान में इसका उल्लेख है।[1] मिलिंद-पन्हो के अनुसार यह नदी हिमवन्त (हिमालय क्षेत्र) से निकलती है। जैन थानंग (5,470) में चार अन्य नदियों के साथ इसका वर्णन प्राप्त होता है। चन्द्रभागा या चेनाब किश्तवर के ठीक पहले दो संगमित पहाड़ी सरिताओं के रूप में बहती है। किश्तवर से रिश्तवर तक इसका प्रवाह दक्षिणाभिमुख है। जम्मू से हो कर वहाँ से अपने वितस्ता (झेलम) के मध्य दोआब बनाती हुयी यह दक्षिण-पश्चिम की ओर बहती है। यही ऋग्वेद में वर्णित असिक्णी, एरियन की एकेसिनीज़ (Akesines) तथा टालेमी की संदबग या संदबल नदी है। मार्कण्डेय पुराण के अनुसार इसी नाम की दो नदियाँ थीं। महाभारत में भी इसी मान्यता का प्रति-पादन प्रतीत होता है।[2] परंतु दूसरी सरिता का समीकरण दुष्कर है। पद्मपुराण में इस नदी का वर्णन है।[3]

चन्द्रावती—यह वाराणसी जिले में गंगा के बायें तट पर स्थित है, जहाँ से गाहडवाल वंश के दो ताम्रपत्र प्राप्त हुये थे।[4]

चावल—यह पर्वत हिमालय से बहुत दूर नहीं था।[5]

चम्बं—इस जिले में रावी नदी के स्रोतों की घाटियों एवं लाहुल तथा काश्तवार के मध्य चेनाव की ऊपरी घाटी का एक भूखंड संमिलित था। उसकी प्राचीन राजधानी वर्मपुर थी।[6]

छतरपुर—यह गाँव कानपुर के 21 मील उत्तर-पश्चिम में शिवराजपुर के समीप स्थित था, जहाँ गोविंद चन्द्रदेव का एक ताम्रपत्र अभिलेख प्राप्त हुआ था।[7]

चीन—वीरपुरुषदत्त के नागार्जुनिकोण्ड अभिलेख में इसका वर्णन है। यह हिमालय क्षेत्र में चिलात या किरात के पार स्थित था। पालि ग्रंथ सासनवंश में (पृ० 13) में हिमवंतपदेस को चीनरट्ठ कहा गया है।

चित्रकूट (पालि चित्तकूट)—पद्मपुराण (अध्याय 21, तीर्थ माहात्म्य) में

---

[1] पृ०, 277, 291.

[2] भीष्मपर्व, 9, 322-27.

[3] उत्तरखण्ड, श्लोक, 35-38.

[4] इं० हि० क्वा०, मार्च, 1949.

[5] अपदान, पृ० 451.

[6] कनिंघम, एं० ज्यॉ० इं०, पृ० 161-62.

[7] एपि० इं०, XVIII, पृ० 224.

वर्णित तीर्थस्थलों के अंतर्गत इस रमणीक पर्वत का वर्णन प्राप्त होता है। जैन ग्रंथ भगवती-टीका (7. 6) में इसे चित्तकुड कहा गया है। कालिदास के अनुसार किसी चट्टान या टीले को कौतुक में ही सिर से ठोकर देने वाले किसी वन्य-वृषभ, की भाँति यह प्रतीत होता है।[1] यह भरद्वाज ऋषि के आश्रम से 20 मील (10 क्रोश) की दूरी पर स्थित था।[2] उत्तरचरितम् (अंक, I, 24) में चित्रकूट तक जानेवाली कालिंदी-तट पर स्थित सड़क का उल्लेख है। यह आधुनिक चित्रकूट नामक एक प्रसिद्ध पहाड़ी है, जो इलाहाबाद से 65 मील दूर पश्चिम-दक्षिण-पश्चिम में स्थित है।[3] यह आधुनिक चित्रकूट रेलवे स्टेशन से लगभग चार मील दूर स्थित है। यह प्रयाग के दक्षिण-पश्चिम में है। अपदान (पृ० 50) में इसे अस्पष्ट रूप से हिमवंत के समीप स्थित बतलाया गया है। गढ़वा शिलालेख में इसका उल्लेख है।[4] भागवत पुराण में एक पर्वत के रूप में इसका वर्णन प्राप्त होता है (श्लोक, 19, 16)। ललितविस्तर में (पृ० 391) में एक पहाड़ी के रूप में इसका उल्लेख है। यह एक रमणीक[5] एवं निष्कलुप स्थल था।[6] यह हिमालय क्षेत्र में स्थित था और यहाँ पर एक स्वर्णिम गुहा तथा एक प्राकृतिक झील थी।[7] यह अपने झरनों या प्रपातों के लिए विख्यात था (रघुवंश, XIII, 47)

इसको बुंदेलखंड में काम्प्तानाथ गिरि से समीकृत किया गया है। सामान्यतया इसे उत्तरप्रदेश के बाँदा जिले में कालिंजर से लगभग 20 मील दूर उत्तर-पूर्व में स्थित उसी नाम के एक पर्वत से समीकृत किया जाता है। महाभारत (III, 85-56) में इसे कालंजर से संबद्ध बतलाया गया है।[8] इसके समीकरण के विषय में हम आर्क० सर्वे० रिपोर्ट, XIII और XXI तथा ज० रा० ए० सो० 1894 का भी उल्लेख कर सकते हैं।

रामायण[9] के अनुसार राम ने पयस्विनी (पैसुनी) या मंदाकिनी के तट पर

---

[1] रघुवंश, XIII 47.

[2] रामायण, अयोध्याकाण्ड, सर्ग 54, श्लोक 28.

[3] ज० रा० ए० सो०, अप्रैल, 1894, पृ० 239.

[4] का० इं० इं०, जिल्द, III.

[5] जातक, II, 176.

[6] जातक, VI, 126.

[7] जातक, II, 176; III, पृ० 208.

[8] ज० रा० ए० सो० बं०, भाग, XV, 1949, नं० 2, लेटर्स, पृ० 129.

[9] अयोध्याकाण्ड, अध्याय, 55.

स्थित इस पहाड़ी पर निवास किया था। भरद्वाज आश्रम से लौटते समय वह यमुना को पार करके यहाँ आये थे। भरद्वाज-आश्रम[1] से यह तीन योजन दूर पर स्थित था। यह रमणीक पर्वत अनेक कलहंसों का आवास था जो यहाँ पर स्थित स्वर्ण गुफा[2] में रहते थे जिनमें कुछ तो तीव्रगामी एवं कुछ स्वर्णिम थे।[3] धर्मानुचरण, धर्मानुसार राज्य का शासन तथा प्रजा के हृदय को जीतने के लिए आदिष्ट एक राजा ने इस पर्वत के लिए प्रस्थान किया था।[4] कालिका पुराण (79, 143) में कज्जल नामक एक पर्वत को चित्रकूट के पूर्व में स्थित बतलाया गया है।

चित्रकूट में मंदाकिनी एवं मालिनी[5] नामक दो नदियाँ थीं। मंदाकिनी इस पहाड़ी के उत्तर की ओर स्थित बतलायी जाती है। चित्रकूट के जंगल पृथक् नहीं प्रतीत होते। नीलवन इस पहाड़ी पर स्थित वन में मिल गया था।[6] महाभारत (85, 58-59) में चित्रकूट पर्वत और मंदाकिनी नदी का उल्लेख प्राप्त होता है।

चुक्ष—तक्षशिला में प्राप्त जेहोनिक के रजत-घट अभिलेख में उल्लिखित चुक्ष को तक्षशिला के समीप चाच के मैदान से समीकृत किया जाता है।[7] स्टाइन के मतानुसार चुक्ष अटक जिले के उत्तर में स्थित वर्तमान चाच नामक स्थान है।

दधीचि-आश्रम—यह आश्रम सरस्वती के दूसरी ओर स्थित था। दधीचि ऋषि ने मानवता के कल्याण के लिए आत्मोत्सर्ग किया था।

डलमऊ—यह डलमऊ परगने और डलमऊ तहसील का मुख्यावास है। यह एक अतिप्राचीन नगर और अतीव ऐतिहासिक एवं पुरातत्वीय महत्त्व का स्थान है। रायबरेली से 19 मील दूर यह गंगा नदी के तट पर स्थित है। यहाँ पर एक किला है जिसमें वस्तुतः दो बौद्ध स्तूपों के ध्वंसावशेष हैं।[8]

---

[1] अयोध्याकाण्ड, LIV, 29-30.

[2] जातक, V, 337; जातक II, 107; V, 381.

[3] जातक, IV, 212, 423-424.

[4] जातक, V, 352.

[5] रामायण, अयोध्याकाण्ड, LIV, 39; LVI, 7, 8.

[6] अयोध्याकांड, LVI, 1-18.

[7] ब्युलर, एपि० इं०, IV, 54; स्टेनकोनो, का० इं० इं०, II, i, 25-28; रायचौधरी, पो० हि० एं०इं० (चतुर्थ संस्करण), पृ० 369, पादटिप्पणी 3.

[8] नेविल, रायबरेली डिस्ट्रिक्ट गजेटियर, पृ० 160 और आगे।

दण्डकहिरञ—यह पर्वत हिमालय-क्षेत्र में स्थित प्रतीत होता है।[1]

दवाला—महाराज संखोब के खोह ताम्रपत्र अभिलेख में इसका वर्णन प्राप्त होता है जो डाहल का प्राचीन रूप है और जो आधुनिक बुंदेलखंड का प्रतिनिधित्व करता है।[2] आटविकराज्यों में आलवक (गाजीपुर) और दवाला (डभाला) या जबलपुर से संबंधित आटविक राज्य संमिलित थे।[3]

दर्वाभिसार—इस स्थान का उल्लेख महाभारत (VII, 91, 43) में प्राप्त होता है, जिसमें स्टाइन के मतानुसार झेलम और चेनाव के मध्य स्थित निचले और मध्यवर्ती पहाड़ी इलाके संमिलित थे। कुछ विद्वानों के अनुसार स्थूल रूप से यह कश्मीर के पूँछ जिले और नौसेहरा को द्योतित करता था और संभवत: प्राचीन काम्बोज राज्य का एक खंड था (रायचौधरी, पॉ० हि० एं० इं०, चतुर्थ संस्करण, पृ० 200)। अधिक विवरणों के लिए बि० च० लाहा की इंडोलॉजिकल स्टडीज, भाग I, पृ० 17-18 द्रष्टव्य है।

देवलिया—यह उत्तरप्रदेश के प्रतापगढ़ जिले में स्थित है (इंस्क्रिप्शंस ऑव नार्दर्न इंडिया, दे० रा० भंडारकर द्वारा पुनरावृत्त, सं० 696, वि० 1393)।

देवरिया—यह गाँव इलाहाबाद से 11 मील दक्षिण-पश्चिम में यमुना के दाहिने तट पर और करछना से लगभग 9 मील पश्चिम में स्थित है (इलाहाबाद गजेटियर, लेखक, नेविल, पृ० 233)।

देविका—इस नदी का वर्णन पाणिनि की अष्टाध्यायी (VII.3.1), योगिनी तंत्र (2, 5,139 और आगे) और कालिका पुराण (अध्याय, 24, 137-138) में किया गया है। पार्जिटर ने इसे रावी नदी की सहायक दीग नदी से समीकृत करने की चेष्टा की है (मार्कण्डेय पुराण, पृ० 292, टिप्पणी)। वामन एवं मत्स्य पुराण इस समीकरण की पुष्टि करते हैं (अध्याय, 81, 84, 89; अध्याय, 113)। अग्नि पुराण (अध्याय, 200) के अनुसार यह सौवीर देश में बहती थी। पद्म पुराण (उत्तरखण्ड, श्लोक, 35-38) में इस नदी का वर्णन है। कालिकापुराण (अध्याय, 23, 137-138) में इसके स्रोत का उल्लेख किया गया है, जो सिवालिक पर्वत-माला की मैनाक पहाड़ियों में है। इस नदी का समीकरण उत्तरप्रदेश की देवा या देविका नदी से भी किया गया है, जो सरयू के दक्षिणी प्रवाह का एक अन्य नाम है (आगरा गाइड ऐंड गजेटियर, 1841, II, पृ० 120, 252)। कालिका-

---

[1] जातक II, पृ० 33.

[2] का० इं० इं०, जिल्द III.

[3] एपि० इं० VIII, 284-287.

पुराण के अनुसार यह गोमती और सरयू के मध्य वहती थी। महाभारत के अनुशासनपर्व (श्लोक, 7645 एवं 7647) से व्यंजित होता है कि देविका और सरयू दो पृथक् नदियाँ थीं।

धम्मपालगाम—यह गाँव काशी जनपद में संमिलित था (जातक, IV . 50)

दृषद्वती—ऋग्वेद (III, 23-4) में वर्णित इस नदी का वर्णन तत्कालीन ब्रह्मावर्त्त (II, 17) की दक्षिणी एवं पूर्वी सीमा के रूप में किया गया है। महाभारत के अनुसार यह कुरुक्षेत्र की एक सीमा का निर्माण करती थी (वनपर्व, 50 .74)। कालिका पुराण में (अध्याय, 51,77 और आगे) इसे गंगा की भाँति दृष्टिगत होने वाली बतलाया गया है। दृषद्वती एवं कौशिकी का संगम एक अपूर्व तीर्थ था। इस नदी का समीकरण आधुनिक चित्रंग से किया गया है जो सरस्वती के समानांतर प्रवाहित होती है (रैप्सन, ऐंश्येंट इंडिया, पृ० 51; इंपीरियल गज़ेटियर ऑव इंडिया, पृ० 26)। इस नदी का स्रोत सिरमौर पहाड़ियों में निर्दिष्ट किया जा सकता है। एल्फिंसटन और टॉड ने इसे अंबाला और सिंध से वहने वाली घग्घर से समीकृत करने का प्रयत्न किया है जो अब राजस्थान की मरुभूमि में विलुप्त हो गयी है (ज० ए० सो० बं०, VI, 181) जब कि कनिंघम ने इसे राक्षी नदी वतलाया है जो थानेश्वर के दक्षिण-पूर्व से बहती है (आर्क्यॉलाजिकल सर्वे रिपोर्ट, XIV)। कुछ विद्वानों ने इसे आधुनिक चितंग या चित्रंग से समीकृत किया है (ज० रा० ए० सो०, 25, 58)। वामन पुराण (अध्याय, 34) में कौशिकी को दृषद्वती की एक शाखा बतलाया गया है। भागवत पुराण में भी इस नदी का उल्लेख प्राप्त होता है V. 19, 18; X, 71, 22)। योगिनीतंत्र (2, 5, 139 और आगे) में भी इसका वर्णन प्राप्त होता है।

द्वैतवन—अपने वनवास के काल में पाण्डवों ने इस वन में निवास किया था। यह एक मुक्त स्थान समझा जाता था जिस पर किसी राजा का अधिकार नहीं था। इसकी सीमा में द्वैत नामक झील की स्थिति के कारण इसे द्वैतवन कहा जाता था। महाभारत के अनुसार यह किसी मरुभूमि के निकट था और सरस्वती नदी इससे होकर बहती थी। उत्तरपूर्व में तंगण और दक्षिणपूर्व में कुरुक्षेत्र तथा हस्तिनापुर के मध्य में स्थित यह हिमालय के समीप ही था। यहीं से पांडव महाभारत के वनपर्व में वर्णित अपनी तीर्थयात्रा पर निकले थे (एपि० इं०, XXVII, भाग VII, जुलाई, 1948, पृ० 319, और आगे)।

एकसाला—यह ब्राह्मणों का एक गाँव था जहाँ कोशल-निवासियों के बीच बुद्ध एक बार रुके थे। गृहस्थों की एक बड़ी सभा से परिवृत्त होने पर पर उन्होंने

धम्म पर प्रवचन किया था। यहीं पर मार बुद्ध द्वारा पराजित हुआ था (संयुत्त, I, पृ० 111)।

गढ़वा—चन्द्रगुप्त द्वितीय के गढ़वा शिलालेख में इस गढ़ का उल्लेख है जिसमें इलाहाबाद जिले के अरैल और बारा परगने के कुछ गाँव संमिलित थे (कार्पस, इं० इं०, जिल्द, III)। इस अभिलेख के अनुसार गढ़वा इलाहाबाद जिले की करछना तहसील में स्थित था।

गण्डकी (गंडक)—भागवत पुराण (X. 79.11; V.7.10) के अनुसार इसे गण्डकी और चक्र नदी भी कहा जाता था। पद्म पुराण (अध्याय 21) में इसे पुनीत बताया गया है। योगिनीतंत्र (2।1, पृ० 112-113) में गण्डकी नदी का उल्लेख प्राप्त होता है। यह गंगा की एक बड़ी, ऊपरी सहायक नदी है जिसका उद्‌गम दक्षिणी तिब्बत की पहाड़ियों में है। नेपाल से गुजरते हुए इसमें बाँईं ओर से चार और दाहिनी ओर से दो सहायक नदियाँ मिलती हैं। गण्डक में दाँईं ओर से मिलने वाली इसकी ऊपरी सहायक नदी नेपाल में नयाकोट के पश्चिमोत्तर में और राप्ती नामक इसकी निचली सहायक नदी चंपारन जिले के ठीक पहले इसमें मिलती है। इसका मुख्य प्रवाह सारा जिले में सोनपुर, और मुज़फ्फरपुर जिले में हाजीपुर के मध्य गंगा में मिलता है, जबकि इसका क्षुद्र प्रवाह बसाढ़ में द्विशाखित हो कर किसी अन्य नदी से मिल जाता है। विस्तृत विवरण के लिए बि० च० लाहा की पुस्तक, रिवर्स ऑव इंडिया, पृ० 23-24 द्रष्टव्य हैं।

गण्डपर्वत—यह गंगोत्री पर्वत है जिसके पाद में बिन्दुसरोवर स्थित है। (मत्स्य पुराण, अध्याय 121)।

गन्धमादन—योगिनीतंत्र (1।15) में इस पर्वत का वर्णन है। भागवत पुराण में (IV.1.58; V.1.8; X.52.3) इसका उस पर्वत के रूप में उल्लेख है जिसके ऊपर ब्रह्मा अवतरित हुए थे। जातक में इसका वर्णन एक शैलकूट के रूप में किया गया है जहाँ राजा वेस्सन्तर अपने बाल-बच्चों के साथ गया था (जातक, VI, 519)। यह पर्वत रुद्र हिमालय का एक भाग है तथा महाकाव्य-कारों के मतानुसार यह कैलास पर्वतमाला का एक हिस्सा है। यह मन्दाकिनी द्वारा सिंचित बतलाया जाता है। हरिवंश (अध्याय, XXVI, 5-7) के अनुसार उर्वशी के साथ राजा पुरुरवा गंधमादन पर्वत की तलहटी में दस वर्ष तक रहे। पद्म पुराण (अध्याय, 133) के अनुसार वहाँ पर सुगंध नामक एक तीर्थ था। इस पुराण (उत्तरखण्ड, श्लोक, 35-38) में गंधमादन का वर्णन प्राप्त होता है। बाण ने हिमालय के एक शिखर के रूप में इसका वर्णन किया है (कादम्बरी, काले-संस्करण, पृ० 94)। कालिदास ने अपने कुमारसंभव (VIII, 28, 29, 75-86

में गंधमादन का वर्णन किया है। इस पर्वत से एक ऋषि राजा को देखने के लिए वाराणसी आया था (जातक, III, 452)। इस पर्वत में नंदमूल नामक एक गुहा थी, जिसमें बोधिसत्त्व निवास करते थे (सासनवंस, पा० टे० सो०, पृ० 68)। इस पर्वत पर एक विशाल शिवलिंग था (कालिका पुराण, 78.70)। इस पर्वत के पूर्व में काम-पर्वत स्थित था (वही, 79.57)। दिव्यावदान के अनुसार (पृ० 157) आश्रम-व्यवस्थापक रत्नक ने इस पर्वत से अशोकवृक्ष ले जा कर उस स्थान पर आरोपित किया था जहाँ पर बुद्ध ने चमत्कार दिखलाये थे। बुद्ध इस पर्वत पर गये थे जिस समय इसकी तलहटी में एक ब्राह्मण रहा करता था (बोधिसत्त्वावदान-कल्पलता, पंचम पल्लव, पृ० 25,31)।

गन्धर्व—महाभारत (II, 48, 22-23) में वर्णित गंधर्वदेश को कुछ लोगों ने गंधार देश से समीकृत किया है। रामायण में वर्णित गंधार देश सिंधु नदी के तट पर स्थित बतलाया जाता है (मोतीचंद्र, ज्यॉग्रेफिकल ऐंड इकनॉमिक स्टडीज इन द महाभारत, पृ० 115)।

गन्धार—गंधार[1] जो पालि ग्रंथों (अंगुत्तर, I, पृ० 213; वही IV, 252, 256 और 260) में वर्णित षोडश महाजनपदों में से एक है, पाणिनि की अष्टाध्यायी (4.1.169) और वीरपुरुषदत्त के नागार्जुनिकोण्ड अभिलेख में भी उल्लिखित है। मत्स्य (114. 41) एवं वायु पुराण (45.116) में इसका उल्लेख हुआ है। इसमें रावलपिंडी और पेशावर जिले संमिलित थे। धारयद्वसु प्रथम (522-486 ई० पू०) के बेहिस्तून अभिलेख में वर्णित देशों की सूची में इसका वर्णन है। धारयद्वसु के विशाल सूसा राजभवन अभिलेख में भी इसका वर्णन है। गदार (गंधार) के निवासी पारसीक साम्राज्य के अधीनस्थ जन प्रतीत होते हैं (ऐंश्येंट पर्सियन लेक्सिकन ऐंड द टेक्स्टस ऑव अखेमेनियन इंस्क्रिप्शंस, ले०, एच० सी० टॉमेन, वैंडरबिल्ट ओरियंटल सीरीज़, भाग VI)। गंधार जन का, जो ऋग्वेदिक युग से विज्ञात एक प्राचीन जन थे (ऋग्वेद, I, 126.7) वर्णन अशोक के पंचम शिलालेख में गंधार के निवासियों के रूप में किया गया है जो पश्चिमोत्तर पंजाब और उसके समीपस्थ प्रदेशों का द्योतक है। इस प्रकार यह सिंधु नदी के दोनों ओर स्थित था (रायचौधरी, पो० हि० एं० इं०, चतुर्थ संस्करण, पृ० 50; रामायण VII, 113, 11; 114, 11)। युवान च्वाङ् ने गंधार देश को पूर्व से पश्चिम तक 1,000 ली से अधिक और उत्तर से दक्षिण तक 800 ली से अधिक बतलाया है। उसके अनुसार यह देश खाद्यान्नों की प्रचुर उपज और

---

[1] ल्युडर्स की तालिका, सं० 1345.

प्रभूत फल-फूलों से समृद्ध था; वहाँ पर अधिक ईख उपजायी जाती थी तथा मिश्री का उत्पादन होता था। यहाँ की जलवायु गरम थी। यहाँ के निवासी भीरु एवं प्रायोगिक कलाओं के प्रेमी थे, (वाटर्स, ऑन युवान च्वाङ् I, 198-99)। इस देश में 1,000 से अधिक बौद्ध विहार थे किंतु वे पूर्णतः जीर्ण-शीर्ण हो चुके थे। अनेक स्तूप खंडहर हो गये थे। वहाँ पर 100 से अधिक देवमंदिर थे और विविध संप्रदाय अस्त-व्यस्त रहते थे, (वही, I, 202)। गंधार की प्राचीनतम राजधानी पुष्करावती थी, जिसकी स्थापना भरत के पुत्र और राम के भतीजे पुष्कर ने की थी (विष्णु पुराण, विल्सन संस्करण, भाग IV, अध्याय, 4)। गंधार की प्राचीन राजधानियाँ पुष्करावती या पुष्कलावती और तक्षशिला थीं, जिनमें प्रथम सिंधु नदी के पश्चिम और द्वितीय, सिंधु नदी के पूर्व में स्थित थी। कुछ विद्वानों का अनुमान है कि गंधार जनपद में कश्मीर और तक्षशिला प्रदेश संमिलित थे (रायचौधरी, पो० हि० ए० इं०, चतुर्थ संस्करण, पृ० 124) किंतु इसकी पुष्टि जातकों के साक्ष्य से नहीं होती (द्रष्टव्य जातक, III, 365)। इसमें पश्चिमी पाकिस्तान के पेशावर और रावलपिंडी जिले समाविष्ट हैं (महावंस, गाइगर द्वारा अनूदित, पृ० 82, टिप्पणी 2)। अभिधर्म कोषशास्त्र का प्रसिद्ध लेखक वसुबन्धु पुष्करावती का निवासी था जिसकी परिधि युवान-च्वाङ् के अनुसार लगभग 14 या 15 ली थी और जो अच्छी तरह से बसी हुयी थी, (वाटर्स, ऑन युवान च्वाङ्, I, 214)। अधिक विवरण के लिए, बि० च० लाहा की ट्राइब्स इन ऐंश्येंट इंडिया, पृ० 9 और आगे; ज्यॉग्रफी ऑव अर्ली बुद्धिज्म, पृ० 49-50 एवं इंडॉलॉजिकल स्टडीज, भाग I, पृ० 10 और आगे, द्रष्टव्य हैं।

गनेश्रा—यह मथुरा के निकट है। यहाँ पर फोगेल को एक खंडित अभिलेख प्राप्त हुआ था। इस अभिलेख से क्षहरातवंश के घटाक नामक एक क्षत्रप का नाम ज्ञात होता है।[1]

गंगा—गंगा जिसे अलकनंदा[2] या द्युधुनी[3] या द्युनदी[4] भी कहा जाता है, ऋग्वेद[5] और शतपथ ब्राह्मण (XIII. 5, 4, 11) में वर्णित है। पतंजलि के महाभाष्य (I, 1.9, पृ० 436) में इसका उल्लेख किया गया है। ब्रह्माण्ड पुराण

[1] ज० रा० ए० सो०, 1912, पृ० 121.

[2] भागवत पुराण, IV, 6, 24; XI, 29, 42.

[3] वही, III, 23, 39.

[4] वही, III, 5, 1; X, 75, 8.

[5] वही, X, 75, 5; VII, 45, 21.

(II. 18, 26-42; 50-52) तथा कालिदास के रघुवंश[1] में भी इसका वर्णन किया गया है। गंगा को भागीरथी और जाह्नवी[2] भी कहा जाता है। योगिनी-तंत्र (1.6; 2.1; 2.7.8; 2.5) में इसका उल्लेख है। गंगा की विजय कुरु-साम्राज्य की दूरतम सीमा द्योतित करती है (वेदिक इंडेक्स, I, 218, पा० टि० 4)। तैत्तिरीय आरण्यक (II. 20) के अनुसार गंगा एवं यमुना के बीच में रहने वाले विशेष रूप से सम्मानित होते थे। अथर्ववेद (IV. 7.1) में उल्लिखित वारणावती, लुडविग[3] के अनुसार गंगा ही प्रतीत होती है। गंगा (आधुनिक गंगा) नारायण के चरण से निकली हुयी बतलायी जाती है और मेरु पर्वत पर बहती थी; यहाँ से वह चार शाखाओं में विभक्त हो कर पूर्व, दक्षिण, पश्चिम और उत्तर में बहती है; शिव ने भरत की मध्यस्थता के कारण उसके दक्षिणी प्रवाह को भारत से हो कर बहने दिया।[4] हरिवंश[5] के अनुसार राजा पुरुरवा उर्वशी के साथ पाँच वर्षों तक मंदाकिनी नदी के तट पर रहे, जो गंगा का ही एक अन्य नाम है। मार्कण्डेय पुराण (पृ० 242-43) के अनुसार गंगा त्रिपथगामिनी है अर्थात् उनके तीन प्रवाह हैं। इसके तट पर राम और लक्ष्मण आये थे।[6] पूर्व में चैत्ररथवन तक बहने वाले इसके प्रवाह का नाम सीता है जो वरुणोद्-सरोवर तक जाता है। सुमेरु के दक्षिण और गंधमादन पर्वत की ओर बहने वाली सरिता का नाम अलकनन्दा है जो वेगवती धाराओं में मानसरोवर में गिरती है। वायु एवं मत्स्य पुराण में, मार्कण्डेय पुराण के समान ही गंगावतरण का विवरण दिया गया है जब कि विष्णु, भागवत, पद्म पुराण तथा महाभारत (85, 88-98; 87, 14) के विवरण प्रभूत अंशों में उससे सहमत हैं। बाण की कादम्बरी (पृ० 75) के अनुसार भगीरथ द्वारा पृथ्वी पर लायी जाते समय गंगा ने यज्ञ करते हुए जह्नु की वेदी को बहा दिया था। पद्म पुराण (अध्याय, 21) में गंगा-सागर-संगम का उल्लेख है जो पवित्र माना जाता है। ब्रह्म पुराण (अध्याय, 78, श्लोक, 77) के अनुसार विंध्यपर्वत के दक्षिण में बहने वाली गंगा को गौतमी गंगा और उसके उत्तर में प्रवाहित होने वाली गंगा को भागीरथी गंगा कहा जाता है। वायु पुराण में दिये गये रोचक विवरण के लिए

---

[1] IV, 73; VI, 48; VII, 36; VIII, 95; XIII, 57; XIV, 3.

[2] रघुवंश VII, 36; VIII, 95; X, 26, 69.

[3] ऋग्वेद का अनुवाद 3, 210; त्सिमर, आल्टिनडिशेज लेबेन, 20.

[4] मार्कण्डेय पुराण, 56, 1-12.

[5] अध्याय, XXVI, 5-7.

[6] रामायण, आदिकाण्ड, सर्ग, 23, श्लोक, 5.

बि० च० लाहा की ज्यॉग्रेफिकल एसेज़, जिल्द I, पृ० 85 नामक पुस्तक द्रष्टव्य है)। पद्म पुराण (अध्याय, 4, श्लोक, 107) में गंगा एवं सिंधु के संगम को एक पवित्र तीर्थ बतलाया गया है। इस पुराण में गंगा की सात शाखाओं यथा—वातोदका, नलिनी, सरस्वती, जम्बू नदी, सीता, गंगा एवं सिंधु के प्रति संकेत है (स्वर्गखंड, अध्याय, 2, श्लोक, 68)। गंगा एवं उसकी सहायक नदियों के विषय में एरियन ने कुछ उपयोगी सूचनाएँ दी हैं जहाँ पर वह कहता है: "मेगस्थनीज़ ने लिखा है कि दोनों में (गंगा और सिंधु नदियों में) गंगा अधिक बड़ी है। साथ ही इसमें सोनोस (Sonos) सिट्टोकेटिस (Sittokatis) तथा सोलोमेटीज (Solomatis) नदियाँ जो नवपरिवहन के योग्य हैं एवं कोण्डोचेटीज़ (Kondochates) सैम्बोस (Sambos), मगोन (Magon), एगौरैनिस तथा ओमेलिस (Agoranis; Omalis) नामक नदियाँ भी मिलती हैं। इनके अतिरिक्त इसमें कामेनसीज़ (Kommenases) नामक एक विशाल नदी, काकौथिस (Kakouthis) तथा ऐंडोमैटिस (Andomatis) नदियाँ मिलती हैं (मैक्रिंडिल, ऐंश्येंट इंडिया, पृ० 190-191)। जम्बुद्दीवपण्णति के अनुसार 14,000 अन्य सरिताओं को समाहित कर गंगा पूर्व की ओर बहती है। महाभारत में विंदुसर को तथा पालि-ग्रंथों के अनोतत्त झील के दक्षिणी भाग को इस सरिता का स्रोत बतलाया गया है। गढ़वाल जिले में गंगोत्री में भागीरथी गंगा प्रकट होती है। हरद्वार से बुलंदशहर तक गंगा का प्रवाह दक्षिणाभिमुख और उसके पश्चात् इलाहाबाद तक जहाँ इसमें यमुना नदी मिलती है, इसका प्रवाह दक्षिणपूर्वाभिमुख है। इलाहाबाद से राजमहल तक इसका प्रवाह पूर्वाभिमुख है। राजमहल के आगे यह बंगाल में प्रविष्ट होती है। हरद्वार से प्रयाग तक प्रायः यह यमुना के समानान्तर बहती है। महाभारत (84.29) में सप्तगंगा का उल्लेख है। (अधिक विवरण के लिए लाहा की रिवर्स ऑव इंडिया, पृ० 17 और आगे तथा ज्यॉग्रेफिकल ऐसेज, 84 और आगे द्रष्टव्य है)।

गर्गरा—यह किसी नदी का नाम है। विश्ववर्मन के गंगधर अभिलेख में इस गर्गरा का उल्लेख है जो चंबल की सहायक, वर्तमान कालीसिंध नामक नदी का प्राचीन नाम है (का० इं० इं०, जिल्द, III)।

गढ़मुक्तेश्वर—गंगा के दाहिने तट पर मेरठ जिले में स्थित यह एक कस्बा है। यह हिंदुओं का एक तीर्थ है और यह अपने गंगा-मंदिर के लिए विख्यात है।

गर्जपुर-(गर्जपतिपुर)—वाराणसी के पूर्व में 59 मील दूर, आधुनिक गाजीपुर से समीकृत, गंगा तट पर स्थित यह एक शहर था। इसे गर्जनपति भी कहते थे। इसका चीनी नाम चेन-चू (Chen Chu) है। इसकी परिधि 2,000 ली थी।

यहाँ की भूमि धान्यवती और उपजाऊ तथा निरंतर कर्षित होती थी। यहाँ की जलवायु समशीतोष्ण एवं यहाँ के निवासी ईमानदार थे। यहाँ पर दस संघाराम और बीस देवमंदिर थे (बील, बुद्धिस्ट रिकार्ड्स ऑव द वेस्टर्नवर्ल्ड, II, 61)।

गौरीशंकर—यह नेपाल में स्थित माउंट एवरेस्ट है। नेपाल-तिब्बत-सीमा पर स्थित हिमालय का यह शिखर, वस्तुतः विश्व का सर्वोच्च पर्वत-शिखर माना जाता है। यह 29,002 फीट ऊँचा है (लाहा, माउंटेंस ऑव इंडिया, पृ० 2, 6)। यह विविध नामों देवधुंग, कोमोकंकर, कोमो लुंगमा, कोमो उरी, चेल्लुंगुबू और मि-ति-गु-ती-च-पु लोंगंग, से विश्रुत है। कुछ विद्वानों की मान्यता है कि राधा-नाथ सिकदार माउंट एवरेस्ट के अन्वेषक नहीं थे। माउंट एवरेस्ट का अन्वेषण भारतीय सर्वेक्षण-विभाग (Survey of India) के संयुक्त प्रयासों का फल था (बी० टी० गुलाटी का 'माउंट-एवरेस्ट, इट्स नेम ऐंड हाइट' नामक शोधपत्रक, सर्वे ऑव इंडिया—तकनीकी पेपर, संख्या, 4)। गुलाटी ने इस बात के प्रति संकेत किया है कि माउंट एवरेस्ट की ऊँचाई और उसके स्थानीय नामों के विषय में निश्चित मत व्यक्त करना दुष्कर है। 1953 में हिलेरी और तेनजिंग इसके शिखर पर पहुँचे और उन्होंने देखा कि यह शिखर पूर्णतः कोणाकार और हिमाच्छादित था जिस पर वे मुक्त रूप से टहल सकते थे।

गविधुमत—इसे इटावा से 24 मील उत्तर पूर्व में और फर्रुखाबाद जिले में संकिसा से 36 मील दूर पर स्थित कुडरकोट से समीकृत किया जा सकता है (नं० ला० दे, ज्यॉग्रेफिकल डिक्शनरी, पृ० 59)। पतंजलि ने अपने महाभाष्य में इसका उल्लेख किया है (2.3.21, पृ० 194)।

घोषिताराम—घोषित नामक एक श्रेष्ठि द्वारा निर्मित यह विहार कौशाम्बी में स्थित था (दीघ, I, 157, 159; संयुक्त II, 115; पपंचसूदनी, II, 390)। इस विहार का नामकरण इसके नाम पर हुआ था। हाल में किये गये यहाँ के उत्खननों से एक अभिलेख प्राप्त हुआ है, जिससे कौशाम्बी की सीमा पर दक्षिणी पूर्वी कोने में स्थित इस प्रसिद्ध आराम की अवस्थिति बतलाने में सहायता मिलती है। यह स्थान यमुना नदी से अधिक दूर नहीं प्रतीत होता है। यह आराम, बुद्ध के निर्वाण के पश्चात् भी आनंद का प्रिय आवास था (संयुत्त, III, 133 और आगे)। प्रायः यहाँ पर सारिपुत्त, महाकच्चायन और उपवाण आया करते थे (वही, V, 76-77; परमात्थदीपनी ऑन द पेट्टावत्थु, 140-144)। अनुपिया छोड़ने के पश्चात् बुद्ध कौशाम्बी आये और वहाँ पर वह इस आराम में रुके (विनय, II, पृ० 184)। यहीं पर चण्ण आनन्द से मिला था (वही, II, पृ० 292)। चण्ण नामक एक भिक्षु इस आराम का सदस्य था। बुद्ध ने उसकी मृत्यु के समय उसके

लिए ब्रह्मदण्ड का विधान किया था (विनय टेक्स्टस, II, 370)। मण्डिस्स एवं जालिय नामक दो परिब्राजकों ने यहीं पर बुद्ध का साक्षात्कार किया था (दीघ, I, 157, 159-160)। पिण्डोल भारद्वाज जिसने उदयन को बौद्ध धर्मानुयायी बनाया था, यहीं रहा करता था (तु० साम्स ऑव द ब्रेदेरेन, पृ० 111)। थेर उरुधम्मरक्खित के नेतृत्व में इस आराम के कोई तीस हजार भिक्षु ईसा पूर्व प्रथम शताब्दी में राजा दुट्ठगामिणी के शासन-काल में लंका गये (महावंस, पा० टे० सो०, पृ० 228)। जब पाँचवीं शताब्दी ई० में फा-ह्यान कौशाम्बी गया, तब उसने घोपिताराम में अधिकांशतः हीनयान मत के अनुयायी बौद्ध स्थविरों को देखा (लेग्गे, ट्रेवेल्स ऑव फा-ह्यान, पृ० 96)। सातवीं शताब्दी ई० में कौशाम्बी जाने पर युवान च्वाङ् ने देखा कि यहाँ पर पूर्णतः ध्वस्त दस से अधिक संघाराम थे (वाटर्स, ऑन युवान च्वाङ् I, 366)। इन दस विहारों में घोपिताराम भी एक था, जो कौशाम्बी के दक्षिण पूर्व में स्थित था। कुक्कुटाराम और पावारिक (पावरिया) आम्बवन क्रमशः इसके दक्षिण पूर्व और पूर्व में स्थित थे (वही, 370-71)। अशोक ने घोपिताराम के समीप, 200 फीट से भी ऊँचा एक स्तूप बनवाया था।

गोहर्व—यह गाँव इलाहाबाद जिले की मंझनपुर तहसील में स्थित है, जहाँ से कर्णदेव के दो ताम्रपत्र प्राप्त हुये थे (एपि० इं० XI, पृ० 139-46)।

गोकर्ण—स्वयंभू पुराण के अनुसार स्वयंभू ने आठ पवित्र व्यक्ति उत्पन्न किये थे। उनमें से एक गोकर्ण के गोकर्णेश्वर थे। इसे (गोकर्ण) वागमती नदी से समीकृत किया जाता है (रा० ला० मित्र, ने० बु० लि०, पृ० 253; लाहा, ज्यॉग्रेफिकल एसेज़, पृ० 46)।

गोकुल—भागवत पुराण में एक गाँव के रूप में इसका वर्णन है (X. 2. 7; X. 5. 32)। यह यमुना के बाँयें तट पर स्थित है। वैष्णवधर्म के इतिहास में यह विख्यात है। यहाँ पर गोकुलनाथ जी का मंदिर है। कंस से भयभीत वसुदेव यमुना नदी के पार चले गये और उन्होंने श्रीकृष्ण को नंद के संरक्षण में छोड़ दिया जो वहीं रहा करते थे। चैतन्य के समकालीन और वैष्णवों के वल्लभ-संप्रदाय के संस्थापक वल्लभाचार्य ने महावन का अनुकरण करके एक नूतन गोकुल का निर्माण करवाया। गोकुल के निकट वृहद्वन नामक एक जंगल था (भागवत पुराण, X. 5,26; X.7.38)।

गोमती—यह नदी प्रायः निश्चित ही ऋग्वेद में वर्णित गोमती है (ऋग्वेद, X. 75.6) जो संभवतः सिंधु की एक पश्चिमी सहायक नदी आधुनिक गोमल है। इसे आधुनिक गोमती नदी से समीकृत करने का भी प्रयत्न किया गया है जो वाराणसी के आगे गंगा में मिलती है और रामायण में जिसे अयोध्या में प्रवाहित होने-

वाली तथा पशुओं से आकीर्ण बतलाया गया है (अयोध्याकाण्ड, अध्याय 49)। यह शाहजहाँपुर जिले से निकलती है और वाराणसी तथा गाजीपुर के बीचोबीच, गंगा में मिलती है (इं० ऐं०, भाग XXII, 1893, पृ० 178)। महाभारत (अध्याय 84, 73) और भागवत पुराण (V. 19,18; X. 79,11) में इस नदी का वर्णन प्राप्य है। पद्म पुराण (उत्तरखंड, श्लोक, 35-38) में भी इसका उल्लेख प्राप्त होता है। स्कन्द पुराण में इसी नाम की एक अन्य नदी का वर्णन है (अवंतीखण्ड, अध्याय 60)। स्पष्टतः यह नदी गुजरात से हो कर बहती थी जिसके तट पर द्वारका स्थित था। कुछ विद्वानों ने एक पृथक् नदी के रूप में धूत-पापा को फैजाबाद मंडल में सुल्तानपुर से 18 मील दक्षिणपूर्व में गोमती के तट पर स्थित आधुनिक धोपाप से समीकृत किया है।

स्कन्द पुराण—(काशीखण्ड, उत्तर, अध्याय 59) के अनुसार वाराणसी के निकट यह गंगा की एक सहायक नदी थी (नंद लाल दे, ज्यॉ० डिक०, पृ० 57, 231; वि० च० लाहा, रिवर्स ऑव इंडिया, पृ० 21)।

गोमतीकोट्टक—जीवितगुप्त के देवबर्णार्क अभिलेख में इसका उल्लेख प्राप्त होता है। यह कहीं गोमती (गोमती) नदी के तट पर स्थित प्रतीत होता है जो शाहजहाँपुर जिले से निकल कर लखनऊ और जौनपुर से बहती हुयी वाराणसी और गाजीपुर के बीचोबीच गंगा में मिलती है (काव्य, इं० इं० जिल्द, III)।

गोमुखि—इसे रामायण में वर्णित गोकर्ण से समीकृत किया जा सकता है (I, 42)।

गोतम—यह पर्वत हिमालय के निकट स्थित प्रतीत होता है (अपदान, पृ० 162)।

गोवर्धन (गोवद्ढन-जातक, IV. 80)—यह पहाड़ी मथुरा जिले में वृंदावन से 18 मील दूर पर स्थित है। पैंठो नामक गाँव में कृष्ण ने इस पहाड़ी को अपनी कनिष्ठिका पर उठाया था और छत्र के रूप में इन्द्र की वर्षा से अपने पशुओं एवं पुर-वासियों की रक्षा करने के लिए धारण कर रखा था (महाभारत, उद्योगपर्व, अध्याय, 129)। भागवत पुराण (V. 19. 16; X. 11. 36; 13. 29) एवं हरिवंश (अध्याय, 55) में भी बतलाया गया है कि गोवर्धन गिरि पर हरिदेव और चक्रेश्वर महादेव के मंदिर एवं श्रीनाथ जी, जिन्हें गोपाल कहा जाता था, की मूर्ति है। कालिदास ने अपने रघुवंश (VI. 51) में इस पहाड़ी का वर्णन किया है। योगिनीतंत्र (1114) में इसका उल्लेख मिलता है।

गोविसना—यह मुरादाबाद के उत्तर में कहीं स्थित था। उजाएन गाँव के निकट स्थित प्राचीन दुर्ग गोविसना के इस प्राचीन नगर का प्रतिनिधित्व करता है

जहाँ सातवीं शताब्दी ईसवी में युवान च्वाङ् आया था। गोविसना विषय की परिधि 333 मील थी। इसे गोविसन्न भी कहा जाता था (वाटर्स, ऑन युवान् च्वाङ्, I, 331)। इसके उत्तर में ब्रह्मपुर, पश्चिम में मदावर, दक्षिण और पूर्व में अहिच्छत्र स्थित थे। पश्चिम में रामगंगा से ले कर पूर्व में घाघरा तक फैले हुये काशीपुर, रामपुर और पीलीभीत के आधुनिक जिले तथा दक्षिण में बरेली तक के क्षेत्र गोविसना विषय में संमिलित थे (कनिंघम, ए० ज्यॉ० इं०, पृ० 409 और आगे)।

हलिद्दवसन—कोलियदेश में स्थित यह एक गाँव था जहाँ पर बुद्ध गये थे (संयुक्त, V, 115)।

हड़प्पा—हड़प्पा के अवशेष पश्चिमी पंजाब (आधुनिक पश्चिमी पाकि०) के जिले में स्थित है। हड़प्पा-संस्कृति का प्रसार मुख्य सिंधु नदी की घाटी के और आगे भी था। 1946 में किये गये यहाँ के उत्खनन से कच्ची ईंटों द्वारा निर्मित प्रतिरक्षात्मक दीवाल के नीचे दबी हुयी एक नूतन मृच्छिल्पकला प्रकट हुयी है। हड़प्पा के निवासी धरती में खोदी गयी कब्रों में अपने मृतकों को दफनाया करते थे। हड़प्पा के 'AB' टीले तथा प्रतिरक्षा प्राचीर आदि से यह प्रकट होता है कि हड़प्पा की सभ्यता अधिक विकसित थी। लोग सुखी जीवन व्यतीत करते थे। वाणिज्य तथा व्यापार अतीव विकसित थे। विस्तृत विवरण के लिए, मा० स्व० वत्स की एक्सकेवेशंस ऐट हड़प्पा, 1-11, 1940, द्रष्टव्य है।

हराहा—यह बाराबंकी जिले में स्थित है। यहाँ ईशानवर्मन् मौखरि के शासनकाल का एक शिलापट्ट-अभिलेख प्राप्त हुआ था (एपि० इं० XIV, पृ० 110)।

हरिद्वार—उत्तरी भारत में स्थित यह वैष्णवों का एक तीर्थ है। महाभारत के अनुसार इसे गंगाद्वार और वैष्णव साहित्य के अनुसार इसे मायापुरी कहा जाता है। गंगा-तट पर विदुर ने मैत्रेय ऋषि से श्रीमद्भागवत सुना था। यहीं पर गंगा हिमालय से अवतरित हुयी थीं। यह सहारनपुर जिले में स्थित है।

युवान च्वाङ् के अनुसार मदावर की पश्चिमोत्तर सीमा और गंगा के पूर्वी तट पर स्थित इस नगर को मो-यु-लो (Mo-Yu-Lo) या मयूर कहा जाता था। गंगा नहर के ऊपरी सिरे पर स्थित मयूर मायापुर का विध्वस्त स्थल है। चीनी यात्री के अनुसार इसकी परिधि $3\frac{1}{3}$ मील थी और यह अतीव जनसंकुल था। कनिंघम के अनुसार इस नगर को मयूरपुर इसलिए कहा जाता है क्योंकि इसके

समीप बहुसंख्यक मयूर पाये जाते थे।[1] विस्तार के लिए द्रष्टव्य इंपीरियल गज़ेटियर्स ऑव इंडिया, भाग XIII, 51 और आगे)।

हस्तिनापुर—उत्तरप्रदेश के मेरठ जिले में गंगा-तट पर स्थित यह कुरुओं की प्राचीन राजधानी थी। परंपरानुसार इसे मवाना तहसील के मेराट नामक एक प्राचीन गाँव से समीकृत किया गया है।[2] यहाँ का राजा धृतराष्ट्र था। वृद्ध धृतराष्ट्र से समझौता करके पंद्रह वर्षों तक हस्तिनापुर में रहने के उपरांत पाण्डु वन को चले गये जहाँ वह अपनी पत्नियों सहित वन में किसी दावानल में भस्मीभूत हो गये। अर्जुन का प्रपौत्र परीक्षित हस्तिनापुर का शासक था। वह एक प्रखर, मेधावी और महान् वीर पुरुष था। वह एक शक्तिशाली धनुर्धर था। उसमें एक कर्त्तव्यपरायण राजा के सभी सद्गुण विद्यमान थे। आधिसीम कृष्ण के पुत्र निचक्षु के शासनकाल में यह नगर गंगा की बाढ़ में नष्ट हो गया था और बाद में इस राजा ने कौशाम्बी को अपनी राजधानी बनाया।[3] मार्कण्डेय (LVIII, 9) एवं भागवत पुराणों (I.3.6; I.8.45, IV, 31.30; X, 57.8) में गजाह्वयों का उल्लेख है, जो कुरु-राजधानी हस्तिनापुर से संबंधित थे। भागवत पुराण (I.9.48; I.15.38; I.17.44; III.1,17; IX.22.40; X.68.16) के अनुसार इस नगर का नाम, गजाह्वय भी था। प्रथम तीर्थंकर ऋषभ हस्तिनापुर के निवासी थे। उन्होंने भरत को सिंहासनारूढ़ किया था। उन्होंने अपना राज्य अपने संबंधियों में बाँट दिया था। विविधतीर्थकल्प के अनुसार राजा हस्ति ने भागीरथी के तट पर हस्तिनापुर की स्थापना की थी। जैन धर्म के प्रवर्तक प्रायः इस नगर में आते थे।[4] हरिवंश (20.1053-54) और भागवत पुराण (IX. 21, 20) से इस तथ्य की पुष्टि होती है। हस्ति या हस्तिन् के अजामीढ़ एवं द्विमीढ़ नामक दो पुत्र थे। अजामीढ़ ने हस्तिनापुर में मुख्य पौरव-वंश का शासन बनाये रखा। उसके तीन पुत्र थे और उनसे तीन पृथक् राजवंशों का का उद्भव हुआ।[5] अधिक विवरण के लिए वि० च० लाहा की 'सम जैन कैनॉनिकल सूत्राज', पृ० 172, नामक पुस्तक देखिये।

---

[1] कनिंघम, एं० ज्यॉ० इं०, पृ० 402 और आगे, 703.

[2] कनिंघम, एं० ज्यॉ० इं०, पृ० 702.

[3] पार्जिटर, डाइनस्टीज़ ऑव द कलि एज, पृ० 5; तु० रामायण, II, 68. 13; महाभारत, I, 128.

[4] भगवतीसूत्र, II, 9; थानंग, 9, 691.

[5] पार्जिटर, एं० इं० हि० ट्रे०, पृ० 111.

हेमवत—प्राचीन काल में हिमालय पर्वत, हिमवान, हिमाचल[1] हिमवंतपदेस, हिमाद्रि,हैमवत और हिमवत नामों से विश्रुत था। प्राचीन भारतीय ग्रंथों में इसका वर्णन किया गया है।[2] इसे पर्वतराज[3] और नागाधिराज[4] कहा जाता है। महाभारत[5] के अनुसार हेमवत प्रदेश नेपाल (नेपाल-विषय) के ठीक पश्चिम में स्थित था। महाभारत ही के अनुसार इसमें ऊँचे पर्वतों के प्रदेश को द्योतित करने वाला कुलिन्द विषय, (टालेमी का कुनिन्द्राई, Kunindrae) जिसमें गंगा, यमुना और सतलज के स्रोत स्थित थे—संमिलित था। इस प्रकार इसमें आधुनिक हिमाचल प्रदेश के कुछ भाग उसके समीपस्थ इलाके तथा देहरादून के कुछ हिस्से संमिलित प्रतीत होते हैं। मार्कण्डेय पुराण (अध्याय, 54, 24; 57, 59)के रचयिता ने हिमालय पर्वत (हिमवत) को एक समुद्र से दूसरे समुद्र तक धनुप की प्रत्यंचा के समान फैला हुआ बतलाया है (कार्मुकस्य यथा गुणाः)। मार्कण्डेयपुराण के इस कथन की पुष्टि महाभारत (VI. 6.3) और कुमारसंभव (I, 1) से होती है। कैलास[6] और हिमालय (हिमवान) नामक दो सर्वोच्च पर्वत, मेरुपर्वत[7] के दक्षिण में स्थित हैं। वे दोनों पर्वत पूर्व एवं पश्चिम में, तथा समुद्र में फैले हुए हैं।[8] संस्कृत साहित्य में प्रायः वर्णित कैलास पर्वत, हिमालय पर्वतमाला के मध्यभाग के उत्तर में स्थित था।[9] बाण के हर्षचरित (सप्तम उच्छवास)के अनुसार अपना राजसूय यज्ञ पूरा करने की दृष्टि से अर्जुन ने हेमकूट को जीता था। बाण की कादम्बरी (श्लोक, 16) के अनुसार यह पर्वत स्फटिक के कारण धवल या स्फटिक

---

[1] पद्म पुराण, उत्तरखंड, (श्लोक, 35-38), इसमें भौगोलिक नामों की एक सूची दी गयी है; पाणिनि कृत अष्टाध्यायी (IV. 4.1.12.)

[2] अर्थववेद, XII, 1.11; ऋग्वेद, X, 121, 4; तैत्तिरीय संहिता, V, 5, 11, 1; वाजसनेयी संहिता, XX IV, 30; XXV, 12; ऐतरेय ब्राह्मण, VIII, 14, 3; भागवत पुराण, I, 13, 29; I, 13, 50; कूर्म पुराण, 30, 45-48; योगिनीतंत्र, I, 16.

[3] अंगुत्तर, I, 152; तु० कालिका पुराण, अध्याय 14, 51.

[4] कुमारसम्भव, I, 1.

[5] महाभारत, वनपर्व, अध्याय, 253.

[6] योगिनीतंत्र, 1.1; 1.12.

[7] मार्कण्डेय पुराण, अध्याय, 54, श्लोक 23.

[8] पार्जिटर, मार्कण्डेय पुराण, पृ० 277.

[9] वही, पृ० 376.

शिलाओं से निर्मित था। कुणाल जातक[1] में हिमालय को 500 लीग ऊँचा और 3,000 लीग चौड़ा एक विशाल क्षेत्र बतलाया गया है। अश्वघोष ने हिमालय (हिमवान) का उल्लेख किया है और मध्यदेश को इसके और पारिपात्र के मध्य स्थित बतलाया है।[2] शिव जो कैलास और हिमालय के शिखरों पर रहते थे, का स्तवन दो नाग करते थे।[3]

मैनाकपर्वत विशाल हिमालय पर्वतमाला का एक भाग था।[4] हिमालय क्षेत्र में दद्दर नामक एक पर्वत भी था।[5] इसमें चार पर्वतमालाएँ, जंगल और एक प्राकृतिक झील थी।[6] हिमालय के समीप धम्मक नामक एक अन्य पर्वत था जहाँ पर प्रथम बुद्ध दीपंकर के लिए एक कुटी और एक आश्रम का निर्माण किया गया था।[7] हिमालय के पार्श्व में चण्डगिरि नामक एक पर्वत था और उसके निकट ही एक बड़ा जंगल था।[8] असम और मणिपुर तक फैला हुआ पूर्वी हिमालय क्षेत्र मोटे रूप से जम्बूद्वीप का हैमवत खंड था, जिसके लिए अशोक ने अपने तेरहवें शिलालेख में नाभक और नाभपंति शब्दों का प्रयोग किया है।[9] थेर मज्झिम बौद्ध धर्म का प्रचार करने के लिए हिमालय क्षेत्र में भेजे गये थे।[10] इस पर्वत पर रहने वाले यक्ख-वृंद को उन्होंने बौद्ध धर्म में दीक्षित कर लिया। ये लोग अधिकांशतः हिंसक और अतिशक्तिशाली यक्खों की पूजा किया करते थे। उन्हें पाँच स्थविरों द्वारा प्रतिपादित बुद्ध के सिद्धांतों को बतलाया गया।[11] पौलत्स्य राक्षसगण हिमालय पर्वत से संबंधित[12] हैं। मार्कण्डेय पुराण[13] के अनुसार, राक्षस कैलास पर्वत के शीर्ष

[1] जातक, संख्या 536.

[2] सौन्दरनन्द काव्य, II, श्लोक, 62.

[3] पार्जिटर, मार्कण्डेय पुराण, पृ० 132.

[4] महाभारत, सभापर्व III, 58-60; वनपर्व, CXXXV, 10,694-95.

[5] जातक, III, पृ० 16.

[6] वही, IV, पृ० 338.

[7] बुद्धवंस, II, श्लोक 29.

[8] महावस्तु, III, 130.

[9] बरुआ, अशोक ऐंड हिज इंस्क्रिप्शंस, भाग I, पृ० 101.

[10] महावंस, XII, 6; थूपवंस, 43; महाबोधिवंस, 114-115.

[11] सासनवंस, पृ० 169; तु० समन्तपासादिका, I, 68.

[12] महाभारत, III, 274, 15,901; V. 110, 3,830; रामायण, III 32,14–16.

[13] पार्जिटर द्वारा अनूदित, पृ० 6.

पर रहते थे। जम्बूद्वीप (भारत प्रायद्वीप) का हिमालय क्षेत्र (हिमवंतपदेस) पालि विवरणों के अनुसार उत्तर में सुमेरु पर्वत (पालि, सिनेरु) के दक्षिण की ओर तक फैला हुआ था। कालसी शिलालेखों, निग्लीव और लुम्बिनी से प्राप्त अशोक के स्तंभलेखों तथा चंपारन से प्राप्त अभिलेखों में भारत के हैमवत खंड का उल्लेख प्राप्त होता है। हिमालय क्षेत्र (हैमवंतपदेस) को कुछ विद्वानों ने तिब्बत से, फर्ग्युसन ने नेपाल से और रीज डेविड्स ने मध्य हिमालय से समीकृत किया है। प्राचीन भूगोलवेत्ताओं के अनुसार पंजाब के पश्चिम में सुलेमान से लेकर पूर्व में असम और अराकान पर्वतमाला तक भारत की संपूर्ण उत्तरी सीमा पर फैली हुयी पूरी पर्वत श्रेणी के लिए हिमवत नाम का प्रयोग किया जाता था। शाक्य और कोलिय नामक दो प्राचीन भारतीय जनों को बुद्ध ने हिमालय की ओर भेज दिया था और उन्होंने हिमालय क्षेत्र के अनेक पर्वतों के प्रति संकेत किया था।[1] कैलास पर्वत हिमालय पहाड़ का एक भाग था।[2] किंतु मार्कण्डेय पुराण में इसे एक पृथक् पर्वत बतलाया गया है। कैलास उच्च शिखरों वाला एक पर्वत था। यह शुद्ध-धवल था (महाबोधिवंस, 13, 26, 45 और 79)। इस पर्वत पर स्थित विहार से थेर सुरियगुत्त 96, 000 भिक्षुओं के साथ लंका गये थे (थूपवंस, 73)। मानस-सरोवर से लगभग 25 मील उत्तर में कैलास पर्वत जिसे तिब्बत निवासी कांग्री-पोचे कहते हैं, के शिखर पर सुधम्मपुर स्थित है (सासनवंस, पृ० 38)।

अल्बेरुनी के अनुसार मेरु और निषध जिन्हें पुराणों में वर्ष पर्वत कहा गया है, हिमालय पर्वत-श्रृखंला से संबंधित थे। हिमालय पर्वत से दस नदियाँ यथा गंगा, यमुना, अचिरावती, सरभु, मही, सिंधु, सरस्वती, वेत्रवती, वितम्सा, और चंद्रभागा[3] निकली हैं (मिलिंद, 114) परंतु पुराणों के अनुसार, हिमवत से दस से भी अधिक नदियाँ यथा—गंगा, सरस्वती, सिंधु, चंद्रभागा, यमुना, शतद्रु, वितस्ता, इरावती, कुहू, गोमती, धूतपापा, बाहुदा, दृषद्वती, विपाशा, देविका, रक्ष, निश्चिरा, गण्डकी, और कौशिकी निकली हैं (तु० मार्कण्डेय पुराण, 57, 16-18; वही, वंगबासी संस्करण, अध्याय, 61, श्लोक 16E. इन नदियों से संबंधित विस्तृत विवरण के लिए लाहा की ज्यॉग्रेफिकल ऐसेज़ नामक पुस्तक, पृ० 84-95 देखिये। टालेमी ने बतलाया है कि इमाओस (हिमालय पर्वत) गंगा, सिंधु, कोआ तथा स्वात नामक नदियों का उद्गम स्थल है। मिगसम्मता नामक नदी

---

[1] जातक, V, 412 और आगे।

[2] मत्स्य पुराण, 121. 2.

[3] हिमालय से निकलने वाली 500 नदिओं में से ये महत्त्वर्ण नदियाँ हैं।

हिमालय से निकलती है और गंगा में मिलती है (जातक, VI, 72)। मिलिंद-पञ्हो (पृ० 70) में ऊहा नामक नदी हिमालय में स्थित बतलायी गयी है। अपदान नामक एक पालि ग्रंथ में हिमालय के समीप स्थित कुछ अन्य पर्वतों यथा—कदम्ब (पृ० 382), कुक्कुट (178), कोसिक (पृ० 381), गोतम (पृ० 162), पद्रुम (पृ० 362), भारिक (पृ० 440), लम्बक, (15) वसभ (पृ० 166), सभंग (पृ० 437) और सोभित (पृ० 328) का वर्णन किया गया है। भारतवर्ष की भौगोलिक सीमाओं में स्थित हिमालय ही अकेला वर्ष पर्वत है। देवपाल के मुंगेर दान-पत्र में हिमालय में स्थित केदार का उल्लेख है। कालिका पुराण (अध्याय, 14, 31) में उल्लेख है कि हिमालय पर्वत में महाकौशिकी नदी के प्रपात तक शिव और पार्वती गये थे। इसी पर्वत से निकलने वाली दर्पट नामक एक क्षुद्र नदी का इसमें उल्लेख है (कालिका पु० 79, 3)। कुमारसम्भव (I, 1) के अनुसार भव्य हिमालय पर्वत भारतवर्ष के उत्तर में स्थित है तथा पूर्व एवं पश्चिम में यह समुद्र में निमग्न है। इस पर्वत का सौंदर्य, जो विविध प्रकार के रत्नों की खान है, हिमनदों से विघटित नहीं होता (कुमारसम्भव I, 3)। इसके शिखर पर नाना प्रकार की खनिज संपत्ति है (I, 4)। हिमालय के दीप्तिमान शिखरों में ऋषिगण आवास करते हैं (I, 5) जिसकी गुफाएँ बादलों से आवृत्त रहती हैं, (I, 14)। आखेटकों की वन्यजाति किरात इस पर्वत पर हाथियों को मारने वाले सिंहों के पद-चिन्हों का अनुगमन कर सकती हैं, यद्यपि रक्त की बूँदें हिमजल से धुल जाती हैं (I, 6)। हिमालय की अँधेरी गुफाओं में पत्निओं के साथ रहते हुए किरातों को स्वदीप्त जड़ी-बूटियाँ प्रकाश दिया करती हैं (I, 10)। मानस-सरोवर के निकटवर्ती क्षेत्र[1] कैलास, मन्दार और हैम किरातों के प्रमुख स्थान थे। गहन रूप से हिमाच्छादित हिमालय प्रदेश इनमें चलने वालों के लिए कष्टकर है (I, 11)। सूर्य की किरणें भी तिमिरावृत्त इस पर्वत के अंधकार को दूर करने में अशक्त हैं (I, 12)। हिमालय पर्वत सफेद समूर वाले याकों के लिए प्रसिद्ध हैं (I, 13)। राजा विक्रम द्वारा पूँछे जाने पर अप्सराओं ने यह उत्तर दिया था कि वे हेमकूट (हेमकूट शिखरे) जो हिमालय पर्वत ही हैं[2], पर उनकी प्रतीक्षा करेंगी।

बौद्ध ग्रंथों में अनोतत्त[3], कण्णमुण्ड, रथकार, छद्दन्त, कुणाल, मंदाकिनी और

---

[1] पार्जिटर, मार्कण्डेयपुराण, पृ० 322, पाद टिप्पणी।

[2] विक्रमोर्वशी, अंक I.

[3] महावंस, I, 18; महाबोधिवंस, 36, 100-101; 152-155 आदि।

सीहप्पपत[1] नामक सात झीलों का उल्लेख है। इनमें से प्रत्येक झील की लंबाई, चौड़ाई और गहराई 50 लीग है। उनके नाम ही कुछ ऐसे हैं कि उनका समीकरण ही दुष्कर है और उनकी लंबाई, चौड़ाई तथा गहराई इतनी समान है कि उस पर सहज-विश्वास कर लेने की प्रेरणा नहीं होती। हिमालय के शिखरों में से मणि-पर्वत, अंजनपर्वत, सानुपर्वत तथा फलिकपर्वत[2] उल्लेखनीय हैं। उनमें से किसी का भी संतोषप्रद समीकरण नहीं किया जा सकता।

भारतवर्ष और हरिवर्ष के बीच में हिमालय पर्वतमाला और हेमकूट स्थित हैं जिनमें हिमालय हेमकूट के दक्षिण में है। देशों और पर्वतों की इस स्थिति का ज्ञान जैनग्रंथ जंबुदीवपण्णत्ति और महाभारत से प्राप्त होता है। हेमकूट प्रदेश को किम्पुरुषवर्ष और हैमवत क्षेत्र को किन्नरखण्ड भी कहा जाता है। महायान बौद्ध अवधारणा के अनुसार हिमालय क्षेत्र उत्तर में गंधमादन पर्वतमाला तक फैला हुआ था जो रुद्र हिमालय का एक भाग था, किन्तु महाकाव्यकारों के अनुसार यह कैलास पर्वतमाला का एक अंश था। अनोतत्त (अनवतप्त) झील या मानस-सरोवर जो हिमालय में स्थित सात बड़ी झीलों[3] में से एक थी—कैलास और चित्रकूट शिखरों से संबंधित थी। जम्बुदीवपण्णत्ति का यह वर्णन कि महापद्महृद नामक दो झीलें थीं, ठीक प्रतीत होता है जिनमें एक पश्चिमी हिमालय पर्वतमाला (क्षुद्र हिमवंत) से और दूसरी पूर्वी हिमालय पर्वत श्रेणी (महाहिमवंत) से संबद्ध थी। हिमालय में स्थित चद्दन्त नामक झील 50 लीग लंबी और 50 लीग चौड़ी थी। इसी सरोवर में लाल और श्वेत कमल तथा कुमुदिनियाँ एवं खाद्य-कुमुद उत्पन्न होते थे।[4] हिमालय क्षेत्र में सुंदरियाँ रहती थीं जो अपनी शक्ति के वशीभूत होने वाले सभी व्यक्तियों का सर्वनाश करती थीं।[5]

हिमालय क्षेत्र वन्य पशुओं का आवास था। हाथी, मृग, गैंडे, महिष, मेढक, मयूर एवं मयूरियाँ इस पर्वत पर रहती थीं। हिमालय के जंगलों में यूथचर या आवारे हाथी बहुत बड़ी संख्या में रहते थे।[6] वहाँ पर विभिन्न नस्लों के अश्व,

---

[1] अंगुत्तर IV, पृ० 101; मनोरथपूरणी, II, पृ० 759; परमात्थजोतिका, II, पृ० 443.

[2] जातक, V, पृ० 451.

[3] महावंस, I, 18.

[4] जातक, V, 37.

[5] वही, V, 152.

[6] वही, VI, 497.

सरीसृप, अजगर और जल में रहने वाले सर्पादि रहते थे। हिमालय की किसी कंदरा में एक शेर रहता था, जिसने एक भैंस को मार कर उसका मांस खाया था। इसके अनंतर वह थोड़ा जल पी कर पुन: अपनी गुफा में लौट आया।[1] हिमालय क्षेत्र में चित्रकूट पर्वत की किसी गुफा में रहने वाले एक प्रौढ़ कलहंस ने एक प्राकृतिक झील में पैदा होने वाले वन्य-शस्य (धान) को नष्ट कर दिया था।[2] यहाँ की नदियाँ और झीलें मत्स्य-संकुल थीं तथा यहाँ पर असंख्य पक्षी थे। यह पर्वत पक्षियों के कलरव से प्रतिध्वनित होता था।[3] जाड़ों में पेड़ एवं कमल पूर्णत: फूले हुये रहते थे।[4] खाद्य-कुमुदिनी के बीज (मखाना या ताल-मखाना) हिमालय से प्राप्त किये जा सकते थे।[5] इस पर्वत-क्षेत्र में तपस्वी, आखेटक तथा मृगया-अभियान पर निकले हुये राजा आया करते थे। तपस्वियों एवं ऋषियों ने वहाँ पर अनेक आश्रम बनाये थे। आश्रमों के असंख्य उदाहरण[6] हैं किंतु हम उनमें से कुछ का उल्लेख कर सकते हैं। कपिल का आश्रम हिमालय के पार्श्व में भागीरथी नदी के समीप ही था।[7] वृषपर्वन् का विख्यात् आश्रम हिमालय में कैलास पर्वत के समीप स्थित था।[8] हिमालय की एक गुफा में रहने वाले नारद नामक ऋषि एक सप्ताह तक समाधिस्थ रहे; उनमें दिव्यशक्तियाँ थीं और अंत में उन्होंने आनंद की अनुभूति की।[9] वाराणसी के चार समृद्ध गृहस्थ तृष्णाजनित दु:खों की अनुभूति के पश्चात् हिमालय की ओर गये और संन्यास ग्रहण कर लिया। बहुत दिनों तक वहाँ पर उन्होंने जंगली फल-मूल खा कर जीवन व्यतीत किया।[10] वाराणसी के एक धनी

---

[1] जातक, III, 113.

[2] वही, III 208.

[3] वही, VI, 272.

[4] वही, VI, 497.

[5] वही, VI, 390.

[6] जातक, III, 37, 79 143; IV, 74, 423; I, 361, 371, 406, 431; II, 101, 41, 53, 57, 65, 72, 85, 131, 171, 230, 258, 262, 269, 395, 411, 417, 430, 437, 447 आदि; तु० महावस्तु, I, 232, 272, 284, 351, 353; III, 41, 130, 143 आदि।

[7] सौन्दरनन्दकाव्य, I, 5; दिव्यावदान, पृ० 548.

[8] महाभारत, वनपर्व, CLVIII, 11, 541-3; CLXXVII, 12, 340-44.

[9] जातक, VI, 58.

[10] वही ,VI, 256.

ब्राह्मण ने संन्यास ग्रहण कर लिया और दिव्य शक्तियों को प्राप्त करने के पश्चात् वह हिमालय पर्वत पर निवास करने लगा।[1] हिमालय से 500 ऋषि वाराणसी से नमक एवं सिरका लेने के लिए नीचे मैदानों में आये थे।[2] काशी-जनपद के निवासी किसी ब्राह्मण ने अपनी माता की मृत्यु के पश्चात् हिमालय में जा कर ऋषि-तुल्य धार्मिक जीवन ग्रहण कर लिया था।[3] विदेह-नरेश मिथिला नगरी का राज्य त्याग करके हिमालय क्षेत्र में गये और उन्होंने धार्मिक जीवन का वरण कर लिया। वह वहाँ पर केवल फलाहार पर परम शांति से रहते थे।[4]

अपना राज्य अपनी माता को सौंप कर वाराणसी का कोई राजा मृगों के आखेट और उनका मांस खाने के लिए हिमालय क्षेत्र में गया था।[5] वाराणसी का एक अन्य राजा सुप्रशिक्षित शिकारी कुत्तों के झुंड को साथ ले कर मृगों के आखेट के लिए हिमालय क्षेत्र में गया था। वहाँ पर उसने सुअरों एवं मृगों को मार कर उनका मांस खाया। इसके अनंतर वह इस पर्वत पर बहुत ऊँचाई पर चढ़ गया। वहाँ पर जिस समय मुखद सरिता बढ़ती थी, उसकी लहरें आवक्ष ऊँची होती थीं।[6]

हिंगुल पर्वत (हिंगलपर्वत)—यह हिमालय-क्षेत्र में स्थित है (जातक, V. 415)। हिंग्लाज, बलूचिस्तान में हिंगुला या हिंगुल नामक पर्वतमाला के छोर पर समुद्र-तट से लगभग 20 मील दूर अघोर या हिंगुला नदी के तट पर स्थित है (नंद लाल दे, ज्यॉ० डिक्श०, पृ० 75)।

हिरण्णवती (हिरण्यवती)—यह छोटी गंडक तथा कुशीनारा के समीप अजितवती का ही नाम है। यह बड़ी गंडक से कोई आठ मील दूर पश्चिम में गोरख-पुर जिले से बहती है और घाघरा (सरयू) में मिलती है। कुशीनारा के मल्लों का शालवन इसी नदी के तट पर स्थित था (दीघ, II, 137)।

हृषीकेश—यह पर्वत हरद्वार से 24 मील दूर उत्तर में स्थित है, जहाँ पर देव-दत्त का आश्रम था (वराहपुराण, अध्याय, 146)। हरद्वार से बद्रीनाथ जानेवाली सड़क पर यह गंगा-तट पर स्थित है। कुछ लोगों के मतानुसार वैष्णवों का यह पवित्र नगर हरिद्वार से लगभग 20 मील दूर गंगा के किनारे पर स्थित है।

---

[1] जातक, V, 193.

[2] वही, V, 465.

[3] वही, III, 37.

[4] वही, III, 365.

[5] वही, VI, 77.

[6] वही, IV, 437.

इच्छानंगल—यह कोशल में ब्राह्मणों का एक गाँव था। बुद्ध एक बार यहाँ इच्छानंगलवनसण्ड में रुके थे (अंगु० नि० III. 30. 341; वही, IV. 340)। सुत्तनिपात (पृ० 115) में उस गाँव का नाम इच्छानंकल बतलाया गया है।

इक्षुमती—यह कुरुक्षेत्र की एक नदी है (भागवत पुराण, V, 10. 1)।

इन्द्रपुर—स्कंदगुप्त के इंदौर ताम्रपत्र-अभिलेख में वर्णित यह विशाल और उच्च पर्वत बुलंदशहर जिले की एक तहसील के डिमई परगना के मुख्यावास डिमई से लगभग पाँच मील दूर पश्चिमोत्तर में स्थित है (का० इं० इं०, जिल्द, III)।

इन्द्रस्थान—भागवत पुराण में इसे एक नगर बतलाया गया है (X. 58. 1; X. 73. 33; XI. 30. 48; XI. 31. 25)। पद्म पुराण के अनुसार (200. 17-18) इन्द्र ने इस नगर में अनेक धार्मिक यज्ञ किये थे, कई बार रमापति की उपासना की थी और नारायण की उपस्थिति में ब्राह्मणों को प्रभूत धनराशि दान दी थी। तब से यह स्थान इंद्रप्रस्थ के नाम से विख्यात हुआ। इसका उल्लेख गोविंदचंद्र के कमौली पत्र (वि० सं० 1184) में किया गया है। इसे इंद्रप्रस्थ से समीकृत किया गया है (एपि० इं०. XXVI, भाग, 2, पृ० 71; इं० ऐं०, XV. पृ० 8, पा० टि० 46) जो यमुना तट पर आधुनिक दिल्ली से कोई दो मील दूर दक्षिण में स्थित है। इसका विस्तार सात लीग था (सत्तयोजनिके इंदपत्तनगरे-जातक, सं०, 537; बि० च० लाहा, ज्यॉग्रेफी ऑव अर्ली बुद्धिज्म, पृ० 18)। महाभारत में इसे वृहत्स्थल भी कहा गया है। यह प्रथम पाण्डव युधिष्ठिर की राजधानी थी। इंद्रप्रस्थ (दिल्ली के समीप आधुनिक इंद्रपत) कुरुओं की दूसरी राजधानी थी और गंगा-तट पर स्थित तथा उत्तरप्रदेश के मेरठ जिले से समीकृत हस्तिनापुर उनकी पहली राजधानी थी। अंधे राजा धृतराष्ट्र ने प्राचीन राजधानी हस्तिनापुर पर शासन किया जब कि उन्होंने अपने भतीजों पंच-पाण्डवों को यमुना-तट पर स्थित एक जिले का शासन दे दिया जहाँ पर उन्होंने इंद्रप्रस्थ की स्थापना की। कालांतर में धीरे-धीरे कुरुओं की प्राचीन राजधानी श्रीविहीन हो गयी और पाण्डवों द्वारा स्थापित नये नगर को अब भारत-सरकार की राजधानी होने का गौरव प्राप्त है (अधिक विवरण के लिए, नं० ला० दे की ज्यॉ० डिक्श०, पृ० 77-78 द्रष्टव्य है)।

इरावती—पतंजलि ने अपने महाभाष्य (2. 1. 2, पृ० 53) में इसका उल्लेख किया है। यह आधुनिक रावी या यूनानियों द्वारा उल्लिखित हाइड्राओतीज़ या अद्रीस या रोनाडीस नदी ((Hydraotis or Adris or Rhonades) है। यह नदी बांगहल की चट्टानी तलैया से निकलती है और पीर पंजल के दक्षिणी तथा धौलाधर के उत्तरी ढालों को सिंचित करती है। कालिका पुराण (अध्याय,

24. 140) के अनुसार इस नदी का स्रोत इरा झील है। हिमालय में इस नदी का प्रवाह 130 मील लंबा है। यह नदी सर्वप्रथम हमें क्षम्ब के दक्षिणी-पश्चिमी कोण पर कश्मीर में दृष्टिगोचर होती है। छम्ब से दक्षिणपश्चिमाभिमुख यह नदी लाहौर से होती हुयी चेनाब या वितस्ता एवं चंद्रभागा के संयुक्त प्रवाह में अहमदपुर और सरायसिंधु के मध्य मिलती है (लाहा, रिवर्स ऑव इंडिया, पृ० 13)।

इसिपतन-मिगदाय (ऋषिपत्तन-मृगदाव)—यह सारनाथ है।

इसुकार (ऋषकुमार)—यह समृद्ध, प्रसिद्ध तथा सुंदर कस्बा कुरु जनपद में स्थित था (उत्तराध्ययनसूत्र, XIV. 1)

ज्वालामुखी—पू० पंजाब के काँगड़ा जिले की डेरा गोपीपुर तहसील में काँगड़ा कस्बे से नदौन जाने वाली सड़क पर स्थित यह एक प्राचीन स्थल है। जैसा कि इसके अवशेषों से सिद्ध होता है किसी समय यह एक महत्त्वपूर्ण और वैभवशाली नगर था। अब यह मुख्यतया ज्वालामुखी देवी के मंदिर के लिए विख्यात है जो ब्यास नदी की घाटी में स्थित है (अधिक विवरण के लिए, लाहा की 'होली प्लेसेज़ इन इंडिया, पृ० 24, नामक पुस्तक द्रष्टव्य)।

जालंधर—योगिनीतंत्र (1।11, 2।2, 2।9) में इसका वर्णन मिलता है। जालंधर के अंतर्गत उत्तर में छम्ब पूर्व में मंडी और सुखेत तथा दक्षिण-पूर्व में शतद्रु के क्षेत्र संमिलित थे। लंबाई में पूर्व से पश्चिम तक यह 1,000 ली या 167 मील तथा चौड़ाई में उत्तर से दक्षिण तक 800ली या 133 मील था। पद्म पुराण (उत्तरखण्ड) के अनुसार, यह महान् दैत्यराज जालंधर की राजधानी थी (कनिंघम, एं ज्यॉ०, इं०, पृ० 156 और आगे)।

जानरवट—यह उत्तरप्रदेश के फर्रुखाबाद जिले की तिरवा तहसील में स्थित है, जहाँ पर वीरसेन के समय का एक अभिलेख मिला है (एपि० इं०, XI. पृ० 85)।

जेतवन—उत्तर भारत में स्थित यह एक राजसी-उद्यान था, जो बुद्ध का एक प्रिय आराम (दीघ, I, 178) और बौद्ध-धर्म का एक प्राचीन केंद्र था। यह श्रावस्ती (आधुनिक सहेत-महेत) से दक्षिण में एक मील दूर पर स्थित था। श्रावस्ती के अंचल में स्थित यह बौद्धधर्म का एक वैहारिक अधिष्ठान था, जो राजकुमार जेत के सत्कार्यों को अमर बनाये हुये है जिसने महावंसटीका (पा० टे० सो०, पृ० 102) के अनुसार जेतवन-उद्यान की स्थापना की थी। इसके क्रेता अनाथपिण्डिक की कीर्ति को अमर बनाये रखने के लिए इस वैहारिक संस्थान को उसका आराम बतलाया जाता है (पपंचसूदनी, I, 60-61)। जेतवन विहार के निर्माण और अनाथपिण्डिक द्वारा बुद्ध के प्रति इसके औपचारिक समर्पण के साथ ही खास कोशल

विशेषतया श्रावस्ती में बौद्ध मत के प्रथम स्थायी केंद्र की स्थापना हुयी थी। राजगृह से श्रावस्ती लौटने के उपरांत श्रेष्ठि अनाथपिण्डिक एक आराम बनवाने के लिए उचित स्थल की तलाश में था। राजकुमार जेत का उपवन एक अभीष्ट स्थल हो सकता था। जैसे ही राजकुमार इसे बेचने के लिए सहमत हुआ श्रेष्ठी ने अपने नौकरों को वृक्षों को काट कर उक्त स्थल को साथ करने के लिए नियोजित किया। सारे उपवन में स्वर्ण बिछा दिया गया। विनय के विवरण के अनुसार श्रेष्ठी ने वहाँ पर अनेक भवन, यथा आवासकक्ष (विहार), विश्रामगृह (परिवेण), कोपगृह (कोटटक), अग्निशालाओं (अग्गिसाला), संयुक्त उपत्थानशालाएँ, शौचगृह कुटी, कुएँ, स्नानागार, तालाब और मंडप आदि बनवाये। इस पुण्य कर्म की पूर्ति के लिए प्रभूत धनराशि का व्यय हुआ था। यह एक रोचक तथ्य है कि इस विहार की निर्माण-प्रक्रिया के सभी स्तर, जिनकी निष्पत्ति इसके समर्पण उत्सव में हुई थी, भरहुत के अध्युच्चित्रों में निरूपित किये गये हैं, जब कि बोधगया के उच्चित्रों में केवल जेतवन के खरीदने का दृश्य अंकित किया गया है (बरुआ, गया ऐंड बुद्धगया, II, 104-5; बरुआ, भरहुत, II, 27-31)। जेतवन में चार मुख्य भवन करेरीकूटि, कोसम्बकूटि, गन्धकूटि एवं सललघर थे (सुमंगलविलासिनी, II, 407)। श्रावस्ती के इस स्थल का उल्लेख ल्यूडर्स की तालिका, संख्या 731 एवं जातक, संख्या 5 में प्राप्त होता है (बरुआ ऐंड सिन्हा, भरहुत इंस्क्रिप्शंस, पृ० 59)। इसी स्थान पर कोशल नरेश प्रसेनजित बुद्ध के शिष्य बने थे (संयुत्त निकाय, I, 68 और आगे)। जयचंद्रदेव के शासनकाल के बोधगया से प्राप्त एक बौद्ध अभिलेख में यह बतलाया गया है कि कन्नौज के गाहडवाल राजा गोविंदचंद्र ने, जिसका विवाह कुमारदेवी नामक एक बौद्ध-राजकुमारी से हुआ था, जेतवन विहार में रहने वाले भिक्षुओं की सहायता के लिए कई गाँव अलग कर दिये थे (एपि० इं०, XI. 20 और आगे)। कुछ समय तक बुद्ध ने इस विहार में निवास किया था (दीपवंस, पृ० 21; महावंस, पृ० 7)। विस्तृत विवरण के लिए बि० च० लाहा कृत श्रावस्ती इन इंडियन लिटरेचर; मे० आ० स० इं०, नं० 50, पृ० 22 और आगे द्रष्टव्य।

झूँसी—झूँसी का प्राचीन नगर फूलपुर से 14 मील दूर दक्षिण-पश्चिम में गंगा के बायें तट पर स्थित है (इलाहाबाद डिस्ट्रिक्ट गज़ेटियर, ले० नेविल, पृ० 245)।

कदम्ब—यह पर्वत हिमालय से अधिक दूर पर स्थित नहीं प्रतीत होता (अपदान, पृ० 382)।

कहौम—स्कंदगुप्त के कहौम स्तंभलेख में इस गाँव का वर्णन है जिसे ककुभ या ककुभग्राम भी कहा जाता है और जो देवरिया जिले में सलेमपुर-मझौली परगने

के सलेमपुर-मझौली नामक कस्बे के दक्षिण की ओर कोई पाँच मील दूर पश्चिम में स्थित है (का० इं० इं०, भाग III)।

कहरोर—यह प्राचीन कस्बा प्राचीन ब्यास नदी के दक्षिणी तट पर मुल्तान से 50 मील दक्षिणपूर्व में तथा बहावलपुर से 20 मील दूर उत्तरपूर्व में स्थित है —(कनिंघम, एं० ज्यॉ० इं०, 1924, पृ० 277)। अल्बेरुनी के अनुसार विक्रमादित्य और शकों का महान् युद्ध यहीं पर हुआ था।

कैलास—योगिनीतंत्र (1।1, 1।12) में इसका वर्णन है। रामचंद्र के पुरुषोत्तमपुरी अभिपत्रों में इस पर्वत का उल्लेख है (एपि० इं०, XXV, भाग, V)। इसे पर्वतों का राजा कहा गया है। नंदा या गंगा नामक नदियों से परिवृत्त इस पर्वत को भूतेशगिरि भी कहा जाता है (भागवत पुराण, IV. 5. 22; V. 16. 27)। कालिका पुराण (वंगवासी संस्करण) में कैलास का वर्णन है (अध्याय, 13. 23)। यहाँ पर शिव-पार्वती आये थे (वही, अध्याय, 14, 31)। शान्तनु इस पर्वत पर तथा गंधमादन पर भी रहते थे (अध्याय, 82, 7)। महाभारत (वनपर्व, अध्याय, 144-156) में कुमाऊँ और गढ़वाल पर्वतों को कैलास पर्वतमाला में सम्मिलित किया गया है। महाभारत में इसे हेमकूट भी कहा गया है (भीष्मपर्व, अध्याय, 6)। इस पर्वत पर जिसे शंकरगिरि भी कहा जाता था, इक्ष्वाकुवंशीय नरेश मानसवेग का पुत्र तथा वेगवत का पुत्र वीरशेखर आया था (दशकुमारचरितम्, पृ० 54)। कालिदास ने अपने कुमारसम्भव (निर्णयसागर संस्करण, viii. 24) में कैलास का उल्लेख किया है। जैन लोग इसे अष्टापद पर्वत के नाम से जानते हैं जहाँ पर ऋषभ के पुत्रों एवं अनेक मुनियों को कैवल्य प्राप्त हुआ था। इंद्र ने यहाँ तीन स्तूप बनवाये थे। भरत ने यहाँ पर सिंहनिषद्य नामक एक चैत्य तथा अपनी प्रतिमा के साथ ही चौबीस अन्य जिन प्रतिमाओं का निर्माण करवाया था। बालि ने रावण पर आक्रमण किया था।[1] कैलास श्रेणी लद्दाख पर्वतमाला के समानांतर उससे 50 मील पीछे फैली हुयी थी। इसमें अनेक दैत्याकार शिखर-समूह हैं। इसे वैद्यूतपर्वत से समीकृत किया जा सकता है। तिब्बत-निवासी इसे कंग्रीनपोचे कहते हैं, जो मानससरोवर से कोई 25 मील दूर उत्तर में स्थित है। बदरिकाश्रम इस पर्वत पर स्थित बतलाया जाता है।[2]

---

[1] बि० च० लाहा, सम जैन कैनॉनिकल सूत्राज़, पृ० 174.

[2] अधिक विवरण के लिए द्रष्टव्य, नं० ला० दे, ज्यॉ० डिक्श०, पृ० 82-83; बि० च० लाहा, ज्यॉ० ऑव अर्ली बुद्धिज्म, पृ० 39; लाहा, माउंटेंस ऑव इंडिया, पृ० 7.

ककुत्था—बरही नामक यह एक छोटी सरिता है जो कसया से आठ मील आगे छोटी गंडक में मिलती है। कार्लेइल ने इसे घागी नदी से समीकृत किया है, जो गोरखपुर जिले में चितियाँव से 1½ मील दूर पश्चिम में बहती है। राजगृह से कुशीनारा जाते समय बुद्ध को इस नदी को पार करना पड़ा था जो कुशीनारा के निकट थी।[1] तब वह आम्रवन पहुँचे और वहाँ से कुशीनारा के समीप मल्लों के शालवन की ओर बढ़े।[2]

कलसिगाम—यह अलसंद या सिकंदरिया (Alexandria) द्वीप में स्थित था। यह राजा मिलिन्द (Menander) का जन्म स्थान था।[3]

कमला—यह गंगा की एक ऊपरी सहायक नदी है, जिसका निचला प्रवाह घुगरी नाम से विख्यात है। यह नेपाल की महाभारत पर्वत-माला से निकलती है और दक्षिणी पूर्णिया में करगोला में गंगा में मिलती है। दाहिनी ओर से कमला में दो और बाँईं ओर से पाँच सहायक नदियाँ मिलती हैं। विस्तृत विवरण के लिए, वि० च० लाहा, रिवर्स इन इंडिया, पृ० 25, द्रष्टव्य।

कमौली—यह गाँव वाराणसी में गंगा एवं वरुणा के संगम के पास स्थित है। यहाँ से प्राप्त एक अभिलेख में यह बतलाया गया है कि विष्णुपुर में स्थित अपने विजय-स्कंधावार से महाराज गोविंदचंद्र ने उसीथ नामक ग्राम एक ब्राह्मण को दिया था।[4] गोविंदचंद्र ने कान्यकुब्ज और उस पर निर्भर क्षेत्रों पर अपने वंश की सत्ता पुनर्स्थापित की थी। उसने अश्वपति-गजपति-नरपति-राजत्रयाधिपति की महत्वाकांक्षी उपाधियाँ धारण की, जो मूलतः डाहल के कलचुरि-नरेशों द्वारा धारण की जाती थीं।[5] कन्नौज के नरेशों के इक्कीस ताम्रपत्र तथा चार अन्य अभिलेख इस गाँव से प्राप्त हुए बतलाये जाते हैं।[6]

कम्बोज—कम्बोज लोग पश्चिमी हिमालय में रहने वाले बतलाये गये हैं। भौगोलिक रूप से वे उत्तर में रहते थे।[7] उनका उल्लेख पाणिनि की अष्टाध्यायी

---

[1] दीघ, II, 129, 134, और आगे; उदान VIII, 5.

[2] लाहा, ज्यॉ० ऑव अर्ली बुद्धिज्म, पृ० 37; लाहा, रिवर्स ऑव इंडिया, पृ० 23.

[3] मिलिन्दपञ्ह, पृ० 83.

[4] एपि० इं०, II, 358-61.

[5] एपि० इं०, XXVI, भाग II, पृ० 71 और पाद-टिप्पणी, 6.

[6] एपि० इं० IV, पृ० 97 और आगे।

[7] महाभारत, भीष्मपर्व, अध्याय, 9.

(4.1.175), पतंजलि के महाभाष्य (I.1.1.पृ० 317; 4.1.175) तथा अशोक के पाँचवें शिलालेख में किया गया है।[1] कम्बोज लोग प्राचीन वैदिक कबीलों में से एक प्रतीत होते हैं। वे सिंधु नदी के पश्चिमोत्तर में स्थित थे और प्राचीन फारसी अभिलेखों के कम्बुजीयों के समान थे। भागवत पुराण में इनका उल्लेख एक देश के रूप में हुआ है (II. 7; 35; X. 75, 12; X. 82. 13)। कुछ लोगों ने उन्हें राजपुर में स्थित बतलाया है। राजपुर का वर्णन करते हुए युवान-च्वाङ् कहता है, लंपा से राजपुर के मध्यवर्ती के निवासी अपरिष्कृत, अपने वैयक्तिक आकार में सादे तथा रूक्ष हिंसात्मक प्रवृत्ति के हैं—वे खास भारत के निवासी नहीं हैं, वरन् सीमांत-कबीलों से संबंधित हीन जाति के हैं।"[2] वि० स्मिथ ने इस देश को तिब्बत या हिन्दु-कुश पर्वतों के मध्य स्थित बतलाया है। कुछ लोगों ने इसे आधुनिक सिंध और गुजरात के समीप निर्धारित किया है। कम्बोज अपने सुडौल एवं वेगवान घोड़ों के लिए विश्रुत था।[3] विस्तृत विवरण के लिए बि० च० लाहा, ट्राइब्स इन ऐंश्येंट इंडिया, प्रथम अध्याय; बि० च० लाहा, इंडालॉजिकल स्टडीज़, जिल्द I, पृष्ठ 9-10; ज्यॉग्रेफी ऑव अर्ली बुद्धिज्म, पृ० 50-51, द्रष्टव्य।

कंचन पर्वत—यह उत्तर हिमालय है (जातक, II, 396, 397, 399; VI. 101)।

कण्हगिरि—यह कृष्णगिरि पर्वत (कन्हेरी) ही है (ल्यूडर्स की तालिका, सं० 1123)। यह कराकोरम या कालपर्वत है (वायु पुराण, अध्याय, 36)। पश्चिम की ओर यह पहाड़ हिंदुकुश के साथ आगे चला गया है। आधुनिक भूगोल-वेत्ताओं के अनुसार कराकोरम पर्वत अपेक्षाकृत पहले बना था, अतः यह मुख्य हिमालय पर्वतमाला से प्राचीन है। यह पर्वत हर्सीनियन (Hercynian) युग का है। उन्नत होने के बाद इसमें अत्यधिक पर्त्तें एवं दरारें बनीं (बि० च० लाहा, माउंटेंस ऑव इंडिया, पृ० 4, 7)।

कंखल (कनखल)—यह गंगा और नीलधारा के संगम पर हरिद्वार से दो मील पूर्व में स्थित है। यह पुराणों में वर्णित दक्ष-यज्ञ का स्थान था (कूर्म पुराण, अध्याय, 36; वामन पुराण, अध्याय, 4 और 34; लिंग पुराण, भाग I, अध्याय 100)। पद्म पुराण में इसका वर्णन एक तीर्थ के रूप में किया गया है (अध्याय

---

[1] बे० मा० बरुआ, अशोक ऐंड हिज इंस्क्रिप्शंस, पृ० 92-94.

[2] वाटर्स, ऑन युवान-च्वाङ्, I, पृ० 284 और आगे।

[3] जैन सूत्राज (सै० बु० ई०), II, 47.

14 तीर्थ-माहात्म्य; तु० महाभारत, वनपर्व, अध्याय, 84, 30)। योगिनीतंत्र (2-6) में इसका वर्णन है।

काण्व-आश्रम (कण्व-आश्रम)— काण्व-ऋषि, जिन्होंने शकुन्तला को अपनी पुत्री के रूप में ग्रहण किया था, का आश्रम धर्मारण्य कहा जाता था जो सहारनपुर और अवध जिलों से हो कर बहने वाली मालिनी नदी के तट पर स्थित था। कुछ लोगों के मतानुसार यह चंबल नदी के तट पर (महाभारत, वनपर्व, अध्याय, 82; अग्नि पुराण, अध्याय, 109) जब कि अन्य लोगों के विचार से यह नर्मदा नदी के तट पर स्थित था (पद्म पुराण, अध्याय, 94)।

कपिलवस्तु (चिया-वेयी लो-यूये)—यह शाक्यों की राजधानी थी जिसमें बुद्ध पैदा हुये थे। इसे कपिलवस्तु (दिव्यावदान, पृ० 67), कपिलपुर (ललित-विस्तर, पृ० 243) या कपिलाह्वयपुर (वही, पृ० 28) भी कहा जाता था। दिव्यावदान में (पृ० 548) कपिलवस्तु को कपिल ऋषि से संबंधित बताया गया है। बुद्धचरितकाव्य (भाग, I, श्लोक, 2) में इस नगर को कपिलस्यवस्तु कहा गया है। महावस्तु (भाग, II, पृ० 75) के अनुसार यह सात प्राचीरों से घिरा हुआ था। शुङ्-चिंग-चु के अनुसार इस नगर में शाक्य वंश के कुछ उपासक और लगभग 20 गृहस्थ रहते थे। इस नगर के निवासी धार्मिक क्रियाशीलता पर अधिक बल देते थे और उनमें अब भी प्राचीन चेतना विद्यमान थी। उन्होंने जीर्ण स्तूपों का पूर्ण पुनरुद्धार कराया था (नार्दर्न इंडिया एकार्डिंग टु द शुङ्-चिंग-चु, ले०, एल० पीटेख, पृ० 33)। प्रसिद्ध रुम्मिनिदेई स्तंभ शाक्यमुनि के परंपरानुगत जन्म-स्थल प्राचीन लुम्बिनी बाग को लक्षित करता है। विंसेंट स्मिथ कपिलवस्तु को जो लुम्बिनी ग्राम से अधिक दूर पर नहीं है, नेपाल सीमा पर बस्ती जिले के उत्तर में स्थित पिपरावा से समीकृत करने के पक्ष में हैं। रिज़ डेविड्स तिलौराकोट को प्राचीन कपिलवस्तु मानते हैं।

पी०सी० मुकर्जी रीज़ डेविड्स के मत से सहमत हैं और कपिलवस्तु को तौलिव से दो मील उत्तर में स्थित तिलौरा से समीकृत करते हैं जो तराई की प्रांतीय सरकार का मुख्यावास तथा जो गोरखपुर के उत्तर में नेपाल की तराई में नेपाली गाँव निग्लीव से 3½ मील दूर है, दक्षिण पश्चिम में स्थित है। रुम्मिनिदेई, कपिलवस्तु से केवल 10 मील दूर पूर्व में और भगवानपुर से दो मील उत्तर में स्थित है। महा-वस्तु (I, पृ० 348 और आगे) में कपिलवस्तु की स्थापना के विषय में एक कहानी बतलायी गयी है। चीनी यात्री फा-ह्यान के अनुसार यह नगर बिरला ही बसा था।[1]

---

[1] **ट्रैवेल्स ऑव फा-ह्यान्, लेखक, लेग्गे, पृ०** 64, 68.

यहाँ उसने विभिन्न स्थानों पर मीनारें देखीं थीं। युवान-च्वाङ् के अनुसार इसकी परिधि लगभग 4,000 ली थी। ग्राम कम एवं वीरान थे तथा विहारों की संख्या 1,000 से भी अधिक थी। वहाँ पर देवमंदिर थे जहाँ विभिन्न संप्रदायों के लोग पूजा करते थे। बुद्ध की मृत्यु के पश्चात् कपिलवस्तु में या इसके समीप मंदिरों एवं स्तूपों का निर्माण किया गया था (वाटर्स, ऑन युवान-च्वाङ्, II, पृ० 4)। इस नगर में जिसे चीनी लोग की-पि-लो-फा स्सी-ती कहते थे कोई सर्वोच्च राजा नहीं था। यह उपजाऊ और समृद्ध था तथा क्रमानुगत ऋतुओं में यहाँ खेती की जाती थी। यहाँ की जलवायु सतत एकसम रहती थी तथा लोगों का शिष्टाचार विनम्र एवं सौजन्यपूर्ण था (बील, बुद्धिस्ट रिकार्डस ऑव द वेस्टर्न वर्ल्ड, II, 14)। इस नगर में संथागार स्थित था जहाँ से प्रशासकीय एवं न्यायिक कार्य संपादित होते थे (बुद्धिस्ट इंडिया, पृ० 19)। कपिलवस्तु एवं कोलियों के नगर के बीच में रोहिणी नदी का जल एक बाँध द्वारा नियंत्रित कर दिया गया था (धम्मपद कामेंट्री, जिल्द,III, पृ० 254)। ललितविस्तर (पृ० 58, 77, 98, 101, 102, 113, 123,) के अनुसार कपिलवस्तु उद्यानों, कुंजों एवं बाजारों से सुशोभित एक महानगर था। इसमें चार नगर-द्वार एवं संपूर्ण शहर में मीनारें थीं। यह विद्वानों का आवास और पुण्यशील व्यक्तियों का आश्रय था। मेहराबदार तोरणों और कंगूरों से युक्त यह एक उन्नत पठार के सौंदर्य से आवृत्त था (बुद्ध-चरित, I, श्लोक 2, 5)। इस नगर को बुद्धिमान मंत्रियों की सेवाएँ सुलभ थीं (सौंदरनंदकाव्य, I)। चूँकि यहाँ पर अनुचित कर नहीं थे, अतः यहाँ निर्धनता के लिए कोई स्थान नहीं था और वहाँ केवल समृद्धि-श्री दैदीप्यमान थी (बुद्धचरित काव्य, I, श्लोक, 4)। रुम्मिनिदेई-अभिलेख के अनुसार अशोक ने स्वयं यहाँ आ कर इस नगर को सम्मानित किया था, क्योंकि बुद्ध यहाँ उत्पन्न हुये थे। उन्होंने लुम्बिनी ग्राम को करों से मुक्त कर दिया था और वहाँ के निवासियों को उनकी उपज का केवल 1/8 भाग देना पड़ता था (का० इं० इं० III, 264-65)। विस्तृत विवरण के लिए देखिये, बि० च० लाहा, ज्यॉग्रेफिकल एसेज़, जिल्द, I, पृ० 182 और आगे; ट्राइब्स इन एंश्येंट इंडिया, पृ० 248-49; ज्यॉग्रेफी ऑव अर्ली बुद्धिज्म, पृ० 28 और आगे; इंडोलॉजिकल स्टडीज, जिल्द, III)।

कपिश—कपिश (चीनी किय-पि-शि), प्लिनी का कपिस्स तथा सोसिन, का कफुस ही है। टालेमी के अनुसार यह काबुल के उत्तर-पूर्व में 155 मील दूर पर स्थित था। जूलियन ने इसे कोहिस्तान की उत्तरी सीमा पर, पंजशीर और टगाओ घाटियों में स्थित माना है। युवान-च्वाङ् के अनुसार इस देश की परिधि 10 ली थी। यहाँ पर विविध प्रकार के अन्न और फलों के वृक्ष थे। शेन नस्ल के घोड़े यहीं पर पैदा

होते थे। यहाँ की जलवायु ठंडी और झंझापूर्ण थी। यहाँ के निवासी नृशंस और भयानक थे तथा यहाँ की भाषा रुक्ष थी। यहाँ के निवासी समूरदार वस्त्र तथा समूर से सज्जित वस्त्र पहिनते थे। वे स्वर्ण, रजत तथा ताम्र-मुद्राओं का प्रयोग करते थे। यहाँ का राजा एक क्षत्रिय था। वह अपनी प्रजाओं को बहुत प्यार करता था। प्रति-वर्ष वह 18 फीट ऊँची बुद्ध की एक रजत-प्रतिमा बनवाया करता था तथा मोक्षमहापरिषद् नामक सभा का आयोजन किया करता था। तब निर्धन एवं दरिद्र व्यक्तियों को दान दिया जाता था। वहाँ पर 100 मठ, स्तूप, संघाराम तथा देवमंदिर थे (बील, बुद्धिस्ट रेकार्डस ऑव द वेस्टर्न वर्ल्ड, I, 54 और आगे)।

कड़ा—ऐतिहासिक महत्व का यह स्थान सिराथू से कोई पाँच मील उत्तर-पूर्व में और इलाहाबाद से 41 मील दूर पर स्थित है (एपि० इं० XXII. पृ०, 37)।

कर्मासधर्म—कुरुदेश में स्थित यह एक कस्बा था जहाँ बुद्ध गये थे (अंगुत्तर, V, 29-30)।

कर्णिकाचल—यह मेरु पर्वत का एक नाम है।

कौशाम्यपुर—अजयगढ़ स्तंभ लेख, (वि० सं० 1345; एपि० इं०, जिल्द, XXVIII. खंड, III, जुलाई, 1949) में कौशाम्यपुर का उल्लेख है जो इलाहाबाद जिले में कोसम या कौशाम्बी से समीकृत किया जा सकता है।

कौशिकी—(पालि-कोसिकी, जातक, V. 2)—यह आधुनिक कुशी नदी है जो बिहार के पूर्णिया जिले से बहती हुयी गंगा में मिल जाती है (रामायण, आदिकाण्ड, 34; वराह पुराण, 140)। रामायण में इसे हिमालय से निकलने वाली एक बड़ी नदी के रूप में वर्णित किया गया है (आदिकाण्ड, श्लोक, 8)। भागवत पुराण (I, 18, 36; V. 19, 18; IX. 15, 12; X. 79, 9) में इस नदी का वर्णन किया गया है। योगिनीतंत्र (2।4 पृ० 128-29) में भी इसका वर्णन प्राप्त होता है। इस नदी के प्रवाह में बहुत परिवर्तन होते थे (पार्जिटर, मार्कण्डेय पुराण, पृ० 292, टिप्पणी)। यह इस नाम से पूर्वी नेपाल के दक्षिणी भाग में चार नदियों के संयुक्त प्रवाह के रूप में हमें दृष्टिगोचर होती है। इसमें की तीन नदियाँ तिब्बत से निकलती हैं। कोसी नाम से भी विश्रुत यह नदी संभवतः मेगस्थनीज़ के प्रमाण पर एरियन की इंडिका नामक (अध्याय, IV) पुस्तक में वर्णित संभवतः कोस सोन्नस नदी है जो गंगा की एक संतरणीय सहायक नदी थी जैसा कि डब्ल्यू० डब्ल्यू० हंटर ने अपने स्टेटिस्टिकल एकाउंट ऑव बंगाल (पूर्णिया), 1877, नामक ग्रंथ में बताया है। यह अपने वेगपूर्ण प्रवाह, भयंकर और अनिश्चित नदी तल तथा मुख्यतया सतत पश्चिमाभिमुख प्रवाह के लिए उल्लेखनीय है। अपने पूर्वी प्रवाह में यह करतोया नामक नदी से मिलती है, जिसकी सहायक अतराई

और तिस्ता है (देखिए, एफ० ए० शिलिंगफोर्ड का "ऑन चेंजेस इन द कोर्स ऑव द कुशी रिवर ऐंड द प्रोबेबिल डेंजर्स एराइजिंग फ़ाम देम" नामक लेख जो ज० ए० सो० बं०, जिल्द, LXIV, खण्ड I, 1895, पृ० 1 और आगे में प्रकाशित हैं। विस्तृत विवरण के लिए देखिये, बि० च० लाहा, ज्यॉग्रेफिकल एसेज़, I, 94-95।

कविलास—यह शिव का आवास कैलास पर्वत है (यादव महादेव राय का सिंगूर अभिलेख और देवराय महारय का डंगुर अभिलेख, शक संवत् 1329, एपि० इं०, XXIII, खंड V, पृ० 194)।

काकन्दी—यह जैन पट्टावलि और बौद्ध साहित्य में वर्णित काकन्दी ही है। इस स्थान की स्थिति अज्ञात है। काकन्दी मूलतः काकन्द ऋषि का आवास था (काकन्दस्स निवसो काकन्दी)। दूसरे शब्दों में यह माकंदी, सावत्थी, कौसाम्बी और कपिलवस्तु के ही समान था (बरुआ ऐंड सिनहा, भरहुत इंस्क्रिप्शंस, पृ० 18)।

कालकाराम—यह बिहार साकेत में था जहाँ बुद्ध एक बार रुके थे। साकेत के कालक नामक एक श्रेष्ठी ने यह उपवन बुद्ध को दिया था (धम्मपद कामेंट्री, सिंहली संस्करण, III, 465 और आगे; अंगुत्तर कामेंट्री, सिंहली संस्करण, II, 482 और आगे)।

कालिन्दी—यमुना के अंतर्गत देखिये।

काम-आश्रम—यह आश्रम सरयू और गंगा के संगम पर स्थित था। महादेव ने इसी आश्रम में अपने माथे पर स्थित तीसरे नेत्र के तेज से मदन को भस्म किया था (रामायण, बालकाण्ड, अध्याय, 23; तु० रघुवंश, अध्याय II, श्लोक 13; स्कंद पुराण, अवंती खंड, अध्याय, 34)।

कामगाम—यह कोलिय देश की राजधानी थी जो शाक्य क्षेत्र के पूर्व में स्थित था (जातक, कावेल, जिल्द, V, पृ० 219 और आगे)।

काम्पिल्य—(वैदिक काम्पील; पालि कम्पिल्ल)—यह दक्षिण पञ्चाल की राजधानी थी। रामायण में इसे इंद्रपुरी अमरावती की भाँति सुंदर बताया गया है (आदिकाण्ड, सर्ग 33, श्लोक 19)। महाभारत, (138, 73-74) में काम्पिल्य को निश्चित रूप से दक्षिण पञ्चाल की राजधानी बताया गया है।[1] किंतु जातकों में इसे गलती से उत्तर पञ्चाल में स्थित बतलाया गया है। पाणिनि द्वारा उल्लिखित भारत का यह एक प्राचीन नगर[2] था। यह जैनियों का एक पवित्र तीर्थ था।

---

[1] जातक, II, 214; वही, VI, 391; वही, V, 21; वही, III, 79, 379 इत्यादि।

[2] काशिकावृत्ति, 4, 2, 121.

तैत्तिरीय संहिता (VII. 4, 19, 1), मैत्रायणी संहिता (III, 12, 20), तैत्तिरीय ब्राह्मण (III, 9, 6) तथा शतपथ ब्राह्मण (XIII. 2, 8, 3) में एक स्त्री को काम्पीलवासिनी विशेषण दिया गया है। वेबर और त्सिमर के अनुसार काम्पील एक नगर का नाम था, जिसे परवर्ती साहित्य में काम्पिल्य कहा जाता था। यह पञ्चाल की राजधानी थी।[1] जैनग्रंथ ओववाइय-सूय (39) में इसका वर्णन प्राप्त होता है। आवश्यक निर्ज्जुति (383) में इसे तेरहवें तीर्थंकर का जन्मस्थान बतलाया गया है। योगिनीतंत्र (2।4, । पृ० 128-129) में इसका उल्लेख है।

काम्पिल्य आधुनिक कम्पिल से समीकृत है जो प्राचीन गंगा-तट पर बदायूँ और फर्रुखाबाद के बीच में स्थित है।[2] महाभारत (I, 128, 73) तथा जैन विविधतीर्थकल्प (पृ० 50) में निश्चित रूप से इसे गंगा के तट पर स्थित बतलाया गया है। नंदलाल दे के अनुसार यह उत्तरप्रदेश के फर्रुखाबाद जिले में फतेहगढ़ से 28 मील दूर उत्तरपूर्व में स्थित था (ज्यॉग्रेफिकल डिक्शनरी, 88)। यह कायमगंज रेलवे स्टेशन से केवल पाँच मील दूर है (उत्तर-पूर्व रेलवे)।

काम्पिल्य बहुत धनी[3] एवं समृद्धिशाली[4] नगर था। काम्पिल्य में गंगा-तट से राजप्रसाद तक एक अति कृत्रिम सुरंग (उम्मग्ग) खोदी गयी थी। वृहत्तर सुरंग का मुखद्वार गंगा-तट पर था। बड़ी सुरंग को अनेक योद्धाओं ने तथा छोटी सुरंग को 700 व्यक्तियों ने खोदा था। वृहत्तर सुरंग के प्रवेशद्वार पर एक यांत्रिक दरवाजा लगा हुआ था। सुरंग ईंटों की बनी थी और उस पर पलस्तर किया हुआ था। उसमें अनेक कमरे और रत्नगर्भ थे। यह अति अलंकृत थी (विस्तृत विवरण के लिए द्रष्टव्य जातक, II, 329 और आगे; वही, VI. 410)।

इस नगर में राजा द्रुपद की पुत्री द्रौपदी का स्वयंबर हुआ था जिसने स्वेच्छा से पाँच पाण्डवों को अपने पति के रूप में वरण किया (महाभारत, आदि पर्व, अध्याय 138; रामायण, आदि०, अध्याय, 23)। तेरहवें तीर्थंकर विमलनाथ जो राजा कृतवर्मन् और उनकी रानी सोमदेवी के पुत्र थे, के जीवन की पाँच शुभ घटनाओं से यह गौरवान्वित था। इन पाँच घटनाओं, यथा अवतरण, आवास, अभिषेक, उपगुति तथा जिनत्व के कारण इस शहर को पञ्चकल्याणक भी कहा जाता था।

---

[1] इंडिशे स्टुडियेन, I, 184; आल्टिडिशेज़ लेबेन, 36, 37.

[2] कनिंघम, एं० ज्यॉ० इं०, 413; आर्क० सर्वे० रि०, I, 255.

[3] हरिषेण, कथाकोष, सं० 104 और 115.

[4] जातक, VI, 433.

यहीं पर कौण्डिन्य और गर्दवालि के शिष्य, जैनमुनि आर्षमित्र ने संन्यास ले कर कैवल्य प्राप्त किया था। यहीं काम्पिल्य में गौतम ने पृष्ठि चम्पा के नरेश गागली को जैन धर्म में दीक्षित किया था। कुछ लोगों के अनुसार विख्यात ज्योतिषी श्री वराहमिहिर इसी नगर में उत्पन्न हुये थे (बि० च० लाहा, वाल्यूम, II, 240)।

इस नगर में अनेक महत्त्वपूर्ण राजाओं ने शासन किया था। महाभारत प्रसिद्ध पंच-पांडवों की पत्नी द्रौपदी के पिता द्रुपद, ब्रह्मदत्त[1], राजा हर्यश्व का पुत्र काम्पिल्य[2] जो पञ्चाल नाम से विश्रुत था, तथा अजमीढ वंश के नीप के पुत्र समर[3] ने काम्पिल्य में राज्य किया था। चूलणि ब्रह्मदत्त को विद्वान् ब्राह्मणों ने धार्मिक एवं लौकिक विषयों में शिक्षा दी थी (जातक, VI. 391 और आगे)। पञ्चाल नामक एक राजा ने अपने राज्योद्यान में किसी विद्वान् ब्राह्मण को शरण दी थी। हिमालय क्षेत्र में जाने के पूर्व उक्त ब्राह्मण ने राजा को नैतिक धर्म की रक्षा, व्रतों के पालन करने तथा धार्मिक बनने का उपदेश दिया था (जातक, III, 79 और आगे)। गन्धार-नरेश नग्गजी के समकालीन राजा दुम्मुख ने चार पच्चेक बुद्धों की धार्मिक वार्ता सुनकर संन्यास ले लिया था।[4] क्षेमेन्द्र की बोधिसत्त्वावदान कल्पलता[5] में राजा सत्यरत का उल्लेख है जो बहुत धर्मात्मा था, तथा महावस्तु में (भाग I, पृ० 283) राजा ब्रह्मदत्त का उल्लेख प्राप्त होता है। काम्पिल्य-नरेश संञ्जय ने राज-सत्ता का परित्याग करके जैन धर्म ग्रहण कर लिया था जिसे किसी भिक्षु ने जीव-हिंसा न करने के लिए शिक्षा दी थी।[6] काम्पिल्य-नरेश धर्मरुचि बहुत पवित्रात्मा था। काशी-नरेश से झगड़ा होने पर वह अपने पुण्य के प्रताप से अपनी सारी सेना आकाश-मार्ग से काशी ले गया था।[7]

काम्पिल्य में अच्छे और बुरे नरेशों ने राज्य किया था। इस नगर के एक पापात्मा राजा ने भारी करों से अपनी प्रजा को संत्रस्त किया था। उसके मंत्री भी अधर्मी थे। राजकीय अधिकारी भी प्रजाओं का दमन करते थे, जिनको वे दिन

---

[1] रामायण, आदिकाण्ड, सर्ग 33.

[2] विष्णु पुराण, अध्याय, II; भागवत पुराण, अध्याय, 22.

[3] विष्णु पुराण, IV, 19.

[4] जातक, III, 379 और आगे।

[5] 66वाँ पल्लव, पृ० 4 और 68 वाँ पल्लव, पृ० 9.

[6] उत्तराध्ययन सूत्र, XVIII.

[7] विविधतीर्थकल्प, पृ० 50.

में, तथा डाकू जिनकी संपत्ति रात में लूटते थे।[1] आधुनिक कंपिल कस्बे में दो जैन मंदिर हैं जहाँ विश्व के सभी भागों से यात्री प्रायः आया करते हैं।

कान्यकुब्ज—इसे गाधिपुर, कुशस्थल और महोदय भी कहा जाता था।[2] यह आधुनिक कन्नौज है। महाभारत (अध्याय, 87, 17) के अनुसार विश्वामित्र यहाँ आये थे। विनयपिटक (जिल्द, II, पृ० 299) के अनुसार कण्णकुज्ज या कान्यकुब्ज में संकस्स (संकाश्य) से श्रद्धेय थेर रेवत आये थे। भागवत पुराण (VI, I, 21) में भी इसका वर्णन अजामिल के नगर के रूप में किया गया है। बाण ने अपने हर्षचरित (षष्ठ उच्छ्वास) में कान्यकुब्ज की राज्यश्री नामक राजकुमारी का वर्णन किया है जो कारागार में डाल दी गयी थी। कान्यकुब्ज नगर पञ्चाल राज्य में स्थित था (एपि० इं०, IV, 246)। चेदि संवत् 866 में उत्कीर्ण जाजल्लदेव के रत्नपुर अभिलेख में जाजल्ल एवं चेदि-नरेश की संधि का उल्लेख किया गया है और जिसका सम्मान कान्यकुब्ज के राजकुमार जेजाकभुक्तिक ने किया था (एपि० इं०, I, 33)। खलिमपुर से प्राप्त एक ताम्रपत्र में यह बतलाया गया है कि भोज, कुरु, मत्स्य, यवन तथा यदु, चक्रायुध को कान्यकुब्ज-नरेश मानने के लिए विवश किये गये थे (रा० दा० बनर्जी, बाँगालार इतिहास, भाग, I, पृ० 167-69)। ग्यारहवीं शताब्दी ई० के अंत में कान्यकुब्ज गांगेयदेव के पुत्र कर्णदेव (1040-1070 ई०) के अधीन हो गया (रा० दा० बनर्जी, प्राचीन मुद्रा, पृ० 215)। कान्यकुब्ज अवन्तिवर्मन् और ग्रहवर्मन् नामक शासकों के अधीन था जो सुस्थितवर्मन् मौखरि[3] के वंशज थे (गुप्त इंस्क्रिप्शंस, प्रस्तावना, पृ० 15)। कान्यकुब्ज की प्राचीन राजधानी का नाम मूलतः कुसुमपुर था (द्रष्टव्य, समुद्रगुप्त का मरणांतर उत्कीर्ण, इलाहाबाद स्तंभ लेख, का० इं० इं०, जिल्द, III)। यह विश्वामित्र का जन्मस्थान था (रामायण, बालकाण्ड)। 7 वीं शताब्दी ई० में जब चीनी यात्री युवान च्वाङ् यहाँ आया था, यहाँ की सत्ता हर्षवर्द्धन के हाथ में थी। युवान-च्वाङ् ने कान्यकुब्ज में 100 बौद्ध अधिष्ठान देखे थे। उसके अनुसार, गंगा, कन्नौज के पश्चिम में बहती थी, न कि पूर्व में, जैसा कि कनिंघम ने माना

---

[1] जातक, V, 98 और आगे।

[2] अभिधान-राजेन्द्र, IV, 39-40.

[3] यहाँ पर उल्लेखनीय है कि यह मत अब सत्य नहीं माना जाता। देव बर्णार्क के लेख तथा हाल ही में देवरिया जिले से प्राप्त सोहनाग के मुद्रा-लेख से स्पष्ट हो जाता है कि अवन्ति वर्मा एवं ग्रहवर्मा, मौखरि शर्ववर्मा के वंशज थे। सुस्थितवर्मा कामरूप-नरेश था — अनूदक)

है। यह राज्य लगभग 4,000 ली विस्तृत था। इसके चारों ओर एक शुष्क परिखा थी। इसके चतुर्दिक् दृढ़ एवं ऊँचे अट्टालक (बुर्ज) थे। इसमें फूल, जंगल, झीलें एवं सरोवर थे। यहाँ के निवासी सुखी एवं संतुष्ट थे। जलवायु सुरुचिपूर्ण एवं सुहावनी थी। यहाँ के निवासी ईमानदार, निश्छल, सज्जन और अपने स्वरूप में मोहक थे। वे अलंकृत एवं चमकदार वस्त्र पहनते थे। वे ज्ञान-पिपासु थे। वहाँ बौद्ध-मत के अनुयायी और विधर्मी समान संख्या में थे (बील, बुद्धिस्ट रिकार्डस आॅव द वेस्टर्न वर्ल्ड, I, 206-207)। उसके समय में कन्नौज का शासक हर्षवर्द्धन अपने प्रशासन में न्यायशील एवं कर्त्तव्य-पालन में नियमनिष्ठ था। सत्कार्यों के संपादन में वह अपने तन-मन से लीन रहता था। गंगा के तट पर उसने अनेक स्तूप एवं बौद्ध विहार बनवाये थे। वह भिक्षुओं को परीक्षा तथा विवाद के लिए आमंत्रित करता था और उनकी योग्यता या अयोग्यता के अनुसार उन्हें पुरस्कृत या दंडित करता था। राजा अपने संपूर्ण राज्य में निरीक्षण के लिए दौरे करता था। राजा की दिनचर्या तीन भागों में विभक्त थी। एक भाग राजकाज तथा दो धर्म-कार्य के लिए नियत थे। वह एक अथक परिश्रमी व्यक्ति था (वाटर्स, आॅन युवान च्वाङ्, I, 343-44)। हर्षवर्द्धन के काल के पूर्व, कन्नौज मौखरि नरेशों की राजधानी थी। त्रिलोचनपाल के सूरत-दानपत्र में कन्नौज में राष्ट्रकूट वंश का प्रथम उल्लेख किया गया है। लक्ष्मणपाल के बदायूँ स्तंभ लेख से (एपि० इं०, I, 61-66) यह निश्चित रूप से सिद्ध होता है कि राष्ट्रकूट कन्नौज के समीप रहते थे। मालवा, कोशल एवं कुरु-प्रदेश कन्नौज के गुर्जर राजाओं के अधीन प्रतीत होते हैं। धंग ने कन्नौज-नरेश को पराजित करके सर्वोच्चसत्ता प्राप्त की थी (कान्यकुब्ज नरेन्द्र, एपि० इं०, I, 197)। गाहडवाल नरेश गोविंदचंद्र के पाँच ताम्रपत्र-अभिलेख कन्नौज से मिले हैं (एपि० इं०, VIII. 149 और आगे)। दो ताम्रपत्र अभिलेखों में कन्नौज-नरेश महाराजाधिराज महेन्द्रपाल के शासन का उल्लेख है (एपि० इं० IX. 1 . और आगे)।

ग्वालियर-प्रशस्ति से हमें ज्ञात होता है कि प्रतीहार वत्सराज ने भाण्डिकुल से कन्नौज की सत्ता छीन ली थी (एपि० इं०, XVIII. 101)। वणी और रन्धनपुर दानपत्रों से हमें ज्ञात होता है कि राष्ट्रकूट ध्रुव ने वत्सराज को पराजित किया था जिसने (वत्सराज) स्वयं गौड-नरेश को हराया था। उसके प्रतिद्वन्द्वी धर्मपाल ने कन्नौज पर अधिकार करने की अपनी महत्त्वाकांक्षा नहीं छोड़ी थी, यद्यपि इस दिशा में इसका प्रथम प्रयत्न असफल हो चुका था (एपि० इं०, VI. 244)। कन्नौज-नरेश गोविंदचंद्र के वि० सं० 1184 में उत्कीर्ण कमौली अभिपत्र में कुशिक गाधिपुर तथा कान्यकुब्ज का उल्लेख किया गया है, जिसे सामान्यतः एक ही स्थान

यथा कन्नौज से समीकृत किया जाता है (एपि० इं०, XXVI, भाग II, अप्रैल 1941, पृ० 71)। गोविंदचंद्र ने कान्यकुब्ज तथा उसके अधीन क्षेत्रों पर अपने वंश की सत्ता पुनर्स्थापित की थी।

कारीतलाई—यह जबलपुर जिले में मुरवारा तहसील के मुख्यावास से पूर्व की ओर 29 मील दूर स्थित एक गाँव है (एपि० इं०, XXIII, भाग V, लक्ष्मण-राज का कारीतलाई शिलालेख)।

काशी—भारत के तीर्थों में काशी या वाराणसी अपना विशिष्ट स्थान रखती है (सौर पुराण, IV, श्लोक 5; कालिका पुराण, 51, 53; 58, 35; तु० महा-भारत, 84, 78)। काशी षोडश् महाजनपदों की तालिका में संमिलित है (अंगु-त्तर, I, 213; IV, 252, 256, 260)। पाणिनि ने अपनी अष्टाध्यायी (4. 2.116)तथा पतञ्जलि ने अपने महाभाष्य में (2.1.1, पृ० 32)काशी का उल्लेख किया है। भागवत पुराण (IX. 22,23; X. 57.32; X. 66,10; X. 84.55 तथा XII.13, 17)में भी इस नगर का उल्लेख है। स्कंद पुराण (अध्याय, I, 19-23) तथा योगिनीतंत्र (1.2; 2.4) में इस पुण्यनगरी का उल्लेख किया गया है। गोविंदचन्द्र के कमौली-दानपत्र (वि० सं० 1184)में भी उसका वर्णन प्राप्त होता है (एपि० इं०, XXVI, भाग II, पृ० 71; इं० एं० XV, पृ० 8, पाद-टिप्पणी, 46)। प्राचीन काशी जनपद के प्रमुख नगर वाराणसी का एक शहर के रूप में वर्णन ल्युडर्स की तालिका, संख्या 925 में प्राप्त होती है। जैनग्रंथ उवासगदसाओ (पृ० 84-85, 90, 95, 105, 160, 163) के अनुसार यह जियसत्तु के राज्य में, कम्पिल्लपुर, पलासपुर तथा आलमी की भाँति एक महत्त्व-पूर्ण नगर था। विभिन्न युगों में यह विभिन्न नामों, यथा सुरुन्धन, सुदस्सन, ब्रह्म-वद्ढन, पुप्फवती, रम्म एवं मोलिनी नाम से विख्यात था (जातक, IV, पृ० 15, 199; चरियापिटक, पृ० 7)। कूर्म पुराण (पूर्वभाग, अध्याय, 30, श्लोक 63) के अनुसार यह वरणा एवं असी नदियों के मध्य स्थित था। यह इलाहाबाद से 80 मील आगे गंगा के उत्तरी तट पर स्थित है। वरणा एवं असी नदियों के संयुक्त नाम के आधार पर जो इस नगर के उत्तर एवं दक्षिण में बहती हैं इसका नाम वाराणसी पड़ा। वरणा, जो निश्चय ही एक उल्लेखनीय क्षुद्र नदी है, अथर्व वेद (IV. 7.1) में वर्णित वरणावती नदी से समीकृत की जा सकती है। वारा-णसी को काशीनगर और काशीपुर भी कहा जाता है (जातक, V. 54; VI. 115; धम्मपद कामेंट्री, I, 87)। जातकों में इस नगर का विस्तार 12 योजन बतलाया गया है (जातक, IV. 377; VI. 160; तु० मज्झिम कामेंट्री, II, 608)। इसका निर्माण शूलपाणि महादेव ने किया था। यहाँ पर रानी शैव्या

एवं अपने पुत्र के साथ राजा हरिश्चंद्र आये थे (मार्कण्डेय पुराण, बंगवासी, सं० पृ० 34)। श्रावस्ती से सुगम सड़कों द्वारा यहाँ पहुँचा जा सकता था। यह गंगा के बाँयें तट पर स्थित था। यह उद्योग एवं व्यापार का एक बड़ा केंद्र था तथा वाराणसी, श्रावस्ती एवं तक्षशिला में व्यापारिक संबंध थे (धम्म पद कामेंट्री, III, पृ० 429; I, पृ० 123)। यह एक अत्यधिक जन-संकुल एवं समृद्धशाली प्रदेश था (धम्मपद कामेंट्री, III, पृ० 445, सुत्तनिपात कामेंट्री, II, 523 और आगे; जातक II, 109, 287, 338; III, 198; V. 377; VI. 151, 450; जातक I, 355; अंगुत्तर, III, 391; जातक II, 197; I, 478; VI. 71)। हिंदू, बौद्ध एवं जैन साहित्य में विशिष्ट रूप से वर्णित वाराणसी की गणना आनन्द द्वारा बुद्ध के परिनिर्वाण के लिए अनुकूल बताये गये बड़े नगरों में की गयी थी (दीघ, II, 146)। सारनाथ से प्राप्त एक अभिलेख में इस नगर में स्थित कुछ धार्मिक भवनों के मरम्मत का उल्लेख किया गया है (इं० एं०, XIV, पृ० 139-140).

जैन ग्रंथ विविधतीर्थकल्प के अनुसार वाराणसी चार भागों में विभक्त है;

(1) देववाराणसी—यहाँ पर विश्वनाथ का मंदिर स्थित है, जिसमें 24 जिनपट्टों को देखा जा सकता है;

(2) राजधानी-वाराणसी—यहाँ पर यवन रहते थे।

(3) मदन-वाराणसी; और

(4) विजय-वाराणसी (लाहा, सम जैन कैनॉनिकल सूत्राज, पृ० 174-75)।

चीनी वाराणसी को पो-लो-नि-स्से (Po-Lo-Ni-Sse) कहते थे। यह 4,000 ली विस्तृत था तथा बहुत घना बसा हुआ था। यहाँ की जलवायु शीतल, फसलें प्रचुर तथा वृक्ष फलने-फूलने वाले एवं सर्वत्र घनी झाड़ियाँ थीं। वहाँ पर कोई 30 संघाराम एवं 100 देवमंदिर थे। यहाँ के निवासी उदार एवं विद्याध्ययन में तत्पर थे। यहाँ के निवासी अधिकांशतः नास्तिक थे तथा कुछ लोग ही बुद्ध के प्रति श्रद्धा रखते थे (बील बुद्धिस्ट रिकार्डस ऑव द वेस्टर्न वर्ल्ड, II, 44 और आगे)। वाराणसी के निकट चुण्डट्ठिल (चुण्डवील) नामक एक स्थान था, जिसका वर्णन भरहुत अभिलेख में हुआ है (बरुआ ऐंड सिनहा, भरहुत इंस्क्रिप्शंस, पृ० 7, 18)।

कुछ गाहडवाल-अभिलेखों (यथा, रवियनदानपत्र, भंडारकर की उत्तरी अभिलेखों की तालिका, सं० 222) से हमें ज्ञात होता है कि वाराणसी के उत्तर में वरुणा एवं गंगा के संगम के समीप स्थित, आदिकेशवघट्ट उस समय वाराणसी का एक भाग समझा जाता था। वाराणसी नगर की दक्षिणी सीमा कम से कम गंगा एवं असी के संगम तक फैली हुयी थी (इंडियन कल्चर, II, 148)। बोधगया

से प्राप्त जयचंद्र देव के शासनकाल के एक बौद्ध अभिलेख में काशी का उल्लेख किया गया है। माधायनगर दानपत्र के अनुसार काशी का एक राजा लक्ष्मणसेन द्वारा पराजित हुआ था (जं० रा० ए० सो० वं०, न्यु० स०, भाग V, पृ० 467 और आगे; तु०, एपि० इं०, XXVI, भाग I; लक्ष्मणसेन का इंडिया आफिस अभिपत्र)। चन्द्रदेव के चंद्रावती दानपत्र में (एपि० इं०, XIV. 193) गाहड़वाल राज्य का विस्तार वाराणसी और कन्नौज से अयोध्या (फ़ैज़ाबाद) में सरयू एवं घर्घरा (घाघरा) के संगम तक बतलाया गया है। काशी जनपद के उत्तर में कोसल, पूर्व में मगध, और पश्चिम में वत्स स्थित था (कैंब्रिज हिस्ट्री ऑव इंडिया, I, 316)। यह एक धनी एवं समृद्धिशाली नगर था (अंगुत्तर, I, 213; दीघ, II, 75)। वैदिक साहित्य एवं पुराणों में काशी का कई बार उल्लेख हुआ है (सांख्यायन श्रौतसूत्र, XVI. 29,5; बृहदारण्यक उप०, III, 8,2 शतपथ ब्राह्मण, XIII. 5, 4, 19; कौषीतकि उप०, IV. 1; बौधायन श्रौतसूत्र, XVIII. 44; रामायण, उत्तरकाण्ड, 56, 25; 59, 19; आदि काण्ड, तेरहवाँ सर्ग, किष्किन्ध्या-काण्ड, 40 वाँ सर्ग)। महाभारत में इस शहर का सुस्पष्ट वर्णन किया गया है। महाभारत के अनुशासनपर्व (अध्याय, 30, पृ० 1899-1900) के अनुसार वाराणसी का संस्थापक दिवोदास पराजित होने के पश्चात् वन में भाग गया था। महाभारत के उद्योगपर्व (अध्याय, 117, पृ० 746) के अनुसार काशी-नरेश दिवोदास के प्रतर्दन नामक एक पुत्र था। हरिवंश (अध्याय, 31) में दिवोदास के जीवनचरित्र का एक अन्य विवरण प्राप्त होता है (तु० वायु पुराण, अध्याय, 92; ब्रह्म पुराण, अध्याय, 13, 75)। महाभारत एवं पुराणों में काशी के राजाओं से संबंधित कई कहानियाँ हैं (आदि पर्व, 95-105; उद्योगपर्व, अध्याय, 172-94; पृ० 791-806; सभापर्व, 30, 241-2; विराटपर्व, 72, 16; उद्योगपर्व, 72. 714; द्रोण पर्व, 22, 38; भीष्म पर्व, 50, 924; वायु पुराण, अध्याय, 92; विष्णु पुराण, पंचम अंश, अध्याय, 34)। महाभारत के उद्योगपर्व में कृष्ण द्वारा काशी के कई बार जलाये जाने का उल्लेख प्राप्त होता है। जैनियों के अनुसार पार्श्वनाथ वाराणसी में पैदा हुए थे। काशी का उल्लेख जैन धर्म के प्रवर्त्तक महावीर और उनके शिष्यों की कहानियों के संदर्भ में भी हुआ है।[1] यद्यपि काशी और वाराणसी अपेक्षाकृत हिंदू एवं जैन ग्रंथों में सुस्पष्ट रूप से वर्णित है, किंतु बौद्ध

---

[1] बि० च० लाहा, महावीर, हिज़ लाइफ ऐंड टीचिंग्स, खंड 1; उवासगदसाओ, भाग II, 90-8; जैन सूत्राज़, सै० बु० ई०, भाग II, पृ० 136-7; सूत्र कृतांग, जैनसूत्राज़, II, पृ० 87; एस० स्टीवेंसन, हार्ट ऑव जैनिज्म, पृ० 48-49.

ग्रंथों, विशेषत: जातकों से, इस विषय में हमें पूरी जानकारी प्राप्त होती है।[1] बुद्ध के काल में काशी की राजनीतिक शक्ति समाप्त हो गयी थी। कोसल में काशी-जनपद-विलयन कोशलाधिप प्रसेनजित के राज्यारोहण के पूर्व ही एक निष्पन्न तथ्य था। उसके पिता महाकोशल ने मगध-नरेश बिम्बिसार के साथ अपनी पुत्री कोशलदेवी के विवाह के अवसर पर उसे काशी ग्राम (कासीगाम) श्रृंगार-धन के रूप में दे दिया था।[2] जब मगध-नरेश अजातशत्रु कोशलों को पराजित करके उत्तर-भारत का सर्वशक्तिशाली राजा बना[3] तब उसने काशी को जीत कर मगध राज्य में सदा के लिए मिला लिया।

अच्छे शासन के बावजूद भी काशी अपराधों से पूर्णत: मुक्त नहीं थी।[4] काशी में न्याय एवं सुनीतिपूर्ण शासन होता था। राजामात्य न्यायशील और ईमानदार थे। कोई गलत वाद न्यायालय में नहीं लाया जाता था और कभी-कभी सच्चे मुकद्दमे इतने कम होते थे कि मंत्रियों को मुकद्दमेबाजों के अभाव में बेकार बैठना पड़ता था। वाराणसी का राजा अपनी कमियों को जानने के लिए सदा सजग रहता था।[5]

वाराणसी के उत्साही नवयुवक शिक्षा प्राप्त करने के लिए तक्षशिला जाया करते थे (धम्मपद कामेंट्री, I, 251 और आगे; खुद्दकपाठ कामेंट्री, 198)। वह स्थान जो बुद्ध की कई यात्राओं से निकटतम रूप से संबंधित था, शहर के निकट ही, प्रसिद्ध मृगवन (इसिपतनमिगदाव) था। ज्ञान-प्राप्ति के पश्चात् यहीं पर बुद्ध ने अपना प्रथम उपदेश दिया था (दीघ, III, 141; मज्झिम I, 170 और आगे; संयुक्त, V. 420 और आगे, पृ० 97, 559)। बुद्ध ने वाराणसी के बहुत से निवासियों को बौद्धमत में परिवर्तित किया तथा यहाँ पर उन्होंने कई उपदेश दिये (विनय, I, 15, 19; अंगुत्तर निकाय, I, 110 और आगे; 270 और आगे; III, 392 और आगे 399; और आगे; संयुत्त, I, 105; V. 406; विनय, I, 189, 216, 289; समन्तपासादिका, I, 201)। इस नगर में अनेक श्रद्धास्पद

---

[1] अंगुत्तर, I, 213; दीघ, II, 146; विनय, I, 343 और आगे; धम्मपद कामेंट्री, I, 56 और आगे; जातक III, 211 और आगे; 406 और आगे; 452, 487; जातक, I, 262 और आगे; अंगुत्तर, V, 59.

[2] जातक, II, 237; IV, 342, और आगे।

[3] संयुत्त, I, 82-85.

[4] धम्मपद कामेंट्री, I, 20; जातक, II, 387-88.

[5] जातक, II, 1-5.

बौद्ध-भिक्षु आये थे (विनय टेक्स्टस, सै० बु० ई०, II, 359-60; थेरीगाथा कामेंट्री, पृ० 30-31; विनय टेक्स्टस, III, 360, टिप्पणी, 3; 195-96, टिप्पणी, 3)।

कसिया—कसया पाषाण-प्रतिमा अभिलेख में इस गाँव का वर्णन है, जो गोरखपुर जिले की पडरौना तहसील में, गोरखपुर शहर से पूर्व में 34 मील दूर पर स्थित है (का० इं० इं०, जिल्द III)। कसया तहसील का मुख्यावास गोरखपुर से पूर्व में 34 मील दूर एक बड़े गाँव में, देवरिया से इक्कीस मील पूर्वोत्तर तथा पडरौना से 12 मील दूर दक्षिण-पश्चिम में स्थित है (गोरखपुर डिस्ट्रिक्ट गजेटियर, ले०-नेविल, पृ० 261)। मल्लों का राज्य दो भागों में विभक्त था जिनकी राजधानियाँ कुशीनारा और पावा थी। कुछ विद्वानों के अनुसार पावा को संभवतः छोटी गंडक के तट पर तथा गोरखपुर जिले के पूर्व में स्थित कसया से समीकृत किया जा सकता है (बि० च० लाहा, ज्यॉग्रेफी ऑव अर्ली बुद्धिज्म, पृ० 14)। कसया के भग्नावशेषों की खोज 1876 में की गयी थी जब मुख्य निर्वाण-स्तूप को पूर्णतः खोदा गया था। प्राचीन बौद्ध-स्थल कसया में किये गये उत्खननों से बहुत महत्त्वपूर्ण पुरानिधियाँ एवं अनेक प्राचीन भवन प्रकाश में आये हैं (आ० स० इं०, एनुअल रिपोर्ट, 1911-12, पृ० 134 और आगे; आ० स० रि० 1904-5, 43 और आगे; 1905-6, 6 और आगे; 1906-7, 44 और आगे 1910-11, 62 और आगे; 1911-12, 134 और आगे।

काश्मीर(कश्मीर)—काश्मीर जिसे टालेमी ने कस्पेरिया (Kasperia) कहा है का वर्णन वीरपुरुषदत्त के नागार्जुनिकोण्ड अभिलेखों में हुआ है। पाणिनि (4.2.133)एवं पतञ्जलि(3, 2, 2, पृ०188-189; 1, 1, 6, पृ०276)इस शहर से परिचित थे। इसका वर्णन योगिनीतंत्र में भी हुआ है (1।3; 2।1, पृ० 77)। बृहत्संहिता में एक देश के रूप में इसका वर्णन किया गया है (XIV. 29)। यह पंजाब के उत्तर में स्थित है। यहाँ पर साहित्य, धर्म एवं दर्शन के क्षेत्रों में उल्लेखनीय प्रगति हुयी है। दिव्यावदान (पृ० 399) में इस रमणीक नगर का उल्लेख किया गया है। अवदानशतक (पृ०, 67) तथा बोधिसत्त्वावदान कल्पलता (70 वाँ पल्लव) में इसे केवल नागों द्वारा निवसित नगर बतलाया गया है। स्रग्धरास्तोत्रम् का प्रणेता काश्मीर-निवासी एक बौद्ध भिक्षु था। मध्यन्तिक नामक एक भिक्षु को उसके आध्यात्मिक गुरु आनंद ने यहाँ पर धर्म प्रचारक के रूप में भेजा था (बि० च० लाहा, ज्यॉग्रेफिकल ऐसेज़, पृ० 45)। कौटिलीय अर्थशास्त्र के अनुसार इस शहर से हीरा (वज्र) प्राप्त होता था।

काश्मीर राज्य का विस्तार 7,000 ली था और यह चारों ओर ऊँचे पर्वतों

से परिवृत्त था। इस प्रदेश की राजधानी की पश्चिमी सीमा पर कोई बड़ी नदी, जो स्पष्टतः वितस्ता प्रतीत होती है, प्रवाहित होती थी। यहाँ की भूमि उपजाऊ थी, और इस कारण यहाँ खाद्यान्न, फलों एवं फूलों की प्रचुर उपज की जा सकती थी यहाँ पर जड़ी-बूटियाँ प्राप्त होती थीं। यहाँ की जलवायु शीतल एवं रूक्ष थी। यहाँ के निवासी सुंदर आकृति वाले होते थे। वे विद्या-व्यसनी थे। उनमें नास्तिक एवं आस्तिक दोनों ही थे। यहाँ पर स्तूप एवं संघाराम भी पाये जाते थे (बील, बुद्धिस्ट रिकार्डस ऑव द वेस्टर्न वर्ल्ड, I, 148 और आगे)। यह गन्धार जनपद में संमिलित था। तृतीय बौद्ध संगीति के समापन के पश्चात् मोग्गलिपुत्त-तिस्स को बौद्धधर्म के प्रचार के लिए कश्मीर भेजा गया था। अशोक के समय में यह मौर्य-साम्राज्य के अंतर्गत था (द्रष्टव्य, ऑन युवान-च्वाङ्, I, पृ० 267-71)।

काश्मीर के अनंत मंदिरों में, मार्तण्ड एवं पायेच, दो का उल्लेख किया जा सकता है। मार्त्तण्ड, जिसे सूर्यमंदिर भी कहा जाता है, इस्लामाबाद से कोई तीन मील पूर्व में, कश्मीर के अति रमणीक दृश्य के ऊपर एक ढाल पर स्थित है। इस विशाल मंदिर का निर्माण ललितादित्य ने आठवीं शती ई० में कराया था। नौनाग्रि करेवा के नीचे, श्रीनगर से 19 मील दूर तथा झेलम नदी के बाँयें तट से कोई 6 मील दूर पर पायेच का प्राचीन मंदिर स्थित है जो अपने सहज सौंदर्य एवं स्वरूप की रमणीयता की दृष्टि से काश्मीर का सर्वश्रेष्ठ मंदिर है। कश्मीर शैवमत के एक पृथक् संप्रदाय का केंद्र था जिसका दर्शन शंकर द्वारा प्रतिपादित अद्वैत दर्शन के समान था (अधिक विवरण के लिए, देखिये, बि० च० लाहा, होली प्लेसेज ऑव इंडिया, पृ० 30-31)।

कर्त्तृपुर—इलाहाबाद स्तंभ लेख में वर्णित कर्तृपुर में कुमाऊँ, अलमोड़ा, गढ़वाल एवं काँगड़ा संमिलित थे।[1]

केदार—महाभारत (अध्याय, 83, श्लोक, 72) में केदारतीर्थ का उल्लेख प्राप्त होता है।[2] योगिनीतंत्र (पृ० 1, 8; 1, 11) में इसका वर्णन किया गया है।

केकय—महाभारत (II, 48-13; VI. 61, 12; VII. 19, 7) तथा भागवत पुराण (X. 2, 3; X. 75, 12; X. 84, 55; X. 86. 20) में वर्णित केकय देश को पंजाब (पा०) के आधुनिक शाहपुर जिले से समीकृत किया गया है। रामायण के अनुसार (II, 68, 19-22; VII 113-114) केकय देश

---

[1] ज० रा० ए० सो०, 1898, पृ० 198.

[2] तु० कूर्म पुराण, 30, 45-48; सौर पुराण, अध्याय, 99, श्लोक, 23.

विपाशा या व्यास नदी के पार, गन्धार जनपद सीमा का स्पर्श करता था। कनिंघम ने केकय देश की राजधानी को गिरजक या झेलम तट पर स्थित जलालपुर से समीकृत किया है (ज० ए० सो० बं०, 1895, 250 और आगे; एं० ज्यॉ० इं०, 1924, 188; रामायण, I, 69, 7; II, 71, 18)। पाणिनि ने अपनी अष्टाध्यायी (7.3.2) तथा पतञ्जलि ने अपने महाभाष्य (7, 2, 3) में इसका उल्लेख किया है। राजशेखर ने अपनी काव्यमीमांसा में केकय देश को भारत के उत्तराखण्ड में शकों, हूणों, कांबोजों, बाह्लीकों आदि के साथ स्थित बताया है। स्ट्रैबो के अनुसार यह देश विस्तृत एवं उपजाऊ था तथा इसमें कोई 300 नगर थे (एच० तथा एफ० का अनुवाद, III, पृ० 91)। विस्तृत विवरण के लिए देखिये, लाहा, इंडोलॉजिकल स्टडीज़, भाग, I, पृ० 18-19)।

केसपुत्त—अंगुत्तर (I. 188) में केसपुत्त को कोसल में स्थित बतलाया गया है। यहाँ के निवासी कालाम बिम्बिसार के समय में गणराज्य में रहते थे। अलार नामक दार्शनिक केसपुत्त का निवासी था (बुद्धचरित, XII. 2; लाहा, ज्यॉग्रेफी ऑव अर्ली बुद्धिज्म, पृ० 30)।

केतकवन—यह कोसल में नालकपान ग्राम के समीप स्थित था (जातक, I, 170)।

केतुमती—अपनी पत्नी एवं बच्चों के सहित राजा वेस्सन्तर ने इस नदी के तट पर विश्राम किया था (जातक, VI. 518)। वह इस नदी को पार करके नालिका पहाड़ी पर गये थे। उत्तर दिशा में जाते हुए तब वह मुचलिन्द सरोवर पहुँचे थे।

खाण्डव—तैत्तिरीय आरण्यक के अनुसार (V. I. I.) यह कुरुक्षेत्र की एक सीमा थी। इसे महाभारत में वर्णित खाण्डव वन से समीकृत किया जा सकता है। यह नाम पंचविंश ब्राह्मण में (XXV. 3, 6) भी मिलता है।

कीर—धर्मपाल के खलिमपुर ताम्रपत्र में इस प्रदेश का उल्लेख प्राप्त होता है जो कीलहार्न के मतानुसार पूर्वोत्तर भारतवर्ष में स्थित था (एपि० इं०, IV. 243, 246)। पालवंशीय नरेश धर्मपाल ने इस देश के निवासियों को पराजित किया था और कीर-नरेश स्वयं पाल सम्राट् को आदर देने के लिए कन्नौज की राजसभा में आया था (एपि० इं०, IV. 243)। यशोवर्मन् के खजुराहो-अभिलेख के अनुसार कीर-नरेश को भोट-राज ने वैकुंठ की एक प्रतिमा दी थी (एपि० इं०, I, 122)। कर्ण के रीवाँ शिलालेख में कीर का उल्लेख वैजनाथ के समीप हुआ है जो काँगड़ा की घाटी में स्थित था (एपि० इं०, XXIV, भाग III, पृ० 110)।

कीरग्राम—इसे काँगड़ा जिले में स्थित बैजनाथ से समीकृत किया गया है जहाँ पर एक लिंग मंदिर था, जो प्राचीन बिन्दुक नदी (आधुनिक बिन्नू) के दक्षिणी तट पर चित्रवत् स्थित है (आ० स० इं०, एनुअल रिपोर्ट, 1929-30, पृ० 15 और आगे)।

किरात—यह हिमालय में और संभवतः तिब्बत में स्थित है। टालेमी के अनुसार किरात उत्तरापथ में स्थित थे (तु० मैक्रिंडिल, ऐंश्येंट इंडिया, पृ० 277)। उसके संनिवेश पूर्वी क्षेत्र में भी थे। किरात देश को टालेमी ने किरहैडिया (Kirrhadia) कहा है। किरहैडाई (Kirrhadai) के देश कैरहैडिया को 'पेरिप्लस ऑव द एरीथियन सी' में गंगा नदी के मुहाने के पश्चिम में स्थित बतलाया गया है। टालेमी द्वारा वर्णित किरहैडोई या ऐर्रहेडोई न केवल गंगा नदी घाटी पर ही फैले हुये थे, वरन् और आगे पूर्व में भी विस्तृत थे। प्लिनी एवं मैगस्थनीज़ ने भी किरातों का स्काइर्टिस (Skyrites) नाम से वर्णन किया है। मेगस्थनीज के अनुसार ये लोग खानाबदोश थे। किरातों की स्थिति के विषय में विस्तृत विवरण के लिए देखिये, लास्सेन, इंडिशेज अल्टिठुम, जिल्द, III, पृ० 235-237)। महाभारत (XII. 207. 43) में किरातों का उल्लेख यवनों, कम्बोजों, गंधारों एवं बर्बरों के साथ किया गया है। ये सभी उत्तरापथ में रहते थे। श्रीमद्भागवत में (II. 4. 18) उन्हें आर्यक्षेत्र के बाहर का रहने वाला बतलाया गया है। उनका उल्लेख वीरपुरुषदत्त के नागार्जुनिकोण्ड अभिलेख में किया गया है। उत्तरापथ के किरातों को शिकारियों तथा लोभी पुरुष जैसी हिंस्र प्रवृत्तिवाली अपराधी जातियों के रूप में तिरस्कृत किया गया है (बे० मा० बरुआ, अशोक ऐंड हिज इंस्क्रिप्शंस, पृ० 100; साहित्यिक उल्लेखों के लिए देखिए, बि० च० लाहा, ट्राइब्स इन ऐंश्येंट इंडिया, पृ० 282-83)।

किरथार—यह पर्वत सुलेमान पर्वत के दक्षिण में बलूचिस्तान के सिंह एवं झलवन क्षेत्रों के बीच में स्थित है। मूला नदी की कृशधारा से दक्षिण की ओर समानांतर शिखरों की एक श्रृंखला में यह 199 मील तक फैला हुआ है। अधिक विवरण के लिए देखिये, लाहा, माउंटेंस ऑव इंडिया, पृ० 8)।

कोशल—पाणिनि की अष्टाध्यायी (4.1.171) में वर्णित कोशल भारत के सोलह महाजनपदों में से एक था (अंगुत्तर निकाय, I, 213; तु० विष्णु पुराण, अध्याय, 4, अंश 4)। भागवत पुराण में (IX. 10. 29; IX. 11, 22; X. 2. 3; X. 58. 52; X. 86. 20; XII. 12. 24) इसका वर्णन एक देश के रूप में किया गया है। यह कुरु एवं पंचाल देशों के पूर्व में तथा विदेह के पश्चिम में स्थित था। सदानीरा इसे विदेह से अलग करती थी जो संभवतः बड़ी गंडक थी

(कैम्ब्रिज हिस्ट्री ऑव इंडिया, I, 308; रैप्सन, ऐंश्येंट इंडिया, पृ० 164; तु० शतपथ ब्राह्मण 1.4.11)। कोशल-निवासी सूर्यवंशी थे तथा सीधे इक्ष्वाकु द्वारा मनु के वंश से संबंधित थे। दशकुमारचरितम् (पृ० 195) में कोशल-नरेश कुसुमधन्वा का उल्लेख है, जिसकी पत्नी सागरदत्ता पाटलिपुत्र के वैश्रवण नामक एक व्यापारी की पुत्री थी। बौद्ध लोग कोशल को कोशलवंशीय राजकुमारों का देश कहते हैं जिनकी उत्पत्ति वे इक्ष्वाकु से बतलाते थे (सुमंगलविलासिनी, I, 239)। महाकाव्य-काल में कोशल की महत्ता बढ़ जाती है। राम के बनवास की कहानी से महाकाव्य-काल में कोशल-देश के विस्तार का ज्ञान-प्राप्त किया जा सकता है। राम के पश्चात् सुविस्तृत कोशल-साम्राज्य राम तथा उनके अन्य तीन भाइयों के पुत्रों में बँट गया था। खास कोशल देश ही दो भागों में विभक्त बतलाया जाता है। राम का ज्येष्ठ पुत्र कुश दक्षिण कोशल का राजा हुआ और उसने अपनी राजधानी अयोध्या से बदल कर कुशस्थली को बनाया जो विंध्य पर्वतमाला में स्थित थी (वायु पुराण, 88, 198)। उनका छोटा पुत्र, लव उत्तर कोशल का शासक हुआ और उसने श्रावस्ती को अपनी राजधानी बनाया। कोशल का उत्तरकालीन इतिहास मुख्यतया जैन एवं बौद्ध साहित्य से ज्ञात होता है। काशी एवं कोशल में शत्रुता थी। काशी और कोशल पास-पास विकसित होने वाले दो समान रूप से शक्तिशाली राज्य थे जिनमें प्रत्येक के अपने-अपने आंतरिक क्षेत्र, बाहरी जिले तथा सीमांत देश थे। कालांतर में काशी कोशल जनपद में मिला लिया गया। बौद्ध ग्रंथों में कोशल के नर-नारियों के विषय में बहुत सी कहानियाँ हैं और उनमें से अनेक किसी-न-किसी रूप में पसेनदि से संबंधित थी। बाद में दक्षिण कोशल से पृथक् करने लिए उत्तर कोशल को श्रावस्ती कहा जाने लगा। कोशल के राजाओं एवं राजकुमारों को अच्छी शिक्षा मिलती थी। अधिक विवरण के लिए देखिये बि० च० लाहा, ट्राइब्स इन ऐंश्येंट इंडिया, अध्याय, XXVIII)।

कोसम्बी—कोसम्बी (संस्कृत, कौशाम्बी; चीनी, कियाउ-शाङ्-मि) वंसों या वत्सों (वत्सपट्टन) की राजधानी थी। यह छठें तीर्थंकर का जन्मस्थान था (आवस्सक निर्ज्जुति, 382)। एक पाषाण-स्तंभ-लेख कोसम के निकट प्राप्त हुआ था जिसे इलाहाबाद जिले में प्राचीन कोशाम्बी से समीकृत किया जाता है (महाराज वैश्रवण का कोसम् अभिलेख, वर्ष 107, एपि० इं०, XXIV, भाग IV, पृ० 146)। वैश्रवण कौशाम्बी का एक शासक था और उसका नाम सर्वप्रथम इस अभिलेख से ज्ञात हुआ है। प्राचीन कौशाम्बी स्थल की खोज करते समय भद्रमघ के शासनकाल का कोसम अभिलेख प्राप्त हुआ था (एपि० इं०, XXIV, भाग VI, अप्रैल, 1938)। पतञ्जलि ने अपने महाभाष्य (2.1.1, पृ०

32; 2.2.1, पृ० 124) में इस नगर का उल्लेख किया है। पौराणिक परंपरा के अनुसार वत्सदेश के राजवंश की उत्पत्ति पुरु से मानी जाती थी जिससे राजा उदयन (पालि, उदेन) संबंधित था और एक समय इसकी राजधानी कुरु-देश में हस्तिनापुर थी। उत्तर से साकेत एवं सावत्थी को, दक्षिण में गोदावरी तट पर स्थित पतित्ठान या पैठन से मिलाने वाले बड़े व्यापारिक मार्ग पर यात्रा करने वाले यात्रियों के लिए कौशाम्बी एक महत्त्वपूर्ण विश्रामस्थल था, (बरुआ ऐंड सिंहा, भरहुत इंस्क्रिप्शंस, पृ० 12)।

कनिंघम ने कोसम्बी को इलाहाबाद से लगभग 30 मील दूर दक्षिण-पश्चिम में यमुना-तट पर स्थित कोसम से समीकृत किया है। सातवीं शती ई० में युवान-च्वाङ् यहाँ पर आया था। उसके अनुसार यह देश 6,000 ली तथा इसकी राजधानी 30 ली विस्तृत थी। यह गरम जलवायु वाला एक उपजाऊ देश था; यहाँ पर देशी चावल एवं गन्ना बहुत पैदा होता था। यहाँ के निवासी उद्यमी, कलाप्रिय एवं पुण्यशील थे। यहाँ पर दस से अधिक बौद्ध विहार थे जो पूर्णतः जीर्ण हो चुके थे तथा यहाँ के भिक्षु हीनयान संप्रदाय के थे। यहाँ पर पचास से अधिक देवमंदिर तथा असंख्य अबौद्ध थे।[1] 1093 संवत् (1036 ई०) में उत्कीर्ण कड़ा के किले में प्रवेश-द्वार पर लिखित-अभिलेख में, कन्नौज के अंतिम प्रतीहार-नरेश महाराजाधिराज यशपाल द्वारा कौशाम्बी मंडल में स्थित पयलास ग्राम (आधुनिक प्रास) के दान का उल्लेख है। इसे उसने अपने प्रथागत उत्पादन शुल्क, अधिशुल्क तथा करों सहित, पभोसा निवासी माथुर-विकट को, उसके वंशजों के समय में भी स्थायी रूप से चलते रहने के आश्वासन के साथ दिया था। समुद्रगुप्त के मरणोत्तर इलाहाबाद स्तंभ-लेख में कौशाम्बी का उल्लेख प्राप्त होता है (का० इं० इं०, जिल्द, III)। यह नगर जिन के उत्पन्न होने से प्रतिष्ठित हुआ था। यहाँ पर पद्मप्रभु का मंदिर है, जिसमें चंदनवाला की प्रतिमा देखी जा सकती है। महावीर के सम्मान में यहाँ पर चन्दनवाला ने लगभग छ मास तक उपवास किया था। ईंट निर्मित राजा प्रद्योत का किला अब भी यहाँ पर स्थित है[3] विस्तृत विवरण के लिए देखिये, बि० च० लाहा, ट्राइब्स इन ऐंश्येंट इंडिया, पृ० 136 और आगे; बि० च० लाहा, कौशाम्बी इन ऐंश्येंट लिटरेचर, मे० आ० सर्वे आ० इं०, संख्या

---

[1] वार्टर्स, ऑन युवान च्वाङ्, I, 365-66.

[2] बि० च० लाहा, सम जैन कैनॉनिकल सूत्राज, पृ० 172-173.

[3] इस समय यहाँ पर इस प्रकार का कोई दुर्ग नहीं है। लेखक को यह भ्रांति कैसे हुयी, अस्पष्ट है।—अनूदक

60; महावस्तु, जिल्द, II, पृ० 2; बोधिसत्वावदानकल्पलता, 35 वाँ पल्लव; नार्दर्न बुद्धिस्ट लिटरेचर, रा० ला० मित्र, पृ० 269; सौन्दरनन्दकाव्य. प्रथम सर्ग, बि० च० लाहा, ज्यॉग्रेफिकल एसेज़, 26-27; बि० च० लाहा, ज्यॉग्रेफी ऑव अर्ली बुद्धिज्म, पृ० 16-17.

कोसम इनाम तथा कोसम खिराज—ये युगल गाँव यमुना-तट पर मंझनपुर से कोई 12 मील दूर दक्षिण में तथा सरायआकिल से नौ मील दूर पश्चिम में स्थित है। कोसम इनाम किले के पश्चिम में तथा कोसम ख़िराज इसके पूर्व में स्थित है।[1]

कोसिक—यह पर्वत हिमालय के निकट स्थित प्रतीत होता है।[2]

कोसिकी—यह गंगा की एक शाखा है।[3] इसे कुशी से समीकृत किया गया है।[4]

कृपाणग्राम—ललितविस्तर में इसे कहीं कपिलवस्तु के समीप स्थित बतलाया गया है। कुछ विद्वानों ने इसे उस स्थान से समीकृत किया है जहाँ पर गौतम ने अपना राज्य-परित्याग किया तथा अपनी जटाएँ काटी थीं।[5]

कृष्णगिरि—इसे कराकोरम या काला पहाड़ कहते हैं।[6] पश्चिम में यह पर्वत हिन्दूकुश के क्रम में ही फैला हुआ है। आधुनिक भूगोलशास्त्रियों के अनुसार यह पहले ही बना था और इस कारण मुख्य हिमालय से पुराना है। यह हर्सीनियन युग का है तथा इसके बनने के पश्चात् इसका अत्यधिक स्तर-भ्रंश हुआ है।

क्रुमु—कुभा या काबुल के आगे यह [illegible] है। इसे आधुनिक कुरम से समीकृत किया गया है, जो इशखेद (Ishakhed) के दक्षिण में सिन्धु से मिलती है। यह सुलेमान पर्वतमाला को बेधती है।[7]

कुभा—सिंधु की पश्चिमी सहायक नदियों में यह वैदिक नदी सर्वाधिक महत्वपूर्ण है।[8] कुछ युनानी एवं लैटिन इतिहासकारों के मतानुसार यह मुख्य

---

[1] नेविल, इलाहाबाद डिस्ट्रिक्ट गजेटियर, पृ० 262-263.

[2] अपदान, पृ० 381.

[3] जातक, पृ० V, 2.

[4] तु० कौशिकी, देखिए, पीछे।

[5] बि० च० लाहा, ज्यॉग्रेफिकल, एसेज, 41; रा० ला० मित्र, नार्दर्न बुद्धिस्ट लिटरेचर, पृ० 135.

[6] वायु पुराण, अध्याय, 36.

[7] लाहा, रिवर्स ऑव इंडिया, पृ० 15.

[8] ऋग्वेद, X., 75, 6.

भारत की पश्चिमी सीमा थी। यह आधुनिक काबुल नदी, एरियन की कोफेस (Kophes) तथा प्लिनी की कोफेन (Kophen) के अतिरिक्त और कुछ नहीं है। स्पष्टतः यह पुराणों में वर्णित कुहु नदी ही है और इसे टॉलमी की कोआ से समीकृत किया जा सकता है, जिसे इमाओस (Imaos) या हिमवत से निःसृत बतलाया गया है।[1] कुभा नदी सुलेमान पर्वतमाला में एक घाटी का निर्माण करती है। अटक (संस्कृत, हाटक) के कुछ पहले यह सिंधु में मिलती है तथा प्रांग में इसमें स्वात (एरियन की साओस्तोस, Saostos), संस्कृत सुवास्तु तथा गौरी (एरियन की गैरोइया, Garroia) नामक इसकी दो सहायक नदियों का संयुक्त प्रवाह मिलता है, जिसे हम स्वात की एक उपनदी, आधुनिक पंजकोरी से समीकृत करते हैं। वायु एवं कूर्म पुराणों में इस नदी का उल्लेख प्राप्त होता है (XLV. 95; XLVII. 27)।

कुहु—यह कुभा ही है।

कुल्लु—यह महाकाव्यों में वर्णित कुलूत या कौलूत है। व्यास नदी की ऊपरी घाटी में स्थित कुल्ली जिला कियु-लु-तो के पूर्णतः समरूप है, जिसे युवान-च्वाङ् ने जालंधर से उत्तर-पूर्व में 117 मील या 700 ली दूर पर स्थित बतलाया है (कनिंघम, एं० ज्यॉ० इं०, पृ० 162 और आगे)। यहाँ पर अशोक ने एक स्तूप बनवाया था तथा युवान-च्वाङ् के अनुसार यहाँ पर बीस विहार थे। वहाँ पर अब भी बौद्धधर्म के चिन्ह दृष्टिगोचर होते हैं। विस्तृत विवरण के लिए, आर्क० सर्वे० ऑव० इं० की वार्षिक रिपोर्ट, 1907-8, 261 और आगे देखिए।

कुरुजांगल—संभवतः यह कुरु प्रदेश का जंगली क्षेत्र था जो सरस्वती-तट पर काम्यक वन से यमुना के निकट खाण्डव वन तक फैला हुआ था (तु० महाभारत, III, 5.3)। यह कुरुदेश का पूर्वी भाग था तथा इसमें गंगा एवं उत्तर पंचाल के प्रदेश संमिलित थे (कुरुक्षेत्र के अंतर्गत देखिये)।

कुरुक्षेत्र—महाभारत के अनुसार यह एक पवित्र नगर माना जाता था। (83, 1-8; 203-208)। यहाँ की धूलि से पापियों के पाप मिट जाते थे। जो व्यक्ति सरस्वती के दक्षिण में एवं दृषद्वती के उत्तर में, कुरुक्षेत्र में रहते हैं वे मानों स्वर्ग में रहते हों। पाणिनि ने अपनी अष्टाध्यायी (4. 1. 172, 176); 4.2.130) में इसका उल्लेख किया है। योगिनीतंत्र (2.1; 2.7, 8) में इसका वर्णन किया गया है। सौर पुराण (67. 12) में भी इसका वर्णन एक तीर्थ-नगर के रूप में हुआ है (तु० कूर्म पुराण, पूर्वभाग, 30, 45-48; तु०, पद्म

[1] **टॉलमी, VII. 1. 26.**

पुराण, उत्तरखण्ड, श्लोक, 35-38) प्राचीन कुरुदेश में कुरुक्षेत्र या थानेश्वर संमिलित थे। इस क्षेत्र में सोनपत, आमिन, करनाल और पनीपत संमिलित थे और यह उत्तर में सरस्वती एवं दक्षिण में दृषद्वती नदियों के मध्य स्थित था। तैत्तिरीय आरण्यक (VI. 1. 1) के अनुसार कुरुक्षेत्र के दक्षिण में खाण्डव, उत्तर में तूर्घ्न तथा पश्चिम में परीण: (एरियन का परेनोस, Parenos) स्थित थे। महाभारत कुरुजनों के साथ ही कुरुक्षेत्र की पृष्ठभूमि में विकसित हुआ।[1] बुद्ध-युग के सोलह महाजनपदों में से यह एक सुविख्यात जनपद था। कुरुओं का देश तीन भागों में विभक्त प्रतीत होता है; कुरुक्षेत्र, कुरु-देश एवं कुरु-जांगल (महाभारत, आदिपर्व, IX. 4337-40)। कुरुओं के कर्षित क्षेत्र, कुरुक्षेत्र में यमुना के पश्चिम का संपूर्ण प्रदेश तथा सरस्वती एवं दृषद्वती के मध्य की पुण्यभूमि संमिलित थी, (महाभारत, वनपर्व, LXXXIII, 5071-78, 7073-76; रामायण, अयोध्याकाण्ड, LXX, 12)। कुरुओं का अनुर्वर प्रदेश कुरुजांगल उनके राज्य का पूर्वी भाग था और इसमें गंगा एवं उत्तरी पंचाल के मध्यवर्ती प्रदेश संमिलित प्रतीत होते हैं (रामायण, अयोध्याकाण्ड, LXXII; महाभारत, सभापर्व, XIX. 793-94)। कुरुदेश का यह जंगली क्षेत्र काम्यक वन तक फैला हुआ था। गंगा-यमुना के मध्यवर्ती क्षेत्र को विशेषत: एक पुण्य-क्षेत्र माना गया था, क्योंकि इसकी सीमा में पुण्यसलिल्लात दृषद्वती, सरस्वती एवं आपया नामक नदियाँ बहती थीं।[2] भागवत पुराण में इसका उल्लेख प्राप्त होता है (I, 10,34; III, 3.12; IX 14, 33; तु० ब्रह्माण्ड पुराण, II, 18, 50)। भगवद्‌गीता के अनुसार इसे धर्मक्षेत्र कहा जाता था। स्कंद पुराण में भी (अध्याय, I, 19-23)[3] इसे एक पुनीत स्थल बतलाया गया है। कुरुदेश या दिल्ली प्रदेश कौरव-पाण्डवों का युद्ध-स्थल था जिसमें भारत के समस्त राज्य एक या दूसरी ओर थे।[4] महान् धर्मशास्त्रकार मनु ने कुरु तथा अन्य संबंधित जनों के देश को

---

[1] कुरुक्षेत्रके वर्णन के लिए द्रष्टव्य, महाभारत, III, 83-4; 9.15; 25, 40; 52, 200; 204-8.

[2] ऐतरेय ब्राह्मण, VII, 30; शतपथ ब्राह्मण, IV. 1.15.13; XI. 5.1.4; XIV. 1.1.2; मैत्रायणी संहिता; II, 1.4; IV. 5-9; जैमिनीय ब्राह्मण III, 126; सांख्यायन श्रौतसूत्र, XV. 16. 11.

[3] चितंग की एक शाखा, अपगा या ओघवती।

[4] कौरवों के विरुद्ध पाण्डवों के महायुद्ध में विभिन्न राज्यों एवं कबीलों के भागके विवरण के लिए देखिये, ज० रा० ए० सो०, 1908, पृ० 309 और आगे।

ब्रह्मर्षियों का पुनीत देश कहा है जो ब्रह्मावर्त के ठीक बाद रखा जाता था[1] (मनुसंहिता,II, 17-19)। रैप्सन के मतानुसार कुरुदेश पूर्व में कुरुक्षेत्र की सीमा से भी आगे फैला हुआ था। कुरु-जन निश्चय ही दोआब के उत्तरी भाग या गंगा-यमुना के मध्यवर्ती क्षेत्र में रहते थे जिनके पड़ोसी पूर्व में उत्तर-पंचाल जन एवं दक्षिण में, दक्षिण पंचाल जन थे जो शेष दोआब में प्रयाग में (इलाहाबाद) गंगा-यमुना के संगम के समीप वत्सभूमि तक रहते थे (एंश्येंट इंडिया, पृ० 165)।

युवान-च्वाङ् के काल में थानेश्वर वैश्य (बैस) वंश की राजधानी थी जिसने दक्षिण पंजाब, हिंदुस्तान तथा पूर्वी राजपूताना (राजस्थान) के कुछ भागों पर राज्य किया था। 648 ई० में एक चीनी राजदूत थानेश्वर-नरेश हर्षवर्द्धन के पास भेजा गया था। यहाँ आने पर उसने देखा कि सेनापति अर्जुन ने उसके राज्य का अपहरण कर लिया था और तब वह राजवंश नष्ट हो गया था। थानेश्वर एक महान् पुण्यक्षेत्र बना रहा, किंतु 1014 ई० में इसे महमूद गजनी ने ध्वस्त किया और यद्यपि 1043 ई० में दिल्ली के एक हिंदू राजा ने इसे पुनः जीता परंतु शताब्दियों तक यह वीरान पड़ा रहा।

कुशपुर (कुशभवनपुर)—इसका नामकरण राम के पुत्र कुश के नाम पर हुआ बतलाया जाता है। यह स्थान तीन ओर से गुम्ती (गोमती) नदी से घिरा हुआ था (कनिंघम, एं० ज्या० इं०, पृ० 459)।

कुशावती—यह कुशीनारा का एक प्राचीन नाम है जहाँ पर बुद्ध को महापरिनिब्बान प्राप्त हुआ था (जातक, I, 292; V,278, 285, 293, 294, 297)। यह गोरखपुर से 37 मील दूर पूर्व में, छोटी गण्डक के तट पर आधुनिक कसया के निकट तथा बेतिया के उत्तर पूर्व में स्थित था (कनिंघम, एं० ज्यॉ० इं०, 713, 714; ज० रा० ए० सो०, 1913, 152)। विस्तृत विवरण के लिए कुशीनारा के अंतर्गत देखिए।

कुशिक—यह गाधिपुर और कान्यकुब्ज (आधुनिक कन्नौज) ही है और इसका वर्णन गोविंदचंद्र के कमौली दानपत्र (वि० सं० 1184) में हुआ है (एपि० इं० XXVI. जिल्द, II, 68 और आगे)।

कुशीनारा—कुशीनारा मल्लों का एक नगर था (दीघ, II, 165)। बुद्ध के काल में यह राजगृह, वैशाली या श्रावस्ती की तरह एक प्रथम कोटि का नगर नहीं था। यह बुद्ध के प्रति आनंद के इस कथन से व्यक्त होता है, "तथागत को जंगल के बीच इस छोटे कस्बे में, इस उपनगर में नहीं मरना चाहिए।" चीनी

---

[1] **ब्रह्मावर्त्ततीर्थ—महाभारत,** 83.53.

इसे कियु-शि-न-की-लो कहते हैं। यहाँ पर कुछ लोग ही रहते थे और यहाँ के उपवन निर्जन एवं अनुर्वर थे। इसके पुरद्वार के पूर्वोत्तरी कोण में अशोक द्वारा बनवाया हुआ एक स्तूप था। यहाँ के ग्राम निर्जन थे।

यहाँ पर चुण्ड का पुराना घर स्थित था जिसने बुद्ध को अपने घर पर आमंत्रित किया था (बील, बुद्धिस्ट रिकार्डस ऑव द वेस्टर्न वर्ल्ड, II, 31-32)। कुशीनारा से पावा की दूरी अधिक नहीं थी। यह इस तथ्य से भी स्पष्ट होता है कि बुद्ध अपनी अंतिम बीमारी में जल्दी ही कुशीनारा से पावा गये थे।*

कनिंघम के मतानुसार कुशीनारा को गोरखपुर जिले के पूर्व में स्थित कसया से समीकृत किया जा सकता है (एं० ज्यॉ० इं०, पृ० 493)। इस मत की पुष्टि इस तथ्य से होती है कि इस गाँव के निकट निर्वाण-मंदिर के पीछे स्थित स्तूप में एक ताम्रपत्र मिला है जिस पर 'परिनिर्वाणचैत्य ताम्रपट्ट' उत्कीर्ण है। यह प्रत्यभिज्ञान ठीक प्रतीत होता है। विभिन्न विद्वानों के विभिन्न मत हैं। विंसेंट स्मिथ कुशीनारा को नेपाल में पहाड़ियों की पहली शृंखला के पार स्थित करने को वरीयता देते हैं (अर्ली हिस्ट्री ऑव इंडिया, चतुर्थ संस्करण, पृ० 167, पा० टि० 5; ज० रा० ए० सो० 1913, 152)। रिज डैविड्स ने यह मत व्यक्त किया है कि यदि हम चीनी तीर्थयात्रियों के विवरण पर विश्वास करें तब कुशीनारा के मल्लों का प्रदेश, शाक्य प्रदेश के पूर्व में एवं वज्जिगण के उत्तर में पहाड़ी ढाल पर स्थित था। कुछ अन्य विद्वान् उनका प्रदेश शाक्यों के दक्षिण में एवं वज्जिगण के पूर्व में स्थित बतलाते हैं (बुद्धिस्ट इंडिया, पृ० 26)।

दिव्यावदान के अध्ययन (389-94) से यह ज्ञात होता है कि अशोक इस नगर में आया था, जहाँ पर बुद्ध ने परिनिर्वाण प्राप्त किया था। इस विवरण की पुष्टि अशोक के शिलालेखों (आठवें शिलालेख) से होती है। कुशीनारा से राजगृह जाते समय बुद्ध को ककुत्था नदी पार करनी पड़ी थी। यह बरही नामक एक छोटी सरिता है जो कसया से आठ मील आगे छोटी गंडक में मिलती है। कुशीनारा के निकट हिरञवती (हिरण्यवती) या छोटी गण्डक[1], जिसके तट पर कुशीनारा के मल्लों का शालवन स्थित था, बड़ी गंडक से लगभग आठ मील पश्चिम में गोरखपुर जिले की ओर मुड़ती है और घाघरा (सरयू) में मिलती है। जबकि मल्लों

***लेखक ने बुद्ध की अंतिम यात्रा का विवरण ठीक नहीं दिया है। बुद्धपावा। में चुण्ड कुमारपुत्त के यहाँ सूकर-माद्दव खाने के बाद पावा से कुशीनारा गये न कि कुशीनगर से पावा। द्रष्टव्य दीघ निकाय का महापरिनिब्बान सुत्तांत।**

[1] दीघ निकाय, II, 137.

का संविधान राजतंत्रात्मक था, उस समय कुशावती मल्लों की राजधानी के रूप में विख्यात थी (जातक, V, पृ० 278 और आगे)। यह वैभवपूर्ण, समृद्ध एवं जन-संकुल थी तथा यहाँ भिक्षा सुगमता से प्राप्त होती थी (दीघ II, 170)। कालांतर में बुद्ध के काल में, जब यहाँ राजतंत्र के स्थान पर गणतंत्रात्मक शासन-व्यवस्था हो गयी, उस समय इस नगर का नाम कुशीनारा रख दिया गया। बुद्ध ने स्वयं बतलाया है कि कुशीनारा प्राचीन कुशावती थी। यह राजधानी थी जो पूर्व से पश्चिम में 12 योजन लंबी एवं उत्तर से दक्षिण में 7 योजन चौड़ी थी (अयम् कुशीनारा कुशावती नाम राजधानी अहोऽसि—दीघ, II, 146-47,)। बुद्ध ने कुशावती के प्राचीन वैभव का वर्णन किया है जिसमें सात प्राकार, चार तोरण और खजूर-वृक्षों के सात निकुंज थे (दीघ० 170-171)। दिव्यावदान के अनुसार (पृ० 227) यह महासुदर्शन नामक नगर था।

कुशीनारा के मल्लों का अपना संथागार था जहाँ पर राजनीतिक, या धार्मिक सभी विषयों पर विवाद होते थे। दीघनिकाय के महापरिनिब्बान सुत्तांत में कुशीनारा के मल्लों में पुरिप नामक एक अधिकारी वर्ग का उल्लेख प्राप्त होता है, जो रिज डैविड्स के मतानुसार अधीनस्थ कर्मचारियों का एक वर्ग था (बुद्धिस्ट इंडिया, पृ० 21)। कुशीनारा के पूर्व में मल्लों का मकुटबंधन नामक एक मंदिर था जहाँ वुद्ध का शव अंतिम संस्कार के लिए लाया गया था। जब बुद्ध को उनकी अंतिम वेला आसन्न प्रतीत हुई तब उन्होंने कुशीनारा के मल्लों के पास आनंद से एक संदेश भेजा जो उस समय अपने संथागार में जन-कार्यों पर विचार करने के लिए एकत्र हुए थे। समाचार प्राप्त करने के पश्चात् वे तुरंत शालवन की ओर गये जहाँ पर बुद्ध उस समय थे। बुद्ध के निधन के पश्चात् उनके उपयुक्त उनके पार्थिव अवशेषों का सम्मान करने के उपायों पर विचार करने के लिए वे अपने संथागार में एकत्र हुए थे। उन्होंने तथागत की अस्थियों को किसी चक्रवर्ती राजा के अवशेषों की भाँति ही माना। उन्होंने अपने भाग में आये हुए वुद्ध के अवशेषों पर तब एक स्तूप का निर्माण करवाया तथा एक भोज दिया।

लक्ष्मन झूला—हृषीकेश के निकट स्थित यह रमणीक स्थल अपने पर्वतीय दृश्य के लिए प्रसिद्ध है। केदारनाथ एवं बद्रीनाथ के लिए प्रस्थान करने के पूर्व तीर्थयात्री यहाँ पर रुकते हैं। इस स्थान का नामकरण झूलते हुए पुल के आधार पर पड़ा है (लाहा, होली प्लेसेज़ ऑव इंडिया, पृ० 21)।

लदख—बृहत्तर हिमालय के समानांतर लद्दख एक उत्तुंग पर्वत श्रेणी है और यह मानसरोवर के पूर्व में स्थित है। कोई 50 मील चौड़ी एक घाटी इसे हिमालय पर्वतमाला से पृथक् करती है (लाहा, माउंटेंस ऑव इंडिया, पृ० 7)।

लार—उत्तरप्रदेश के गोरखपुर जिले में स्थित यह एक गाँव है जहाँ पर कन्नौज-नरेश गोविंदचंद्र के ताम्रपत्र प्राप्त हुए थे (एपि० इं०, VII, 98 और आगे)।

लोहावर—ऐसा कहा जाता है कि इस नगर की स्थापना रामपुत्र लव ने की थी। टालेमी ने इसे लवोकला (Labokla) कहा है (कनिंघम, एं० ज्यॉ० इं०, पृ० 226-227)।

लुम्बिनी ग्राम—अशोक के रुम्मिनिदेई-अभिलेख में लुमिनिगाम का वर्णन प्राप्त होता है जो अब रुम्मिनिदेई या रूपदेई नामक छोटे से गाँव के नाम से विख्यात है जिसका नाम रुम्मिनिदेई के मंदिर के आधार पर पड़ा है। रुम्मिनिदेई कपिल-वस्तु से केवल दस मील दूर पूर्व में, भगवानपुर से दो मील उत्तर में तथा पडेरिया से कोई एक मील दूर उत्तर में स्थित है। चीनी यात्री फा-ह्यान एवं युवान-च्वाङ् लुम्बिनी वन आये थे। फा-ह्यान के अनुसार यह कपिलवस्तु से पचास ली (9 या 10 मील) दूर, पूर्व में स्थित था। युवान-च्वाङ् ने यहाँ पर अशोक द्वारा स्थापित एक स्तंभ का उल्लेख किया है जिसके सिर पर घोड़े की एक मूर्ति थी। बाद में यह स्तंभ किसी ईर्ष्यालु व्याल द्वारा वज्रपात किये जाने से बीच में खंडित हो कर धरती पर पड़ा रहा। पी० सी० मुकर्जी ने अपने 'ऐंटीक्वीटीज इन द तराई' नामक ग्रन्थ में यह बतलाया है कि अशोक के रुम्मिनिदेई स्तंभ के विद्यमान अवशेष चीनी तीर्थ-यात्री के विवरण से साम्य रखते हैं। लुम्बिनी वन को उस स्थान से जहाँ रुम्मिनिदेई अभिलेख प्राप्त हुआ था, समीकृत करने के लिए और साक्ष्य हैं। युवान-च्वाङ् ने बताया है कि उक्त अशोक स्तंभ के समीप दक्षिण-पूर्व की ओर बहने वाली एक छोटी सरिता थी, जिसे वहाँ के लोग तिलौर (तेल की नदी) कहते थे।' उक्त अनुश्रुति वहाँ अब भी प्रचलित है और इस नदी को अब तिलार-नदी कहते हैं, जो तेलीर नदी या तेली की नदी का विकृत स्वरूप है। रुम्मिनिदेई में अपेक्षाकृत बाद का बना हुआ एक मंदिर भी है जिसमें बुद्ध के जन्म को प्रस्तुत करते हुए एक चित्रित शिला-पट्ट है, जो उक्त स्थान के लुम्बिनीवन होने के विषय में एक और प्रमाण है। अशोक के रुम्मिनिदेई स्तंभ लेख में यह बताया गया है कि अपने राज्याभिषेक के बीसवें वर्ष में राजा अशोक स्वयं वहाँ गया था और उसने इस स्थान की पूजा की थी, क्योंकि बुद्ध यहाँ पैदा हुए थे। उसने लुम्बिनी ग्राम को करों से मुक्त कर दिया था और उसे केवल 1।8 भाग देना पड़ता था (का० इं० इं०, 264-265)।

निग्लीव-स्तंभ लेख में (जो उत्तर-पूर्व रेलवे के उसका बाजार स्टेशन के उत्तर-पश्चिम में ।38 मील दूर स्थित है) में यह कहा गया है कि यह स्तंभ लेख कोनागमन स्तूप के समीप बनवाया गया था परंतु अब यह उस स्थान पर नहीं है। बुद्ध-

चरितकाव्य (I, श्लोक 23; XVII. श्लोक, 27) में लुम्बिनीवन को कपिलवस्तु में स्थित बतलाया गया है, जो बुद्ध का जन्म-स्थान था। लुम्बिनीवन की स्थिति के विषय में भिन्न-भिन्न मतों के लिए देखिए, बि० च० लाहा, ज्यॉग्रेफी ऑव अर्ली बुद्धिज्म, पृ० 29-30; लाहा, ज्यॉग्रेफिकल एसेज़, पृ० 185 और आगे।

मदावर—पश्चिमी रुहेलखंड में बिजनौर के निकट यह एक बड़ा कस्बा है। कुछ विद्वानों ने इसे मदीपुर या मो-ती-पु-लो से समीकृत किया है। युवान-च्वाङ् के अनुसार यह 1,000 मील विस्तृत था। विवियेन डी सेंट मार्टिन के अनुसार यहाँ के निवासी मेगस्थनीज़ द्वारा वर्णित मथाए (Mathae) थे (कनिंघम, एं० ज्यॉ० इं०, पृ० 399 और आगे)।

मधुबन—यह उत्तरप्रदेश के वाराणसी मंडल में आजमगढ़ जिले के नाथूपुर परगने में स्थित है जहाँ पर हर्ष का एक अभिलेख प्राप्त हुआ था (एपि० इं०, VII, 155 और आगे)।

मधुरवन—हुविष्क के मथुरा बौद्ध प्रतिमा-अभिलेख में मधुरवन नाम का उल्लेख है। कुछ विद्वानों ने इसे मधुवन या मधुरा (वर्तमान मथुरा) से समीकृत किया है जिसका वर्णन ल्युडर्स की तालिका (संख्या, 288, 29I) में हुआ है। ल्युडर्स (संख्या, 38) में मथुरवनक नामक मथुरा के एक निकटवर्ती क्षेत्र का उल्लेख प्राप्त होता है।

मद्रदेश—इलाहाबाद स्तंभ लेख में वर्णित मद्र-देश स्थूल रूप से आधुनिक स्यालकोट और रावी एवं चेनाब नदियों के मध्य स्थित उसके समीपवर्ती देशों को व्यंजित करता है। पाणिनि ने अपनी अष्टाध्यायी (4, 1, 176; 4, 2, 131; 4, 2, 108) में मद्र का उल्लेख किया है। पतंजलि ने भी अपने महाभाष्य (1, 1, 8, पृ० 345; 1, 3, 2, पृ० 619; 2, 1, 2, पृ० 40; 4, 2, 108) में इसका वर्णन किया है। इसकी राजधानी शाकल[1] थी, जिसे स्यालकोट से समीकृत किया जाता है। शाकल (पालि में सागल[2]) एक बड़ा व्यापारिक केन्द्र था। यह एक पहाड़ी एवं सुसिंचित रमणीक प्रदेश में स्थित था। यहाँ पर विविध प्रकार की सैकड़ों धर्मशालाएँ थीं। युवान-च्वाङ् के मतानुसार प्राचीन शाकल (शे-की-लो, (She-Ki-lo) नगर कोई 20 ली विस्तृत था। यहाँ पर एक बिहार था जिसमें हीनयान संप्रदाय के लगभग 100 भिक्षु रहा करते थे और इस विहार के पश्चिमोत्तर में कोई 200 फीट ऊँचा एक स्तूप था, जिसे अशोक ने बनवाया

---

[1] महाभारत, II, 1196; VIII. 2033.

[2] मिलिन्दपञ्ह, ट्रेंक्नर संस्करण, पृ० 1-2.

था (बील, रिकार्डस ऑव द वेस्टर्न वर्ल्ड, I , पृ० 166 और आगे)। इस देश के निवासी वैदिकयुगीन एक प्राचीन क्षत्रिय जाति के थे। मद्रगण योद्धाओं का एक निगम था और उनका स्तर राजाओं जैसा था। 326 ई० पू० में शाकल पर सिकंदर महान् का आधिपत्य हो गया। 78 ई० के लगभग, एक सशक्त यूनानी राजा मेनेन्डर (पालि, मिलिन्द) ने सागल या शाकल पर शासन किया था। मिलिंदपञ्हो के अनुसार इसने बौद्ध धर्म ग्रहण कर लिया था। ऐसा प्रतीत होता है कि मेनेन्डर के शासनकाल के पूर्व ही, शाकल में बौद्ध धर्म का प्रभुत्व हो गया था (द्रष्टव्य, श्रीमती रिज डैविड्स, साम्स ऑव द सिस्टर्स, पृ० 48; साम्स ऑव द ब्रेदेरेन, पृ० 359)। चौथी शताब्दी ई० में मद्रगण समुद्रगुप्त के करद थे। अधिक विवरण के लिए द्रष्टव्य बि० च० लाहा, ट्राइब्स इन ऐंश्येंट इंडिया, अध्याय VII)।

महावन—यह कपिलवस्तु में ही था (संयुक्त, I, पृ० 26)। बुद्ध एक बार हिमालय तक फैले हुए महावन के कूटागार-संथागार में रुके थे (विनय टेक्स्ट्स, III, 321 और आगे)।

मही—पालि साहित्य में वर्णित पाँच बड़ी नदियों में से यह एक है (अंगुत्तर IV ˙101; मिलिंदपञ्ह, पृ० 114; सुत्तनिपात, पृ० 3)। यह गंडक की सहायक नदी है।

महोबा—उत्तरप्रदेश के हमीरपुर जिले में स्थित यह प्राचीन महोत्सवपुर है। कनिंघम ने 1843 ई० में यहाँ से वि० सं० 1240 के परमर्दिन का एक शिलालेख प्राप्त किया था। इसमें परमर्दिन की प्रशस्ति की गयी है, तथा अंग, वंग और कलिंग में उसके युद्धों का वर्णन किया गया है। इस प्रशस्ति की रचना वास्तव्य वंश के जयपाल ने की थी। बाद में इस अभिलेख को वा-वि० मिराशी ने संपादित किया है (भारत कौमुदी, भाग I, पृ० 433 और आगे)।

मैनाकगिरि—योगिनीतंत्र (2, 4; पृ० 128-129) में इस पहाड़ी का उल्लेख प्राप्त होता है। बाण की कादम्बरी (पृ० 86) में भी इसका वर्णन किया गया है। गंगा से व्यास नदी तक फैली हुई यह शिवालिक पर्वतमाला ही है। प्रमुख सिवालिक पर्वतश्रेणी ब्यास से गंगा तक, कोई 200 मील तक फैली हुई है और इसे प्राचीन भूगोलवेत्ता मैनाकपर्वत कहते थे। उत्तरप्रदेश में शिवालिक पहाड़ियों को चुरिया और डुँडवा पर्वतमाला कहते हैं और ये गंगा एवं यमुना के मध्यवर्ती क्षेत्र में स्थित हैं। ये पहाड़ियाँ सहसा मैदानों से उठती हैं और उत्तर की ओर देहरादून की घाटी में ढलती हैं (लाहा, माउंटेंस ऑव इंडिया, पृ० 3, 4,7)।

मनसाकट—कोशल में स्थित इस ब्राह्मण गाँव में पाँच सौ भिक्षुओं के साथ

बुद्ध गये थे (दीघ, I, पृ० 235)। इसके उत्तर में अचिरावती नदी बहती थी। इस नदी के तट पर एक आम्रवन था।

मंदाकिनी—योगिनीतंत्र में इस नदी का एक बार उल्लेख किया गया है (1.15, पृ० 87-89)। यह पश्चिमी काली (काली गंगा) ही है जो गढ़वाल में स्थित केदार पर्वत से निकलती है। यह अलकनंदा की एक सहायक नदी है (अंगुत्तरनिकाय, IV, 101)। कनिंघम ने इसे चित्रकूट पर्वत के पार्श्व से प्रवाहित होनेवाली बुंदेलखंड की पैसुन्दी नदी की सहायक—मंदाकिन से समीकृत किया है (कनिंघम, आर्क० सं० इं०, XXI, 11)।

मणिकर्ण—यह एक तीर्थस्थल है जिसे मणिकरन भी कहा जाता है और जो कुलू घाटी में ब्यास नदी की सहायक नदी पार्वती के तट पर स्थित है (ज० ए० सो० बं०, 1902, पृ० 36)।

मणिपर्वत—यह हिमालय क्षेत्र में स्थित है (जातक, II, पृ० 92)।

मनकुवर—कुमारगुप्त के मनकुवर पाषाण-प्रतिमा अभिलेख में वर्णित यह छोटा गाँव, इलाहाबाद जिले की करछना तहसील के अरैल परगने में स्थित अरैल से दक्षिण-पश्चिम में कोई नौ मील दूर पर यमुना के दाहिने तट पर स्थित है (का० इं० इं०, जिल्द, III)।

मशकावती—यूनानी लेखकों के अनुसार यह 'अस्सकेनोई (Assakenoi) की राजधानी थी। यह अस्सकेनोस नामक राजा की राजधानी थी। इसे सिकंदर की सेना ने ध्वस्त कर दिया था। जब इस नगर ने आत्मसमर्पण कर दिया तब भृतिभोगी सेना की एक विशाल टुकड़ी सिकंदर की सेना में सम्मिलित होने के लिए सहमत हो गयी। उसकी सहायता न करने के इच्छुक भृतिभोगी सैनिकों ने गुप्त रूप से भाग निकलने की योजना बनायी। इसके कारण मकदूनिया के निवासियों ने उनमें से किसी को जीवित नहीं छोड़ा (कैं० हि० इं०, भाग, I, पृ० 353; लाहा, इंडोलॉजिकल स्टडीज, I, पृ०, 2, 3)।

मथुरा—मथुरा से प्राप्त एक बौद्ध वेदिका स्तंभ लेख में धनभूति (?) और वात्सी के पुत्र वाधपाल (?) धनभूति का उल्लेख सर्वबुद्धों की पूजा के लिए रत्न गृह की वेदिका एवं तोरण के दाता के रूप में किया गया है (ल्युडर्स की तालिका, सं० 125)। तोरण-युक्त इस वेदिका का समर्पण उसने अपने माता-पिता तथा बौद्ध संप्रदाय के चारों वर्गों, भिक्षु, भिक्षुणी, उपासक एवं उपासिकों के साथ किया था। राजा धनभूति के पुत्र राजकुमार वाधपाल का नाम भरहुत की एक वेदिका दाता के रूप में उल्लिखित है (वही, संख्या 869)। वाधपाल के पिता आगरजु (अंगारद्युत) तथा वात्सी के पुत्र एवं राजा विश्वदेव के प्रपौत्र राजा धनभूति का

नाम प्रधानतः भरहुत-स्तूप के अलंकृत तोरणों के दाता के रूप में उल्लिखित है (वही सं० 687-88; तु० सं० 882)। भरहुत-तोरण के अभिलेखों में यह स्पष्टतया उल्लिखित है कि राजा धनभूति ने शुंगों के राज्यकाल में (सुगनं रजे) इन तोरणों का निर्माण करवाया था (बरुआ ऐंड सिन्हा, भरहुत इंस्क्रिप्शंस, पृ० 1 और आगे)। यदि भरहुत-अभिलेख में वर्णित राजा धनभूति के पुत्र, राजकुमार वाधपाल को मथुरा से प्राप्त बौद्ध-वेदी अभिलेख के धनभूति के पुत्र वाधपाल (?) धनभूति से समीकृत किया जाय जिसकी अधिक संभावना प्रतीत होती है, तब यह सोचना अपरिहार्य हो जाता है कि मथुरा उस समय शुंगों के राज्य के ही किसी निकटवर्ती प्रदेश में संमिलित था। इस अभिलेख के वर्तमान अंश से यह निष्कर्ष कि राजा की उपाधि वाधपाल (?) धनभूति के नाम के साथ भी जुड़ी हुई थी नहीं निकाला जा सकता है। वाधपाल (?) धनभूति के नाम से परिचित वाधपाल अवश्य ही कोई राजा रहा होगा, अन्यथा समर्पण में उसे उसके माता-पिता (अनुमानतः वयोवृद्ध) तथा बौद्ध संप्रदाय के सभी चारों वर्गों के विशाल अनुयायिवर्ग के साथ संबद्ध करना तर्कसंगत न होता। राजकुमार वाधपाल का भरहुत-अभिलेख अशोकयुगीन प्राकृत में लिखा गया है जब कि वाधपाल (?) धनभूति के मथुरा-अभिलेख की भाषा अशोककालीन प्राकृत से कुषाणकालीन अभिलेखों में प्रयुक्त (प्रकारात्मक) मिश्रित-संस्कृत के मध्य की संक्रमणकालीन भाषा है। इसके अक्षर भी अशोक तथा कुषाणकालीन ब्राह्मी के मध्य के हैं। दोनों अभिलेखों के बीच के समय का अंतर इतना अधिक नहीं है कि उससे उनकी भाषाओं में इतना स्पष्ट परिवर्तन लक्षित किया जा सके। इस अंतर का समाधान यह मान कर सुगमतापूर्वक किया जा सकता है कि यद्यपि भरहुत और मथुरा दो आसन्न क्षेत्रों में स्थित थे, किंतु दोनों ही थोड़े पृथक् भाषाई क्षेत्रों में पड़ते थे। इस क्षेत्र में किसी अन्य राजा या राजवंश के शासन का बिल्कुल ही उल्लेख न होने से यह मानना उचित प्रतीत होता है कि वाधपाल (?) धनभूति और उसके पूर्वज मथुरा के स्थानीय शासक थे और वहाँ पर वे कुषाण-सत्ता के उत्कर्ष के पूर्व ही राज्य करते थे।

मथुरा शूरसेन देश की राजधानी थी। इसकी स्थापना राम के भाई शत्रुघ्न ने मधुवन में यादव लवन को मार कर और जंगल को काट कर की थी (पार्जिटर, ऐंश्यंट इंडियन हिस्टॉरिकल ट्रेडिशन, पृ० 170)। यहाँ पर बुद्ध के प्रसिद्ध शिष्य महाकच्चायन, अशोक के पथप्रदर्शक उपगुप्त, वसुबन्धु के एक शिष्य गुणप्रभ,[1]

---

[1] अंगु, I, 67; वि० स्मिथ, अर्ली हिस्ट्री ऑव इंडिया, पृ० 199; बोधिसत्त्वावदान-कल्पलता, 72वाँ पल्लव; बील, रिकार्डस् ऑव द वेस्टर्न, वर्ल्ड I, पृ० 191, टिप्पणी।

ध्रुव एवं प्रसिद्ध नगरवधू वासवदत्ता रहा करती थी। पाणिनि (IV. 2 82) तथा यूनानी और चीनी तीर्थयात्री इस नगर से परिचित थे। पतंजलि ने अपने महाभाष्य में इसका वर्णन किया है (I, 1. 2, पृ० 53; 56; 1. 3. 1, पृ० 588-589; 2. 4. 1, पृ० 223; 1. 1. 8., पृ० 348)। योगिनीतंत्र (2. 2. 120) में भी इसका उल्लेख है। वैदिक साहित्य में मथुरा का उल्लेख नहीं किया गया है। यह नगर यमुना-तट पर स्थित है और उत्तरप्रदेश के आगरा मंडल में स्थित है। यह कौशाम्बी के ठीक उत्तर-पश्चिम में 217 मील दूर स्थित है। मथुरा और पाटलिपुत्र के मध्य नावों का एक पुल था। इस शहर को मधुपुरी भी कहा जाता था जिसे आधुनिक मथुरा नगर से 5 मील दक्षिण-पश्चिम में स्थित वर्तमान महोली से समीकृत किया जाता है। यूनानी लोग इस नगर के मेथोरा (Methora) और मदूरा (Madoura) (देवताओं का नगर) नामों से परिचित थे। चीनी तीर्थयात्री फा-ह्यान ने इसे मा-ताऊ-लो (Ma-t'aou-lo) (मयूरपक्षी का नगर) कहा है (ट्रावेल्स ऑव फा-ह्यान, पृ० 42)। युवान च्वांङ ने इसे मो-तू-लो (Mo-t'u-lo) कहा है (वाटर्स ऑन युवान च्वाङ्, I, 301)। एरियन ने अपनी पुस्तक इंडिका (VIII) में मेगस्थनीज़ के आधार पर इस शहर को शूरसेनों की राजधानी बताया है। टालेमी ने भी इसका वर्णन किया है (VII. 1. 50)। जैन लोग इसे सौरि-पुर या सूर्यपुर कहते थे। मथुरा एक धनी, प्रगतिशील और घनी आबादी वाला नगर था। यहाँ पर अनेक समृद्ध और बड़े व्यापारी रहते थे। मथुरा के राजा यादव वंश के थे। मथुरा वैष्णव संप्रदाय का केंद्र था। आधुनिक वैष्णव मत का जनक, भागवतधर्म भी यहीं प्रतिपादित किया गया था। कई शताब्दियों तक बौद्ध मत मथुरा में प्रबल था। इस नगर में दूसरी शताब्दी ई० पू० के मध्य से जैन धर्म की गहरी जड़ें जम गई।

प्लिनी (नेचुरल हिस्ट्री, VI. 19) ने यमुना को जोमेनीज (Jomanes) कहा है जो मेथोरा और क्राइसोबारा[1] नगरों के बीच पलीबोथ्री (Palibothri) होती हुई गंगा में मिलती है। लास्सेन ने क्राइसोबारा (Chrysobara) का अनुलेखन कृष्णपुर के रूप में किया है।[2] वह इसे आगरा में स्थित बतलाते हैं। कनिंघम ने इसे मथुरा के केशवपुर मुहल्ला से समीकृत किया है।[3] एस० एन०

---

[1] मैक्रिंडिल, एंश्येंट इंडिया एज़ डिस्क्राइब्ड बाई टालमी, एस० एन० मजूमदार संस्करण, पृ० 98.

[2] इंडिशे आल्टर्टुस्कुंडे, I, पृ० 127, टिप्पणी 3.

[3] आर्क० सर्वे० ऑव इंडिया की रिपोर्ट, XX, पृ० 45.

मजुमदार के अनुसार इसे यमुना के बाँयें तट पर तथा मथुरा से पाँच मील दक्षिण, दक्षिण-पूर्व में स्थित गोकुल से समीकृत किया जा सकता है।[1] यूनानी लेखकों के अनुसार मेथोरा (मथुरा) आगरे से 35 मील पहले यमुना तट पर स्थित है। यह नगर इंद्रप्रस्थ के दक्षिण में स्थित था।[2] श्रावस्ती से मथुरा का पथ वेरंज नामक एक महत्त्वपूर्ण स्थान से हो कर गुजरता था।[3] मथुरा यमुना के दाहिने तट पर इन्द्रप्रस्थऔर कौशाम्बी की दूरी के अर्धांश पर स्थित था। यथार्थतः यह उत्तर-मथुरा[4] थी, जिसे आधुनिक मथुरा शहर से पाँच मील दूर दक्षिण-पश्चिम में स्थित महोली से समीकृत किया जाता है। गंगातट-पर स्थित संकिसा (संस्कृत, संकाश्य)-से उत्तरी मथुरा की दूरी केवल चार योजन[5] बतलाई गई है। वर्तमान मथुरा अपने प्राचीन स्थल पर नहीं है। नदी के कटाव के कारण यह और उत्तर में बसी है।

फा-ह्यान ने मथुरा में भिक्षुओं से भरे हुए अनेक विहार देखे थे।[6] तब इस नगर में बौद्धमत विकासशील था। युवान-च्वाङ् ने इसे 5,000 ली से भी अधिक विस्तृत और इसकी राजधानी की परिधि लगभग 20 ली बतलायी है। यहाँ की भूमि बड़ी उर्वर थी और कृषि मुख्य उद्यम था। इस प्रदेश में धारीदार श्रेष्ठ सूती कपड़े तथा सोना बनते थे। यहाँ की जलवायु गरम थी। यहाँ के निवासियों के आचरण मधुर और प्रथाएँ शालीन थीं। यहाँ देवमंदिर और बौद्ध-विहार थे तथा विभिन्न बौद्धेत्तर संप्रदायों के व्रतनिष्ठ अनुयायी यहाँ पर अव्यवस्थित रूप से रहते थे।[7] यहाँ पर अशोक द्वारा निर्मित तीन स्तूप भी स्थित थे।

मथुरा की कुछ प्रतिकूल अवस्थाएँ थीं। यहाँ की सड़कें विषम (विषमा), धूलयुक्त (बहुरजा), भयंकर कुत्तों (चण्डसुनखा), वन्य पशुओं तथा राक्षसों

---

[1] कनिंघम, एं० ज्यॉ० इं०, एस० एन० मजुमदार, संस्करण, पृ० 707.

[2] महाभारत, सभापर्व, XXX. 1105-6.

[3] मललसेकर डिक्शनरी ऑव पालि प्रापर नेम्स, II, पृ० 930.

[4] उत्तर भारत की मथुरा दक्षिण पाण्ड्यों की राजधानी, दक्षिण मधुरा (आधुनिक मदुरा) से पृथक है।

[5] कार्च्चायन, पालि ग्रामर, भाग III, अध्याय I.

[6] लेग्गे, फा-ह्यान, पृ० 42.

[7] वाटर्स, यॉन युवान्-च्वाङ्, I. 301.

(वालायक्खा)[1] से युक्त थीं और भिक्षा भी सुलभ नहीं थी (दुल्लभपिण्डा)[2]। वृष्णियों और अन्धकों के आदि-स्थान मथुरा पर राक्षसों ने आक्रमण किया था।[3] वृष्णियों और अन्धकों ने भयभीत होकर मथुरा को त्याग दिया और द्वारावती में अपनी राजधानी स्थापित की।[4] मगध-नरेश जरासंध ने एक बड़ी सेना के साथ इसको घेर लिया था। अपने महाप्रस्थान के समय युधिष्ठिर ने वज्रनाभ को मथुरा के राजसिंहासन पर अधिष्ठित किया था।[5] गुप्तवंश के उत्कर्ष के पूर्व यहाँ पर सात नाग-नरेश राज्य कर रहे थे।[6] शत्रुघ्न ने सुवाहु और शूरसेन नामक अपने दो पुत्रों के साथ इस नगर पर राज्य किया था। उग्रसेन और कंस मथुरा के राजा थे जिस पर अन्धकों के उत्तराधिकारी शासन करते थे।[7] पार्जिटर का यह सुझाव कि सुदास के शासन के कुछ वर्षों पूर्व शूरसेन और मथुरा के प्रदेशों पर राम के भाई शत्रुघ्न की विजय के फलस्वरूप कुछ वशिष्ठों को दूसरे राज्यों में जाना पड़ा होगा।[8] सात्वत भीम ने शत्रुघ्न के पुत्रों को मथुरा से निकाला और तब उसने तथा उसके उत्तराधिकारियों ने वहाँ शासन किया।[9] शत्रुघ्न ने यमुना के पश्चिम में स्थित सात्वत यादवों पर आक्रमण करने और माधव लवन को मारने के पश्चात् शूरसेन नाम से विश्रुत प्रदेश को मथुरा की राजधानी बनाया। अन्धकों ने मथुरा में शासन किया जो यादवों की प्रमुख राजधानी थी।[10] मगध-नरेश जरासंध ने अपनी सत्ता के चरमोत्कर्ष काल में मथुरा तक और उसके समीपवर्ती प्रदेशों पर अपना आधिपत्य स्थापित किया, जहाँ के यादव-नरेश कंस ने अपनी

---

[1] हेयर ने इसे festial yakkhas अनूदित किया है। द बुक ऑव द ग्रेजुअल सेयिंग्स, जिल्द III, पृ० 188 किन्तु 'वाला' शब्द का तात्पर्य Boa conscrictors (एक प्रकार का साँप) और अन्य वन्य पशुओं से है।

[2] अंगुत्तर निकाय, III, 256.

[3] ब्रह्मपुराण, अध्याय XIV.

[4] हरिवंश, अध्याय, 37.

[5] स्कन्द पुराण, विष्णुखंड।

[6] वायु पुराण, अध्याय 99.

[7] वायु पुराण, 88, 185-86; ब्रह्माण्ड पुराण, III, 63, 186-87; रामायण VII, 62-6; विष्णु पुराण, IV, 4, 46; भागवत पुराण, IX. 11, 14.

[8] पार्जिटर, ऐंश्येंट इंडियन हिस्टॉरिकल ट्रेडीशन, पृ० 171.

[9] वही, पृ० 211.

[10] वही, पृ० 279.

दो पुत्रियों का विवाह उससे कर दिया और उसे अपना अधिराट् माना था।

महाभारत एवं पुराणों के अनुसार मथुरा का राजवंश यदु अथवा यादवों का था। यादव–जन विविध कुलों में विभक्त थे।[1]

बुद्धकाल में मथुरा के एक राजा की उपाधि अवंतीपुत्र थी। अतएव, वह मातृ-पक्ष से उज्जयिनी के राजवंश से संबंधित था। दीपवंस से हमें यह ज्ञात होता है कि राजा साधीन के पुत्र एवं पौत्र सर्वश्रेष्ठ नगरी मधुरा या मथुरा के विशाल राज्य पर शासन करते थे[2]। एक जैन विवरण के अनुसार सौर्यपुर (मथुरा) नगर में वासुदेव नामक एक शक्तिशाली राजा था।[3]

समुद्रगुप्त से पराजित होने के पूर्व, मथुरा में नाग एवं यौधेय शासन करते थे।[4] पंजाब और काबुल नरेश मेनेन्डर ने भी इस पर अधिकार किया था।[5] मथुरा के हिंदू नरेश सदा के लिए हगान, हगामश, राजुवुल तथा अन्य शक क्षत्रपों द्वारा अपदस्थ किए गए थे जो संभवतः प्रथम शताब्दी ई० या इसके निकट ही शासन करते थे।[6] दूसरी शताब्दी ई० पू० में मथुरा कुषाण-नरेश हुविष्क के अधीन थी। यह तथ्य भव्य बौद्ध विहार के साक्ष्य से पुष्ट होता है जिस पर उसका नाम अंकित है।[7] प्रथम शताब्दी ई० पू० में मथुरा प्रदेश देशी राजाओं से छिनकर विदेशी (शक) सत्ता के हाथ में चला गया। एक यूनानी राजा, कलिंग-नरेश खारवेल[8]

---

[1] महाभारत, I, 94, 3725-39.

[2] विष्णु पुराण, IV . 13, 1; वायु पुराण, 96, 1-2.

[3] ओल्डेनबर्ग संस्करण, पृ० 27; तु० एक्सटेंडेड महावंस, मललसेकर संस्करण' पा० टे० सो०, पृ० 43.

[4] विष्णु पुराण (V. 21) के अनुसार कंस की मृत्यु के पश्चात् कृष्ण ने मथुरा के सिंहासन पर उग्रसेन को अधिष्ठित किया था।

[5] रायचौधरी, पो० हि० एं० इं० चतुर्थ संस्करण, पृ० 391.

[6] वि० स्मिथ, अर्ली हिस्ट्री ऑव इंडिया, चतुर्थ संस्करण, पृ० 210.

[7] वही, पृ० 241, पाद टिप्पणी, 1.

[8] वि० स्मिथ अर्ली हिस्ट्री ऑव इंडिया, चतुर्थ संस्करण, पृ० 286-87; तु० कनिंघम, आर्क० सर्वे० रिपोर्ट I, पृ० 238.

[9] स्टेन कोनो ने इसे दिमित पढ़ा है और डिमिट्रियस से समीकृत किया है, किन्तु खारवेल के अभिलेख में यूनानी नरेश का पूरा नाम नहीं पढ़ा जा सकता है।

के संभावित प्रत्याक्रमण की आशंका से अपनी सेना सहित मथुरा लौट आया था जब कि खारवेल राजगृह (राजगृह) पर घेरा डाले हुए था (ज० बि० उ० रि० सो० XIII. 236)। योनों या बाख्त्री-योनों ने भारत में अपने राज्य स्थापित करते समय मथुरा पर भी अपनी सत्ता स्थापित की थी।[1] जिस समय मेगस्थनीज़ ने शूरसेनों के विषय में लिखा था, उस समय उनका देश अवश्यमेव मौर्य-साम्राज्य में संमिलित रहा होगा तथा मौर्यों के पश्चात् उनकी राजधानी मथुरा पर बाख्त्री-यवनों एवं कुषाणों का अधिकार हो गया था। मथुरा शुंग-साम्राज्य में भी संमिलित था या नहीं, यह एक विवादास्पद विषय है।

मथुरा वैष्णव-संप्रदाय का केंद्र था। शक-कुषाणकाल में मथुरा भागवत धर्म का गढ़ नहीं रह गया था।[2] मथुरा से प्राप्त लघु नाग-प्रतिमा अभिलेख से यह पूर्णतः सिद्ध होता है कि मथुरा में नागपूजा प्रचलित थी जो कालिय नाग एवं कृष्ण द्वारा उसके दमन की कहानी के संदर्भ में महत्वपूर्ण है।[3] वृन्दावन में दोल्लीला-समारोह में संमिलित होने के पश्चात् अक्रूर के साथ श्री कृष्ण यहाँ आये थे। कृष्ण ने यहाँ पर एक धोबी की हत्या की थी तथा सुदामा नामक किसी मालाकार को वरदान एवं त्रिवक्रा नामक एक कुब्जा को दिव्य सौंदर्य दिया था। अपने एवं अपने भाई बलराम को वस्त्र पहनाने के कारण एक बुनकर को पुरस्कृत किया था (भागवत पुराण, स्कन्ध X, अध्याय, 41-42) तथा इंद्रधनुष भंग किया था। उन्होंने कंस के हाथी एवं अंत में मथुरा के अत्याचारी राजा कंस का वध किया था। श्री कृष्ण के जन्मस्थल मथुरा को वैष्णवमत का भी जन्मस्थान माना जाता है। मथुरा में कई शताब्दियों तक बौद्धधर्म का भी अस्तित्व था। बुद्ध के एक शिष्य महाकच्चायन ने यहाँ पर जाति विषयक एक प्रवचन दिया था।[4] अशोक के गुरु उपगुप्त को, जब वह मथुरा में थे, नटवट-विहार में आमंत्रित किया गया था। बौद्धधर्म के इतिहास में मथुरा के उपगुप्त-विहार का बहुत महत्त्व है क्योंकि इसी विहार में उन्होंने अनेक लोगों को बौद्ध धर्म में दीक्षित करने में सफलता प्राप्त की थी।[5] इस नगर में जैन मत की स्थिति सुदृढ़ थी। विविधतीर्थकल्प (पृ० 50 और आगे) के अनुसार दो ऋषियों द्वारा सिद्धि प्राप्त किये जाने के कारण मथुरा को सिद्धक्षेत्र

---

[1] तु० खारवेल का हाथीगुंफा का अभिलेख, मधुरं अपायतो यवनराजा।

[2] रायचौधरी, अर्ली हिस्ट्री ऑव द वैष्णव सेक्ट, पृ० 99.

[3] वही, पृ० 100.

[4] मज्झिम, II, पृ० 83 और आगे।

[5] वार्टस, ऑन युवान-च्वाङ् I, पृ० 306-7.

कहा जाने लगा था। मथुरा और उसके समीपस्थ छियानबे गाँवों के निवासी अपने घरों एवं आँगनों में जैन मूर्तियाँ स्थापित करते थे (बृहत् भागवत, I, 1774 और आगे)। महावीर यहाँ पर आये थे (विवागसूय, 6)। अधिकांशतः परवर्ती कुषाण नरेशों के शासन-काल, 78 ई० के बाद से संबंधित मथुरा से प्राप्त अनेक अभिलेख इस बात को सिद्ध करने के लिए पर्याप्त प्रमाण प्रस्तुत करते हैं कि यहाँ पर जैन संप्रदाय न केवल अधिष्ठित ही था वरन् पहले से ही यह छोटे-छोटे वर्गों में विभक्त हो गया था।[1]

पश्चिमोत्तर की कला-परंपराओं को मथुरा के जैन उच्चित्रों में पैर जमाने के लिए एक दृढ़ आधार मिला।[2] यहाँ पर बुद्ध एवं बोधिसत्व की कालांकित एवं तिथिहीन अनेक प्रतिमाएं प्राप्त हुयीं हैं। मथुरा के मंदिरों ने गजनी के महमूद को इतना अधिक विस्मित किया था कि उसने अपनी राजधानी को इसी प्रकार सज्जित करने का संकल्प किया था। मथुरा में समन्वेषण के विषय में आर्क० स० इं०, वार्षिक रिपोर्ट, पृ० 120 और आगे द्रष्टव्य है। विस्तृत विवरण के लिए द्रष्टव्य, लाहा इंडोलॉजिकल स्टडीज, भाग, III।

मालव—जैन ग्रंथ भगवती सूत्रके अनुसार मालव-प्रदेश षोडश् महाजनपदों की सूची में संमिलित है। मालव-जन का उल्लेख पतंजलि के महाभाष्य (IV. 1.68) में किया गया है। मालव नाम से विख्यात इस प्रदेश के निवासी पंजाब में रहते थे। किन्तु उनके द्वारा अधिकृत प्रदेश का ठीक-ठीक निर्धारण करना कठिन है। स्मिथ के विचारानुसार वे झेलम एवं चेनाब के संगम के आगे स्थित प्रदेश में रहते थे[3] जिसमें झंग जिला एवं मांटोगोमरी जिले के कुछ भाग संमिलित हैं[4] (ज० रा० ए० सो० 1903, पृ० 631)। मैक्रिडिल के अनुसार वे चेनाव और रावी के वर्तमान दोआब से सिन्धु और अकेसिनीज के संगम तक फैले हुए भू-खंड के एक व्यापक भाग में रहते थे, जिसे आधुनिक मुल्तान जिले एवं मांटगोमरी के कुछ भागों से समीकृत किया जाता है (इनवेज़न ऑव इंडिया, परिशिष्ट टिप्पणी, 357)। कुछ विद्वानों ने इन्हें रावी नदी के दोनों तटों पर उसकी अवर

---

[1] कैम्ब्रिज हिस्ट्री ऑव इंडिया, I, पृ० 167.

[2] वही, पृ० 641.

[3] अधुना परवर्ती कुषाण-नरेशों की तिथि लगभग 120 ई० से आरंभ होती है। अधिकांश इतिहासकार 78 ई० को अब कुषाण-नरेश कनिष्क की तिथि मानते हैं—अनुवादक।

[4] संप्रति पश्चिमी पाकिस्तान में संमिलित हैं।

घाटी में स्थित बतलाया है (रायचौधरी, पो० हि० एं० इं०, चतुर्थ संस्करण,पृ० 205)।

मालव-जनों को जिन्हें मल्लोई भी कहा जाता था, सिकंदर की सेना ने पराजित किया था। उन्होंने अपने प्राकारावेष्ठित नगरों से सिकंदर की सेना का डटकर सामना किया किंतु अंत में वे सिकंदर और उसके सेनापति पेरदिकास से पराजित हुए। ततपश्चात् उन्होंने अपने नगर को छोड़ दिया।

इसके पश्चात् भी लगता है, मालव-जन पंजाब के अपने प्रदेश में कुछ समय तक बने रहे। महाभारत (द्रोणपर्व, अध्याय, X, पृ० 17; सभापर्व, अध्याय 32, पृ० 7) में उन्हें त्रिगर्त्तों, शिवि और अम्बष्ठों से मिलाकर के संभवत: उसी स्थान पर स्थित बतलाया गया है। किंतु थोड़े समय के पश्चात् ही ऐसा प्रतीत होता है कि वे दक्षिण की ओर चले गये और जाकर राजस्थान में कहीं पर बस गये। समुद्रगुप्त के शासनकाल में वे वहाँ पर रहते थे। राजस्थान में जयपुर के निकट नागर-क्षेत्र पर मालवों का अधिकार क्षत्रप नहपान के दामाद शक उषवदात के नासिक गुहा लेख से सिद्ध होता है। शक-आक्रमण एवं विजय मालव जन के गण का उन्मूलन नहीं कर पाये, क्योंकि उनका उल्लेख समुद्रगुप्त के प्रयाग-स्तंभ लेख में आर्यावर्त के पश्चिमी एवं दक्षिण-पश्चिमी छोर पर बसनेवाले गणराज्यों की सूची में किया गया है। मालवों का नाम सुविख्यात कृत या मालव-विक्रम संवत् से भी संबद्ध किया जाता है (तु० नरवर्मन का मंदसोर अभिलेख, का० इं० इं० जिल्द, III)। पुराणों में मालवों का उल्लेख सौराष्ट्रों, अवंती-वासियों, आभीरों, शूरों और अर्बुदों के साथ किया गया है तथा उन्हें पारिपात्र पर्वत के अश्रय में रहते हुए बतलाया गया है (भागवत पुराण, XII, I, 36; विष्णुपुराण, खण्ड, II, अध्याय, 3; ब्रह्माण्ड पुराण, अध्याय, XIX श्लोक, 17)। परवर्ती अभिलेखीय साक्ष्यों में सप्तमालव नामक सात प्रदेशों का वर्णन प्राप्त होता है (एपि० इं० V, 229; अं० भं० ओ० रि० इं०, जिल्द, XIII, भाग, 3-4, 1931-32, पृ० 229)। विस्तृत विवरण के लिए द्रष्टव्य, बि० च० लाहा, इंडोलॉजिकल स्टडीज, भाग, I, पृ० 27 और आगे; बि० च० लाहा, ट्राइब्स इन ऐंश्येंट इंडिया, अध्याय, VIII।

माल्यवत पर्वत—यह हिमालय के पश्चिमोत्तरी सिरे से प्रारंभ होता है, और पहले अविभक्त भारत को अफगानिस्तान से अलग करते हुए यह दक्षिण-पश्चिम की ओर , फिर उत्तर-पूर्वी अफ़गानिस्तान की ओर फैला हुआ है। आधुनिक भूगोलवेत्ता इस पर्वत को हिन्दुकुश कहते हैं। मुख्य शृंखला से अनेक शैल-प्रक्षेप निकले हुए हैं—यथा बदखशाँ एवं कोकचा। बदखशाँ पर्वत प्रक्षेप आमू दरिया

(आक्सस) को कोकचा से, और कोकचा प्रक्षेप कोकचा को कुंदुज जल-प्रणाली से अलग करता है। हिन्दुकुश की ऊँचाई पूर्वी भाग में 14, 000 से 18,000 फीट के मध्य है, जिसके ऊपर भी कई दैत्याकार शिखर 25,000 फीट की ऊँचाई तक जाते हैं। यह बहुत विरदित क्षेत्र है और ढालू चट्टानों के कारण उसके शिखर पर बहुत कम मिट्टी है, जिसके फलस्वरूप घास के अतिरिक्त यहाँ पर और कुछ नहीं उग सकता है (लाहा, माउंटेंस ऑव एंश्येंट इंडिया, पृ० 7)।

मानपुर—महाराज सर्वनाथ के खोह ताम्रपत्र अभिलेख (214 वें वर्ष) में इस कस्बे का उल्लेख है जिसे संभवतः सोन नदी के समीप स्थित वर्तमान मनपुर से समीकृत किया जा सकता है, जो उच्चहरा से दक्षिण पूर्वी दिशा में लगभग 47 मील दूर और कारीतलाई 32 मील से दूर दक्षिण-पूर्व में स्थित है, (का० इं० इं० जिल्द, III)।

मानस-सरोवर—राजा विभ्राज ने इस झील में आश्रय ग्रहण किया था (हरिवंश, XXIII, 9-10)।

मार्कण्डेय-आश्रम—यहाँ पर भीष्म आये थे। इस आश्रम के निवासियों ने उनका यथोचित सम्मान किया था। महाभारत में (वनपर्व, अध्याय, 84) इसे गोमती और गंगा के संगम पर स्थित बतलाया गया है। पद्मपुराण (अध्याय, 16) के अनुसार मार्कण्डेय ऋषि ने सरयू एवं गंगा के संगम पर तपस्या की थी।

मेहरौली—चंद्र के मरणोत्तर मेहरौली लौह-स्तंभ लेख में उसका उल्लेख है जो मिहिरपुरी का एक भ्रष्ट रूप है। यह प्रायः दिल्ली के दक्षिण 9 मील पर स्थित एक गाँव है। इस वैष्णव अभिलेख को विष्णुपद (विष्णु के पदचिह्नों से युक्त) नामक किसी पहाड़ी पर विष्णु-ध्वज की स्थापना का वर्णन करने के लिए उत्कीर्ण कराया गया था (का० इं० इं०, जिल्द, III)।

मेरोस पर्वत—इसे मार-कोह भी कहा जाता है, जो पंजाब में जलालाबाद के समीप स्थित है और जहाँ पर सिकंदर महान् गया था।

मेरु—हेमाद्रि तथा स्वर्णाचल जैसे अन्य नामों से विज्ञात इस पर्वत को गढ़वाल में स्थित रुद्र-हिमालय से समीकृत किया जाता है (थेरीगाथा कामेंट्री, पृ० 150) जहाँ से गंगा निकलती है (लाहा, ज्यॉग्रेफी ऑव अर्ली बुद्धिज्म, पृ० 42)। यह बदरिकाश्रम के समीप स्थित है और संभवतः यह एरियन द्वारा वर्णित माउंट मेरोस ही है। इस पर्वत के पश्चिम की ओर निषध एवं पारिपात्र पर्वत, दक्षिण में हिमवन्त और कैलास तथा उत्तर में शृंगवान और जरुधि स्थित हैं (मार्कण्डेय पुराण, वंगवासी संस्करण, पृ० 240)। महर्षि शालंकायन ने इस पर्वत पर साधना की थी (कूर्म पुराण, 144. 110)।

मिगसम्मता—यह नदी हिमालय से निकलती थी (जातक, VI. 72)।

मोरा—मथुरा शहर से 7 मील दूर पश्चिम में तथा मथुरा से गोवर्द्धन जाने वाली सड़क के उत्तर में दो मील दूर स्थित यह एक छोटा-सा गाँव है (एपि० इं० XXIV. भाग V, जनवरी, 1938, पृ० 194)।

मोरियनगर—इस नगर को कोसलाधिप पसेनदि के पुत्र राजा विडूडभ द्वारा उत्पीड़ित होने पर कुछ शाक्यों ने हिमालय में जा कर बसाया था (महावंस टीका, सिंहली संस्करण, पृ० 119-21)। यह पीपल के वृक्षों से भरे हुए जंगली क्षेत्र में एक झील के परितः स्थित था। सामान्यतः अब यह माना जाता है कि अशोक महान् का पितामह चन्द्रगुप्त मोरिय कुल का था, जिसकी राजधानी पिप्फलिवन थी। वह स्थान जहाँ पर इस नगर की स्थापना की गयी थी सदैव मोरों के कलरव से प्रतिध्वनित होता था (महावंसटीका, सिंहली संस्करण, पृ० 119-21)। पिप्पलिवन के मोरियों को बुद्ध के पार्थिव अवशेषों का एक भाग मिला था, जिस पर उन्होंने एक स्तूप का निर्माण करवाया था (दीघ० II, 167)।

मूसिकेनोस—मूसिकेनोस के प्रदेश से सिकंदर के इतिहासकार सुपरिचित थे। सिकंदर ने उनपर अचानक आक्रमण कर दिया था जिसके फलस्वरूप उनको आत्मसमर्पण करना पड़ा (कैंब्रिज हिस्ट्री ऑव इंडिया, I, 377)। स्ट्रैबो (एच० तथा एफ० द्वारा अनूदित, भाग, III, पृ० 96) के अनुसार वे सामूहिक रूप से खाते थे और शिकार ही उनका भोजन होता था। वे सोने अथवा चाँदी का प्रयोग नहीं करते थे। दासों के स्थान पर वे किशोर युवकों को परिचर के रूप में नियोजित करते थे। यथोचित् अवधान से वे औषधिविज्ञान का अध्ययन करते थे। निरंतर वाद उठा करके उन्हें अदालतों में जाना कभी रुचिकर नहीं था।

मुजावन्त—इसका एक अन्य समानार्थक शब्द मुञ्जावन्त है, जो महाभारत में आता है (स्त्री पर्व, X. 785, XIV. 180; लुडविग कृत ट्रांसलेशन ऑव ऋग्वेद, 3,198 भी द्रष्टव्य है)। यह हिमालय में स्थित एक पर्वत का नाम है। इसका नाम ऋग्वेद (X. 34, 1) में भी आया है जहाँ इसे मौजवत कहा गया है। पाणिनि के सूत्र (IV · 4,1110) पर लिखित सिद्धांतकौमुदी में हमें एक अन्य रूप मौञ्जावन्त मिलता है। कुछ विद्वानों के मतानुसार यह एक पहाड़ी थी जिसके नाम के आधार पर ही इस जाति का नाम पड़ा था। त्सिमर ने अपने ग्रंथ अल्टिंडिशेज़ लेबेन, 29, में इसे कश्मीर के दक्षिण पश्चिम में स्थित निचली पहाड़ियों में से एक बतलाया है।

मुक्तेश्वर—पंजाब के फीरोजपुर जिले में यह मुक्तेश्वर तहसील का मुख्यावास है। प्रतिवर्ष यहाँ पर सिक्खों का एक बड़ा पर्व मनाया जाता है।

मूलस्थान (मूलस्थानपुर)—यह रावी नदी में बने दो द्वीपों पर स्थित था। यूनानी एवं लैटिन लेखकों ने इसे कैस्पैपीरोस (Kaspapyros), कैस्पीरा (Kaspeira) आदि नाम दिये हैं। युवान-च्वाङ् माउ-लो-सन-पु-लु (संस्कृत, मूलस्थान) गया था। इसे उसने सिंध से 900 ली पूर्व में स्थित बताया था। (वाटर्स, ऑन युवान-च्वाङ्, II, 254)। कनिंघम ने मूलस्थान को मुल्तान से समीकृत किया है।

मुरुण्ड देश—दूसरी शताब्दी ई० में मुरुंडाई (Moroundai) नाम से मुरुण्डों का सबसे पहले उल्लेख टालेमी ने किया। "इन्होंने, ऐसा प्रतीत होता है, कि संभवतः गंगा के पूर्व में संपूर्ण उत्तरी बिहार से ,ले कर इसके डेल्टा के मुहाने तक के विस्तृत भू-भाग पर अधिकार कर लिया था। उनके छः महत्त्वपूर्ण नगर यथा, बोरैता (Boraita), कोरीगाजा (Koryagaja), कोन्दोत (Kondota), केल्डिना (Kelydna) , अगनगोर (Aganagora) तथा तलर्ग (Talarga), थे। ये सभी गंगा के पूर्व में स्थित थे। संत मार्टिन के अनुसार केल्डिना का कुछ संबंध काली नदी या कालिन्दी नदी से और अगनगोरा का कटवा से थोड़ी दूर आगे, गंगा के पूर्वी तट पर स्थित अधदीप (अग्रद्वीप) से था (टालेमी, ऐंश्येंट इंडिया, पृ० 215-16)। कनिंघम के अनुसार टालेमी के मोरुण्डाई. प्लिनी द्वारा वर्णित मोरेडीज (Moredes) ही थे। वायुपुराण में मुरुण्डों को म्लेच्छ कबीले का बतलाया गया है। हेमचंद्र की अभिधानचिंतामणि (IV. 26, लम्पाकास्तु मरुण्डाः स्युः) में मुरुण्डों को लम्पाकों, टालेमी के लंबटाई (Lambatai) से समीकृत किया गया है, जो लघमान के समीपवर्ती क्षेत्र में आधुनिक काबुल नदी के उद्गम स्थल के पास स्थित थे और इसलिए यह माना जाता है कि मुरुण्डों का इस क्षेत्र में भी एक सन्निवेश था। विस्तृत विवरण के लिए द्रष्टव्य, बि० च० लाहा, ट्राइब्स इन ऐंश्येंट इंडिया, पृ० 93-94)।

नगरहार—इसे अफगानिस्तान में स्थित आधुनिक जलालाबाद से समीकृत किया जाता है।[1] फा-वेइ का अभिप्राय यह लगता है कि उसके समय में यह पुरुषपुर राज्य का एक भाग था (एल० पीटेख, नर्दर्न इंडिया एकार्डिंग टु द शुइ-चिंग-चू, पृ० 60)। लास्सेन ने नगरहार को नगर या टोलेमी द्वारा वर्णित डायोनिसोपोलिस से समीकृत किया है जो कबुर एवं सिंधु के मध्य में स्थित था। पाँचवीं शती ई० के प्रारंभ में फा-ह्यान ने इसे केवल ना-की (Na-Kie) कहा था जो उस समय

---

[1] **ज० पीश्च० फोगेल, नोटस् ऑन टालेमी, बु० स्कू० ओ० अ० स्ट०, जिल्द IV. भाग I,X पृ० 80.**

किसी स्वाधीन राजा द्वारा प्रशासित एक स्वतंत्र राज्य था। सातवीं शती ई० में युवान-च्वाङ् के काल में यह कपिसीन (Kapisene) के अधीन था और यहाँ कोई राजा नहीं था। इसे उद्यानपुर भी कहा जाता था (तु० कनिंघम, आर्क० स० इं०, 1924, पृ० 53-54)।

नैमिषारण्य (आधुनिक नीमसार)—यह गोमती के तट पर सीतापुर जिले में स्थित है। वायु पुराण (I. 14) में इसे दृषद्वती के तट पर स्थित बतलाया गया है, जो हमारे विचार से त्रुटिपूर्ण है। 51 पीठस्थानों में से एक तथा पुराणकार प्राचीन आर्य-ऋषियों का आवास होने के कारण यह एक महत्त्वपूर्ण हिंदू तीर्थस्थल है। नैमिषारण्य आने पर ऋषियों ने नारद का सम्मान किया था (पद्मपुराण, उत्तरखण्ड, श्लोक, 77-78)। पंचविंश (XXV. 6,4) एवं जैमिनीय ब्राह्मणों में (I. 363) नैमिषीय का उल्लेख है जो नैमिषारण्य में बसनेवालों को लक्षित करता है। महाभारत (83. 109-111; 84, 59-64) में इस पुण्य नगरी का उल्लेख है। पद्मपुराण (VI. 219, 1-2) के अनुसार द्वादश-वर्षीय यज्ञ नैमिषारण्य में संपादित किय गया था। कूर्मपुराण (पूर्वभाग, 30, 45-48) में भारत के अन्य तीर्थस्थानों के साथ इसका भी वर्णन किया गया है (तु० भागवत पुराण, I, 1.4; III, 20, 7; X. 79, 30; VII. 14, 31; X. 78, 20; अग्निपुराण, अध्याय, 109; पद्मपुराण, अध्याय, 16, तीर्थमाहात्म्य)। योगिनी तंत्र (2.4) में इसका वर्णन प्राप्त होता है।

नौहाई—कोसम स्तंभ से कोई $1\frac{1}{2}$ मील दूर पश्चिमोत्तर में यह ग्राम स्थित है (एपि० इं० XXIV, खंड, VI, अप्रैल, 1938, पृ० 253)।

नाभक—अशोक के पाँचवें एवं तेरहवें शिलालेख में वर्णित नाभक पश्चिमोत्तर सीमा प्रांत (भारत-विभाजन के पूर्व) एवं भारत के पश्चिमी समुद्रतट के मध्य कहीं पर स्थित था। कुछ लोगों का विचार है कि नाभक एवं नाभपंक्ति कालसी के उत्तर में स्थित केंद्रीय हिमालय-राज्य थे।

नान्यौरा—उत्तरप्रदेश के हमीरपुर जिले की पनवारी जैतपुर तहसील में स्थित इस ग्राम का उल्लेख नान्यौरा दानपत्र में किया गया है।

नेपाल—योगिनीतंत्र (1.7; 1.11; 2.2) में इसका उल्लेख है। नेपाल माहात्म्य (अध्याय, I, श्लोक, 30) में नेपाल का पुराना नाम श्लेषमातकवन बताया गया है। बागमती नदी के तट पर पशुपतीर्थ या पशुपतितीर्थ स्थित है। नेपाल की सीमा निम्नलिखित है : पूर्व में कौशिकी नदी, पश्चिम में त्रिशूलगंगा, उत्तर में शिवपुरी (कैलाश) तथा दक्षिण में एक ऐसी नदी जिसका जल शीतल एवं निर्मल है। (अध्याय, 15, श्लोक, 3-5)। इलाहाबाद स्तंभ-लेख में नेपाल

को एक स्वायत-शासी प्रत्यन्त राज्य कहा गया है। समुद्रगुप्त ने इस पर विजय प्राप्त की थी।* कुछ लोग इसका तात्पर्य टिपरा से लेते हैं (ज० ए० सो० बं०, 1836, पृ० 973) जो संदिग्ध प्रतीत होता है। मानदेव जिष्णुगुप्त के शासनकाल में उत्कीर्ण थानकोट अभिलेख में मान-कर नामक एक कर का उल्लेख है जो नेपाल की घाटी में लिया जाता था। यह कर गाहड़वालवंशीय नरेश गोविंदचंद्र के अभिलेखों (लगभग 1104-54 ई०) में वर्णित तरुष्कदण्ड की भाँति था (एपि० इं० II, 361 और आगे; IV · 11 और आगे; 98 और आगे; 104 और आगे; 116 और आगे; V · 115 और आगे; VII · 98 और आगे; VIII · 153 और आगे; IX · 321 और आगे; XI · 20 और आगे; 155)। सातवीं शताब्दी ईसवी में नेपाल एक अंतस्थ राज्य था। आठवीं शताब्दी ई० में नेपाल तिब्बत की पराधीनता से मुक्त हो गया था।

देवपारा अभिलेख के अनुसार (एपि० इं०, I, 309), नेपाल नरेश नान्यदेव लगभग 12 वीं शती ई० के मध्य में अनेक अन्य राजकुमारों के साथ विजयसेन द्वारा पराजित और बंदी बनाया गया था।

वराहपुराण (अध्याय, 3) में नेपाल घाटी को मूलतः नाग-वास नामक झील बतलाया गया है। यह 14 मील लंबी और 4 मील चौड़ी थी, (तु० नंदलाल दे, ज्यॉग्रेफिकल डिक्शनरी, पृ० 140) काठमांडू से पश्चिमोत्तर में लगभग 3 मील दूर एवं अशोक की पुत्री चारुमती द्वारा स्थापित देवीपाटन कस्बे में बागमती नदी के पश्चिमी तट पर नेपाल में मृगस्थल में स्थित पशुपतिनाथ या पशुपति का मंदिर हिंदुओं का एक विश्रुत मंदिर है। मंदिर के सम्मुख नदी के पूर्वी तट पर ऊँचे वृक्षों एवं वनों से आच्छादित एक पहाड़ी है।

नेरुपर्वत—यह हिमालय क्षेत्र में स्थित है (मिलिंद, पृ० 129)। जातकों (जातक III, 247) में इसे सुवर्ण पर्वत कहा गया है।

निग्लीब—यह उत्तरपूर्वी रेलवे के उस्का बाजार रेलवे स्टेशन से 38 मील दूर पश्चिमोत्तर में बुटौल (बुटवल) जिले की नेपाली तहसील तौलिहवा में स्थित है (एपि० इं० V, पृ० 1)।

निर्माण्ड—पू० पंजाब के काँगड़ा जिले के कुल्ला या कुलू मंडल की प्लाच तहसील के मुख्यावास से 21 मील दूर पूर्वोत्तर में सतलज नदी के दाहिने तट के

***वस्तुतः समुद्रगुप्त ने नेपाल पर किसी सैनिक अभियान के माध्यम से नहीं विजय प्राप्त की थी। नेपाल एक प्रत्यन्त राज्य था और इस पर समुद्रगुप्त का प्रभाव मात्र था।—अनूदक**

समीप स्थित, निर्मण्ड ग्राम का उल्लेख महासामंत एवं महाराजा समुद्रसेन के निर्मण्ड ताम्रपत्र अभिलेख में किया गया है (का० इं० इं०, जिल्द, III)। यह ग्राम परशुराम को समर्पित एक प्राचीन मंदिर के समीप स्थित है। यहीं पर त्रिपुरांतक या मिहिरेश्वर नाम से विख्यात शिव को समर्पित एक अन्य मंदिर था।

निसभ—गंधमादन के पश्चिम में तथा काबुल नदी के उत्तर में हिमालय के समीप स्थित इस पर्वत को यूनानी लोग पैरोपनिसस (Paropanisos) कहते थे जिसे अब हिंदुकुश कहते हैं (तु० अपदान, पृ० 67)।

आक्सीकेनोस-क्षेत्र—कर्टियस ने प्रायस्तियों (Praesti) को इस क्षेत्र का निवासी बतलाया है, जो संभवतः महाभारत (VI. 9. 61) में वर्णित प्रोष्ठों (Prosthas) से समीकृत किये जा सकते हैं। कनिंघम के विचार से आक्सीकेनोस-क्षेत्र सिंधु नदी के पश्चिम में लरकाना के समीपस्थ मैदान में स्थित था (इनवेज़न ऑव अलेक्जेंडर, पृ० 158)। आक्सीकेनोस ने सिकंदर का सामना करने का असफल प्रयत्न किया था (कैं० हि० इं० I, 377; लाहा, इंडोलॉजिकल स्टडीज़, भाग I, पृ० 36)।

पभोसा गुफा—अभिलेखों में यह तथ्य उल्लिखित है कि कौशाम्बी के समीप स्थित पभोसा की दो गुफाएँ अहिच्छत्र-नरेश आषाढ़सेन ने काश्यपीय अर्हतों को समर्पित की थी। उनमें से एक में दानी-नरेश आषाढ़सेन को राजा बृहस्पतिमित्र का मामा बतलाया गया है (ल्युडर्सकी तालिका, मं० 904; एपि०इं०, X, परिशिष्ट) और दूसरे अभिलेख में राजाओं की चार पीढ़ियों का उल्लेख है, जिसका प्रारंभ शौनकायन से होता है (बि० च० लाहा, पंचालाज ऐंड देयर कैपिटल अहिच्छत्र, मे० आर्क० स० इं०, सं० 67, पृ० 12)।

पडेरिया—यह स्थान भगवानपुर जिले की भगवानपुर नामक नेपाली तहसील से दो मील उत्तर में स्थित है। डॉ० फूहरर के अनुसार यह निग्लीव से लगभग 13 मील दूर पर स्थित है (एपि० इं०, V. पृ० 1)।

पह्लव—यह पार्थियनों के लिए प्रयुक्त भारतीय शब्द पार्थव का विकृत रूप है (रैप्सन, क्वायंस ऑव इंडिया, पृ० 37, पाद टिप्पणी, 2)। वायु पुराण पह्लवों के प्रदेश को उत्तर में बतलाता है, जब कि मार्कण्डेय पुराण तथा बृहत्संहिता में वे भारत के दक्षिण-पश्चिमी भाग में स्थित बतलाये गये हैं (वायु पुराण, अध्याय, 45; V.115; मार्कण्डेय पुराण, अध्याय, 58; बृहत्संहिता, अध्याय, 14)। रामायण के अनुसार वशिष्ठ एवं विश्वामित्र-जैसे प्रसिद्ध ऋषियों के कामधेनु-विषयक वैमनस्य के अवसर पर पह्लवों की उत्पत्ति हुयी थी (आदि काण्ड, LIV, 1018-22)। कुरुक्षेत्र के युद्ध में वे कुरुओं की ओर से लड़े थे। महाकाव्य

एवं पौराणिक परंपरा के अनुसार वे हैहय-तालजंघों के संश्रित राष्ट्र थे। शकों, यवनों एवं अन्य जातियों के साथ वे राजा सगर द्वारा पराजित किये गये थे। जूनागढ़ के शिलालेख में शिविसक नामक एक पह्लव अधिकारी का उल्लेख प्राप्त होता है और नासिक गुहालेख में गौतमीपुत्र शातकर्णि को पह्लवों, शकों एवं सभी यवनों को निर्मूल करने का श्रेय दिया गया है। विस्तृत विवरण के लिए द्रष्टव्य बि० च० लाहा कृत ट्राइब्स इन ऐंश्येंट इंडिया, पृ० 6 और आगे; लाहा, इंडोलॉजिकल स्टडीज़, भाग, I, पृ० 39-40।

पहलादपुर—पहलादपुर पाषाण-स्तंभ लेख में इस ग्राम का वर्णन है, जो गंगा के दाहिने तट के समीप गाज़ीपुर जिले में धानापुर से 3 मील दक्षिण-पूर्व में स्थित है।

पहोवा—हरयाणा के करनाल जिले की कैथल तहसील में पुण्य सलिला सरस्वती के तट पर थानेश्वर से 16 मील पश्चिम में स्थित यह एक प्राचीन नगर एवं तीर्थस्थान है। यह कुरुक्षेत्र में स्थित है (लाहा, होली प्लेसेज़ ऑव इंडिया, पृ० 26)।

पलेठी—गंगा और अलकनंदा के संगम पर स्थित देवप्रयाग से कोई 12 मील दूर पश्चिमोत्तर में पट्टीखास की गहरी घाटी में स्थित यह एक छोटा सा ग्राम है। यहाँ पर प्राचीन मंदिरों के अवशेष प्राप्त होते हैं (द्रष्टव्य, सिद्धभारती, भाग II, पृ० 273 और आगे)।

पाली—गोरखपुर जिले की बाँसगाँव तहसील के धुरियापार परगना में स्थित यह एक गाँव है जहाँ से गोविंद के दानपत्र मिले थे (एपि० इं०, V. 113 और आगे)।

पंचालदेश—इसमें बरेली, बदायूँ, फर्रुखाबाद, रुहेलखंड और मध्यवर्ती दोआब के निकटवर्ती जिले संमिलित थे। यह पूर्व में गोमती एवं दक्षिण में चंबल नदी से परिवृत्त प्रतीत होती है। यह प्रदेश हिमालय से चंबल नदी तक फैला हुआ था (कनिंघम, ऐंश्येंट ज्यॉग्रफी, पृ० 360)। उत्तरवैदिक संहिताओं एवं ब्राह्मणों में प्रायः पांचालों का वर्णन किया गया है (काठकसंहिता, XXX. 2; वाजसनेयि संहिता, XI. 3, 3; गोपथ ब्राह्मण, I, 2. 9; शतपथ-ब्राह्मण. XIII. 5. 4. 7; तैत्तिरीय ब्रा० I. 8. 4. 1. 2)। उपनिषदों एवं परवर्ती ग्रंथों में पंचाल के ब्राह्मण दार्शनिक एवं भाषाविज्ञान संबंधी परिसंवादों में भाग लेते हुए बतलाये गये हैं (बृहदारण्यक उपनिषद्, VI. 1, 1; छान्दोग्य उपनिषद्, V. 3. 1; I, 8, 12; सांख्यायन श्रौतसूत्र, XII. 13-6, आदि)। वैदिक साहित्य में इस राज्य के राजाओं का उल्लेख है (ऐतरेय ब्राह्मण, VIII. 23;

शतपथ ब्राह्मण, सें० बु० ई०, जिल्द, XLIV, पृ० 400)। पाणिनि ने अपनी अष्टाध्यायी में पाञ्चालक का उल्लेख किया है। (7, 3, 13)। पतंजलि ने भी अपने महाभाष्य में (1, 2, 2, पृ० 512; 1, 1, 1 पृ० 37; 1, 4, 1, पृ० 634) एक जनपद के रूप में इसका उल्लेख किया है।

पंचाल नाम की व्युत्पत्ति एवं पाँच की संख्या से इसके संभावित संबंध की समस्या से पुराणकार अभिभूत थे (भागवत, 9-21; विष्णु, 19 वाँ अध्याय, अंक 4; वायु० पृ०99; अग्नि पुराण, 278)। महाभारत में यहाँ के निवासियों के बारे में अनेक कहानियाँ बतलायी गयी हैं (आदि पर्व, अध्याय, 94, 104; द्रोणपर्व, अध्याय, 22, पृ० 1012-1013; उद्योग पर्व, अध्याय, 156-157; 172-194,198; भीष्म पर्व, अध्याय,19, पृ० 830; कर्ण पर्व, अध्याय, 6, 1169; वन पर्व, अध्याय, 253, 513; विराटपर्व, 4, 570)।

पंचाल देश बुद्ध के जीवनकाल तक उत्तरी भारत का एक महान् एवं शक्तिशाली जनपद रहा (अंगुत्तर, I, 213; IV. 252, 256, 260; जातक (कावेल), VI. 202)। पंचाल एवं यहाँ के राजकुमारों का वर्णन जैन साहित्य में भी हुआ है (उत्तराध्ययन सूत्र, जैनसूत्र, II, पृ० 60, 61, 87 आदि)। अशोक के पश्चात यूनानियों ने पंचाल पर आक्रमण किया था।

पंचाल महाजनपद उत्तरी एवं दक्षिणी पंचाल में विभक्त था, जिनकी राजधानियाँ क्रमशः अहिच्छत्र एवं काम्पिल्य थीं। उत्तरी पंचाल में गंगा के पूर्व तथा अवध के पश्चिमोत्तर में स्थित उत्तरप्रदेश के जिले तथा दक्षिण पंचाल में कुरु तथा शूरसेनों के पूर्व तथा दक्षिण-पूर्व में स्थित गंगा-यमुना के मध्यवर्ती क्षेत्र संमिलित थे (रैप्सन, ऐंश्येंट इंडिया, पृ० 167)।

हर्षवर्धन की मृत्यु के पश्चात् पंचाल जनपद के दुर्दिन आ गये थे किंतु लगभग आठवीं शती ई० के पश्चात् भोज एवं उसके पुत्र के शासनांतर्गत बिहार से सिंध तक फैला हुआ यह उत्तरी भारत की एक प्रमुख शक्ति बन गया था। बारहवीं शती ई० में गाहडवाल वंश के अधीन यह एक बार पुनः महत्वपूर्ण हो गया था। विस्तृत विवरण के लिए द्रष्टव्य, लाहा, पंचालाज ऐण्ड देयर कैपिटल अहिच्छत्र, (मे० आर्के० स० इं०, सं० 67)।

परौली—यह गाँव कानपुर जिले में भीतारगाँव से दो मील दूर उत्तर में स्थित है, जहाँ पर एक जीर्ण मंदिर है (आर्के० स० इं०, एनुवल रिपोर्ट, 1908, 9, पृ० 17 और आगे)।

परीणह—पंचविंश ब्राह्मण (XXV. 13, 1), तैत्तिरीय आरण्यक

V. 1, 1), लाट्यायान् श्रौतसूत्र (X. 19, 1), कात्यायन श्रौतसूत्र (XXIV. 6, 34), और सांख्यायन श्रौतसूत्र (XIII. 29, 32) में वर्णित यह कुरुक्षेत्र में स्थित एक स्थान का नाम है।

परुष्णी—यह एक वैदिक नदी है (ऋग्वेद, X. 75; VII, 18; VIII. 63, 15)। इसे रावी से समीकृत किया गया है।

पटल—यह सिंधु नदी के डेल्टा में स्थित है। स्पष्टतः यह अवर सिंधु नदी से सिंचित प्रदेश की राजधानी थी जिसके कारण इसका यूनानी अभिधान पैटेलीन (Patalene) था (जे० पी०एच० फोगेल, नोट्स ऑन टॉलेमी, बु० स्कू० ओ० अ० स्ट०, XIV, भाग I, पृ० 84; द्रष्टव्य प्रस्थल)।

पारिरेय—(पालि, पारिलेय्यक; संस्कृत, परेरक)—पारिलेय्यक नामक हाथी से संरक्षित यह एक वन्य क्षेत्र का नाम था। कौशाम्बी में भिक्षुओं के मध्य हुए एक विवाद को न निपटा सकने के कारण बुद्ध यहाँ रहने के लिए आये थे और यहाँ पर वर्षा-ऋतु में पारिलेय्यक हाथी और एक बंदर द्वारा अनुसेवित हो कर रहे थे। कौशाम्बी से इस वन-क्षेत्र का पथ एक गाँव से हो कर गुजरता था। पारिलेय्यक वन खण्ड का चित्र भरहुत में जातक, लेपपत्र संख्या 8 में अंकित हुआ है (बरुआ ऐंड सिनहा, भरहुत इंस्क्रिप्शंस, पृ० 62)। इसकी स्थिति अज्ञात है। संभवतः यह जंगल कौशाम्बी से अधिक दूर नहीं था (तु० संयुत्त, III, 94-95; विनय महावग्ग X. 4, 6)।

पारिवात—यह पारिपात्र पर्वत ही है। इसका उल्लेख ल्यूडर्स तालिका, संख्या, 1123 में किया गया है। पारिपात्र या पारियात्र का सर्वप्रथम उल्लेख बौधायन धर्मसूत्र (1, 1, 25) में आर्यावर्त्त की दक्षिणी सीमा के रूप में किया गया है। स्कंद पुराण में भी इसे भारतवर्ष के केंद्र कुमारी खण्ड की दूरतम सीमा के रूप में बतलाया गया है। इस पर्वत के आधार पर ही इस क्षेत्र का नाम पड़ा है जिससे यह संबद्ध था। चीनी तीर्थयात्री युवान-च्वाङ् ने इसे पो-ली-ये-ता-लो कहा है (Po-li-ye-ta-lo) जिसका शासक कोई वैश्य राजा था। पार्जिटर ने इसे विंध्य पर्वतमाला के उस भाग से समीकृत किया है, जो भोपाल के पश्चिम में अरावली पर्वत के साथ स्थित है (द्रष्टव्य, पार्जिटर, मार्कण्डेय पुराण, पृ० 286)। कुछ नदियाँ यथा, वेदस्मृति वेदवती, सिंधु, वेण्वा, सदानीरा, मही, चर्मण्वती, वेत्रवती, वेदिशा, सिप्रा एवं अवर्णी इस पर्वत से निकलती हैं (तु० मार्कण्डेय पुराण, 57, 19-20)। पारियात्र विंध्य पर्वतमाला का पश्चिमी भाग है, जो चंबल के उद्गमस्थल से लेकर खंभात की खाड़ी तक फैला हुआ है। यह विंध्य

पर्वतमाला का वह भाग है जहाँ से चंबल और बेतवा नदियाँ निकलती हैं (भंडारकर, हिस्ट्री आॅव द दक्कन, खंड, 3)।

पाटन—यह काठमांडू से तीन मील दक्षिण में स्थित है। नेपाल पर गुरखा विजय के पूर्व यह एक अलग राज्य की दीर्घकाल तक राजधानी रही है।

पावा—गोरखपुर जिले के पूर्व में छोटी गंडक नदी के तट पर स्थित पावा, पापा या पावापुरी कसया ही है। कनिंघम ने अति प्राचीन स्थल पावा को पड़रौना से समीकृत किया है (आर्क० स० रि०, I, 74; XVI, 118)। यह जैनियों का एक तीर्थस्थान समझा जाता है। पावा नरेश षष्ठिपाल के प्रासाद में रहते समय महावीर ने अपने पार्थिव शरीर को छोड़ा था। यह वही नगर था जहाँ बुद्ध चुण्ड लोहार के घर पर अपना अंतिम भोजन करके पेचिश के शिकार हुए थे। पावा से कुशीनारा आते समय महाकस्सप ने बुद्ध के महापरिनिर्वाण के विषय में सुना था। महापरिनिर्वाण-सूत्र के फा-ह्यान संस्करण के अनुसार वह राजगृह के दक्षिण में दक्षिण-गिरि में और महासंघिक विनय के अनुसार गृध्रकूट पर थे (नार्दर्न इंडिया एकार्डिंग टु द शु इ-चिग-चु, ले० एल० पीटेख, पृ० 27)। इस पुर में मल्ल जन रहा करते थे जो निष्ठापूर्वक महावीर एवं बुद्ध के निष्ठावान उपासक थे। जहाँ पर महावीर ने प्राणत्याग किया था, वहाँ पर चार भव्य जैन मंदिर बनवाये गये थे।

पिलक्खगुहा—यह गुहा घोषिताराम और कौशाम्बी के समीप कहीं पर स्थित थी। यह एक झील या सरोवर की भाँति प्रतीत होती थी क्योंकि सचमुच एक गड्ढा होने के कारण इसमें वर्षा का जल जमा हो जाता था। ग्रीष्म ॠतु में यह सूख जाती थी। यहाँ पर संदक नामक एक परिब्राजक आया था जिसे आनंद ने बौद्ध धर्म में दीक्षित किया था (मज्झिम, I, 513 और आगे)।

पिलोशन—इसकी सीमाएँ लगभग यमुना-तट पर बुलंदशहर से फिरोजाबाद तक तथा गंगातट पर कादिरगंज तक फैली हुयी बतलायी जा सकती हैं। इसकी परिधि 333 मील थी (कनिंघम, एं० ज्या० इं०, पृ० 423)।

पिम्प्रामा—यह अद्रैस्टाई (Adraistai) का गढ़ था जो रावी (Hydraotis) के पूर्वी तट पर स्थित था। कुछ विद्वानों ने अद्रिजों को यूनानियों द्वारा वर्णित अद्रैस्टाई (Adraistai) से समीकृत किया है। अद्रैस्टाई अथवा अधृष्ट सिकंदर की सेना से पराजित हुए बतलाये जाते हैं (कै० हि० इं० I, पृ० 371 और पाद टिप्पणी, सं० 2)।

पिप्फलिवन—यह मौर्यों का देश था (दीघ, II, 167)। एक विद्वान् के

अनुसार वस्ती जिले में बिर्दपुर (भूतपूर्व रियासत) के पिपरावा गाँव के नाम में इसके नाम की प्रतिध्वनि प्राप्त होती है।

पिपरावा—पिपरावा में बुद्ध के अवशेषों का समर्पण उत्तर का सर्वप्राचीन प्रलेख माना जाता था (इं० ऐं०, 1907, पृ० 117-24)। यह बस्ती जिले के उत्तर में नेपाल के सीमांत पर स्थित है (आर्क्यॉलॉजिकल सर्वे, भाग XXVI. 1897)। फ्लीट के अनुसार पिपरावा ग्राम ही (बिर्दपुर तालुका) कपिलवस्तु है जहाँ से पिपरावा-कलश प्राप्त हुआ था (ज० रा० ए० सो०, 1906, पृ० 180; कनिंघम, एं० ज्यॉ० इं०, पृ० 711-12)। रिज डेविड्स ने इसे एक नया नगर माना हैं, जिसे विडूडभ ने प्राचीन नगर के नष्ट हो जाने के वाद बनवाया था (बि० च० लाहा, ज्यॉग्रेफी ऑव अर्ली बुद्धिज्म, पृ० 29)।

पोतोडा—इसे हिंडोल (रियासत) में पोटल से समीकृत किया जा सकता है (एपि० इं०, XXVI, भाग II, पृ० 78)।

प्रभास—इलाहाबाद से 32 मील दक्षिण-पश्चिम में, मंझनपुर तहसील में यमुना के उत्तरी तट पर आधुनिक पभोसा नामक ग्राम पहाड़ी पर स्थित है, जिसे प्राचीन प्रभास से समीकृत किया जाता है। प्रभास पहाड़ी, जो गंगा-यमुना के मध्य अन्तर्वेदी में अकेली पहाड़ी है, प्राचीन कौशाम्बी या कोसमखिराज के महा-दुर्ग से तीन मील दूर पश्चिमोत्तर में स्थित है, जहाँ से कुछ अभिलेख भी प्राप्त हुये थे (एपि० इं०, II, 240)।

प्रस्थल—(पटल) इसे आधुनिक बाह्मनाबाद में या इसके समीप स्थित माना गया है जो एक बहुत प्राचीन स्थान है और जहाँ पर व्यापक प्रागैतिहासिक अवशेष विकीर्ण है (ज० बां० ब्रां० रा० ए० सो०, जनवरी, 1856)। यूनानियों द्वारा अभिहित पैटेलीन नामक छोटे राज्य को सामान्यतया सिंधु नदी के डेल्टा से समीकृत किया जाता है। संभवतः इसका नामकरण इसकी राजधानी पाटल के आधार पर हुआ था। सिकंदर के आक्रमण के बहुत बाद इस पर बाख्त्री यवनों का अधिकार हो गया (हैमिल्टन और फैल्कनर, जिल्द, II, 252-53) और कालांतर में इंडोग्रीक नरेशों के हाथ से छिन कर इस पर शक या इंडो-सीथियन राजाओं का अधिकार हो गया था। टॉलेमी नामक भूगोलवेत्ता के अनुसार, दूसरी शती ई० के मध्य यह भारत-शक सत्ता का एक प्रधान स्थान था। विस्तृत विवरण के लिए द्रष्टव्य, बि० च० लाहा, इंडोलॉजिकल स्टडीज़, भाग, I, 37 और आगे।

प्रयाग—रामायण (अयोध्याकाण्ड, सर्ग 54, श्लोक, 2-5) में कहा गया है कि राम, लक्ष्मण एवं सीता ने, जब वे अयोध्या के पश्चात् गंगा-यमुना के संगम पर

आये, इस पवित्र नगर से धुआँ उठते हुए देखा था। महाभारत (85, 79-83) के अनुसार संपूर्ण संसार का यह पवित्रतम स्थान है। हरिवंश (अध्याय, XXVI.9 के अनुसार महान् ऋषियों ने इसकी बड़ी प्रशंसा की है। योगिनीतंत्र (2.2.119) में इसका उल्लेख किया गया है। कूर्म पुराण (पूर्वभाग, 30. 45-48) एवं पद्म पुराण (उत्तरखण्ड, श्लोक, 35-38) में भी इस प्रसिद्ध तीर्थ स्थान का वर्णन प्राप्त है। भीटा से प्राप्त कुछ अभिलेखों में निम्नलिखित राजाओं का उल्लेख है जो प्रयाग से संबंधित थे :

1. महाराज गौतमीपुत्र श्री शिवमघ
2. राजन् वाशिष्ठीपुत्र भीमसेन, द्वितीय या तृतीय शताब्दी ई०
3. महाराज गौतमीपुत्र वृषध्वज, तृतीय या चतुर्थ शती ई० (रा० कु० मुकर्जी, गुप्त एंपायर, पृ० 13)।

आदित्यसेन के अफसढ़ शिलालेख (फ्लीट, संख्या 42) से ज्ञात होता है कि कुमारगुप्त ने, जिसने मौखरि नरेश ईशान्वर्मन पर विजय प्राप्त की थी, प्रयाग में धार्मिक आत्मोसर्ग किया था (दे० रा० भंडारकर वाल्यूम, पृ० 180-81)।

प्रयाग (चीनी, पो-लो-ये-किया) आधुनिक इलाहाबाद है। भागवत पुराण (VII. 14, 30; X· 79, 10) के अनुसार यह एक क्षेत्र है। प्राचीन बौद्ध ग्रंथों में पयाग या प्रयाग गंगा तट पर स्थित एक तीर्थ या घाट बतलाया गया है (मज्झिम, I, 39)। महापनाद द्वारा अधिकृत प्रासाद यहाँ पर जल-निमग्न हो गया था (पपंचसूदनी, I, पृ० 178)। प्रयाग में गंगा, यमुना एवं सरस्वती नामक नदियों का संगम है। हिंदू इस संगम को बहुत पुनीत मानते हैं। सौर पुराण (अध्याय, V. 67, श्लोक, 16) में गंगा-यमुना के संगम का उल्लेख है (तु० रामायण अयोध्याकाण्ड, 54 वाँ सर्ग, श्लोक 2-5)। कालिदास ने अपने रघुवंश (XIII. 54-57 में इस संगम का उल्लेख किया है। महाभारत (अध्याय, 82, 125-128) के अनुसार सरस्वती संगम सार्वलौकिक रूप से पुनीत माना गया है। इस संगम पर स्नान करने से मनुष्य अत्यधिक पुण्यार्जन करता है। राम, लक्ष्मण एवं सीता ने गंगा-यमुना के संगम पर जल के दो प्रकार के रंग देखे थे (रामायण, अयोध्याकाण्ड, सर्ग, 54, श्लोक, 6)।

चीनी यात्री युवान-च्वाङ् के, समय में इस प्रदेश की परिधि 5,000 ली और इसकी राजधानी की 20 ली से अधिक थी। उसने इस प्रदेश, यहाँ की जलवायु तथा निवासियों की प्रसंशा की है। उसके अनुसार यहाँ पर केवल दो बौद्ध अधिष्ठान एवं अनेक देव मंदिर थे। यहाँ के अधिकांश निवासी अ-बौद्ध थे (वाटर्स, ऑन युवान-च्वाङ्, I, 361)। हरे-भरे शाक-पात एवं फलों के वृक्ष

यहाँ पर प्रचुर मात्रा में थे। यहाँ की जलवायु गरम एवं सह्य थी। यहाँ के निवासी मृदुल एवं विनम्र प्रवृत्ति के थे। वे विद्यानुरक्त थे (बील, बुद्धिस्ट रिकार्ड्स ऑव द वेस्टर्न वर्ल्ड, I, 230)। ब्रह्म पुराण (अध्याय, 10-12) के अनुसार कुरु, दुष्यंत एवं भरत नामक तीन राजाओं ने यहाँ शासन किया था। विक्रमोर्वशी का नायक पुरुरवा यहाँ का शासक बतलाया गया है। प्रयाग धंग के अधिकार में था, जिसके बारे में कहा जाता है कि उसने जाह्नवी एवं कालिंदी के जल में अपना शरीर परित्याग करके परमगति प्राप्त की थी (एपि० इं०, I, 139, 146)। कमौली दानपत्र (1172 ई०) के अनुसार गाहडवाल-नरेश जयचंद्र ने प्रयाग में वेणी में (एपि० इं०, IV. पृ० 122) स्नान किया था जिसके (प्रयाग के) स्थान पर हिंदू शासन के उत्तरार्ध काल में प्रतिष्ठानपुर का उत्थान हुआ (नेविल, इलाहाबाद डिस्ट्रिक्ट गजेटियर, पृ० 195)।

पुष्पवती—यह काशी राज्य की राजधानी, वाराणसी का एक नाम था (भंडारकर, कार्माइकेल लेक्चर्स, 1918, पृ० 50–51)। चंदकुमार पुष्पवती के एकराज का पुत्र था। वह मुक्त हृदय से दान देता था और वह कोई वस्तु पहले भिखारी को दिये बिना नहीं खाता था (चरिया-पिटक, संपादक, बि० च० लाहा, पृ० 7)।

पूर्वाराम (पुब्बाराम)—जेतवन के उत्तरपूर्व में श्रावस्ती के समीप स्थित यह एक बौद्ध-विहार था, जिसका निर्माण मिगार नामक श्रेष्ठि की वधू विशाखा ने करवाया था। जिन परिस्थितियों के कारण इस विहार का निर्माण करवाया गया था, उनका वर्णन धम्मपद भाष्य में किया गया है (धम्मपद कामेंट्री, जिल्द, I, 384-420)। एक दिन विशाखा ने जेतवन विहार से घर लौट कर देखा कि वह अपने मूल्यवान हार के विषय में सब कुछ भूल चुकी है जिसे उसने वहाँ उतारा था और वहीं विहार में छोड़ आयी थी। उसे पुनः प्राप्त कर लेने पर उसने इसे पहनने से इंकार किया और उसे महँगे दामों में बेच दिया। इस धन का उपयोग उसने एक स्थान खरीद कर एक विहार बनवाने में किया और इसे उसने संघ को समर्पित कर दिया। इस बिहार के निर्माण में लकड़ी एवं पत्थर का प्रयोग किया गया था जो पहली एवं दूसरी मंजिलों में असंख्य कमरों से युक्त एक भव्य दुमंजिली इमारत थी (धम्मपद कमेंट्री, I, 414)। यह बिहार पुब्बाराम-मिगारमातु-पासाद नाम से विश्रुत थी। बुद्ध ने मिगारमाता के प्रासाद में रहते समय अग्गण्ण-सुत्तांत का प्रवचन दिया था (दीघ, III, पृ० 80)। विस्तृत विवरण के लिए देखिए, बि० च० लाहा, श्रावस्ती इन इंडियन लिटरेचर, (मे० आर्क० स० इं० सं०, 50)।

पुष्कलावती—(पुष्करावती, एरियन की प्युकेलाओटीज (Peukelaotis) तथा डायोनिसस पेरीगेटीज की प्युकेली (Peukalei) —सिन्धु नदी के पश्चिम में स्थित यह गंधार की एक प्राचीन राजधानी थी। इसे स्वात एवं काबुल-नदी के संगम से थोड़ा पहले स्थित आधुनिक चारसद्दा (चारपदा)[1] से समीकृत किया जाता है (वा० श० अग्रवाल, ज्यॉग्रेफिकल डेटा इन पाणिनीज अष्टाध्यायी, ज० उ० प्र० हि० सो०, जिल्द, XVI, भाग I, पृ० 18)। कुछ अन्य विद्वानों के अनुसार, प्रकारांतर से पुष्कर नाम से विख्यात इस नगर को स्वात नदी के तट पर पेशावर से 17 मील पूर्वोत्तर में स्थित आधुनिक प्रांग एवं चारसद्दा से समीकृत किया जा सकता है (शाफ, द पेरिप्लस ऑव द इरिथ्रियन सी, पृ० 183-184, ज० ए० सो० बं०, 1889, iii; कनिंघम, एं० ज्या० इं०, 1924, 57 और आगे)। बताया जाता है कि उसकी स्थापना भरत के पुत्र एवं राम के भतीजे पुष्कर ने की थी (विष्णु पुराण, विल्सन संस्करण, जिल्द, IV, अध्याय, 4)। सिकंदर के अभियान के समय (326 ई० पू०) यह भारतीय राजा हस्ति (यूनानी एस्टीज-Astes) की राजधानी थी। टॉलेमी ने इसे प्रोक्लाइस (Proklais) कहा है जो एक विशाल एवं जनाकीर्ण नगर था। मायुस (लगभग 75 ई० पू०) के शासनकाल में यहाँ पर शकों का शासन हो गया (द्रष्टव्य, कैंब्रिज हिस्ट्री ऑव इंडिया, भाग, I, 560; ब्राउन, क्वायंस ऑव इंडिया, पृ० 24)। तारानाथ के अनुसार कनिष्क का पुत्र यहाँ रहा करता था (द्रष्टव्य वि० स्मिथ, अर्ली हिस्ट्री ऑव इंडिया, चतुर्थ संस्करण, पृ० 277, पाद टिप्पणी, 1)। बृहत्संहिता में इसका उल्लेख एक नगर के रूप में हुआ है (XIV '26)। विस्तृत विवरण के लिए देखिये, बि० च० लाहा, इंडोलॉजिकल स्टडीज़, भाग, I, पृ० 14)।

रैम्य-आश्रम—यह हरद्वार (हरिद्वार) के उत्तर में थोड़ी दूर पर कुब्जाम्र में स्थित था।

रत्नवाहपुर—घर्घरा नदी द्वारा सिंचित यह कोशल में स्थित एक कस्बा था। इक्ष्वाकुवंशीय धर्मनाथ यहाँ पर राजा भानु की पत्नी, सुव्रता से उत्पन्न हुये थे। धर्मनाथ के सम्मान में यहाँ पर एक चैत्य बनवाया गया था (बि० च० लाहा, सम जैन कैनॉनिकल सूत्राज, पृ० 175)।

राधाकुण्ड—इसे आरिट भी कहा जाता है, क्योंकि श्रीकृष्ण ने बैल का रूप

---

[1] **आर्क० स० इं० रि०, II, (1871), 90, और आगे; XIX (1885), 96 और आगे; एनुअल रिपोर्ट, आर्क० स० इं०, 1902-3 (1904), पृ० 41 और आगे।**

धारण करके यहाँ पर अरिष्ट नामक एक असुर का वध किया था। कृष्ण के गोहत्या करने के कारण, उनकी सहगामिनी राधा ने उनका शरीर स्पर्श करना अस्वीकार कर दिया था और इसलिए कृष्ण ने अर्जित पापों का मार्जन करने के लिए अपने स्नानार्थ एक सरोवर खुदवाया। इस सरोवर का नाम श्यामकुंड था। राधा ने भी श्यामकुंड के बगल में राधाकुंड नामक एक सरोवर बनवाया था।

राजपुर—(को-लो-शी-पु-लो) इसे कश्मीर के दक्षिण में स्थित राजौरी से समीकृत किया गया है। राजोरी जिला उत्तर में पीरपंजल, पश्चिम में पुनाच, दक्षिण में भीमबर तथा पूर्व में रिहासी एवं अखनूर से घिरा हुआ है (कनिंघम, एं० ज्यॉ० इं०, 148-149)।

राजघाट—यह वाराणसी नगर में स्थित है जहाँ से गोविंदचंद्रदेव के दो ताम्रपत्र प्राप्त हुए थे (एपि० इं०, XXVI, भाग VI, अप्रैल, 1942, पृ० 268 और आगे)।

रामदासपुर—यह पंजाब में स्थित अमृतसर ही है जिसका नामकरण एक सिख गुरु के आधार पर किया गया था, जिसने नानक के प्रियस्थल किसी प्राकृतिक जलकुंड के समीप ही एक कुटी बनवायी थी (नं० ला० दे०, ज्यॉग्रेफ़िकल डिक्शनरी, पृ० 165)।

रामगंगा—फर्रुखाबाद एवं हरदोई के मध्य गंगा में रामगंगा नामक एक सहायक नदी मिलती है जो अल्मोड़ा के पहले कुमायूँ पर्वतमाला से निकलती है।

रामगाम—उत्तरप्रदेश के बस्ती जिले में स्थित यह रामपुर देवरिया है। यहाँ कोलियों का सन्निवेश था। बुद्धकाल में कोलिय एक गणतंत्रात्मक कुल था जिनके दो आवास थे, प्रथम रामगाम में और दूसरा देवदह में, सुमंगलविलासिनी (पृ० 260-62) में उनकी उत्पत्ति के विषय में। एक रोचक कहानी उल्लिखित है। महावस्तु (I, 352-55) के अनुसार कोलियजन कोल ऋषि के वंशज थे। कुणाल-जातक (जातक, V, 413) में कोलियों को कोलवृक्ष पर रहते हुए बतलाया गया है। इसीलिए उन्हें कोलिय कहा जाने लगा। बुद्ध ने शाक्यों एवं कोलियों में जिनमें दीर्घकाल से परस्पर विग्रह था, समझौता कराया था (थेरगाथा, V, 529; जातक, कावेल, V, पृ० 56)। शाक्य एवं कोलिय गणों ने रोहिणी नदी को एक ही बाँध से बाँधा था और वे इस नदी के जल द्वारा अपना कृषि कर्म किया करते थे (जातक, कावेल, V, 219 और आगे)। शाक्यों एवं कोलियों में इस नदी पर अधिकार विषयक विवाद उठने पर बुद्ध ने अपने शाक्यवंश में शांति पुनरस्थापित करने में सफलता प्राप्त की थी (जातक, I, 327; IV. 207)। कनिंघम ने

इसे आधुनिक रोवाई या रोहवैनी से समीकृत किया है, जो गोरखपुर में राप्ती में मिलनेवाली एक छोटी सरिता है।

रोहिणी—यह नदी शाक्यों एवं कोलिय प्रदेशों की मध्यवर्ती सीमा थी (थेरगाथा, V, 529, पृ० 56)।

सहलाटवी—वाटाटवी के अंतर्गत देखिए।

शम्भु—इस भारतीय नाम का युनानी पर्याय सैंबोस (Sambos) है। ग्रीक एवं लैटिन लेखकों के अनुसार सैंबोस मूसिकेनोस प्रदेश के समीपवर्ती पर्वतीय क्षेत्रों पर राज्य करता था। इन दो पड़ोसी राज्यों में पारस्परिक ईर्ष्या एवं शत्रुभाव के अतिरिक्त अन्य किसी प्रकार का संबंध न था। इस प्रदेश की राजधानी का नाम सिन्दिमन (Sindiman) था। इसे सिंधु नदी के तट पर स्थित सेहवान नामक नगर से समीकृत किया गया है (मैक्रिंडिल, इनवेजन ऑव अलेक्जेंडर, पृ० 404)। सैंबोस ने सिकंदर को आत्मसमर्पण किया था।

संकाश्य (पालि, संकस)—इसे उत्तर प्रदेश के फर्रुखाबाद जिले में स्थित आधुनिक संकिस नामक ग्राम से समीकृत किया गया है जो कुडारकोट से पश्चिम उत्तर की ओर 36 मील दूर, इटावा जिले के आजमनगर परगना में स्थित अलीगंज से दक्षिण, दक्षिणपूर्व की ओर 11 मील दूर और इटावा से 40 मील दूर उत्तर, **उत्तर-पूर्व की ओर स्थिति** है। कुछ विद्वानों के अनुसार संकस्स, संकिस्सा या संकिसा बसंतपुर ही है, जो इक्षुमती नदी के उत्तरी तट पर स्थित है, जिसे अब अतरंजी और कन्नौज के बीच प्रवाहित होनेवाली कालीनदी कहते हैं जो फतेहगढ़ से 23 मील पश्चिम में इटावा जिले में तथा कन्नौज से 45 मील उत्तर-पश्चिम में स्थित है। पतंजलि के महाभाष्य (भाग, I, पृ० 455) के अनुसार यह गवीधुमत से चार योजन दूर है (2, 3, 21; द्रष्टव्य 'ए स्टोन इंस्क्रिप्शंस फ़ाम कुडारकोट, एपि० इं०, I, 179-180)। पुरातत्वीय अवशेषों के लिए हीरानंद शास्त्री द्वारा संकिसा में किये गये उत्खनन के विवरण द्रष्टव्य हैं (ज० उ० प्र० हि० सो०, III, 1927, पृ० 99-118)।

सप्तसिन्धु—यह पंजाब है, जहाँ पर भारत में आने के पश्चात् प्राचीन आर्य सबसे पहले बसे थे (ऋग्वेद, VIII · 24, 27)। पतंजलि के महाभाष्य (I. 1. 1 पृ० 17) में इसका उल्लेख है। सात सिन्धु अघोलिखित हैं :

इरावती, चंद्रभागा, वितस्ता, विपाशा, शतद्रु, सिन्धु और सरस्वती।

सरभू (सरयू)—रामायण (आदिकाण्ड, 14 वाँ सर्ग, श्लोक, 1-2) में कहा गया है कि राजा दशरथ ने इस नदी के तट पर अश्वमेध यज्ञ संपादित किया था। ऋष्यश्रृंग के नेतृत्व में अनेक श्रेष्ठ ब्राह्मणों ने इसमें भाग लिया था। राम

और लक्ष्मण, सरयू तथा गंगा के संगम पर गये थे (रामायण, आदि काण्ड, 23 वाँ सर्ग, श्लोक, 5)। महाभारत (84.70) में इस नदी का उल्लेख सरयू नाम से है। सरयू का वर्णन पाणिनि की अष्टाध्यायी (VI, 4. 174) में किया गया है। योगिनीतंत्र (2.5) में इसका उल्लेख है। कालिका पुराण (अध्याय, 24. 139) में एक पवित्र नदी के रूप में सरयू का वर्णन मिलता है। पद्म पुराण (उत्तर-खण्ड, श्लोक, 35-38) में भी इसका वर्णन किया गया है। कालिदास ने अपने रघुवंश (VIII. 95; IX. 20; XIII. 60-63; XIX. 40) में इसका वर्णन किया है। यह नदी हिमालय से निकलती है (मिलिन्दपन्ह, पृ० 114)। ऋग्वेद (IV. 30,18; X.64, 9; V. 53, 9) में इसका वर्णन प्राप्त होता है। तुर्वसु और यदु जिन्होंने इस नदी को पार किया था, चित्ररथ एवं अर्ण को पराजित किया था। यह गंगा की सहायक नदी घाघरा या गोगरा ही है जिसके तट पर अयोध्या नगरी स्थित थी। टॉलेमी द्वारा वर्णित सैरबोस (Sarabos) यही है। यह प्राचीन बौद्ध-ग्रंथों में वर्णित पाँच महानदियों में से एक है। यह नदी बिहार के छपरा जिले में गंगा में मिलती है। बहराइच जिले के उत्तरपश्चिम कोने पर इसमें उत्तर पूर्व से एक उपनदी मिलती है, जो सरयू के नाम से प्रवाहित होती है। अयोध्या की प्राचीन नगरी इस नदी के तट पर स्थित थी, जिसका उल्लेख भागवत पुराण (V. 19, 18; IX. 8. 17; X. 79, 9) में प्रायः किया गया है। रामायण (उत्तरकाण्ड, 123 वाँ सर्ग, श्लोक, 1) के अनुसार सरयू नदी अयोध्या नगरी से आधे योजन दूर पर प्रवाहित होती है। विस्तृत विवरण के लिए द्रष्टव्य, बि० च० लाहा, रिवर्स ऑव इंडिया, पृ० 22.

सरस्वती—सरस्वती एवं दृषद्वती उत्तरी भारत की दो ऐतिहासिक नदियाँ हैं जो सिंधु नदी समूह से असंपृक्त, स्वतंत्र रूप से प्रवाहित होती है। मनु के ब्रह्मावर्त क्षेत्र को इन्हीं पुनीत सरिताओं के मध्य स्थित बतलाया गया है। यह हिमाचल प्रदेश में शिमला और सिरमौर क्षेत्रों से हो कर एक उभार बनाती हुयी, दक्षिण की ओर प्रवाहित होती है। मनु ने उस स्थान को विनशन की संज्ञा दी है, जहाँ से यह अदृश्य होती है[1]। तैत्तिरीय संहिता (VII. 2, 1, 4), पंचविंश ब्राह्मण (XXV. 10, 1), कौषीतकि ब्राह्मण (XII. 2,3), शतपथ ब्राह्मण (I, 4. 1. 14) तथा ऐतरेय ब्राह्मण (II. 19. 1. 2) में इस नदी का वर्णन किया गया है। ऋग्वेद में (I, 89,3; 164,19; II. 41, 16; 30, 8; 32, 8; III. 54, 13; V. 42, 12; 43, 11; 46, 2; VI. 49, 7; 50-12; 52,

[1] तु०, महाभारत, 82.3; प० पुराण, अध्याय, 21.

6; VII. 9, 5; 36, 6; 39, 5; X. 17, 7; 30, 12; 131. 5; 184, 2) भी में इसका उल्लेख आया है। पद्म पुराण (सृष्टिखण्ड, अध्याय, 32, श्लोक, 105) में गंगोद्भेदतीर्थ का वर्णन है, जहाँ यह नदी गंगा में मिलती है। कात्यायन (XII. 3. 20; XXIV. 6,22), लाट्यायन (X. 15, 1; 18, 13, 19, 4), आश्वलायन (XII. 6. 2. 3) तथा सांख्यायन (XIII. 29) श्रौतसूत्रों में इस नदी के तट पर किये गये यज्ञों की बड़ी महत्ता और पवित्रता का उल्लेख किया गया है। कालिदास ने अपने रघुवंश (III. 9) में इसका वर्णन किया है। योगिनीतंत्र (2.3; 2.5; 2.6) में भी इस नदी का वर्णन प्राप्त होता है। सिद्धान्तशिरोमणि में ठीक रूप से सरस्वती का वर्णन कहीं पर दृष्टिगोचर एवं कहीं पर अदृश्य रहने वाली नदी के रूप में किया गया है। संप्रति अस्तित्वशीला यह नदी शतद्रु एवं यमुना के बीच प्रवाहित होती है। वैदिक आर्य इसे एक ओजवती नदी के रूप में जानते थे जो समुद्र में मिलती थी (मैक्समूलर, ऋग्वेद संहिता, पृ० 46)। यह नदी हिमालय से निकलती थी। हिमालय पर्वतमाला में जिसे शिवालिक कहा जाता है यह सिरमौर पहाड़ियों से निकलती है और अंबाला में आद-बदरी में यह मैदान में आती है। हिंदू इसे पवित्र नदी मानते हैं। महाभारत के अनुसार (83, 151; 84, 66) लोग इस पुण्यसलिला के तट पर पितरों को पिण्डदान दिया करते थे। इस नदी के तट पर एक वन स्थित था जिसे अम्बिकावन कहा जाता था (भागवत पुराण, X. 34, 1-18) और जो अम्बिका के कारण पवित्र माना जाता था।

सर्द (सर्दी)—यह पवित्र स्थान किशनगंगा के दाहिने तट पर काश्मीर में कामरज के निकट, मधुमती के संगम के समीप स्थित है। शाण्डिल्य ऋषि ने यहाँ पर तपस्या की थी। कश्मीर-नरेश ललितादित्य ने जब से किसी गौड़ नरेश की हत्या कर दी थी, तब बंगालियों ने इस मंदिर का दर्शन करने के बहाने कश्मीर में प्रवेश किया था और परिहासकेशव की प्रतिमा के भ्रम में विष्णु की प्रतिमा नष्ट कर दी थी। यहाँ तक कि सुविख्यात ऋषि शंकराचार्य भी इस मंदिर में उस समय तक नहीं घुसने पाये थे, जब तक कि उन्होंने उनसे पूछे गये प्रश्नों का उत्तर नहीं दिया था।

शतद्रु—गंगा की सहायक, यह आधुनिक सतलज है। ऋग्वेद में (III. 33. 1; X. 75. 5) इस नदी का वर्णन पंजाब की सबसे पूर्वी नदी के रूप में किया गया है। इसका वर्णन यास्क के निरुक्त (IX. 26) में भी हुआ है। भागवत पुराण में (V. 19, 18) इसका एक नदी के रूप में उल्लेख है। एरियन के समय में यह नदी स्वतंत्र रूप से कच्छ की खाड़ी में गिरती थी (इंपीरियल

गजेटियर ऑव इंडिया, 23, 179)। हस्तिनापुर-नरेश सुबाहु के पुत्र राजकुमार सुधनु की पत्नी, किन्नरी मनोहरा ने हिमालय जाते समय यह नदी पार की थी और तब कैलास पर्वत की ओर बढ़ी थी (वि० च० लाहा, ए स्टडी ऑव द महावस्तु, पृ० 118)। शतद्रु, टॉलेमी द्वारा वर्णित जरड्रोस (Zardros) और प्लिनी द्वारा वर्णित हेसीड्रस (Hesydrus) है। यह एक पारे-हिमालय नदी- है, क्योंकि इसकी द्रोणी मुख्यतः हिमालय के उत्तर में है। इस नदी का स्रोत मानसरोवर की पश्चिमी झील के पश्चिमी क्षेत्र में बतलाया जाता है। इस क्षेत्र से कामेतपर्वत के कुछ आगे तक, जहाँ से यह थोड़ा दक्षिण-पश्चिम की ओर मुड़ जाती है, इसका प्रवाह पश्चिमाभिमुख है। प्राचीनकाल में सिंधु नदी के परिरोध तक इसका स्वतंत्र प्रवाह था (पार्जिटर, मार्कण्डेय पुराण, पृ० 291, टिप्पणियाँ)। सतलज और ब्यास का संयुक्त प्रवाह घग्घर नाम से विश्रुत है। शतद्रु का उल्लेख महाभारत में भी हुआ है (I, 193.10)। विस्तृत विवरण के लिए, द्रष्टव्य रिवर्स ऑव इंडिया, पृ० 114।

शौरीपुर—जैन सूत्रों में वर्णित मथुरा का यह एक अन्य नाम था उत्तराध्ययन, सै० बु० ई०, XLV, पृ० 112; कल्पसूत्र, सै० बु० ई०, XXII, पृ० 27 6)।

सागल—सागल या शाकल जिसे टॉलेमी ने यूथेडेमिया भी कहा है, मद्रों की राजधानी थी (महाभारत, II, 32, 14)। इसे अब भी मद्रदेश कहा जाता है। कनिंघम ने इवे रावी नदी के पश्चिम में स्थित संगलवाला टिबा से समीकृत किया है (ऐंश्येंट ज्यॉग्रेफी, पृ० 180)। कुछ विद्वानों ने इसे स्यालकोट या मद्रनरेश शल्य के किले से समीकृत किया है (प्रोसीडिंग्स ऑव द फोर्टीन्थ ओरियंटल कांग्रेस में फ्लीट की टिप्पणी; द्रष्टव्य कनिंघम, एं० ज्यॉ० इं०, 686)। युवान-च्वाङ् के मतानुसार शाकल के प्राचीन नगर शे-की-लो, (She-kei-lo) की परिधि लगभग 20 ली थी। यद्यपि उसका प्राकार ध्वस्त हो चुका था, किंतु इसकी नींव अब भी दृढ़ एवं पुष्ट थी। यहाँ पर एक विहार था जहाँ हीनयान संप्रदाय के 100 भिक्षु रहा करते थे। इस विहार के पश्चिमोत्तर में, अशोक द्वारा निर्मित कोई 200 फीट ऊँचा एक स्तूप था। मिलिंदपञ्ह के अनुसार (क्वेश्चंस ऑव मैनेन्डर, पृ० 1-2) यह नगर व्यापार का एक महान् केंद्र था। योनकों के देश में यह एक प्रसिद्ध प्राचीन नगर था। यह एक सुसिंचित एवं पर्वतीय सुरम्य देश में स्थित था। अनेक दृढ़ अट्टालक (बुर्ज) एवं प्राकार (परकोटों) से युक्त इसका प्रतिरक्षण दृढ़ था। यहाँ की सड़कों की स्थिति सुंदर थी। यहाँ पर अनेक भव्य प्रासाद थे। इस नगर का उल्लेख प्रायः महाभारत में किया गया है (ततः शाकल (सागल)-मम्येत मद्राणां पुटभेदनम)। दिव्यावदान (पृ० 434) में भी इसका उल्लेख है। शाकल 326

ई० पू० में सिकंदर महान् के आधिपत्य में चला गया था जिसने इसे निकटस्थ झेलम तथा चेनाब के मध्यवर्ती क्षेत्र के क्षत्रप के अधीन कर दिया था (कैंब्रिज हिस्ट्री ऑव इंडिया, I, 549-550)। मेसीडोनिया-निवासियों ने सागल को नष्ट कर दिया था किंतु डेमिट्रियस नामक एक बाख्त्री यवन राजा ने इसका पुनर्निर्माण कराया था और अपने पिता यूथेडेमास के सम्मान में इसे यूथीडेमिया कहा (इं० ऐं०, 1884, पृ० 350)। लगभग 78 ई० में शाकल में राज्य करने वाले शक्तिशाली यूनानी-नरेश * मिलिंद (मेनेण्डर) के शासनकाल में यहाँ के निवासी सुखी थे। मिलिंद के शासनकाल के पहले ही शाकल में बौद्धमत का प्रभाव पड़ चुका था तु० श्रीमती रिज डेविड्स, साम्स ऑव द सिस्टर, पृ० 48; साम्स ऑव द ब्रेदेरेन, पृ० 359)। छठीं शताब्दी ई० के प्रारंभिक भाग में शाकल हूण-विजेता मिहिर कुल की राजधानी बन चुकी थी जिसने अपना अधिकार इस नगर तथा सभी निकटवर्ती प्रांतों पर कर लिया था (कैंब्रिज हिस्ट्री ऑव इंडिया, I, 549, 550)। मद्र, कलिंग एवं वाराणसी के राजाओं में वैवाहिक संबंध होते थे (कावेल, जातक, IV, पृ० 144-145; जातक V, 22)। अधिक विवरण के लिए द्रष्टव्य, बि० च० लाहा, ट्राइब्स इन ऐंश्येंट इंडिया, पृ० 54 और आगे; मैक्रिंडिल, ऐंश्येंट इंडिया ऐज डिस्क्राइब्ड बाई टॉलेमी, एस० एन० मजूमदार शास्त्री द्वारा संपादित, 1927, पृ० 122 और आगे।

साकेत—साकेत उत्तर कोशल की राजधानी थी। पतंजलि ने अपने महाभाष्य (3, 3, 2, पृ० 246; I, 3, 2 पृ० 608) में इसक वर्णन किया है। टॉलेमी द्वारा वर्णित सोगेड (Sogeda) तथा फा-ह्यान द्वारा वर्णित शा-ची (Shachi) यही है, (लेग्गे, ट्रावेल्स ऑव फा-ह्यान, पृ० 54)। कोशल जनपद में यह एक अत्यंत महत्त्वपूर्ण नगर हो गया था; यहाँ से यमुना पार करने के पश्चात् कौशाम्बी जाया जा सकता था। श्रेष्ठ घोड़ों के सात पुनर्योजनों से श्रावस्ती से यहाँ पहुँचा जा सकता था (सत्तरथ विनितानि—मज्झिम, I, 149)। कोशल के दक्षिण-पश्चिमी सीमांत पर स्थित यह एक नगर था। भारत के छह महानगरों में यह विख्यात था (दीघ निकाय, II, 146)। बुद्ध-काल के ठीक पूर्व यह राजधानी थी (कार्माइकेल लेक्चर्स, 1918, पृ० 51)। यह वही नगर था, जहाँ पर विशाखा-मिगारमाता का पिता धनंजय श्रेष्ठि रहता था (धम्मपद कामेंट्री, जिल्द, I, भाग 2, पृ० 386-7)। एक बार सारिपुत्त साकेत में रुके थे (विनय, I, पृ० 289)। जीवक यहाँ आया था और उसने किसी श्रेष्ठि की रुग्णा पत्नी की

***मेनेन्डर (मिलिन्द) वस्तुतः एक इंडो-ग्रीक नरेश था।—अनूदक**

चिकित्सा की थी (वही, I, 270 और आगे)। साकेत से श्रावस्ती जाने वाली सड़क पर डाकू रहते थे जो यात्रियों के लिए खतरनाक थे। यहाँ तक कि भिक्षुओं की संपत्ति भी लूट ली जाती थी और कभी-कभी डाकू उनको मार डालते थे। राजकीय सैनिक डकैती के घटनास्थल पर पहुँचते थे और वे उन डाकुओं की हत्या कर डालते थे जिन्हें वे पकड़ पाते थे (विनय, I, पृ० 88)। तीस वनवासी भिक्षुओं को समय से श्रावस्ती, जहाँ पर बुद्ध अनाथपिण्डिक के जेतवन में ठहरे हुए थे, न पहुँच सकने के कारण, साकेत में रुक जाना पड़ा था (विनय, I, पृ० 253)। सावत्थी एवं साकेत के बीच तोरणवत्थु नामक एक गाँव था (संयुक्त IV. 374 और आगे)। जातकों में साकेत को एक महत्त्वपूर्ण नगर बतलाया गया है (जिल्द, III, 217; 272; V. 13; VI. 228)। साकेत विशेषतः गुप्त राजाओं से संबंधित था।

शाल्व—गोपथ ब्राह्मण (1, 2, 9) में शाल्व देश का उल्लेख है। पाणिनि के सूत्र (4, 1, 173, 178) में यह बतलाया गया है कि शाल्व जनपद में औदुम्बर (उदुम्बर), तिलखल, मद्रकार, युगन्धर, भूलिंग एवं शरदण्ड संमिलित थे। पाणिनि ने वैधूमाग्नि नामक एक नगर का भी उल्लेख किया है, जिसे विधूमाग्नि ने शाल्व देश में निर्मित कराया था (4. 2. 76; 4. 2. 133; 4. 1. 169)। पतंजलि ने अपने महाभाष्य में (4, 2, 76) इसका वर्णन किया है। शाल्वों ने संभवतः उस प्रदेश को अधिकृत किया था, जहाँ पर आधुनिक अलवर (संप्रति राजस्थान में) स्थित है (कनिंघम, ए० रि० आर्क्० स० इं०, XX. पृ० 120; मत्स्य पुराण, अध्याय 113); विष्णु पुराण, II, अध्याय, III, श्लोक, 16-18 एवं ब्रह्म पुराण, अध्याय, 19, 16-18) में शाल्वों को पश्चिम में स्थित बतलाया गया है। महाभारत के अनुसार शाल्व देश कुरुक्षेत्र के समीप स्थित या (विराट पर्व, अध्याय, 1)। यह सावित्री के पति सत्यवान के पिता की राजधानी थी (वन पर्व, अध्याय, 282)। शाल्वों की राजधानी शाल्वपुर थी, जिसे सौभगनगर भी कहा जाता था (महाभारत, वन पर्व, अध्याय, 14)। महाभारत के युद्ध में शाल्व पाण्डवों के विरुद्ध दुर्योधन के सहायक थे (भीष्म पर्व, अध्याय, 20, 10, 12, 15)।

सामगाम—यह शाक्यों के देश में स्थित था, जहाँ पर बुद्ध एक बार रुके थे (अंगुत्तर, III, 309; मज्झिम, II, 243)।

सांगल—यह प्राकारावेष्ठित नगर गुरुदासपुर जिले में फतेहगढ़ के निकट कहीं पर स्थित था (ज० रा० ए० सो०, 1903, 687)। यह कठों (Catheans) का प्रमुख केंद्र था जो स्वतंत्र प्रसंघक-कुलों (गण राज्यों) में अग्रणी थे। विस्तृत

विवरण के लिए, द्रष्टव्य बि० च० लाहा, इंडोलॉजिकल स्टडीज़, भाग, I, पृ० 22)।

सारनाथ—(शारंगनाथ) सारनाथ स्तंभ-लेख में (वाराणसी जिले में स्थित प्राचीन स्थल) सारनाथ का वर्णन है जो वाराणसी से लगभग सात मील दूर पर स्थित है जहाँ पर बौद्ध अवशेषों का एक विशाल संग्रहालय है (का० इं० इं०, जिल्द, III,)। सारनाथ शिलालेख धमेख स्तूप के उत्तर से तथा गुप्तकालीन प्राचीन विहारों के अवशेषों पर पूर्व से पश्चिम तक फैले हुए ऊँचे टीले के दक्षिण से खोद कर निकाला गया था (एपि० इं०, III, 44; एपि० इं० IX. 319-28)। इसका प्राचीन नाम इसिपतनमिगदाय (ऋषिपत्तन मृगदाव) है जहाँ पर बुद्ध ने धर्मचक्र-प्रवर्त्तन किया था[1]। कनिंघम ने इसे उत्तर में विशाल धमेख स्तूप से दक्षिण में चौकुंडी टीले तक लगभग आधे मील तक फैले हुए सुरम्य जंगलों से आच्छादित क्षेत्र से समीकृत किया है (आर्क्यालॉजिकल रिपोर्ट, I, पृ० 107)। दूसरी शताब्दी ई० पू० में इसिपतन में बौद्ध भिक्षुओं का एक विशाल संप्रदाय था। युवान-च्वाङ् के काल में यह एक वैहारिक केंद्र था, क्योंकि उसने यहाँ पर 1,500 बौद्ध भिक्षुओं को हीनयान बौद्धमत का अध्ययन करते हुए पाया था। इसिपत्तन के मृगवन की उत्पत्ति के विषय में पाठकों का ध्यान निग्रोधमिग जातक की ओर आकृष्ट किया जाता है (जातक, I, 145 और आगे)। मृगवन काशीनरेश द्वारा मृगों के निर्भय विचरण के लिए प्रदत्त वन था।

बौद्ध संप्रदाय के कुछ अति प्रसिद्ध सदस्य इस स्थान पर समय-समय पर रहे हैं। इसिपतन में हुए लिपिबद्ध धर्म परिवर्तनों में सारिपुत्त और महाकोठ्ठित तथा महाकोठ्ठित एवं चित्तहत्थी-सारिपुत्त में हुए परिवर्तन उल्लेखनीय हैं (संयुत्त, II, पृ० 112-114; III, पृ० 167, 69; 173-7; IV, पृ० 384-6; अंगुत्तर III, पृ० 392 और आगे)। बुद्ध ने इसिपतन (ऋषिपत्तन) मिगदाय (मृगदाव) को चार तीर्थस्थानों में एक बतलाया था, जहाँ उनके श्रद्धालु अनुयायियों को जाना चाहिए (बुद्धवंश कामेंट्री, पृष्ठ 3; दीघ निकाय, II, 141)। इसे इसिपत्तन इसलिए कहा जाता था कि हिमालय से आकाश मार्ग से जाते हुए ऋषि यहाँ उतरा करते थे या यहाँ से अपनी आकाश-यात्रा पर प्रस्थान करते थे। इसिपतन में बुद्ध के प्रथमोपदेश के साथ ही उनके जीवन से संबंधित कई अन्य घटनाओं का वर्णन बौद्ध ग्रंथों में किया गया है (विनय I, 15 और आगे; अंगुत्तर निकाय,

---

[1] मज्झिम, I, 170 और आगे; संयुत्त, V. 420 और आगे; कथावत्थु 97, 559.

I, 110 और आगे; 279-80; III, 392 और आगे; 399 और आगे; संयुत्त निकाय, I, 105-6; V. 406-8; दीपवंस, पृ० 119-20; थेरीगाथा कामेंट्री, पृ० 220; वि० च० लाहा, ऐंश्येंट इंडियन ट्राइब्स, 1926, पृ० 22-25)। सारनाथ में किये गये पुरातत्वीय उत्खननों के संक्षिप्त विवरण के लिए द्रष्टव्य ज० रा० ए० सो०, 1908, 1088 और आगे; आर्क० स० इं० रि०, I, 105 और आगे; ए० रि० आर्क० स० इं०, 1904-1905, 59 और आगे; 1906-1907, 68 और आगे; 1907-1908, 43 और आगे; 1914-15, 97 और आगे; 1919-20, 26 और आगे, 1921-22, 42 और आगे; 1927-28, 95 और आगे। बी० मजूमदार की पुस्तक, गाइड टु सारनाथ, 1937 भी पठनीय है।

सावत्थी (श्रावस्ती)—प्राचीन स्थान श्रावस्ती का आधुनिक समानार्थक सहेठ-महेठ[1] है। यह पूरा क्षेत्र उत्तरप्रदेश में गोंडा एवं बहराइच जिलों की सीमा पर स्थित है और बलरामपुर रेलवे स्टेशन से यहाँ पहुँचा जा सकता है। बहराइच से भी यहाँ पहुँचा जा सकता है, जहाँ से यह लगभग 26 मील दूर है। ल्युडर्स तालिका (संख्या, 918, 919) में इसका उल्लेख सावस्ती के रूप में हुआ है। यहाँ से कुछ मूर्तियाँ उपलब्ध हुयी हैं, जिनमें अधिकांशत: बौद्ध धर्मपरक, इनसे कुछ कम जैन एवं कुछ ब्राह्मण धर्मपरक हैं। बौद्ध भाष्यकार बुद्धघोष के अनुसार, मूलत: सवत्थ नामक ऋषि का आवास-स्थान होने के कारण इस नगर को सावत्थी कहा जाता था। पहले यह एक धार्मिक स्थान था और कालांतर में इसके परित: इस नगर का समुत्कर्ष हुआ (पपंचसूदनी, I, 59-60; परमत्थजोतिका (सुत्तनिपात कामेंट्री, पृ० 300; उदान कामेंट्री, स्यामी संस्करण, पृ० 70)। चूँकि यहाँ पर मानवमात्र के लिए आवश्यक प्रत्येक वस्तु उपलब्ध थी, अतएव इसे सावत्थीं (सब्ब-अत्थि) कहा जाता था। इस नगर का निर्माण राजा श्रावस्त या श्रावस्तक द्वारा किया गया बतलाया जाता है (विष्णु पुराण, अध्याय, II, अंश 4)। मत्स्य एवं ब्रह्म पुराणों में (XII. 29-30; VII. 53) श्रावस्त को युवनाश्व का पुत्र बतलाया गया है। महाभारत में श्रावस्त को श्राव का पुत्र एवं युवनाश्व का पौत्र बतलाया गया है (वन पर्व, 201, 3-4; हरिवंश, XI.

---

[1] पुरातत्वीय समन्वेषण के संक्षिप्त विवरण के लिए द्रष्टव्य, ज० रा० ए० सो०, 1908, 1098 और आगे; आर्क० स० इं०, रि०, I, 330 और आगे; XI 78 और आगे; ए० रि० आर्क० स० इं०, 1907-8, 81 और आगे; 1910-11, पृ० 1 और आगे।

21, 22)। हर्षचरित (काणे संस्करण, 201, पृ० 50) में श्रुतवर्मन का उल्लेख है जो किसी समय श्रावस्ती का राजा था। कथासरित्सागर एवं दशकुमार चरित (15, 63-79, अध्याय, V) में क्रमशः देवसेन एवं धर्मवर्धन नामक श्रावस्ती के दो नरेशों का वर्णन प्राप्त होता है। राजा धर्मवर्धन के नवमालिका नामक एक सुंदरी पुत्री थी (दशकुमार चरितम्, पृ० 138)। प्रमति श्रावस्ती की अपनी यात्रा पर चलते रहे, जहाँ क्लांत होने पर वह नगर के बाहर किसी भाग में लताओं के बीच विश्राम करने के लिए लेट गये थे (वही, पृ० 136)। संपूर्ण बौद्ध साहित्य में श्रावस्ती का वर्णन कोशल जनपद की राजधानी तथा राजगृह से दक्षिण-पशिचम में कालक और अस्सक तक जाने वाले राजपथ पर सावत्थी एवं वनसावत्थी नामक दो महत्वपूर्ण पड़ावों के रूप में किया गया है। कोई एक अन्य महापथ भी अवश्य रहा होगा जिससे कोई व्यक्ति श्रावस्ती से किटागिरि होकर वाराणसी की यात्रा कर सकता था (मज्झिम, I, 473)।

श्रावस्ती नगरी अचिरावती नदी के तट पर स्थित थी (विनय महावग्ग, पृ० 190-191, 293; परमत्थजोतिका, पृ० 511)। बुद्ध के जीवन-काल में श्रावस्तीनगर से दक्षिण की ओर निकट ही निर्मित जेतवन एवं पुब्बाराम दो प्रसिद्ध बौद्ध वैहारिक अधिष्ठान एवं बौद्धमत के प्रभावशाली केंद्र थे। श्रावस्ती ब्राह्मण धर्म एवं वेद-विद्या का एक महत्वपूर्ण एवं शक्तिशाली केंद्र भी था। यहाँ पर एक महत्वपूर्ण ब्राह्मण संस्था थी, जिसके कुलपति जानुस्सोणि थे (दीघ, I, 235; सुमंगलविलासिनी II, 399; मज्झिम, I, 16)। बोधिसत्वावदानकल्पलता (61, 2) के अनुसार श्रावस्ती के स्वस्तिक नामक एक ब्राह्मण ने अपने जीविकोपार्जन के लिए कृषिकर्म ग्रहण किया था। श्रावस्ती के धनाढ्य रईसों में राजकुमार जेत का उल्लेख किया जा सकता है, जो प्रसिद्ध जेतवन का निर्माता स्वामी एवं पोषक था (पपंचसूदनी, I, पृ० 60)। नगर के समीप कोशल-नरेश प्रसेनजित की रानी मल्लिका के नाम पर एक अन्य प्रसिद्ध उपवन था। बौद्धधर्म की परंपराओं में अनाथपिण्डिक नाम से विख्यात सुदत्त ने जेतवनविहार के दान से अमर कीर्ति प्राप्त की थी तथा विशाखा ने पुब्बाराम बिहार का निर्माण कराकर अपने को अमर बना लिया था।

श्रावस्ती की भौतिक समृद्धि का कारण यह था कि यहाँ पर तीन प्रमुख व्यापारिक पथ मिलते थे तथा यह व्यापार का एक महान् केंद्र था। सोहगौरा ताम्रपत्र में सन्निहित उपदेश जो या तो श्रावस्ती के महामात्र द्वारा प्रचलित किया गया था या वहीं के महामात्र के लिए उद्दिष्ट था, यह सिद्ध करने के लिए एक स्पष्ट अभिलेखीय साक्ष्य है कि जनपथों पर समुचित दूरियों एवं अनुकूल बस्तियों में

ढेर सारे रस्सों, एवं सार्थों के लिए उपयोगी अन्य सामग्रियों से सज्जित राज्य निर्मित गोदाम थे (वियना ओरियंटल जर्नल, X. 138 और आगे; इं० ऐं०, XXV 216 और आगे; ज० रा० ए० सो०, 1907, 510 और आगे; इं० हि० क्वा०, X. 54-6; अ० भं० ओ० रि० इं०, XI. 32 और आगे, सावतियं महामातनं सासने)। ललितविस्तर के अनुसार यह नगर राजाओं, राजकुमारों, मंत्रियों, सभासदों और उनके अनुगामियों आदि से परिपूर्ण था (अध्याय, 1)। यहाँ पर 57,000 परिवार थे (समन्तपासादिका, पृ० 614)। अवश्य ही यह अन्य ओरों से तोरणयुक्त एक प्राचीर द्वारा परिवृत्त रहा होगा। प्राचीर के भीतर स्थूलरूप से नगर तीन मंडलों में विभक्त रहा होगा यथा केंद्रीय, बाह्य और बाह्यतम। राजप्रासाद एवं दरबार केंद्रीय भाग में रहे होंगे। पथ-व्यवस्था की रूप-रेखा पहरेदारी को मुकर बनाने को ध्यान में रखकर की गयी रही होगी। नगर में राजकर्मचारियों के आवासों, धार्मिक एवं शैक्षिक संस्थाओं, निजी गृहों, बाजारों और यहाँ तक कि वेश्याओं के घरों के लिए स्थानों का समुचित निर्धारण अवश्य रहा होगा।

श्रावस्ती न केवल भारतीय व्यापार की एक विशाल पण्यशाला ही वरन् धर्म एवं संस्कृति का भी एक महान् केंद्र थी। श्रावस्ती, जिसे जैन लोग चंद्रपुरी या चन्द्रिकापुरी नामक अन्य संबोधन से पुकारते थे, दो प्रसिद्ध जैन तीर्थंकरों संभवनाथ एवं चंद्रप्रभानाथ का जन्मस्थान थी (जैन हरिवंशपुराण, पृ० 717; शाह, जैनिज्म इन नर्दर्न इंडिया, पृ० 26)। विविध तीर्थकल्प के अनुसार श्रावस्ती में श्री संभवनाथ की प्रतिमा से अलंकृत एक चैत्य था। कपिल ऋषि यहाँ ज्ञान प्राप्त करने के उद्देश्य से आये थे। राजा जितशत्रु का पुत्र, भद्र अपने परिव्रजन-काल में भिक्षु हो गया था और कालांतर में उसे कैवल्य प्राप्त हुआ था (वि० च० लाहा, सम जैन कैनानिकल सूत्राज, 175)। इसी नगर में अलग होने के पश्चात् पहली बार महावीर घोषाल मंखलीपुत्र से मिले थे। महावीर यहाँ पर कई बार आये थे और उन्होंने यहाँ पर एक चातुर्मास्य बिताया था (कल्पसूत्र, सुबोधिकाटीका, 103, 105, 106; आवश्यक सूत्र 221; स्टीवेंसन, हार्ट ऑव जैनिज्म, 42)। जटिल, निगण्ठ, अचेलक, एक-साटक और परिव्राजक आदि इस पुर के निवासियों की इतनी अधिक सुपरिचित आकृतियाँ थीं कि राजकीय गुप्तचर अपना गुप्त उद्देश्य पूर्ण करने के लिए इन संन्यासियों का वेश बना लिया करते थे (संयुत्त०, I, 78)। बुद्ध के अतिज्ञानवर्द्धक अनेक प्रवचन यहीं पर हुये थे। इस नगर ने बौद्ध संघ को बड़ी संख्या में भिक्षु एवं भिक्षुणियाँ प्रदान की थीं (धम्मपद कामेंट्री, I, 3 और आगे; वही, I, 37 और आगे; वही, II, 260 और आगे; वही, II, 270 और आगे;

वही I, 115 और आगे; वही, III, 281 और आगे; वही IV 118; साम्स ऑव द ब्रेवेरेन, पृ० 7, 13, 14, 19, 20, 25; साम्स ऑव द सिस्टर्स, पृ० 19-20)।

इस नगर में दो प्रसिद्ध चीनी यात्री, फाह्यान एवं युवान च्वाङ् क्रमशः ईसा की पाँचवीं और सातवीं शताब्दी में आये थे। जब फाह्यान इस नगर में आया था, यहाँ की जनसंख्या कम थी। उसने महाप्रजापति गोतमी द्वारा निर्मित विहार का स्थान, आनाथपिण्डिक के घर की दीवाल एवं कुएँ तथा उस स्थान को देखा था, जहाँ पर अंगुलिमाल को अर्हतपद प्राप्त हुआ था (लेग्गे, ट्रावेल्स ऑव फाह्यान, 55-56)। युवान-च्वाङ् के अनुसार यद्यपि यह नगर अधिकांशतः नष्ट हो चुका था, तथापि यहाँ कुछ निवासी थे। इस क्षेत्र में अच्छी उपज होती थी; यहाँ की जलवायु सम थी और यहाँ के निवासी अपने आचरण में ईमानदार, अध्ययनशील एवं सुंदर कार्यों के प्रेमी थे। यहाँ पर कई सौ बौद्ध बिहार थे, जिनमें अधिकांशतः जीर्ण हो चुके थे। यहाँ पर कुछ देवमंदिर तथा बहुसंख्यक अबौद्ध लोग थे। यहाँ पर कई स्तूप , अनेक बौद्ध बिहार और महायान धर्मावलंबी अनेक बौद्ध भिक्षु थे, (वाटर्स, ऑन युवान-च्वाङ्, I, 377; II, 200)।

श्रावस्ती के धन, जन एवं राजनीतिक महत्ता का ह्रास हुआ। विहार के निर्माण में 54 करोड़ व्यय करके जेतवन बिहार का प्रसिद्ध दाता अनाथपिण्डिक अकिंचन होकर मरा। व्यापार में उसे 18 करोड़ का घाटा हुआ और नदी के तट पर गड़ी हुयी उसकी इतनी ही धनराशि अचिरावती नदी की बाढ़ में बह गयी (धम्मपद कामेंट्री, III, 10)। बुद्धकाल से लेकर लगभग बारहवीं शती ई० के मध्य तक अपने सर्वाधिक महत्वपूर्ण अधिष्ठान जेतवन के साथ यह नगर निरंतर बौद्धधर्म का केंद्र बना रहा। इसके साथ ही एक महान् धर्म के लगभग 1800 वर्षों की दीर्घ-कालीन अवधि के मध्य होनेवाली विपर्यय की कहानी जुड़ी हुई है। अधिक विवरण के लिए द्रष्टव्य बि० च० लाहा, श्रावस्ती इन इंडियन लिटरेचर, (मे० आ० स० इं०, संख्या, 50); बि० च० लाहा, ट्राइब्स इन ऐंश्येंट इंडिया, पृ० 129 और आगे; अ० स० इं० रि०, I, 330 और आगे; XI. 78 और आगे; ए० रि० आ० स० इं०, 1907-8, 81 और आगे; 1910-11, पृ० 1 और आगे।

सेतव्य––उकट्ठ के निकट यह कोशल जनपद का एक नगर था (अंगुत्तर, II, 37)। एक बार बहुत सारे भिक्षुओं के साथ कुमारकस्सप सेतव्य गये थे और वहाँ पर उन्होंने सेतव्य के प्रधान पायासि को बौद्ध धर्म में दीक्षित किया था (दीर्घ, II, 316 और आगे)।

सेतमहेत––सेत या सहेठ गोंडा और बहराइच जिलों की सीमा पर स्थित

है। यह गोंडा जिले में राप्ती नदी के तट पर अयोध्या से 58 मील और गोंडा से 42 मील दूर उत्तर में स्थित है। यहाँ पर स्थित एक बौद्ध विहार से एक अभिलेख प्राप्त हुआ है, जिसमें यह बतलाया गया है कि किसी दाता ने वाराणसी में गंगा में स्नान एवं वासुदेव तथा अन्य देवताओं की उपासना करने के पश्चात् बौद्ध-संघ के लिए कुछ ग्राम दान में दिये थे (एपि० इं०, XI, 20-26)।

शोरकोट—यह स्थान झेलम एवं चेनाब के संगम से कुछ पहले स्थित है। युवान-च्वाङ् ने इसकी परिधि 5,000 ली बतलायी है। अब यहाँ पर खंडहरों का एक विशाल टीला है। इस नगर की स्थापना का श्रेय सोर नामक किसी काल्पनिक राजा को दिया जाता है। यह स्थान पूर्व में सतलज नदी, उत्तर में ताकी प्रांत, दक्षिण में मुल्तान एवं पश्चिम में सिन्धु से परिवृत्त था। इस स्थान की प्राचीनता का निकटतम निश्चय मुद्राओं से किया जा सकता है, जो यहाँ के अवशेषों से प्राप्त होती है (कनिंघम, एं० ज्यॉ० इं०, पृ० 233 और आगे)।

सिद्धाश्रम—रामायण (आदिकाण्ड, 29 सर्ग, श्लोक, 3-4) के अनुसार यह आश्रम वामनावतार के पहले भी स्थित था। यहाँ पर राम और विश्वामित्र आये थे। यह एक श्रेष्ठ तपोवन (वही, V, 24) था। इस आश्रम की स्थिति के विषय में मतैक्य नहीं है। रामायण (किष्किन्ध्या काण्ड, अध्याय, 43) के अनुसार यह हिमालय में कांचनजंघा एवं धवलागिरि के मध्य मन्दाकिनी नदी के तट पर स्थित है। दूसरों के मतानुसार यह शाहाबाद जिले में बक्सर में स्थित है। कहा जाता है कि यहीं पर विष्णु वामन के रूप में अवतरित हुये थे। रामायण के अनुसार (आदिकाण्ड, सर्ग, 29, श्लोक, 3-4), यहीं पर उन्हें तपस्या में सिद्धि मिली थी।

सीहप्पात—हिमालय में स्थित एक झील के रूप में इसका उल्लेख किया गया है (कुणाल जातक, जातक, जिल्द, V., पृ० 415)।

सिसपावन—यह सेतव्य के उत्तर में स्थित था, जहाँ पर स्थविर कुमार कस्सप रहते थे (दीघ, II, 316)।

सिन्धु (या इंडस)—सिन्धु जो इंडस और चीनी यात्रियों की सिन्-तु (Sin tu) ही है, उत्तरी भारत की सबसे बड़ी नदी है, जिसके आधार पर सिन्धु-नदी-समूह का नाम पड़ा है। सिंधु नदी अटक से गुजरने के पश्चात प्रायः दक्षिण की ओर सुलेमान पहाड़ियों के समानांतर प्रवाहित होती है। ऋग्वेद (X.75) के अनुसार सिन्धु प्रवाहशील नदियों में सर्वश्रेष्ठ थी। तैत्तिरीय संहिता (VII. 4. 13. 1) में सैन्धव शब्द का प्रयोग हुआ है, जो सिन्धु या इंडस के लिए व्यवहृत हो सकता है। पाणिनि ने अपनी अष्टाध्यायी (4. 3. 32-

33; 4. 3. 93) में इसका वर्णन किया है। पतञ्जलि ने भी अपने महाभाष्य में (1. 3. 1, पृ० 588-89) इसका उल्लेख किया है। मालविकाग्निमित्रम् (एस० एस० अय्यर संस्करण, पृ० 148) में सिन्धु नदी के दाहिने किनारे पर अग्निमित्र के पुत्र वसुमित्र एवं यवनों के संघर्ष का उल्लेख किया गया है।

अल्बेरुनी के मतानुसार चेनाब में मिलने के पहले सिन्धु के ऊपरी प्रवाह को सिन्धु कहते थे; उस स्थान से अरोर तक के इसके प्रभाव को पंचनद तथा अरोर से समुद्र तक के इसके प्रवाह को मिहरन कहते थे (इंडिया, I, पृ० 260)। धारयद्वसु के बेहिस्तून अभिलेख में इसका उल्लेख हिंदु तथा वैन्दिदाद में 'हेंदु, के रूप में किया गया है। सिन्धु जिस क्षेत्र से होकर प्रवाहित हुआ उसका नाम सिन्धु पड़ा (तु० बील, बुद्धिस्ट रिकार्डस ऑव द वेस्टर्न वर्ल्ड, I, पृ० 69; तु० ज० ए० सो० बं०, 1886, II, पृ० 323)। बृहत्संहिता (XIV. 19) में इसका उल्लेख एक नदी के रूप में किया गया है। जैन ग्रंथ जम्बुद्विवपण्णत्ति' में गंगा, रोहिता (ब्रह्मपुत्र), सिन्धु (इंडस) तथा हरिकान्ता नामक चार नदियों का स्रोत युगल-पुष्करों को बतलाया गया है, जिनमें से पहला लघुत्तर हिमालय और दूसरा बृहत्तर हिमालय पर्वतमाला के पार्श्व में स्थित है।

सिंधु हिमालयपार की एक नदी है। यह असंख्य हिमनदों द्वारा आपूरित हैं। यह संभेद एवं संगम नामों से भी विख्यात् थी। प्लिनी को ज्ञात सिंधु-नदी-समूह में सिन्धु (इंडस) और अन्य उन्नीस नदियाँ थीं। हाइड्राओटीज़, अकेसिनीज़, हाइपेसिस, हाइडेस्पीज़, कोफेन, परेनोस, सपरनोस, तथा साओनोस (Hydraotes, Akesines, Hypasis, Hydaspes, Kophen, Parenos Saparnos, Saonos) सिन्धु की प्रमुख सहायक नदियाँ बतलायी जाती हैं। विस्तृत विवरण के लिए द्रष्टव्य बि० च० लाहा, रिवर्स ऑव इंडिया, पृ० 6-12.

ऊर्णावती—ऋग्वेद (X. 75. 8) में वर्णित यह सिन्धु की एक सहायक नदी है।

सिनेरु—इसका वर्णन बौद्ध ग्रंथों एवं भाष्यों में किया गया है (धम्मपद कामेंट्री, I, 107; तु० जातक, 1, 202)। यह मेरु पर्वत है, (थेरी गाथा कामेंट्रीं, 150) जो 68,000 लीग ऊँचा है। इसे बदरिकाश्रम के समीप गढ़वाल में रुद्र-हिमालय से समीकृत किया जाता है। संभवतः यह एरियन का मेरोज़ (Meros) पर्वत ही है।

सिंहपुर—(सेंग-हो-पु-लो)—यह तक्षशिला के दक्षिण-पश्चिम में 117 मील दूर स्थित था (कनिंघम, एं० ज्यॉ० इं०, पृ० 142-143)।

सीर्श—हरयाणा के हिस्सार जिले में स्थित यह एक कस्बा है, जिसके समीपस्थ किसी एक टीले से एक अभिलेख प्राप्त हुआ था (एपि० इं०, XXI, भाग viii)।

शिविपुर—शोरकोट अभिलेख के अनुसार शोरकोट का प्राचीन नाम शिविपुर या शिवपुर था, जो शिबियों की राजधानी थी (एपि० इं०, XVI, 1921, पृ० 17; लाहा, ट्राइब्स इन एंश्येंट इंडिया, पृ० 83)। उत्तरापथ में स्थित शिवपुर या शिबियों की नगरी का वर्णन पाणिनि के भाष्यकार ने किया है (द्रष्टव्य, पतञ्जलि, IV. 2,2)। शिव या शिवि-जन इरावती एवं चन्द्रभागा नदियों के मध्य पंजाब में झंग के शोरकोट क्षेत्र में रहते थे और इसलिए इसे उत्तरापथ में संमिलित किया गया है। यह एक अत्यंत प्राचीन जाति प्रतीत होती है, जिसका उल्लेख संभवतः प्रथम बार ऋग्वेद (VII. 18. 7) में हुआ है। वे दीर्घकाल तक स्वतंत्र थे, क्योंकि इनका उल्लेख न केवल सिकंदर कालीन यूनानी भूगोलवेत्ता एवं इतिहासकार वरन् पाणिनि (IV. 2. 109) के भाष्यकार भी करते हैं। बाद में वे भारत के सुदूर दक्षिण में चले गये थे (तु० दशकुमार चरितम्, अध्याय, VI; वृह (संहिता, अध्याय, XIV. श्लोक, 12)। ललितविस्तर (पृ० 22) और महावस्तु में (लाहा, स्टडी ऑव द महावस्तु, पृ० 7) शिविदेश को जम्बुद्वीप के सोलह महाजनपदों में से एक बतलाया गया है। अरिट्ठपुर शिवि जनपद की राजधानी थी (जातक, IV. पृ० 401)। अरिट्ठपुर (संस्कृत, अरिष्टपुर) को संभवतः पंजाब के उत्तर में स्थित टॉलेमी की अरिस्तीबोथ्रा से समीकृत किया जा सकता है, जो संभवतः द्वारावती ही है (जातक, फासबाल, भाग, VI, पृ० 421; नं० ला० दे, ज्यॉग्रेफिकल डिक्शनरी, पृ० 11, 187)। क्षेमेन्द्र की बोधिसत्त्वावदान-कल्पलता में शिववती नगरी का वर्णन है, जिसे राजा शिवि द्वारा शिवि देश की राजधानी से समीकृत किया जा सकता है (91 वाँ पल्लव)। प्राचीन यूनानी लेखकों ने पंजाब में स्थित सिबोइ (Siboi) के प्रदेश का उल्लेख किया है। विस्तृत विवरण के लिए द्रष्टव्य, बि० च० लाहा, इंडोलॉजिकल स्टडीज़, भाग, I पृ० 24-26.

शोण—(शोणा) यह गंगा की विज्ञात सबसे बड़ी निचली सहायक नदी है। एरियन की सोन, आधुनिक सोन् नदी, जबलपुर जिले में मैकाल (मेकल) पर्वतमाला से निकलकर उत्तर पूर्व की ओर बघेलखंड, मिर्जापुर और शाहाबाद जिलों से गुजरती हुई पटना के समीप गंगा में मिलती है। रामायण के अनुसार (आदि-काण्ड, 32 वाँ सर्ग, श्लोक, 8-9) यह सुरम्या नदी गिरिव्रज को परिवृत करने वाली दो पहाड़ियों और मगध से होती हुयी प्रवाहित होती है और इस कारण

इसे मागधी कहा जाता था। पद्मपुराण (उत्तरखण्ड, श्लोक, 35-38) में इस बड़ी नदी का उल्लेख किया गया है। पुराणों में इसे ऋक्ष पर्वतमाला से निकलने वाली महत्त्वपूर्ण नदियों में से एक बतलाया गया है। इस नदी को पार करके दधीचि अपने पिता की तपोभूमि में पहुँचे थे (हर्षचरित, प्रथम उच्छ्वास)। कालिदास ने अपने रघुवंश (VII. 36) में इसका उल्लेख किया है। मगध में राजगृह होकर बहने वाली इसके प्रवाह को सम्भवतः सुमागधा या सुमागधी कहा जाता था। यह बघेलखंड में पाँच सहायक नदियों, मिर्जापुर जिले में चार, पालामऊ और शाहाबाद जिले प्रत्येक में एक-एक नदी द्वारा आपूरित होती है। यह नदी पटना के पहले ही गंगा में मिलती है (तु० रघुवंश, VII. 36, भागीरथी-शोण इवोत्तरंग)। विस्तृत विवरण के लिए द्रष्टव्य बि० च० लाहा, रिवर्स ऑव इंडिया, पृ० 26।

सोरों—इसका प्राचीन नाम सुकरक्षेत्र या सद्कार्यों का क्षेत्र था। यह कस्बा बरेली से मथुरा के राजपथ पर, गंगा के पश्चिमी तट पर स्थित था (कनिंघम, एं० ज्यॉ० इं०, पृ० 418)। यह उ० प्र० के इटावा जिले में स्थित था (इंस्क्रिप्शंस ऑव नर्दर्न इंडिया, दे० रा० भंडारकर द्वारा पुनरावृत, नं० 416, वि० सं० 1245)।

शृंगवेरपुर (शृंगिवेरपुर)—बताया जाता है कि राम ने यहाँ पर गंगा को पार किया था। कनिंघम ने इसे सिंगरौर से समीकृत किया है, जो इलाहाबाद से पश्चिमोत्तर में 22 मील दूर एक बहुत ऊँचे कगार पर स्थित है (आ० स० रि०, XI. 62, ज० रा० ए० सो० बं०, XV. संख्या, 2, 1949, पृ० 131)।

स्रुघ्न—यह थानेश्वर से 38 या 40 मील दूर पर स्थित था। युवान-च्वाङ् ने इसे सु-लु-किन-ना (Su-lukin-na) कहा है। इसकी परिधि 1,000 मील थी। यह पूर्व में गंगा तक तथा उत्तर में एक उच्च पर्वतमाला तक फैला हुआ था जब कि यमुना इसके मध्य से बहती थी। कनिंघम के अनुसार, इसमें अवश्यमेव गिरि तथा गंगा नदियों के बीच में स्थित अंबाला और सहारनपुर जिले के कुछ भागों समेत, गढ़वाल और सिरमौर के पहाड़ी इलाके संमिलित थे। (कनिंघम, एं० ज्यॉ० इं०, पृ० 395 और आगे)।

स्थानेश्वर (स्थाणीश्वर)—यह प्राचीन भारत के प्राचीनतम स्थानों में से एक था। इसका नाम या तो ईश्वर अथवा महादेव का निवास स्थान होने के कारण, स्थान से या स्थाणु एवं ईश्वर के नामों के संयोग से ग्रहण किया गया है। युवान-च्वाङ् ने इसे स-त-नि-शि-फा-लो (Sa-ta-ni-shi-fa-lo) कहा है, जिसकी परिधि 1, 100 मील से भी अधिक थी। वाण के हर्षचरित् (तृतीय

उच्छ्वास) के अनुसार यह श्रीकण्ठजनपद की राजधानी थी। कुरुक्षेत्र नामक प्रसिद्ध रणक्षेत्र थानेश्वर के दक्षिण की ओर, अंबाला से लगभग 30 मील दक्षिण में और पानीपत से 40 मील उत्तर में स्थित है। इस नगर में एक प्राचीन एवं जीर्ण किला था, जो सिरे पर लगभग 1200 फीट का वर्गाकार था, (कनिंघम, एं०, ज्यॉ० इं०, पृ० 376 और आगे, 701)। एस० एन० मजूमदार ने (कनिंघम, एं० ज्यॉ० इं०, इंट्रोडक्शन, XLIII) इसे विनय महावग्ग (V. 13, 12) और दिव्यावदान (पृ० 22) में वर्णित थून (स्थून) से समीकृत करने का सुझाव रखा है। थून ब्राह्मणों का एक गाँव था (तु० जातक, VI, 62) जो मध्यदेश की पश्चिमी सीमा पर स्थित था (विनय टेक्स्टस, सै० बु० ई०, XVII. 38-39)।

शुक्तिमती—महाराजा वैश्रवण के शासनकाल में 107 वर्षांकित कोसम अभिलेख में इस स्थान का उल्लेख प्राप्त होता है जो संभवतः कौशाम्बी के समीप स्थित था। चेतिय जातक (संख्या, 422) में इसे सोत्थिवती नगर कहा गया है (एपि० इं०, XXIV, भाग, IV)। यह चेदि-नरेश धृष्टकेतु की राजधानी थी (महाभारत, III. 22)। यह शुक्तिमती नदी के तट पर स्थित था, जो महा भारत के अनुसार (भीष्मपर्व, VI. 9) भारतवर्ष की एक नदी थी।

सुमेरु—पद्मपुराण (उत्तरखंड, श्लोक, 35-38) तथा कालिकापुराण (अध्याय, 13, 23; अध्याय 19-92) में इसका उल्लेख किया गया है। शिव ने इसका शिखर देखा था (कालिकापुराण, अध्याय, 17. 10)। इस पर्वत से जम्बु नदी निकलती है (वही, अध्याय, 19. 32)। यह सिनेरु या मेरु पर्वत ही है।

सुंसुमारगिरि (सिशुमार पहाड़ी)—यह भर्ग देश में था (संयुत्त, III, 1)। यह भेसकलावन के किसी मृगवन में स्थित था। यह एक नगर था तथा इसकी राजधानी का यह नाम इसलिए था कि इसके निर्माण के प्रथम दिन ही निकटवर्ती एक झील में किसी कच्छप ने शोर मचाया था (पपंचसूदनी, II, 65; सारत्थत्त्पकासिनी, II, 249)। वत्सराज उदयन एवं उसकी रानी वासवदत्ता का पुत्र, राजकुमार बोधि इस पहाड़ी पर रहता था और उसने यहाँ पर कोकनद नामक एक प्रासाद बनवाया था। बौद्ध अनुश्रुतियों के अनुसार यह भर्ग राज्य की राजधानी थी, और इसका प्रयोग एक दुर्ग के रूप में किया जाता था (मज्झिम, I, 332–338; II, 91–97)। कुछ विद्वानों ने इसे वर्तमान चुनार पहाड़ी से समीकृत किया है (घोष, अर्ली हिस्ट्री ऑव कौशाम्बी, पृ० 32)। इस पहाड़ी पर निवास करने वाले एक धनी गृहस्थ ने अपनी पुत्री का विवाह अनाथपिण्डिक के पुत्र के साथ किया था (रा० ला० मित्र, नर्दर्न बुद्धिस्ट लिटरेचर, पृ० 309)।

सुन्दरिका––यह प्राचीन भारत की सात पवित्र नदियों में से एक है। यह कोशल की एक नदी थी जो अतिसंभवतः अचिरावती या राप्ती की सहायक नदी थी। यह श्रावस्ती से अधिक दूर नहीं थी (सुत्तनिपात, पृ० 79)।

सुनेत––इसके भग्नावशेष पंजाब के लुधियाना जिले में स्थित हैं, जो लुधियाना नगर से तीन मील दक्षिण-पश्चिम में स्थित है (जर्नल ऑव द न्युमिसमेटिक सोसायटी ऑव इंडिया, जिल्द, IV, भाग, I, पृ० 1-2)।

सुवर्णगुहा––यह चित्रकूट पर्वत पर है जो हिमालय क्षेत्र में स्थित है (जातक, III, 208)।

श्वेतपर्वत (सेतपब्बत)––यह हिमालय में तिब्बत के पूर्व में स्थित है (संयुत्त, I, 67)।

तक्षशिला––(चीनी, शी-शी-चेंग Shi-Shi-Ch'cng)––यह गन्धार जनपद की राजधानी थी। पाणिनि एवं पतञ्जलि ने क्रमशः अपनी अष्टाध्यायी (4, 3, 93) और महाभाष्य (1, 3, 1; 4, 3, 93, पृ० 588-89) में इसका वर्णन किया है। इसका उल्लेख प्रथम कलिंग शिलालेख में है। अशोक के शासनकाल में तक्षशिला में, जो सदैव एक विद्रोहशील प्रांत था प्रांताधिपति के रूप में एक कुमार की नियुक्ति की गयी थी। शिलालेखों में अशोक के शासनकाल के प्रारंभिक वर्षों का उल्लेख किया गया है, जब तक्षशिला में इस प्रकार की कोई अशांति नहीं थी। एरियन ने इस नगर को विशाल, समृद्ध एवं जनाकीर्ण बतलाया है। स्ट्रेबो ने यहाँ की भूमि की उर्वरता की प्रशंसा की है[1]। प्लिनी ने इसे एक प्रसिद्ध नगर बतलाया है, और कहा है कि यह पहाड़ियों की तलहटी में समतल में स्थित था। कहा जाता है कि पहली शती ई० के मध्य यहाँ पर ट्याना का अपोलोनियस (Apollonius of Tyana) तथा उसका साथी दमिस (Damis) आया था, जिन्होंने इसे निनेवा के आकार का बतलाया है, जो पतली किंतु सुव्यवस्थित सड़कों से युक्त किसी यूनानी नगर की भाँति प्राकारयुक्त था। सिकंदर के वंशानुगत होने के लगभग 80 वर्षों के पश्चात् तक्षशिला पर अशोक का आधिपत्य हो गया था।

सातवीं शती ई० में युवान-च्वाङ् इस नगर में आया था, जब यह कश्मीर का एक अधीनस्थ राज्य था। चीनी यात्री के अनुसार तक्षशिला की परिधि 2,000 ली से तथा इसकी राजधानी की परिधि 10 ली से अधिक थी। यहाँ की भूमि उर्वर थी और यहाँ पर प्रवाहशील नदियों के कारण अच्छी पैदावार और प्रचुर वनस्पति

---

[1] **एच० एवं एफ० द्वारा अनूदित, III, पृ० 90.**

होती थी। यहाँ की जलवायु स्वास्थ्यवर्धक थी तथा यहाँ के निवासी बौद्ध धर्म के अनुयायी थे। यद्यपि यहाँ पर अनेक विहार थे, किन्तु उनमें कुछ निर्जन हो चुके थे। यहाँ पर कुछ एक विहारों में रहने वाले भिक्षु महायान धर्मावलंबी थे (वाटर्स, ऑन युवान-च्वाङ्, I, 240)।

बौद्ध एवं जैन कहानियों में इसका वर्णन प्रमुख रूप से किया गया है। यह प्राचीन भारत में शिक्षा का एक महान् केंद्र था। विविध कलाओं एवं शास्त्रों के अध्ययन के लिए भारत के विभिन्न भागों से यहाँ विद्यार्थी आते थे। कोशल-नरेश प्रसेनजित् और मगध-नरेश बिम्बसार के विख्यात राजवैद्य जीवक की शिक्षा यहीं पर हुयी थी (बि० च० लाहा, हिस्टॉरिकल ग्लीनिंग्स, अध्याय, I)। उस समय के विद्यार्थी-जीवन का एक अति सुंदर चित्र एक जातक में प्रस्तुत किया गया है (जिल्द, II, पृ० 277)।

इस नगर को पश्चिमी पंजाब[1] के रावलपिंडी जिले में स्थित आधुनिक तक्षशिला से समीकृत किया गया है। इस पुर को भद्रशिला भी कहा जाता था और कालांतर में इसका नाम तक्षशिला पड़ा, क्योंकि यहीं पर एक ब्राह्मण-भिक्षुक ने राजा चन्द्रप्रभ का शिरोच्छेद किया था (दिव्यावदान माला, नर्दर्न बुद्धिस्ट लिटरेचर, पृ० 310)। भद्रशिला नामक नगर वैभवयुक्त, समृद्ध एवं जनसंकुल था। लंबाई-चौड़ाई में यह नगर 12 योजन था तथा यह चार तोरणों द्वारा सुविभक्त और ऊँचे महरावों एवं गवाक्षों द्वारा सज्जित था। हिमालय के उत्तर में स्थित यह नगर चन्द्रप्रभ नामक राजा के शासनांतर्गत था (बोधिसत्वावदान-कल्पलता, पञ्चम पल्लव)। इस नगर में एक राजोद्यान था (दिव्यावदान, पृ० 315)। बोधिसत्त्वावदान-कल्पलता, (59 वाँ पल्लव) के अनुसार जब कुणाल इसे जीतने के लिए भेजा गया था, तब तक्षशिला राजा कुंजरकर्ण के अधीन थी। दिव्यावदान से ऐसा प्रतीत होता है कि तक्षशिला अशोक के पिता मगध-नरेश बिन्दुसार के साम्राज्य में संमिलित थी।

तक्षशिला, जो गन्धार की प्राचीन राजधानियों में से एक थी, सिन्धु नदी के पूर्व में स्थित थी। कनिंघम के विचार से तक्षशिला शाह-ढेरी के समीप काल-का-सराय के ठीक एक मील उत्तर-पूर्व में, किसी दुर्गीकृत नगर के विस्तृत भग्नावशेषों में जिनके परितः कम से कम पचपन स्तूप, अट्ठाइस विहार और नौ मंदिर पाये गये थे, स्थित है। शाह-ढेरी से ओहिंद की दूरी 36 मील और ओहिंद से हस्त-नगर की दूरी 38 मील है। इस प्रकार कुल दूरी 74 मील है, जो प्लिनी द्वारा

[1] संप्रति पश्चिमी पाकिस्तान में स्थित।

बतलायी गई तक्षशिला और पुष्कलावती (Peukelaotis) के बीच की दूरी से 19 मील अधिक है। इस असंगति का समाधान करने के लिए कनिंघम ने 60 मील को 80 मील (LXXX) पढ़ने का सुझाव रखा है जो 73½ अंग्रेजी मीलों के बराबर है या जो दोनों स्थानों के मध्य की वास्तविक दूरी से केवल आधा मील कम है (कनिंघम, ऐंश्येंट ज्यॉग्रेफी, पृ० 121)। डॉ० भंडारकर का मत है कि (कार्माइकेल लेक्चर्स, 1918, पृ० 54, पा० टि०) अशोक के शासन-काल में तक्षशिला गन्धार की राजधानी नहीं थी, क्योंकि उसके तेरहवें शिला-शासन से यह व्यक्त होता है कि गन्धार उसके खास राज्य में नहीं था, जबकि कलिंग के प्रथम शासन से यह स्पष्ट है कि तक्षशिला प्रत्यक्षत: उसके अधीन था, क्योंकि उसका एक पुत्र वहाँ पर नियुक्त किया गया था। यह तथ्य कि तक्षशिला उस समय गंधार की राजधानी नहीं थी, टॉलेमी के इस कथन से पुष्ट होता है कि गंडराई (गन्धार) देश अपने प्रोक्लाइस (Proklais)-पुष्करावती नगर समेत सिंधु नदी के पश्चिम में स्थित था (तु० लेग्गे, ट्रावेल्स ऑव फा-ह्यान, पृ० 31-32; बि० च० लाहा, ट्राइब्स इन ऐंश्येंट इंडिया, पृ० 394-95; बि० च० लाहा, हिस्टॉरिकल ग्लीनिंग्स, अध्याय, I; बि० च० लाहा, ज्यॉग्रफी ऑव अर्ली बुद्धिज्म, पृ० 52-53; जर्नल ऑव द गंगानाथ झा रिसर्च इंस्टीट्यूट, जिल्द, VI. भाग, 4, अगस्त, 1949, पृ० 283-88)। तक्षशिला के उत्खननों एवं भग्नावशेषों के लिए द्रष्टव्य, आर्क० स० इं० रि०, II, (1871), पृ० 112 और आगे; V. (1875), 66 और आगे; XIV (1882), 8 और आगे; ए० रि० आर्क० स० इं०, 1912-13, (1916); आर्क० स० इं० ए० रि०, 1929-30, पृ० 55 और आगे; वही, 1930-34, पृ० 149-176, एनुअल रिपोर्ट ऑव द आर्क्यालॉजिकल सर्वे ऑव इंडिया, 1936-7 (1940)। विस्तृत विवरण के लिए द्रष्टव्य, जे० मार्शल, गाइड टु तक्षशिला, तृतीय संस्करण (1936); बि० च० लाहा, इंडो-लॉजिकल स्टडीज, भाग I, पृ० 14-17.

तमसा—महाराज सर्वनाथ के खोह ताम्रपत्र-अभिलेख में इस नदी का वर्णन प्राप्त होता है, जो आधुनिक तमस या टोंस नदी है। यह नागौद के दक्षिण में महियार* से निकलती है और रीवां के उत्तरी भाग से बहती हुयी, इलाहाबाद से दक्षिण-पूर्व में लगभग 18 मील दूर गंगा में मिलती है (का० इं० इं० जिल्द, III)। मार्कण्डेयपुराण (सर्ग, LVII, 22) में इस नदी का वर्णन है। पार्जिटर के अनुसार यह इलाहाबाद के आगे गंगा में दाहिने तट पर मिलती है। कूर्मपुराण

*मध्यप्रदेश में एक भूतपूर्व रियासत।

XLVII. 30) में इसका एक अन्य नाम तामसी भी बतलाया गया है। कुछ लोगों की मान्यता है कि तमसा या पूर्वी टोंस नदी फैजाबाद से निकलती है। आजमगढ़ से बहती हुयी यह बलिया के पश्चिम में गंगा में मिलती है। यह रामायण-ख्याति की एक ऐतिहासिक नदी मानी जाती है (रामायण, आदिकाण्ड, द्वितीय सर्ग, श्लोक, 3)। राम ने अपना पहला पड़ाव इस नदी के तट पर किया था, जो गंगा से अधिक दूर नहीं थी और इसे पार कर के उन्होंने सड़क पकड़ कर यात्रा की थी और बाद में वह श्रीमती नदी पहुँचे। राम ने इस नदी की प्रशंसा की और इसमें स्नान करने की इच्छा की, क्योंकि यह पंक-हीन थी (रामायण, आदिकाण्ड, द्वितीय सर्ग, श्लोक, 4-6)। रघुवंश के अनुसार, दशरथ ने अनेक यज्ञ-यूप बनवा कर इस नदी के तट को अलंकृत किया था (IX. 20)। इस नदी का तट सदैव मुनियों से भरा रहता था (रघुवंश, IX. 72)। दक्षिण टेंस नदी ऋक्ष पर्वत से उत्तर पूर्व की ओर बहती हुयी इलाहाबाद के आगे गंगा में मिलती है। यह बाँई ओर से दो तथा दाहिनी ओर से दो उपनदियों द्वारा आपूरित है।

तामसवन—कनिंघम ने इसे पंजाब में सुल्तानपुर से समीकृत किया है। इसे रघुनाथपुर भी कहा जाता है (ज० ए० सा० बं०, XVIII, पृ० 206, 479)।

थूण (स्थूण)—स्थानेश्वर के अंतर्गत देखिये।

त्रिगर्त्त—महाभारत (II, 48, 13) में वर्णित यह देश रावी एवं सतलज के मध्य स्थित था और इसकी राजधानी कहीं जालंधर के समीप थी। प्राचीन काल में यह काँकड़ा क्षेत्र का वाचक था (मोचीचन्द्र, ज्यॉग्रफिकल ऐंड इकॉनॉमिक स्टडीज़ इन द महाभारत, उपायनपर्व, पृ० 94)। दशकुमारचरितम् में त्रिगर्त्त देश में रहने वाले तीन समृद्ध गृहस्थों से संबंधित एक घटना का वर्णन है जो परस्पर भाई थे। उनके जीवन-काल में निरंतर बारह वर्षों तक वर्षा नहीं हुयी; वृक्षों में फल नहीं लगे; वर्षालु बादल दुर्लभ थे; अनेक स्रोत एवं नदियाँ सूख गयीं थी तथा नगर, ग्राम, कस्बे तथा अन्य संनिवेश नष्ट हो गये थे, (बृ० 150-151)। विस्तृत विवरण के लिए, द्रष्टव्य लाहा, ट्राइब्स इन ऐंश्येंट इंडिया, अध्याय, 12)।

तृणविन्दु-आश्रम—प्रजापति के पुत्र पुलस्त्य यहाँ पर समाधि लगाने के लिए आये थे। यह मेरु पर्वत के किनारे स्थित था। जब वह वैदिक ऋचाओ का पाठ कर रहे थे, तृणविन्दु ऋषि की कन्या उसके समक्ष उपस्थित हुयी। पहले तो वह अभिशप्त हुई किंतु बाद में पुलस्त्य ने उससे विवाह कर लिया।

तुलम्ब—यह कस्बा रावी नदी के बाँयें तट पर मुल्तान के उत्तर-पूर्व में 52 मील दूर पर स्थित है (कनिंघम, एं० ज्यॉ० इं०, 1924, पृ० पृ० 257)। मूलतः

इसे कुलम्ब कहा जाता था (कनिंघम, आर्क० स० रि०, V., पृ० 111 और आगे)।

तुसाम—तुसाम शिलालेख में इस गाँव का वर्णन है जो हरयाणा के हिस्सार ज़िले के मुख्यावास, भिवनी के पश्चिमोत्तर में लगभग 14 मील दूर पर स्थित है (का० इं० इं०, जिल्द, III)।

उद्यान—यह सु-पो-फा-सु-तु (Su-p'o-fa- su-tu) नदी के तट पर स्थित है, जो संस्कृत की शुभवास्तु, एरिअन की सुआस्टुस (Suastus), तथा आधुनिक स्वात नदी है। उद्यान में पंजकोर, बिजावर, स्वात तथा बुनीर के चार आधुनिक जिले संमिलित हैं। उद्यान की राजधानी का नाम मंगल था (कनिंघम, एं० ज्यॉ० इं०, 93 और आगे; ज० रा० ए० सो०, 1896, पृ० 655)। फा-ह्यान के अनुसार जो पाँचवीं शताब्दी ई० में भारत आया था, उद्यान या वू-चंग (Woo-chang) उत्तर भारत का भाग था। उद्यान, जिसका शाब्दिक अर्थ वाटिका है, पश्चिमी पंजाब (पाकिस्तान) के उत्तर में शुभवास्तु जिसे अब स्वात कहा जाता है, के तट पर स्थित था। यहाँ पर बौद्ध धर्म प्रचलित था। यहाँ पर 500 संघाराम या विहार थे। उनमें रहने वाले भिक्षु हीनयान धर्म के विद्यार्थी थे। बुद्ध इस देश में आये थे और यहाँ अपने पद-चिह्न छोड़ गये थे। फा-ह्यान वू-चंग में रुका था तथा यहाँ उसने ग्रीष्मावास किया था (लेग्गे, ट्रावेल्स ऑव फा-ह्यान, पृ० 28-29)। युवान-च्वाङ् के अनुसार उद्यान (Wu-chang-na) के निवासी बौद्ध धर्म का अधिक आदर करते थे। वे महायान मतावलंबी थे, किंतु वे हीनयानियों की विजय के अनुयायी थे। स्वात नदी के दोनों किनारों पर अनेक भग्न विहार थे और महायान धर्मावलंबी भिक्षुओं की संख्या क्रमशः कम हो गयी थी। वहाँ पर दस से अधिक देवमंदिर थे तथा विभिन्न संप्रदायों के अनुयायी अव्यवस्थित ढंग से रहते थे (वाटर्स, ऑन युवान-च्वाङ्, I, पृ० 225 और आगे)।

उग्गनगर—यह श्रावस्ती के निकट स्थित था। उग्ग नामक कोई व्यापारी व्यापार करने के लिए उग्गनगर से सावत्थी आया था (धम्मपद कामेंट्री, III. 465)।

उहा—यह नदी हिमवन्त में स्थित बतलायी जाती है (मिलिन्दपञ्हो, पृ० 70)।

उपवत्तनसालवन—यह मल्लों के प्रदेश में स्थित था। यहीं पर बुद्ध को महापरिनिब्बान प्राप्त हुआ था (दीघ, II, 169)।

उशीनर—पाणिनि ने अपनी अष्टाध्यायी (4, 2, 118; 2, 4, 20) में

इस देश का उल्लेख किया है। पतञ्जलि ने अपने महाभाष्य (1, 1, 8, पृ० 354; 1, 3, 2, पृ० 619; 4, 2, 118 में इसका वर्णन किया है। यह देश कुरु प्रदेश के उत्तर में स्थित था। (कैंब्रिज हिस्ट्री ऑव इंडिया, I, पृ० 84)। गोपथ-ब्राह्मण (II. 9) में उशीनरों को औदीच्य माना गया है। ऋग्वेद (X. 59, 10) में उनका उल्लेख है। त्सिमर का विचार है कि उशीनर पहले और आगे उत्तर पश्चिम में रहते थे। वैदिक इंडेक्स के लेखकों को यह मत मान्य नहीं है (जिल्द, I, पृ० 103)। पार्जिटर का विचार है कि वे पंजाब में रहते थे (एं० इं० हि० ट्रे० पृ० 109)। बौद्ध जातकों में प्रायः राजा उशीनर का वर्णन आता है (निमि जातक, फासबाल, VI. पृ० 199; नारदकस्सप जातक, VI, पृ० 251; जातक, IV. 181. और आगे)। विस्तृत विवरण के लिए द्रष्टव्य, लाहा, ट्राइब्स इन ऐंश्यंट इंडिया, पृ० 68 और आगे।

उशीनारा—उशीरध्वज के अंतर्गत द्रष्टव्य।

उशीरध्वज—इस पर्वत को कनखल के उत्तर में स्थित उशीरगिरि से समीकृत किया जा सकता है (इं० ऐं०, 1905, 179)। सिवालिक पर्वतमाला, जिसे भेद कर गंगा मैदान में अवतीर्ण होती है, उशीरगिरि से समीकृत की जा सकती है।

पालि साहित्य में वर्णित उशीनारा और कथासरित्सागर में उल्लिखित उशीनर-गिरि निःसंदेह दिव्यावदान में वर्णित (पृ० 22) उशीरगिरि और विनय टेक्स्ट्स (सें० बु० ई० ,भाग, II, पृ० 39) के उशीरध्वज से समीकृत है।

उत्तरकोशल—इसे अयोध्या से समीकृत किया गया है (तु० गोविन्द चन्द्र का कमौली दानपत्र, वि० सं० 1184; एपि० इं०, XXVI, भाग, II, 68 और आगे; इं० ऐं०, XV, पृ० 8, पा० टि० 46)। रामायण में अयोध्या को कोशल की प्राचीन और श्रावस्ती को उत्तरकालीन राजधानी बतलाया गया है (तु० जातक, सं० 454, और 385)। बाद में दक्षिण कोशल से अलग करने के लिए उत्तर कोशल को श्रावस्ती कहा जाने लगा। युवान-च्वाङ् ने उत्तर कोशल को श्रावस्ती कहा है, जिसकी परिधि 600 ली थी। यहाँ पर अनेक बौद्ध-विहारों के भग्न खंडहर थे। व्यवहार में यहाँ के निवासी ईमानदार और सुचरितों के प्रेमी थे। यह नगर सुधान्यपूर्ण था तथा यहाँ की जलवायु सम थी। विस्तृत विवरण के लिए द्रष्टव्य, बि० च० लाहा, ट्राइब्स इन ऐंश्यंट इंडिया, अध्याय, XXVIII.

कोशल का उत्तरी सीमांत अवश्य ही पहाड़ियों में रहा होगा, जिसे अब नेपाल कहा जाता है। इसकी दक्षिणी सीमा गंगा नदी थी और इसकी पूर्वी सीमा पर शाक्य देश की पूर्वी सीमा मिलती थी (कैंब्रिज हिस्ट्री ऑव इंडिया, I, 178)।

कोशल जन इस जनपद के शासक थे, जिनकी राजधानी श्रावस्थी थी (बुद्धिस्ट इंडिया, पृ० 25)।

उत्तरकुरु—वैदिक एवं परवर्ती ब्राह्मण साहित्य में इसका वर्णन कश्मीर के उत्तर में स्थित किसी देश के रूप में किया गया है। भागवतपुराण (I, 16, 13) में इसे उत्तर-कुरुओं का देश बतलाया गया। कुछ लोग इसे एक प्रकल्पित क्षेत्र (Mythical) मानते हैं। दीपवंस (पृ० 16) में वर्णित कुरुदीप को उत्तर कुरु से समीकृत किया जा सकता है। विनय भाष्य (समन्तपासादिका, पृ० 179) के अनुसार तिदसपुर उत्तरकुरु का एक नगर था। ललितविस्तर (पृ० 19) में उत्तरकुरु को एक प्रत्यंतद्वीप कहा गया है (तु० बोधिसत्त्वावदानकल्पलता, पृ० 48, 50, 71)। विस्तृत विवरण के लिए द्रष्टव्य, लाहा, ज्यॉग्रेफिकल एसेज़, पृ० 29.

वैद्यूतपर्वत—यह कैलास पर्वत का एक भाग है, जिसके पाद में मानससरोवर स्थित है।

वाहलीक—योगिनीतंत्र (1.14) में इसका वर्णन किया गया है। चन्द्र के मेहरौली लौहस्तंभ से यह निर्विवादरूप से सिद्ध होता है कि वाल्हीक जन सिन्धु नदी के उस पार स्थित थे।[1] कुछ विद्वान चन्द्र को समुद्रगुप्त के प्रयाग स्तंभलेख में वर्णित चन्द्रवर्मन से, और कुछ लोग ससुनियाँ शिलालेख में वर्णित उसी नाम के राजा से समीकृत करते हैं। कहा जाता है कि इसने वंग देश में संगठित रूप से एक साथ सामना करने वाले शत्रुओं को पराङ्मुख कर दिया था और युद्ध करते करते सिन्धु के सात मुहानों को पार करके वाह्लीकों पर विजय प्राप्त की थी। अतएव वाह्लीक देश को वर्तमान बल्ख देश से समीकृत करने के प्रयास किये गये हैं। वाल्हीकों को बैक्ट्रियोइ (Baktrioi) से समीकृत किया जाना चाहिये, जो टॉलेमी के समय में अराकोशिया के निकटवर्ती प्रदेश में रहते थे।[2] रामायण (किष्किन्ध्या काण्ड, 44, श्लोक, 13) के अनुसार वाल्हीक लोग उत्तर में रहने वाले निवासियों से संबद्ध थे। वाह्लीक देश को किसी भी स्थिति में पंजाब के पार स्थित किसी देश से समीकृत किया जाना चाहिये।

वाल्मीकि-आश्रम—विख्यात् रामायणकार वाल्मीकि का आश्रम कानपुर से 14 मीर दूर बिठूर में था। यहाँ पर सीता ने लव-कुश नामक अपने युगल पुत्रों

---

[1] वि० च० लाहा, ट्राइब्स इन ऐंश्यंट इंडिया, अध्याय, XI; ज्यॉग्रेफिकल एसेज, पृ० 137; ऐंश्यंट इंडियन ट्राइब्स, II, पृ० 58-60.

[2] इं० ऐं०, 1884, पृ० 408.

को जन्म दिया था। यह आश्रम चित्रकूट पर्वत के एक रमणीक कोने में स्थित था। कालिदास ने इस आश्रम को शत्रुघ्न के मार्ग में स्थित बतलाया है जिस समय वे लवणासुर का वध करने के लिए अयोध्या से मधुपघ्न जा रहे थे, जो आधुनिक मथुरा से 5 मील दक्षिण-पश्चिम में है,[1] भरद्वाज ऋषि ने राम को गंगा-यमुना के संगम पर जाने का निर्देश दिया था। राम, सीता और लक्ष्मण सहित यमुना नदी पार करके इसके दाहिने तट पर पहुँचे थे। यहाँ से दो मील की दूरी पर उन्होंने यमुना-तट पर एक जंगली क्षेत्र देखा था। शाम को वे इस जंगल के एक मैदानी इलाके में पहुँचे जहाँ पर उन्होंने रात गुजारी थी। प्रातः होने पर वे अपनी यात्रा पर चल पड़े और चित्रकूट पर्वत पर आये। तत्पश्चात् उन्होंने वाल्मीकि का आश्रम देखा। रामायण के अनुसार (1, 2, 3; VII. 57, 3) वाल्मीकि का आश्रम गंगा और तमसा (दक्षिणी टोंस) के संगम पर स्थित बतलाया जाता है। पार्जिटर[2] के अनुसार यह तमसा (पूर्वी टोंस) के तट पर स्थित था। रामायण (VII, अध्याय, 57) से ज्ञात होता है कि सीता को देश-निष्कासन के लिए वाल्मीकि के आश्रम की ओर ले जाते समय लक्ष्मण ने गंगा नदी पार की थी।[3] तमसा को पूर्वी टोंस ही होना चाहिये, जिसके तट पर वाल्मीकि का आश्रम स्थित था।[4] इस आश्रम में मथुरा से लौटकर शत्रुघ्न भी आये थे।[5]

वेणुग्राम—भरहुत पूजापरक नामपत्र (सं० 22) में वेणुग्राम या वेणुवग्राम (बाँस का गाँव) का नाम आता है, जिसे कनिंघम के अनुसार कोसम के उत्तर-पूर्व में स्थित बेन-पूर्व नामक आधुनिक गाँव से समीकृत किया जा सकता है।

वेरञ्ज—वेरञ्ज मधुरा (मथुरा) के निकट स्थित एक गाँव था, जहाँ पर कुछ वेरञ्ज-ब्राह्मणों के निमंत्रण पर बुद्ध गये थे।[6] मथुरा से वेरञ्ज जाते समय एक बार बुद्ध रास्ते में रुक गये थे और उन्होंने एक गृहस्थ को प्रवचन दिया था।[7] अकाल-पड़ने पर भिक्षुओं के साथ एक बार बुद्ध वेरञ्ज में रुके थे। भिक्षु लोग

---

[1] रघुवंश, XV, 11, 15.

[2] ज० रा० ए० सो०, 1894, 235.

[3] तु० रघुवंश, XIV . 52.

[4] ज० रा० ए० सो० बं०, XV, 1949, सं० 2, लेटर्स, पृ० 132, पाद टिप्पणी, 4.

[5] रामायण, उत्तरकाण्ड, सर्ग, 84, श्लोक, 3.

[6] धम्मपद अट्ठकथा, II, पृ० 153.

[7] अंगुत्तर निकाय, II, 57.

पीड़ितों के लिए अन्न संचित करने में असफल रहे, परंतु बाद में घोड़े के कुछ व्यापारियों ने उनकी सहायता की थी।[1] एक ब्राह्मण ने बुद्ध से यह पूछा कि वे वयोवृद्ध ब्राह्मणों का सम्मान क्यों नहीं करते। बुद्ध ने उनको एक उपयुक्त उत्तर दिया जिसके फलस्वरूप उसने बौद्ध धर्म स्वीकार कर लिया था।[2] बुद्ध ने वेरञ्ज में चातुर्मास्य व्यतीत किया।[3] वर्षा ऋतु के अंत में उन्होंने इसे छोड़ दिया और वाराणसी पहुँचे (विनय, III, 11)।

वेत्रवती—इस नदी को आधुनिक बेतवा से समीकृत किया जाता है, जो गंगा की एक छोटी सहायक नदी है। यह यमुना नदी में मिलती है।

वेत्तवती-जातक— (जिल्द, IV, पृ० 388) के अनुसार यह नगर इसी नाम की एक नदी के तट पर स्थित था।

विभ्रट–हिमालय पर्वत के समीप यह एक विशाल पर्वत है (कालिका पुराण, अध्याय , 78, 37)।

विन्ध्याचल—यह पहाड़ी मिर्जापुर के समीप स्थित है, जिसके शिखर पर बिन्दुवासिनी का विख्यात मंदिर स्थित है। विन्ध्याचल कस्बा, जिसे पंपापुर भी कहा जाता है, मिर्जापुर से पाँच मील पश्चिम में स्थित है (भविष्यपुराण, अध्याय, IX)। इसका वर्णन योगिनीतंत्र (2, 9, पृ० 214 और आगे) और कालिका-पुराण (अध्याय, 58, 37) में किया गया है।

विन्दुसरोवर—इसका वर्णन योगिनीतंत्र में (2, 5, 141, और आगे) में किया गया है। गंगोत्री से दो मील दक्षिण में यह रुद्रहिमालय पर स्थित है, जहाँ पर भगीरथ ने स्वर्ग से गंगावतरण के लिए तपस्या की थी (रामायण, I, 43; मत्स्यपुराण, अध्याय ,121)। ब्रह्माण्ड पुराण (अध्याय, 51) में इस सरोवर को कैलास पर्वतमाला के उत्तर में स्थित बतलाया गया है (नं० ला० दे, ज्याँग्रेफिकल डिक्शनरी, द्वितीय संस्करण, पृ० 38)।

विपाशा—इस नदी का नाम पाणिनि की अष्टाध्यायी (4, 2, 74) में आया है। यह ब्यास नदी है जिसे यूनानियों द्वारा वर्णित विपासिस (Vipasis) या हाइपैसिस (Hypasis) अथवा हाइफैसिस (Hyphasis) से समीकृत किया गया है, जो शतद्रु या सतलज की एक सहायक नदी है। प्राचीनकाल में संभवतः यह एक स्वतंत्र नदी थी। महाभारत में इस नदी के उद्गम का उल्लेख

---

[1] विनय, III, 6.

[2] अंगुत्तर निकाय, IV, 172.

[3] जातक, III, 494.

है। विश्वामित्र द्वारा अपने पुत्रों का वध किये जाने पर भग्नहृदय वशिष्ठ ने आत्म-हत्या करना चाहा। अतएव वे स्वयं अपना हाथ पैर बाँध कर नदी में कूद पड़े, परंतु नदी के तीव्र प्रवाह ने उन्हें बंधनमुक्त कर दिया (वि=विगत+पाश) और इस प्रकार नदी के तट पर लग कर वे बच गये। मार्कण्डेय पुराण (सर्ग, LVII, 18) में इस नदी का उल्लेख है। भागवत (X. 79, 11) एवं पद्म पुराण (उत्तर-खण्ड, श्लोक, 35-38) में भी इसका वर्णन मिलता है। यह नदी रावी के स्रोत के निकट रोहतंग दर्रे पर स्थित पीरपंजल पर्वतमाला से निकलती है। यह अनेक हिम नदों द्वारा आपूरित होती है। यह चम्बा से दक्षिण-पश्चिम दिशा में बहती हुई शतद्रु में मिलती है।

वितस्ता—ऋग्वेद (X. 75, 5; निरुक्त, IX. 26; तु० पाणिनि 1, 4, 21 पर काशिकावृत्ति) में वर्णित यह नदी पंजाब की पाँच नदियों से सबसे पश्चिमी नदी है। सिकंदर के इतिहासकारों द्वारा वर्णित हाइडेस्पीज़ (Hydaspes) और टॉलेमी द्वारा वर्णित बिडास्पीज़ (Bidaspes) यही है। सिन्धु की चार प्रमुख पूर्वी सहायक नदियों में सबसे पश्चिमी नदी वितस्ता (पालि, वितंसा) या झेलम ही है। यह कश्मीर के पीरपंजल पर्वतमाला से निकलती है, और पूँछ के आगे पश्चिम की ओर वक्रगति से बहती है और तब यह दक्षिण में घूमकर दक्षिण-पश्चिमाभिमुख होकर प्रवाहित होती है। मीरपुर के पश्चिम में और झेलम कस्बे से थोड़ी दूर पूर्व में चल कर यह पश्चिम की ओर मुड़ जाती है और पूर्वोत्तर में पीर-दादन तथा दक्षिण-पश्चिम में खोसब के बीच एक उभार बनाती हुयी यह नदी दक्षिण की ओर बहती है। झंग एवं झंग मघियाना के आगे यह चेनाव में मिलती है। यह नदी कश्मीर में विभिन्न स्थानीय नामों यथा, विरनग, अदपल तथा संद्रन नामों से विख्यात है और श्रीनगर होकर बहती है। ऋग्वेदिक आर्य इसे वितस्ता के नाम से जानते थे (X. 75)। भागवतपुराण (V. 19, 18) में एक नदी के रूप में इसका वर्णन किया गया है।

वृन्दावन—यह एक हिन्दू तीर्थ-स्थल है। यह मथुरा के उत्तर में छह मील दूर स्थित है। हरिवंश (अध्याय, LXII, 22-23) में यमुना-तट पर स्थित एक रमणीक वन के रूप में इसका वर्णन किया गया है, जिसमें दूर्वा, फलों एवं कदम्ब वृक्षों की प्रचुरता थी। गोपियों के साथ कृष्ण यहाँ पर लीला किया करते थे।[1] भागवत पुराण (X. 11, 28, 35, 36, 38; X. 22.29; X. 46, 18), में इसका वर्णन हुआ है।

---

[1] **कनिंघम, एं० ज्यॉ० इं०, पृ० 429-30.**

वृषपर्व आश्रम—यह गन्धमादन पर्वत के समीप स्थित है जो रुद्र हिमालय का एक अंग है किंतु महाकाव्यकारों के अनुसार यह कैलास पर्वतमाला का भाग है।

व्यास-आश्रम—पुराणों एवं महाभारत के लेखक ऋषि व्यास का आश्रम हिमालय में अवस्थित गढ़वाल में बद्रीनाथ के समीप मनल नामक गाँव में स्थित है।

यमुना—इस नदी का वर्णन ऋग्वेद (X. 75; V. 52, 17; VIII. 18. 19; X. 75, 5,)[2], अर्थववेद (IV. 9, 10) तथा ऐतरेय ब्राह्मण (VIII. 14, 4) में किया गया है। कलिन्दगिरि[3] से निकलने के कारण यह कलिन्दकन्या नाम से विश्रुत है। ऋग्वेद (VII. 18, 19) के अनुसार तृत्सुओं और सुदास ने अपने शत्रुओं को इस नदी के तट पर पराजित किया था। तृत्सुजन का प्रदेश पूर्व में यमुना एवं पश्चिम में सरस्वती नदी के मध्य स्थित था। ऐतेरय (VIII. 23) एवं शतपथ ब्राह्मणों (XIII. 5, 4 ,11) में यमुना के तट पर भरतों को विजय कीर्ति मिली थी। पञ्चविंश ब्राह्मण (IX. 4, 11; XXV. 10, 24; 13, 4), साङ्ख्यायनश्रौतसूत्र, (XIII. 29, 25, 33); कात्यायन श्रौतसूत्र (XXIV. 6, 10, 39), लाट्यायन श्रौतसूत्र (X, 19, 9, 10) एवं अश्वलायन श्रौतसूत्रों (XII. 6. 28) में इस नदी का वर्णन मिलता है। पतञ्जलि ने अपने महाभाष्य (I, 1, 9, पृ० 436; 1, 4, 2, पृ० 670) में इसका वर्णन किया है। योगिनी-तंत्र (2, 5, 139-140) एवं कालिका पुराण (अध्याय, 15, 8) में इसका उल्लेख किया गया है। कालिन्दी नाम से भी विश्रुत इस नदी का वर्णन भागवतपुराण (III. 4. 36; IV. 8. 43; VI. 16. 16; VIII. 4. 23; IX. 4. 30; IX. 4. 37; X. 58-22) तथा महावस्तु (III. 201) में हुआ है। बाण ने अपनी कादम्बरी (पृ० 62) में इसे कालिन्दी कहा है, क्योंकि इसका जल काला प्रतीत होता है। यह नदी यमुना-गंगा के मध्यवर्ती पनढर पर स्थित बन्दरपूँछ नामक एक शिखर के ढालों से निकलती है। यमुनोत्री का मंदिर बंदरपूँछ के पाद में स्थित है। गंगा की पहली और बड़ी पश्चिमी सहायक नदी खास यमुना ही है, जो कामेत पर्वत के नीचे हिमालय पर्वत माला से निकलती है। उत्तर भारत के मैदानों में प्रवेश करने के पहले यह सिवालिक पर्वतमाला और गढ़वाल में घाटी बनाती है और तब दक्षिण दिशा में गंगा के समानांतर बहती है। मथुरा के आगे

---

[1] ज० रा० ए० सो०, 1883, पृ० 361.

[2] रघुवंश VI, 48.

प्रयाग या इलाहाबाद में गंगा के संगम तक यह दक्षिण-पूर्व की दिशा में प्रवाहित होती है। देहरादून जिले में इसमें पश्चिम की ओर से दो सहायक नदियाँ मिलती हैं, जिनमें से ऊपरी का नाम उत्तरी टोंस नदी है। आगरा और इलाहाबाद के मध्य बाँयीं ओर से इसमें चर्मण्वती (आधुनिक चंबल), कालीसिन्ध, वेत्रवती (आधुनिक बेतवा), केन और पयण्णी (आधुनिक पैसुनी) नामक चार सहायक नदियाँ मिलती हैं। इस नदी के तट पर अनेक पवित्र स्थान स्थित हैं। गंगा-यमुना के बीच में स्थित किसी भी स्थान पर किये गये एक महायज्ञ में काश्यप के शिष्य शरभंग विद्यमान थे।[1] चीनी यमुना को येन-मोक-ना (Yen-mok-na) नाम से जानते हैं। यह शूरसेन एवं कोशल तथा और आगे कोशल एवं वंश के बीच की सीमा थी। शूरसेन-प्रदेश की राजधानी मदुरा (मथुरा) तथा वंश की राजधानी कोसाम्बी इसके दाहिने तट पर स्थित थी। यमुनोत्री को जो कुरसोली से 8 मील दूर है, यमुना नदी का स्रोत माना जाता है। इसे यूनानी इरैन्नेबोस (Erannabos) से समीकृत किया जाता है (हिरण्यवाह या हिरण्यबाहु)। प्राचीन बौद्ध ग्रंथों में वर्णित पाँच महानदियों में से यमुना एक है।[2] यह आधुनिक यमुना है। स्कन्दपुराण में वालुवाहिनी को इस नदी की एक सहायक नदी बतलाया गया है।

यौगन्धर—इसे दिल्ली के पश्चिमोत्तर में स्थित हरयाणा राज्य के झिंद जिले (भूतपूर्व झिन्द रियासत) से समीकृत किया जा सकता है। इसका वर्णन पाणिनि की अष्टाध्यायी (4, 2, 130) और महाभारत (III, 129, 9) में किया गया है तथा इसे कुरुक्षेत्र का प्रवेश द्वार कहा गया है।

यवनदेश—पश्चिमोत्तर सीमांत पर स्थित यूनानियों को योन या यवन कहा जाता था। वे सबसे अधिक सम्मानित विदेशी थे। किंतु सभी यवनों को शूद्र स्त्रियों एवं क्षत्रिय पुरुषों के संसर्ग से उत्पन्न संतान माना जाता था।[3] रामायण (I, 54, 21) में शकों-यवनों के मिश्रित ओर्दु एवं हिंदुओं के संघर्ष का उल्लेख है (तु० शकान्यवयनमिश्रितान्)। किष्किन्ध्याकाण्ड (IV. 43. 11-12) में सुग्रीव ने यवन-देश एवं शकों के नगरों को कुरु-मद्रों और हिमालय के बीच में स्थित बतलाया है। पाणिनि ने अपनी अष्टाध्यायी (4. 1. 175) में इसका उल्लेख किया है। वाराहमिहिर की बृहत्संहिता (XIV · 18) में इस क्षेत्र को म्लेच्छों द्वारा निवसित बतलाया गया है (म्लेच्छा हि यवनाः)। गौतम बुद्ध एवं

---

[1] **महावस्तु**, I, पृ० 160.

[2] **अंगुत्तर**, IV. 101; **संयुत्त**, II, 135; V. 401, 460, 461.

[3] **गौतमधर्मशास्त्र**, IV. 21.

अस्सलायन के काल में किसी यवन या योन राज्य के अस्तित्व का साक्ष्य मज्झिमनिकाय (III, 149) से प्राप्त होता है। मिलिन्दपञ्हो[3] में निर्वाण-प्राप्ति के लिए यवनों के देश को एक उपयुक्त स्थान बतलाया गया है। महावस्तु (जिल्द, I, पृ० 171) में योनों की एक सभा का उल्लेख है, जहाँ पर निर्णीत कोई भी बात उन पर लागू होती थी। डॉ० दे० रा० भंडारकर का मत है कि (कार्माइकेल लेक्चर्स, 1921, पृ० 29) कि छठीं शताब्दी ई० पू० में पाणिनि के अस्तित्व तथा उनके द्वारा यूनानियों की लिपि यवनानी का उल्लेख कोई आश्चर्यजनक बात नहीं है। वस्तुतः यवनानी शब्द से पाणिनि का तात्पर्य किसी लिपि से नहीं वरन् केवल यवन के स्त्रीलिंग शब्द से था। कात्यायन ने यवनानी एवं यवनी में अंतर बतलाया है। यवनानी शब्द का प्रयोग उन्होंने केवल यूनानी लिपि के किसी रूप के सीमित अर्थ में किया है। यवन देश की ठीक स्थिति को निश्चित करना दुष्कर है—(भंडारकर, कार्माइकेल लेक्चर्स, 1921, पृ० 29; राय चौधरी, पोलिटिकल हिस्ट्री ऑव ऐंश्येंट इंडिया, चतुर्थ संस्करण, पृ० 253)। प्राक्-सिकंदर युगीन किसी यूनानी (अधिक उचित ढंग से, आयोनियन) उपनिवेश के अस्तित्व का अनुमान भारत के पश्चिमोत्तर सीमांत से संगृहीत मुद्राओं के साक्ष्य से लगाया जा सकता है, जो एथेन्स की प्राचीनतम मुद्रा-प्रकारों से मिलती-जुलती हैं (न्यूमिस्मेटिक क्रोनिकिल, XX. 191; ज० रा० ए० सो० 1895, 874)। यवनों को उत्तरापथ के अन्य जनों यथा, काम्बोज, गन्धार, किरात तथा बर्बर के साथ वर्गीकृत किया गया है (तु० महाभारत, XII. 207. 43)। उनका वर्णन भागवतपुराण (II. 4. 18; 7. 34; IV. 72, 23; IX, 8. 5; 20, 30) में भी किया गया है। इनका उल्लेख अशोक के पाँचवें शिलालेख तथा बीर पुरुषदत्त के नागार्जुनिकोंड अभिलेख में किया गया है। पाँचवें एवं तेरहवें शिलालेखों में काम्बोजों के साथ योनों का वर्णन किया गया है (इंस्क्रिप्शंस ऑव अशोक, ले० भंडारकर और मजुमदार, 53-54)। वाशिष्ठीपुत्र पुलुमायी के नासिक गुहालेख में गौतमी पुत्र शातकर्णि की प्रशंसा शकों, यवनों एवं पहलवों (पार्थियनों) के संहारक के रूप में की गयी है तथा उसे क्षहरात राजकुल का उत्पादन करने वाला सातवाहन नरेश बतलाया गया है (बि० च० लाहा, उज्जैनी इन ऐंश्येंट इंडिया, पृ० 18)। यवनदेश, धारयद्वसु के नक्श-ए-रुस्तम अभिलेख में वर्णित आयोनिया ही है। अशोक के अभिलेखों में न केवल यवनों का ही उल्लेख हुआ है, वरन् तुषास्फ नामक एक यवन अधिकारी या सामंत यवनराज का भी वर्णन है, जो अशोक के शासन-

[1] ट्रेंक्नर संस्करण, पृ० 327.

कालमें सौराष्ट्र (काठियावाड़) का राज्यपाल था और जिसकी राजधानी गिरिनार (गिरनार) थी, जैसा कि महाक्षत्रप रुद्रदामन के जूनागढ़ अभिलेख से प्रकट होता है (लगभग 150 ई०)। विस्तृत विवरण के लिए द्रष्टव्य, ओ० स्टाइन, यवनज इन अर्ली इंडियन इंस्क्रिप्शंस, इंडियन कल्चर, भाग, I, पृ० 343, और आगे; बि० च० लाहा, ट्राइब्स इन एंश्येंट इंडिया, अध्याय, XXXI; बि० च० लाहा, इंडोलॉजिकल स्टडीज भाग I, 5 और आगे। भंडारकर ने बतलाया है कि तेरहवें शिलालेख में वर्णित योनों को वल्ख (Bactria) के यवनों से समीकृत करना असंभव है, क्योंकि वह लेख उस समय प्रचलित किया गया था जब सीरिया-नरेश अन्तियोकस थियास जीवित था। उनका मत है कि तेरहवें शिलालेख में वर्णित यवन अति संभवत: सिकंदर के बहुत पहले बड़ी संख्या में भारत के कतिपय बहिर्वर्ती प्रांतों में आकर बस गये थे (कार्माइकेल लेक्चर्स, 1921, 27, 28 और आगे)। इस मत की पुष्टि मुद्रा-साक्ष्य से भी होती है।

पतञ्जलि के महाभाष्य (3, 3, 2, पृ० 246, कीलहार्न संस्करण के अनुसार किसी यवन ने साकेत या अयोध्या तथा माध्यमिका (चित्तौड़ के पास) को नष्ट किया था (अरुणद् यवन: साकेतम्, अरुणद् यवनो माध्यमिकाम्)। शुङ्ग राजकुमार वसुमित्र और यवनों में सिन्धु के दक्षिणी तट पर युद्ध हुआ था। भारत के अभ्यंतर में यूनानी सत्ता के विस्तार के प्रयत्न को सबसे पहले शुङ्गों ने निष्फल किया था। पश्चिमी भारत में यवन सत्ता के अंतिम अवशेष दक्कन में आंध्रों या सातवाहनों के उत्कर्ष के परिणामस्वरूप नष्ट हो गये थे। पार्थियनों के आक्रमण द्वारा पश्चिमोत्तर भारत से यवनों का सदा के लिए उन्मूलन हो गया था।

यमदग्नि-आश्रम—यह आश्रम उत्तरप्रदेश के गाजीपुर जिले में स्थित है। कुछ विद्वानों के अनुसार यह उत्तर प्रदेश के बलिया जिले से 36 मील पश्चिमोत्तर में खैरादि में स्थित है।

युगन्धर—महाभारत के (विराटपर्व, अध्याय, I, वनपर्व, अध्याय, 128) अनुसार यह प्रदेश जो कुरुक्षेत्र के समीप था, यमुना के पश्चिमी तट पर तथा कुरुक्षेत्र के दक्षिण में स्थित बतलाया जाता है।

जेद—पश्चिमोत्तर सीमांत में उण्ड (ओहिंद) के समीप स्थित यह एक गाँव है (एपि० इं० XIX. पृ० 1)।

II

दक्षिणी भारत

अच्युतपुरम्—यह गंजम जिले में मुखलिंगम के समीप है, जहाँ से इन्द्रवर्मन के पत्राभिलेख प्राप्त हुये थे। इन पत्रों में गंगवंशीय किसी कलिंग-नरेश द्वारा कलिंगनगरम् में दिये गये भूमिदान का उल्लेख हुआ है (एपि० इं०, III, 127)।

अधिराजेन्द्रवलनाडु—यह एक जिले का नाम है (सा० इं० इं०, I, 134)। यह जयंकोण्ड-शोर-मण्डलम में स्थित है।

अगैयारु—यह एक नदी का नाम है, जो मांदोत्तम ग्राम से होकर गुजरती थी; (वही II,, 62)।

अगस्त्य-मलाई—त्रावणकोर में स्थित यह एक पहाड़ी है। उसी पहाड़ी से ताम्रपर्णी नदी निकलती है (डब्ल्यू० डब्ल्यू० हंटर, द इंपीरियल गजेटियर्स ऑवइंडिया, जिल्द, I, पृ० 46)।

ऐम्बुण्डी—यह आधुनिक अम्मुंडी गाँव का प्राचीन नाम है (सा० इं० इं०, I, पृ० 87, 135, 136)। यहाँ के निवासियों ने अपने आराध्य देव शिव को एक भूखंड दिया था।

ऐरावट्ट—इसे कटक जिले के बाँकी थाने में स्थित रटागढ़ से समीकृत किया गया है (देवानन्ददेव का बारिपादा संग्रहालय पत्र; एपि० इं०, XXVII, भाग, VII, जुलाई, 1948, पृ० 328 भी द्रष्टव्य)।

अजंता—अजंता की दो गुफाएँ औरंगाबाद से 60 मील पश्चिमोत्तर और भुसावल से लगभग 35 मील दक्षिण में मुख्य रेलवे पर स्थित है। घाट की तलहटी में स्थित फर्दापुर नामक एक छोटे कस्बे से अजंता की गुफाओं तक पहुँचा जा सकता है। औरंगाबाद से फर्दापुर तक एक अच्छी मोटर से जाने योग्य सड़क है। अजंता की 29 गुफाएँ विभिन्न समयों पर काटी, तराशी और चित्रित की गयी हैं। विंसेंट स्मिथ के अनुसार अजंता के अधिकांश चित्र छठीं शताब्दी ई० में कालांकित होने चाहिए। तद्जनित राजनीतिक परिस्थितियाँ बौद्ध धर्म की सेवा के लिए समर्पित मूल्यवान कलाकृतियों की रचना के लिए अनुकूल न रहीं होंगी। अजंता

में दो प्रकार की गुफाएँ—चैत्य एवं विहार प्राप्त होती हैं।— नवीं एवं दसवीं गुफाएँ जो सर्वाधिक प्राचीन हैं, पहली एवं दूसरी शताब्दी ई० पू० की हैं। विहारों के अंतर-कक्षों में प्राप्त होने वाली बुद्ध की विशाल प्रतिमाएँ प्रायः प्रवचन-मुद्रा में हैं। अजंता के भित्ति-चित्र एवं चित्रण बौद्ध स्थापत्य के अत्यंत महत्त्वपूर्ण पक्ष हैं। अलंकरण-प्रधान चित्र एवं छतों के भीतरी भाग के चित्रण प्राचीन भारतीय ललित कला के प्राचीनतम उदाहरण हैं। इन गुफाओं में जातकों के दृश्य सुन्दर ढंग से चित्रित किए गए हैं। छब्बीसवीं गुफा में दीवालों पर अंकित सबसे अधिक उल्लेखनीय नक्काशी वह विशाल एवं सघन कृति है, जिसमें मार द्वारा बुद्ध को प्रलोभित करने का दृश्य प्रदर्शित किया गया है। इसमें जीवन-चक्र (Wheel of life), उड़ने हुये गन्धर्वों एवं अप्सराओं के भी चित्र प्राप्त होते हैं। ये गुफाएं अपने युग के बौद्धों की भावनाओं एवं आकांक्षाओं का एक सजीव चित्र प्रस्तुत करती हैं। इन गुहाओं में पक्षियों, बंदरों और वन्य जातियों आदि सभी के चित्र प्रस्तुत किये गये हैं। नदियों, समुद्रों, पथरीले समुद्र-तटों, मछलियों आदि की श्रेष्ठ कलात्मक महत्ता है। बरामदे के पीछें बाँईं ओर दीवाल पर चित्रित बुद्ध की भव्य आकृति की संपूर्ण संसार में प्रशंसा की गई है। पतले स्तंभों पर आश्रित आकृतियों के शीर्ष पर टिकी हुयी एक चिपटी छत पर महलों एवं भवनों के चित्र बनाये गये हैं: उच्च वर्ग के लोग कटि के ऊपरी भाग में कपड़े नहीं वरन् अधिक आभूषण, भुजबंध, हार और चोटियाँ आदि पहनते थे और निम्न वर्ग के लोग अधिक वस्त्र धारण करते थे, किंतु वे बिना अलंकारों के ही चित्रित किये गये हैं। भिक्षु अपने सामान्य वेष में प्रदर्शित किये गये हैं। विशिष्ट महिलाएँ अधिक आभूषण धारण करती थीं। दसवीं गुफा में प्रदक्षिणा-पथों के डाटों के बीच के चित्र बहुत बाद के हैं। सोलहवीं गुफा एक अत्यंत महत्त्वपूर्ण विहार है। बीसवीं गुफा में बरामदे तक ले जाने वाली नक्काशी की हुई खंभेदार सीढ़ी, इतराती बालाओं के भव्य चित्रों से सज्जित स्तंभों के शीर्ष तथा प्राचीन तोरणों का स्मरण दिलाने वाली मंदिरों की ड्योढ़ियाँ भारत के सामाजिक, धार्मिक एवं गृह-शिल्प के विकास को समझने में सहायक सिद्ध होती हैं। मंदिर के सामने की बरसाती एक मण्डप की भाँति हैं। पहली गुफा में पुजारियों का समूह सचमुच बहुत कलापूर्ण है। सैनिक धनुष-बाण, भालों आदि से सज्जित चित्रित किये गये हैं। पुरुष आगे गाँठदार, ऊँचा साफ़ा पहनते थे। बड़ा और भारी कण्ठ-माल सुस्पष्ट है। ये सब वस्तुएँ हमें साँची की प्राचीन वास्तु-शैली तथा मथुरा से प्राप्त प्राचीनतम् वास्तु-चित्रों का स्मरण दिलाती हैं।

अलनाडु—यह अरुमोरिदेववलनाडु की एक तहसील है (साउथ इंडियन

इंस्क्रिप्शंस, जिल्द II, पृ० 333-456)। यहाँ पर राजचूडामणि चतुर्वेदिमंगलम् था (द्रष्टव्य रंगाचारी की तालिका ,संख्या , 326, मदुरा जिला)।

अमरकुण्ड—आन्ध्र में स्थित यह एक कस्बा है। इसके समीप ही एक पर्वत है, जिसपर ऋषभ एवं शान्तिनाथ की प्रतिमाओं से अलंकृत एक सुंदर मंदिर स्थित है। विस्तृत विवरण के लिए द्रष्टव्य बि० च० लाहा, सम जैन कैनॉनिकल सूत्राज़, पृ० 185.

अमरावती (पालि-अमरवती)—यह एक कस्बे का नाम है जिसमें अमरेश्वर-मंदिर स्थित है (एपि० इं०, भाग, VII, पृ०17)। इसका प्राचीन नाम धान्यघट या धान्यघटक है, जिसे धान्यकट या धान्यकटक (धान्य का नगर) से समीकृत किया जाता है (हुल्श, साउथ इंडियन इंस्क्रिप्शंस जिल्द, I, पृ० 25)। यह अपने स्तूप के लिए प्रसिद्ध है (एपि० इं०, VI,146-157; तु० सी० आई०,VI. 17 और आगे)। यह अंधापतिय की राजधानी थी (नंद लाल दे, ज्यॉग्रेफिकल डिक्शनरी, पृ० 7)। बुद्ध अपने किसी पूर्वजन्म में सुमेध नामक एक ब्राह्मण कुमार के रूप में इस नगर में पैदा हुये थे (धम्मपद अट्ठकथा, I, पृ० 83)। इसे धरणिकोट नदी के समीप आधुनिक अमरावती नगर से समीकृत किया जा सकता है, जो कृष्णा नदी के तट पर स्थित अपने भग्न स्तूप के लिए विख्यात प्राचीन अमरावती से एक मील पश्चिम की ओर स्थित है। अमरावती स्तूप बेज़वाड़ा के लगभग 18 मील पश्चिम में और कृष्णा नदी के दाहिने तट पर स्थित धरणी के दक्षिण में आन्ध्र प्रदेश राज्य के कृष्णा जिले में स्थित इसके मुहाने से लगभग 60 मील की दूरी पर पाया गया है। अमरावती स्तूप का निर्माण आन्ध्रभृत्य-नरेशों ने कराया था, जो बौद्ध मतावलंबी थे (ज० रा० ए० सो० ,III, 132)। अमरावती चैत्य युवान-च्वाङ् द्वारा वर्णित पूर्वशैल बिहार ही है। अमरावती के उत्खनन संबंधी विवरण के लिए द्रष्टव्य, आर्क० सं० इं०, रि० ,III ,1905-06,116 और आगे; आर्क० स० इं०, एनुअल रिपोर्ट, 1908-09, 88 और आगे।

अंबत्तूर-नाडु—यह चिंगलपुट जिले के सैदपेट तालुक में स्थित एक गाँव का नाम है (सा० इं० इं० , जिल्द, III, पृ० 287)।

अम्बासमुद्रम्—यह ताम्रपर्णी नदी के उत्तरी तट पर स्थित है और तिनेवल्ली जिले में इसी नाम के तालुक का मुख्यावास है। अम्बासमुद्रम् का प्राचीन नाम इलंगोयकुड्डि था। मुल्लिनाडु में स्थित यह एक ब्रह्मदेय था (वरगुणपाण्डय का अम्बासमुद्रम् अभिलेख, एपि० इं०, IX, 84; एपि० इं०, XXV, भाग, I , पृ० 35 और आगे)।

अंधापतिय—आदि पल्लव नरेश शिवस्कन्दवर्मन के मयिडवोलु ताम्रपत्र अभिलेख में अंधापतिय का उल्लेख है (अन्धापथ, एपि० इं०, VI. 88)। इस स्थान के नाम का संस्कृत समानार्थक शब्द अंधावती हो सकता है। अंधापतिय या आन्ध्रपथ गोदावरी व कृष्णा के बीच में स्थित आन्ध्र देश है, जो पश्चिमी भारत में आन्ध्र देश से पृथक पूर्वी आन्ध्र क्षेत्र है (हुल्ट्श, सा० इं० इं०, I, पृ० 113; विस्तृत विवरण के लिए, द्रष्टव्य, ल्गहा, ट्राइब्स इन ऐंश्येंट इंडिया, पृ० 164 और आगे)। पालि ग्रंथों में अंधकों का वर्णन मुण्डकों, कोलकों और चीनों के साथ किया गया है (अपदान, भाग, II, पृ० 359)। पंच द्राविड़ों में निम्नलिखित हैं : द्राविड़ ख़ास (तमिल) ,अन्ध्र (तेलुगु), कर्णाट (कनाड़ा प्रदेश), महाराष्ट्र एवं गुर्जर। धनकटक या धान्यकटक या कृष्णा के मुहाने पर स्थित अमरावती इसकी राजधानी है (नंदलाल दे, ज्याँग्रेफिकल डिक्शनरी, पृ० 7)। मौखरि नरेश[1] कुमारगुप्त तृतीय, (554 ई०) के हराहा अभिलेख में बताया गया है कि किसी आन्ध्राधिपति ने मौखरि-नरेश को अपने सहस्त्रों तिहरे मदमस्त हाथियों से पीड़ित किया था (एपि० इं०, XIV. पृ० 110 और आगे)। हे० चं० रायचौधरी का अनुमान है कि पूर्वोक्त आन्ध्रनरेश संभवत: पोलामुरु पत्रों में उल्लिखित विष्णु-कुण्डिन् वंशीय माधववर्मन प्रथम (यनाश्रय) था, (पो० हि० एं० इं०, चतुर्थ संस्करण, पृ० 509)। यह अनुमान, ईशानवर्मन मौखरि के पिता ईश्वरवर्मन के जौनपुर अभिलेख में ईश्वरवर्मन के द्वारा आन्ध्रों पर विजय से पूर्णत: संगत है। (का० इं० इं०, III, पृ० 230)। पल्लव-नरेश शिवस्कन्दवर्मन के काल में आन्ध्र-पथ या आन्ध्रदेश पल्लववंश के अधीन हो गया प्रतीत होता है, जिसका मुख्यावास धजकड (धान्यकटक) था। अशोक के तेरहवें शिलालेख में 'भोज—पतिनिकेसु अन्ध्र-पलिदेशु' वर्णित है।

आन्ध्रक्षेत्र के पुलिन्द सदैव आन्धों से संबद्ध रहे हैं जो संभवत: विन्ध्यपर्वत से कृष्णा तक फैले हुये संपूर्ण भूभाग में रहते थे। वाशिष्ठीपुत्र पुलुमायि पहला नरेश था जिसने आन्ध्र देश पर सातवाहन सत्ता का प्रसार किया। आन्ध्रदेश एवं आन्ध्र जनों विषयक छिटपुट उल्लेख उत्तरकालीन अभिलेखीय साक्ष्यों में मिलते हैं। इंडियन म्यूजियम में संग्रहीत पालवंशीय नरेश नारायणपालदेव के

---

[1] लेखक ने इसे भूल से मौखरिवंश का राजा कहा है। वास्तव में वह उत्तर गुप्त राजवंश का शासक था। लेखक का यह कथन समीचीन नहीं है। इस अभिलेख के अनुसार मौखरि-नरेश ने आन्ध्रपति की सेना को परास्त कर दिया था, जिसमें तिहरे मदमस्त गज संमिलित थे।

नवें वर्ष में उत्कीर्ण अभिलेख में आन्ध्रवैषयिक शाक्य भिक्षु स्थविर धर्ममित्र का उल्लेख है, जिसने बुद्ध की एक प्रतिमा स्थापित की थी।

अम्मलपुण्डि––संभवतः इस गाँव को अनमर्लपूण्डियाग्रहारम से समीकृत किया जा सकता है, तो ताडीकोण्ड के दक्षिणपूर्व में 12 मील दूर पर स्थित है (एपि० इं०, XXIII, भाग, V)।

अनदुतपालाचल––यह एक पहाड़ी है (सा० इं० इं०, II, 373)।

अनमलाई हिल्स––यह पहाड़ी त्रावणकोर पहाड़ियों में विलीन हो गयी है (डब्ल्यू० डब्ल्यू० हंटर कृत द इंपीरियल गजेटियर्स ऑव इंडिया, जिल्द, I, पृ० 190 और आगे)।

अनंतपुर––यह केरल (पहले त्रावणकोर) की राजधानी त्रिवेन्द्रम में है जहाँ पर पद्मनाथ का विख्यात मंदिर स्थित है, जिसे देखने श्री चैतन्य और नित्यानंद गये थे।

आन्ध्रमण्डल या आन्ध्रविषय––यह तेलुगु देश है (सा० इं० इं०, III. पृ० 128)। आदि पल्लव-नरेश शिवस्कन्दवर्मन के मयिडावोलु अभिपत्रों से सिद्ध होता है कि अन्ध्रापथ या आन्ध्रों का क्षेत्र कृष्णा जिले तक फैला हुआ था और इसकी राजधानी धञकड या बेजवाड़ा थी (एपि० इं०, VI, पृ० 88)। मौखरिनरेश कुमारगुप्त तृतीय (554 ई०) के हराहा अभिलेख में यह मौखरि राजा किसी आन्ध्रपति द्वारा परिपीड़ित बताया गया है (एपि० इं०, XIV, पृ० 110 और आगे)[1]। पूर्वोक्त आन्ध्र-नरेश संभवतः पोलमुरु अभिपत्रों में वर्णित विष्णुकुण्डिन वंशीय माधववर्मन प्रथम, यनाश्रय था। इस तथ्य की पुष्टि ईशाण वर्मन मौखरि के पिता, ईश्वरवर्मन के जौनपुर अभिलेख से होती है जिसमें आन्ध्रों पर ईश्वर-वर्मन के पक्ष की विजय का उल्लेख किया गया है (का० इं० इं०, III, पृ० 230)। आन्ध्रों का वर्णन ऐतरेय (VII. 18) एवं शतपथ ब्राह्मण में है। विंसेंट स्मिथ का मत है कि ये लोग द्रविड थे और गोदावरी तथा कृष्णा के डेल्टा में रहने वाले आधुनिक तेलुगु-भाषी जनता के प्रजनक थे (इं० ऐं०, 1913, 276-78)। कुछ विद्वानों के अनुसार वे मूलतः विन्ध्य क्षेत्र के एक कबीले थे, जिन्होंने अपना राजनीतिक प्रभाव शनैः-शनैः पश्चिम से पूर्व में गोदावरी एवं कृष्णा की घाटियों में बढ़ा लिया (वही, 1918, 71)। महाभारत (XII. 207. 42) में उन्हें दक्कन में स्थित बतलाया गया है। रामायण (किष्किन्ध्याकाण्ड, 41, अध्याय,

---

[1] **लेखक के इस अशुद्ध ऐतिहासिक उल्लेख के लिए भी पिछली पाद-टिप्पणी देखें।**

11) में उन्हें गोदावरी से संबंधित बतलाया गया है। अभिलेखीय साक्ष्य से सिद्ध होता है कि वे गोदावरी-कृष्णा की घाटी में रहते थे। मार्कण्डेयपुराण (LVII. 48-49) में आन्ध्रों को दक्षिणात्य जन बतलाया गया है। अशोक के तेरहवें शिलालेख में आन्ध्रदेश को अशोक का एक अधीनस्थ राज्य बतलाया गया है। आन्ध्रदेश का उल्लेख एक जातक (जातक, I, 356, और आगे) में आता है जिसके अनुसार एक ब्राह्मण-तरुण तक्षशिला से शिक्षा समाप्त करने के पश्चात् व्यावहारिक अनुभवों से लाभान्वित होने के लिए वहाँ गया। प्लिनी के अनुसार आन्ध्रों के पास अगणित गाँव और प्राचीरों एवं मीनारों से सुरक्षित तीस नगर थे और अपने राजा को उन्होंने पदाति, अश्वारोहियों एवं गजारोहियों से सज्जित एक विशाल सेना प्रदान की थी (इं० ऐं०, 1877, 339)।

पुराणों में सातवाहनों को आन्ध्र या आन्ध्रभृत्य बतलाया गया है। उन्होंने संपूर्ण आन्ध्रदेश एवं निकटवर्ती क्षेत्रों पर शासन किया था (वि० च० लाहा, ट्राइब्स इन ऐंश्यंट इंडिया, 164-5)।

परिधि में 3,000 ली तक विस्तृत इस देश को चीनी लोग अन-ता-लो (An-ta-lo) कहते थे। यहाँ की भूमि उर्वर एवं श्रेष्ठ थी; यह निरंतर जोती जाती थी। यहाँ की जलवायु उष्ण थी, निवासी निर्भीक एवं भावुक थे। यहाँ पर कुछ संघाराम एवं देव-मंदिर थे (बील, बुद्धिस्ट रिकार्डस ऑव द वेस्टर्न वर्ल्ड, II, 217-18)।

आन्ध्रप्रदेश की राजधानी धनकटक प्रतीत होती है, जहाँ पर युवान-च्वाङ् गया था। आन्ध्रों की प्राचीनतम राजधानी (अन्धपुर) तेलवाह नदी के तट पर स्थित थी, जिसे संभवतः तेल या तेल्गिगिरि से समीकृत किया जाता है, जो मध्य-प्रदेश एवं मद्रास के सीमांत के समीप ही बहती है (पो० हि० एं० इं०, पृ०, 196, पा० टि० 4)। विस्तृत विवरण के लिए द्रष्टव्य वि० च० लाहा, इंडॉलॉजिकल स्टडीज, भाग I, पृ० 47 और आगे; लाहा, ट्राइब्स इन ऐंश्यंट इंडिया, पृ० 165; डब्ल्यू० डब्ल्यू० हंटर कृत इंपीरियल गजेटियर्स ऑव इंडिया, जिल्द I पृ० 198; बुद्धिस्ट रिमेन्स इन आन्ध्र ऐंड आन्ध्र हिस्ट्री (225-610 ई०) ले० के० आर० सुब्रह्मण्यम।

अगरायंकुप्पम—यह अंगरंकुप्पम नामक आधुनिक गाँव है, जो विरिञ्चि-पुरम से 63 मील दूर उत्तर में स्थित है (सा० इं० इं० I, पृ० 133)।

अंगार—ब्रह्माण्ड पुराण, II, 16, 59 में वर्णित यह एक दक्षिणात्य देश है।

अन्नदेववरम—ब्राह्मणों के निवास के लिए स्थापित यह गाँव, पिन्नसानि

एवं गंगा (गोदावरी का एक अन्य नाम) के संगमपर बसे हुये विसरि-नांडु में स्थित बतलाया जाता है (एपि० इं०, XXVI, भाग, I, जनवरी, 1941)।

अन्तर्वेदी—गोदावरी तट पर स्थित सात पुण्य स्थलों में यह अंतिम है (डब्ल्यू० डब्ल्यू० हंटर कृत इंपीरियल गजेटियर्स ऑव इंडिया, जिल्द, I, पृ० 204.

अरगियसोरपुरम—यह राजराजवल्नाडु की एक तहसील है। यह पोयिर-कूर्रम में स्थित एक गाँव है (सा० इं० इं०, II, पृ० 449,492)।

अरैशूर—पेन्नर नदी के तट पर स्थित यह एक ग्राम है (वही, III, 448)।

अरकटपुर—यह आधुनिक अर्काट हो सकता है। इसे राजा खारवेल ने जीता था, जैसा कि हाथीगुम्फा अभिलेख से प्रकट होता है (बि० च० लाहा, ज्यॉग्रेफी ऑव अर्ली बुद्धिज्म, पृ० 61-62)।

अरशिल—यह किसी नदी का नाम है। इसे अरशिलेयारु की अरिशील भी कहते हैं (सा० इं० इं०, II, 52)।

अरिकमेडु—यह भारत के पूर्वी समुद्रतट पर पाण्डिचेरी से दो मील दक्षिण में स्थित है। 1945 में यहाँ के कुछ स्थलों का उत्खनन भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण विभाग के तत्वावधान में किया गया था।

अरुगूर—यह वेलूर के निकट स्थित आधुनिक अरियूर है (वही, I, पृ० 71)।

अरुमण्डल—यह एक गाँव है। इसका आधुनिक नाम अरुमडल है। यह पाण्डयकुलाशनिवल्नाडु की किरशेनगिलिनाडु तहसील में स्थित था, (वही, जिल्द, II, पृ० 479)।

असक—इसे साधारणतः गोदावरी-तट पर स्थित अश्मक से समीकृत किया जाता है (शामा शास्त्री कृत 'अर्थशास्त्र का अनुवाद', पृ० 143)।

अस्सक या अश्मक देश—सुत्तनिपात (पा० टे० सो०, 190) में अस्सक या अश्मक देश को गोदावरी-तट पर पत्तिठ्ठान के ठीक दक्षिण में (श्लोक, 977) स्थित बतलाया गया है। डॉ० भंडारकर ने सुत्तनिपात के अनुसार यह बताया है कि बावरी नामक कोई ब्राह्मण गुरु कोशल जनपद त्यागकर दक्षिणापथ के अस्सक देश में गोदावरी के तट पर स्थित एक गाँव में बस गया था (कार्माइकेल लेक्चर्स, 1918, पृ० 4,53, पा० टि० 5)। रिज़ डेविड्स ने अश्मक को अवन्ती के ठीक उत्तर-पश्चिम में स्थित बतलाया है। इनके अनुसार गोदावरी के तट पर स्थित यह संनिवेश एक बाद का उपनिवेश था (बुद्धिस्ट इंडिया, पृ० 27-28)। असंग ने अपने सूत्रालंकार में सिन्धु नदी की घाटी में स्थित किसी अश्मक देश का वर्णन किया है।

कौटिल्यकृत अर्थशास्त्र के अनुसार अस्सक (असक) को साधारणतया गोदावरी

(अर्थात् महाराष्ट्र) तट पर स्थित अश्मक के समान माना जाता है (शामा शास्त्रीकृत अनुवाद, पृ० 143, टिप्पणी, 2)। कुरुक्षेत्र के युद्ध में अश्मक जन पाण्डवों की ओर से लड़े थे (महाभारत, VII. 85, 3049)। पाणिनि ने अपने एक सूत्र (IV. 1, 173) में अश्मक का उल्लेख किया है। इक्ष्वाकुओं और अश्मकों में संबंध था (बृहन्नारदीयपुराण, अध्याय, 9)।

अश्मकों या अस्सकों की राजधानी पोटन या पोटलि बतलायी गयी है, जो महाभारत (I, 77, 47) में उल्लिखित पौदन्य है। एक समय पोतलि काशी राज्य में सम्मिलित था। अस्मक जातक के अनुसार (जातक, II, 155) अस्मक नामक किसी राजा ने पोतलि में राज्य किया था जिसे इसमें काशी-राज्य में स्थित एक नगर बतलाया गया है।

यूनानियों द्वारा अभिहित अस्पैसियन जन, सुविख्यात अश्वक या अश्मक जाति की एक पश्चिमी शाखा के रूप में माने जा सकते हैं। ईरानी संज्ञा 'अस्प' संस्कृत शब्द अश्व या अश्वक का समानार्थक है (कैं० हि० इं०, जिल्द, I, पृ० 352, नोट, 3; बि० च० लाहा, इंडोलॉजिकल स्टडीज़, भाग, I, पृ० 1-2; लाहा, ट्राइब्स इन एंश्येंट इंडिया, पृ० 180 और आगे,।

अत्रि-आश्रम—इस आश्रम में राम, लक्ष्मण और सीता के साथ आये थे, जब कि ये ऋषि यहाँ पर अनुसूया के साथ रहते थे। वहाँ पर अनेक तपस्वी आध्यात्मिक चर्या में लगे थे।

अत्तिलि—आजकल यह कस्बा पश्चिमी गोदावरी जिले के तनुकु तालुक के दक्षिण पश्चिम में स्थित है। चोड़ नरेश अन्नदेव ने अत्तिलि की सीमाओं पर अपने विरोधी दक्षिण के सभी राजाओं को पराजित किया था और इस नगर की प्राचीर के भीतर शरण लेने वाले 10,000 शत्रु सैनिकों को सुरक्षित रखा था (एपि० इं०, XXVI, भाग, I)।

अयोध्या—यह एक देश का नाम है (सा० इं० इं०, I, पृ० 58)। अयोध्या के सिंहासन पर 59 राजा आरूढ़ हुये थे। इस वंश का विजयादित्य नामक एक राजा दक्कन पर विजय प्राप्त करने के लिए गया था।

अय्यमपलयम—यह गाँव कोयंबटूर जिले के पल्लडम तालकु में सोमनुर रेलवे स्टेशन से $4\frac{1}{2}$ मील दूर पूर्वोत्तर में स्थित है। यहाँ पर एक छोटा सा मंदिर है (जर्नल ऑव द इंडियन सोसायटी ऑव ओरियंटल आर्ट, जिल्द, XV)।

अधिराजमंगल्लियपुरम्—यह कुड्डालूर तालुक में स्थित तिरुवादि है। यह कुड्डालूर के उत्तर में 14 मील पश्चिम की ओर और पनरुति रेलवे स्टेशन

से एक मील दक्षिण में स्थित है। इसे अदिगैमानगर भी कहते हैं। यह गेडिलम के उत्तरी तट पर स्थित है (एपि० इं०, XXVII, भाग, III, पृ० 98)।

अदिपुर––यह मयूरभंज (भूतपूर्व रियासत, संप्रति उड़ीसा राज्य में विलयित) के पाँचपीर तहसील में स्थित एक गाँव है (एपि० इं०, XXV, भाग, IV, पृ० 147)।

आलंपुण्डि––दक्षिण अर्काट जिले के तिण्डीवनम तालुक के सेञ्जी परगने में स्थित यह एक गाँव है (एपि० इं०, III, 224)।

आलप्पक्कम––दक्षिण अर्काट जिले के कुड्डालूर तालुक में स्थित यह एक गाँव है (एपि० इं०, XXVII, भाग, III, पृ० 97)।

आलूर––यह पडिनाडु में स्थित एक गाँव है और इसे मैसूर जिले के चामराज-नगरतालुक में स्थित आलूर से समीकृत किया जा सकता है (सा० इं० इं०, भाग, I, पृ० 425-27)।

आमूर (आंबूर)––उत्तरी अर्काट जिले के वेलूर तालुक में स्थित यह एक कस्बा है (वही, भाग, III, पृ० 165)। यह दक्षिणी अर्काट जिले के तिरुकोयिलुर तालुक में स्थित है। यहाँ पर दो तमिल अभिलेख प्राप्त हुये थे (एपि० इं०, IV, 180 और आगे)।

आमुरकोट्टम––यह जयकोण्डचोलमण्डलम में स्थित एक जिला है (वही, जिल्द II, भूमिका, पृ० 28)

आनैमलाइ––मदुरा जिले में स्थित, यह एक पुण्यगिरि है (वही, III, पृ० 239)। इसे हाथी-पहाड़ी कहते हैं। यह पहाड़ी पूर्वोत्तर से दक्षिण-पश्चिम की ओर मदुरा से पाँचवें मील के पत्थर से मदुरा-मेलुर रोड के प्रायः समानांतर जाती है (मद्रास डिस्ट्रिक्ट गजेटियर्स, मदुरा, ले० डब्ल्यू० फ़्रांसिस, पृ० 254 और आगे)।

आनन्दूरु––यह शिलाहर इन्दरस के अक्कलकोट अभिलेख में वर्णित (एपि० इं०, XXVII, भाग, II, अप्रैल, 1947, पृ० 71) आनन्दूरु तीन सौ (जिले) का मुख्यावास है। इसे हम महाराष्ट्र (भूतपूर्व हैदराबाद रियासत) राज्य के उस्माना-बाद जिले में इसी नाम के तालुक के प्रमुख नगर आधुनिक आनदूरु से समीकृत कर सकते हैं। यह अक्कलकोट से लगभग 20 मील उत्तर में स्थित है।

आनंगुर––यह विल्लुपुरम से दो मील दक्षिण-पूर्व में स्थित है (एपि० इं०, XXVII, भाग, III, पृ० 98)। आनांगुर-नाडु में यह अवश्य ही एक प्रमुख स्थान रहा होगा।

आन्ध्र––यह वर्तमान तेलुगु प्रदेश है (वही, जिल्द, II, प्रस्तावना, पृ० 4)।

आन्नदेववरम—पल्लूरि-शैलवरम के पश्चिम में गंगा के तट पर स्थित यह एक गाँव था। राजा अन्नदेव ने यह गाँव ब्राह्मणों को दान कर दिया था (एपि० इं०, XXVI, भाग, I, राजामुंद्री संग्रहालय में संग्रहीत तेलुगु चोड अन्नदेव का अभिपत्र)।

आराम—यह सोनपुर, जहाँ प्रायः राजा का स्कन्धावार होता था, के निकट था। भव्य प्रासादों, मंदिरों, उपवनों और सरोवरों आदि से सज्जित इसे एक समृद्ध नगर के रूप में वर्णित किया गया है (एपि० इं०, XXIII, भाग, VII)।

आसुवुलपर्रु—यह गाँव बेजवाड़ा ताल्लुक में कृष्णा नदी के तट पर स्थित था (एपि० इं०, XXIII, भाग, V)।

आवूरकुर्रम—यह एक विषय है, जो नित्तविनोदवलनाडु का एक उपसंभाग है (सा० इं० इं०, भाग, II, पृ० 95)।

बदरिवमेडि—यह गंजम जिले में है। इस ताल्लुक के एक गाँव से गंग-नरेश इन्द्रवर्मन के ताम्रपत्रों का एक कुलक प्राप्त हुआ था (एपि० इं०, XXVI, भाग, V, अक्टूबर, 1941, पृ०, 165)।

बंगवाडि—यह मैसूर राज्य के कोलार जिले में स्थित है (एपि० इं०, VI, 22 और आगे; द्रष्टव्य, एपि० इं०, VII, 22)।

बसिनिकोण्ड—यह मदनपल्ली के निकट एक गाँव है (एपि० इं०, XXIV, भाग, IV, 183 और आगे—वैदुम्ब-महाराज गण्डत्रिनेत्र के तीन अभिलेख)।

बवाजी पहाडी—यह उत्तरी अर्काट जिले में वेलोर के अंचल में वेलपादि के समीप स्थित है (सा० इं० इं०, जिल्द, I, पृ० 76)। कन्नरदेव का एक शिलालेख इस पहाड़ी की चोटी के नीचे पाया गया है (एपि० इं०, IV, 81 और आगे)।

बादामि—यह एक गाँव है। इसे वातापि भी कहते हैं (सा० इं० इं०, जिल्द, II, पृ० 399, नोट, 504)। सिरुतोण्डर ने 650 ई० पू० में इस पर आक्रमण किया था।

बाहूर—यह अरगियशोरचतुर्वेदिमंगलम, जिसे वाहूग्राम भी कहते थे, का आधुनिक नाम है। यह पाण्डिचेरी के समीप है। यह अरुवा-नाडु जिले में संमिलित है। वाहूर गाँव भूतपूर्व फ़्रांसीसी क्षेत्र के एक निकाय का मुख्यावास था और 1752 ई० में यहाँ पर फ़्रांसीसियों एवं अंग्रेजों में एक युद्ध हुआ था (वही, जिल्द, II, पृ० 27, प्रस्तावना, 505, 513, 514, 519)। पहले यह फ़्रांसीसी क्षेत्र में था। (द्रष्टव्य, रंगाचारी की सूची, पृ० 1693-94, 1-18.)

बेलुगुल—केलादि सदाशिव नायक के कप ताम्रपत्र में बेलुगुल का उल्लेख है, जो मैसूर राज्य में स्थित श्रवण बेलगोला है।

भरणिपाड़ु—कामराज नामक एक चोड़-नरेश ने युद्ध में राजा सिम्ग को इसी कस्बे के समीप पराजित किया था (एपि० इं०, XXVI. भाग, I)।

भागीरथी—यह गंगा का ही नाम है (हुल्टश, सा० इं० इं०, जिल्द, I, पृ०, 28)।

भास्कर क्षेत्र—इसे बेलारी जिले में स्थित हाम्पी से समीकृत किया जाता है। यह विजयनगर के नरेशों की राजधानी थी (एपि० इं०, XXV. भाग, IV, अक्टूबर, 1939, पृ० 190)।

भेंठिश्रृंग—गंगनरेश इन्द्रवर्मन के इंडियन म्यूजियम अभिपत्रों में इसका वर्णन है। इसे संभवतः ब्राह्मणी नदी के तट पर स्थित बरसिंग से समीकृत किया जा सकता है (एपि० इं०, XXVI, भाग, V, अक्तूबर, 1941, पृ० 168)।

भीमरथी (या भीमरथ)—पश्चिमी चालुक्य-राजा जयसिंह द्वितीय के दौलताबाद-अभिपत्रों में वर्णित भीमरथी नदी को कृष्णा की मुख्य सहायक आधुनिक भीमा नदी से समीकृत किया जा सकता है (इं० क०, VIII. पृ० 113)। इस नदी के उत्तरी तट पर पुलकेशिन, अप्पायिक और गोविन्द के बीच एक युद्ध हुआ था (एपि० इं०, VI. 9)। वायु (XLV. 104) और वराह पुराणों में इस नदी का वर्णन है। पुराणों में प्रधानतः यह एक सह्य-नदी के रूप में विश्रुत है, जो पूना जिले के पश्चिमोत्तर भाग में प्रवाहित होती है, जहाँ से यह दक्षिण-पूर्व दिशा में बहती हुई मैसूर राज्य के रायचूर (पहले हैदराबाद रियासत) जिले के उत्तर में कृष्णा नदी में मिल जाती है। यह अनेक नदियों द्वारा आपूरित है (द्रष्टव्य, बि० च० लाहा, रिवर्स ऑव इंडिया, पृ० 49)।

भोगवढन—(संस्कृत—भोग वर्धन=धनवर्धक—बरुआ और सिन्हा, भरहुत इंस्क्रिप्शंस, पृ० 15)। पुराणों के अनुसार यह दक्कन में स्थित एक देश है। ऐसा प्रतीत होता है कि भोगवर्धन गोदावरी क्षेत्र में स्थित था किंतु इसकी ठीक स्थिति अज्ञात है। भोगवर्धनों (भोगवडम) को मौलिको, अश्मकों, कुन्तलों आदि के साथ दक्षिणी क्षेत्र में स्थित बतलाया गया है (तुलनीय, मार्कण्डेय पुराण, LVII, 48-49)।

भोजकट और भोजकटपुर—(संस्कृत : भोजकट या भोज्य; भोज्य; बरुआ और सिन्हा, भरहुत इंस्क्रिप्शंस, पृ० 7). —अरुलल—पेरुमल अभिलेख और रविवर्मन के रंगनाथ अभिलेख में दक्षिण भारत के केरल राज्य के यदुवंशी किसी भोज राजा का उल्लेख है (एपि० इं०, जिल्द, IV. भाग, III, 146)। गौड-नरेश धर्मपालदेव के (800 ई०) खलीमपुर दानपत्र अभिलेख में मत्स्य, कुरु, यदु और

यवनों के राजाओं के साथ ही भोज राजा का उल्लेख है, जिसने कान्यकुब्ज में उसके राज्याभिषेक समारोह के अवसर पर आशीर्वचन कहे थे। भोजों का दूसरा महत्त्व-पूर्ण वर्णन चेट राजा खारवेल (पहली शती ई० पू०) के हाथीगुम्फा अभिलेख में हुआ है, जिससे हमें ज्ञात होता है कि कलिंग महाराज खारवेल ने राठिकों एवं भोजकों को पराजित किया था और उन्हें अपने प्रति राजनिष्ठा की शपथ लेने के लिए विवश किया था। राठिक और भोजक स्पष्टतः अशोक के पाँचवें और तेरहवें शिलालेखों में वर्णित राष्ट्रिक एवं भोज हैं (द्रष्टव्य, बि० च० लाहा, ट्राइब्स इन ऐंश्यें ट इंडिया, पृ० 372)। अशोक के तेरहवें शिलालेख में उल्लिखित भोज और पितिनिक, महाराष्ट्र (भूतपूर्व बंबई प्रेसीडेंसी) के वर्तमान थाना और कोलाबा जिलों में स्थित थे। महाभारत के सभापर्व (अध्याय, 30) में दक्षिण में सहदेव द्वारा जीते गये प्रदेशों के अंतर्गत भोजकट और भोजकटपुर नामक दो स्थानों का वर्णन है। यदि भोजकट को पुराणोक्त भोज और भोज्य से समीकृत किया जाय तब इसे विन्ध्य क्षेत्र का कोई स्थान होना चाहिये। ब्राह्मणों में अभिव्यक्त दण्डक्यभोज शब्द से यह द्योतित होता है कि यह भोजकट या तो दण्डक में संमिलित या उसके बहुत समीप था। महाभारत की तालिका से यह स्पष्ट है कि भोजकट (=एलिचपुर) विदर्भ (आधुनिक बरार) की दूसरी राजधानी भोजकटपुर या भोजपुर से भिन्न था। भोज, बरार या प्राचीन विदर्भ और चम्मक के साथ संपतित होता है जो अमरावती जिले में एलिचपुर से 4 मील दक्षिण-पूर्व में स्थित है। खिल हरिवंश में भोजकट को स्पष्ट रूप से विदर्भ से समीकृत किया गया है (तु० विष्णुपुराण, LX. 32)। भरहुत पूजापरक लेपपत्र, संख्या, 45 पर भोजकट का उल्लेख है (बरुआ और सिन्हा, भरहुत इंस्क्रिप्शंस, पृ० 131)। अशोक के तेरहवें शिलालेख में भोजों, पारिन्दों एवं पालदों का उल्लेख है। भोज का वर्णन ऋग्वेद (II, 53, 7) और ऐतरेय ब्राह्मण (VIII. 14) में किया गया है। शतपथ ब्राह्मण (XIII, 5, 4, 11) का यह आशय परिलक्षित होता है कि सात्वत गंगा यमुना के समीप स्थित थे और यह क्षेत्र भरतों का राज्य था। भोज लोग अति प्राचीन काल में ही मध्य एवं दक्षिण भारत में फैल गये थे। पुराणों के अनुसार भोज और सात्वत्त दोनों ही यदुवंश से संबंधित तथा संमिश्रित जन थे (मत्स्यपुराण, अध्याय, 43, पृ० 48; अध्याय, 44, पृ० 46-48; वायु पुराण, अध्याय, 94, पृ० 52; अध्याय, 95, पृ० 18; अध्याय, 96, पृ० 1-2; विष्णुपुराण, IV. 13, 1-6)। महाभोज के पुत्र, सात्वत्त के वंशज भोज कहे जाते थे (भागवत् पुराण, अध्याय, IX, पृ० 24; कूर्मपुराण, अध्याय, 124, श्लोक, 40; हरिवंश, अध्याय, 37)। भोज हैहयों से संबंधित थे, जो यादवों की एक शाखा थे (अग्नि पुराण,

अध्याय, 275, श्लोक, 10; वायुपुराण, अध्याय, 94, पृ० 3-54; मत्स्य पुराण, अध्याय ,43, पृ० 7-49)। जैन धर्म ग्रंथों में भोजों को क्षत्रिय बतलाया गया है (जैन सूत्राज़, सै० बु० ई० II, पृ० 71, टिप्पणी 2)। अन्धकों और कुकुरों के साथ भोजों ने कुरुक्षेत्र के युद्ध में कुरुओं का समर्थन किया था (महाभारत, उद्योग पर्व, अध्याय, 19)। वे चेदियों एवं सृञ्जयों से संबंधित थे (महाभारत, V. 28)। जैन ग्रंथ उत्तराध्ययन-चूर्णि (2, पृ० 53) में बतलाया गया है कि उज्जयिनी का कोई राजा मुनि होने के पश्चात् भोगकड गया था। अधिक विवरण के लिए, द्रष्टव्य बि० च० लाहा, इंडोलॉजिकल स्टडीज, भाग, I, पृ० 43 और आगे; लाहा, ट्राइब्स इन एंश्येंट इंडिया, पृ० 366 और आगे।

भुवनेश्वर—यह खुर्द तहसील में स्थित एक गाँव है, जो कटक से 18 मील दूर दक्षिण और पुरी शहर से 30 मील उत्तर में स्थित है। यहाँ अधिकांशतः हिंदू रहते हैं। यह बलुये पत्थर के छोटे टीलों के ऊपर मखरला धरती पर स्थित है। समीपवर्ती अनाच्छादित चट्टानों के कारण ग्रीष्म ऋतु में यहाँ बहुत गर्मी पड़ती है। बलियान्ती नदी के तट पर स्थित यह न केवल एक तीर्थ ही वरन् स्वास्थ्यवर्धक स्थान भी है। यहाँ पर थोड़ी किंतु ठिठुराने वाली शीत पड़ती है और वर्षा ऋतु में भी यहाँ सुहावना लगता है। यहाँ पर कुचला के बहुत वृक्ष है। यहाँ पर अनेक सरोवर हैं जिनमें से कुछ का यथा, केदारेश्वर के समीप, केदारगौरी, ब्रह्मेश्वर के निकट ब्रह्मगौरी और कपिलेश्वर मंदिर के बाहर, कपिलह्रद का नामोल्लेख किया जा सकता है। सबसे बड़ा सरोवर विन्दुसागर है। केदारगौरी सरोवर का जल मंदाग्नि के लिए अतीव लाभकर है। यहाँ का प्रधान मंदिर लिंगराज मंदिर स्थापत्य कला के दृष्टिकोण से अद्वितीय है। लिंगराज को प्रकारांतर से भुवनेश्वर या त्रिभुवनेश्वर भी कहा जाता है। इसके निर्माण की संभावित तिथि शक संवत् 588 (667-7 ई०) है। ययाति केशरी ने इस मंदिर का निर्माण प्रारंभ कराया था, जिसे ललाट केशरी ने पूर्ण किया था। यह $4\frac{1}{2}$ एकड़ भूमि में बना हुआ है, और मखरला की एक ऊँची, मोटी दीवाल से परिवेष्ठित है और आयताकार है। भीतर का प्रांगण पत्थरों से पक्का है और इसमें 60 या 70 पार्श्व मंदिर हैं। मंदिर के पश्चिमोत्तर कोने में शिव की पत्नी भगवती का मंदिर महत्त्वपूर्ण है। प्रधान मंदिर के नृत्यगृह, भोजनशाला, द्वारमंडप और शिखर नामक चार अंग हैं।

भुवनेश्वर में परशुरामेश्वर मंदिर भी है, जिसकी तिथि कुछ विद्वानों के अनुसार पाँचवीं या छठीं शताब्दी ई० है (एम० एम० गांगुली, उड़ीसा ऐंड हर रिमेंस, 270 और आगे)। विद्वानों में इस मंदिर की तिथि के विषय में मतभेद

है (द्रष्टव्य, ज० रा० ए० सो० बं, XV, सं० 2, 1949, लेटर्स, 109 और आगे)। भुवनेश्वर अभिलेख में उल्लिखित उद्योतकेशरिन को उसी नाम के एक राजकुमार से समीकृत किया गया है, जिसके अभिलेख उड़ीसा के कलिन्दकेशरी और नवमुनि गुफाओं में प्राप्त हुये हैं (एपि० इं०, XIII. 165-66)। बाहरवीं शती के नरसिंह प्रथम के भुवनेश्वर शिलालेख में नरसिंह की बहन, चन्द्रिका द्वारा उत्कल विषय में स्थित एकाम्र या आधुनिक भुवनेश्वर में एक विष्णुमंदिर का निर्माण कराये जाने का उल्लेख है (ब्रह्मपुराण, अध्याय, 40)। शिलापट्ट पर खुदा हुआ भुवनेश्वर शिलालेख पुरी जिले में स्थित भुवनेवर के आनन्द वासुदेव के मंदिर के प्रांगण की पश्चिमी दीवाल पर स्थित है (एपि० इं०, XIII, 198-203)। विस्तृत विवरण के लिए द्रष्टव्य, लाहा, ज्यॉग्रेफिकल एसेज़, पृ० 218; ओ 'मैल्ले द्वारा संपादित और मैंसफील्ड द्वारा संशोधित, बिहार ऐंड उड़ीसा हिस्ट्रिक्ट गजेटियर्स, पुरी, 1929, पृ० 265 और आगे; एल० एस० एस० ओ "मैल्ले द्वारा लिखित, बंगाल डिस्ट्रिक्ट गजेटियर्स, 1908, पुरी, पृ० 234 और आगे; के० सी० पाणिग्रही द्वारा लिखित, 'न्यू लाइट ऑन द अर्ली हिस्ट्री ऑव भुवनेश्वर, जर्नल ऑव द एशियाटिक सोसायटी, लेटर्स, भाग, XVII, सं० 2, 1951, पृ० 95 और आगे)।

बिरजा क्षेत्र—ब्रह्मपुराण (42, 1—4) के अनुसार यहाँ पर बिरजा नामक एक देवी का आवास था। यह पुण्यसलिला वैतरणी के तट पर स्थित है। बिरजा का मंदिर जाजपुर में स्थित है। इस क्षेत्र में कपिल, गोग्रह, सोम, मृत्युञ्जय, सिद्धेश्वर आदि आठ पुण्यक्षेत्र हैं (ब्रह्मपुराण, 42, 6-7)। योगिनीतंत्र (2, 2, पृ० 120) में इसका वर्णन प्राप्य है।

बोब्बिलि—यह सद्यः निर्मित आन्ध्रप्रदेश राज्य के विज़गापट्टम जिले में स्थित है (एपि० इं०, XXVII, भाग, I, पृ० 33)।

बोम्मेहाल्—इसे बोम्मेपर्ती से समीकृत किया जा सकता है, जो अनंतपुर से सात मील दूर पर स्थित है (एपि० इं०, XXV भाग, IV, पृ० 190)।

ब्रह्मगिरि—विशद विवरण के लिये 'हाफ इयर्ली जर्नल, ऑव द मैसूर युनिवर्सिटी, सेक्शन, ए, I, 1940 देखिये। इसमें इस स्थल का उत्खनन से पहले का एक सर्वेक्षण दिया गया है। यहाँ से अशोक के लघु शिलालेख का एक कुलक प्राप्त हुआ है।

बुगुड—यह गंजम जिले के गुमसुर तालुक में है (एपि० इं०, III, पृ० 41)।

चन्दक—यह महिम्सक राज्य के निकट एक पर्वत है, जहाँ पर कन्नपेण्णा नदी के मोड़ पर बोधिसत्त ने एक पर्णकुटी बनायी थी। यह मलय-गिरि या मलाबार घाट है।

चन्दनपुरी—यह आधुनिक चन्दनपुरी है, जो एलोरा के लगभग 45 मील दूर पश्चिमोत्तर में मालेगाँव से तीन मील दूर दक्षिण-पश्चिम में गिरणा नदी के तट पर स्थित एक कस्बा है (एपि० इं०, XXV, भाग, I, जनवरी, 1939, पृ० 29)।

चन्दौर—इस राजधानी को आधुनिक चन्दावर से समीकृत किया जा सकता है, जो होनवर तालुक और उत्तरी कनाड़ा जिले में कुस्त से लगभग पाँच मील दक्षिण-पूर्व की ओर स्थित है (नार्थ कनाड़ा गज़ेटियर, भाग, II, पृ० 277; एपि० इं०, XXVII, भाग, IV, पृ० 160)।

चन्द्रगिरि—मैसूर राज्य के हसन जिले में अवस्थित विख्यात जैन-नगर श्रवण बेलगोला के निकट यह एक पहाड़ी है (एपि० इं०, III, 184)। लोग प्राचीन काल में इसे देय दुर्गा कहते थे।

चन्द्रवल्ली—यह ब्रह्मगिरि से दक्षिण-पश्चिम में 45 मील दूर पर स्थित है। इस स्थान पर किये गये उत्खनन के विवरण के लिए एम० एच० कृष्ण कृत, 'एक्स-केवेशंस ऐट चन्द्रवल्ली' (सप्लीमेंट टु द एनुवल रिपोर्ट ऑव द आर्कयॉलॉजिकल डिपार्टमेंट ऑव द मैसूर स्टेट, 1929) देखिये।

केप कामोरिन (संस्कृत, कन्याकुमारी)—इसका तमिल नाम कन्नि कुमारी या कन्निया कुमारी है (एपि० इं०, II, पृ० 237, पाद टि०, 3) जो प्राचीन तमिल ग्रंथों में विख्यात् है।

चौदुआर—चौदुआर के विस्तृत अवशेष कटक से लगभग चार मील दूर उत्तर में महानदी की एक शाखा बिरूप नदी के उत्तरी तट पर विकीर्ण हैं। केशरिन राजवंश के पचीसवें राजा जयकेशरिन् ने चौदुआर अथवा चार द्वारों वाले नगर को अपनी राजधानी बनाया था। किसी समय यह शैवमत का एक केंद्र था। चौदुआर में शैवमत के साथ ही साथ बौद्धमत भी उन्नतावस्था में था। यहाँ से स्मित आकृति वाली बैठी मुद्रा में प्रज्ञापारमिता की एक प्रतिमा प्राप्त हुयी है। यहीं से द्विबाहु अवलोकितेश्वर की बैठी मुद्रा की एक प्रतिमा इंडियन म्यूजियम के लिए प्राप्त की गयी थी। यहाँ से प्राप्त अधिकांश प्रतिमाएँ उड़ीसा की उत्तर मध्ययुगीन मूर्तिकला का प्रारंभिक विकासबिंदु प्रतीत होती हैं। विशद् विवरण के लिए द्रष्टव्य, रा० प्र० चन्द, एक्सप्लोरेशन इन उड़ीसा, मे० आ० स० इं०, सं० 44, पृ० 20 और आगे।

चाराल—यह चित्तूर जिले के पुंगनुर तालुक में है (एपि० इं०, XXV, भाग, VI, पृ० 241)।

चेब्रोलु—यह कित्स्ना जिले के बाप्टला तालुक में स्थित है (एपि० इं०, V, 142 और आगे)।

चेल्लूर—यह गोदावरी जिले के कोकनद तालुक में स्थित एक गाँव का नाम है (सा० इं० इं०, I, पृ० 50-51)। संप्रति मद्रास संग्रहालय में सुरक्षित विष्णुवर्धनवीर-चोड के दान-ताम्रपत्र से पूर्वी चालुक्यों और चोलों के संबंधों पर प्रकाश पड़ता है।

चेल्लुर—यह चेल्लूर नामक आधुनिक गाँव है (वही, I, पृ० 52, पा० टि०, 3)।

चेन्दलुर—यह नेल्लोर जिले के ओंगोल तालुक में स्थित है, जहाँ पर सर्वलोकाश्रय के 673 ई० में अंकित कुछ ताम्रपत्र मिले थे (एपि० इं०, VIII, 236 और आगे)।

चेर—इस प्रदेश में वर्तमान मलाबार, कोचीन और त्रावणकोर संमिलित थे (सा० इं० इं०, जिल्द, II, पृ० 21)। चेर केरल का भ्रष्ट रूप है। केरल के निवासियों को कैरलक कहा जाता था (बृहत्संहिता, XIV.12) मूलतः इसकी राजधानी वञ्जि थी, जिसे कोचीन के समीप पेरियार नदी के तट पर स्थित वर्तमान तिरु-करूर से समीकृत किया जाता है और इसकी उत्तरकालीन राजधानी परियार नदी के मुहाने पर स्थित तिरुवञ्जिवकलम थी। इसमें पश्चिमी समुद्र तट पर क्विलन्दि से लगभग पाँच मील दूर उत्तर में अगलप्पुलाई पर तोण्डि, मुचिरि, पलेयुर (चौघाट के निकट) और वैक्कराई महत्त्वपूर्ण व्यापारिक केन्द्र थे। चोलों के पश्चात चेर, दक्षिण में अग्रणी शक्ति हुये। अशोक के दूसरे शिलालेख में केरलपुत्र का वर्णन है। संस्कृत महाकाव्यों और पुराणों में चेरों के तमिल राज्य का वर्णन है (महाभारत, IX. 352, 365; सभापर्व, XXX, पृ० 1174-75; रामायण, IV, अध्याय, 41 (बम्बई संस्करण); मार्कण्डेय पुराण, अध्याय, 57, 45; वायुपुराण, XLV. 124; मत्स्यपुराण, (CXIII. 46)। विस्तृत विवरण के लिए द्रष्टव्य, बि० च० लाहा, ट्राइब्स इन ऐंश्येंट इंडिया, पृ० 193 और आगे।

चेराम्—पुलिनाडु में स्थित इस गाँव को चित्तूर जिले के पुंगानुर तालुक के चाराल ग्राम से समीकृत किया जा सकता है (एपि० इं०, XXV, भाग, IV, अप्रैल 1940, पृ० 254)।

चेरुपूरु—यह गाँव विजगापट्टम जिले में स्थित आधुनिक चिपुरुपल्ली से समीकृत किया जा सकता है। कुछ लोग इसका प्रत्यभिज्ञान विष्णुवर्धन प्रथम के चिपुरुपल्ली ताम्रपत्र में वर्णित प्लकिविषय में स्थित चेरुपूरु से करते हैं।

चेवूरु—यह गाँव कित्सना जिले के कैकलूर तालुक में है, जहाँ से ताम्रपत्रों का एक समूह उपलब्ध हुआ है (एपि० इं०, XXVII. भाग, I, पृ० 41)।

चिदंबरम्—यह उत्तर में वेलर, पूर्व में बंगाल की खाड़ी, दक्षिण में कोलेरून

और पश्चिम में वीरनम सरोवर के मध्यवर्ती क्षेत्र में स्थित है। दक्षिण में अर्काट जिले में स्थित यह नगर (सा० इं० इं०, जिल्द, I, पृ० 64, 86, 92, 97, 98, 168) अपने मंदिरों के लिए उल्लेखनीय है।[1] शिर्रम्बलम चिदंबरम का तमिल नाम है। इसे तिल्लई (वही, II, पृ०, 258, 279 आदि) भी और देवी-भागवत (VIII, 38) के अनुसार चिदंबलम कहते हैं। यह चोलों की उपराजधानी थी और अनेक चोल राजाओं का राज्याभिषेक समारोह इस मंदिर के पवित्र महाकक्ष में हुआ था। कर्णाटक एवं मैसूर के युद्धों में इस मंदिर का महत्त्वपूर्ण अवदान रहा है। दक्षिण भारत में महादेव की पाँच आदि प्रतिमाएँ हैं, जिनमें से एक चिदंबरम् में स्थित व्योम-प्रतिमा है। शिव की नटराज प्रतिमा भी महत्त्वपूर्ण है। लिंगपुराण (उत्तर, अध्याय, 12) के अनुसार शिव के आठ रूप हैं, जिनमें पाँच आदि-रूप हैं।

चिदिवलस—यह गंजम जिले में नरसन्नपेत के निकट है, जहाँ से तीन अभिपत्र प्राप्त हुये थे (एपि० इं०, XXVII, भाग, III, पृ० 108)।

चिक्मगलुर—यह कडुर जिले और मैसूर के उक्त जिले में स्थित चिक्मगलुर तालुक का मुख्यावास है (एपि० इं०, VIII, 50 और आगे)।

चिंगलपुत—यह एक जिले का नाम है, जिसके मुख्यावास का नाम भी चिंगलपुत है (सा० इं० इं०, जिल्द, II, पृ० 340)।

चिरापल्ली—यह त्रिचनापल्ली का प्राचीन नाम है (एनुअल रिपोर्ट फॉर 1937-38 ऑव साउथ इंडियन एपिग्रेफी, पृ० 78)।

चित्तामूर—यह दक्षिण अर्काट जिले के गिंजी तालुक में स्थित है, जिसमें दो जैन मंदिर हैं (एनुअल रिपार्ट फॉर 1937-38 ऑफ साउथ इंडियन एपिग्रेफी, 109)।

चोल—चोल-प्रदेश (शोरमण्डलम) में तंजोर एवं त्रिचनापल्ली जिले समाविष्ट हैं (सा० इं० इं०, I, पृ० 32, 51, 59, 60, 79, 92, 96, 97, 100, 111, 112, 118, 134, 135, 139 आदि)। इसे कावेरी नदी अभिसिंचित करती थी (वही, जिल्द, II, पृ० 21, प्रस्तावना, और 503)। चोल राज्य पूर्वी समुद्र-तट पर पेन्नार नदी से लेकर वेल्लार तक और पश्चिम में लगभग कुर्ग की सीमाओं तक फैला हुआ था। इसमें त्रिचनापल्ली, तंजोर और पुडुकोट्टा (भू० पू० रियासत) के कुछ भाग संमिलित थे (के० ए० नीलकंठशास्त्री, द चोलाज,

---

[1] माडर्न रिव्यू, LXXI. 1942, एल० एन० गुबिल द्वारा लिखित लेख चिदम्बरम्।

अध्याय, II, पृ० 22)। उरैय्यूर इसकी राजधानी थी (पुरानी त्रिचिनापल्ली) जो संस्कृत उरगपुर की समानार्थक है। दण्डिन ने अपने काव्यादर्श में (III, 166, रामचन्द्र तर्कवागीश संस्करण) चोल देश का वर्णन किया है, किंतु इसके भाष्यकार ने इसे कर्णाट में संमिलित बतलाया है। चोल देश की परिधि, जिसे चीनी चूल्लि-ये ((Chulli-ye) कहते थे, लगभग 2400 ली थी। यहाँ की जनसंख्या बहुत कम थी। यह वीरान और जंगल था। यहाँ की जलवायु गरम और निवासी क्रूर और लंपट थे। प्रकृत्या वे भयंकर थे। यहाँ पर कुछ जीर्णप्राय संघाराम एवं देवमंदिर थे (बील, बुद्धिस्ट रिकार्डस ऑव द वेस्टर्न वर्ल्ड, II, 227)। चोल राज्य के इच्छुक राजराज ने वेंगी प्रदेश अपने चाचा विजयादित्य को दे दिया था। चोल नाम की उत्पत्ति अनिश्चित है। चोल शब्द प्राचीनकाल से ही चोलवंशीय राजाओं के अधीन रहने वाली जनता और देश के लिए व्यवहृत था। चोल राजा तिरैय्यर कबीले अथवा समुद्री जन से संबंधित बताये जाते थे। टॉलेमी ने शोर (चोल) राज्य को अरकेटस और मलंग-राज्य को बसरोन्नगस द्वारा प्रशासित बतलाया है। टॉलेमी ने चोलों को सोरिंगाई (Soringae) की संज्ञा से अभिहित किया है जिनकी राजधानी आरथौरा (Orthoura) थी (मैक्रिंडिल, ऐंश्यंट इंडिया ऐज़ डिस्क्राइब्ड बाई टॉलेमी, मजूमदार संस्करण, पृ० 64-65, 185-186)। पाणिनि ने अपनी अष्टाध्यायी (4, 1, 175) में चोल का वर्णन किया है। अशोक ने दूसरे और तेरहवें शिलालेखों में दूसरे राज्यों के साथ चोलों का वर्णन अपने साम्राज्य के बाहर सीमांत पर स्थित प्रांतों (प्रचम्त) के रूप में किया है। रामायण (बंबई सं०) IV, अध्याय, 41); मार्कण्डेय (अध्याय, 57, श्लोक, 45); वायु० (अध्याय, 45, श्लोक, 124) और मत्स्यपुराणों (अध्याय, 112, श्लोक 46) में चोलों का उल्लेख प्राप्य है। बृहत्संहिता (XIV. 13) में इसे एक देश कहा गया है। चोलों का प्रारंभिक इतिहास अंधकारपूर्ण है।

महावंस (166, 197 और आगे) के अनुसार किसी समय लंका पर आक्रमण करने वाले दमिल चोल देश के निवासी थे। चोलों का वर्णन कात्यायन के वार्त्तिक में आया है। चोल तमिल सोर हैं, और संभवत: टॉलेमी द्वारा वर्णित शोर से समीकृत किये जा सकते हैं (तु० सौर रेगिया अर्कटी–(Sora Regia Arcati)। चोलों की राजधानी उरैय्यूर (उरगपुर) थी और उनका मुख्य बंदरगाह, कावेरीपत्तनम् अथवा कावेरी के उत्तरी तट पर स्थित पुगार था। अधिक विवरण के लिए, बि० च० लाहा, ट्राइब्स इन ऐंश्यंट इंडिया, पृ० 186 और आगे द्रष्टव्य।

कोलरून—(कोल्लिडम)—यह एक नदी का नाम है (सा० इं० इं०,

जिल्द, II, पृ० 60 और 282, पाद टिप्पणी) जो सेत्तिमंगलम् गाँव से होकर प्रवाहित होती है। यह त्रिचिनापल्ली से निकलती है और पोर्टो नोवो के आगे समुद्र की खाड़ी में गिरती है।

कांजीवरम्—यह कच्ची या कांची या काञ्चीपुर का आधुनिक नाम है (वही, II, 259, पा० टि०)। पतञ्जलि ने अपने महाभाष्य (IV. 1. 4; IV. 2. 2) में काञ्चीपुर का उल्लेख किया है। दक्षिण भारत में बौद्ध शिक्षा के उल्लेखनीय केंद्र में से यह एक था (बि० च० लाहा, ज्यॉग्रेफिकल एसेज, I, पृ० 79-80)। दक्षिण भारत का यह प्राचीन स्थल दो भागों यथा, शिव और विष्णु काञ्ची में विभक्त था। कुछ विद्वानों ने इसे तीन भागों में बाँटा है यथा, विशाल काञ्ची, लघुकाञ्ची और पिलयर कोलियम। शिवकाञ्ची का मंदिर अत्यंत प्राचीन है, और विष्णुकाञ्ची के मंदिर का निर्माण बाद में किया गया था। काञ्ची-नगरी शैव, बौद्ध और जैन मतों से प्रभावित रही है। कांजीवरम् का कामाक्षी मंदिर सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण है। कैलासनाथ के मंदिर में अर्धनारीश्वर की एक प्रतिमा है। कच्छपेश्वर मंदिर में कूर्म के रूप में विष्णु शिव की पूजा करते हुये प्रदर्शित किये गये हैं। वहाँ पर अनेक विष्णु-मंदिर हैं। नगर के पश्चिमी भाग में, जिसे विष्णु काञ्चीवरम कहा जाता है, वैकुण्ठ-पेरुमाल के वास्तुचित्रों में विष्णु के विविध रूप प्रदर्शित हैं।

क्रंगनोर—कोडुंगोलूर नामक गाँव का यह आधुनिक नाम है (सा० इं० इं०, जिल्द, II, पृ० 4, प्रस्तावना)। यह प्राचीन चेरों की राजधानी के रूप में विश्रुत थी।

दडिगमण्डल—फ्लीट के अनुसार, संभवतः दडिगमण्डल को तडिगैपाडी से समीकृत किया जा सकता है (वही, II, पृ० 3, प्रस्तावना; तु० इं० ऐं०, जिल्द, XXX; पृ० 109 और आगे)।

दडिगवाडी—तडिगैपाडि से समीकृत यह मैसूर जिले में स्थित एक प्राचीन जिला है (सा० इं० इं०, जिल्द, II, पृ० 4, प्रस्तावना)।

दक्षिणझारखंड—नरसिंह द्वितीय के केन्दुपत्रदान ताम्रपत्र में दक्षिण झारखंड का उल्लेख है, जिसमें गंजम एजेंसी का उत्तरी भाग समाविष्ट है। इसे समुद्रगुप्त की इलाहाबाद प्रशस्ति में महाकान्तार भी कहा गया है जहाँ के प्रमुख व्याघ्रराज से उसकी लड़ाई हुयी थी।

दमिल—सासनवंस (पृ० 33) में इसका वर्णन एक राज्य के रूप में हुआ है, जहाँ थेर कस्सप रहते थे। दमिल जन दक्षिण भारत के एक शक्तिशाली कबीले थे। वे बौद्ध-स्तूपों के प्रति अनादर भाव रखते थे (महावंस कामेंट्री, पृ० 447)।

इनकी लड़ाइयाँ सिंहली-नरेशों से हुयी थीं। विस्तृत विवरण के लिए बि० च० लाहा की 'ज्यॉग्रेफिकल एसेज़ नामक पुस्तक, पृ० 76-80 देखिये।

दण्डपल्ली—यह चित्तूर जिले के पालमनेर तालुक में स्थित एक गाँव है, जहाँ से विजयभूपति के अभिपत्र प्राप्त हुये थे (एपि० इं०, XIV, 68 और आगे)।

दंतपुर—यह कलिंग की राजधानी थी ((जातक, II, 367, 371, 381; III, 376; IV, 230-232, 236)। गंग नरेश इन्द्रवर्मन के जिरजिंगी अभिपत्रों में (एपि० इं०, XXV, खंड, VI, अप्रैल, 1940, पृ० 285) इसका उल्लेख एक सुंदर नगर के रूप में हुआ है, जो देव-पुरी अमरावती से भी अधिक रमणीक था। यह महाभारत (उद्योगपर्व, XLVII. 1883) में वर्णित दंतपुर या दंतकुर तथा शिकाकोल के निकट नागार्जुनिकोण्ड अभिलेखों में उल्लखित पालुर है। पालि–ग्रंथ महागोविन्दसुत्तान्त (दीघ, II, पृ० 235) में भी इसका वर्णन कलिंग की प्राचीन राजधानी के रूप में किया गया है। दंतपुर का अर्थ वास्तव में दाँत का शहर है। विश्वास किया जाता है कि बुद्ध काल के पूर्व भी यह एक महत्त्वपूर्ण नगर रहा होगा (महावस्तु, III, 361 और जातक, II, 367)। बतलाया जाता है कि बुद्ध का पवित्र दाँत इसी स्थान से लंका ले जाया गया था (तु० दाथावंस, बि० च० लाहा, द्वारा संपादित संस्करण)। जैन ग्रंथ आवश्यक निर्युक्ति में (1275) में दंतवक्क को दंतपुर का शासक बतलाया गया है। इस शहर को गोदावरी-तट पर स्थित राजमहेन्द्री (राजामुंद्री) से समीकृत किया गया है। कुछ विद्वानों ने इसे उड़ीसा में स्थित पुरी बतलाया है (दे, ज्यॉग्रेफिकल डिक्शनरी, पृं० 53)। सिलवाँ लेवी ने उसे टॉलेमी द्वारा वर्णित पलौरा (Paloura) से समीकृत किया है। (सुब्बा राय के अनुसार यह दंतपुर के दुर्ग के अवशेषों में स्थित है, जो शिकाकोल रोड रेलवे स्टेशन से तीन मील दूर वंशधरा नदी के दक्षिणी तट पर स्थित है।

दर्सि—यह आन्ध्र प्रदेश के नेल्लोर जिले में अवस्थित है, जहाँ से पल्लव-युगीन एक दान ताम्रपत्र प्राप्त हुआ था (एपि० इं०, I, 397)।

दिउली—यह गाँव धर्मशाला थाने से दो मील दूर पश्चिम में जाजपुर तहसील में स्थित है। यहाँ पर एक मंदिर है, जो ब्राह्मणी नदी के मोड़ पर है। खंभेदार महाकक्ष की छत गिर पड़ी है। मंदिर के सामने एक वटवृक्ष है, जिसकी छाया में विष्णु की एक आदमकद एकाश्मप्रतिमा है (बिहार ऐंड उड़ीसा डिस्ट्रिक्ट गजेटियर्स, कटक, ले० ओ, 'मेल्ली, 1933)।

देवपुर—इसे या तो स्रुंगवरपुकोट तालुक में स्थित देवाडि या शिकाकोल

तालुक में स्थित देवाडी से समीकृत किया जा सकता है (एपि० इं०, XXIV, भाग, II, पृ० 50)।

देवराष्ट्र—यह विजगापट्टम जिले का येलमाञ्चिली तालुक है (आर्क० स० रि०, 1908-09, 123; 1934–35, 43, 65)।

धरणीकोट—(धन्नकड)—जैन ग्रंथ आवश्यक नियुक्ति (324) में इसका वर्णन है। यह गुंटुर जिले में है, जहाँ से धर्मचक्र स्तंभ लेख प्राप्त हुआ था (एपि० इं०, XXIV, भाग, VI, अप्रैल, 1938, पृ० 256)। टालेमी ने इसे मेसोलिया (Maisolia) की राजधानी पित्युंद्रा (Pityundra) बतलाया है। यह बेजवाड़ा से कोई 20 मील पहले कृष्णा नदी के तट पर स्थित था (मैक्रिंडिल, टॉलेमीज ऐंश्येंट इंडिया, मजूमदार संस्करण, पृ० 187)। रेड्डियों ने धरणीकोट में ब्राह्मणी-आक्रमण का सामना किया और उन्हें पीछे हटा दिया था (एपि० इं०, XXVI)।

धौली—दया नदी के दक्षिणी तट पर भुवनेश्वर से चार मील दक्षिण पश्चिम में यह गाँव स्थित है। इस गाँव के समीप दो नीची-छोटी पहाड़ियाँ एक दूसरे के समानांतर पर स्थित हैं। दक्षिणीपर्वतमाला के उत्तर भाग की शिला गढ़ी हुयी और ओपदार है। यहाँ पर अशोक के कुछ शिला ज्ञापन उत्कीर्ण हैं। अभिलेख, शिला में गहराई से लिखा गया है और चार खंडों में विभक्त है। अभिलेख के आगे एक चबूतरा है, जिसके दाहिनी ओर ठोस शिला में एक हाथी का अग्रभाग गढ़ा हुआ है। यहाँ पर कुछ प्राकृतिक तथा कृत्रिम गुफाएँ एवं मंदिर हैं। अशोक के अभिलेख धौली के सर्वाधिक रोचक अवशेष हैं, जिनसे एक व्यापक उदारतावादी दृष्टिकोण प्रकट होता है एवं जिससे श्रेष्ठ आचारिक सिद्धांतों की आदत डाली जा सकती है (बिहार ऐंड उडीसा डिस्ट्रिक्ट गजेटियर्स, पुरी, ले० ओ' मेल्ली, 1929, 278 और आगे)।

धवलपेट—यह गाँव आन्ध्र राज्य के विजगापट्टम जिले में शिकाकोल से लगभग 12 मील दूर पर स्थित है। यहाँ से महाराज उमावर्मन के अभिपत्र प्राप्त हुये थे (एपि० इं०, XXVI, भाग, III, पृ० 132)।

दिब्बिद अग्रहारम—विजगापट्टम जिले के वीरविल्ली तालुक में स्थित यह एक गाँव है (एपि० इं०, V, 107)।

दिनकाडू—दिनकाडु अभिलेखों में वर्णित यह एक गाँव है। इस गाँव की कुछ भूमि विजयादित्य ने माधव को दी थी (जर्नल ऑव द आंध्र हिस्टॉरिकल रिसर्च सोसायटी, जिल्द, V, भाग, I, पृ० 56)।

दीर्घासि—गंजम जिले में कलिंगपतनम से चार मील उत्तर में स्थित यह एक

गाँव है। यहाँ से वनपति (शक संवत् 997) का एक अभिलेख मिला था (एपि० इं०, IV, 314 और आगे)।

दोम्मर-नंद्याल—इसे नंदिगाम और पसिम्दिकुरु नामक दो गाँवों से समीकृत किया जा सकता है (एपि० इं०, XXVII, भाग, VI, पृ० 274)।

द्राक्षाराम—यह एक गाँव का नाम है। इसे आंन्ध्र देश का मुकुटमणि कहा गया है। यह पूर्वी गोदावरी जिले में रामचन्द्रपुरम तालुक के इञ्जरम नहर के उत्तरी तट पर स्थित है। यह गोदावरी जिले का एक पुनीत स्थल है। यहाँ भीमेश्वर को समर्पित एक विशाल मंदिर है (सा० इं० इं०, I, पृ० 53, 61; एपि० इं०, XXVI, भाग, I)। चोल नरेश अन्नदेव ने भीमेश्वर मंदिर के शिखर को स्वर्ण मंडित करवाया था। यहाँ पर ब्राह्मणों के लिए दो सत्रों की स्थापना की गयी थी (तु० सीवेल, लिस्ट ऑव ऐंटक्विटीज, I, पृ० 25)।

द्राविड—यह एक देश का नाम है (सा० इं० इं०, I, पृ० 113)II यह तमिल देश का संस्कृत नाम है। इसका वर्णन महाभारत (अध्याय, 118, 4); भागवत पुराण (IV. 28, 30; VIII. 4, 7; VIII. 24.13; IX. 1 '2; X. 79-13; XI. 5, 39) और बृहत्संहिता में (XIV. 19) हुआ है। जैन ग्रंथ बृहत्कल्प भाष्य में भी इसका वर्णन प्राप्य है (बृ० श्लोक, I, 1231)।

दुण्णिविट्ठ—यह कलिंग-राज्य में एक ब्राह्मण गाँव था (जातक, VI, 514)

एडेरु—बेजवाड़ा से 15 मील पूर्वोत्तर में, कृष्णा जिले में अकिरिपल्ली के समीप यह एक गाँव है (एपि० इं०, V, 118, वही, I, पृ० 36)। इसे कित्स्ना जिले में स्थित इडार नुजविद तालुक भी कहते हैं।

एकधीर–चतुर्वेदिमंगलम—यह एक गाँव का नाम है, जो दक्षिण अर्काट जिले के तिरुनाम–नल्लूर के समीप कहीं पर स्थित है। एकधीरमंगलम् नाम एकधीर-चतुर्वेदिमंगलम का वाचक है (सा० इं० इं०, जिल्द, II, पृ० 529; अन्य विवरण के लिए द्रष्व्य, रंगाचारी की तालिका, पृ० 1695; एफ० टी० 21, अन्य संस्करण के लिए)।

एलापुर—दंतिदुर्ग के एलौरा अभिपत्रों में इसका वर्णन है। यह एलौरा ही है जहाँ दंतिदुर्ग ने दशावतार-गुहा मंदिर एवं उसके उत्तराधिकारी कृष्ण ने कैलाश मंदिर का निर्माण कराया था (एपि० इं०, XXV, भाग, I, पृ० 29, जनवरी, 1939)।

एल्लोर—इसे इल्लूर या इल्वलपुर भी कहा जाता है। यह संभवतः कमलाकरपुर या तेलुगु कोलनुका अधुानिक नाम है। यह गोदावरी जिले की

की कोल्लेरु झील के तट पर स्थित है (सा० इं० इं०, जिल्द, II, पृ०, 308)। यह अपने कैलाशनाथ मंदिर के लिए विश्रुत है। औरंगाबाद से लगभग 16 मील दूर महाराष्ट्र राज्य के पश्चिमोत्तर में, एल्लोर या एलोरा में स्थित गुफाएँ भारत की कतिपय अतीव महत्त्वपूर्ण बौद्ध गुफाएँ हैं। सबसे पहले यहाँ भिक्षुगृहों, जिन्हें दुमलेण कहा जाता था, की खुदाई की गयी थी। बौद्ध गुफाओं के साथ ही साथ यहाँ पर ब्राह्मण और जैन गुफाएँ भी हैं। बौद्ध गुफाओं में उत्तरकालीन महायान संप्रदाय के स्पष्ट चिह्न परिलक्षित होते हैं। दूसरी गुफा की दीर्घाओं में प्रवचन-मुद्रा में कमलासीन बुद्ध की प्रतिमाएँ हैं। पूर्वोत्तर के कोने में बुद्ध की एक बहुत बेडौल एवं प्रायः अपूर्ण प्रतिमा है। यहाँ पर सिंहासन पर बैठी हुयी बुद्ध की एक भीमकाय प्रतिमा भी है। इन गुफाओं में बुद्ध प्रवचन या धर्मचक्र प्रवर्तन-मुद्रा में प्रदर्शित किये गये हैं। दीवालें बुद्ध और बौद्ध-मुनियों की प्रतिमाओं से प्रचुर रूप से आवृत्त हैं। तीसरी गुफा एक बिहार गुहा है, जिसमें भिक्षुओं के लिए बारह कोठरियाँ हैं। दीवारों पर भी बौद्ध-ऋषिओं के अनेक चित्र खचित हैं। चतुर्थ गुहा जीर्ण हो चुकी है। इस गुहा के उत्तरी छोर पर दो स्त्रियों द्वारा परि-सेवित पद्मपाणि की एक प्रसिद्ध प्रतिमा है। छठीं गुफा में एक मंदिर के सामने मूर्तियों से भरा हुआ एक उपकक्ष है। नवीं गुफा में विविध प्रकार के परिचारकों से सेवित बुद्ध की एक प्रतिमा है। दसवीं गुहा एक सुंदर चैत्य-गुफा है, जिसके संमुख एक विशाल एवं उन्मुक्त प्रांगण है। इसमें की गयी नक्काशी अत्यंत सुंदर और इसका मुहार अतिशय अलंकृत है। पूजागृह में गलियारे का भीतरी भाग प्रतिमाओं से भरे हुये तीन कक्षों में विभाजित है। डगोबा के संमुख बुद्ध की एक भीमकाय प्रतिमा यहाँ बनायी गयी है। ग्यारहवीं गुफा दो मंजिली एवं अपने बाह्य-रूपाकार में तेरहवीं गुफा के सदृश ही है। ग्यारहवीं एवं तेरहवीं गुफाओं में खुले प्रांगण और दीवालों में कमरे बने हुए हैं तथा उनपर महायान संप्रदाय के प्रभाव चिह्न परिलक्षित होते हैं।

एलौरा (प्राचीन एलापुर) से सर्वप्राचीन राष्ट्रकूट सम्राट् दंतिदुर्ग के ताम्रपत्र अभिलेख प्राप्त हुय थे (एपि० इं०, XXV, भाग, I, पृ० 25 और आगे)।

एलुम्बुर—यह मद्रास का एक भाग एगमोर ही है (सा० इं० इं०, जिल्द, III, 133)।

एलूरु—यह एक गाँव का नाम है (सा० इं० इं०, I, पृ० 108)। यहाँ पर कुछ मंदिर स्थिति हैं।

एलुर—यह पश्चिमी गोदावरी जिले के वेंगीविषय में स्थित एक गाँव है।

एनादपाडि—यह किसी गाँव का नाम है (सा० इं० इं०, I, पृ० 83)।

एरण्डपल्ल—फ्लीट ने इसे पूर्वी खानदेश में स्थित एरण्डोल से एवं डुब्रील ने गंजाम जिले में शिकाकोल के समीप एरण्डपली से समीकृत किया है। कुछ विद्वानों ने इसे विजगापट्टम में स्थित येण्डिपल्लि से समीकृत किया है (रायचौधरी, पो० हि० ऐ० इं०, पंचम संस्करण, पृ० 540; जर्नल ऑव इंडियन हिस्ट्री, जिल्द, VI, खंड, III, पृ० 402-403)।

एयिल—यह दक्षिण अर्काट जिले के तिण्डीवनम तालुक में स्थित एक गाँव का नाम है (सा० इं० इं०, I, पृ० 123, 147)। इसी गाँव के नाम पर एयिर-कोट्टम का नामकरण हुआ है।

एयिरकोट्टम—इस जिले का नामकरण संभवत: दक्षिण अर्काट जिले के तिण्डिवनम तालुक में स्थित एयिल (कोट) के आधार पर हुआ है, (वही, I, पृ० 123)। यह जयकोण्डशोलमण्डलम में स्थित एक विषय (जिला) है। कांजीवरम् भी इसी में स्थित बतलाया गया है।

गडविषय—इसे जयमञ्जदेव के अंतिरिगम अभिपत्रों में वर्णित खिञ्लीय-गडविषय से समीकृत किया जाता है (एपि० इं०, XXIV, भाग, I, जनवरी, 1937, पृ० 18)।

गंगा—यह एक नदी का नाम है (सा० इं० इं०, I, पृ० 57-58 आदि)। इस नदी को मंदाकिनी भी कहते हैं, जो अपने वेगवान जलप्रवाह के आक्रोश सहित आकाश से अवतरित होती हैं और जिसे भगवान् शिव अपनी जटा-जूट में धारण करते हैं (सा० इं० इं०, II, पृ० 514)। रामचन्द्र के पुरुषोत्तमपुर अभिपत्रों में इसका वर्णन है, जो गोदावरी है (एपि० इं०, XXV भाग, V, पृ० 208)।

गंगापाडि—यह वर्तमान मैसूर राज्य में समाविष्ट है (सा० इं० इं०, जिल्द, II, पृ०, 8, 17)।

गंगापुर—इस गाँव को आधुनिक संगूर से समीकृत किया जाता है, जो उत्तरी कनाड़ा जिले (कारवार) में सिरसी जाने वाले मार्ग पर हावेरी से लगभग आठ मील दूर पश्चिमोत्तर में स्थित है। यह गोवेयराज्य के चंद्रगुत्तिनाडु में संमिलित था (एपि० इं०, XXIII, भाग, V, पृ० 182 और आगे)।

गौतमी—यह गोदावरी नदी का एक अन्य नाम है (एपि० इं०, XXVI, भाग, I, जनवरी, 1941)। इसे अखण्ड गौतमी से समीकृत किया जा सकता है। सात शाखाओं में विभाजित होने के पहले गोदावरी को अखण्ड-गौतमी या सप्त गोदावरी का सामूहिक नाम दिया गया है (एपि० इं०, XXVI, भाग, I, पृ० 40)।

गौतमी नामक एक गाँव भी है, जो गंजम जिले में बदखिमेडि तालुक में

स्थित है जहाँ से तीन ताम्रपत्र प्राप्त हुये थे (एपि० इं०, XXIV, भाग, IV, 180 और आगे, 4 वर्ष में अंकित गंग इन्द्रवर्मन के गौतमी अभिपत्र)।

गगांनुर—वेलूर के समीप स्थित यह एक गाँव का नाम है (वही, I, पृ० 77, 128)। यह उत्तरी अर्काट जिले के वेल्लोर तालुक में करैवरि-आंदिनाडु में स्थित गांगेय-नल्लूर ही है।

गांगेय-नल्लूर—यह गांगनुर नामक आधुनिक गाँव है (वही, I, पृ० 77)। यह पडुवुरुकोट्टम की करैवरि आंदिनाडु तहसील में स्थित एक गाँव है।

गेडिलम—मानवलप्पेरुमल के सेंदमंगलम् अभिलेख में इस नदी का उल्लेख है जो दक्षिण अर्काट जिले के कल्ल-कुर्चि तालुक से निकलती है और उसी जिले में कुड्डलुर के समीप सेंटडेविड किले के भग्न बुर्जों के नीचे बंगाल की खाड़ी में गिरती है (एपि० इं०, XXIV, भाग, I, जनवरी, 1937, पृ० 27)। इस नदी के तट पर तिरुवडि एवं तिरुमाणिकुलि नामक दो गाँव स्थित हैं (एपि० इं०, XXVII, भाग, III, पृ०, 97)।

घनसेल पर्वत—यह दक्षिण भारत के अवन्ती जनपद में स्थित था (अवन्ती-दक्खिनापथे, जातक, V, 133)।

घण्टसाल—मौसलिपटम से 13 मील पश्चिम में, कित्स्ना जिले में स्थित यह एक गाँव है। इखसिरिवधमान इसका प्राचीन नाम प्रतीत होता है (एपि० इं०, XXVII, भाग, I, 1947-48, 1 और आगे)। यहाँ से पाँच प्राकृत अभिलेख प्राप्त हुये थे।

घटिकाचल—यह एक पहाड़ी का नाम है। यह उत्तरी अर्काट जिले के शोलिंघुर में स्थित है (वही, II, पृ० 502)।

गिंगु—यह दक्षिण अर्काट जिले में है। यहाँ पर कुछ प्राचीन स्मारक हैं (आर्क० स० इं०, एनुअल रिपोर्ट्स, 1917-18, भाग, I, पृ० 13)।

गोदावरी—यह एक नदी का नाम है (महाभारत, 85, 33; 88, 2; भागवतपुराण, V. 19, 18; ब्रह्माण्डपुराण, I, 12, 15; मत्स्यपुराण, 22, 46; पद्मपुराण, उत्तरखण्ड, श्लोक, 35-38)। रामायण (अरण्यकाण्ड, 15 वाँ सर्ग, श्लोक, 11-18, 24) के अनुसार यह कमलमंडित थी और इसके निकट ही मृग स्वच्छंद विचरण किया करते थे। हंस, कारण्डव और चक्रवाक इस नदी में क्रीड़ा किया करते थे। इस रम्या नदी के दोनों तट वृक्षों से सुशोभित थे। लक्ष्मण ने इस नदी में स्नान किया था और अनेक कमलों एवं फलों को लेकर वह पर्ण-कुटी लौटे थे। कालिदास ने अपने रघुवंश (XIII. 33 में इसका उल्लेख किया है। पञ्चवटी उसके तट पर स्थित थी। ब्रह्मपुराण (अध्याय, 77, श्लोक, 9-10;

17

सौर०, अध्याय, 69, श्लोक, 26) के अनुसार इसका उद्गमस्थल त्र्यंवक तीर्थ था। इस नदी के तट पर अनेक पुण्य स्थल स्थित हैं; यथा कुशावर्त्ततीर्थ (ब्रह्मपुराण, अध्याय, 80) दशाश्वमेधिकतीर्थ (महाभारत, अध्याय, 83, 64), गोवर्धनतीर्थ (वही, अध्याय, 91), सावित्री तीर्थ (वही, अध्याय, 102), विदर्भ (वही, 121), मार्कण्डेयतीर्थ (वही, अध्याय, 145) और किष्किन्ध्यातीर्थ (वही, 157)। इसका वर्णन सुत्तनिपात (पृ० 190) में हुआ है। यह दक्षिण भारत की सबसे लंबी और सबसे बड़ी नदी है जिसका उद्गम-स्थान पश्चिमी घाट में कहीं है। विन्ध्यपर्वतमाला के नीचे पूर्वी घाट में एक घाटी बनाती हुयी यह दक्षिण-पूर्वी दिशा में प्रवाहित होती है। यह तीन उपनदियों में बँट कर गोदावरी जिले में बंगाल की खाड़ी में गिरती है और अपने मुहाने पर यह एक विशाल डेल्टा बनाती है। आन्ध्र (भूतपूर्व, हैदराबाद) और महाराष्ट्र राज्य के इसके प्रवाह-पथ में इसमें अनेक सहायक नदियाँ मिलती हैं। यह सह्य पर्वत से तुंगभद्रा, कावेरी, भीमरथ (या भीमरथी), कृष्णवेंण्हा आदि नदियों के साथ ही निःसृत हुयी है। दक्षिण भारत की इस पवित्रतम नदी का वास्तविक स्रोत ब्रह्मगिरि है जो त्र्यंवक नामक गाँव की ओर नासिक से 20 मील दूर पर है। यह कवित्थ-वन के निकट है, (जातक, V, 132)। जैन-साहित्य में इस नदी को गोयावरी कहा गया है (बृहत्कल्प-भाष्य, 6. 6244 और आगे)। महाभारत में (अध्याय, 85. 44) सप्तगोदावरी का उल्लेख है।

गोकर्ण—केलादि सदाशिव नायक के कप ताम्रपत्र में गोकर्ण का उल्लेख है, जो उत्तरी कनाड़ा (कारवार) में इस नाम का एक ग्राम है। यह रेवा नदी के निकट है (सौरपुराण, अध्याय, 69, श्लोक, 29)। शक संवत् 1177 में लिखित कदंब कामदेव के ताम्रपत्र गोकर्ण से प्राप्त हुये थे (तु०, एपि० इं०, XXVII, भाग, IV, पृ० 157 और आगे)। रामायण (आदिकाण्ड, 42 वाँ सर्ग, श्लोक, 12) में बतलाया गया है कि दीर्घकाल तक निःसंतान रहने के कारण भगीरथ ऋषि ने उस स्थान पर आकर तपस्या की थी। महाभारत (85, 24-27) एवं पद्मपुराण (अध्याय, 21 में) एक तीर्थ के रूप में इसका वर्णन किया गया है। कूर्मपुराण (30, 45-48; तु० अग्निपुराण, 109) तथा पद्मपुराण (अध्याय, 133) में भी इसी रूप में इसका वर्णन है। सौरपुराण (अध्याय, 99, श्लोक 33) में दक्षिणी गोकर्ण का वर्णन है जो इसके अनुसार सिन्धु नदी के तट पर स्थित है।

गोकर्णेश्वर—कटक जिले की जाजपुर तहसील में दिउली के समीप स्थित यह एक गाँव है, जो धरमशाला थाने से दो मील दूर पश्चिम में स्थित है। यहाँ

पर गोकर्णेश्वर का एक छोटा सा मंदिर है, जो ब्राह्मणी नदी के मोड़ पर चित्रवत् बना हुआ है। यह उड़ीसा के प्राचीन मंदिरों में से एक है। एक वट वृक्ष के तने यहाँ पर चतुर्मुखी विष्णु की एक आदमकद एकाश्म प्रतिमा प्राप्त होती है।

गोल्लपुण्डि—इसे गोल्लपूडि गाँव से समीकृत किया जा सकता है, जो कित्स्ना जिले के बेजवाड़ा में कृष्णा नदी के उत्तरी तट पर ताडिकोण्ड के उत्तर में लगभग 12 मील दूर पर स्थित है (एपि० इं०, XXIII, भाग, V—अम्मराज द्वितीय का ताण्डिकोण्ड-दानपत्र)।

गोमुखगिरि—यह एक पहाड़ी का नाम है। इस पहाड़ी पर एक मंदिर है, जिसे राजा अन्नदेव ने गोमुखगिरीश्वर के लिए समर्पित किया था (एपि० इं०, XXVI, भाग, I,)।

गोण्टूरु—यह एक गाँव का नाम है (सा० इं० इं०, जिल्द, I, 38)। गोण्टूर को कित्स्ना जिले में स्थित आधुनिक गुण्टुर से समीकृत करना संदेहास्पद है। इस गाँव के पूर्व में गोंगुव, दक्षिण में गोणयूरु, पश्चिम में कलुचेरुवुलु और उत्तर में मडपल्ली स्थित है (वही, I, पृ०, 43)।

गोट्टकेला—इसे गोटरकेल भी कहते हैं। यह सोनपुर कस्बे से लगभग 3 मील दूर पर है (एपि० इं०, XXIII, भाग, VII, जुलाई, 1936, पृ० 250)।

गोविन्दवाडि और दामल—ये चिंगलपुत जिले के कांजीवरम् तालुक में स्थित दो गाँव हैं। गोविन्दवाडि उत्तरी अर्काट जिले के अरकोनम तालुक में तिरुमलपुरम के निकट है, और इसे तिरुमलपुरम से उपलब्ध अभिलेख में वर्णित गोविन्दपाडि से समीकृत किया गया है (सा० इं० इं०, जिल्द, III, पृ०, 254)। गोविन्दपाडि वेल्लनाडु में है जो दामरकोट्टम का एक विषय (जिला) है।

गुद्दवाटि विषय—यह गोददवाडि-विषय ही है (इं० ऐं०, भाग, XIV, पृ० 53)। गुद्दवाटि विषय या गुद्दवाडि विषय को संभवतः गुद्रवार, गुद्रावार या गुद्रहार विषय से समीकृत किया जा सकता है, और यह कित्स्ना जिले के एक तालुक के मुख्यावास आधुनिक गुडिवाड से संबंधित है (हुल्टश, सा० इं० इं०, जिल्द, I, पृ० 52 और पा० टि०)।

गुडला-कण्डेरुवाटि—यह कृष्णा नदी के दक्षिणी तट पर अमरावती के चतुर्दिक् स्थित इलाके का प्राचीन नाम है जो अपने सुंदर मंदिरों, अमरवटेश्वर एवं बुद्ध के चैत्यों के लिए उल्लेखनीय है। 'गुडला' का शाब्दिक अर्थ 'मंदिरों का' है और कण्डेरवाडि या कण्डेरुवाटि का नाम प्राचीन कस्बे कण्डेरु के गण्टुर तालुक या आधुनिक कण्टेरु के आधार पर पड़ा है, जो गुंटुर जिले में स्थित एक गाँव है, जो पहले एक बहुत महत्त्वपूर्ण स्थान रहा होगा। गुडलाकण्डेरुवाटि-विषय गुंटुर के उत्तरी

एवं सत्तेनपल्ली तालुक के पूर्वी भाग का नाम था। गुंटुर के केंद्रीय भाग एवं सत्तेनपल्ली के दक्षिण-पूर्वी भागों को उत्तर-कण्डेरुवाटिविषय कहते थे (एपि० इं०, XXIII, भाग, V, पृ० 166)।

गुद्रवारविषय—इसे मसुलिपटम के समीप गूडूरु से और कित्स्ना जिले में इसी नाम के तालुक के मुख्यावास, गुडिवाड से समीकृत किया गया है (एपि० इं०, XVII, सं० 10, पृ० 45)।

गूद्र—यह मसुलिपटम के समीप एक कस्बा है। टॉलेमी ने इसे कोड्डीरा कहा है (मैक्रिंडिल, एंश्येंट इंडिया ऐज़ डिस्क्राइब्ड बाई टॉलेमी, मजूमदार संस्करण, पृ० 68)।

गुण्डुगोलनु—वेंगिनाण्डुविषय में स्थित यह एक गाँव है। इसे कल्लुरु के निवासी एक ब्राह्मण को दान दे दिया गया था। यहाँ से अनेक अभिपत्र पाये गये हैं (इं० एं० XII, 248)।

गुत्ति—यह गूती नामक स्थान है, जो अनंतपुर जिले के एक तालुक का मुख्यावास है (एपि० इं०, XXV, भाग, IV, पृ० 190)।

हड्डवक—यह एक गाँव है, जो स्पष्टतः सुदाव है, जो उड़ीसा राज्य के गंजम जिले के पूर्वी भाग (पहले परलकिमेडी रियासत का पूर्वी भाग) में स्थित है (एपि० इं०, XXVI, भाग, 2, अप्रैल, 1941, पृ० 63)।

हगरी—यह नदी कदंब देश एवं उत्तर में नलवाडि तथा कदंब देश एवं दक्षिण में सिरे 300 के मध्य की उभयनिष्ठ सीमा है (क्वा० ज० मि० सो०, जनवरी तथा अप्रैल, 1950, पृ० 88)।

हलमपुर—गुरज़ल ब्राह्मी अभिलेख में इस स्थान का उल्लेख है। कुछ विद्वानों के अनुसार इसे कित्स्ना जिले के नंदिगाम तालुक में स्थित अल्लूरु से समीकृत किया जा सकता है। कुछ अन्य विद्वानों के अनुसार इसे भूतपूर्व निज़ाम राज्य में स्थित आलमपूर से समीकृत किया जा सकता है। आलमपूर कृष्णा में मिलने के स्थल से थोड़ी दूर पहले ही, इसके तुंगभद्रा के पश्चिमी तट पर रायचूर दोआब के अंतिम छोर पर स्थित है। यहाँ पर पुरानिधियाँ मंदिरों एवं अन्य प्रकार के स्मारकों का बाहुल्य है (एपि० इं०, XXVI, 124 और आगे; एनुअल रिपोर्टस ऑव द आर्क्योलॉजिकल डिपार्टमेंट ऑव निजाम्स डोमिनियंस, 1926-27)।

हंसप्रपतन—यह भागीरथी के बाँई ओर और प्रतिष्ठान के उत्तर में स्थित एक तीर्थस्थान है (कूर्मपुराण, पूर्वभाग, अध्याय, 36, श्लोक, 22)।

हनुमकोण्ड (अन्मकोण्ड)—यह आन्ध्र प्रदेश राज्य में स्थित वारंगल के समीप है, जहाँ से प्रोल का अभिलेख प्राप्त हुआ था। इस स्थान के दक्षिणमें

एक पहाड़ी के ऊपर पद्माक्षी का एक छोटा-सा मंदिर बनवाया गया था (एपि० इं०, IX, 256 और आगे)।

हेमावती—यह एक गाँव का नाम है। यह नुलंब्बपाडि की प्राचीन राजधानी थी, (सा० इं० इं०, जिल्द, II, पृ० 425) जिसे निगरिलि-शोरपाड़ि भी कहा जाता था और जो अनंतपुर जिले तक फैली हुयी प्रतीत होती थी।

इदैतुरैनाडु—यह एडातोर प्रदेश है जो मैसूर के एक तालुक का मुख्यावास है (वही, I, पृ० 96)।

इलंगोयक्कुडि—यह अंबा–समुद्रम का प्राचीन नाम है। मुल्लिनाडु में स्थित यह एक ब्रह्मदेय था (एपि० इं०, XX V, भाग, I, जनवरी, 1939)।

इरमण्डलम—इर को राजराज के सुविख्यात उपनाम सुम्मुडिचोल के आधार पर मुम्मुडिचोलमण्डलम कहा जाता था (सा० इं०इं०, जिल्द, II, पृ० 108 आदि)।

इरट्टपाडि—यह पश्चिमी चालुक्यों का साम्राज्य था। इसके राजस्व की धनराशि $7\frac{1}{2}$ लाख थी (वही, I, पृ० 65)। तंजौर अभिलेखों की तालिका के 1365 वें अभिलेख (रंगाचारी की सूची) के अनुसार इस पर किसी चोल-नरेश ने आक्रमण किया था।

इसिल—एक महामात्र द्वारा प्रशासित दक्कन में स्थित यह एक राजधानी थी। यह सिद्दापुर का एक प्राचीन नाम हो सकता है जो मैसूर राज्य के चीतल्द्रुग (चित्रदुर्ग) जिले में स्थित है (अशोक का प्रथम लघुशिलालेख, एपि० इं०, II, सं० 4, पृ० 111)।

जगन्नाथनगरी—इसे जगन्नाथपुरम से समीकृत किया जा सकता है, जो नदी के दक्षिण में स्थित कोकनद कस्बे का एक खंड है (सा० इं० इं०, I, पृ० 51-60; सीवेल, लिस्ट ऑव ऐंटिक्वटीज़, जिल्द, I, पृ० 24)।

जग्गवाग—इस नगर पर चोड-नरेश अन्नदेव ने अधिकार कर लिया था (एपि० इं०, XXVI, भाग, I)।

जम्बुग्राम—राजा महाभवगुप्त प्रथम जनमेजय के कालिभना ताम्रपत्र में इसका वर्णन है, जिसे कालिभना के समीप आधुनिक जामगाँव से समीकृत किया जा सकता है (इं० हि० क्वा०, XX, सं० 3)।

जम्बुकेश्वर—कुछ विद्वानों के अनुसार यह श्रीरंगम है (तु०, देवीपुराण, अध्याय, 102)। यह त्रिचनापल्ली से दो मील दूर उत्तर में स्थित है। यहाँ पर एक मंदिर है जिसमें जल-लिंग है। जल में रहने के कारण देवता का नाम जललिंग है। इसमें बाँई ओर ब्रह्मा, बीच में शिव एवं दाहिनी ओर विष्णु की प्रतिमाएँ हैं।

जटिंगरामेश्वर—यह मैसूर-राज्य के चित्तलद्रुग (चित्रदुर्ग) जिले के मोलकालमुरु तालुक में सिद्दापुर के समीप स्थित एक पहाड़ी है (एपि० इं०, IV, 202) ।

जयकोण्डचोलमण्डलम—यह चोल देश है (सा० इं० इं०, I, पृ० 79-80, 102-123) ।

जयपुरविषय—माधववर्मन के कटक संग्रहालय में संग्रहीत अभिपत्र में इसका उल्लेख है, जो शुभाकरदेव के धरकोट अभिपत्र में वर्णित कंगोदमण्डल का जयकटकविषय ही है। इसे उड़ीसा के गंजाम जिले के समीप ही स्थित वर्तमान जेपुर से समीकृत किया जा सकता है (एपि० इं०, XXIV, भाग, IV, अक्टूबर, 1937, पृ० 151) ।

जाजपुर—उड़ीसा के जाजपुर विषय (जिले) में स्थित यह एक प्राचीन स्थान है। महाभारत में इस स्थान को 'बिरजाक्षेत्र' कहा गया है। दूसरी-तीसरी शती ई० में भी इसकी गणना एक तीर्थ के रूप में की जाती थी। यहाँ पर एक मंदिर है, जिसमें बिरजा नाम (बि-रजा, कामहीना) से सती की एक प्रतिमा अधिष्ठित है। यह मंदिर चौदहवीं शती ई० से पहले का नहीं हो सकता है। कटक जिले में वैतरणी के तट पर स्थित जाजपुर जिसे बिरजाक्षेत्र भी कहा जाता है, ऐतिहासिक महत्त्व का एक स्थान प्रतीत होता है। यहाँ से चार भीमकाय प्रतिमाएँ प्राप्त हुयी हैं, जो पुराविदों के लिए विशेष उपयोगी उपकरण हो सकती हैं। इनमें से एक बोधिसत्त्व पद्मपाणि की 16 फीट ऊँची विकृत खोंडलाइट (Khondalite) की प्रतिमा है जो परवर्ती गुप्त युग की है। अन्य तीन प्रतिमाएँ वाराही, चामुण्डा, एवं इन्द्राणी की हैं। इन प्रतिमाओं में चामुण्डा एवं इन्द्राणी की प्रतिमाएँ बहुत बुरी तरह से खंडित हैं। जाजपुर से उपलब्ध वाराही की विशाल प्रतिमा के दोनों दाहिने हाथों के अग्रभाग लुप्त हैं और दोनों बाँयें हाथ खंडित हैं। वह आराम की मुद्रा में सिंहासन पर आरूढ़ है। उसका वाहन, महिष पीठिका पर उकेर कर के चित्रित किया गया है। रा० प्र० चंद के मतानुसार जाजपुर से प्राप्त मातृकाओं एवं संबद्ध देवताओं तथा देवियों की प्रतिमा के निर्माताओं ने देवी-माहात्म्य का अनुसरण किया था, जिसमें केवल सात मातृदेवियों का ही उल्लेख है। बताया जाता है कि जाजपुर के सभी प्राचीन मंदिरों को मुसलमान आक्रांताओं ने नष्ट कर दिया था। वेडेल एवं रा० प्र० चंद ने ठीक ही बतलाया है कि युवान-च्वाङ् के समय में जाजपुर ही उड़ीसा की राजधानी थी। इसे दुर्गा या बिरजा के संप्रदाय का एक प्राचीन केंद्र मानना चाहिए। जाजपुर से प्राप्त मातृकाओं एवं संबद्ध देवताओं यथा, शिवदूती एवं गणेश की भव्य प्रतिमाएँ प्राचीन मध्ययुगीन

बौद्ध-शिल्प के सर्वोत्तम नमूने हैं। जाजपुर के प्राचीन मध्ययुगीन शैलमंदिर स्थापत्य की दृष्टि से बहुत महत्त्वपूर्ण नहीं है। विस्तृत विवरण के लिए द्रष्टव्य, रा० प्र० चंद, एक्स्लोरेशंस इन उड़ीसा, मे० आर्क० स० इं०, सं०, 44.

जेपुर—यह आंध्र राज्य के विजगापट्टम जिले में स्थित है (एपि० इं०, XXV, खंड, V, जनवरी, 1940)।

जिज्जिक—यह गाँव गंजम जिले के तेक्कलि जमींदारी में स्थित आधुनिक जिरजिगी गाँव ही है, जहाँ से गंग इन्द्रवर्मन के कुछ अभिपत्र प्राप्त हुये थे (एपि० इं०, XXV, भाग, VI, अप्रैल, 1940, पृ० 281 और 286)।

जुराडा—इसे जरडा से समीकृत किया जा सकता है, जो गंजम जिले के कोदोल तालुक में स्थित एक गाँव है। गंजम जिले में सुरद तालुक का मुख्यावास सुरद ही जुराडा है (एपि० इं०, XXIV, भाग I, जनवरी, 1937, पृ०, 18)।

कच्चि—यह आधुनिक कांजीवरम है (सा० इं० इं०, जिल्द, III, पृ० 206)।

कच्चिपेडु—यह काञ्चीपुरम्, आधुनिक कांजीवरम है (सा० इं० इं०, I, पृ० 113, 114, 117, 139, 141, आदि; जिल्द, III, पृ० 267)।

कडब—यह मैसूर राज्य के तुमकुर जिले में है, जहाँ से प्रभूतवर्ष (शक सं० 715) के ताम्रपत्र प्राप्त हुये थे (एपि० इं०, IV, 332 और आगे)।

कडभ्र—यह एक देश का नाम है (सा० इं० इं०, जिल्द, II, पृ० 343, 356)।

कडैकोट्टूर—यह एक गाँव का नाम है (वही, I, पृ० 105)। अरिष्टनेमि आचार्य यहीं के थे।

कडलाडि—यह उत्तरी अकार्ट जिले में है (एपि० इं०, XIV, 310)।

कडपा—टॉलेमी ने इसे करिगे कहा है। यह उत्तरी पेन्नार के दाहिने तट से पाँच मील दूर पर उसकी एक छोटी सहायक नदी के तट पर स्थित है (टॉलेमी कृत ऐंश्येंट इंडिया, मजूमदार संस्करण, पृ० 186)।

कडारम (या किडारम)—यह अब मदुरा जिले के रामनाड जमींदारी तालुक का मुख्यावास है (सा० इं० इं०, II, पृ० 106)। भारत से बृहत्तर भारत या चीन की ओर जाने वाले जलपोतों के लिए पहला बंदरगाह होने के कारण कडारम, तमिल देश के निवासियों के लिए एक सुपरिचित स्थान था और इसीलिए तमिल अभिलेखों में कडारम की विजय का उल्लेख रहता है। 1090 ई० में अंकित लघुत्तर लीडन ताम्रपत्रों में कडारम आयिरट्टलि के चोल दरबार में आये हुये एक राजदूत का उल्लेख है (एपि० इं०, XXII, 267-71)।

कलंजियम—यह एक गाँव का नाम है (सा० इं० इं०, I, पृ० 83)।

कलवलिनाडु—जटावर्मन कुलशेखर प्रथम के तिरुप्पूवनम अभिपत्रों में इसका उल्लेख है। यह उत्तर एवं दक्षिण—दो भागों में विभक्त था (एपि० इं०, XXV, भाग, III, पृ० 98)।

कलवपूम्दी—अन-वोत-रेड्डी (शक सं० 1280) के कोडुरु, दानपत्र में इसका उल्लेख है, जिसे कित्स्ना जिले के गुडिवाड तालुक में स्थित आधुनिक कलुवपूडि से समीकृत किया जा सकता है (एपि० इं०, XXV, भाग, III, पृ० 140)।

कलिंग—यह एक देश का नाम है (एपि० इं०, जिल्द, II, पृ० 8, 17, 35, 123 आदि)।

कलिंगनगर—हस्तिवर्मन के नरसिंहपल्ली और इन्द्रवर्मन के सांतबोम्मालि अभिपत्रों में कलिंगनगर को शिकाकोल के निकट मुखलिंगम या वंशधरा नदी के मुहाने पर स्थित आधुनिक कलिंगपटम से समीकृत किया गया है। (एपि० इं० IV, 187)। कुछ विद्वानों के अनुसार मुखलिंगम एक तीर्थ स्थल है, जो गंजम जिले में परलकिमेडि से 20 मील दूर पर स्थित है (एपि० इं०, XXIII, भाग, II, अप्रैल, 1935, पृ० 76)। फ्लीट ने इसे कलिंगपट्म से समीकृत किया है (इंडियन ऐंटिक्वेरी, XVI, पृ० 132) जो एक राज्य था। कलिंग का वर्णन पाणिनि की अष्टाध्यायी में है (IV. 1. 170)। पतञ्जलि ने अपने महाभाष्य (3, 2, 2, पृ० 191) में इसका वर्णन किया है। भारत के पूर्वी समुद्रतट पर महानदी और गोदावरी नदियों के मध्य स्थित यह एक सुविख्यात देश था (ज० उ० प्र० हि० सो०, XV, भाग, II, पृ० 34)। गुणार्णव (गंगसंवत् 192) के पुत्र देवेन्द्र वर्मन के त्रिलिंग अभिलेख में भी इसका वर्णन है। लक्ष्मणसेन के इंडिया आफिस अभिपत्र में कलिंग का वर्णन है (एपि० इं०, XXVI, भाग, I; XXV, भाग, V, जनवरी 1940)। गंग संवत् 358 के अनन्तवर्मन के तेक्कलि अभिपत्रों में (एपि० इं०, XXVI, 174 और आगे) तथा 308 वें वर्ष के गंग देवेन्द्रवर्मन के इंडियन म्यूजियम अभिपत्रों (एपि० इं०, XXIII, भाग, II,) में इसका वर्णन है। रैंडल ने ठीक ही बतलाया है कि कलिंगनरेश, लक्ष्मणसेन को हर प्रतिपदा को स्त्रीदान के रूप में कर दिया करता था जब वह तरुण था (एपि० इं०, XXVI, भाग I, पृ० 11, पा० टि०, 4)। कलिंग-राज्य में समुद्रतट पर स्थित पिथुदुक, पिथुडग या पिथुण्ड था जो लांगुलिया नदी के समीप स्थित था। कलिंग के प्रथम शिलालेख से ज्ञात होता है कि कलिंग एक कुमार के अधीन था, जिसका मुख्यावास तोसली (तोसल) या समाप था (लाहा, ज्यॉग्रेफी ऑव अर्ली बुद्धिज्म, पृ० 64 पा० टि०)। हाथीगुम्फाअभिलेख के अनुसार राजा खारवेल अंग-मगध में

जिनका सिंहासन अपने राज्य में वापस लाया था[1], उसने बराबर पहाड़ियों में, जिसे गोरथगिरि कहा जाता था, मागधी सेना का एक दुर्ग ध्वस्त किया था और मगध की प्राचीन राजधानी राजगृह के नागरिकों पर भारी दबाव डाल कर विवश किया था। उसने मगध-नरेश बहसतिमित को अपनी सत्ता मानने के लिए विवश किया था। खारवेल ने झंझावत से बुरी तरह ध्वस्त कलिंग नगर की इमारतों, दीवालों और फाटकों का जीर्णोद्धार, इसिताल सरोवर के बाँधों को ऊँचा, और विनष्ट उद्यानों का पुनरुद्धार कराया था। हाथीगुम्फा-अभिलेख के अनुसार राजा खारवेल ने अपने शासन-काल के चतुर्थ वर्ष में भोजकों और राठिकों (जो अशोक के अभिलेख में वर्णित भोज एवं राष्ट्रिक हैं) को पराजित किया था और उन्हें अपनी राजनिष्ठा के प्रति शपथ लेने के लिए विवश किया था। उसके निजी अभिलेखमें राजा खारवेल को 'कलिंगाधिपति' और उसकी अग्र-महिषी के अभिलेख में उसे 'कलिंग चक्कवत्ती' बतलाया गया है। हाथीगुम्फा-अभिलेख से यह स्पष्ट ज्ञात होता है कि खारवेल के राज्यकाल में कलिंगनगर कलिंग की राजधानी थी। इसे संतोषप्रद ढंग से गंजम जिले में वंशधरा के तट पर स्थित मुखलिंगम और उसके समीपस्थ अवशेषों से समीकृत किया गया है। खारवेल के समय में खिबीर वास्तव में कलिंग की राजधानी थी। यह नगर निकटवर्ती एक नदी से एक नहर के माध्यम से मिला हुआ था, जिसे नंद नामक किसी राजा ने तीन सौ वर्ष पूर्व खुदवाया था। इस नहर को इस राजधानी के केंद्रीय भाग तक तनसुलिय सड़क से आगे बढ़ा कर लाया गया था। नये राजप्रासाद की स्थिति से ऐसा आभासित होता है कि यह राजधानी प्राची नामक किसी सरिता के तट पर स्थित थी, जो पुरी जिले के उत्तरी भाग में प्रवाहित होती थी, जिसके दोनों तटों पर अब भी अनेक भग्न मंदिर दृष्टि-गोचर होते हैं। प्राची नदी लिंगराजमंदिर से पाँच छह मील की दूरी पर पूर्व से दक्षिण की ओर बहती है (जर्नल ऑव द इंडियन सोसायटी ऑव ओरियंटल आर्ट भाग, XV, पृ० 52 में प्रकाशित, बे० मा० बरुआ का लेख, खारवेल ऐज़ किंग ऐंड बिल्डर')।

प्राचीन कलिंग देश के अंतर्गत आधुनिक उड़ीसा में वैतरणी के दक्षिण में स्थित, और विजगापट्टम तक के समुद्रतटीय क्षेत्र संमिलित प्रतीत होते हैं (तु० महाभारत, III, 114-4)। इसमें अमरकंटक पर्वतमाला भी संमिलित थी, जिसे इसका पश्चिमी भाग बतलाया जाता है (महाभारत, वनपर्व) XIV, 10096-10107; कूर्मपुराण, II, XXXIX, 19 ; कनिंघम, एं० ज्यॉ० इं०,

---

[1] बरुआ, ओल्ड ब्राह्मी इंस्क्रिप्शंस, पृ० 272-273.

पृ० 734-35; अधिक विवरण के लिए द्रष्टव्य, लाहा कृत ज्यॉग्रेफी ऑव अर्ली बुद्धिज्म, पृ० 63-64)। मत्स्यपुराण में जलेश्वर का उल्लेख है, जो कलिंग की अमरकण्टक पहाड़ी पर स्थित एक तीर्थ है (186, 15-38; 187, 3-52)। भागवतपुराण में इसका और इसके निवासियों का उल्लेख है (IX. 23. 5; X. 61, 29, 37) और बृहत्संहिता में इसका भी वर्णन है (XIV, 8)। कलिंगदेश गोदावरी और महानदियों के बीच में स्थित है (हुल्ट्श, सा० इं० इं०, I, पृ० 63, 65, 95, आदि)। कलिंग की राजधानी दंतपुरनगर थी (एपि० इं०, XIV)। गंजम जिले में कलिंग की अन्य अनेक राजधानियाँ स्थित थीं (एपि० इं०, IV. 187)। महाशिवगुप्तययाति के सोनपुर दानपत्र में गौडदेशीय लक्ष्मणसेन द्वारा शासित कलिंग, कंगोद उत्कल और कोशल का उल्लेख है। कलिंग स्वयं एक भौगोलिक इकाई थी और प्राचीन काल से ही इसके पृथक् शासक होते थे। सुदाव से उपलब्ध दो पूर्वी गंग दान-ताम्रपत्रों में (एपि० इं०, XXVI, भाग, II, पृ० 63) भी कलिंगनगर का उल्लेख है जिसे विभिन्न रूप से आधुनिक कलिंगापतम या मुख-लिंगम में स्थित बतलाया गया है। इस ताम्रपत्र के अनुसार कामरूप प्राचीन कलिंग में स्थित था।

सातवीं शती ई० के ऐहोल अभिलेखों में पुलकेशिन् द्वितीय ने कलिंगों को पराजित करने का दावा किया है और उसने पिष्टपुर के दुर्ग पर अधिकार कर लिया था (एपि० इं०, VI. पृ० 4 और आगे)। एक नेपाली अभिलेख में हर्षदेव या श्रीहर्ष को कलिंग, ओड्र, गौड और अन्य देशों का राजा बतलाया गया है (ज० रा० ए० सो०, 1898, पृ० 384-85; इं० हि० क्वा०, 1927, पृ० 841)। कलिंग का उल्लेख अन्यत्र सुप्रसिद्ध लक्ष्मीकर्ण के पौत्र कल्चुरिवंशीय गया-कर्ण की रानी अल्हणदेवी के भेड़ाघाट अभिलेख में प्राप्त होता है। इससे हमें यह ज्ञात होता है कि लक्ष्मीकर्ण जब अपने वीरत्व का प्रदर्शन कर रहा था, वंग, कलिंग के साथ काँपता था (एपि० इं०, II, पृ० 11)।

कलिंग के प्राचीन गंगों में अधिकांश यथा, हस्तिवर्मन (एपि० इं०, XXIII, 65), इन्द्रवर्मन (एपि० इं०, XXV, 195), देवेन्द्रवर्मन (एपि० इं०, XXVI, 63) जो अपने को कलिंगेश्वर कहते हैं, ने कलिंग नगर के अपने जयस्कंधावार से अपने दानपत्र प्रचलित किये थे (एपि० इं०, XXVI, 67)। कलिंग के प्राचीन गंगनरेशों यथा जयवर्मदेव और इन्द्रवर्मन के अभिपत्रों में श्वेतक के विजयआवास का उल्लेख है (एपि० इं०, XXIII, 261; XXIV, 181; XXVI. 167) जिसे गंजम जिले में चिकटि से समीकृत किया गया है। भिन्न-भिन्न तिथियों में

लिखित विभिन्न अभिलेखों में वर्णित कलिंग देश के प्राचीन जिलों की सूची के लिए, द्रष्टव्य, इंडियन कल्चर, XIV, पृ० 137.

पाँचवीं शती ई० का सुविख्यात कोमार्टी दानपत्र चन्द्रवर्मन नामक एक श्री महाराज को प्रस्तुत करता है जिसे कलिंगाधिपति कहा गया है (सीवेल, हिस्टॉरिकल इंस्क्रिप्शंस ऑव सदर्न इंडिया, पृ० 18)। कलिंग-नरेश उमावर्मन और विशाखवर्मन् संभवतः इसी वंश के थे। प्रायः कोमार्टी दानपत्र की तिथि के लगभग ही माठरवंशीय किसी कलिंगाधिपति वाशिष्ठीपुत्र शक्तिवर्मन का अभिलेख है, जिसने पिष्ठपुर (पिठपुरम) से कलिंगविषय में स्थित राकलुव नामक गाँव का दान दिया था (एपि० इं०, XII, पृ० 1 और आगे)। पूर्वी चालुक्य नरेश भीम प्रथम के एक दान-ताम्रपत्र में एलमञ्चि कलिंगदेश में स्थित एक गाँव का वर्णन है जो देवराष्ट्र नामक प्रांत का एक भाग था। रत्नदेव तृतीय के खरोद अभिलेख के अनुसार कोकल्ल का कनिष्ठ पुत्र कलिंग का अधिपति था (एपि० इं०, XXI, पृ० 159)। कुछ विद्वानों के अनुसार कलिंगराज न केवल कोकल्ल का उत्तराधिकारी ही था, वरन् उसे उसका पुत्र भी माना जाने लगा था। खरोद अभिलेख में आगे बतलाया गया है कि कलिंगराज तुम्माण का राजा हो गया था, जिसे कुछ लोगों ने बिलासपुर जिले में तुमान से समीकृत किया है (इं० ऐं०, LIII, पृ० 267 और आगे)। अमोद अभिपत्रों के अनुसार कलिंगराज ने उत्कल-नरेश का मंथन किया था और गांगेयदेव के राजकोष को समृद्ध बनाया था (एपि० इं०, XIX, पृ० 75)। 1135 ई० में लिखित एक दक्षिण भारतीय अभिलेख के अनुसार कलिंग के एक गंग-नरेश को दुर्जय मण्ड द्वितीय ने पराजित किया था (एपि० इं०, VI, 276)। एलौरा अभिलेख के 23 वें श्लोक और इन्द्र तृतीय के बेगुम्रा अभिपत्रों के अनुसार काञ्ची, कोशल, मालवा, लाट, टंक आदि देशों के नरेशों के साथ ही कलिंग का राजा भी दंतिदुर्ग द्वारा पराजित हुआ था (एपि०ई०IX, 24 और आगे)।

गोविन्द तृतीय नर्मदा के तट तक आया था और उसने कलिंग तथा मालवा, कोशल, वेंगी, डाहल और ओड्रक आदि अन्य देशों पर विजय प्राप्त की थी (एपि० इं०, XXIII, भाग, VIII, पृ० 297, स्तंभ के मन्न अभिपत्र)। सातवीं शती ई० में युवान-च्वाङ् कलिंग आया था। उसके अनुसार इसकी परिधि 5000 ली थी। यहाँ नियमित रूप से खेती होती थी और प्रचुर फल-फूल उत्पन्न किये जाते थे। यहाँ पर विस्तृत वन थे। यहाँ की जनसंख्या घनी थी। यहाँ की जलवायु गरम थी। यहाँ के निवासी उग्र एवं प्रचंड, अधिकांशतः रूक्ष और असभ्य थे। यहाँ पर कुछ संघाराम एवं देवमंदिर थे (बील, बुद्धिस्ट रिकार्डस ऑव द वेस्टर्न वर्ल्ड, II, पृ० 209-10)।

महावस्तु (जिल्द, III, पृ० 361) के अनुसार दंतपुर कलिंग जनपद की राजधानी थी और बुद्ध के आविर्भाव के युगों पहले से ही स्थित थी। (जातक, II, पृ० 367)। संभवत: दंतपुर में ही कृष्ण ने कलिंगों का विनाश किया था महाभारत, उद्योगपर्व, XLVII, 1883)। प्लिनी द्वारा वर्णित कलिंगो (Calingoe) की राजधानी दंदगुल या दंदगुड थी जिससे प्रकट होता है कि उसका मौलिक स्वरूप दंतकुर था न कि दंतपुर (कनिंघम, एं० ज्यॉ० इं०, पृ० 735)। कौटिलीय अर्थशास्त्र (पृ० 50) के अनुसार कलिंग एवं अंग के हाथी श्रेष्ठ होते थे। दशकुमारचरितम् के अनुसार मंत्रगुप्त कलिंग आया था। इस नगर से थोड़ी दूर पर वह किसी श्मशान के निकटवर्ती एक घने जंगल में किसी पहाड़ी के ढाल पर बैठा था। कलिंग-नरेश की पुत्री कनकलेखा वहाँ पर बुलवायी गयी थी (पृ० 167-68)। आंध्र की राजधानी से एक ब्राह्मण ने आकर कलिंग-नरेश कनकलेखा के पिता, कर्दन के विषय में एक कहानी बतलायी थी (वही, पृ० 172)। कालिदास ने कलिंग के राजा को 'महेन्द्राधिपति' कहा है (रघुवंश, IV, 43; VI, 54)। उनके अनुसार कलिंग गोदावरी तक फैला हुआ था। विस्तृत विवरण के लिए द्रष्टव्य, एस० के० आयंगर कृत ऐंश्येंट इंडिया ऐंड साउथ इंडियन हिस्ट्री ऐंड कल्चर, जिल्द, I, (1941), अध्याय, XIII, पृ० 396 और आगे।

कलिंगपट्टनम—गोदावरी के मुहाने पर स्थित यह एक समृद्धिशाली बंदरगाह था।

कलिंगारण्य—मिलिन्दपञ्हो (पृ० 130) में वर्णित यह जंगल दक्षिण-पश्चिम में गोदावरी नदी और उत्तर पश्चिम में इन्द्रावती नदी की गावलिया शाखा के बीच में स्थित था (कनिंघम, एं० ज्यॉ० इं०, पृ० 591)। रैप्सन के अनुसार यह महानदी और गोदावरी के बीच में स्थित था (ऐंश्येंट इंडिया, पृ० 116)।

कल्लुरु—यह प्राचीन गाँव गुंटुर जिले के रेपल्ली तालुक में स्थित है (इं० ऐं०, XII, 248)।

कलपट्टि—यह पालघाट में है जहाँ पर एक शिलालेख प्राप्त हुआ था (एपि० इं०, XV, 145 और आगे)।

कलुबरिगा—यह मैसूर राज्य में स्थित आधुनिक गुलबर्गा है (एपि० इं०, XIII, 157)।

कलुचेरुवुलु—यह एक गाँव का नाम है (सा० इं० इं०, I, पृ० 43)।

कल्याण—इस नगर की स्थापना चोड्-नरेश कामराज ने की थी जो 'आंध्र-देश के मुकुट-मणि' कामपुरी नाम से विख्यात हुयी (एपि० इं०, XXVI, भाग, 1)।

कमकपल्ली—यह करवन्नाडग विषय के गिरिगड नामक गाँव में स्थित है (एपि० इं०, XVI, 270)।

कमलपादव—यह एक गाँव का नाम है (सा० इं० इं०, I, पृ० 83)।

कमलापुरम—यह कुड्डापा जिले में स्थित है जहाँ से इन्द्र तृतीय का एक अभिलेख प्राप्त हुआ था।

कम्पिलि—यह आधुनिक कंप्ली है जो बेलारी जिले के होसपेट तालुक में तुंगभद्रा के दक्षिणी तट पर स्थित है (सा० इं० इं०, जिल्द, III, पृ० 194; मद्रास गज़ेटियर्स, बेलारी, ले० डब्ल्यू० फ़ांसिस, पृ० 282 और आगे)। दंतिवर्मन् के दानपत्र में काम्पैल्य में स्थित एक बौद्ध विहार के लिए एक गाँव के दान का आलेख है (एपि० इं०, VI, 287)। समुचित साक्ष्यों के अभाव में इस काम्पैल्य को दक्षिण पञ्चाल की राजधानी काम्पिल्य से समीकृत करना सुरक्षित नहीं होगा।

कनड (या कन्नड)—यह कर्णाट देश है (सा० इं० इं०, जिल्द, II, पृ० 117-311) जो रामनाड एवं सेरिंगपटम के बीच कर्नाटक का एक भाग है। इसे कुंतलदेश भी कहा जाता है। मैसूर राज्य को भी कर्णाटक कहा जाता था, (ज० रा० ए० सो०, 1912, पृ० 482)। विजयनगर राज्य को भी कर्णाट कहा जाता था (इंपीरियल गज़ेटियर्स ऑव इंडिया, जिल्द, IV)।

कनकवल्ली—यह पंगलनाडु से संबंधित एक गाँव है (सा० इं० इं०, I, पृ० 78, 79) जो जयकोण्डचोलमण्डलम में पडुवुर–कोट्टम का एक मंडल है।

कण्डरादितयम—त्रिचनापल्ली जिले में कावेरी नदी के उत्तरी तट पर स्थित यह एक गाँव का नाम है (वही, I, पृ० 112)। अभिलेखों में इसी नाम के एक प्रमुख का नाम आता है।

कण्डेरुवाडि—यह कन्डेरुवाटिविषय ज़िला है (वही, I, पृ० 38, 44)।

चालुक्य-नरेश भीम द्वितीय ने यहाँ के निवासियों के लिए एक राज्याज्ञा जारी की थी (द्रष्टव्य, रंगाचारी की सूची में कित्स्ना जिले के अंतर्गत, संख्या, 98)। कण्डेरुवाटिविषय तीन या चार छोटे जिलों में विभक्त प्रतीत होता है। प्रत्यक्षत: इसमें संपूर्ण गुण्टुर तालुक, सत्तेनपल्ली का पूर्वी भाग और तेनाली तालुक के उत्तरी भाग संमिलित थे। सत्तेनपल्ली तालुक के दक्षिणी-पूर्वी भाग सहित गुण्टुर के केंद्रीय भाग को उत्तरकण्डेरुवाटिविषय (एपि० इं० XXIII, भाग, V) कहा जाता था।

कण्णमंगलम—यह एक गाँव का नाम है, जो आर्णी और वेल्लोर के बीचोंबीच आर्णी जागीर में स्थित था (सा० इं० इं०, I, पृ० 83)।

कण्णि—यह किसी नदी का नाम है जो प्राचीन काल में कन्या कुमारी के समीप प्रवाहित होती थी (कोप्परुंजिंगदेव का वैलूर अभिलेख, एपि० इं०, XXIII, भाग, V, पृ० 180)।

कंतेरु—सालंकायन विजयस्कन्दवर्मन के कंतेरु अभिपत्रों में गण्टुर जिले के गण्टुर तालुक में स्थित इस गाँव का उल्लेख है (एपि० इं०, XXV, भाग, I, जनवरी, 1939, पृ० 42)। कुछ विद्वानों के अनुसार यह गुण्टुर से कुछ मील दूर पूर्वोत्तर में बेजवाड़ा जाने वाली मुख्य सड़क पर स्थित है (एपि० इं०, XVIII, पृ० 56)।

कन्या—यह कन्या कुमारी ही है जो केप कामोरिन की तमिल संज्ञा है। (सा० इं० इं०, जिल्द, III, पृ० 22, पा० टि०)। इसे गङ्गैकोण्डचोलपुरम भी कहा जाता है। यहाँ पर कुलोत्तुंगचोल प्रथम का एक अभिलेख प्राप्त हुआ था (एपि० इं०, XXVI, भाग, VI, अप्रैल, 1942, पृ० 274 और आगे)। यह एक सुप्रसिद्ध अति प्राचीन स्थान है। यूनानी लेखक इसे कुमारिया अक्रोन या केप कोमारिया कहते थे। कन्याकुमारी देवी का मंदिर हिंदमहासागर के बिल्कुल तीर पर स्थित है। यहाँ पर वीर राजेन्द्रदेव का एक अभिलेख प्राप्त हुआ था (एपि० इं०, XVIII, पृ० 21)।

करैवारि-आण्डि-नाडु—यह एक जिले का नाम है (सा० इ० ई०, I, पृ० 77, 78, 129)।

करमदाई—यह कस्बा कोयंबटूर से लगभग 17 मील दूर मेत्तुपलयम और कोयंबटूर के बीच रेलवे लाइन पर स्थित है। यहाँ पर श्रीरंगनाथ पेरुमल का मंदिर स्थित है।

करणिपावकम—इसे कलनिपाकम भी कहा जाता है। यह एक गाँव है, जो उत्तरी अर्काट जिले के वेल्लोर तालुक में विरिञ्चिपुरम के समीप स्थित है (सा० इं० इं०, I, 136)।

करञ्जाडु—इस गाँव को कोमण्ड या करडा से समीकृत किया जा सकता है जो कोमण्ड से लगभग 16 मील दूर पर स्थित है (एपि० इं०, XXIV; भाग, IV, पृ० 173)।

करवण्डपुरम—यह वही गाँव है, जिसे आजकल तिन्नेवली तालुक के कलक्कुडि-नाडु में स्थित उक्किरंक्कोट्टई कहा जाता है। आदि पाण्ड्य-नरेशों के काल में इसका अत्यधिक सामरिक महत्त्व था। यहाँ अब भी एक किले एवं परिखा के अवशेष दृष्टिगत होते हैं जो इसकी प्राचीन गरिमा के साक्ष्य हैं। यहाँ पर अरिकेशरीश्वरम् और राजसिंगीश्वरम् नामक दो शिव-मंदिर हैं, जो अरिकेशरी एवं

राजसिंह नामक पाण्ड्य राजाओं के नाम पर बसे हुये गाँव के समीप स्थित हैं (एपि० इं० ,XXIII, भाग, VII, पृ० 284)।

करकाट्टूर—इसे चित्तूर जिले में पलमानेर के समीप कलकट्टर से समीकृत किया जा सकता है (एपि० इं०, XXII, पृ० 113)।

करकुडि—यह कावेरी नदी के दक्षिणी तट पर नंदिपन्मंगलम में स्थित उय्यक्कोण्डन तिरुमलाई का प्राचीन नाम है (सा० इं० इं०, III, पृ० 231)। यह पांडकुलसंबलनाडु में राजाश्रयचतुर्वेदिमंगलम में स्थित है (द्रष्टव्य, रंगाचारी की तालिका, 1952)।

कर्णाट-देश—इस देश का विशिष्ट उल्लेख तमिल अभिजात ग्रंथों (Classics) में हुआ है (सा० इं० इं०, I, पृ० 69-70; 82, 130, 160, 164)। इसका वर्णन भागवतपुराण (V. 6, 7) में भी हुआ है। इसे एक विशाल देश बतलाया गया हैं। यहाँ पर कन्नड भाषा-भाषी लोग रहते हैं। कर्णाट के राजा नाममात्र के लिए विजयनगर के राजाओं के अधीन थे।

कर्णिक—यह कावेरी की एक शाखा है। यह श्रीरंगम के परितः प्रवाहित होने वाली कोलेरून नदी है (पद्मपुराण, अध्याय, 62)।

करूर या करुवुर—यह कोयंबटूर जिले में स्थित एक गाँव है (सा० इं० इं०, पृ० 126, पा० टि० 1)। इसे वञ्जि भी कहा जाता है, जो चेर-राज्य की प्राचीन राजधानी थी। टॉलेमी ने इसे करुर कहा है जो केरल के युवराज की राजधानी थी (बर्नेल, साउथ इंडियन पैलियोग्रेफी, द्वितीय संस्करण, पृ० 33, पा० टि० 2; जेड० डी० एम० जी०, भाग, XXXVII, पृ० 99, हुल्टश, सा० इं० इं०, I, पृ० 106, पा० टि० 2)। यह आधुनिक त्रिचि जिले में स्थित एक कस्बा है जिसका वर्णन विशिष्ट रूप से तमिल ग्रंथों में किया गया है। टॉलेमी के अनुसार करौरा, केरोबोथ्रोस या केरलपुत्रों की राजधानी थी। करूर का शाब्दिक अर्थ 'काला शहर' है (मैक्रिंडिल, ऐंश्येंट इंडिया ऐज़ डिस्क्राइब्ड बाई टॉलेमी, एस० एन० मजूमदार संस्करण, पृ० 182)।

करुवूर—यह कोयंबटूर जिले में स्थित एक गाँव का नाम है। इसी जिले में स्थित यह एक कस्बे का भी नाम है (सा० इं० इं०, II पृ० 250, 260, 288, 305; जिल्द, III, पृ० 31)।

कौराल—कुछ लोगों ने इसे कोलैर झील से, दूसरों ने उसे उड़ीसा के (पहले के सेंट्रल प्राविंस के)सोनपुर जिले से और कुछ ने उसे दक्षिण भाग में स्थित कोराड से समीकृत किया है।

कालहस्ति—सुवर्णमुखरी नदी के तट पर स्थित यह एक तीर्थ-स्थल है, जो उत्तर-अर्काट जिले में है (एपि० इं०, I, पृ० 368)।

कालिभना—राजा महाभवगुप्त प्रथम जनमेजय के कालिभना ताम्रपत्र अभिलेख में (इं० हि० क्वा०, XX, सं० 3) इस गाँव का वर्णन है, जो संभलपुर जिले के पटना (भू० पू० रियासत) के मुख्यावास बोलंगिर से लगभग 9 मील दूर पूर्वोत्तर में स्थित है।

कालिदुर्ग—यह आधुनिक कालिकट शहर है (सा० इं० इं०, I, पृ० 364-72)। इसका तमिल रूप कल्लिकोट्टाई है।

कालियूरकोट्टम—यह एक जिले का नाम है (सा० इं० इं०, I, पृ० 116, 117, आदि)। इसकी तहसील एरिकलनाडु थी, (द्रष्टव्य, रंगाचारी की तालिका का 263वाँ अभिलेख)।

कामपुरी—इसे कल्याण भी कहा जाता है, जो आंध्रदेश का मुकुटमणि है (एपि० इं०, XXVI, भाग, I, जनवरी, 1941)। इस नगर की स्थापना आंध्रदेश में चोड़-नरेश अन्नदेव ने की थी जो शायद उसके राज्य की राजधानी बनी (वही, XXVI, भाग, I)।

काम्करपर्ति (काम्करपर्ति)—यह गौतमी नदी के तट पर स्थित है (जो गोदावरी का ही एक अन्य नाम है)। इसे गोदावरी के पश्चिमीतट पर स्थित काकरपरुं नामक आधुनिक गाँव से समीकृत किया जा सकता है। आजकल यह पश्चिमी गोदावरी जिले के तनुकु तालुक में स्थित है (एपि० इं०, XXVI, भाग, I, जनवरी, 1941)।

काण-नाडु—इसे पाण्डिमण्डलम का एक भाग बतलाया जाता है। पुडुकोट्टई (राज्य) के दक्षिणतम हिस्से—तिरुमेय्यम तालुक के पश्चिमी भाग में काण-नाडु का प्राचीन जिला स्थित था। यह केरलसिंगवलनाडु के बिल्कुल समीप था (एपि० इं० ,XXV, भाग II, अप्रैल, 1939)।

कानप्पेर—पाण्ड्य देश में स्थित यह एक गाँव का नाम है (सा० इं० इं०, जिल्द, II, पृ० 149)। यह अपने मंदिर के लिए विख्यात् है।

काञ्चीपुर—(काञ्ची या काञ्चीपुर)—कांजीवरम् के अंतर्गत् देखिये। अत्यंत प्राचीन काल से ही यह एक महत्त्वपूर्ण तीर्थस्थान था। भागवतपुराण (X. 79. 14) में इसका उल्लेख एक नगर के रूप में हुआ है। पतञ्जलि ने अपने महाभाष्य (II. पृ० 298) में इसका वर्णन किया है। स्कन्दपुराण (अध्याय, I, 19-23) में अन्य पुण्यस्थलों के साथ ही इसका भी वर्णन हुआ है। योगिनीतंत्र (1, 17) में भी इसका वर्णन है। द्रविड देश में काञ्ची नामक एक नगर था,

जहाँ किसी धनी व्यापारी का शक्तिकुमार नामक पुत्र रहता था जो एक गुणवती पत्नी पाने के लिए उत्कंठित था। इस उद्देश्य से वह कावेरी नदी के दाहिने तट पर स्थित सिरि देश में गया (दशकुमारचरितम्, पृ० 153)। शिवस्कन्दवर्मन के मयिदवोलु ताम्रपत्र में काञ्चीपुर का वर्णन है (तु०, एपि० इं०, XXV, भाग, VII, पृ० 318)। ऐहोल अभिलेख में वर्णित काञ्चीपुर पर पुलकेशिन् ने विजय प्राप्त की थी। शान्तिवर्मन के तालगुण्ड-अभिलेख में भी काञ्ची का वर्णन है। इसे काञ्चीपेडु कहा जाता है। यह कांजीवरम है जो मद्रास के दक्षिण-पश्चिम में 43 मील दूर पलार नदी के तट पर द्रविड या चोल देश की राजधानी है (तु० महाभारत, भीष्मपर्व, अध्याय, IX)। शिवकाञ्ची एवं विष्णुकाञ्ची इस नगर के पश्चिमी और पूर्वी भाग हैं। यहाँ पर एक जैन काञ्ची भी है, जिसे तिरुप्परुत्ति-कुनरम कहा जाता है। कांजीवरम के सभी मंदिरों में कामाक्षी-मंदिर सबसे महत्त्व-पूर्ण है। इस मंदिर की एक अनोखी विशेषता यह है कि देवता के सामने एक चक्र स्थित है। बताया जाता है कि इस शहर की स्थापना कुलोत्तुंग चोल ने कुरुंभरभूमि नामक एक जंगल में की थी, जिसे बाद में तोण्डमण्डल कहा जाने लगा था। यह प्राचीन चोलों एवं उत्तरकालीन पल्लवों की राजधानी में से एक थी (द्रष्टव्य, एम० के० आयंगर, ऐंश्येंट इंडिया ऐंड साउथ इंडियन हिस्ट्री ऐंड कल्चर, जिल्द, I, 1941, पृ० 520 और आगे)। यह बौद्ध शिक्षा का एक उल्लेखनीय केंद्र था। भूगोलवेत्ता टॉलेमी ने बस्सरोनग द्वारा प्रशासित मलंग राज्य का उल्लेख किया है, जो कुछ विद्वानों के अनुसार काञ्ची ही थी (मैक्रिंडिल, ऐंश्येंट इंडिया ऐज़ डिस्क्राइब्ड बाई टॉलेमी, पृ० 185-186)। टॉलेमी के अनुसार मलंग अरौरनोइ (अरवरनोइ) की राजधानी थी (टॉलेमी, ऐंश्यट इंडिया ऐज़ डिस्क्राइब्ड बाई टॉलेमी, पृ० 185)। काञ्चीपुर में कैलाशनाथ स्वामिन का मंदिर है जो छठीं शती ई० के स्थापत्य की पल्लवशैली में बना है। यहाँ पर राजसिंहवर्मेश्वर नामक एक अन्य मंदिर भी है। इसके अतिरिक्त यहाँ पर अगणित छोटे शैव एवं विष्णु मंदिर हैं (हुल्ट्श, साउथ इंडियन इंस्क्रिप्शंस, I, पृ० 1, 2, 3, 19, 29, 77, 113, 116, 118, 120, 123, 125, 139, 140, 141, 145, 146, 147)।

काञ्ची पर राष्ट्रकूट नरेश गोविन्द और उसके पिता ने आक्रमण किया था। जैसे ही गोविन्द ने इस पर आक्रमण किया, तत्कालीन काञ्ची-नरेश, 803 ई० के पहले ही पराजित हो चुका था, जैसा कि हमें ब्रिटिश म्यूजियम में संग्रहीत गोविन्द तृतीय के अभिपत्रों से ज्ञात होता है (द्र० इं० ऐं०, XI, 126)। कृष्ण के शासन-काल के पाँचवें वर्ष में लिखित दक्षिणी अर्काट जिले से प्राप्त प्राचीन सिद्धलिंग-

मादम अभिलेख में काञ्ची और तंजई या तंजौर की विजय का उल्लेख है (मद्रास एपिग्रेफिकल कलेक्शंस फॉर 1909, नं०, 375)। उत्तरी अर्काट जिले में स्थित उक्कलविष्णु-मंदिर से प्राप्त एक अभिलेख में राजा कन्नरदेववल्लभ को काञ्ची और तंजौर का विजेता बतलाया गया है (एपि० इं०, IV, 82)।

काण्डलुर—यह एक गाँव का नाम है। इसे चिदंबरम से समीकृत किया जा सकता है ('साउथ इंडियन इंस्क्रिप्शंस, I, पृ० 63-65, 95, 140)। बतलाया जाता है राजराज प्रथम ने यहाँ जहाजों का विनाश किया था।

काप—यह गाँव मैसूर राज्य में दक्षिण कनाड़ा (मंगलोर) में है। यहाँ से एक ताम्रपत्र प्राप्त हुआ था (एपि० इं०, XX. पृ० 80)।

कारैक्काल (करिकल)—यह एक बंदरगाह है। यह तंजौर जिले में एक फ्रांसीसी सन्निवेश था (हुल्ट्श, सा० इं० इं०, जिल्द, II, पृ० 295)।

कारुवग्राम—यह या तो कोरेगाँव या कर्वे है जो कृष्णा नदी के दाहिने तट पर कराड से क्रमशः लगभग छह या चार मील दूर पर स्थित है (एपि० इं०, XXVI, भाग, VII, पृ० 323)।

काट्टुप्पाडि—यह मद्रास राज्य के वेल्लोर स्टेशन के निकट स्थित एक गाँव है (एपि० इं०, I, पृ० 129, पा० टि० 3)।

काटट्टुंबूर—यह एक गाँव की संज्ञा है। यह पडवूरकोट्टम के एक भाग पांगलनाडु में स्थित था। (एपि० इं०, I, पृ० 78-79)। वस्तुतः यह उत्तरी अर्काट जिले के वेल्लोर तालुक में स्थित है।

कावनूर (कावन्नूर)—यह उत्तरी अर्काट जिले के गुडयात्तम तालुक में स्थित एक गाँव है (एपि० इं०, I, पृ० 133; एपि० इं०, XXIII, भाग, IV, अक्टूबर 1935, पृ० 147)। यह चिंगलपुत जिले के सैदपेत तालुक में स्थित है।

कावेरी (या काविरी)—यह एक नदी का नाम है, जो कुर्ग के दर्रों से निकल कर कोयंबटूर, त्रिचिनापल्ली जिलों से होकर बहती हुयी बंगाल की खाड़ी में गिरती है। यह पल्लवों की प्रिय कही जाती है। इसका यह आशय है कि किसी पल्लव-नरेश ने कावेरी के तटवर्ती प्रदेशों पर शासन किया था (सा० इं० इं०, I, पृ० 29)। इस नदी का वर्णन रामायण (किष्किन्ध्याकाण्ड, XLI, 21, 25; तु० हरिवंश, XXVII. 1416-22—तु० महाभारत, भीष्मपर्व, IX 328; वनपर्व, LXXXV. 8164-5 आदि) और योगिनीतंत्र (2, 6, पृ० 178) में है। कालिकापुराण (अध्याय, 24, 130, 135) के अनुसार इस नदी का उद्गमस्थल महाकाल झील है। दण्डिन् के काव्यादर्श में कावेरी के तटवर्ती देशों का उल्लेख है (III, 166)। पुराणों एवं महाकाव्यों के तीर्थयात्रा खंडों में इस नदी को अतिशय पवित्र बतलाया

गया है। यह टॉलेमी द्वारा वर्णित खैबेरोज़ (Khaberos) है जिसका उद्गम-स्थल आदेईसाथ्रोन पर्वतमाला है, जिसे सह्य के दक्षिणी भाग से समीकृत किया जा सकता है। भागवतपुराण में इस नदी का उल्लेख है (V. 19, 18; VII, 13, 12; X. 79, 14; XI. 5. 40, तु० पद्मपुराण, उत्तरखण्ड, श्लोक 35-38)। इसका वर्णन बृहत्संहिता (XIV. 13) और कालिदासकृत रघुवंश (IV. 45) में भी है। दक्षिण भारतीय अभिलेखों में कावेरी चोलों के नाम से संबद्ध है। हर ने गुणभद्र से यह प्रश्न किया था, "मैं पृथ्वी पर स्थित एक मंदिर में खड़े होकर कैसे चोलों की महान् शक्ति या कावेरी नदी का अवलोकन कर सकता हूँ ?" (हुल्ट्श, सा० इं० इं०, I, 34)। चालुक्य-नरेश पुलकेशिन् द्वितीय ने चोल देश में प्रवेश करने के लिए अपनी विजय-वाहिनी के साथ इस नदी को पार किया था, जबकि इस नदी का प्रवाह उसके हाथियों द्वारा निर्मित एक सेतु के माध्यम से अवरुद्ध हो गया था। कावेरी नदी की गरिमा प्राचीन तमिल काव्य की अक्षय विषय-वस्तु है। मणि-मेखलाई (I. 9-12; 23-4) के अनुसार इस गौरव-शालिनी सरिता को महर्षि अगस्त्य ने राजा कान्त की प्रार्थना पर और सूर्य के पुत्रों की परम-पद प्राप्ति के लिए अपने कुंभ से निर्युक्त किया था। यह चोल प्रजाति की विशिष्ट निशान थी और इसने अति दीर्घकालीन अनावृष्टि के काल में में भी उन्हें असहाय नहीं किया। कावेरी नदी की वार्षिक बाढ़ों के अवसर पर एक समारोह होता था जिसमें राजा से लेकर रंक तक सारा राष्ट्र भाग लेता था। यह दक्षिण भारत की एक प्रसिद्ध नदी है, जो पश्चिमी घाट से निकल कर मैसूर से होकर दक्षिण-पूर्व की ओर बहती हुयी मद्रास राज्य के तंजौर जिले में बंगाल की खाड़ी में गिरती है। प्राचीन काल में मोती निकालने के लिए विश्रुत यह नदी प्राचीन चोल राज्य के दक्षिणी भाग से बहती हुयी समुद्र में गिरती थी। कावेरी के उत्तरी तट पर स्थित पुगार या कावेरीपट्टनम् प्रमुख चोल बंदरगाह था जब कि चोलों की प्राचीन राजधानी, उरगपुर इसके दाहिने तट पर स्थित थी। अधिक विवरण के लिए द्रष्टव्य बि० च० लाहा, रिवर्स ऑव इंडिया, पृ० 51.

काविरिप्पूंबट्टनम—कावेरी नदी के मुहाने पर स्थित यह कावेरीपट्टनम का पूरा तमिल नाम है (सा० इं० इं०, II. पृ० 287)। इसे अनिवार्यतः चोलों के प्राचीन बंदरगाह व राजधानी कावेरीपुंपट्टिनम होना चाहिए जो तमिल ग्रंथों के अनुसार प्रलय में बह गया था (वि० रा० रा० दीक्षितार कृत प्रिहिस्टॉरिक साउथ इंडिया, पृ० 31) भी द्रष्टव्य है।

केंद्रापारा—यह कटक जिले की केंद्रापारा तहसील का मुख्यावास है।

केरकेर––खिचिंग से लगभग 12 मील दूर दक्षिण-दक्षिण-पूर्व में आदिपुर परगने के धोशदापीर में स्थित इस गाँव का उल्लेख नरेन्द्रभंजदेव के आदिपुर ताम्रपत्र में हुआ है (एपि० इं०, XXV, भाग, IV, पृ० 158)।

केरल देश––केरल, तमिल शब्द चेरल् का कन्नड रूप है। पाणिनि ने इसका वर्णन अपनी अष्टाध्यायी (4, 1, 175) में किया है। भागवतपुराण में भी इसका उल्लेख है (X. 79, 19; X. 82. 13)। पुराने तौर पर इस देश को चेरलम या चेरल-नाडु कहा जाता था। चेरडम का अर्थ पर्वतमाला है। केरल-देश चेर ही है (सा० इं० इं०, I, पृ० 51, 59, 86, 90, 92, 94)। वि० स्मिथ के अनुसार साधारणतया केरल का अर्थ चन्द्रगिरि नदी के दक्षिण में स्थित पश्चिमी घाट के विषम क्षेत्रों से है (अर्ली हिस्ट्री ऑव इडिया, पृ० 466)। इसे राजेन्द्र चोल ने जीता था। यह वर्तमान मलाबार, कोचीन और त्रावणकोर है।

केरलपुत्र (पाठांतर-केतलपुतो)––यह दक्षिणभारत में स्थित केरल देश है। पतञ्जलि ने अपने महाभाष्य (IV. 1. चतुर्थ आह्मिक) में केरल (या मलाबार) का वर्णन किया है। केरलपुत्र कुपाक (या सत्य) के दक्षिण में स्थित था जो केंद्रीय त्रावणकोर (करुनगपल्ली तालुक) में कन्नटी तक फैला हुआ था। इसके दक्षिण में मूषिक नामक राजनीतिक प्रखंड स्थित था (ज० रा० ए० सो०, 1923, 413)। यह पेरियार नदी से सिंचित था, जिसके तट पर कोचीन के समीप इसकी राजधानी वञ्जि स्थित थी और इसके मुहाने पर मूचिरि नामक बंदरगाह था (कैं० हि० इं०, I, 595)। चेर या केरल देश में त्रावणकोर कोचीन और मलाबार जिले संमिलित थे। कोंगुदेश (जो कोयंबटूर जिले और सलेम जिले के दक्षिणी भाग को द्योतित करता है) भी इसमें संमिलित किया गया था। इसकी मूल राज-धानी वञ्जि थी, जो अब पेरियार नदी के तट पर कोचीन के समीप तिरु-करूर है, किंतु इसकी उत्तरकालीन राजधानी पेरियार नदी के मुहाने पर स्थित तिरुवञ्जि-क्कलम थी। इसमें पश्चिमी समुद्र-तट पर क्विलांदि के लगभग पाँच मील उत्तर में अगलप्पुलाई के तट पर तोण्डि, पेरियार के मुहाने पर स्थित मूचिरि और कोट्टयाम के समीप पलैय्यूर चौघाट तथा वैक्कारि नामक महत्त्वपूर्ण व्यापारिक केंद्र थे।

अपने दूसरे तथा तेरहवें शिलालेखों में अशोक ने केतलपुतों या केरलों का वर्णन किया है जो उसके साम्राज्य की सीमा पर रहने वाले जन थे, यद्यपि वे उसके राज्य के बाहर थे। बाद में, पेरिप्लस के समय में केरोबोथ्रा (जो कि केरलपुत्र हैं) दमिरिच में संमिलित था। तत्पश्चात् टॉलेमी के समय में कारूरों का राज्य केरोबोथ्रास (केरलपुत्र) द्वारा प्रशासित था।

केरल देश का वर्णन महाकाव्यों एवं पुराणों में किया गया है। महाभारत के अनुसार(सभापर्व, XXX. 1174-5; अध्याय, XXXI; तु० भीष्मपर्व, IX, 352, 365; रामायण, बंबई संस्करण, IV, अध्याय, 41)। केरल लोग एक जंगली कबीले थे। वायुपुराण (XLV. 124), मत्स्य (अध्याय, CXIII, 46) और मार्कण्डेयपुराणों (57-45), बिब्लियोथेका इंडिका सीरीज़) में चोलों पाण्डयों एवं केरलों का वर्णन दक्षिणापथ के निवासियों के अंतर्गत किया गया है।

सेनगुत्तवन चेर प्रथम उल्लेखनीय चेर राजा था। कुछ समय के लिए दक्षिण का आधिपत्य चेरों ने चोलों से छीन लिया था, परंतु शीघ्र ही यह आधिपत्य पाण्डयों को, और अंतिम रूप से पल्लवों को मिल गया था। विस्तृत विवरण के लिए द्रष्टव्य बि० च० लाहा, ट्राइब्स इन ऐंश्येंट इंडिया, पृ० 193-194; कैंब्रिज हिस्ट्री ऑव इंडिया, I, 595; बि० च० लाहा, इंडोलॉजिकल स्टडीज़, भाग, I, पृ० 58-59.

केरलसिंगवलनाडु—जटावर्मन कुलशेखर प्रथम के तिरुप्पुवनम अभिपत्रों में इसका उल्लेख है। यह पुडुकोट्टई रियासत के एक भाग रामनाड जिले के तिरुपट्टूर तालुक के एक बहुत बड़े हिस्से पर तथा शिवगंगा (जमींदारी) में भी फैला हुआ प्रतीत होता है (एपि० इं०, XXV, भाग, II, अप्रैल, 1939, पृ० 96)।

केशवपुरी—इसे आधुनिक केशपुरी से समीकृत किया जा सकता है (एपि० इं०, XXV, भाग, V, जनवरी, 1940)।

खडिपदा—बलसोर जिले की भद्रक नामक तहसील से लगभग 24 मील दूर दक्षिण-पूर्व की ओर और कटक जिले के एक महत्त्वपूर्ण शहर जैपुर से लगभग आठ मील पश्चिमोत्तर में स्थित यह एक छोटा सा गाँव है। यहाँ से शुभाकर के समय में लिखित एक प्रतिमा-लेख प्राप्त हुआ था (एपि० इं०, XXVI, भाग, VI, अप्रैल 1942, पृ० 247)।

खण्ड-दीप—बोधिसत्त्वावदान-कल्पलता में इस देश का वर्णन है। इसे कलिंग के राजा ने जला दिया था (आठवाँ पल्लव, पृ० 27)।

खण्डगिरि और उदयगिरि—हाथीगुम्फा-अभिलेख के लेखक खण्डगिरि एवं उदयगिरि नामक युगल पहाड़ियों से कुमार एवं कुमारी पहाड़ियों के रूप में परिचित थे। ये दोनों पहाड़ियाँ बालुकाश्म-शिला का एक कटिबंध निर्मित करती हैं जो उड़ीसा की स्फटिक (Granite) पहाड़ी के तल को परिवेष्टित करती हुयी औतंगर और देक्कुनाल से दक्षिणोन्मुखी दिशा में खुर्दा से गुजरती हुयी चिल्का झील तक फैली हुयी है (ज० ए० सो० बं०, ओल्ड सीरीज़, भाग, VI, पृ० 1079)।

खण्डगिरि पहाड़ी पुरी जिले में भुवनेश्वर से तीन मील दूर पश्चिमोत्तर में खुर्दा तहसील के उत्तर-पश्चिम में स्थित है। खण्डगिरि (टूटी या भग्न पहाड़ी) नाम उदयगिरि, नीलगिरि और खण्डगिरि नामक तीन शिखरों के लिए व्यवहृत होता है। खण्डगिरि का शिखर सबसे ऊँचा, 123 फीट, जब कि उदयगिरि का 110 फीट ही ऊँचा है। उदयगिरि के पाद में एक छोटा वैष्णव आश्रम है। इसमें चौवालीस, खण्डगिरि में उन्नीस और नीलगिरि में तीन गुफाएँ हैं। उदयगिरि में गुफाएँ उच्चतर और अवर, दो वर्गों में विभक्त हैं। खण्डगिरि में दो के अतिरिक्त सभी गुफाएँ पगडंडी में ही स्थित हैं। उदयगिरि की गुफाओं में राणीगुम्फा सबसे बड़ी है। अन्य उल्लेखनीय गुफाओं में गणेशगुम्फा, जय विजयगुम्फा, मंचपुरीगुम्फा, बाघगुम्फा और सर्पगुम्फा हैं। इनके अतिरिक्त हाथीगुम्फा एवं अनंतगुम्फा उल्लेखनीय हैं।

खण्डगिरि का शिखर इस प्रकार समतल कर दिया गया है जिससे पथरीले किनारों वाला एक चबूतरा बन गया है। इस चबूतरे के मध्य में एक जैन मंदिर है। मुख्य मंदिर में एक देवालय और एक द्वार मंडप है। सर जॉन मार्शल ने बतलाया है कि इन सभी गुफाओं में सर्व-प्राचीन हाथीगुम्फा कृत्रिम ढंग से तराश कर बढ़ायी गयी एक प्राकृतिक गुफा है। कालक्रम की दृष्टि से दूसरी गुफा मंचपुरी है, जो इस स्थान पर बनायी गयी सभी महत्त्वपूर्ण गुफाओं का आदि रूप थी। इसके पश्चात् फिर अनंतगुम्फा थी। इन सभी गुफाओं की तिथि पहली शताब्दी ईसा पूर्व के मध्य के बहुत पहले नहीं रखी जा सकती (कैंब्रिज हिस्ट्री ऑव इंडिया, जिल्द, I, पृ० 639-40)। तिथिक्रम में दूसरी गुफा राणीगुम्फा है (विस्तार के लिए द्रष्टव्य, एशियाटिक रिसर्चेज़, जिल्द, XV, (1824); फर्ग्युसन, इलस्ट्रेशंस ऑव द राक कट टेंपुल्स ऑव इंडिया (1845); रा० ला० मित्र, उड़ीसा, जिल्द, I, अध्याय, I; आर्क० स० इं०, जिल्द, XIII; फर्ग्युसन, हिस्ट्री ऑव इंडियन ऐंड ईस्टर्न आर्किटेक्चर (1876) ऐंड केव टेंपुल्स (1880); कैंब्रिज हिस्ट्री ऑव इंडिया, जिल्द, I, अध्याय, XXVI; बे० मा० बरुआ, ओल्ड ब्राह्मी इंस्क्रिप्शंस इन द उदयगिरि ऐंड खंडगिरि केव्स, 1929; बि० च० लाहा, ज्यॉग्रेफिकल एसेज़, अध्याय, X)।

खेद्रपुर—यह मिराज के दक्षिण-पश्चिम में स्थित है। यहाँ पर एक प्राचीन मंदिर है। यादव राजा सिंहनदेव द्वारा मरम्मत कराये जाने वाले कोप्पेश्वर मंदिर के पाद-पीठ को दो मूर्तियाँ अलंकृत करती हैं (ज० रा० ए० सो०, भाग, 3 एवं 4, 1950, पृ० 105 और आगे)।

कील-मुट्टुग्गूर—यह उत्तरी अर्काट जिले के गुडियात्तम तालुक में स्थित एक

गाँव है, जहाँ से तीन तमिल अभिलेख प्राप्त हुये थे (एपि० इं०, IV, 177 और आगे)।

कील-वेम्ब-नाडु—यह पाण्ड्य देश की एक तहसील है, जिसमें तिन्नेवली स्थित है (सा० इं० इं०, III, पृ० 450)।

किन्डेप्प—यह गाँव तेल्लवल्लिविषय में स्थित था (एपि० इं०, XXIII भाग, II, अप्रैल, 1935, पृ० 59)।

किसनपुर—यह कटक जिले के पद्मपुर परगने में स्थित एक गाँव है। यहाँ पर शिव काटेश्वर के मंदिर से पत्थर की पटिया पर उत्कीर्ण एक अभिलेख प्राप्त हुआ था। यह मंदिर कटक से लगभग 18 मील उत्तर-पूर्व में स्थित है। यहाँ से प्राप्त इस अभिलेख में गंग-राजाओं की वंशावली चोलगंग से अनंगभीम तक दी गयी है (ज० ए० सो० बं०, LXVII, 1898, पृ० 317-27)।

किसरकेल्ला—इसे केसरकेल्ला नामक गाँव से समीकृत किया जा सकता है, जो संभलपुर जिले के पटना रियासत में वोलंगिर से लगभग छह मील पूर्व में स्थित है (एपि० इं०, XXII, पृ० 136)।

कोडूरु—यह कित्स्ना जिले के गुडिवाड तालुक में स्थित है, जहाँ से अभिपत्रों का एक कुलक (गिनती में पाँच) प्राप्त हुआ था (एपि० इं०, XXV, भाग, III, पृ० 137)।

कोलारु—यह एक गाँव का नाम है। ईलियट ने इसे कलेरु पढ़ा है। इस गाँव के नाम का कुछ संबंद्ध गुडिवाड तालुक में स्थित कोलार या कोल्लेरु झील से हो सकता है (सा० इं० इं०, I, पृ० 52, 62; तुलनीय, इं० ऐ०, XIV, पृ० 204)।

कोलौलपुर—राइस ने इसे मैसूर के पूर्व में स्थित आधुनिक कोलार से समीकृत किया है (एपि० इं०, XXVI, भाग, V, अक्टूबर, 1941, 167; राइस, मैसूर ऐंड कुर्ग फ़ॉम द इंस्क्रिपशंस, पृ० 32)।

कोल्लेरु—यह गोदावरी जिले में स्थित एक झील का नाम है (एपि० इं०, II, पृ० 308; VI, 3)। वेंगिमण्डल में स्थित यह एक बड़ी झील है।

कोल्लिप्पाक्कै—यह वही गाँव है, जिसे किल्लीप्पाक कहा जाता है। इसकी दीवालें शुल्ली के वृक्षों से घिरी हुयी हैं (सा० इं० इं०, I, पृ० 99)। एक किल्लीप्पाग गुंटुर जिले में भी है '(रंगाचारी की तालिका का 92 वाँ अभिलेख द्रष्टव्य)।

कोमण्ड—यह उड़ीसा के नयागढ़ (भू० पू० रियासत) में स्थित एक गाँव है, जहाँ से तीन ताम्रपत्र प्राप्त हुये थे (एपि० इं०, XXIV, भाग, IV, पृ० 172, नेत्तभंज के कोमण्ड ताम्रपत्र)।

कोमर्ती—यह गाँव गंजम जिले के किसी तालुक के नरसन्नपेत नामक मुख्यावास से दो मील दूर दक्षिण-पश्चिम में स्थित है। यहाँ से कलिंग के चन्द्रवर्मन के तीन ताम्रपत्र अभिलेख प्राप्त हुये थे (एपि० इं०, IV, 142)।

कोमारमंगल—इस गाँव को सलेम जिले के तिरुचेंगोद तालुक में स्थित कोमारमंगलम से समीकृत किया जा सकता है। यह सलेम से लगभग 30 मील दूर स्थित है (गंग श्री पुरुष के सलेम अभिपत्र, शक सं० 693; एपि० इं०, XXVII, भाग, IV, पृ० 148)।

कोनमण्डल—यह गोदावरी नदी के डेल्टा में स्थित एक देश है, जिससे हैहय लोग घनिष्ट रूप से संबंधित थे (एपि० इं०, IV, 84, 320)। कोनमण्डल के प्रमुखगण अपनी उत्पत्ति हैहय कृतवीर्य और कार्तवीर्य से बतलाते थे जो यदुवंशी थे।

कोनाडु—यह तमिल देश का एक प्राचीन प्रांत था, जो पुदुकोट्टा (भू० पू० राज्य) का एक भाग था। पुदुकोट्टई (राज्य) में कोडुम्बालूर इसका प्रमुख नगर था(सा० इं० इं०, II, पृ० 458)।

कोनारक—कोर्णाक नाम से भी विश्रुत यह रेतीला क्षेत्र रमणीक एवं पुनीत समुद्र-तट पर स्थित है। यह चिल्का झील से प्राची नदी तक फली हुयी रेतीली पट्टी के उत्तरी छोर के समीप स्थित है। शरद ऋतु में पिपली से इसके निकट तक मोटरकार से आया जा सकता है। यहाँ पर कोनादित्य नामक एक देवता हैं (ब्रह्मपुराण, 28, 18)। यह हिंदू-मंदिर के लिए विख्यात है जो भारतीय स्थापत्य का एक सर्वश्रेष्ठ नमूना है। सूर्य देवता के लिए समर्पित यह मंदिर सामान्यतया 'काले पगोडा' के नाम से विख्यात है, जो पुरी नगर से पूर्वोत्तर में 21 मील दूर पर स्थित है। मंदिर के दक्षिण-पूर्व में लगभग 1½ मील दूर पर समुद्र है। तेरहवीं शती ई० के खुर्दा नरेश नरसिंह देव को मंदिर के निर्माण का श्रेय दिया जाता है (ज० ए० सो० बं०, LXXII, 1903, भाग, I, पृ० 120)। काले पगोडा (कोर्णाक मंदिर) का आहाता एक दीवार से परिवृत है और इसका मुख्य प्रवेशद्वार पूर्व में है। यहाँ पर एक सुंदर महाकक्ष खोदा गया है जिसके द्वारमंडप के सामने कलापूर्ण एवं विस्तृत नक्काशी की गयी है। यह भव्य मंदिर अत्यधिक बैठ गया है और इसे दुष्टों से सुरक्षित रखने के लिए बहुत कुछ किया जा चुका है। ऊँची कुर्सी पर निर्मित द्वारमंडप एक विशाल भवन है। नवग्रहों का प्रतिनिधित्व करने वाला शिला-पट्ट नवग्रह शिला के नाम से विख्यात है और यह एक महत्त्वपूर्ण उपलब्धि है विस्तृत विवरण के लिए द्रष्टव्य, बर्नियर, कोर्णाक, (मार्ग, जिल्द, II, संख्या, 2 और 4) ओ० मैल्ली द्वारा संपादित बिहार ऐंड उड़ीसा डिस्ट्रिक्ट गज़ेटियर्स, पुरी, 1929, पृ० 308 और आगे ; जैरेट द्वारा

अनूदित, अबुल फज्ल की आइन-ए-अकबरी; फर्ग्युसन, हिस्ट्री ऑव इंडियन ऐंड ईस्टर्न आर्किटेक्चर, भाग, VI, अध्याय, 2; आर्क० स० इं० रि०, 1902-1903, पृ० 48-49, 1903-04, पृ० 4; हंटर, उड़ीसा, I; रा० ला० मित्र, ऐंटिक्विटीज़ ऑव उड़ीसा, II, 145)।

कंगोद—कीलहार्न ने इसे युवान-च्वाङ के कुंग-यू-तो से समीकृत किया है। कनिंघम ने इसे गंजम से समीकृत किया है। फर्ग्युसन ने इसे गंजम जिले में कटक और अस्क के बीच में कहीं पर स्थित बतलाया है। अभिलेखों में वर्णित कंगोद-मण्डल (एपि० इं०, VI, 136) शशांक के अधीन था और यहाँ के निवासियों ने कन्नौज-नरेश हर्षवर्द्धन की अवहेलना की थी।

कोंगु—इसमें सलेम और कोयंबटूर के आधुनिक जिले संमिलित हैं (सा० इं० इं०, III, पृ०, 450)।

कोंकान—मार्कण्डेयपुराण (25) के अनुसार यह वेण्वा नदी के तट पर स्थित है। दक्षिण-कोंकान पर विजयनगर के सेनापति माधव ने विजय प्राप्त की थी। अपने स्वामी काशीविलास की कृपा के कारण माधव ने एक शैव के रूप में ख्याति प्राप्त की थी (एपि० इं०, VI, और VIII; इ० ऐं०, XLV, 17)। अपने धर्म के लिए उसके उत्साह की पुष्टि मंचलपुर अभिपत्रों से भी होती है। दक्षिण कोंकान विषयक अन्य अभिलेखीय उल्लेखों के लिए द्रष्टव्य, (एपि० क०, VII, 313-375; एपि० क०, VII, नं० 34; एपि० क०, VIII, 152, 166, 382)।

कोंकुडुरु—गोदावरी जिले में रामचन्द्रपुरम से पाँच मील उत्तर में स्थित यह एक गाँव है (एपि० इं०, V, 53 और आगे)।

कोपण—केलादि सदाशिव नायक के काप ताम्रपत्र में कोपण का उल्लेख है, जो कोपल ही है, और जो आंध्र प्रदेश के हैदराबाद में स्थित जैनियों का एक प्रसिद्ध तीर्थ स्थान है।

कोप्पम (कुप्पम)—यह पेरारु (पलारु) नदी के तट पर स्थित एक गाँव है (सा० इं० इं०, I, पृ० 134)। बताया जाता है कि यहाँ राजेन्द्र ने आहवमल्ल के ऊपर विजय प्राप्त की थी।

कोप्परम—यह गुंटुर जिले के नरसरावपेत तालुक में स्थित है। यहाँ पुलकेशिन् द्वितीय का एक ताम्रपत्र प्राप्त हुआ था (एपि० इं०, XVIII, 257)।

कोरकाई—इसका संस्कृत रूप तिरुनेलवेल्लि जिले में स्थित कोरगार है, जो पाण्डयों की प्राचीन राजधानी थी (सा० इं० इं०, I, पृ० 168)। साधारणतया

इसे तमिल ग्रंथों में कोर्काई कहा गया है। यह एक समृद्धिशाली बंदरगाह था (वि० रा० रा० दीक्षितार, प्रि-हिस्टॉरिक साउथ इंडिया, पृ० 31)।

कोरि या कोलि—त्रिचिनापल्ली के नगरोपकंठ में स्थित यह उरैय्यूर ही है जो चोलों की प्राचीन राजधानी मानी जाती है (सा० इं० इं०, II, 252, 459)।

कोरोसण्ड—यह गाँव जिसे कोरोसण्डा भी कहा जाता है उड़ीसा राज्य के गंजम जिले पर्लकिमेडि से छह मील दूर दक्षिण में है (एपि० इं०, XXI, पृ० 23)।

कोरुकोण्ड—राजामुंद्री के उत्तर में लगभग नौ मील दूर गोदावरी की घाटी में स्थित यह एक पहाड़ी दुर्ग है (एपि० इं०, XXVI, भाग, I, जनवरी, 1941)।

कोशल-नाडु (कोशलनाडु)—यह दक्षिण कोशल है, जो कनिंघम के मतानुसार महानदी और उसकी सहायक नदियों की ऊपरी घाटी के सदृश है (सा० इं० इं०, I, पृ० 97; आर्क्योलॉजिकल सर्वे ऑव इंडिया, भाग, XVII, पृ० 68)। सोमेश्वर-देव के कुरुस्पल शिलालेख के अनुसार महाकोशल या दक्षिणकोशल बरार से उड़ीसा तक और अमरकण्टक से बस्तर तक फैला हुआ था (एपि० इं०, X, नं० 4)। जाजल्लदेव के रत्नपुर अभिलेख से हमें यह ज्ञात होता है कि कलिंगराज ने दक्षिणकोशल पर विजय प्राप्त की थी और तुम्माण को अपनी राजधानी बनाया था। बिल्हरी-अभिलेख के अनुसार लक्ष्मणराज ने दक्षिण-कोशलाधिपति को पराजित किया था (एपि० इं०, II, पृ० 305; I, पृ०, 254)। साधारणतया आधुनिक छत्तीसगढ़ प्रखंड को दक्षिणकोशल समझा जाता है जब कि तुम्माण को बिलासपुर जिले के तुमन नामक आधुनिक गाँव से समीकृत किया जाता है (एपि० इं०, I, 39 और आगे; 45 और आगे)।

जैन-ग्रंथ जम्बुद्दीवपण्णत्ति के अनुसार, कुशावती दक्षिण कोशल की राजधानी थी। निश्चित रूप से यह वह नगर हो सकता है, जो वैताढ्य पर्वतमाला से संबद्ध है, जिसके किनारे साठ विद्याधर नगर स्थित थे (सत्तिम विज्जाहरण गरावासा, I, 12)।

कोट्टारु—यह कन्या कुमारी के समीप स्थित एक सुप्रसिद्ध कस्बा है। यह प्राचीन कस्बा त्रावणकोर में स्थित है और कन्या कुमारी के उत्तर में लगभग 10 मील दूर पर स्थित है (सा० इं० इं०, III, पृ० 147)।

कोट्टुर—इसे गंजम में, महेन्द्रगिरि के दक्षिण-पूर्व में 12 मील दूर पर स्थित कोठूर से समीकृत किया जाता है। एक अन्य कोट्टूर विज़गापट्टम जिले में भी स्थित है (विजगापट्टम डिस्ट्रिक्ट गज़ेटियर, I, 137)।

कोट्याश्रम—यह वशिष्ठ का आश्रम है, जिसे वरिपद से 32 मील दूर कुतिंग से समीकृत किया गया है (एपि० इं०, XXV, भाग, IV, पृ० 154)।

क्रोष्टुकवर्त्तनी-विषय—प्राचीन और उत्तरकालीन गंग आलेखों में वर्णित यह एक जिले का नाम है। हुल्ट्श ने इसे आधुनिक शिकाकोल से समीकृत किया है (एपि० इं०, XXVI, भाग, II, पृ० 66 और आगे; एपि० इं०, XXV, भाग, V, जनवरी, 1940, पृ० 196)। इस विषय (जिले) का उल्लेख देवेन्द्रवर्मन के शिकाकोल अभिपत्रों में भी हुआ है। कुछ विद्वानों ने इसे गंजम जिले की वंशधरा नदी के उत्तरवर्ती देश से समीकृत किया है (जर्नल ऑव द मिथिक सोसायटी, XIV, पृ० 263)।

कृष्णगिरि—यह कराकोरम या काला-पहाड़ है (वायुपुराण, अध्याय, 36)। प्राचीन भूगोलवेत्ता काराकोरम को कृष्णगिरि कहते थे। यह पर्वत पश्चिम में हिन्दुकुश के क्रम में स्थित है। आधुनिक भूगोलवेत्ताओं के अनुसार यह खास हिमालय से अधिक प्राचीन है। यह हर्सीनियन युग का है (लाहा, रिवर्स ऑव इंडिया, पृ० 4 और 7; रैप्सन, आंध्र क्वायंन्स, XXXIII; बांबे गजेटियर, I, ii, 9; तु० रामायण, VI, 26-30)।

कृष्णवर्णा—यह आधुनिक कृष्णा नदी है (सा० इं० इं०, I, पृ० 28)। पुराणों में वर्णित कृष्णवेण्वा जातकों में कन्हपेण्णा, और खारवेल के हाथीगुम्फा-अभिलेख में वर्णित कण्हपेम्णा, दक्षिण भारत की एक प्रसिद्ध नदी है। रामायण, (किष्कन्ध्याकाण्ड, XLI, 9) में इसका उल्लेख कृष्णवेणी या कृष्णवेणा के रूप में किया गया है (तु०, अल्टर्ट्युस्कुंडे, जिल्द, I, पृ० 576)। इसका उद्गम स्थान पश्चिमी घाट में है। दक्कन के पठार से होती हुयी और पूर्वी घाट को एक कृश-प्रवाह (नदकंदर) के रूप में चीरती हुयी यह पूर्व की ओर बहती है और बंगाल की खाड़ी में गिरती है (विस्तार के लिए द्रष्टव्य, बि० च० लाहा, रिवर्स ऑव इंडिया, पृ० 48)। वेण (वराह-पुराण, LXXXV), वेणा या वर्णा (कूर्मपुराण, XLVII, 34), वैणी (वायुपुराण, XLV, 104), वीणा, (महाभारत, भीष्म पर्व, IX. 328) और वेण्णा (भागवतपुराण, XIX, 17) इसके विविध पाठ हैं। पार्जिटर ने कृष्णा एवं कावेरी नदियों के मध्य पेन्नार नदी से इसका समीकरण प्रस्तावित किया है (मार्कण्डेय पुराण, पृ० 303, टिप्पणियाँ)।

कृष्णा—यह नदी पुराणों में वर्णित कृष्णवेणा या योगिनीतंत्र में वर्णित कृष्णवेणी (2. 5, पृ० 139-140; हुल्ट्श, सा० इं० इं०, II, 232) के समान ही है। इसका वर्णन भागवतपुराण (V, 19, 18)

और बृहत्संहिता (XIV, 14) में हुआ है। यह अपने आधुनिक नाम कृष्णा में जीवंत है। मार्कंडेण्य पुराण (57, 26, 27) के अनुसार यह सह्य पर्वत से निकलती है। जातकों में इसे कन्हपेण्णा और खा खेल के हाथीगुम्फा अभिलेख में कण्हपेण्णा भी कहा गया है। इसका उद्‌गम-स्थल पश्चिमी घाट में है। पूर्व की ओर बहती हुयी यह दक्कन के पठार से होती और पूर्वी घाट को एक नदकंदर के रूप में चीरती हुयी बंगाल की खाड़ी में गिरती है। इसका प्रवाह-पथ महाराष्ट्र (भूतपूर्व बंबई राज्य) और आंध्रप्रदेश (भूतपूर्व हैदराबाद रियासत) राज्यों से होकर है। आलमपुर से उत्तर-पूर्व में जगय्यपेत के आगे तक बहती हुयी कृष्णा नदी हैदराबाद (भू० पू० रियासत) की प्राकृतिक दक्षिणी सीमा बनाती है। प्रायः अठनी के समीप इसमें कई सरिताओं का संयुक्त प्रवाह आकर मिलता है जिनमें यर्ला, कोइंद और वर्णा नदियाँ सुप्रसिद्ध हैं। आंध्र प्रदेश में (भू० पू० हैदराबाद) प्रवेश करने के पूर्व मुद्देबिहल के आगे दाहिनी ओर से इसमें मालप्रभा नदी मिलती है। आंध्रप्रदेश में इसके प्रवाह-क्रम में इसमें अनेक उपनदियाँ मिलती हैं, जिनमें घोन, भीमा, दिंदी, पेद्दवगु, मुसि-अलेर, पलेर, मुनेर और तुंगभद्रा नदियाँ संमिलित हैं (विस्तार के लिए द्रष्टव्य, लाहा, रिवर्स ऑव इंडिया, पृ० 48)।

कृष्णापुर—यह विजयनगर के खंडहरों के पश्चिमी छोर पर स्थित एक विजन गाँव हैं। यहाँ पर शक संवत् 1451 में किसी रद्दी पाषाण गुट्टिका पर उत्कीर्ण कृष्णराय का एक अभिलेख प्राप्त हुआ था (एपि० इं०, I, 398)। तिन्नेवल्ली से छह मील दक्षिण-पूर्व में स्थित इसी नामका एक गाँव है, जहाँ से सदाशिवराय के ताम्रपत्र उपलब्ध हुये थे (एपि० इं०, IX, 328 और आगे)।

कृतमाला—इस नदी को वैगाई से समीकृत किया गया है जो पाण्ड्य राज्य की राजधानी मधुरा शहर से होकर बहती है।

कुडमलाईनाडु—यह कुर्ग ही है (सा० इं० इं०, I, पृ० 63; II, पृ० 8, 17, 35; III, पृ० 144)। हुल्ट्श के अनुसार यह मलावार है।

कुडमुक्किल—यह कुंभकोनम है (सा० इं० इं०, III, पृ०, 450)।

कुडियाःतण्डल—यह गाँव चिंगलपुत जिले में स्थित है (एपि० इं०, XIV 232)।

कुद्राहार—यह संभवतः कोण्डमुड़ी का कुदूरहार ही है जहाँ से जयवर्मन के अभिपत्र प्राप्त हुये थे। यह कुदूर में स्थित किसी जिले के मुख्यावास का नाम है जो कित्स्ना ज़िले के बंदर तालुक में स्थित आधुनिक कूडुरु ही है। (एपि० इं०, XXV, भाग, I, जनवरी, 1939, पृ० 46)।

कूलबंदल—यह एक गाँव है जो कांजीवरम से वांडीवाश जाने वाली सड़क पर मामण्डूर के दक्षिण में पाँच मील दूर पर स्थित है (सा० इं० इं०, III, पृ० 1)। यह उत्तरी अर्काट जिले के चेय्यर तालुक में है।

कुमारमंगलम—ऐमबुन्डी के पश्चिमोत्तर में कोरमंगलम के पूर्व में स्थित यह एक गाँव का नाम है, जो पोयगाई के उत्तर में (राजेन्द्र चोलनल्लूर) और पालारु नदी के दक्षिण में स्थित है (सा० इं० इं०, I, पृ० 87-88)।

कुमारपुर—नेत्तभंजदेव के जुराड दानपत्र में कुमारपुर को गंजम जिले के बेरहमपुर तालुक में स्थित इसी नाम के एक गाँव से समीकृत किया जाता है (एपि० इं०, XXIV, भाग, I, जनवरी, 1937, पृ० 18)।

कुमारवल्ली—यह कुमारवल्लिचतुर्वेदिमंगलम का आधुनिक नाम है (सा० इं० इं०, II, प्रस्तावना, पृ० 23)।

कुमारी—कन्या कुमारी के समीप यह एक पवित्र नदी का तमिल नाम है और यह संस्कृत कुमारी के समरूप है (सा० इं० इं०, I, पृ० 77)।

कुंभकोनम—कावेरी नदी के तट पर स्थित यह शिक्षा का एक महान केंद्र और दक्षिण भारत के प्राचीनतम नगरों में से एक था। यहाँ के सारंगपाणि, कुंभेश्वर, नागेश्वर और रामस्वामी मंदिर उल्लेखनीय हैं। इस नगर का नाम कुंभेश्वर देवता के नाम पर पड़ा है। नागेश्वर मंदिर में सूर्य के लिए एक पृथक् मंदिर है। सारंगपाणि एक वैष्णव देवता और विष्णु के एक खास अवतार हैं। रामस्वामी मंदिर को तंजौर के किसी राजा ने सोलहवीं शताब्दी ई० में बनवाया था।

कुम्मट—यह दोरवडिनाडु में स्थित है। इसे आनेगोण्डि से लगभग आठ मील दूर पर स्थित कुमार-रामन कुम्मट से समीकृत किया जा सकता है (एपि० इं०, XXIII, भाग, V)।

कूनियूर—यह गाँव तिरुनेलवेलि जिले के अंबासमुद्रम तालुक में स्थित है जहाँ से वेंकट द्वितीय के समय के ताम्रपत्र उपलब्ध हुये थे (एपि० इं०, III, 236)।

कुंतल—यह कर्णाट देश का एक जिला है (सा० इं० इं०, I, 156, 160)। मैसूर से प्राप्त अभिलेखों के अनुसार (राईस, मैसूर ऐंड कुर्ग फ़्राम इंस्क्रिप्शंस, पृ० 3; फ्लीट, डाइनस्टीज़ ऑव कनारीज़ डिस्ट्रिक्टस, पृ० 284, पा० टि० 2)। कुंतल क्षेत्र में (महाराष्ट्र भू० पू० बंबई प्रेसिडेंसी) के दक्षिणी तथा मैसूर के उत्तरी भाग संमिलित थे। युले द्वारा प्रस्तावित गोंदलोई का कुंतल से समीकरण मान्य हो सकता है। चूंकि यह पृथ्वी देवी के बालों (कुंतल) के सदृश है, इसलिए

इसे कुंतल कहा जाता है। किसी समय यहाँ नंद वंशीय राजा राज्य करते थे। लगता है कि दक्कन के कुंतल लोग ऐतिहासिक युगों में अत्यधिक महत्ता प्राप्त कर सके थे। ग्यारहवीं और बारहवीं शताब्दी के अभिलेखों में कुंतल देश का प्रायः उल्लेख किया गया है जब कि इसमें दक्षिणी मराठा प्रदेश और निकटवर्त्ती कन्नड जिले संमिलित थे (एपि० इं०, XXIV, पृ० 104 और आगे)। साहित्यिक एवं अभिलेखीय उल्लेख असंदिग्ध रूप से यह सिद्ध करते हैं कि दक्कन के सात-कर्णियों के कई कुल थे, और इनमें से एक या अधिक कुलों ने कन्नडी जिलों के कुंतल पर कदंबों के पहले शासन किया था। अजंता के एक अभिलेख में वाकाटक-नरेश पृथ्वीषेण प्रथम का उल्लेख है, जिसने कुंतलेश्वर पर विजय प्राप्त की थी। पृथ्वी षेण ने अपना प्रभुत्व बुन्देलखंड में नचने की तलाई, गंज, तथा कुंतल के सीमावर्ती प्रदेशों पर स्थापित किया था (एपि० इं०, XVII, 12; इं० ऐं०, 1876, पृ० 318)। हरिषेण नामक एक वाकाटक नरेश ने कुंतल पर विजय प्राप्त करने का दावा किया था (वस्तृत विवरण के लिए द्रष्टव्य, बि० च० लाहा, ट्राइब्स इन ऐंश्येंट इंडिया, पृ० 176 और आगे)। कर्ण के रीवा शिलालेख में कुंतल का उल्लेख है जो उत्तरकालीन चालुक्यों का देश था (एपि० इं०, XXIV, भाग, 3, जुलाई, 1937, पृ० 110)। कुछ विद्वानों के अनुसार कुंतल भीमा और वेदवती के बीच में स्थित है, जिसमें महाराष्ट्र (भू० पू० बंबई) के कन्नड जिले, मद्रास और मैसूर राज्य तथा संभवतः विदर्भ सहित महाराष्ट्र का भी एक भाग संमिलित था जिसकी राजधानी गोदावरी-तट पर स्थित प्रतिष्ठान थी (द्रष्टव्य, वा० वि० मिराशी, हैदराबाद आर्कयॉलॉजिकल मेमायर, सं० 14, पृ० 9, पा० टि०)। तालगुण्ड स्तंभ लेख से हमें ज्ञात होता है कि कुंतल में स्थित वैजयन्ती के एक कदंब नरेश ने अपनी पुत्रियों का विवाह गुप्त तथा अन्य राजाओं के साथ किया था। कुंतल के कुछ मध्ययुगीन राजा अपनी उत्पत्ति चन्द्रगुप्त से बतलाते थे (रा० कु० मुकर्जी, गुप्त इंपायर, पृ० 48)।

कूर—यह एक गाँव है, जिसके 108 परिवार चारों वेदों का अध्ययन करते थे (सा० इं० इं०, जिल्द, I, पृ०, 154)।

कूरम—यह काञ्चीपुरम के समीप एक गाँव है। कूरम गाँव नाडु (देश) या संस्कृत नीरवेलूर के मन्यवान्तरराष्ट्र में था जो ऊरुक्काट्टुक्कोट्टम की एक तहसील थी (सा० इं० इं०, I, 144, 147, 154, 155)। एक अभिलेख में कूरम की सभा ऊर्फ ऊरुक्काट्टुक्कोट्टम के नीरवेलूरनाडु जिले में शोलमात्तण्डु चतुर्वेदिमंगलम् द्वारा भूमि के विक्रय का उल्लेख है।

कुवलयसिंगनल्लूर—यह अण्डनाडु तहसील में स्थित है जो मदुरा जिले

के पेरियकोट्टई और उसके समीपवर्ती क्षेत्र हैं (एपि० इं०, XXV, भाग, I, जनवरी, 1939, पृ० 40)।

कुवलालपुर—यह एक कस्बा है। इसका आधुनिक नाम कोलार है (सा० इं०, जिल्द, II, पृ० 380)।

लालगुडी—यह त्रिचिनापल्ली जिले में स्थित है जहाँ से तीन तमिल अभिलेख उपलब्ध हुये थे (एपि० इं०, XX, पृ० 46)।

लामु—यह गुंटुर जिले में ताडिकोण्ड से दक्षिण में दो मील दूर पर स्थित है (एपि० इं०, XXIII, भाग, V, पृ० 166)।

लांगुलिय—यह नदी, जिसे नागावती भी कहा जाता है, गोदावरी और महानदी के डेल्टा के बीच स्थित है। यह कलहंदी की पहाड़ियों से निकलती है और गंजम जिले से होकर दक्षिण की ओर बहती हुयी आंध्रप्रदेश में शिकाकोल (श्रीकाकुलम) के आगे खाड़ी (बंगाल की) में गिरती है। मार्कण्डेयपुराण में इसे लांगूलिनी कहा गया है (LVII, 29)। यह महाभारत में वर्णित लांगली नदी है (सभापर्व, IX. 374)।

लेकुमारी—इसे कैकलूर विषय के कैकलूर तालुक में स्थित लोकमुडि से समीकृत किया जा सकता है (एपि० इं०, XXV, खंड, I, पृ० 46)।

लोहितगिरि—यह एक पहाड़ी है (सा० इं० इं०, जिल्द, II, पृ० 372)।

लोकालोक पर्वत्—यह एक पर्वत का नाम है, जिसे ताजे पानी के सागर के पार स्थित माना जाता है और जिसके आगे ब्रह्माण्ड-कोशिका स्थित है (सा० इं० इं०, III, पृ 414; तु० विष्णुपुराण (विल्सन), पृ० 202, टि० 6)।

लुपुट्टुरा—लुपट्टुरा या लुपुट्टुरा संभवतः छठें वर्ष में अंकित पटना अभिपत्रों में वर्णित लिपतुंग ही है (एपि० इं०, III, 344)। कुछ लोगों ने इसे पटना (रियासत) में बोलंगिर से छह मील दक्षिण-पूर्व में स्थित लेप्त से समीकृत किया है, जब कि अन्य लोग इसे सोनपुर (भू० पू० रियासत) में स्थित या तो नुप्तर या नुपरसिंग से समीकृत करने के पक्ष में है (एपि० इं०, XXIII, भाग, VII, जुलाई, 1936, पृ० 250)।

मध्यम-कलिंग—यह उस प्रदेश का नाम है जिसे स्थूल रूप से आधुनिक विज़गापट्टम ज़िला कहा जाता है (एपि० इं०, VI, 227, 358; एनुअल रिपोर्ट ऑव द साउथ इंडियन एपिग्रेफी, 1909, पृ० 106; वही 1918, पृ० 132)। कुछ लोगों के अनुसार यह मेगस्थनीज द्वारा वर्णित मोदोकलिंगाई है (इं० ऐं०, VI, 338)।

मदुराई—यह पाण्ड्यों की राजधानी मदुरा है (सा० इं० इं०, जिल्द, III, पृ० 206)।

मदुरमण्डलम—यह एक देश का नाम है (सा० इं० इं०, I, पृ० 97, 99, 112), यह प्राचीन पाण्ड्य देश है जिसकी राजधानी मदुरा थी। टॉलेमी ने इसे मदौरा (Madoura) कहा है। यह वैगाई नदी के तट पर स्थित है।

मदुरा—रामायण (उत्तरकाण्ड, सर्ग, 83, श्लोक, 5) के अनुसार यह रमणीक नगर बहुत दिनों तक राक्षसों से परिपूर्ण था। यह नगर वैगाई नदी के दाहिने किनारे पर स्थित है। यह मद्रास से 345 मील दूर दक्षिण रेलवे के मुख्य रेलमार्ग पर स्थित है (मद्रास डिस्ट्रिक्ट गज़ेटियर्स, मदुरा, लेखक, डब्ल्यू० फ्रांसिस, पृ० 257 और आगे)। यह मंदिरों से भरा हुआ है और निस्संदेह एक धार्मिक नगर है। यहाँ का विष्णुमंदिर रेलवे स्टेशन से एक मील भी नहीं है और इसका भीतरी भाग काले संगमरमर से निर्मित है, जिसमें प्रदक्षिणा के लिए पथ की भी व्यवस्था है। मदुरा का सबसे बड़ा मंदिर मीनाक्षी का है जो लक्ष्मी ही हैं। यह मंदिर एक विस्तृत क्षेत्र में बना हुआ है जिसका एक भाग मीनाक्षी के लिए और दूसरा शिव के लिए समर्पित है। मदुरा, पाण्ड्य राजाओं की राजधानी थी। यह जटावर्मन की राजधानी थी जो तेरहवीं शताब्दी ईसवी में सिंहासनारूढ़ हुआ था और जिसने कर्णाटक के होयसल-नरेश सोमेश्वर पर विजय प्राप्त की थी (एपि० इं०, III, 8)। प्रो० दीक्षितार ने अपने स्टडीज़ इन द तमिल लिटरेचर ऐंड हिस्ट्री, पृ० 13, नामक ग्रंथ में दक्षिण मदुरा को मदुरा के आधुनिक नगर से पृथक् माना है।

मदुरोदय-वलनाडु—यह पाण्ड्य देश का एक जिला है (एपि० इं०, भाग, II, अप्रैल, 1939, पृ० 96)।

महाबलिपुरम—यह स्थान मद्रास के दक्षिण में लगभग 35 मील दूर तथा चिंगलपुत् से दक्षिण-पूर्व में 20 मील दूर पर समुद्र-तट पर स्थित है। एक वैष्णव संत के अनुसार यहाँ पर शिव, विष्णु के साथ रहते थे और इसी कारण हमें यहाँ दोनों देवताओं के मंदिर एक दूसरे के पास स्थित मिलते हैं। यह सात पगोडाओं का स्थान है। इनके अतिरिक्त यहाँ पर कई प्राकृतिक एवं कृत्रिम गुफाएँ हैं। उनमें से कुछ में हमें पौराणिक दृश्यों के अत्यंत आकर्षक सांस्कृतिक चित्रण मिलते हैं। राक्षसों का दमन करती हुयी महिष-मर्दिनी, अर्जुन की तपश्चर्या, वर्षा के देवता इन्द्र के क्रोध के कारण पशुओं की रक्षा के लिए श्रीकृष्ण द्वारा गोवर्धन-धारण आदि कुछ उल्लेखनीय मूर्तियाँ हैं । विष्णु के वराह अवतार का उच्चित्र भी अत्यंत महत्त्वपूर्ण हैं। इस देवता को शेषनाग पर विश्राम करते हुये उनके दाहिने

पैर पर खड़े और पृथ्वी देवी को उनके दाहिने जंघे पर विश्राम करते हुये प्रदर्शित किया गया है (लाहा, होली प्लेसेज़ ऑव इंडिया, पृ० 39)।

महागौरी—मार्कण्डेय पुराण (LVII, 25) में इसका उल्लेख है, जो ब्राह्मणी का पर्यायवाची शब्द है। यह उड़ीसा की आधुनिक ब्राह्मणी नदी है (तु० महाभारत, भीष्मपर्व, IX. 341)।

महाकान्तार—कुछ विद्वानों के अनुसार महानदी के तट पर संभलपुर संभवतः इसकी राजधानी थी। इसे पूर्वी गण्डवन या दक्षिणी झारखंड से समीकृत किया जाता है।

महाराष्ट्र—महाराष्ट्र देश या मो-हो-ला-च अपने संकीर्ण अर्थ में दक्कन है (सा० इं० इं०, I, पृ० 113, पा० टि० 3)। महाराष्ट्र सचमुच ऊपरी गोदावरी द्वारा सिंचित प्रदेश और गोदावरी तथा कृष्णा नदियों का मध्यवर्ती प्रदेश है। ऐहौल अभिलेख के अनुसार इसमें तीन संभाग थे, जिनमें प्रत्येक को सातवीं शती० ई० में महाराष्ट्रक कहा जाता था (इं० ऐं०, XXII, 1893, पृ० 184)।

युवान-च्वाङ के अनुसार इस प्रदेश की परिधि 5,000 ली थी। यहाँ की भूमि समृद्ध, उर्वर और नियमित रूप से कर्षित थी। यहाँ की जलवायु गरम थी और यहाँ के निवासी ईमानदार और सरल थे। वे लंबे और स्वभावतः प्रतिशोधशील थे। यहाँ पर कुछ संघाराम और देवमंदिर थे (बील, बुद्धिस्ट रिकार्डस ऑव द वेस्टर्न वर्ल्ड, II, 255 और आगे)। इसे टॉलेमी द्वारा वर्णित एरियाके (Ariake) बतलाया जाता है (पृ० 39)। इसकी परिधि 6000 ली थी और इसकी राजधानी एक बड़ी नदी के पश्चिम में थी। महाराष्ट्र की प्राचीन राजधानियाँ (1) गोदावरी-तट पर स्थित प्रतिष्ठान या पैठान (2) बंबई बंदरगाह के पूर्वी तट पर स्थित कल्याण, (3) प्राचीन चालुक्यों की वातापि (4) और युवान-च्वाङ के समय में इसकी वास्तविक राजधानी बादामी थी। सोपारा और मास्की-अभिलेखों के अनुसार महाराष्ट्र-देश अशोक के साम्राज्य का एक भाग, था। महाराष्ट्र में बौद्ध धर्म का प्रचार करने के लिए भेजा गया एक प्रचारक धम्मरखित था (महावंस, अध्याय, XII, पृ० 97, गाईगर संस्करण)। विस्तृत विवरण के लिए द्रष्टव्य, कनिंघम की ऐं० ज्यॉ० इं०, टिप्पणियाँ, पृ० 745 और आगे; नं० ला० दे कृत ज्यॉग्रेफिकल डिक्शनरी, पृ० 118; सिद्ध भारती, भाग II, पृ० 285 और आगे पर प्रकाशित एस० आर० शिंदे कृत हाऊ, व्हेन्स ऐंड व्हेन महाराष्ट्र केम इनटु बीइंग, हं० धी० साँकलिया, ऐंश्येंट ऐंड प्रिहिस्टारिक महाराष्ट्र, ज० बां० ब्रा० रा० ए० सो०, जिल्द, 27, भाग, I, 1951, नई माला।

महाविनायक पहाड़ी—यह जाजपुर तहसील में है। इसकी उपासना शिव

के अनुयायी, शिव, गणेश और गौरी के ऐक्य के रूप में करते हैं, (ओ' मैल्ली द्वारा संपादित, बिहार ऐंड उड़ीसा डिस्ट्रिक्ट गज़ेटियर्स, कटक, 1933)।

महेन्द्रवाडि—यह गाँव अर्कोनम जंक्शन से अर्काट जाने वाली रेलवे लाइन पर शोलिंघुर रेलवे स्टेशन से तीन मील पूर्व, दक्षिण-पूर्व की ओर स्थित है। यहाँ से प्राचीन पल्लव-लिपि में उत्कीर्ण गुणभर का एक अभिलेख प्राप्त हुआ था (एपि० इं०, IV, 152)।

महेन्द्राचल—योगिनीतंत्र (2, 4, 128 और आगे) में महेन्द्रपर्वत का उल्लेख है। गंग इन्द्रवर्मन के गौतमी-अभिपत्रों में इसका वर्णन है। संभवतः इसमें गंजम जिले में इसी नाम की पहाड़ियों का उल्लेख है (एपि० इं०, XXIV, भाग, IV, अक्टूबर, 1937, पृ० 181)। महेन्द्र पर्वतमाला गंजम से सुदूर दक्षिण में पाण्ड्य-देश से पूर्वी घाट पर्वतमाला तक फैली हुयी थी। महेन्द्रगिरि या महेन्द्रपर्वत गंगा-सागर-संगम और सप्तगोदावरी के बीच स्थित था। गंजम के समीप पूर्वी घाट के एक भाग को अब भी महेन्द्र पहाड़ी कहा जाता है। पार्जिटर का अनुमान है कि यह नाम महानदी, गोदावरी और वेनगंगा के मध्य स्थित पहाड़ियों तक ही सीमित रखा जाना चाहिए, और संभवतः इसमें गोदावरी के उत्तर में स्थित पूर्वी घाट के हिस्सों को भी समाविष्ट किया जा सकता है (मार्कण्डेय पुराण, पृ० 305, टिप्पणी)। बाण के हर्षचरित् (सप्तम उच्छवास्) के अनुसार महेन्द्रपर्वत मलय-पर्वत में मिल जाता है। रघुवंश (IV. 39, 43; VI. 54) में इसे कलिंग में स्थित बतलाया गया है। यह नाम मुख्य रूप से उस पर्वतमाला को दिया गया है, जो गंजम को महानदी घाटी से पृथक् करती है। कालिदास ने कलिंग-नरेश को महेन्द्राधिपति भी कहा है (रघुवंश, IV. 43; VI. 54)।

महेन्द्रपर्वत से संबद्ध लघुपहाड़ियों में श्रीपर्वत, पुष्यगिरि, वेंकटाद्रि अरुणाचल और ऋषभ थीं।

उड़ीसा से मदुरा जिले तक फैली हुयी संपूर्ण पर्वतमाला को महेन्द्रपर्वत कहा जाता था। इसमें पूर्वीघाट संमिलित थे। यह मलयाचल में मिल जाता था। रामचन्द्र से पराजित होने के बाद परशुराम ने इस पर्वत में शरण ली थी।

प्राचीन भारतीय भूगोलवेत्ता पूर्वीघाट को निश्चय ही महेन्द्रगिरि कहते थे क्योंकि पूर्वीघाट के सर्वोच्च शिखर को अब भी इसी नाम से पुकारा जाता है। विश्लिष्ट पहाड़ियों के रूप में ये पहाड़ियाँ भारत के पूर्वी समुद्र-तट के न्यूनाधिक समानांतर फैली हुयी हैं, जो इस देश के विभिन्न भागों में विभिन्न नामों से जानी जाती है। विस्तार के लिए द्रष्टव्य, बि० च० लाहा, माउंटेंस ऑव इंडिया, कलकत्ता ज्यॉग्रेफिकल सोसायटी पब्लिकेशन, सं० 5, पृ० 22.

महिष-राइस ने इसे मैसूर से समीकृत किया है (मैसूर ऐंड कुर्ग इंस्क्रिप्शंस, पृ० 14)। कुछ विद्वानों ने इसे माहिष्मती से और दूसरों ने (भू० पू० इंदौर रियासत मध्यप्रदेश के निमाड़ जिले में नर्मदा के उत्तरी तट पर स्थित महेश्वर से समीकृत किया है।

मैनाकपर्वत—रामायण में इसे दक्षिण भारत में स्थित बतलाया गया है। अश्वघोष के अनुसार समुद्र का प्रवाह-पथ अवरुद्ध करने के लिए यह नदी में घुस गया था (सौन्दरनन्दकाव्य, अध्याय, VII, श्लोक, 40)। यह पौराणिक विवरण रामायण में भी प्राप्त होता है, जिसमें मैनाकपर्वत को दक्षिणापथ में स्थित बतलाया गया है। मलयगिरि नाम से भी विख्यात इस पर्वत में सर्पाकीर्ण तीन गुफाएँ थीं (दशकुमारचरित, पृ० 36)।

मलाबार—यह केरल देश है (सा० इं० इं०, II, पृ० 4, 241)।

मलैक्कुर्रम—यह एक जिला है, जिसे मलकूट से समीकृत किया जा सकता है, जो युवान-च्वाङ् द्वारा वर्णित मो-लो-कू-ट है (वार्टर्स ऑन युवान-च्वाङ्, पृ० 228 और आगे)। इसे उसने कावेरी के डेल्टा में स्थित बतलाया है (सा० इं० इं०, III, पृ० 197)।

मलयनाडु—यह मलयालम या मलाबार तक सीमित है। इसमें चेर राजा के क्षेत्रों के अतिरिक्त पाण्ड्यों का प्रदेश भी संमिलित है। इसका वर्णन राजेन्द्र चोल के अभिलेख में किया गया है (सा० इं० इं०, II, पृ० 236, 242 आदि)।

मलैयूर—यह एक रम्य पहाड़ी पर स्थित है, जिस पर एक दुर्ग भी है (वही, खंड, III, पृ० 469)।

मलयगिरि—यह एक पहाड़ी का नाम है(वही, III, पृ० 422)। इसका वर्णन बृहत्संहिता में किया गया है (XIV. 11)। अपने देश का परित्याग करके किसी पाण्ड्य-राजा ने इस पहाड़ी पर शरण ली थी। पार्जिटर ने ठीक ही इस पर्वतमाला को नीलगिरि से कन्याकुमारी तक फैले हुये पश्चिमी घाट के एक खंड से समीकृत किया है। मलयकूट, जिसे श्रीखण्डाद्रि या चंदनाद्रि भी कहा जाता था पर अगस्त्य का आश्रम स्थित था (तु० धोयीकृत पवनदूतम्)। कावेरी के आगे पश्चिमी घाट का दक्षिणी प्रसरण, जिसे अब त्रावणकोर पहाड़ियाँ कहते हैं, वस्तुतः मलयगिरि का पश्चिमी पार्श्व है। कुछ विद्वानों के अनुसार जातक (V. 162) में वर्णित चंदक पर्वत मलयगिरि या मलाबार (रियासत, संप्रति केरल में) है।

मलयाचल—महाकाव्य-परंपरा में इसे दक्षिण भारत में स्थित बतलाया

गया है। जीमूतवाहन ने राजसत्ता का परित्याग करने के पश्चात् इस पर्वत पर शरण ली थी, '(बोधिसत्त्वावदान-कल्पलता, 108 वाँ पल्लव, पृ० 12)। पद्म पुराण (अध्याय, 133) में मलयाचल पर स्थित कल्याणतीर्थ का वर्णन है। दण्डिन के काव्यादर्श (III, 150) में उल्लिखित दक्षिणाद्रि भाष्यकार के अनुसार मलयाचल ही है।

मलखेड—कृष्ण तृतीय के सलोतगी-अभिलेख में राष्ट्रकूटों की इस शाही राजधानी को 'स्थिरीभूत-कटके' अथवा जहाँ से सैन्य-शक्ति स्थित कर दी गयी हो बतलाया गया है (एपि० इं०, IV. 66; XIII. 176 और आगे)।

मल्लई—चिंगलपुत् जिले में स्थित यह आधुनिक महाबलिपुरम है (कोप्परुं जिंगदेव का वैलूर अभिलेख, एपि० इं०, XXIII, भाग, V, 180)।

मनगोली—यह गाँव बीजापुर जिले के बगेवाडि तालुक के मुख्यावास बगेवाड़ि के पश्चिमोत्तर में लगभग 11 मील दूर पर स्थित है (एपि० इं०, V. पृ० 9)।

मणलूर—तुंगभद्रा के तट पर स्थित यह एक गाँव है (सा० इं० इं०, जिल्द, II, पृ० 230)। पाण्ड्य-क्षेत्र में मणलूर नामक एक गाँव है (द्रष्टव्य, रंगाचारी की तालिका, तिन्नेवल्ली, 515)।

मनयिरकोट्टम—यह एक जिले का नाम है (सा० इं० इं०, I, पृ० 147)।

मंदार्थी—यह गाँव दक्षिण कनाड़ा (मंगलोर) जिले के उदिपि तालुक में स्थित है। यहाँ पर श्री दुर्गा परमेश्वरी का एक मंदिर है (ज० इं० सो० ओ० आ०, जिल्द, XV)।

मणीकल्लू—यह आंध्र-राज्य (भू० पू० मद्रास प्रेसीडेन्सी) के गुंटुर जिले में स्थित एक प्राचीन स्थान है। यहाँ से एक प्राचीन ब्राह्मी अभिलेख उपलब्ध हुआ था।

मणिमंगलम्—वह चिंगलपुत् जिले में कांजीवरम तालुक के पूर्वी छोर पर स्थित एक गाँव है जो दक्षिण रेलवे के वण्डलुर स्टेशन से लगभग छह मील पश्चिम में स्थित है। संस्कृत-काव्यों में इस गाँव का नाम रत्नाग्रहार दिया गया है (सा० इं० इं०, जिल्द, III, पृ० 48, 49, 50)। अभिलेखों में नरसिंहपुरम (चिंगलपुत) को किडारमगोण्डशोलपुरम कहा जाने लगा था (मद्रास एपिग्रेफिकल रिपोर्ट्स, 1910, 244 और 245)। पल्लव-नरेश नरसिंहवर्मन ने यहाँ एक युद्ध लड़ा था, जिसमें पुलकेशिन् पराजित हुआ था (सा० इं० इं०, जिल्द, I, 144, 145; भाग, II, पृ० 363)।

राजराज प्रथम के शासनकाल के अभिलेखों में उसकी रानी लोक-महादेवी

के नाम पर मणिमंगलम को लोकमहादेवी चतुर्वेदिमंगलम कहा गया है, किन्तु उसके शासनकाल के पंद्रहवें वर्ष के पश्चात् और उसके उत्तराधिकारियों में कुलोतुंग प्रथम तक के नरेशों के राज्यकाल में उत्कीर्ण अभिलेखों में इस गाँव को राजचूड़ा-मणिचतुर्वेदिमंगलम (म० एपि० रि०, 1897 तथा 1892 का 289 और 292; तु० सा० इं० इं०, जिल्द, III, संख्या, 28-30)।

मञ्जीरा—यह गोदावरी की एक सहायक नदी है, जो बालाघाट पर्वतमाला से निकलती है और दक्षिणपूर्व एवं उत्तर की ओर बहती हुयी गोदावरी में मिलती है। इसे बाँईं ओर से तीन और दाहिनी ओर से पाँच सरिताएँ आपूरित करती हैं। इसका एक अन्य पाठभेद वञ्जुला है (वायुपुराण, XLV. 104)।

मन्नेरु—यह नेल्लोर जिले की एक नदी है (सा० इं० इं०, II, पृ० 4)।

मरुदुर—यह तिरुनेलवल्ली जिले के कोविलपट्टी तालुक में स्थित एक गाँव है (एपि० इं०, XXIV, भाग, IV)।

मट्टेपाद—यह गुंटुर जिले के आंगोल तालुक में स्थित एक गाँव है, जहाँ से पाँच ताम्रपत्रों पर उत्कीर्ण दामोदरवर्मन के अभिलेख प्राप्त हुये थे (एपि० इं०, XVIII, 327 और आगे)।

माडवकुलम—यह मदुरा के पश्चिम में स्थित है (एपि० इं०, XXIV, भाग, IV; पृ० 170)।

माहिषक (माहिषिक)—यह दक्षिण में है और पुराणों में यहाँ के निवासियों का उल्लेख (मार्कण्डेय, LVII, 46; मत्स्य, LXIII, 47; तु० महाभारत, सभापर्व, IX, 366) दाक्षिणात्य जनों के रूप में किया गया है।

माहिष्मती (पालि : माहिस्सती)—महाभारत के सभापर्व (XXX, 1025-63) में इसका वर्णन किया गया है। कुछ लोगों के अनुसार यह इंदौर के दक्षिण में लगभग 40 मील दूर पर स्थित था। वह विन्ध्य एवं ऋक्ष पर्वतों के बीच नर्मदा नदी के दाहिने तट पर स्थित प्रतीत होता है और इसे सुगमतापूर्वक आधुनिक मांधाता क्षेत्र से समीकृत किया जा सकता है, जहाँ पर रामायण में वर्णित माहिषिकि नामक एक नदी थी (किष्किन्ध्याकाण्ड, XLI, 16)। हरिवंश के (XLV. 5218 और आगे) अनुसार मुचुकुन्द माहिष्मती का संस्थापक प्रतीत होता है। कुछ लोग महिष्मत को इसका संस्थापक मानते हैं। पुराणों के अनुसार (मत्स्य पु०, XLIII, 10-29; XLIV, 36; वायु, 94, 26; 95, 35)। किसी यदुवंशी राजकुमार ने माहिष्मती की स्थापना की थी। भागवतपुराण में इसे हैहयों का एक नगर बतलाया गया है (IX. 15, 26; IX, 16, 17; X. 79;21)। पद्मपुराण (183. 2) में बताया गया है कि माहिष्मती नर्मदा नदी

के तट पर स्थित थी। दशकुमारचरित (पृ० 194) में हमें बतलाया गया है कि रानी वसुंधरा और राज-शिशुओं को इस पुर में लाया गया था और उन्हें मित्रवर्मा के समक्ष उपस्थित किया गया था। भंडारकर के अनुसार माहिष्मती या माहिस्सती अवन्ती-दक्षिणापथ की राजधानी थी। पुराणों में माहिष्मती के प्रथम राजवंश को हैहय कहा गया है (मत्स्यपुराण, 43, 8-29; वायु पु० 94, 5-26)। महाभारत में अवन्ती और माहिष्मती को पृथक बतलाया गया है (II.31. 10) पतञ्जलि महाभाष्य में विदर्भ और काञ्चीपुर के समकक्ष माहिष्मती का वर्णन आता है (IV. I, चतुर्थ आहनिक)।

मामल्लपुरम्—मद्रास से 32 मील दक्षिण में समुद्र-तट पर स्थित साधारणतया सात पगोडा नाम से विश्रुत यह गाँव पल्लव अवशेषों के लिए विख्यात है (सा० इं० इं०, I, पृ० 1; फर्ग्युसन ऐंड बर्गेस, केव टेम्पुल्स, पृ० 105-159)। यह पल्लवों का समुद्री बंदरगाह था।

मारमंगलम—यह तिरुनेलवल्ली जिले में है। मारनेरी और मारमंगलम को प्राचीनकाल में मारमंगलम कहा जाता था (एपि० इं०, XXI, भाग, III)।

माविनूरु—यह एक गाँव का नाम है जिसे संभवतः कोन्नूर-अभिलेख में वर्णित माविनूरु से समीकृत किया जाता है (एपि० इं०, VI. 28)। कीलहार्न ने इसे आधुनिक मन्नर से समीकृत किया है, जो कोन्नूर के दक्षिण पूर्व में 8 मील दूर पर स्थित है। अमोघवर्ष के वेंकटापुर अभिलेख (शक सं० 828) में माविनूर में स्थित एक हजार लताओं से मंडित एक बाग के दान का उल्लेख है जो चन्द्रतेज भट्टार के लिए प्रदत्त था (एपि० इं०, XXVI, भाग, II, पृ० 60)।

मायिरुडिंगम्—परिखा के रूप में गहरे सागर से परिवेष्ठित यह एक टापू है (सा० इं० इं०, II, पृ० 109)।

मेलपट्टि—यह उत्तरी अर्काट जिले के गुडियात्तम तालुक में स्थित है। यहाँ से विजय-कंप-विक्रम-वर्मन् का एक अभिलेख उपलब्ध हुआ था (एपि० इं०, XXIII, भाग, IV, अक्टूबर, 1935, पृ० 143)।

मेलपाडि—यह उत्तरी अर्काट जिले में स्थित एक गाँव है, जो तिरुवल्लम के उत्तर में छः मील दूर पर स्थित है (सा० इं० इं०, II, पृ० 222, 249 आदि)। यह नीवा नदी के पश्चिमी तट पर स्थित है (वही, III, पृ० 23)। सोलन्नलैकोण्ड वीरपाण्ड्य के अंबासमुद्रम अभिलेख के अनुसार यह चित्तूर जिले में है (एपि० इं०, XXV, भाग, I, जनवरी, 1939)। कृष्ण तृतीय के करहड अभिपत्र उस समय प्रचलित किये गये थे जब यहाँ पर राष्ट्रकूट-नरेश गोविन्द तृतीय का शिविर

पड़ा था, जो पराजित सामंतों की सारी संपत्ति पर अधिकार करने में लीन थे (एपि० इं०, IV. पृ० 278)।

मेलुर—मदुरा के पश्चिमोत्तर में लगभग 16 मील दूर पर स्थित यह एक गाँव है, (एपि० इं०, XXI, भाग, III, जुलाई, 1931)। फ़्रांसिस के मतानुसार यह त्रिचिनापल्ली की सड़क पर मदुरा के पश्चिमोत्तर में 18 मील दूर पर स्थित है (मद्रास डिस्ट्रिक्ट गज़ेटियर्स, मदुरा, पृ० 288)।

मेरु—यह पर्वत अपने गर्भ में सोना छिपाये हुये है और जम्बुद्वीप के उत्तर में स्थित माना जाता है। चिदंबरम में स्थित मंदिर को दक्षिण मेरु माना जाता था क्योंकि इसके स्वर्णिम महाकक्ष की छत पर प्रभूत मात्रा में सोना था (सा० इं० इं०, I, पृ० 166; II, पृ० 235)।

मिण्डिगल—यह एक गाँव है, जो चिन्तामणि के पश्चिमोत्तर में लगभग 11 मील दूर पर स्थित है और जो मैसूर राज्य में कोलार जिले के चिन्तामणि तालुक का मुख्यावास है (एपि० इं०, V, 205 और आगे)।

मियारु-नाडु—इसमें उत्तरी अर्काट जिले में स्थित वर्तमान तिरुवल्लम और उसके समीपवर्ती क्षेत्र संमिलित थे (एपि० इं०, XXIII, भाग, II, IV, अक्टूबर, 1935)।

मोरौण्ड—टॉलेमी ने इस नगर को एओई (Aioi) का एक भीतरी कस्बा बतलाया है (टॉलेमी कृत ऐंश्यंट इंडिया, ले० मैक्रिंडिल, पृ० 215-216)। एओई देश संभवतः केरल प्रदेश के दक्षिण में स्थित कोई क्षेत्र था, किंतु इसे अभी तक समीकृत नहीं किया जा सका है। संभवतः यह मुरुण्डों का एक नगर था। मोरुंडाई का एक अन्य संनिवेश सुदूर दक्षिण में था (लाहा, ट्राइब्स इन ऐंश्यंट इंडिया, 93)।

मृषिक—(मूषिक या मूषक देश)—मार्कण्डेयपुराण में (LVIII, 16) मृषिक देश को दक्षिण-पूर्व में बतलाया गया है। पार्जिटर का सुझाव है कि मृषिक लोग संभवतः मुसी नदी के तट पर रहते थे, जिसके किनारे आधुनिक हैदराबाद है (मार्कण्डेय पुराण, पृ० 366)। महाभारत (भीष्मपर्व, IX, 366) और मार्कण्डेयपुराण में मृषिकों को दक्षिण में रहने वाला जन वतलाया गया है।

मुदुमड्डु—वैदुम्ब महाराज गण्डत्रिनेत्र के अभिलेखों में इसका वर्णन है जिसे अनंतपुर जिले में स्थित मुदिमड्डु से समीकृत किया जा सकता है (एपि० इं०, XXIV, भाग, IV, अक्टूबर, 1937, पृ० 191)।

मुगैनाडु—यह एक जिला है, जो पंगलनाडु के मध्य में स्थित एक संभाग

है जो कि जयकोण्डचोलमंडलम् का एक भाग है (सा० इं० इं०, I, पृ० 97, 99, 101)।

मूलक—वाराहमिहिर की बृहत्संहिता (XIX, 4) में मूलकों के देश को मौलिक कहा गया है। मूलक-जन एक छोटे कबीले थे, जो दक्षिण के अश्मकों से अति घनिष्ट रूप से संबंधित थे। कौटिलीय अर्थशास्त्र के टीकाकार भट्टस्वामी के अनुसार उनके देश को महाराष्ट्र से समीकृत किया जा सकता है। वायुपुराण (अध्याय, 88, 177-8) में मूलकों और अश्मकों को एक ही इक्ष्वाकु-वंश का वंशज बतलाया गया है। मूलक कबीले के प्रजनक मूलक को गरुड पुराण में (अध्याय, 142 ,34) भगीरथ के वंशज राजा अश्मक का पुत्र बतलाया गया है अस्मक और अलक या मूलक प्रदेशों के बीच की सीमा गोदावरी नदी थी (बि० च० लाहा, ज्यॉग्रेफी ऑव अर्ली बुद्धिज्म, पृ० 21; परमात्थजोतिका आन द सुत्त-निपात, पृ० 581)। इन दोनों प्रदेशों के निवासियों के विषय में मतैक्य नहीं है। विष्णुधर्मोत्तर में उल्लिखित पौराणिक परम्परा से यह सिद्ध होता है कि ये लोग दूसरे थे। सोननन्द जातक के अनुसार (जातक, V, 317) अस्सक देश अवन्ती से मिला हुआ है। डॉ० दे० रा० भंडारकर (कार्माइकेल लेक्चर्स, 1918, पृ० 53-54) के अनुसार सोननन्द जातक में वर्णित इसके सानिध्य का समाधान केवल यह मान लेने पर होता है कि उत्तरकाल में मूलक अस्सक देश में संमिलित था और इस प्रकार अस्सक देश अवन्ती से मिला हुआ था। बहुत बाद में, दूसरी शती ई० के दूसरे चतुर्थक में, गौतमी के नासिक अभिलेख में मूलकों को अश्मकों से पृथक् बतलाया गया है। विस्तृत विवरण के लिए द्रष्टव्य बि० च० लाहा, इंडोलॉजिकल स्टडीज़, I, पृ० 41 और आगे।

मुण्ड-राष्ट्र—इसका वर्णन सिंहवर्मन के उरुवुपल्ली और पिकिर दानपत्रों में है। इसे नेल्लोर-अभिलेखों में वर्णित उत्तरकालीन मुण्डनाडु या मुण्डई-नाडु से समीकृत किया जाता है (एपि० इं०, XXIV, भाग, VII, पृ० 301)

मुरला—यह केरल की एक नदी है (रघुवंश, IV, 54-55)।

मुरप्पु-नाडु—यह तिरुनेलवल्ली जिले के श्री वैकुण्ठम तालुक में पलमकोट्टा से छह मील पूरब में स्थित एक गाँव है और यह ताम्रपर्णी नदी के दाहिने किनारे पर स्थित है (एपि० इं०, XXIV, भाग, IV, पृ० 166; सीवेल, लिस्ट ऑव ऐंटिक्विटीज़, I, पृ० 312)।

मुरसीमन—राजा महाभवगुप्त प्रथम जनमेजय के कालिमना ताम्रपत्रों में इसका वर्णन है जो उड़ीसा में पटना (भू० पू० रियासत) के जरसिंघा में स्थित मुरसिंग से समीकृत किया गया है (ई० हि० क्वा०,XX, सं० 3)।

मूरूर—इस गाँव को आधुनिक मूरूर से समीकृत किया जा सकता है जो उत्तरी कनारा (कारवार) जिले के कुम्त तालुक में, कुम्त से लगभग 10 मील दूर उत्तर में स्थित है (एपि० इं०, XXVII, भाग, IV, पृ० 160)।

मूषक (मूषिक)—मृषिक के अंतर्गत् देखिए।

मूषिकनगर—कलिंग-नरेश खारवेल के हाथीगुम्फा अभिलेख में इसका उल्लेख है जिसने अपने शासन के दूसरे वर्ष में यहाँ के निवासियों के हृदय में आतंक उत्पन्न कर रखा था (एपि० इं०, XX, 79, 87; बरुआ, ओल्ड ब्राह्मी इंस्क्रिप्शंस, पृ० 176; ज० रा० ए० सो०, 1922, पृ० 83)। डॉ० टामस को उक्त उद्धरण में मूषिक नगर का कोई उल्लेख नहीं प्राप्त हुआ (ज० रा० ए० सो०, 1922, पृ० 83; बि० ला० लाहा, ट्राइब्स इन ऐंश्येंट इंडिया, पृ० 384)।

मुतगि—यह बीजापुर जिले के बागेबाड़ि तालुक में स्थित एक गाँव है। यह बागेवाड़ि कस्बे के दक्षिण-पश्चिम में लगभग 6½ मील दूर पर स्थित है। मुरितगे इसका प्राचीन नाम है, जहाँ से दो अभिलेख उपलब्ध हुये थे (एपि० इं०, XV, 25 और आगे)।

मूतिब—यह दक्षिण में स्थित है (महाभारत, XII, 207-42; तु० वायु-पुराण, 45, 126; मत्स्यपुराण, 114, 46-48)। यहाँ के निवासियों को मूतिब कहा जाता था, जो संभवतः प्लिनी द्वारा वर्णित मोदुबाई (Modubae) ही थे (अधिक विवरण के लिए द्रष्टव्य, लाहा, ट्राइब्स इन ऐंश्येंट इंडिया, पृ० 173)।

नडगाम—यह गंजम जिले के नरसन्नपेत तालुक में स्थित एक गाँव है (एपि० इं०, IV, 183)।

नक्कवारम्—यह निक़ोबार द्वीपसमूह का तमिल नाम है (सा० इं० इं०, III, पृ० 195)।

नलतिगिरि या नल्लिगिरि या ललितगिरि—यह बिरूप नदी के तट पर स्थित बलिचन्द्रपुर के दक्षिण पूर्व में लगभग 6 मील दूर पर स्थित है। यह धनमंडल रेलवे स्टेशन के समीप है। यह एक विशाल गाँव है। जिसमें तीन पहाड़ियाँ हैं। यहाँ से बोधिसत्व वज्रपाणि की एक खड़ी प्रतिमा, द्विभुज पद्मपाणि अवलोकितेश्वर, और चतुर्भुजी तारा की प्रतिमाएँ उपलब्ध हुयी थीं। विस्तृत अध्ययन के लिये द्रष्टव्य मे० आर्क० स० इं०, सं० 44, पृ० 8-9 में रा० प्र० चंद्र का 'एक्स्लोरेशंस इन उड़ीसा' नामक लेख।

नंदगिरि—गंग इन्द्रवर्मन के इंडियन म्यूज़ियम अभिपत्रों में नंदगिरि का उल्लेख है, जिसे मैसूर राज्य के कोलार जिले के पश्चिम में सुविख्यात पहाड़ी

गढ़ी नंदिदुर्ग से समीकृत किया गया है (एपि० इं०, XXVI, भाग, V, अक्टूबर 1941, 167)।

नंदिपुरम्—यह एक गाँव का नाम है, जिसे कुंभकोनम के निकट नाथनकोविल से समीकृत किया जाता है (सा० इं० इं०, III, पृ० 233)।

नंदिवेलुगु—यह गुंटुर जिले में है, जहाँ किसी शिव मंदिर की छत में उत्कीर्ण एक अभिलेख मिला था (एनुअल रिपोर्ट ऑव द साउथ इंडियन एपिग्रेफी, 1921, पृ० 47)।

नरसपतम—यह विज़गापटम जिले में एक तालुक है (एपि० इं०, XI, 147-58)।

नरसिंगपल्ली—यह गाँव गंजम जिले के शिकाकोल तालुक में स्थित है जहाँ से 79 वें वर्ष में उत्कीर्ण कलिंग के हस्तिवर्मन के अभिपत्र प्राप्त हुये थे (एपि०, इं० XXIII, भाग II, अप्रैल, 1935, पृ० 62)।

नरवन—शक-संवत् 664 में लिखित विक्रमादित्य द्वितीय के नरवन अभिलेख के अनुसार राष्ट्रकूट गोविन्दराज की प्रार्थना पर किसी चालुक्य नरेश ने इस गाँव को कुछ ब्राह्मणों को दिया था (चालुक्य विक्रमादित्य द्वितीय के नवीन अभिपत्रों के अनुसार यह गाँव रत्नगिरि जिले के गुहागरपेत में समुद्रतट पर स्थित है (एपि० इं०, XXVII, भाग III, पृ० 127)।

नवग्राम—वज्रहस्त तृतीय के गंजम ताम्रपत्रों में इसका वर्णन है, जिसे गंजम जिले के तेक्कलि तालुक में स्थित आधुनिक नौगाम से समीकृत किया जाता है (एपि० इं०, XXIII, भाग, II, अप्रैल, 1935, पृ० 62)।

नवखण्डवाड—1186 इं० के पिठापुरम अभिलेख के अनुसार यह गाँव पिठापुरम से लगभग 1½ मील दूर पर स्थित था और कुंतिमहादेव को समर्पित था (एपि० इं०, IV, पृ० 53)।

नवतुल या नवतुला—गुणार्णव के पुत्र देववर्मन के त्रिलिंग अभिलेख में कोरसोडक-पञ्चालिविषय में स्थित इस गाँव का उल्लेख है, जिसे परलकिमेड से दक्षिण-पश्चिम में लगभग 6 मील दूर पर स्थित नंतल नामक पल्ली से समीकृत किया जाता है। विशाखवर्मन के कोरशंडा और इन्द्रवर्मन के शिकाकोल अभिपत्रों में (इं० ऐ०, XIII, पृ० 122 और आगे) कोरसोद्रक पञ्चालि का वर्णन है, जिसे आधुनिक कोरशण्डगाँव से समीकृत किया जा सकता है, जो गंजम जिले में परलकिमेडि से 6 मील दक्षिण में स्थित है (इं० हि० क्वा०, XX, सं० 3)।

नयनपल्ली—यह गाँव गुंटूर जिले के बपतला तालुक में मोतुपल्ली से लगभग

तीन मील दूर पर स्थित है। यहाँ से गणपतिदेव का एक शिलालेख उपलब्ध हुआ था (एपि० इं०, XXVII, भाग, V, पृ० 193)।

नागार्जुनिकोण्ड—यह पहाड़ी आंध्र प्रदेश राज्य के गुंटुर जिले में पलनाड तालुक में है। यह कृष्णा नदी के दाहिने तट पर छायी हुयी है। नागार्जुन पहाड़ी जो एक बड़ी चट्टानी पहाड़ी है, मछेरला रेलवे स्टेशन से 16 मील दूर पश्चिम में स्थित है। इस उल्लेखनीय स्थल की खोज 1926 में की गयी थी। यहाँ से कई ईंटों के टीले और संगमरमर के स्तंभ उपलब्ध हुये थे। कुछ स्तंभों पर प्राकृत में और दूसरी-तीसरी शताब्दियों ई० में प्रचलित ब्राह्मी लिपि में अभिलेख उत्कीर्ण हैं। यहाँ से अनेक जीर्ण विहार, अर्द्धवृत्ताकार मंदिर, स्तूप, अभिलेख, मुद्राएँ, पुरानिधियाँ, मृद्भांडि, प्रतिमाएँ और अमरावती शैली में 400 से भी अधिक भव्य अध्युच्चित्र उपलब्ध हुये थे। नागार्जुनिकोण्ड से प्राप्त अभिलेखों से यह व्यक्त होता है कि विजयपुरी नामक प्राचीन नगर अवश्यमेव द्वितीय एवं तृतीय शताब्दी ई० में दक्षिण भारत का सबसे बड़ा और सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण बौद्ध संनिवेश रहा होगा। विहार, स्तूप एवं मंदिर बड़ी ईंटों के बने थे; ईंटें मिट्टी के गारे से चुनी गयीं थीं और दीवालों पर पलस्तर किया हुआ था। ईंटों की इन इमारतों पर गढ़ाई और अन्य अलंकरण सामान्यतः गचकारी के माध्यम से किये गये थे और इमारतें सिर से पैर तक चूने से पुती थीं। नागार्जुनिकोण्ड का हर वैहारिक अधिष्ठान स्वयं में पूर्ण था। विस्तृत अध्ययन के लिए द्रष्टव्य, ए० एच० लांगहर्स्ट कृत, द बुद्धिस्ट ऐंटिक्विटीज़ ऑव नागार्जुनिकोण्ड, मद्रास प्रेसिडेंसी (मे० आर्क० स० इं०, नं० 54)।

नान्दीकड—इसका वर्णन वाकाटक राजा विन्ध्यशक्ति द्वितीय के बसीम अभिपत्रों में किया गया है (एपि० इं०, XXVI, भाग, III, जुलाई, 1941)। इसे महाराष्ट्र (भूतपूर्व निजाम हैदराबाद), में नन्देद नाम के जिले के मुख्यावास नन्देद से समीकृत किया जाता है।

नागपटम् तालुक—वर्तमान तंजौर जिले में स्थित यह एक बंदरगाह है जो किसी समय बौद्ध प्रतिमाओं के लिये विख्यात था (सा० इं० इं०, जिल्द, II, पृ० 48)। यह कार्निक्काल के दक्षिण में लगभग 10 मील दूर पर स्थित था। टॉलेमी ने इसे एक महत्त्वपूर्ण नगर बतलाया है। यूरोपीय व्यापारियों एवं धर्म-प्रचारकों का ध्यान आकृष्ट होने के बहुत पहले ही यह व्यापार और बौद्ध धर्म समेत अनेक धर्मों का केंद्र बन चुका था (लाहा, ट्राइब्स इन ऐंश्येंट इंडिया, पृ० 186)।

नेल्लुर—यह आधुनिक नेल्लोर है, जो आंध्र प्रदेश राज्य (मू० पू० मद्रास प्रेसी-

(डेंसीमें स्थित इसी नाम के जिले का मुख्यावास है। इस जिले के उत्तरी भाग पर पर्वी चालुक्यों ने शासन किया था (सा० इं० इं०, II, 372)।

नेट्टुर—इसी नाम का एक गाँव इलैयंगुडी से पाँच मील पश्चिम में शिवगंगा (जमींदारी) में स्थित है (वही, III, पृ० 206)।

निडूर—यह गाँव तंजौर जिले के मायावरम तालुक में कावेरी के उत्तरी तट पर स्थित है (एपि० इं०, XVIII, पृ० 64)।

नील-गंगवरम्—यह गुंटुर जिले के विनुकोण्ड तालुक में है, जहाँ से एक अभिलेख प्राप्त हुआ था (एपि० इं०, XXV, भाग, VI, अप्रैल, 1940, पृ० 270)।

नीलकण्ठ-चतुर्वेदिमंगलम—इसे गांगेयनल्लूर भी कहा जाता है, जो उत्तरी अर्काट जिले के नेल्लोर तालुक में स्थित है। यह करैवरि-आंदिनाडु में स्थित एक गाँव है (सा० इं० इं०, I, पृ० 77-78)।

नीलाचल—यह पहाड़ी उत्कल के मध्य में स्थित है (स्कन्दपुराण, अध्याय, I, 12-13)।

नीलगुण्ड—यह गाँव मैसूर राज्य के बेलारी जिले में स्थित है, जहाँ से विक्रमादित्य षष्ठम के अभिपत्र उपलब्ध हुये थे (एपि० इं०, XII, 142 और आगे)।

नीवा—यह पालारु की एक सहायक नदी का नाम है (सा० इं० इं०, III, पृ० 88)।

नुतिमडुगु—यह गाँव अनंतपुर जिले में है, जहाँ से कुछ ताम्रपत्र प्राप्त हुये थे (एपि० इं०, XXV, भाग, IV, पृ० 186)।

ओड्डविषय—आधुनिक उड़ीसा ही उड्रों या ओड्रों का प्रदेश है (तेलुगु, ओध्रुलु, कन्नड ओड्डरु और युवान-च्वाङ् का उ-च)। बृहत्संहिता (XIV. 6) में इसे उड्र कहा गया है। योगिनीतंत्र (2.9.214 और आगे) में इसको ओड्र बतलाया गया है। महाभारत (वनपर्व, LI, 1988; भीष्मपर्व, IX. 365; द्रोणपर्व ,IV. 122) में उड्रों को उत्कलों, मेकलों, कलिंगों, पुण्ड्रों और आंध्रों से संबंधित बतलाया गया है। पालि-ग्रंथ अपदान (II, 358) में ओड्डकों का वर्णन है जो ओड्रा या उड्रा ही थे। ब्रह्मपुराण (28, 29, 42) के अनुसार ओड्र देश उत्तर में बिरजामण्डल (जाजपुर) तक फैला हुआ था और इसमें तीन क्षेत्र समाविष्ट थे, यथा पुरुषोत्तम या श्री क्षेत्र, सवितु या अर्कक्षेत्र तथा बिरजाक्षेत्र जिससे होकर वैतरणी नदी बहती थी। युवान-च्वाङ् जो इस देश में आया था, ने कर्णसुर्वण के दक्षिण-पश्चिम में लगभग 722 ली तक यात्रा की थी और तब वह वु-तु या ऊ-च देश पहुँचा था। तेरहवें वर्ष में लिखित राजा राजेन्द्र चोल के तिरुमलाई

शिलालेख में ओड्डविषय पर राजा राजेन्द्रचोल की विजय का उल्लेख है। नरेन्द्र भंजदेव के आदिपुर ताम्रपत्र के अनुसार (एपि० इं०; XXV, भाग, IV, पृ० 159) ओड्रविषय मूलतः एक छोटे जिले का वाचक था परंतु बाद में यह संज्ञा पूरे प्रांत को दे दी गयी थी। परिधि में यह देश 7000 ली से अधिक था। यह समृद्ध और संपन्न था, यद्यपि यहाँ की जलवायु गरम थी, यहाँ के निवासी विद्या-प्रेमी थे और उनमें से अधिकांश बौद्ध धर्म में विश्वास रखते थे। यहाँ पर अनेक संघाराम एवं कुछ देव मंदिर थे (बील, बुद्धिस्ट, रिकार्डस ऑव द वेस्टर्न वर्ल्ड, II, 204; तु० वाटर्स ऑन युवान च्वाङ्, II, पृ० 193-194)।

ओलांग—इस गाँव को देलंग से समीकृत किया जा सकता है, जो क्योंझर (भू० प० राज्य) की आनंदपुर तहसील में स्थित था (एपि० इं०, XXV, भाग, IV, पृ० 173)।

ओयमा-नाडु—इसे प्रकारांतर से विजयराजेन्द्रवलनाडु कहा जाता है जो जयकोण्डचोलमण्डलम नामक विषय (जिला) ही है। यह उस प्रदेश का एक क्षेत्र है जिसके अंतर्गत दक्षिण अर्काट जिले में स्थित तिण्डीवनम नामक आधुनिक कस्बा स्थित है (सा० इं० इं०, II, 425)।

पडुवूर-कोट्टम्—विजय-कंपविक्रमवर्मन के मेलपट्टि अभिलेख में इसका उल्लेख है, जो तोण्डैमण्डलम में स्थित था। मोटे तौर से इसमें उत्तरी अर्काट जिले के आधुनिक वेल्लोर और गुडियात्तम तालुक संमिलित थे (एपि० इं०, XXIII, भाग, II और IV, अक्टूबर, 1935, पृ० 147)।

पैठान—यह प्राचीन प्रतिष्ठान का आधुनिक नाम है, जो सातवाहन-नरेशों के शासन काल में एक समृद्धिशाली नगर था। यह महाराष्ट्र (भूतपूर्व हैदराबाद) के औरंगाबाद जिले में गोदावरी नदी के उत्तरी तट पर स्थित था। सुत्तनिपात (पा० टे० सो०, पृ० 190) में इस नगर को अस्सक या अश्मकदेश की राजधानी बतलाया गया है। यह पोटन ही है, जिसे पालि निकायों (दीघ निकाय, II, पृ० 235) में अस्सकों की राजधानी बतलाया गया है। यह राजा शातकर्णि (सात-वाहन या शालिवाहन) और उसके पुत्र शक्तिकुमार की भी राजधानी थी, जिन्हें साधारणतया नानाघाट अभिलेखों में वर्णित राजा शातकर्णि एवं राजकुमार शक्ति श्री से समीकृत किया गया है (कैंब्रिज हिस्ट्री ऑव इंडिया, भाग, I, पृ० 531)। जैन परंपराओं के अनुसार सातवाहन ने उज्जयिनी के विक्रमादित्य को पराजित किया था और प्रतिष्ठानपुर का राजा बना था। उसने दक्कन एवं ताप्ती नदी के मध्य के कई प्रदेश जीते थे। वह जैन मतावलंबी हो गया था और गोदावरी के तट पर उसने महालक्ष्मी की प्रतिमा अधिष्ठित की थी (लाहा, सम

जैन कैनॉनिकल सूत्राज़, पृ० 185)। अधिक विवरण के लिए, द्रष्टव्य बि० च० लाहा, इंडोलॉजिकल स्टडीज़, भाग, I, 46. देखिये प्रतिष्ठान)।

पलक्कड-स्थान—यहीं से सिंहवर्मन ने उरुवपल्ली दानपत्र प्रचलित किया था। कुछ विद्वानों ने इसे पलात्कट से समीकृत किया है। किंतु यह समीकरण संदिग्ध है। पलक्कड को गुंटुर-तालुक में स्थित आधुनिक पलकलुरु से समीकृत किया गया है। कुछ विद्वानों का विचार है कि नेल्लोर जिले के कंदुकूर तालुक में स्थित पलुकुरु प्राचीन पलक्कड या पलात्कट हो सकता है (एपि० इं०, XXIV, III, जुलाई, 1937)।

पलनी—यह मद्रास में स्थित मुरुग नामक पुण्य पहाड़ी है। विस्तृत विवरण के लिये द्रष्टव्य, जे० एम० सोमसुंदरम कृत पलनी, 1941.

पंपापति—आधुनिक भूगोलवेत्ता इसे हाम्पी कहते हैं, जो तुंगभद्रा नदी के दक्षिणी तट पर और विजयनगर के ध्वंसावशेषों के पश्चिमोत्तरी सिरे पर स्थित था जहाँ से कृष्णराय का एक अभिलेख भी उपलब्ध हुआ था (एपि० इं०, I, पृ० 351)।

पनमलाई—यह गाँव दक्षिण अर्काट जिले के विल्लुपुरम तालुक में स्थित था (सा० इं० इं०, I, पृ० 24)। पनमलाई गुहा की स्थापना राजसिंह ने की थी। राजसिंह के काल में पल्लवों ने सुदूर दक्षिण में पनमलाई तक शासन किया था।

पंचधार—यहाँ कामराज नामक एक चोड़ राजा ने गजपति से युद्ध किया था और उसे पराजित किया था (एपि० इं०, XXVI, भाग, I, तेलुगु चोड़ (अन्नदेव) के राजा मुंद्री-म्युज़ियम अभिपत्र)।

पंचधारल—यह विशाखापट्टनम जिले के येलमांचिलि तालुक मे स्थित है (एपि० इं०, XXV, भाग, VII, पृ० 335)।

पंचपाण्डवमलाई—(या पाँच पाण्डवों की पहाड़ी)—अर्काट शहर से लगभग चार मील दक्षिण-पश्चिम में पञ्चपाण्डवमलाई नामक एक चट्टानी पहाड़ी स्थित है, जो लोक-विश्वास के अनुसार पञ्चपाण्डवों से संबंधित है (एपि० इं०, IV, 136 और आगे)।

पन्मानाडु—यह दक्षिण अर्काट जिले में मनविरकोट्टम या मनयिरकोट्टम का एक प्रभाग है (सा० इं० इं०, I, पृ० 120, 147, 155)।

परिवैनाडु—अपने नाम के लिये यह परिविपुरी की बाण-राजधानी परिवल का ऋणी है, जिसे अनंतपुर जिले में परिगियाँ से समीकृत किया जा सकता है (वही, II, पृ० 425)।

परुविषय—यह पेनुकोण्ड अभिपत्रों में वर्णित परुवि-विषय ही है। इसे

परिगि से समीकृत किया जा सकता है, जो अनंतपुर जिले में हिंदुपुर से सात मील दूर उत्तर में है (एपि० इं०, XXIV, भाग, V, पृ० 238)।

पट्टेसम—यह गाँव गोदावरी में एक रमणीक द्वीप पर स्थित है और वर्तमान काल में यह राजामुंद्री तालुक में संमिलित है (एपि० इं०, XXVI, भाग, I, 40)। यह वीरभद्र के मंदिर के लिये विश्रुत है (वही, XXVI, भाग, I, 40)।

पयलिपट्टन—यह गाँव राष्ट्रकूट-राजधानी मान्यखेट या मलखेद की पश्चिमी सीमा पर स्थित है (एपि० इं०, XXIII, भाग, IV, अक्टूबर, 1935)।

पागुणारविषय—यह अम्मराज द्वितीय के वंदरम अभिपत्रों में वर्णित पावुनवारविषय ही है। ताण्डिवाड नामक गाँव पागुणारविषय में स्थित है, जिसमें कृष्णा जिले का आधुनिक तनुकु तालुक संमिलित प्रतीत होता है (एपि० इं०, XXIII, भाग, III, जुलाई, 1935, पृ० 97)।

पालक्क—इलाहाबाद स्तंभलेख में वर्णित इस राज्य को वि० स्मिथ ने पालघाट, या मलाबार के दक्षिण में स्थित पालक्काडु से समीकृत किया है।

पालारु—यह उत्तरी अर्काट जिले की पालार नामक प्रमुख नदी है (सा० इं० इं०, I, पृ 87, 88, 134, और 155) जो लघु काञ्ची के दक्षिण में प्रवाहित होती है।

पालार (पालेर)—इसे क्षीर नदी भी कहा जाता है। इस नदी का उद्गम नलगोण्डा के उत्तर में स्थित पहाड़ियों में है। यह कृष्णा में उस स्थल पर मिलती है, जहाँ पर यह मद्रास राज्य में प्रवेश करती है। यह उत्तरी अर्काट जिले से प्रवाहित होती है और चिंगलपुट जिले में सद्रस के निकट बंगाल की खाड़ी में गिरती है। वेल्लोर, अर्काट और चिंगलपुत इसके तट पर स्थित हैं।

पालुर—यह दंतपुर ही है जो कलिंग में स्थित एक नगर है।

पाञ्चपाली—इसे पञ्चुपाली से समीकृत किया जा सकता है, जो क्योंझर (भू० पू० रियासत) के आनंदपुर तहसील में स्थित है (एपि० इं०, XXV, भाग, IV, पृ० 173)।

पाण्ड्य—पाण्ड्य देश में जिसका उल्लेख पाणिनि ने अपनी अष्टाध्यायी (4.1.171) में किया था, मदुरा और तिरुनेलवेलि जिले संमिलित थे (सा० इं० इं०, I, पृ० 51, 59, 63)। टॉलेमी के अनुसार इसे पांडियोन (Pandion) कहा जाता था और इसकी राजधानी मोडूरा (Modoura) थी (मैक्रिंडिल, ऐंश्येंट इंडिया ऐज़ डिस्क्राइब्ड बॉई टॉलेमी, मजूमदार संस्करण, पृ० 183)। राजेन्द्र चोल ने इसे जीता था। प्रथम शती ई० में पाण्ड्य-राज्य में त्रावणकोर भी संमिलित था। मूलतः इसकी राजधानी तिरुनेलवेलि जिले में ताम्रपर्णी के

तट पर स्थित कोल्कई थी, किंतु कालांतर में इसकी राजधानी मदुरा (दक्षिण मथुरा) हो गयी थी। महाभारत एवं अनेक जातकों में पाण्डवों को इन्द्रप्रस्थ का शासक-वंश बतलाया गया है। कात्यायन ने अपने वार्तिक में पाण्ड्य को पाण्डु से व्युत्पन्न बतलाया है। रामायण (IV, अध्याय, 41) में पाण्ड्य देश का वर्णन है जहाँ सुग्रीव ने अपने वानर सैनिकों को सीता की खोज में भेजा था। महाभारत (सभापर्व, अध्याय, 31, V. 17) में बतलाया गया है कि कनिष्ठतम पाण्डु-राजकुमार सहदेव पाण्ड्यों के राजा को जीत कर के दक्षिणापथ की ओर गये। पुराणों में भी पाण्ड्यों का वर्णन है (मार्कण्डेय, अध्याय, 57, श्लोक, 45; वायु० 45, 124; मत्स्य, 112, 46)। अशोक के दूसरे एवं तेरहवें शिलालेखों में पाण्ड्यों का वर्णन है। उनका प्रदेश अशोक के साम्राज्य के बाहर था। पाण्डयों के साथ अशोक के संबंध मैत्रीपूर्ण थे। संभवतः पाण्ड्यों के दो राज्य थे, एक में दक्षिण में तिरुनेलवेलि जिले से लेकर उत्तर में कोयंबटूर-अंतराल के निकट तक के पठारी भाग और दूसरे में मैसूर राज्य संमिलित थे। स्ट्रेबो (XV. 4,73) ने किसी पांडियोन-नरेश (Pandion) द्वारा आगस्टस सीज़र के यहाँ भेजे गये राजदूत का वर्णन किया है, जो संभवतः तमिल देश का कोई पाण्ड्य रहा होगा। विस्तृत विरण के लिए द्रष्टव्य वि० च० लाहा, ट्राइब्स इन ऐंश्येंट इंडिया, पृ० 190 और आगे)।

जैन आख्यानों में पाण्डु-पुत्रों को दक्षिण के पाण्ड्य देश से संबंधित बतलाया गया है, जिसकीं राजधानी मथुरा या मधुरा (आधुनिक मदुराई) थी। डॉ० बार्नेट ने ठीक ही कहा है, 'कुछ भी हो पाण्ड्यजन पाण्डव नहीं थे और दोनों राजवंशों का जैन समीकरण संभवतः लोकविश्रत व्युत्पत्ति पर आधृत है। दोनों वंशों को संबंधित करने का इसी प्रकार का एक प्रयत्न टेलरकृत ओरियंटल हिस्टॉरिकल मैनुस्क्रिप्टस (जिल्द, I, पृ० 195 और आगे) में वर्णित एक तमिल इतिवृत्त में किया गया है। इसमें बतलाया गया है कि भारत-युद्ध के समय मदुरा पर बभ्रुबाहन का शासन था, जो मदुरा के पाड्य-नरेश की पुत्री से उत्पन्न अर्जुन का पुत्र था। दूसरी ओर, महाभारत में बभ्रुवाहन को मणिपुर-नरेश चित्रवाहन की पुत्री चित्रांगदा से उत्पन्न अर्जुन का पुत्र बतलाया गया है।

दक्षिण के पाण्ड्यों, मथुरा के शूरसेनों और उत्तरी भारत के पाण्ड्वों का संबंध संभवतः मेगस्थनीज़ के हैराक्लीज़ और पांडैइया विषयक संभ्रमित कथन में व्यक्त किया गया है (बि० च० लाहा, ट्राइब्स इन ऐश्येंट इंडिया, पृ० 190; रायचौधरी, पोलिटिकल हिस्ट्री ऑव ऐंश्येंट इंडिया, चतुर्थ संस्करण, पृ० 272; मैक्रिंडिल, ऐंश्येंट इंडिया, (मेगस्थनीज़ ऐण्ड एरियन), पृ० 163-164)। लंका

के पालि-इतिवृत्तों में पाण्ड्यों को अपरिहार्यतः पाण्डु या पण्डु बतलाया गया है (महावंश, अध्याय, VII, श्लोक, 50; दीपवंस, अध्याय, IV, श्लोक, 41)।

तमिल देश के पाण्डय और चोल संभागों का अंतर सुविज्ञात है। वीरपुरुषदत्त के नागार्जुनिकोण्ड अभिलेखों में वर्णित दमिल ही तमिल देश है। महावंस के अनुसार, विजय ने पाण्डु राजा की पुत्री से विवाह किया था जिसकी राजधानी दक्षिण भारत में मधुरा थी। मधुरा, मद्रास राज्य के दक्षिण में स्थित मदुरा है। इसकी एक अन्य राजधानी संभवतः कोल्कई थी। इसमें ताम्रपर्णी और कृतमाला या वैगाई नदियाँ बहती थीं।

पारद—कुछ विद्वानों के अनुसार पारदों का देश दक्कन में स्थित था किंतु पार्जिटर ने इसे पश्चिमोत्तर में स्थित बतलाया है (ऐंश्येंट इंडियन हिस्टॉरिकल ट्रेडिशन, पृ० 206, 268 और पा० टि०)। पारद लोग एक बर्बर कबीले प्रतीत होते हैं (महाभारत, सभापर्व, L, 1832; LI, 1869; द्रोणपर्व, CXXI, 4819)। हरिवंश (XIII. 763-4) के अनुसार राजा सगर ने उनका निरादर किया था। विस्तृत विवरण के लिये द्रष्टव्य बि० च० लाहा, ट्राइब्स इन ऐंश्येंट, इंडिया, पृ० 364, 65; बि० च० लाहा, इंडोलॉजिकल स्टडीज़, भाग, I, पृ० 48)।

पारिकुड—यह पुरी जिले में है। यहाँ से मध्यमराजदेव के अभिपत्र उपलब्ध हुये थे (एपि० इं०, XI. 281 और आगे)।

पेडकोम्डपुरी—कामराज नामक एक चोलनरेश ने डबुरुखानु और अन्य लोगों को उनकी राक्षस-सेना के साथ इसके निकट पराजित किया था (एपि० इं०, XXVI, भाग, I)।

पेद्द-मद्दलि—यह कित्स्ना जिले के नुजविद तालुक में स्थित एक गाँव है, जहाँ से कई अभिलेख प्राप्त हुये थे (इंडियन ऐंटक्वेरी, XIII. 137)।

पेद्द-वेगी—इस गाँव को एल्लोर के अंचल में स्थित प्राचीन वेंगीपुर से समीकृत किया जाता है, जहाँ से अनेक अभिपत्र उपलब्ध हुये थे (एपि० इं०, XIX, 258)।

पेन्नर—उत्तरी पेन्नर नदी आंध्र राज्य के अनंतपुर जिले में पमिडि तक उत्तर-उत्तरपूर्वाभिमुख दिशा में प्रवाहित होती है और यहाँ से यह दक्षिण-पूर्व की ओर मुड़कर बंगाल की खाड़ी में पहुँचती है। दक्षिण पेन्नर जिसे पोन्नैय्यार भी कहा जाता है, बंगाल की खाड़ी में गिरती है।

पेरंबैर—यह गाँव चिंगलपुत जिले में स्थित है। यहाँ अनेक प्रागैतिहासिक अवशेष (आर्क० स० इं०, एनुअल रिपोर्ट, 1908-9, पृ० 92 और आगे)।

पेरवली—इसे पेरवली नामक गाँव से समीकृत किया जाता है, जहाँ से एक अभिलेख उपलब्ध हुआ था (एनुअल रिपोर्ट ऑव साउथ इंडियन एपिग्रॉफी, 1915, पृ० 90)।

पेरुमुगाई—वेलूर के निकट स्थित यह आधुनिक पेरुमाई है (सा० इं० इं०, I, पृ० 75)। यह उत्तरी अर्काट जिले के आधुनिक वेल्लोर तालुक में है।

पेरुनगर—वांडीवाश जाने वाली सड़क पर कांजीवरम से लगभग 13 मील दूर पर स्थित यह एक गाँव है (एपि० इं०, XXIII, भाग, IV, अक्टूबर, 1935, पृ० 146)।

पेरुंगरी—टॉलेमी ने इसे पेरिंगकरेई कहा है। यह मदुरा से लगभग 40 मील और आगे वैगाई नदी के तट पर स्थित है (मैक्रिंडिल, टॉलेमी कृत ऐंश्येंट इंडिया, एस० एम० मजूमदार का संस्करण, पृ० 183)।

फेरव—कुछ विद्वानों के अनुसार यह गाँव सोमपेत तालुक में स्थित आधुनिक बरना है। किंतु यह संदिग्ध है(एपि० इं०, XXVII, भाग, III पृ० 113)।

फुलसर—यह गंजम जिले के अठगड तालुक में स्थित एक गाँव है। यहाँ से एक अभिलेख उपलब्ध हुआ था (एपि० इं०, XXIV, भाग, I, जनवरी, 1937, पृ० 15)।

पिण्णि—यह एक नदी का नाम है,जिसे पेण्णई भी कहते हैं, जो दक्षिण अर्काट ज़िले से होकर बहती है (एपि० इं०, XXIV, भाग, V)।

पिप्पलाल—चंदनपुरी से 12 मील दक्षिण पूर्व में और एलोरा से लगभग 33 मील दूर पर स्थित यह आधुनिक पिपराल है (एपि० इं०, XXV, भाग, I, जनवरी, 1939, पृ० 29)।

पिरानमलाई—यह रामनाड जिले में है। यहाँ पर मंगईनाथेश्वर मंदिर है (एपि० इं०, XXI, भाग, III, जुलाई, 1931)।

पिसाजिपदक—(पिशाचिपद्रक) यह ल्युडर्स की तालिका के 1123 वें अभिलेख में वर्णित है। यह तिराण्हु पर्वत (त्रिरश्मि) के पश्चिम की ओर है।

पीठपुरी—पूर्वी गोदावरी जिले में यह पीठापुरम नामक एक पुण्य स्थल ही है, जहाँ पर किसी राजा का निवास-स्थान था (सा० इं० इं०, I, पृ० 53, 61; एपि० इं०, XII, पृ० 2)। पृथ्वी महाराज के ताण्डिवर्वाड-दानपत्र में पिष्टपुर का उल्लेख है, जो पीठापुरम का प्राचीन नाम है (एपि० इं०, XXIII, भाग III, जुलाई, 1935, पृ० 97)। पिष्टपुर राजा गुणवर्मन के शासनकाल में देवराष्ट्र नामक राज्य का अंग था (एपि० इं०, XXIII, 57)। पिठापुरम गोदावरी

ज़िले में एक प्रांतीय कस्बा है। यहाँ पर कुंति माधव नामक एक वैष्णव मंदिर स्थित है। इस मंदिर के पूर्वी प्रवेशद्वार पर मंदिर के सामने ही एक चतुःष्कोणीय पाषाण-स्तंभ स्थित है, जिस पर विभिन्न तिथियों में कालांकित चार अभिलेख उत्कीर्ण हैं। यहाँ के राजा एक ऐसे राजवंश के थे जिसे हुल्ट्श ने 'वेलनाण्डु का प्रमुख' कहा है। वेलनाण्डु के प्रमुखगण अपनी उत्पत्ति शूद्र-जाति से बताते हैं। पृथ्वीश्वर के मल्ल प्रथम नामक एक दूरस्थ पूर्वज ने गंगों, कलिंगों, वंगों, मगधों आध्रों, और पुलिन्दों आदि के राजाओं को पराजित किया था (एपि० इं०, IV, 32 और आगे)।

पिथुण्ड—खारवेल के हाथीगुम्फा अभिलेख में पिथुडग या पिथुड नामक एक स्थान का वर्णन है, जिसकी स्थापना कलिंग के प्राचीन राजाओं ने की थी। पिथुड पिथुडग का लघुरूप है, जो संस्कृत शब्द पृथुदक का समानार्थक है, पद्मपुराण के अनुसार जो एक तीर्थस्थान है (अध्याय, 13, तीर्थ माहात्म्य)। गण्डव्यूह में पृथुराष्ट्र का वर्णन है, जो टॉलेमी द्वारा उसकी ज्यॉग्रेफी में वर्णित पितुन्द्र से भिन्न नहीं है। सिलवाँ लेवी ने बतलाया है कि जैन ग्रंथ उत्तराध्ययनसूत्र में (खंड, XXI) पिथुण्ड (पिहुण्ड) को समुद्रतटवर्ती एक नगर कहा गया है, जो हमें खारवेल के पिथुड (पिथुडग) और टॉलेमी के पितुन्द्र का स्मरण दिलाता है। टॉलेमी ने पितुन्द्र को मैसोलिया (Maisolia) के अंतर्भाग में, मैसोलोस और मानदस नामक दो नदियों के मुहाने के बीच के प्रदेश में स्थित बतलाया है, जो गोदावरी और महानदी का डेल्टा है और जो दोनों से ही समान दूरी पर स्थित है (मैक्रिंडिल, ऐंश्येंट इंडिया ऐज़ डिस्क्राइब्ड बाई टॉलेमी, पृ० 68, 185, और 386—387)। इसे कलिंगपाटम के शिकाकोल के अन्तर्भाग में नागावती, जिसे लांगुलीय भी कहा जाता है, के प्रवाह की ओर स्थित किया जा सकता है। बताया जाता है कि खारवेल ने पिथुड या पिथुडग को पुनः बसाया था। पिथुण्ड को गधे से जोता गया था अथवा कुछ लोगों के अनुसार इसका भूमि-उद्धरण किया गया था।

पोदियिल—यह तिरुनेलवेलि जिले में स्थित एक पहाड़ी है। इसे दक्षिण पर्वत भी कहा गया है। इसे अगस्त्य का आवास बतलाया जाता है (सा० इं० इं०, III, 144, 464)।

पोलियूर-नाडु—इसे आधुनिक पोलुर गाँव से समीकृत किया जा सकता है, जो अर्कोनम जंक्शन से उत्तर उत्तर-पश्चिम में तीन मील दूर स्थित है (एपि० इं०, VII, पृ० 25)।

पोन्नि—यह कावेरी ही है (सा० इं० इं०, I, पृ० 94-95)।

पोन्नुटुरु—यह गाँव वंशधरा नदी के उत्तरी तट पर, विजगापट्टम जिले में पातपटनम तालुक के पर्लकिमेडि (संप्रति उड़ीसा के गंजम जिले में भू० पू० राज्य) में सोमराजपुरम से कोई एक मील दूर पर स्थित है। यहाँ से 64 वें वर्ष में उत्कीर्ण गंग सामंतवर्मन के दानपत्रों का एक कुलक प्राप्त हुआ था (एपि० इं०, XXVII, भाग, V, 216)।

पोत्तपि—यह चेय्येरु नदी के पश्चिमी तट पर और कुड्डापा जिले के राजमपेत तालुक में तंगटुरु के उत्तर में स्थित है (एपि० इं०, VII, पृ० 121, टिप्पणी, 5)।

प्रश्रवनगिरि—औरंगाबाद की पहाड़ियाँ गोदावरी के तट पर स्थित थीं जिनका चित्रमय वर्णन भवभूति के उत्तररामचरित (अंक, III. 8) में हुआ है। इस पहाड़ी में अनेक सरिताएँ और गुफाएँ थीं (उत्तररामचरित, अंक, III, 8)। हेमकोष के अनुसार माल्यवनगिरि प्रश्रवनगिरि ही है जो जनस्थान तक फैला हुआ है (उत्तररामचरितम, अंक, I, 26)। किंतु भवभूति के अनुसार वे दो भिन्न पहाड़ियाँ हैं, (उत्तररामचरितम, अंक, I)।

प्रतिष्ठान—महाराष्ट्र के औरंगाबाद जिले में गोदावरी के उत्तरी तट पर स्थित प्रतिष्ठान (आधुनिक पैठान) को साहित्य में शातकर्णि (सातवाहन या शालिवाहन) और उसके पुत्र शक्ति कुमार, जिन्हें साधारणतया नानाघाट अभिलेखों में वर्णित राजा शातकर्णि और राजकुमार शक्तिश्री से समीकृत किया गया है, की राजधानी बतलाया गया है। महाराष्ट्र में गोदावरी-तट पर स्थित पैठान या प्राचीन प्रतिष्ठान या सुप्रतिष्ठाहार या सुप्रतिष्ठित वह स्थान था, जहाँ से गोविन्द तृतीय के तीन अभिपत्र (शकसंवत्, 716 में उत्कीर्ण) उपलब्ध हुये थे (एपि० इं०, III, 103)। प्रतिष्ठान का उल्लेख वाकाटक रानी प्रभावतीगुप्ता के पूना अभिपत्रों में भी हुआ है (एपि० इं०, XV. 39)। अशोक के पाँचवें और तेरहवें अभिलेखों में वर्णित पेतेनिक लोगों को गोदावरी-तट-निवासी पैठानिक या पैठान के निवासियों से समीकृत किया गया है। पैठान प्राचीन प्रतिष्ठान का आधुनिक नाम है, जो सातवाहन-नरेशों के शासनकाल में एक समृद्धिशाली नगर था। कुछ विद्वानों का अनुमान है कि वे पैठान के सातवाहन राजाओं के पूर्वज थे (ज० रा० ए० सो०, 1923, 92; वुलनर, अशोक, पृ० 113)। पेरिप्लस के लेखक के अनुसार पैठान, बैरीगाजा (जिसे भरुकच्छ, आधुनिक भड़ौच से समीकृत किया जाता

---

[1] **तु० पद्मपराण, अध्याय, 176, श्लोक, 20. प्रतिष्ठान में विक्रम नामक एक राजा था।**

है) के दक्षिण में 20 दिनों की यात्रा की दूरी पर स्थित था। इसे दक्षिणापथ का सबसे बड़ा नगर बतलाया गया था। सातवाहन ने उज्जयिनी के विक्रमादित्य को पराजित किया था और स्वयं प्रतिष्ठानपुर का राजा बन गया था। उसने दक्कन और ताप्ती नदी के बीच के अनेक प्रदेशों पर विजय प्राप्त की थी। उसने जैन धर्म अंगीकार किया था; अनेक चैत्यों का निर्माण किया था और गोदावरी के तट पर महालक्ष्मी की प्रतिमा स्थापित की थी (बि० च० लाहा, सम जैन कैनानिकल सूत्राज, पृ० 185)। जैन विविधतीर्थकल्प के अनुसार (पृ० 59-60) महाराष्ट्र में स्थित यह नगर कालान्तर में एक महत्त्वहीन गाँव बन गया था।

पुदुप्पाक्कम—यह उत्तरी अर्काट जिले के वल्जपेत तालुक में स्थित है (कोप्परुंजिंगदेव का वैलूर अभिलेख, एपि० इं०, XXIII, भाग, V)।

पुगर—तंजौर जिले में स्थित यह आधुनिक कावीरिपट्टिनम है (एपि० इं०, XXIII, भाग, V, पृ० 180)।

पुलिवकुनरम्—कुक्कानुर के उत्तर में और पालैनेल्लूर के दक्षिण में नुगा नदी के पश्चिम में स्थित यह एक गाँव है (सा० इं० इं०, जिल्द, III, पृ० 25)। पेरुंजिगाई ईश्वर मंदिर को उपहार स्वरूप एक गाँव दिया गया था।

पुलिनाडु—राजराज प्रथम के 36 वें वर्ष के एक आलेख में इसे त्यागभरण वलनाडु में स्थित बतलाया गया है। कुछ विद्वानों के अनुसार वीरराजेन्द्र नामक एक परवर्ती नरेश के चौथे वर्ष के आलेख में इसे जयंगोण्डशोलमण्डलम के पडुवुर-कोट्टम से संमिलित बतलाया गया है। मैसूर राज्य के समीप स्थित यह पड़ुवुर-कोट्टम का सबसे पश्चिमी भाग था। इस में संपूर्ण आधुनिक पुंगनुर तालुक और दक्षिण में निकटवर्ती पालमनेर तालुक का वह भाग संमिलित था, जो देवरकोण्ड और कावेरी पर्वतमाला के उत्तर में स्थित था।

पुलिनाडु, पूर्व और दक्षिण-पूर्व में तोण्डईमण्डलम् प्रखंडों से, उत्तर में महाराजवाडि-देश तथा रत्तपडिकोण्डशोलमण्डलम् से, पश्चिम में, गंगरुससिरं नाम से विश्रुत गंग देश से और दक्षिण तथा दक्षिण-पश्चिम में निगरिशोलमण्डलम से परिवृत था (इंडियन ज्यॉग्रेफिकल जर्नल, भाग, XXV, सं०, 2, पृ० 14-18)।

पुलिंदराजराष्ट्र—महाराज हस्तिन् के नवग्राम दानपत्र में इसका उल्लेख है, जिससे यह स्पष्ट है कि पुलिन्दों के मुखिया का राज्य नृपतिपरिव्राजक-कुल के क्षेत्र में ही स्थित था (एपि० इं०, XXI, भाग, III)। अशोक के तेरहवें शिलालेख में पुलिन्दों का उल्लेख एक करद कबीले के रूप में किया गया है। ऐतरेय ब्राह्मण (III. 18) में आंध्रों के साथ पुलिंदों का वर्णन मिलता है। पुराणों

(मत्स्य, 114, 46-48, वायु० 45, 126) में इनका वर्णन शबरों के साथ किया गया है और इन्हें वैदर्भों एवं दण्डकों के साथ 'दक्षिणापथवासिनः' कहा गया है। महाभारत (XII. 207, 42) में उनको दक्षिणापथ का जन कहा गया है। पुलिन्दों की राजधानी पुलिन्दनगर मध्यप्रदेश में जबलपुर जिले में भिलसा के समीप थी। पुलिन्दों के क्षेत्र में निश्चय ही रूपनाथ संमिलित था, जहाँ से अशोक के लघु-शिलालेखों का एक पाठ प्राप्त हुआ था।

पुल्लमंगलम—यह पुल्लमंगाई है, जो तंजौर से लगभग नौ मील दक्षिण में पशुपतिकोयिल के समीप एक गाँव है (राजकेशरीवर्मन् का उदयार-गुडी अभिलेख, सा० इं० इं०, जिल्द, III, पृ० 450)।

पूनक (पुण्य)—राष्ट्रकूट-नरेश कृष्ण प्रथम के दो ताम्रपत्रों के अनुसार पूनक या पुण्य आधुनिक पूना का प्राचीन नाम था आठवीं शती ई० के उत्तरार्ध में पूनक एक जिले (विषय) का मुख्यावास था और यह हवेली तालुक का वाचक था। पहले सोलहवीं शताब्दी ई० में पूना शहर को पूर्ण-नगर कहते थे, जहाँ अपने दल के साथ श्री चैतन्य गये थे जैसा कि गोविन्ददास कडचा में कहा गया है (ज० बां० ब्रां० रा० ए० सो०, न्यु० सप्ली०, जिल्द, VI, 1930, पृ० 231 और आगे)।

पुरंदर—पद्मपुराण के अनुसार यह कस्बा दक्षिण में है (अध्याय, 176, श्लोक, 2)।

पुरी (पुरुषोत्तम-क्षेत्र)—यह उड़ीसा के पुरी जिले में है। ब्रह्मपुराण के अनुसार (42, 13-14) यह पवित्र नगर समुद्रतट पर स्थित है। योगिनीतंत्र में इसे पुरुषोत्तम (2. 9, 2. 4 और आगे) कहा गया है। कालिकापुराण (अध्याय, 58, 35) में भी इसे इसी नाम (पुरुषोत्तम) से संबोधित किया गया है। यह रेतीला और दस योजन विस्तृत है तथा यहाँ प्रसिद्ध देवता पुरुषोत्तम का आवास है। इसमें दो स्पष्ट भाग संमिलित हैं। बालुखंड, स्वर्गद्वार और चक्रतीर्थ नामक दो पुण्यतीर्थों के बीच में स्थित है। यह जगन्नाथ के हिंदू मंदिर के लिए प्रसिद्ध है और ठीक बंगाल की खाड़ी के समुद्रतट पर स्थित है। प्रकारांतर से इसे श्रीक्षेत्र भी कहा जाता है, जो हिंदुओं का एक अत्यंत पुण्य क्षेत्र है। इसे पुरुषोत्तमक्षेत्र भी कहा जाता है। यह पश्चिम में लोकनाथ मंदिर से पूर्व में बालेश्वर मंदिर तक, दक्षिण में स्वर्गद्वार से पूर्वोत्तर में मटिया नदी तक फैला हुआ है। इसका आकार शंख के समान है, जिसके केंद्र में जगन्नाथ मंदिर स्थित है। स्थापत्य की दृष्टि से यह मंदिर उतना महत्त्वपूर्ण नहीं है जितना कि भुवनेश्वर का। मुख्य मंदिर के अतिरिक्त, यहाँ पर अनेक लघुमंदिर यथा मार्कण्डेश्वर, लोकनाथ, नील-

कण्ठेश्वर और कुछ अन्य तालाब हैं। बड़े मन्दिर से लगभग दो मील दूर पर गुण्डिकाबारी स्थित है (विस्तृत विवरण के लिये देखिए ओ, 'मैल्ली कृत, बिहार ऐंड उड़ीसा डिस्ट्रिक्ट गज़ेटियर्स, पुरी, 1929, पृ० 326 और आगे; जैरेट द्वारा अनूदित आइन-ए-अकबरी, II, 127; स्टर्लिंग, उड़ीसा, 1824)।

पुरिका—यह एक नगर का नाम है (बरुआ ऐंड सिन्हा, भरहुत इंस्क्रिप्शंस, पृ० 17, 21) और यह महाभारत में वर्णित पुलिका, खिलहरिवंश में वर्णित पुरिका और पुराणों में उल्लिखित पौलिक पौरिक और सौलिक ही है। पुराणों में इसे दक्कन के देशों की सूची में समाविष्ट किया गया है। खिल-हरिवंश में (XCV, 5220-28) पुरिका शहर को विन्ध्य की दो पर्वतमालाओं के बीच में, माहिष्मती के समीप और ऋक्षवन्त पर्वत से निकलने वाली एक नदी के तट पर स्थित बतलाया गया है (तु० विष्णुपुराण, XXXVIII, 20-22)।

पुरुषोत्तमपुरी—रामचन्द्र के पुरुषोत्तमपुरी अभिपत्रों में (एपि० इं०, XXV, भाग, V, पृ० 208) पुरुषोत्तमपुरी को भीर जिले में गोदावरी नदी के दक्षिणीतट पर स्थित बतलाया गया है।

पुश्करी—यह जैपुर (उड़ीसा में भू० पू० रियासत) के पोडागढ़ क्षेत्र में स्थित है जो अब उड़ीसा के कोरापुत जिले में स्थित है (एपि० इं०, XXVIII, भाग, I, जनवरी, 1949)।

पुष्पगिरि—यह कुडापा के उत्तर में आठ मील दूर पर स्थित है (एपि० इं०, III, 24)।

पुष्पजाति (पुष्पजा या पुष्पवती)—इस नदी का वर्णन वायुपुराण में हुआ है (XLV. 105; तु०, कूर्मपुराण, XLVII, 25)। यह मलय पर्वत से निकलती है।

रण्डुवल्ली—किसी ब्राह्मण को प्रदत्त, गुद्रहारविषय में स्थित यह एक गाँव है। यहाँ से एक अभिलेख उपलब्ध हुआ था (एनुअल रिपोर्ट ऑव साउथ इंडियन एपिग्रेफी, 1914, पृ० 85)।

रत्नगिरि—गोपालपुर के पूर्वोत्तर में चार मील की दूरी पर स्थित एशिया पर्वतमाला की यह एक अलग पहाड़ी है, जो बिरूप की एक शाखा, केलुआ नामक छोटी नदी के तट पर स्थित है। यह पहाड़ी वस्तुतः केलुआ के पूर्वीतट पर स्थित है और इसका शिखर चपटा है। यहाँ पर एक बड़े स्तूप के भग्नावशेष हैं। विस्तृत विवरण के लिए द्रष्टव्य रा० प्र० चंद, एक्सप्लोरेशन इन उड़ीसा, मे० आर्क० स० इं०, सं० 44, पृ० 12-13)।

रट्टपाडि कोण्ड-शोलमण्डलम्—यह चित्तूर जिले में पुंगनूर का समीपवर्ती

क्षेत्र और मैसूर राज्य के चिन्तामणि तालुक का निकवर्ती इलाका है (एपि० इं०, XXV, भाग, VI, अप्रैल, 1940, पृ० 254)।

रागोलु—यह आंध्र प्रदेश में शिकाकोल के समीप है (एपि० इं०, XII, पृ० 1)।

राजगंभीर पहाड़ी—इसे राजगंभीरन-मलाई भी कहा जाता है। संभवतः इसका नामकरण राजगंभीर संबुरायन के आधार पर हुआ था (सा० इं० इं०, I, पृ० 111)। यह उत्तरी अर्काट जिले में है।

राकलुव—इस गाँव को आंध्र प्रदेश में शिकाकोल के निकट रगोलु से समीकृत किया जा सकता है, जहाँ से शक्तिवर्मन् के अभिपत्र उपलब्ध हुये थे (एपि० इं०, XII और आगे)।

रामपरकटि—इसे जोशीपुर परगना कियापिर में स्थित रामसहि नामक गाँव से समीकृत किया जा सकता है (एपि० इं०, XXV, भाग, IV, पृ० 158)।

रामतीर्थ—विज़गापट्टम ज़िले में स्थित यह एक गाँव है, जहाँ पर एक पहाड़ी की गुफ़ा की दीवाल पर उत्कीर्ण विष्णुवर्धन महाराज का एक अभिलेख प्राप्त हुआ था (एनुअल रिपोर्ट ऑव द साउथ इंडियन एपिग्रॉफी, 1918, पृ० 133)।

रामेश्वरम्—बंगाल की खाड़ी में स्थित यह एक पवित्र द्वीप है। यहाँ का रामनाथस्वामी मंदिर सुविख्यात है। अनुश्रुतियों के अनुसार इसे रामचन्द्र ने बनवाया था, जब वह लंका के अत्याचारी राज्य रावण के चंगुल में बंदिनी अपनी पत्नी सीता को छुड़ाने के लिए यहाँ से लंका गये थे। यह द्रविड़ स्थापत्य का एक सुंदर नमूना है, जिसमें बड़े बुर्ज, नक्काशी हुयी दीवालें और विस्तीर्ण गलियारे हैं। मंदिर चारों ओर से एक ऊँची प्राचीर से परिवेष्टित है, जो लगभग 900 वर्ग फीट जगह घेरे हुए है। गढ़े हुये पत्थरों से निर्मित इसमें अनेक गोपुरम् हैं। मंदिर के भीतर तालाब हैं। मंदिर में एक शिवलिंग और अन्नपूर्णा, पार्वती तथा हनुमान की मूर्तियाँ हैं (बि० च० लाहा, होली प्लेसेज़ इन साउथ इंडिया, कलकत्ता ज्यॉग्रेफिकल रिव्यू, सितंबर, 1942)।

रानी-झरियाल—यह गाँव उड़ीसा में पटना (पहले रियासत) में तिटीलगढ़ के पश्चिम में 21 मील दूर पर स्थित है (एपि० इं०, XXIV, भाग, V, पृ० 239)।

राष्ट्रकूट-प्रदेश—पहले आठवीं शताब्दी ई० तक इसमें कम से कम औरंगाबाद ज़िला तथा नासिक एवं खानदेश के कुछ भाग संमिलित थे (एपि० इं०; XXV, भाग, I, जनवरी, 1939)।

रेनाण्डु—मोटे तौर से यह देश पेन्नार नदी की दो सहायक नदियों यथा, पश्चिमोत्तर में चित्रावती और दक्षिण-पश्चिम में चेय्येरु के बीच में स्थित है। इसमें कुड्डापा का अधिकांश भाग तथा कोलार एवं चित्तूर जिले के हिस्से समाविष्ट है (एपि० इं०, XXVII, भाग, V, पृ० 225)।

रोहण—यह लंका में आदम की चोटी है (सा० इं० इं०, I, पृ० 164)।

रोहणकि—हस्तिवर्मन् के नरसिंहपल्ली-अभिपत्रों में इसका वर्णन प्राप्य है, जिसे आधुनिक रोणंकी से समीकृत किया जा सकता है (एपि० इं०, XXIII, भाग, II)।

ऋष्यमुख—यह पर्वत तुंगभद्रा नदी के तट पर स्थित अनगंडी से 8 मील दूर है। इस पर्वत से पंपा नदी निकलती है और पश्चिम की ओर बहती हुयी यह तुंगभद्रा में मिल जाती है। इसी पर्वत पर हनुमान और सुग्रीव रामचन्द्र से पहली बार मिले थे (रामायण, अध्याय, IV, किष्किन्ध्याकाण्ड)। मार्कण्डेयपुराण में (पार्जिटरद्वारा अनूदित, सर्ग, LVII, 13) ऋष्यमुख का उल्लेख है, जिसे पार्जिटर ने उस पर्वत माला से समीकृत किया है जो अहमदनगर के आगे मंजीरा एवं भीमा नदियों को काटती हुयी नलद्रुग और कल्याणी तक फैली हुयी थी (ज० रा० ए० सो०, अप्रैल, 1894, पृ० 253)। बृहत्संहिता में इसे दक्षिण का एक पर्वत बतलाया गया है (XIV. 13)।

रुद्रगया—पद्मपुराण के अनुसार (186. 1) यह दक्षिणापथ में कोलपुर है।

सगर—यहीं पर चोल-राजा अन्नदेव ने कर्णाट सेना पर विजय प्राप्त की थी (एपि० इं०, XXVI, भाग, I)।

सह्याद्रि—यह पश्चिमी घाट पर स्थित एक पहाड़ है (सा० इं० इं०, I, 168-169)। प्राचीन लोग पश्चिमी घाट को सह्याद्रि कहते थे। यह दक्कन की पश्चिमी सीमा है। महाराष्ट्र के खानदेश जिले में स्थित कुण्डैबारी दर्रे से भारत के दक्षिणतम विंदु कन्याकुमारी तक निरंतर लगभग 1000 मील तक फैला हुआ है। पश्चिमी घाट के विभिन्न स्थानीय नाम हैं। इसमें कुछ महत्त्वपूर्ण दर्रे भी हैं। विस्तृत विवरण के लिये द्रष्टव्य, बि० च० लाहा, माउंटेंस ऑव इंडिया, कलकत्ता, ज्यॉग्रेफिकल सोसायटी पब्लिकेशन, सं० 5, पृ०, 22–23)।

शैयम—यह सह्य पर्वत का तमिल और पश्चिमी घाट का संस्कृत नाम है (सा० इं० इं०, III, पृ० 147)।

सलेम—यह दक्षिण भारत का एक सुप्रसिद्ध जिला है, जहाँ से छब्बीसवें वर्ष में उत्कीर्ण राजराज का एक अभिलेख प्राप्त हुआ था (इंस्क्रिप्शंस ऑव द मद्रास प्रेसीडेंसी, 73)।

समलिपद–(ल्युडर्स तालिका, 1134)—गोदावरी क्षेत्र के गोवर्धन विषय (जिले) में पूर्वी सड़क पर स्थित यह एक गाँव है (गोवर्धन, ल्युडर्स की तालिका, 1124-1126, 1133 आदि)।

संगुकोट्टम–समुद्र-तट पर स्थित यह एक देश (?) का नाम है (सा० इं० इं०, जिल्द, I, पृ० 99)।

संगूर—संगवूरु, चंगूर और चंगापुर जैसे विविध नामों से विश्रुत संगूर उत्तरी कनाड़ा (कारवार) जिले में सिरसी जाने वाली सड़क पर हवेरी ताल्लुक के दक्षिण-पश्चिम में आठ मील की दूरी पर स्थित एक गाँव है। यहाँ से वीरभद्र मंदिर के निकट स्थित नंदिस्तंभ पर उत्कीर्ण एक अभिलेख उपलब्ध हुआ था (एपि० इं०, XXIII, भाग, IIV पृ० 189)।

संकरम—यह विज़गापट्टम जिले में जनकपल्ली के समीप है। 1907-08 में इस स्थान पर किये गये पुरातत्वीय अन्वेषणों के लिए द्रष्टव्य ज० रा० ए० सो०, 1908, पृ० 1112 और आगे)।

शरपद्रक—करंजिया परगने में स्थित सरदह गाँव शरपद्रक का आधुनिक प्रतिनिधि हो सकता है (एपि० इं०, XXV, भाग, IV, पृ० 158)।

सरस्वती—यह एक नदी का नाम है (सा० इं० इं०, भाग, I, पृ० 57)।

सरेफा—भानुदत्त के बलसोर अभिपत्र में इसका उल्लेख है, जिसे हम उड़ीसा के बलसोर जिले में स्थित सोरो से समीकृत कर सकते हैं (एपि० इं०, XXVI, भाग, V, जनवरी, 1942)।

सतियपुत्र—अशोक के दूसरे एवं तेरहवें शिलालेखों में इसका उल्लेख है। ये चोलों एवं पाण्डयों के प्रदेश के पश्चिम में रहते थे और दक्षिण भारत के पश्चिमी समुद्र-तट पर फैले हुये थे (बरुआ, अशोक ऐंड हिज़ इंस्क्रिप्शंस, पृ० 111)। कुछ लोगों ने इसे सत्यव्रतक्षेत्र या काञ्चीपुर से समीकृत किया है (ज० रा० ए० सो०, 1918, 541-42)। सतियपुत्र को सतपुते से समीकृत करने में आयंगर रा० गो० भंडारकर से सहमत हैं। उनके अनुसार सतियपुत्र, मलाबार के तुलु एवं नायरों जैसे विविध मातृप्रधान समुदायों को द्योतित करने वाला एक समूह-वाचक नाम है (ज० रा० ए० सो०, 1919, 581-84)। विंसेंट स्मिथ ने इसे पश्चिमी घाट और मैसूर, मलाबार, कोयंबटूर तथा कुर्ग के सीमांत पर स्थित कोयंबटूर जिले के सत्यमंगलम ताल्लुक या तहसील से समीकृत किया है (अशोक, तृतीय संस्करण, पृ० 161)। कुछ विद्वानों के अनुसार सतियपुत्र केरलोपट्टी की सत्यभूमि ही है, जो स्थूलरूप से दक्षिण कनाडा (मंगलोर) के कसेरगोड के एक भाग सहित उत्तरी मलाबार के बराबर है (ज० रा० ए० सो०, 1923, 412)।

बार्नेट और जायसवाल के अनुसार सतियपुत्र से ही सातवाहन एवं शातकर्णि नाम व्युत्पन्न हैं (तु० रायचौधरी, पो० हि० एं० इं०, चतुर्थ संस्करण, पृ० 343, टिप्पणी, 2)। सतियपुत्र के सतिय की सत्य से समानता के आधार पर किये गये सभी समीकरण विवादास्पद हैं। विस्तृत विवरण के लिए द्रष्टव्य, बि० च० लाहा, इंडोलॉजिकल स्टडीज़, I, पृ० 58)।

सत्तेनपल्ली—यह गुंटुर जिले में है, जहाँ से चार ताम्रपत्रों का एक समूह प्राप्त हुआ था (एपि० इं०, XXIII, भाग, V, पृ० 161)।

सत्यमंगलम—यह गाँव वेल्लोर तालुक में है, जहाँ से देवराय द्वितीय के अभिपत्र प्राप्त हुये थे (एपि० इं०, III, पृ० 35)।

शवरदेश—यह कहीं दक्षिणापथ में है (मत्स्यपुराण, 144, 46-8); वायुपुराण, (45, 126)। महाभारत (XII. 207, 42) में इसे दक्कन में स्थित बतलाया गया है। टॉलेमी ने (मैक्रिंडिल, टॉलेमीज ऐंश्येंट इंडिया, एस० एन० मजूमदार संस्करण, पृ० 173) शबराई नामक एक देश का वर्णन किया है जिसे साधारणतया शबरों द्वारा निवसित प्रदेश से समीकृत माना गया है। कनिंघम ने टॉलेमी के सबराई को प्लिनी द्वारा वर्णित सुआरी से समीकृत किया है। उनके अनुसार सवरदेश सुदूर दक्षिण में पेन्नर नदी तक फैला हुआ था। विस्तृत विवरण के लिए द्रष्टव्य, बि० च० लाहा, ट्राइब्स इन ऐंश्येंट इंडिया, पृ० 172)।

शवरी-आश्रम—प्राचीन काल में यहाँ मातंग ऋषि और उनके शिष्य रहते थे। यहाँ राम और लक्ष्मण आये थे और शवरी ने उनका आदरपूर्वक स्वागत किया था। अपनी जटा-जूट, स्वल्प वसन और उत्तरीय के रूप में कृष्णाजिन के चर्म से उसने इस आश्रम की परंपरा अक्षुण्ण रक्खी थी (रामायण, I, 1, 55 और आगे; तु० सा० इं० इं०, III, 77, 6 और आगे)।

सावुले—दक्षिण-पूर्व में लगभग तीन मील तक फैला हुआ यह सादोला है (एपि० इं०, XXV, भाग, V, पृ० 258)।

साक्षीगोपाल—यह गाँव पुरी से 10 मील दूर पर स्थित है। अनुश्रुति है कि कृष्ण यहाँ रुके थे और अपने को उन्होंने यहाँ पत्थर बना दिया था। इस गाँव में एक मंदिर है, जहाँ प्रायः तीर्थयात्री आया करते हैं (लाहा, होली प्लेसेज ऑव इंडिया, पृ० 17)।

शालैग्राम—यह रामनाड जिले के परमगुडी तालुक में स्थित एक गाँव है। यहाँ दसवीं शताब्दी ई० के दो पाण्ड्य-अभिलेख उपलब्ध हुये थे (ऐंश्येंट इंडिया, आर्क० सर्वे ऑव इंडिया का मुखपत्र, सं० 5, जनवरी, 1949)। इस गाँव में

शिव का एक प्राचीन मंदिर हैं (एपि०इं०, XXVIII, भाग, II, अप्रैल, 1949, पृ० 85 और आगे)।

सांत-बौम्यालि—यह गाँव गंजम जिले में हैं, जहाँ से ताम्रपत्र उपलब्ध हुये थे (एपि०, इं०, XXV, भाग, V, जनवरी, 1940, पृ० 194)।

सारड्डा—इसे सुगमतापूर्वक कोमण्ड से 10 मील पूरब में स्थित आरडा से समीकृत किया जा सकता है (एपि० इं०, XXIV, भाग, IV, पृ० 173)।

सासनकोट—यह गाँव अनंतपुर जिले के हिंदुपुर तालुक में स्थित है। यहाँ से गंग माधववर्मन के अभिपत्र उपलब्ध हुये थे (एपि० इं०, XXIV, भाग, V, 1938, पृ० 234)। यहाँ पर एक विशाल टीले से पुरातन मृण्मांडों, मनकों और अन्य अवशेषों के नमूने संग्रहीत किये गये थे।

शेणबग-पेरुमाल-नल्लूर—यह आधुनिक शुमंगिनेल्लूर हैं (सा० इं० इं०, जिल्द, I, पृ० 74)।

शेंदमंगलम्—इसे इसी नाम के एक गाँव से समीकृत किया गया है। यहाँ से मनवलप्पेरुमल का शेंदमंगलम् अभिलेख प्राप्त हुआ था (एपि० इं०, XXIV, भाग, I, जनवरी, 1937)। यह दक्षिण अर्काट जिले के तिन्दिवनम तालुक में स्थित है।

शेंगम—यह दक्षिण अर्काट जिले में है (सा० इं० इं०, भाग, II, पृ० 497)।

सेतपट्टु—यह गुंटुर तालुक में है (सेतपट्टु अभिलेख, एनुअल रिपोर्ट ऑव साउथ इंडियन एपिग्रेफ़ी, 1917, 116)।

सीमाचलम—यह वाल्टेयर से लगभग नौ मील दूर में स्थित है। यहाँ एक पहाड़ी के शिखर पर वराह-नरसिंहस्वामी को समर्पित एक प्रसिद्ध हिंदू मंदिर है।

सिंहपुर—चन्द्रवर्मन के कोमर्ति अभिपत्र एवं उमावर्मन के बृहत्प्रोष्ठ दानपत्र में इसका वर्णन है, जिसे शिकाकोल और नरसन्नपेत के बीच में स्थित सिंगपुरम से समीकृत किया जा सकता है (एपि० इं०, IV, पृ० 143; एपि० इं०, XXVII, पृ० 35)।

सिरिपुरम—यह गाँव शिकाकोल के निकट है, जहाँ पर कलिंग नरेश अनंतवर्मन् के अभिपत्र उपलब्ध हुये थे (एपि० इं०, XXIV, भाग, I, पृ० 47 और आगे)।

सिरितन—यह श्रीस्तंन या श्रीस्थान का प्राकृत नाम प्रतीत होता है। यह तेलंगाना में कृष्णा नदी के तट पर स्थित प्रसिद्ध श्रीशैल है।

सिरियाण्णूर–इसे उत्तरी अर्काट जिले में वलजपेत तालुक में स्थित शित्तात्तूर से समीकृत किया जा सकता है (सा० इं० इं०, जिल्द, III, पृ० 289)।

शिरुकडम्बूर––यह एक गाँव का नाम है (वही, I, पृ० 80, 82)।

शिशपालगढ़–यह उड़ीसा में है, जहाँ पुरातत्त्व विभाग द्वारा उत्खनन कार्य किया जा रहा है (संप्रति पूर्ण हो चुका है)। शिशुपालगढ़ का ऐतिहासिक स्थल उड़ीसा में भुवनेश्वर के समीप स्थित है। यह अपने मध्ययुगीन मंदिरों तथा तोरणों की व्यापक व्यवस्थायुक्त एक वर्गाकार किले के लिए प्रसिद्ध है। शिशुपालगढ़ के भग्नावशेष उड़ीसा के पुरी जिले के अंतर्गत भुवनेश्वर शहर से कोई $1\frac{1}{2}$ मील पूर्व, दक्षिण-पूर्व की ओर स्थित हैं। मृण्भांड एवं अन्य उपकरणों के रूप में प्राचीन आवास के चिह्न किले के बहिर्भाग में दृष्टिगोचर होते हैं। किला गंधवती नामक एक लघु सरिता के जल से परिवेष्टित है। किले के पश्चिमी ओर से प्रवाहित होने वाली मुख्य धारा शिशुपालगढ़ से लगभग 6 मील उत्तर में मंचेश्वर से पश्चिम में स्थित पहाड़ी क्षेत्रों से निकलती है और सात मील आगे दक्षिण में दया नदी में मिल जाती है। किले के दक्षिण, दक्षिण-पूर्व में लगभग 3 मील दूर पर धौली पहाड़ी स्थित है, जहाँ पर अशोक के अभिलेख हैं। शिशुपालगढ़ से लगभग छह मील पश्चिम-उत्तर-पश्चिम में खण्डगिरि और उदयगिरि पहाड़ियाँ हैं। इस स्थान पर किये गये उत्खनन से कुछ वस्तुएँ प्रकाश में आयी हैं, जिनमें कुछ मनकों, मिट्टी के एक बुल्ला (Bulla), मिट्टी के कर्णाभरण और अनलंकृत मृण्भांड का वर्णन किया जा सकता है। अपने इतिहास के आदि काल में शिशुपालगढ़ में प्रतिरक्षा की कोई व्यवस्था नहीं थी। प्राचीन मध्ययुग के प्रारंभ में सबसे महत्त्वपूर्ण घटना प्रतिरक्षा व्यवस्था का निर्माण थी (ऐंश्येंट इंडिया, आर्क० सर्वे ऑव इंडिया का मुख पत्र, सं० 5, जनवरी, 1949, पृ० 62 और आगे)। राजा धर्मदामधर की कुषाण-रोमन प्रकार की एक दुर्लभ स्वर्णमुद्रा उपलब्ध हुयी थी। मुद्रा की तिथि 200 ई० के पश्चात् की है (जर्नल न्यूमिसमेटिक सोसायटी ऑव इंडिया, जिल्द, XII, खंड, I, जून, 1950, पृ० 1-4)।

शिवनवायल––मद्रास-राज्य के चिंगलपुत् जिले में तिरुवल्लूर तालुक में उसके इसी नाम के मुख्यावास से लगभग नौ मील दूर पूर्वोत्तर में स्थित यह एक गाँव है (एपि० इं०, XXVII, भाग 2, पृ० 59)।

शिवीन्दिरम्––यह कन्याकुमारी के समीप वर्तमान शुचीन्द्रम का प्राचीन नाम है (सा० इं० इं०, जिल्द, III, पृ० 159)।

शोलापुरम्––वेल्लोर से लगभग आठ मील दक्षिण में स्थित यह एक गाँव है, जहाँ से चार अभिलेख प्राप्त हुये थे (एपि० इं०, VII, 192 और आगे)।

सोमलापुर—यह बेलारी जिले के बेलारी तालुक में है, जहाँ से तीन ताम्रपत्र उपलब्ध हुये थे (एपि० इं०, XVII, 193 और आगे)।

शोरै—ऊर्ति के निकट यह एक गाँव है (एपि० इं०, XXV, भाग, IV)।

शोरैक्कावूर—यह तंजौर जिले में कुत्तालम् के निकट हैं, जहाँ से शक संवत् 1308 में उत्कीर्ण विरुपाक्ष के तीन ताम्रपत्र उपलब्ध हुये थे (एपि० इं०, VIII. 298 और आगे)।

शोरपुरम्—वेलूर के निकट यह एक गाँव का नाम है (सा० इं० इं०, जिल्द, I, पृ० 78, 128)।

सोरमट्टि—इसे मदनपल्ली के समीपस्थ नोलब क्षेत्र में स्थित बताया जा सकता है (एपि०, इं०, XXIV, भाग, IV, पृ० 191)।

श्रावणबेल्गोला—मैसूर राज्य के हस्सन जिले के अंतर्गत चन्नरायपत्न तालुक में चन्द्रबेत्त और इन्द्रबेत्त नामक दो पहाड़ियों के बीच में यह स्थित है। यहाँ से प्रभाचन्द्र का अभिलेख उपलब्ध हुआ था (एपि० इं०, IV. 22 और आगे; तु० एपि० इं०, III, 184)। यह जैन-शिक्षा का एक प्राचीन केंद्र था और यहाँ जैन शिक्षक भद्रबाहु आया था, जिसे यहीं पर कैवल्य प्राप्त हुआ था, (लाहा, होली प्लेसेज ऑव इंडिया, पृ० 54)। बताया जाता है कि चन्द्रगुप्त मौर्य, जिसने जैन धर्म ग्रहण कर लिया था, यहीं मरा था (राइस, मैसूर गजेटियर, I, पृ० 287)।

श्रीक्षेत्र—यह उड़ीसा में पुरी है। यह बारहवीं शती० ई० में निर्मित जगन्नाथ मंदिर के लिए विख्यात् है। यहाँ पर श्री चैतन्य आये थे (देवी भागवत, जिल्द VII, अध्याय, 30; हंटर, उड़ीसा, आर्क० स० रि०, 1907-08)।

श्री-मधुरांतक-चतुर्वेदिमंगलम्—यह जयंगोण्डसोलमण्डलम के कालत्तुरकोट्टम् नामक विषय (जिले) में स्थित एक स्वतंत्र गाँव है (सा० इं० इं०, III, पृ० 204)।

श्री-मल्लिनाथ-चतुर्वेदिमंगलम्—यह उत्तरी अर्काट जिले में स्थित एक गाँव का नाम है (वही, I, पृ० 77, 78 और 129) जहाँ के निवासी महान् बतलाये जाते हैं।

श्रीपर्वत—मार्कण्डेयपुराण (LVII.15), कूर्मपुराण (30. 45-48); तु० अग्निपुराण (109) और सौरपुराण (69. 22) में इस पर्वत का उल्लेख है। इसे श्रीशैल भी कहा जाता है। पद्म पुराण (अध्याय, 21, श्लोक, 11-12) के अनुसार इस पवित्र पर्वत का शिखर सुंदर है, जहाँ पर मल्लिकार्जुन नामक देवता का निवास है। यह उच्च पर्वत कुर्नूल जिले में कृष्णा नदी के ऊपर प्रलंबित

है। साधारणतया इसे नासिक प्रशस्ति में वर्णित सिरितन से समीकृत किया गया है। यह मल्लिकार्जुन नामक प्रसिद्ध मंदिर का स्थान है, जो बारह लिंग मंदिरों में से एक है (आर्क० स० सां० इं०, जिल्द, I, पृ० 90; आर्क० स० वे० इं०, पृ० 223) अग्निपुराण (CXIII. 34) में कावेरी नदी के तट पर स्थित बतलाया गया है। इसके अनुसार विष्णु ने इसे देवी श्री को समर्पित किया था, क्योंकि एक बार उन्होंने कुछ तपस्या की थी (सीवेल कृत आर्क० सर्वे० ऑव साउथ इंडिया, जिल्द, I, पृ० 90; पार्जिटर, मार्कण्डेय पुराण, पृ० 290)। बाणकृत हर्षचरित के मंगलाचरण में श्रीपर्वत का वर्णन है, जो तेलंगाना में स्थित है एक पर्वत माला का नाम है (कावेल और टॉमस द्वारा अनूदित, हर्षचरित, पृ० 3 पा० टि०)।

इसकी स्थिति के विषय में यह कहा जा सकता है कि यह प्राचीन धार्मिक मंदिर ऋषभगिरि पहाड़ी पर कृष्णा नदी के तट पर स्थित है (द्रष्टव्य, बि० च० लाहा, होली प्लेसेज़ ऑव इंडिया, कलकत्ता ज्यॉग्रेफिकल सोसायटी पब्लिकेशन, सं० 3, पृ० 41)।

श्रीपुर—यह आधुनिक सिरपुर है, जो गंजम जिले में परलकिमेडि से 18 मील दूर वंशधरा नदी के बाँएँ तट पर मुखलिंगम के पश्चिमोत्तर में स्थित है (एपि० इं०, XXIII, भाग, IV, पृ० 119)। आठवीं एवं नवीं शती में पाण्ड्यों ने अपनी राजधानी श्रीपुर से कोशल पर राज्य किया था। यह सिरिपुर भी हो सकता है, संप्रति जो विज़गापट्टम जिले में बाविलवलस जमींदारी का एक भाग है। यह नागावती नदी के दक्षिण में केवल तीन मील दूर पर है, जिसके उत्तरी तट पर कलिंग का सुप्रसिद्ध विषय (ज़िला) वराहवर्दिनी स्थित था (विशाख वर्मन के कोरसन्ड ताम्रपत्र, एपि० इं०, XXI, पृ० 23-24)।

श्रीरंगम्—तिरुचिरपल्ली या त्रिचिनापल्ली के निकट यह एक द्वीप का नाम है (आर्क० स० इं०, III, पृ० 168; तु० एपि० इं०, III, 7 और आगे; सुन्दर पाण्ड्य का रंगनाथ अभिलेख; माधवनायक के श्रीरंगम अभिपत्र, एपि० इं०, XIII. 211 और आगे; शक संवत् 1239 में उत्कीर्ण काकतिय प्रतापरुद्र का श्रीरंगम अभिलेख, एपि० इं०, XXVII, भाग, VII, जुलाई, 1948)। यहाँ पर रंगनाथ मंदिर स्थित है। यह वही स्थान है, जहाँ रामानुज और मणवाल-महामुनि ने कुछ समय तक निवास किया था। अच्युतराय के श्रीरंगम् अभिलेख में दक्षिण भारत के इस सुविख्यात तीर्थस्थान का उल्लेख है, जो असाधारण रूप से वैष्णवों के लिए पवित्र था (एपि० इं०, XXIV, भाग, VI, अप्रैल, 1938, पृ० 285)। शक संवत् 1415 में लिखित गरुड-वाहन भट्ट के श्रीरंगम-अभिलेख

का उद्देश्य श्रीनिवास द्वारा प्रदत्त एक भूदान को निबद्ध करना था (एपि० इं०, XXIV, भाग, II, अप्रैल, 1937)। इस द्वीप में जंबुकेश्वर का एक शैव मंदिर है, जहाँ से वलककामय (शक संवत् 1403) का एक अभिलेख उपलब्ध हुआ था (एपि० इं०, III, पृ० 72)। यह द्वीप त्रिचिनापल्ली शहर के उत्तर में तीन मील दूर कावेरी नदी की दो शाखाओं के बीच में स्थित है। पाण्ड्य के नायक शासकों द्वारा निर्मित एक विशाल मंदिर इस द्वीप के केन्द्र में था। यह एक महान् तीर्थस्थान था जैसा कि मत्स्यपुराण, पद्मपुराण और ब्रह्माण्डपुराण के श्रीरंगमाहात्म्य-खण्ड में बतलाया गया है। ग्यारहवीं शती ई० के मध्य में विख्यात वैष्णव सुधारक रामानुज यहीं रहते थे और यहीं पर उनकी मृत्यु हुई थी। बतलाया जाता है कि लंका जाते समय रामचन्द्र ने यहाँ निवास किया था। इस अति प्राचीन विशाल मंदिर का जीर्णोद्धार एवं उद्धार दक्षिण भारत के चोल, पाण्ड्य एवं अन्य राजाओं ने किया था। हरिहरराय के श्रीरंगम ताम्रपत्र श्रीरंगम में स्थित श्रीरंगनाथ के मंदिर से संबंधित है (एपि० इं०, XVI. 222 और आगे)। यहाँ पर चोल राजा कुलोत्तुंग का एक अभिलेख है (ऐंश्येंट इंडिया, आर्क्यालाजिकल सर्वे ऑव इंडिया का मुखपत्र, सं० 5, जनवरी, 1949)। विस्तृत विवरण के लिए द्रष्टव्य, लाहा, होली प्लेसेज़ ऑव इंडिया, पृ० 40)।

शृंगवरपुकोट—यह गाँव विजगापट्टम जिले में है जहाँ से कलिंग-नरेश अन्दुतवर्मन के तीन पत्रों का एक कुलक उपलब्ध हुआ था (एपि० इं०, XXIII, भाग, II, अप्रैल, 1935, पृ० 56)।

सुदसुण—(या सुदिसण)—गोदावरी क्षेत्र में गोवर्धन विषय (जिले) में दक्षिणी सड़क पर स्थित यह एक गाँव का नाम था (ल्युडर्स की तालिका. सं० 1134)।

सुद्दव—गंजम जिले के परलकिमेडि (भू० पू० रियासत) के पूर्वी भाग में स्थित इस गाँव को सुदव भी कहा जाता है जहाँ से धर्मलिंगेश्वर-मंदिर के निकट किये जाने वाले उत्खनन के दौरान में दो ताम्रपत्र उपलब्ध हुये थे (एपि० इं०, XXVI, भाग, II, पृ० 62)।

शूडाडुप्पारै-मलाई—यह एक पर्वत का नाम है (सा० इं० इं०, जिल्द, I, पृ० 76, 77)। अवश्यमेव यह बवाजी पहाड़ी का पुराना नाम रहा होगा। यह पोड्डुवुरकोट्टम के एक भाग पंगलनाडु के उत्तर में स्थित था।

सुप्रयोगा—इस नदी का वर्णन महाभारत (भीष्मपर्व, IX. 28; वनपर्व, CCXXI) में हुआ है। यह कृष्णा की एक पश्चिमी सहायक नदी थी।

शुरन्कुडि—यह तिरुनेलवेलि जिले के कोविलपत्ती तालुक में स्थित एक गाँव था (एपि० इं०, XXIV, भाग, IV)।

शूरवरम—यहाँ पर अन्नदेव नामक एक चोड़-नरेश ने अन्नवोत नामक एक अन्य राजा पर विजय प्राप्त की थी (एपि० इं०, XXVI, भाग, I)।

शूरुलि़मलाई—यह एक पहाड़ी का नाम है जहाँ से शुरुलियारु का उद्‌गम होता है (सा० इं० इं०, जिल्द, III, पृ० 450)।

शुरुलियारु—यह नदी मदुराई जिले के पेरियकुलम तालुक के अंतर्गत चुंबुम से सात मील दूर शूरुलिमलाई से निकलती है और चुंबुम तथा सिण्णमनुर से बहती हुयी वैगाई में मिलती है (वही, पृ० 450)।

सुवर्णगिरि—अशोक के प्रथम लघुशिलालेख (ब्रह्मगिरि पाठ) में वर्णित सुवर्णगिरि की स्थिति के बिषय में हमें कोंकण एवं खानदेश के उत्तरकालीन मौर्यों के अभिलेखों में कुछ संकेत प्राप्त हो सकते हैं (एपि० इं०, भाग, III, पृ०136)। हुल्ट्श ने इसे मास्की के दक्षिण एवं विजयगर के अवशेषों के उत्तर में स्थित मैसूर में कनकगिरि से समीकृत किया है (का० इं० इं०, XXXVIII)। बूलर इसे कहीं पश्चिमीघाट में स्थित मानने के पक्ष में है। कृष्ण शास्त्री ने इसे मैसूर में सिद्धापुर के पश्चिम में स्थित मास्की से समीकृत किया है। अतः संभवतः यह थाना जिले के उत्तर में वाद के पड़ोस में और खानदेश में बघली में स्थित था, क्योंकि खानदेश और कोंकण के उत्तरकालीन मौर्यों के अभिलेख वाद से उपलब्ध हुये हैं। सुवर्ण-गिरि के कुमारामात्य के रूप में कोई आर्यपुत्र नियुक्त किया गया था। वह या तो अशोक का पुत्र या भाई था (बरुआ, अशोक ऐंड हिज़ इंस्क्रिप्शंस, पृ० 62; विंसेंट स्मिथ, अशोक, 44)।

सुवर्णमुखरी—स्कन्दपुराण के अनुसार (अध्याय, I, श्लोक,36-48) यह 5 योजन विस्तृत हस्तिशैल नामक पर्वत के उत्तर में स्थित एक प्रसिद्ध नदी है।

सुवर्णपुर (स्वर्णपुर)—तेल एवं महानदी के संगम पर स्थित यह सोनपुर नामक आधुनिक नगर है (तैल-महानदी-संगम-विमलजलपवित्रीकृत, तु०, महाभव-गुप्त द्वितीय जनमेजय के सोनपुर अभिपत्र, एपि० इं०, XXIII, भाग, VII, जुलाई, 1936, पृ० 250; रत्नदेव तृतीय का खरोड अभिलेख, ज० बि० उ० रि० सो०, II, 52; एपि० इं०, XIX, पृ० 98)।

श्वेतक—श्वेतक का वर्णन गंग इन्द्रवर्मन् के इंडियन म्युजियम अभिपत्र में हुआ है (एपि० इं०, XXVI, भाग, V, अक्टूबर, 1941, पृ० 165, और आगे; XXIV, भाग, IV, अक्टूबर, 1927; XXIII, भाग, I, जनवरी, 1935, पृ० 29-30)। जयवर्मदेव का गंजम दानपत्र श्वेतक से प्रचलित किया गया था

(एपि० इं०, IV, पृ० 199-201)। इसे आंध्रप्रदेश के श्रीकाकुलम जिले के सोमपेट तालुक में स्थित आधुनिक चिकटि जमींदारी से समीकृत किया जा सकता है। यह श्रीकाकुलम जिले के उत्तरी भाग में स्थित प्रतीत होता है (एपि० इं०, XXVII, भाग, III, पृ० 112 द्रष्टव्य) । कुछ विद्वानों के अनुसार श्वेतक संभवत: कलिंग के पश्चिम का समीपवर्ती क्षेत्र था (एपि० इं०, XXIV, भाग, IV, पृ० 181)।

तदपत्रि—यह शहर पेन्नार नदी की कटान पर अनंतपुर जिले में स्थित है। यहाँ पर श्री बग्गु रामलिंग ईश्वर नामक एक प्राचीन मंदिर है (ज० इं० सो० ओ० आ०, XV)।

तगर—इस शहर को तेर से समीकृत किया गया है जो महाराष्ट्र में (भू० पू० हैदराबाद रियासत) आधुनिक उस्मानाबाद से 12 मील उत्तर में है (एपि० इं०, XXIII, भाग, II, गण्डरादित्यदेव के कोल्हापुर ताम्रपत्र, शक संवत् 1048)। फ्लीट ने इसे तेर से समीकृत किया है जो पैठान से 95 मील दक्षिण-पूर्व में है (ज० रा० ए० सो०, 1901, पृ० 537, और आगे; बांबे गजेटियर, भाग, I, खंड, II पृ० 3, टिप्पणी, 7; वही, पृ० 16, टिप्पणी, 4)। कुछ लोगों ने इसे देवगिरि से, अन्य ने जुन्नार से और रा० गो० भंडारकर ने महाराष्ट्र में धरूर से समीकृत किया है। टालेमी ने इसे बैठान और पैठान के पूर्वोत्तर में, और पेरिप्लस के लेखक ने इसके उत्तर-पूर्व में दस दिनों की यात्रा की दूरी पर स्थित बतलाया है। यूले ने इसे पैठान के दक्षिण-पूर्व में लगभग 150 मील की दूरी पर गुलबर्ग में (मैसूर राज्य) स्थित बतलाया है। डफ़ ने इसे गोदावरी के तट पर भीर के समीप स्थित बतलाया है। पेरिप्लस में यह एक महानगर के रूप में उल्लिखित है। विस्तृत विवरण के लिए द्रष्टव्य, ज० रा० ए० सो०, 1902, पृ० 230; आर्क० स० रिपोर्ट, 1902-03; इंपॉर्टेंट इंस्क्रिप्शंस फ़ॉम बड़ौदा स्टेट, जिल्द, I, पृ० 43-44. यहाँ यह उल्लेखनीय है कि शिलाहारों का मूल स्थान तगर ही था (एपि० इं०, III, पृ० 269)।

तक्कणलाडम—यह दक्षिण लाट (गुजरात) है (आर्क० स० इं०, I, पृ० 97)। यह गण्डदेश में स्थित दक्षिण लाट है। इदिरिलिशोल शंबुवेरायन ने चिंगलपुत जिले में स्थित आरपक्कम गाँव को दक्षिण लाट के उमापतिदेव उर्फ ज्ञानशिवदेव को दिया था।

तक्कोलम—तक्कोलम से उपलब्ध परन्तक द्वितीय के दो अभिलेखों में उत्तरी अर्काट जिले के अर्कोनम् तालुक में स्थित इस गाँव का उल्लेख है (एपि० इं०, XXVI, भाग, V, जनवरी, 1942, पृ० 230)। इसे तोण्डैनाडु में स्थित

बतलाया गया है (एपि० इं०, XIX, पृ० 81)। यहाँ पर चोल शैली का एक प्राचीन मंदिर है। प्राचीन काल में इस मंदिर के देवता को तिरुवूराल महादेव कहा जाता था।

तल्लपाक्कम्—यह अत्तिराल के पश्चिम में और चेयेर्क के दक्षिण में स्थित है (सा० इं० इं०, V, सं० 284)।

तल्लारु—कोप्परुंजिगदेव के वैलूर अभिलेख में तल्लारु का उल्लेख है जिसे उत्तरी अर्काट जिले में उसी नाम वाले एक गाँव से समीकृत किया जा सकता है।

तम्बपम्नी (ताम्रपर्णी)—मारवर्मन सुन्दर पाण्ड्य द्वितीय के तिन्नेवली अभिलेख के अनुसार यह तणपोरुंद-आरु है (एपि०इं०, XXXIV, भाग, IV, पृ० 166)। इसे साधारणतया ताम्रपर्णी से समीकृत किया जाता है जो सामान्यतया लंका के लिए व्यवहृत होता है। कौटिलीय अर्थशास्त्र में (II, XI) इसे पारसमुद्र कहा गया है। यूनानी लेखकों ने इसे ताप्रोबेन कहा है। इसका वर्णन अशोक के दूसरे और तेरहवें शिलालेखों में आता है। विंसेंट स्मिथ का विचार है ताम्रपर्णी नाम लंका को नहीं द्योतित करता वरन् तिन्नेवली में ताम्रपर्णी नदी के प्रति संकेत करता है। उन्होंने गिरनार पाठ 'आ ताम्बपम्नी' का उल्लेख किया है, जो उनके मतानुसार नदी के प्रति संकेत करता है न कि लंका के प्रति (अशोक, तृतीय संस्करण, 162)। भागवतपुराण (IV. 28, 35; V, 19, 18; X, 79, 16; XI, 5, 39) में इसका वर्णन एक नदी के रूप में किया गया है। इस विषय में मतभेद है। यह नदी अवश्यमेव पाण्ड्य-राज्य की दक्षिणी सीमा के आगे बहती थी और इसे आधुनिक ताम्रवारी से समीकृत किया जा सकता है। टालेमी के अनुसार कोरकाई बंदरगाह इस नदी के मुहाने पर स्थित था जो मोती निकालने के लिए सुविख्यात था। कालिदास के रघुवंश (IV. 49-50) के अनुसार, ताम्रपर्णी, जिसका स्थानीय नाम ताम्रवारी था, मोती निकालने के लिए विश्रुत थी। बृहत्संहिता के अनुसार ताम्रपर्णी में मोतियाँ प्राप्त होती थीं (XIV, 16; LXXXI, 2, 3)। इस नदी को गुंटुर से समीकृत करने में औचित्य है, जो तीन सरिताओं के संयुक्त प्रवाह का नाम है जो दो धाराओं के माध्यम से समुद्र में गिरती है। इस नदी को ताम्रवर्णा भी कहा गया है (ब्रह्माण्ड पुराण, 49)। महाभारत (वनपर्व, LXXXVIII, 8340) के अनुसार यह एक पवित्र नदी थी। अशोक के तेरहवें शिलालेख में ताम्रपर्णी के निवासियों को स्पष्ट रूप से ताम्रपम्नीया अथवा ताम्रपर्ण्य कहा गया है। इस अभिलेख में ताम्रपर्णी या ताम्रपर्ण्यों के देश को पाण्ड्य क्षेत्र के आगे स्थित बतलाया गया है। महाभारत में भी ताम्रपर्णी को पाण्ड्य या द्राविड़ के आगे स्थित बतलाया गया है और वैदूर्यक पर्वत को इसका

शैल भू-चिह्न बतलाया गया है। अगस्त्य और उनके शिष्य के आश्रम एवं गोकर्ण-तीर्थ यहीं स्थित बतलाये जाते हैं। ये सारे तथ्य हमें ताम्रपर्णी को युवान-च्वाङ् द्वारा वर्णित मलयकूट से समीकृत करने के लिए उत्प्रेरित करते हैं। मलयकूट को भी पोतलक पर्वत (वैडूर्यक) रूपी भू-चिह्न के साथ द्राविड के आगे स्थित बतलाया गया है। ताम्रपर्णी या ताप्रोबेन से लंका का आशय है। द्वीप शब्द इससे संवद्ध है। एक नागार्जुनिकोण्ड अभिलेख में तंबपम्ण को स्पष्ट रूप में तंबपण्णीद्वीप से पृथक् किया गया है (बरुआ, अशोक ऐंड हिज़ इंस्क्रिप्शंस, अध्याय, III)। विस्तृत विवरण के लिए द्रष्टव्य लाहा, इंडोलॉजिकल स्टडीज़, भाग, I, पृ० 59-60.

तनसुलि—तनसुलि या तनसुलिय कलिंग-राज्य से अधिक दूर नहीं था। इसी स्थान से नंद राजा द्वारा उद्घाटित नहर को बढ़ाकर कलिंग शहर में ले जाया गया था (द्रष्टव्य, खारवेल का हाथीगुम्फा अभिलेख, बरुआ, ओल्ड ब्राह्मी इंस्क्रिप्शंस पृ० 14)।

तण्डनतोट्टम—कुम्भकोणम के निकट यह एक गाँव है (एपि० इं०, XV, 254)।

तंगतुरु—यह गाँव कुड्डापा जिले के प्रोद्दुत्तर तालुक में स्थित है (एपि० इं०, XIX, पृ० 92)।

तंजोर (तंजाई)—यह एक गाँव का नाम है (सा० इं० इं०, I, पृ० 92; एपि० इ०, XXVII, भाग, VII, जुलाई, 1948, चतुरनन पंडित का तिरुवोरियुर अभिलेख)। तंजोर के मंदिरों में चण्डेश्वर का एक छोटा सा मंदिर है। यह चोल नरेशों, नायक राजाओं और मराठा राजाओं की राजधानी थी। यह अपने विशाल बृहदीश्वर (बृहदेश्वर) मंदिर के लिए उल्लेखनीय है जो भारत का सर्वोच्च मंदिर है। होयसल-नरेश सोमेश्वर और रामनाथ के अभिलेख सुदूर दक्षिण में तंजौर तक पाये जाते हैं (मद्रास आर्कयॉलाजिकल रिपोर्ट, 1896-97)। पुञ्जय (तंजोर जिला) को किडारमगोण्डान कहा जाने लगा था (म० एपि० रि०, 1925 188, 191 और 196)। तंजोर का प्राचीन नगर कावेरी नदी के तट पर मद्रास के दक्षिण-पश्चिम में लगभग 218 मील दूर स्थित है। बृहदेश्वर मंदिर में एक विशाल शिवलिंगम है। यह 217 फीट ऊँचा है और भारतीय स्थापत्य का एक अद्भुत नमूना है। चारों ओर से यह एक लंबी परिखा से परिवेष्ठित है। पत्थर से निर्मित भीमकाय नंदि बैल इस विशाल मंदिर के सामने बैठा हुआ दृष्टिगोचर होता है। मंदिर में विशाल तोरण एवं मंडप हैं। जो सब पत्थर के बने हुये हैं। इस मंदिर का निर्माण राजा राजेन्द्र चोल के समय में हुआ था, (लाहा, होली प्लेसेज़ ऑव इंडिया, पृ० 41)।

तंकण (तंगण)—बृहत्संहिता में इसका वर्णन एक देश के रूप में किया गया है (XIV, 12)।

तणपोरुन्द-आरु—मारवर्मन सुन्दर पाण्ड्य द्वितीय के तिन्नेवली अभिलेखों में वर्णित यह ताम्रपर्णी नदी का एक नाम है (एपि० इं०, XXIV, भाग, IV, पृ० 166)।

तरडमसकभोग—महाशिवगुप्त के मेल्लार अभिपत्रों में इसका वर्णन मिलता है, जिसे तलहारिमण्डल से समीकृत किया जा सकता है (एपि० इं०, XXIII, भाग, II)।

तालगुण्ड—यह मैसूर राज्य के शिमोगा जिले के शिकारपुर तालुक में स्थित है। यहाँ से काकुस्थ-वर्मन का एक स्तंभ लेख प्राप्त हुआ था (एपि० इं०, VIII, 24 और आगे)।

तालपुरमसक—नागपुर-नन्दिवर्धन जिले में स्थित यह एक गाँव है जो किसी ब्राह्मण को दिया गया था। दक्कन के राष्ट्रकूट वंश के कृष्ण तृतीय (उर्फ अकाल-वर्ष) नामक राजा ने यह दान अपने भाई जगतुंग कृष्ण द्वितीय के नाम में दिया था। अकालवर्ष ने गुर्जरों को भयान्वित और लाडों के गौरव का मर्दन किया था। उसने गौड़ों को विनयशीलता सिखलायी थी तथा उसकी आज्ञाएँ अंग, कलिंग, गंग और मगध जन मानते थे (एपि० इं०, V, 192 और आगे)।

तालथ्थेर—क्रोष्टुकवर्त्तनी विषय में स्थित यह एक गाँव का नाम है। सुदाव से उपलब्ध एक पूर्वी गंग-दान ताम्रपत्र में कहा गया है कि गंगवंशीय महाराजाधिराज देवेन्द्रवर्मन के पुत्र महाराज अनन्तवर्मन ने इस गाँव को विष्णुसोमाचार्य नामक एक विद्वान ब्राह्मण को दिया था (एपि० इं०, XXVI, भाग, II, 65 और आगे)।

तामर—यह एक गाँव है जिसे आधुनिक दामल से समीकृत किया जाता है (सा० इं० इं०, II, 390)। इसे चिंगलपुत जिले में स्थित नित्तविनोदनल्लूर भी कहा जाता है।

तामरचेरु—एक प्राचीन गंग-दानपत्र में वर्णित यह गाँव वराहवर्त्तिनी में स्थित है (इं० ऐं०, XIII, 275)।

ताण्डिकोण्ड—गुंटुर जिले के चकेर तालुक में ताडिगोण्ड या ताडिकोण्ड में स्थित यह एक आधुनिक गाँव है और यह जिले के मुख्यावास के उत्तर में लगभग आठ मील दूर स्थित है। ताण्डिकोण्ड की सीमाओं में चयिततटाक और भीम-समुद्र दो तालाब अब भी विद्यमान हैं। भीमसमुद्र एक बड़ा तालाब है, जिसके तट पर एक टीला स्थित है जिसपर एक शिव मंदिर के विस्तृत अवशेष हैं। चयित-

तटाक एक बड़े तालाब का प्राचीन नाम प्रतीत होता है जो इस गाँव के निकट ही लगभग तीन या चार वर्गमील का क्षेत्र घेरे हुये है। यह उक्त गाँव के निकट एक विस्तृत क्षेत्र की सिंचाई का साधन है (अम्मराज द्वितीय का ताण्डिकोण्ड दानपत्र, एपि० इं०, XXII, भाग, V, पृ० 166)।

ताण्डिवाड—यह कोनुरूनाण्डुविषय में स्थित एक गाँव है जो वंगिपारु के एक ब्राह्मण को दिया गया था। यहाँ से एक अभिलेख प्राप्त हुआ था (एनुअल रिपोर्ट ऑव साउथ इंडियन एपिग्रेफी, 1917)। इसे कृष्णा जिले के तनुकु तालुक में ताडिपर्रु से समीकृत किया जा सकता है (एपि० इं०, XXIII, भाग, III, जुलाई, 1935, पृ० 97)।

तेक्कलि—यह गंजम जिले में स्थित है। यहाँ से कंगोद के शैलोद्भवों से संबंधित तीन अभिपत्र उपलब्ध हुए हैं (ज० वि० उ० रि० सो०, IV, 162-167; एपि० इं०, IX, 41-47)। देवेन्द्रवर्मन के पुत्र राजेन्द्रवर्मन के कुछ अभिपत्र यहाँ से उपलब्ध हुये थे (एपि० इं०, XVIII, 311)।

तेलवाह—जातक (I, पृ० 111; सा० इं० इं०, जिल्द, I, पृ० 111 भी द्रष्टव्य) में इस नदी का वर्णन है जिसके तट पर अंधपुर स्थित था, जहाँ पर सेरिव राज्य से आने वाले व्यापारी इस नदी को पार करके पहुँचे थे। कुछ विद्वानों ने इसे आधुनिक तेल या तेलिंगिरि से समीकृत किया है (इं० ऐं०, 1918, 71; भंडारकर, अशोक, पृ० 34)।

तिरुच्चेन्दूर—यह तिरुनेलवेलि जिले में है जहाँ वरगुणमहाराज का एक अभिलेख उपलब्ध हुआ था (एपि० इं०, XXI, भाग, III)।

तिरक्कलुकुनरम्—यह चिंगलपुत जिले में स्थित एक विशाल गाँव है जहाँ से चार प्राचीन तमिल अभिलेख प्राप्त हुए थे। यह पक्षितीर्थम् के नाम से सुविख्यात है (एपि० इं०, III, 276)।

तिरुक्कोडुन्कुनरम्—कृष्णदेवराय के पिरनमलाई अभिलेख में इसका उल्लेख हुआ है जो तिरुमलैनाडु में स्थित बतलाया जाता है और जिसका नामकरण शिवगुप्त तालुक में स्थित आधुनिक तिरुमलाई नामक गाँव के आधार पर किया गया है (एपि० इं०, XXI, भाग, III, जुलाई, 1931)।

तिरुकुक्डमुक्किल—तंजोर जिले में स्थित कुंभकोनम का यह तमिल नाम है (सा० इं० इं०, III, पृ० 283)। यह चोल-राज्य की एक राजधानी और विद्या का महान् केंद्र था। शिव-प्रतिमा से युक्त कुम्भकोनम का मंदिर दक्षिण भारत का एक प्रसिद्ध मंदिर है।

तिरुमलाई-पहाड़ी—यह एक पहाड़ी का नाम है जिसे अर्हसुगिरि और एणगुण-

विराई-तिरुमलाई (सा० इं० इं०, I, पृ० 106) भी कहा जाता है (सा० इं० इं०, I, पृ० 106)। यह उत्तरी अर्काट जिले में मद्रास के दक्षिण-पश्चिम में लगभग 96 मील दूर पर स्थित है (एपि० इं०, XXVII, 24)।

तिरुमलाई गाँव—यह एक गाँव का नाम है (सा० इं० इं०, I, पृ० 94, 97, 100, 101, 105, 106, 108)। यह वर्तमान चालुक्य क्षेत्र की अपेक्षा पल्लव क्षेत्र से अधिक समीप है। यह अपने मंदिरों के लिए प्रसिद्ध है। यह भगवान् वेंकटेश के कारण पवित्र, और एक वैष्णव केंद्र है। पहाड़ी के शिखर पर स्थित यह मंदिर दक्षिण भारत के आनुक्रमिक राजवंशों के शासकों के संरक्षकत्व में था।

तिरुमले—केलादि सदाशिव नायक के काप ताम्रपत्रों में तिरुमले का उल्लेख है जो चित्तूर जिले में स्थित तिरुपति है (द्रष्टव्य एपि० इं०, XIV, पृ० 83)।

तिरुमाणिकुली—यह गाँव गेडिलम् नदी के तट पर स्थित है। इसे उदवि तिरुमाणिकुली भी कहा जाता है जो कुड्डालुर के निकट स्थित है। बतलाया जाता है कि यहाँ पर सेंगान्नाण नामक एक प्राचीन चोल-नरेश ने शिव की उपासना की थी। तिरुमाणिकुली का एक भाग पेरम्बलम्पोन्मेयण्डपेरुमलनल्लूर के रूप में गठित था (एपि० इं०, XXVII, भाग, III, पृ० 97)।

तिरुमुडुकुनरम—(प्राचीन पवित्र पहाड़)—इसका संस्कृत समानार्थक संभवतः वृद्धाचलम् है जो दक्षिण अर्काट जिले में एक तालुक का मुख्यावास है (सा० इं० इं०, जिल्द, I, पृ० 123)।

तिरुनामनल्लूर—यह दक्षिण अर्काट जिले के तिरुक्कोवलूर तालुक में स्थित है (वही, जिल्द, III, पृ० 197-98; तु० एपि० इं०, VII, 132 और आगे)। पहले इसे तिरुनावलूर कहा जाता था। यह तिरुकोइलूर तालुक के दक्षिण-पूर्व में 19½ मील दूर स्थित है (एपि० इं०, XXVII, भाग, III, पृ० 98)।

तिरुपति—तिरुपति या त्रिपति या त्रिपदी उत्तरी अर्काट जिले में मद्रास के पश्चिमोत्तर में 72 मील दूर स्थित है। सात पहाड़ियों के झुंड के शिखर पर तिरुपति मंदिर स्थित है। ये सात पहाड़ियाँ उस साँप के सात सिर को द्योतित करती हैं जिसपर वेंकटाचलपति रहते हैं; सर्प के शरीर का मध्यभाग नरसिंह का है और उसकी पूँछ वाला छोर मल्लिकार्जुन का आवास है। ब्रह्मा, विष्णु और शिव द्वारा अभिरक्षित इसका आदि, मध्य और अंत दक्षिण भारतीय स्थापत्य का एक अद्भुत नमूना है (लाहा, होली प्लेसेज़ ऑव इंडिया, 41-42)।

तिरुप्पूवनम्—जटावर्मन कुलशेखर प्रथम के तिरुप्पूवनम् अभिपत्रों में रामनाड जिले की शिवगंगा जमींदारी में स्थित इस गाँव का उल्लेख हुआ है। यह वैगाई

(संस्कृत वेगावती) नदी के दक्षिणी तट पर स्थित है। यह मदुरा से 12 मील दक्षिण-पूर्व में और शिवगंगा से 16 मील पश्चिम में स्थित है (एपि० इं०, XXV, भाग, II, अप्रैल, 1938, पृ० 64)।

तिरुवदि—यह दक्षिण अर्काट जिले में पौरुट्ट के निकट कुड्डालूर तालुक में स्थित है। यहाँ से रविवर्मन का एक अभिलेख प्राप्त हुआ था (एपि० इं०, VIII, 8 और आगे)। यह गाँव गेडिलम नदी के तट पर स्थित है (एपि० इं०, XXVII, भाग, III, पृ० 97)।

तिरुवविकुंद्रम—इस गाँव को दक्षिणी अर्काट जिले के गिंगुतालुक में उसी नाम के एक गाँव से समीकृत किया जा सकता है (एपि० इं०, XXVIII, भाग, VII, जुलाई, 1948, पृ० 311)।

तिरुवल्लम्—यह उत्तरी अर्काट जिले में स्थित एक गाँव है (सा० इं० इं०, I, पृ० 169)। यहाँ पर अनेक चोल अभिलेख हैं। यहाँ पर बिल्वनाथेश्वर का मंदिर स्थित है (एपि० इं०, III, 70)।

तिरुवयिन्दिरपुरम्—यह कुड्डालुर तालुक में स्थित आधुनिक तिरुवेन्दिपुरम् है (एपि० इं०, XXVII, भाग, III, पृ० 98)।

तिरुवेन्दिपुरम्—यह दक्षिण अर्काट जिले के मुख्यावास कुड्डालूर के पश्चिम-उत्तर-पश्चिम $4\frac{1}{2}$ मील दूर स्थिति एक गाँव है (एपि० इं०, VII, 160 और आगे)।

तिरुवोरियूर—राजराज तृतीय के एक समकालीन राजा, विजयगण्डगोपाल के तीसरे वर्ष में अंकित यहाँ से प्राप्त एक अभिलेख में किसी किडारत्तैरय्यन द्वारा एक शैवमठ को प्रदत्त भूमिदान का आलेख है (मद्रास एपि० रि०, 1912 का 239 सं०; बि० च० लाहा वाल्यूम, भाग, II, पृ० 423)।

तोण्डि—मदुरा जिले में स्थित यह एक बंदरगाह है (सा० इं० इं०, III, 197)।

तोण्टापर—इस गाँव का प्रतिनिधित्व शिकाकोल तालुक में स्थित तोटाड नामक आधुनिक गाँव करता है (एपि० इं०, XXIV, भाग, II, पृ० 50)।

तोसली—तोसली का वर्णन अशोक के कलिंग शिलालेख एवं वीरपुरुषदत्त के नागार्जुनिकोण्ड अभिलेख में प्राप्त होता है। यह टालेमी द्वारा वर्णित तोसलेयी (Tosalei) है। कुछ लोगों के अनुसार यह प्राचीन कोशल है। उड़ीसा के पुरी जिले में स्थित धौली ही तोसली है। हुल्ट्श ने कटक जिले से उपलब्ध दो ताम्रपत्र-अभिलेखों के प्रति संकेत किया है जिनमें उत्तर एवं दक्षिण तोसली का उल्लेख मिलता है (एपि० इं० ,IX, 286)। अशोक के काल में यहाँ पर एक

कुमारामात्य नियुक्त रहता था। जहाँ तक उत्तर-तोसल और दक्षिण-तोसल का संबंध है (एपि० इं०, XV, 1-3, श्लोक, 5; IX. 286-7, श्लोक, 4) दक्षिण तोसल संभवतः दक्षिणापथ का अमित तोसल नामक देश ही है, जिसमें गण्डव्यूह के अनुसार तोसल नामक एक नगर था। अतएव यह एक विस्तृत क्षेत्रिक संभाग का नाम था। कुछ अभिलेखों में बतलाया गया है कि इसमें अनरुद्र नामक एक विषय (जिला) और कंगोद नामक एक मंडल था (एपि० इं०, VI, 141, 21)। उत्तरतोसल दक्षिण तोसल से विस्तार में छोटा प्रतीत होता है और पञ्चाल, बुम्युदय तथा सरेफाहार इसके विषय (जिले) थे (एपि० इं०, V, 3, 6; एपि० इं०, XXIII, 202)। नेउलपुर दानपत्र में उत्तर तोसल के कुछ ग्रामों का वर्णन है जिनको बलसोर जिले में स्थित बतलाया गया है (एपि० इं०, XV, 2-3)। सोरो (बलसोर जिला) ताम्रपत्रों में उत्तर तोसल में सेरफा के निकटस्थ एक गाँव में भूमिदान का आलेख है (एपि० इं०, XXIII, 199)। ऐसा प्रतीत होता है कि बलसोर क्षेत्र उत्तर तोसल देश का केंद्र था। उत्तर तोसल ओड्रविषय का केवल एक भाग था (इंडियन कल्चर, जिल्द, XIV, पृ० 130-131)।

त्रिभुवनम्—यह तंजौर जिले में तिरुविदैमरुदूर रेलवे स्टेशन के समीप ही है। यहाँ से कम्पहरेश्वर मंदिर में दो स्थानों पर दो प्रतिलिपियों में उत्कीर्ण कुलोत्तुंग तृतीय का एक संस्कृत अभिलेख उपलब्ध हुआ है। इस अभिलेख में चिदाम्बरम का वर्णन है और इसमें नटराज के मंदिर के सामने एक मुखमण्डप के निर्माण का आलेख है। इसमें काञ्चीपुरम के एकाम्रेश्वर, मदुरा के सुन्दरेश्वर तथा मध्यार्जुन एवं राजराजेश्वर के मंदिरों का वर्णन प्राप्त होता है। इसमें मण्डप एवं गोपुरम के निर्माण द्वारा वल्मीकेश्वर के मंदिर के परिवर्द्धन का आलेख है (दे० रा० भंडारकर वाल्युम, पृ० 3-4)।

त्रिकलिंग—गंग इन्द्रवर्मन् के जिरजिंगी अभिपत्रों में इसका उल्लेख मिलता है (एपि०, इं०, XXV, भाग, VI, अप्रैल, 1940, पृ० 286)। इसमें वे क्षेत्र संमिलित थे जिन्हें प्राचीनकाल में कलिंग, तोसल और उत्कल कहा जाता था, जबकि कुछ लोगों का विश्वास है कि इसमें उड्र (मुख्य उड़ीसा), कंगोद, और कलिंग संमिलित थे (ज० बि० उ० रि० सो०, जिल्द, XIV, पृ० 145)। रामदास की धारणा है कि त्रिकलिंग, कलिंग एवं दक्षिण कोशल के मध्यवर्त्ती पठारी इलाके या आधुनिक छत्तीसगढ़ को द्योतित करता था (जर्नल ऑव द आंध्र हिस्टॉरिकल रिसर्च सोसायटी, जिल्द, I)। कुंमी ताम्रपत्र में वर्णित त्रिकलिंग (ज० ए० सो० बं०, 1839) में प्लिनी के अनुसार कलिंगों द्वारा निवसित क्षेत्र, मक्को-कलिंग और गंगारिडीज़-कलिंगाई संमिलित थे (कनिंघम, एं० ज्यॉ० इं०, पृ० 519)।

दक्षिण कोशल के राजाओं को त्रिकलिंग राजा कहा जाता था। कनिंघम (एं० ज्यॉ०, इं०, 1924, पृ० 591)। के अनुसार त्रिकलिंगो में कृष्णा नदी के तट पर स्थित घनकटक या अमरावती, आंध्र या वारंगल और कलिंग या राजमहेन्द्री के तीन राज्य संमिलित थे (मैंक्रिडिल, टालेमी, पृ० 233)। गोदावरी जिले के त्रिकलिंग देश पर एक वर्ष तक विक्रमादित्य ने शासन किया था (सा० इं० इं०, जिल्द, I, पृ० 46)। कुछ लोगों के अनुसार त्रिकलिंग का तात्पर्य पठारी या कलिंग से है जो मुख्य कलिंग एवं दक्षिण कोशल के मध्य में स्थित था। त्रिकलिंग देश उत्तर में गंगा नदी से लेकर दक्षिण में गोदावरी नदी तक फैला हुआ था (जर्नल आंध्र हिस्टॉरिकल रिसर्च सोसायटी, जिल्द, VI, पृ० 203)।

त्रिपुरी—चेदि संवत् 866 में अंकित जाजल्लदेव के रत्नपुर शिलालेख में त्रिपुरी का उल्लेख किया गया है जिस पर कोकल्ल नामक चेदि राजा के अठारह पुत्रों में से एक ने शासन किया था (एपि० इं०, I, पृ० 33)। साहित्यिक उल्लेखों के लिए द्रष्टव्य, लाहा, ट्राइब्स इन ऐंश्येंट इंडिया, पृ० 50, 399)।

त्रिसामा—त्रिसामा जिसे प्रकारांतर से त्रिमागा या पित्तृसोमा भी कहते हैं तथा ऋषिकुल्या का वर्णन पुराणों में दो पृथक् नदियों के रूप में किया गया है, किंतु ऐसा प्रतीत होता है कि एक ही नदी ऋषिकुल्या थी जिसका वर्णनात्मक नाम त्रिसामा-ऋषिकुल्या था। मार्कण्डेयपुराण के अनुसार (पार्जिटर द्वारा अनूदित, पृ० 57, 28-29) ऋषिकुल्या एवं पितृसोमा महेन्द्र पर्वतमाला से निकलती थी। कूर्मपुराण (XLVII. 36) में त्रिसामा, ऋषिकुल्या और वंशधारिणी को शुक्तिमत पर्वतमाला से निकलने वाली नदियाँ कहा गया है।

त्रिशिरापल्ली—कावेरी नदी के तट पर स्थित यह आधुनिक त्रिचनापल्ली है (सा० इं० इं०, I, 28)। त्रिशिरापल्ली-शिला के शिखर के निकट ही शिला काट कर बनायी गयी एक गुफा में दो स्तंभों पर अंकित दो गुहा-लेख उपलब्ध हुये हैं (एपि० इं०, I, 58)। इसके अंचल में स्थित उरैय्यूर मूलतः प्राचीन चोलों की राजधानी थी। कालांतर में किन्हीं कारणों से त्रिचिनापल्ली मदुरा के नायक राजाओं की राजधानी थी। कर्णाटक के युद्धों में इसका महत्त्वपूर्ण स्थान है।

तुण्डाकविषय (या तुण्डकविषय)—यह तोण्डैमण्डलम् ही है (सा० इं० इं०, I, पृ० 106, 146)।

तुंगभद्रा—पद्मपुराण में (187. 3) इस नदी का वर्णन दक्षिण में बहने वाली नदी के रूप में हुआ है। इसके तट पर हरिहरपुर नामक एक अट्टालक था। भागवतपुराण (V. 19, 19) में इसका वर्णन एक नदी के रूप में किया गया है। कृष्णा की अवर सहायक नदियों में यह सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण है। तुंग और भद्रा

नामक दो सरिताओं का उद्‌गम-स्थल मैसूर की पश्चिमी सीमा पर स्थित पश्चिमी घाटों में है। तुंगभद्रा कुर्नूल जिले में नंदिकोतकुर के उत्तर में कृष्णा नदी में मिलती है। कृष्णा और तुंगभद्रा नदियों की मध्यवर्ती पेटी में अशोक के अभिलेखों के चार समूह उपलब्ध हुये हैं।

उदगाई—इसे एक पाण्ड्य नगर माना गया है। बताया जाता है कि राजा राजराज प्रथम ने इसे अपने मलैनाडु अभियान के क्रम में जला दिया था (तु०, वीरराजेन्द्रदेव के चरल अभिपत्र, एपि० इं०, जिल्द, XXV)।

उदयगिरि—खण्डगिरि के अंतर्गत देखिये।

उदयगिरि—यह एशिया पर्वतमाला की सबसे पूर्वी चोटी है जो पतमुंदाई नहर के किनारे गोपालपुर से तीन मील उत्तर में जाजपुर तहसील में स्थित है। यहाँ पर बोधिसत्व अवलोकितेश्वर की एक द्विभुज प्रतिमा है, जिसपर सातवीं या आठवीं शताब्दी की लिपि में एक अभिलेख उत्कीर्ण है (ओ'मैल्ली द्वारा लिखित बिहार ऐंड उड़ीसा डिस्ट्रिक्ट गजेटियर्स, कटक, 1933)।

उदयगिरि—यह नेल्लोर जिले में है। यहाँ पर कृष्णा का एक मंदिर है (आर्कियालॉजिकल सर्वे ऑव इंडिया, एनुअल रिपोर्ट, 1919-20, पृ० 15)।

उदयेंदिरम—यह उत्तरी अर्काट जिले के गुडियातम तालुक में स्थित है, जहाँ से बाण राजा विक्रमादित्य द्वितीय के अभिपत्र उपलब्ध हुए थे (एपि० इं०, III, 74)।

उदुंबरवती—हरिवंश में वर्णित यह दक्षिण भारत की एक नदी है (CLXV III, 9511)।

उलगाई—यह पाण्ड्यों का एक नगर रहा होगा। तक्कोलम अभिलेख में उदगाई पाठ मिलता है (सा० इं० इं०, जिल्द, III, पृ० 69)।

उपलद—प्रकारांतर से इसे उपलबडा कहते हैं। यह गंजम जिले के परल-किमेडी तालुक में स्थित एक गाँव है, जहाँ से राणक रामदेव के ताम्रपत्रों का एक समूह प्राप्त हुआ था (एपि० इं०, XXIII, भाग, IV, अक्टूबर, 1935, पृ० 141)।

उरगपुर—यह कावेरी के दक्षिणी तट पर स्थित था। कुछ विद्वानों ने इसे उरैयूर से समीकृत किया है जो त्रिचिनापल्ली के समीप और कावेरी नदी के दक्षिणी तट पर स्थित है। हुल्ट्श ने इसे नेगपतम से समीकृत किया है जो कावेरी के मुहाने के दक्षिण में लगभग 40 मील दूर स्थित एक तटवर्ती नगर है (एपि० इं०, XXVII, भाग, III, पृ० 116)। रघुवंश (VI, श्लोक, 59-60) में इसका वर्णन है।

उरलाम—यह आंध्र प्रदेश में श्रीकाकुलम (शिकाकोल) में स्थित है (एपि० इं०, XV, पृ० 331)।

ऊर्त्तिविषय—इसे क्योंझर (भू० पू० रियासत) में स्थित ऊर्त्ति नामक एक गाँव से समीकृत किया जा सकता है जो वैतरणी नदी के दाहिने किनारे पर स्थित खिचिंग के उत्तर-पश्चिम में लगभग 12 मील दूर स्थित है (एपि० इं०, XXV, भाग, IV, पृ० 154)।

उत्कलविषय—स्कन्दपुराण के अनुसार, तीर्थस्थानों से युक्त उत्कल दक्षिणी समुद्र के तट पर स्थित है (अध्याय, VI. 2-3; ब्रह्माण्डपुराण, II, 16. 42; III, 7. 358)। गाहड़वाल गोविन्दचन्द्र के बारहवीं शती के एक अभिलेख में उत्कल देश का उल्लेख है जहाँ पर शाक्यरक्षित नामक एक बौद्ध-विद्वान रहता था। नरसिंह प्रथम के भुवनेश्वर शिलालेख में नरसिंह की बहन चन्द्रिका द्वारा उत्कल-विषय में एकाम्र—आधुनिक भुवनेश्वर—में एक विष्णुमंदिर बनवाये जाने का उल्लेख है। इस अभिलेख से यह स्पष्ट है कि उत्कलविषय में पुरी और भुवनेश्वर क्षेत्र संमिलित थे। नारायणपाल के भागलपुर दानपत्र से ज्ञात होता है कि पाल-वंशीय जयपाल के आने पर उत्कलों का कोई राजा (उत्कलनामाधीश) अपनी राजधानी से भाग गया था। गुडवमिश्र के काल में अंकित बादल स्तंभ लेख में राजा देवपाल को गुर्जर एवं द्रविडो के राजाओं के मानमर्दन, हूणों के गर्वदलन के साथ ही उत्कलों की प्रजाति को नष्ट करने का श्रेय दिया गया है। महाशिव-गुप्त ययाति के एक सोनपुर दानपत्र में उत्कलदेश को कलिंग एवं कंगोद से भिन्न बतलाया गया है। बृहत्संहिता (XIV, 7) में इसका वर्णन मिलता है जिससे आधुनिक उड़ीसा का बोध होता है। स्कन्दपुराण (अध्याय, VI, 27) के अनुसार उत्कल में ऋषिकुल्या नदी से सुवर्णरेखा और महानदी-नदियों तक के क्षेत्र संमिलित थे। उत्कल की पूर्वी सीमा कपिशा नदी तक और पश्चिम में मेकलों के राज्य तक फैली हुयी प्रतीत होती है (रघुवंश, IV, 38)। विस्तृत विवरण के लिए द्रष्टव्य, बि० च० लाहा, ट्राइब्स इन ऐंश्येंट इंडिया, पृ० 333 और आगे, एक्प्लोरेशंस इन उड़ीसा, (मे० आर्क० स० इं०, सं० 44)।

उत्पलावती (सुत्पलावती)—इस नदी का वर्णन महाभारत में मिलता है (भीष्मपर्व, IX, 342)। हरिवंश (CLXVIII, 9510-12) में एक अन्य पाठभेद उत्पल है। यह मलय पर्वत से निकलती है (द्रष्टव्य, बि० च० लाहा, ज्यॉग्रेफिकल एसेज़, पृ० 102)।

उत्तम-गंड—चोडान्नदेवरस—विसरी विषय में स्थित इस गाँव का नाम-

करण चोल राजा अन्नदेव के नाम पर हुआ है और यह गंगा तथा पिमसानी नदियों के संगम पर स्थित है (एपि० इं०, XXVI, भाग, I)।

उत्तम-काकुल—यह उत्तरी काकुल है। यह संदर्भ आंध्र प्रदेश में स्थित शिका-कोल (श्रीकाकुलम) के प्रति प्रतीत होता है जो अपेक्षाकृत अधिक दक्षिण में स्थित श्रीकाकुलम से भिन्न है (सा० इं० इं०, जिल्द, II, 373)।

उत्तिरलाडम—यह उत्तरी लाट है (सा० इं० इं०, I, पृ० 97-99)।

वैगवूर—तिरुमलाई पहाड़ी के तल में स्थित यह एक गाँव है। यह पंगलनाडु के एक भाग, मुगाईनाडु से संबंधित था (वही, I, पृ० 97)।

वैगाई—यह एक पर्वत है जो तिरुमलाई ही है (सा० इं० इं०, I, पृ० 94-95)। यह एक नदी का भी नाम है जो मधुरा होकर बहती है (तु०, चैतन्यचरितामृत, अध्याय, 9, पृ० 141)। इसे कृतमाला से समीकृत किया गया है (तु०, कूर्म पुराण, XLVII, 35; वराहपुराण, LXXXV आदि)।

वैकुण्ठ—तिरुनेलवेलि के पूर्व में लगभग 22 मील दूर पर ताम्रपर्णी नदी के तट पर स्थित यह एक तीर्थस्थान है। श्रीचैतन्यचरितामृत के अनुसार श्री चैतन्य यहाँ पर आये थे।

वैलूर—यह गाँव उत्तरी अर्काट जिले के वांडीवाश तालुक में स्थित है। यहाँ से शिला पर उत्कीर्ण एक अभिलेख प्राप्त हुआ था। यह चिंगलपुत जिले में स्थित वायलूर से भिन्न है (एपि० इं०, XXIII, भाग, V, पृ० 174, कोप्परुंजिंगदेव का वैलूर अभिलेख)।

वैतरणी—क्योंझर (भू० पू० रियासत) के उत्तर-पश्चिम में स्थित पहाड़ियों से निकलकर यह नदी, पहले दक्षिण-पश्चिमाभिमुख और फिर पूरब की ओर बहती हुयी क्रमशः क्योंझर और मयूरभंज और क्योंझर तथा कटक की सीमा बनाती है। यह बलीपुर नामक गाँव के निकट कटक जिले में प्रविष्ट होती है और डेल्टा के पार, जहाँ यह कटक एवं बलसोर की सीमा बनाती है, पूर्वाभिमुख होकर चक्कर-दार बहती हुयी यह नदी ब्राह्मणी में मिल जाती है और चांदबाली से गुजरती हुयी धर्मा नदी के नाम से समुद्र में मिलती है। वैतरणी के दाहिने तट से फूटने वाली प्रमुख शाखाएँ प्रतिगामी धाराएँ हैं जो इसे खरसुआ से संबंधित करती हैं। हिन्दू-परंपरा के अनुसार दशमुख राक्षस रावण के चंगुल से अपनी पत्नी सीता को छुड़ाने के लिए लंका जाते समय राम क्योंझर की सीमा पर स्थित इस नदी के तट पर रुके थे। इस घटना की स्मृति में प्रतिवर्ष जनवरी में बहुत बड़ी संख्या में लोग यहाँ आते हैं (लाहा, होली प्लेसेज ऑव इंडिया, पृ० 15)। महाभारत में वर्णित यह नदी कलिंग में स्थित है (वनपर्व, अध्याय, 113; तु०, महाभारत 85, 6-7)।

पद्म एवं मत्स्य पुराणों के अनुसार इस पुण्य-सलिला को परशुराम धरती पर ले आये थे। पद्मपुराण (अध्याय, 21) में एक पवित्र नदी के रूप में इसका उल्लेख है। इसका वर्णन संयुक्त निकाय (I, 21) में है जहाँ इसे यम की नदी (यमस्य वेतरणीम) बतलाया गया है। बौद्ध अनुश्रुतियाँ वैतरणी को यम की नदी बतलाने में ब्राह्मण परंपराओं को पुष्ट करती हुयी प्रतीत होती हैं।

वल्लवाड—इसे वल्यवाद, जिसे वल्वाड भी कहा जाता है, से समीकृत किया जा सकता है। यह वर्तमान राधानगरी है जो कोल्हापुर के दक्षिण-पश्चिम में लगभग 27 मील दूर स्थित है (एपि० इं०, XXIII, भाग, I, जनवरी, 1935)।

वल्लाल—इसे संभवतः उत्तरी अर्काट जिले के गुडियात्तम ताल्लुक में स्थित तिरुवल्लम से समीकृत किया जा सकता है (एपि० इं०, XXVI, भाग, III, जुलाई, 1941) जो प्राचीन बाण क्षेत्र में एक महत्त्वपूर्ण स्थान था।

वल्लिमलाई—आंध्रप्रदेश के चित्तूर जिले में मेलपाडि से लगभग एक मील पश्चिम में स्थित एक पहाड़ी है। यह जैन-उपासना का एक प्राचीन स्थान है (सा० इं० इं०, III, पृ० 22)। यहाँ से जैन शिलालेख प्राप्त हुये हैं, जिनमें दो जैन आचार्यों और दो प्रतिमाओं के प्रतिष्ठापकों के नाम वर्णित हैं (एपि० इं०, IV.140)।

वल्लूरु—आधुनिक कुडापा जिले में स्थित यह एक गाँव है (सा० इं० इं०, III, पृ० 106)। यह त्रैलोक्यमल्ल मल्लिदेव महाराज की राजधानी थी।

वंशधरा—यह गंजम की एक अंतर्वती नदी है जो इस जिले में उत्तर से दक्षिण की ओर प्रवाहित होती है और इसमें बाँईं ओर एक सहायक नदी मिलती है। यह कलिंगपतम में बंगाल की खाड़ी में गिरती है (लाहा, रिवर्स ऑव इंडिया, पृ० 44)।

वनपल्ली—यह गाँव गोदावरी जिले में अमलपुरम तालुक में स्थित है (एपि० इं०, III, पृ० 59 और आगे)।

वनवासी देश—बृहत्संहिता में (XIV, 12) दक्षिणी संभाग में स्थित इस देश का उल्लेख मिलता है। बनवासी मैसूर के उत्तरी कनारा जिले में स्थित है (सा० इं०, इं०, I, पृ० 96)। मैसूर राज्य के शिमोगा जिले में स्थित यह एक गाँव का नाम है (एपि० इं०, XX.)। पहले यह एक शानदार राजवंश की राजधानी थी। उत्तरी कनाड़ा जिले के सिरसी तालुक में स्थित यह एक विनष्ट गाँव है जहाँ से कदम्ब-नरेश कीर्तिवर्मन के दो अभिलेख उपलब्ध हुये थे (एपि० इं०, XVI, 353 और आगे)। यहाँ पर कदम्ब राजकुमारों के प्राचीन आराध्य-

देव मधुकेश्वर का मंदिर है। यह वीरपुरुषदत्त के नागार्जुनिकोण्ड अभिलेख में वर्णित वनवासी के समान है। इस देश में बौद्धधर्म का प्रचार करने के लिये प्रचारक के रूप में थेर रक्खित भेजे गये थे। (महावंश, अध्याय, XII, श्लोक, 4)। बौद्ध युग और उसके बाद भी उत्तरी कनाड़ा को वनवासी कहा जाता था। ब्युलर के अनुसार यह घाटों, तुंगभद्रा एवं बड़ौदा के मध्यवर्ती क्षेत्र में स्थित था। हरिवंश का प्रणेता इस देश से परिचित था (XCV, 5213, 5231-33)। वायुपुराण (XLV. 125) में वनवासियों को और महाभारत के भीष्मपर्व (IX. 366) में वनवासकों का वर्णन है। दशकुमारचरित्रम् (पृ० 192-193) के अनुसार वसन्तभानु ने वनवासी के नरेश भानुवर्मा को अनन्तवर्मा पर आक्रमण करने के लिए प्रेरित किया था जिसने अपनी सीमा का अतिक्रमण किये जाने के पश्चात् तत्काल अपनी सेना को युद्ध के लिए अग्रसर कर दिया था। उसके नाना सामंतों में अश्मक के राजा ने सबसे पहले उसकी सहायता की थी। अन्य सामंतों के एकत्रित हो जाने पर उन्होंने नर्मदा के तट पर अपना स्कंधावार बनाकर एक लघु अभियान किया था। वनवासी राज्य प्राचीनवैज्यन्तीपुर है जिसे कदम्बों की राजधानी जयन्तीपुर भी कहा जाता था और जो सोरले तालुक के पश्चिमी सीमांत पर वरदा नदी के तट पर स्थित, अभिलेखों में वर्णित वैजयन्ती थी (राइस, मैसूर ऐंड कुर्ग, I, पृ० 289 और 295)। इसे पेरिप्लस के बुसोन्टिओन (Busantion) के समान माना जाता है। टालेमी ने इसे बनाउआसेई (Banouasei) कहा है। संत मार्टिन के अनुसार यहाँ युवान-च्वाङ् आया था जिसे उसने कों-कि-ना-पु-लो : कोंकणपुर कहा है (मैक्क्रिडिल, ऐंश्येंट इंडिया ऐज डिस्क्राइब्ड बाई टालेमी, एस० एन० मजुमदार संस्करण, पृ० 179)।

वञ्जि—प्राचीन तमिल ग्रंथों में इसे करूर भी कहा जाता है। कावेरी या पोन्नी नदी के उत्तरी तट पर स्थित यह एक नगर है (सा० इं० इं०, जिल्द, III, पृ० 444)। कुछ लोगों के मतानुसार मूलतः यह केरलों या चेरों की राजधानी थी जिसे अब कोचिन के निकट पेरियार नदी के तट पर तिरु-करूर कहा जाता है (कै० हि० इं०, I, पृ० 595)।

वरदा—अपना पौराणिक नाम धारण किये रहने वाली यह नदी अनंतपुर के उत्तर में पश्चिमी घाट से निकलती है और करजगी के पूर्व में तुंगभद्रा में मिलती है। वेदवती नाम से भी विश्रुत वरदा नदी कृष्णा की एक दक्षिणी सहायक नदी है। मार्कण्डेयपुराण में वर्णित वाह्या नदी अग्निपुराण की वरदा ही है (लाहा, रिवर्स ऑव इंडिया, पृ० 46, 50)।

वरगुणमंगलम्—इसे राजसिंग कुलक्की भी कहा जाता है। इसे शिवगंगा

(भू० पू० जमींदारी) में स्थित राजसिंगमंगलम से समीकृत किया जा सकता है (सा० इं० इं०, जिल्द, III, पृ० 450)। पाण्ड्यदेश में स्थित 18 वैष्णव तीर्थ स्थलों में से यह एक है। यह तिरुनेलवेलि के पूर्वोत्तर में 18 मील दूर स्थित है (एपि० इं०, XXI, भाग, III)।

वराहवर्त्तनी—संभवतः यह शिकाकोल के निकट है। हस्तिवर्मन के नरसिंहपुर अभिपत्रों में इसका उल्लेख है (एपि० इं०, XXIII, भाग, II, अप्रैल, 1935, पृ० 65)। वराहवर्त्तनी विषय में स्थित रोहणकी गाँव को वर्तमान रोनांकी से समीकृत किया जा सकता है जो शिकाकोल तालुक के सिंहपुर में स्थित एक गाँव है। वराहवर्त्तनी विषय स्थूल रूप से शिकाकोल एवं तेक्कलि के बीच के तटीय क्षेत्र का वाचक है (एपि० इं०, XXIII, भाग, II, अप्रैल, 1935, पृ० 65)।

वत्सगुल्म—वाकाटक विन्ध्यशक्ति द्वितीय के बासिम-अभिपत्रों में इस स्थान का उल्लेख है, जो संभवतः विन्ध्यशक्ति की राजधानी थी (एपि० इं०, XXVI, भाग, III, जुलाई, 1941)। राजशेखर ने अपनी कर्पूरमञ्जरी (पृ० 27) में वच्छोमी का उल्लेख किया है जो संस्कृत वात्सगुल्मी का वाचक है। वच्छोमी नाम इसकी राजधानीवच्छोम (वत्सगुल्म) के नाम से व्युत्पन्न है और वैदर्भी के समान है। राजशेखर ने बतलाया है कि वच्छोम दक्षिणापथ में स्थित था। राजशेखर के समय में यह विद्या का एक केंद्र था। इसे महाराष्ट्र में अकोला जिले के बासिम तालुक के मुख्यावास बासिम से समीकृत किया गया है (नाम की उत्पत्ति के लिए द्रष्टव्य, अकोला डिस्ट्रिक्ट गज़ेटियर, पृ० 325 और आगे)।

वाघौर—यह दक्षिण से पश्चिम में चार मील विस्तृत वाघुर है (एपि० इं०, XXV, भाग, V, पृ० 208)।

वातापि—यह एक गाँव का नाम है (सा० इं० इं०, I, पृ० 144, 152)। वातापि का युद्ध 642 ई० में हुआ था। सिरुत्तोण्ड युद्ध में विद्यमान था।

वेह्का—यह वेगवती नदी का तमिल नाम है जो कांजीवरम् से बहती है और विल्लीवलम् के निकट पालारु नदी में मिलती है (वही, III, 186)।

वेलनाण्डु—सकरंबु-अभिलेख में इसका उल्लेख है (एनुअल रिपोर्ट ऑव साउथ इंडियन एपिग्राफी, 1917, पृ० 116; एपि० इं०, XXI V, भाग, VI, पृ० 273)। वेलनाण्डुविषय गुंटुर जिले में आधुनिक रेपल्ले तालुक का वाचक है (इं० ऐं०, XII, 91)। वेलनाण्डु के कुछ उत्तरकालीन प्रमुखों ने मध्यदेश में स्थित कीर्त्तिपुर को अपना आदिस्थान माना है।

वेलपादि—उत्तरी अर्काट जिले में यह वेल्लोर का उपकण्ठ है (सा० इं० इं०, I, पृ० 76; एपि० इं०, IV, पृ० 81)।

वेल्लूर—बृहत्संहिता में वर्णित यह दक्षिण का एक नगर है (XIV. 14)। महाराष्ट्र में (भूतपूर्व निजाम हैदराबाद में) अपने गुहा मंदिरों के लिए सुविख्यात यह वेरुल, येरुला, एलूरा या एलौरा ही है।

वेलुकण्टक—यह जंगल दक्षिणापथ में था (अंगु०, IV, 64)।

वेलुंगगुण्ट—चित्तूर जिले में स्थित यह आधुनिक वेलिगल्लु है (एपि० इं०, XXIV, भाग, IV, पृ० 191)।

वेलुर—गंग अनंतवर्मन् के स्वल्प-वेलुर-दानपत्र के अनुसार इस नाम के दो गाँव हैं, एक छोटा और दूसरा विशाल (एपि० इं०, XXIV, भाग, III, जुलाई, 1937, पृ० 133)।

वेणा—बृहत्संहिता (XIV. 12) में वर्णित यह दक्षिण की एक नदी है।

वेणाद—इसमें वर्तमान् त्रावणकोर संमिलित माना जाता है जिसकी राजधानी कोल्लम् (क्विलोन) थी। बहुधा इसमें वे क्षेत्र संमिलित हैं जो वञ्चि राजवंश की सभी शाखाओं द्वारा प्रशासित थे (एपि० इं०, XXVII, भाग, VII, जुलाई, 1948, पृ० 305, पा० टि०)।

वेंगइ-नाडु—यह सुविख्यात देश वेंगी हैं (सा० इं० इं०, जिल्द, I, पृ० 63)। यह पूर्वी चालुक्यों का एक देश है। कुलोत्तुंगदेव या राजनारायण पहले वेंगी के सिंहासन पर आरुढ़ हुये। तदनंतर केरल, पाण्ड्य, कुंतल और अन्य देशों पर विजय प्राप्त करने के पश्चात् चोल-राज्यसिंहासन पर उनका अभिषेक हुआ था (वही, जिल्द, I, पृ० 51)।

वेंगी—(वेंगीपुर) इसे पेद्द-वेगी से समीकृत किया जाता है, जो गोदावरी जिले में एल्लोर के समीप एक गाँव है (एपि० इं०, XXV, भाग, I, जनवरी, 1939, पृ० 45; एपि० इं०, IX, पृ० 58)। यह गोदावरी एवं कृष्णा के बीच में स्थित है। सोमेश्वरदेव के कुरुस्पल शिलालेख के अनुसार वीर चोल अपने पिता द्वारा नियुक्त इस प्रदेश का उप-राजा था। वीर-राजेन्द्रदेव (शक० 991) के चरला-अभिपत्र में वेंगी देश का उल्लेख है, जिसपर राजा वल्लभ-वल्लभ ने पुर्नविजय प्राप्त की थी (एपि० इं०, XXV, भाग, VI, अप्रैल, 1940)। नन्दिवर्मन द्वितीय के पेद्दवेगी अभिपत्रों के अनुसार वेंगी-नरेश हस्तिवर्मन् को शालङ्कायन वंश का माना जाता है। कुलोत्तुंग प्रथम के 1087 ई० में अंकित टेकी-अभिपत्रों से प्रकट होता है कि उसका पुत्र वीर चोड वेंगी का राज्यपाल था। कुलोत्तुंग के पुत्रों ने बारी-बारी से उपराजाओं के रूप में वेंगी पर शासन किया था। वेंगी की सीमा उत्तर में महेन्द्र पर्वत और दक्षिण में नेल्लोर जिले में मन्नेरु थी (एपि० इं०, VI, 346; एस० के० आयंगर कृत, ऐंश्येंट इंडिया, पृ० 145 भी द्रष्टव्य।

वेंकटगिरि—उत्तरी अर्काट जिले में तिरुपति के निकट यह तिरुमलाई पर्वत है जो मद्रास के पश्चिमोत्तर में लगभग 72 मील दूर पर स्थित है जहाँ प्रसिद्ध वैष्णव सुधारक रामानुज ने बारहवीं शती ई० में विष्णु की पूजा की थी (लाहा, माउंटेंस ऑव इंडिया, पृ० 21)। स्कन्दपुराण के अनुसार इसे वेंकटाचल कहा जाता है (अध्याय, I, श्लोक, 36-48) जो सात योजन विस्तृत एवं एक योजन ऊँचा है।

वेप्पम्दु—उत्तरी अर्काट जिले में यह अगारपर्ण्ण के एक भाग आन्दिनाडु से संबंधित था (सा० इं० इं०, जिल्द, I, पृ० 80-82, 131)।

विजयनगर—कर्णाटदेश के मध्य में स्थित विजयनगर बीजानगर ही है। अपने वैभव-काल में इस राज्य में कृष्णा नदी के उत्तर में स्थित जिले, पश्चिमी तट पर मलाबार क्षेत्र, त्रावणकोर एवं कोचिन को छोड़कर संपूर्ण मद्रास राज्य, मैसूर, एवं उसके धारवाड़ तथा उत्तरी कनाड़ा जिले संमिलित थे। इसके सुंदर राजप्रासाद पर्वतों की भाँति ऊँचे थे (सा० इं० इं०, जिल्द, I, पृ० 69-70, 161, 164)। गाँवों के अतिरिक्त यहाँ पर अनेक जन-संकुल और समृद्धिशाली नगर थे। अनेक नगर प्राचीन थे और केवल कतिपय ही विजयनगर के काल में बसे थे। साम्राज्य की विशाल जनसंख्या को विभिन्न वर्गों में विभक्त किया जा सकता है। मोटे रूप से उन्हें दो वर्गों में रखा जा सकता है : उपभोक्ता एवं उत्पादक। कुछ विशेष वर्ग के लोग तत्कालीन सामाजिक क्रियाओं यथा खेल एवं मनोरंजन में अधिक भाग लेते थे और वे राज्य तथा जनता दोनों के द्वारा ही संरक्षित थे। गाँव की एक सभा होती थी। वहाँ पर व्यावसायिक समुदाय एवं श्रेणियाँ थीं। यह विजय-नगर के राजाओं की राजधानी थी जो अपने मंदिरों एवं प्रासादों आदि के लिए प्रसिद्धथी और जो 1565 ई० में मुसलमानों द्वारा अंशत: नष्ट कर दी गई थी। मैसूर में विजयनगर के अभिलेखों की लगभग उतनी ही संख्या है जितनी कि होयसलों के अभिलेखों की। विजयनगर के प्रसिद्ध कृष्ण-मंदिर के कुछ अभिलेखों से यह ज्ञात होता है कि जब 1514 ई० में विजयनगर राजाओं में सर्वश्रेष्ठ कृष्ण-देवराय ने उड़ीसा के गजपति राजा प्रतापरुद्र से उदयगिरि का किला छीन लिया था, तब वह वहाँ से अपने साथ बालकृष्ण की एक प्रतिमा ले आया था, जिसको उसने अपनी ही राजधानी में एक कृष्ण-मंदिर में अधिष्ठित किया था (आर्क० स० इं०, एनुअल रिपोर्ट, 1916-17, भाग, I, पृ०, 14; आर्क० स० इं०, एनुअल रिपोर्ट, 1908-09, भाग, II में प्रकाशित कृष्ण शास्त्री का लेख, द सेकंड विजयनगर डाइनेस्टी', मद्रास विश्वविद्यालय द्वारा 1951 में प्रकाशित, टी० वी० महालिंगम की पुस्तक, 'इकॉनॉमिक लाइफ इन द विजयनगर एंपायर)। प्राचीन पम्पा, जिसे अब हांपी कहते हैं, विजयनगर का नाम था।

विजयवाटि—कृष्णा नदी के तट पर स्थित यह आधुनिक बैजवाड़ा है (एपि० इं०, XXXII, भाग, V, 163)।

विक्रमपुर—त्रिची जिले के मुसुरि तालुक में कण्णनूर का यह प्राचीन नाम है (एपि० इं०, III, पृ० 8-9)।

विलवट्टि—संभवतः यह वव्वेरु गाँव है। कुछ विद्वानों के अनुसार यहाँ से लगभग 12 मील दूर पूर्व में स्थित यह विडवलूरु गाँव हो सकता है (एपि० इं०, XXIV, भाग, VII, पृ० 301)।

विलित्रम्—यह त्रावणकोर में स्थित एक बंदरगाह है (सा० इं० इं०, III, पृ० 450)।

विन्नकोट—इसे कित्स्ना जिले में गूडिवाड तालुक में स्थित आधुनिक विन्नकोट से समीकृत किया जा सकता है (एपि० इं०, XXV, भाग, III, पृ० 140)।

विषमगिरि—यह गाँव गंजम जिले के अस्क तालुक में स्थित है (एपि० इं०, XIX, पृ० 134) इन्द्रवर्मनदेव का विषमगिरि अभिपत्र)।

विसरि-नाण्डु—तेरहवीं शताब्दी ई० के मध्य अंकित एक अभिलेख में इसका वर्णन, अन्नदेव के एक पूर्वज, एरुव-भीम द्वारा विजित प्रदेशों के अंतर्गत किया गया है (एपि० इं०, XXVI, भाग I, पृ० 40; मद्रास एपिग्रेफिकल कलेक्शन, 1935-36 की संख्या 308; भारती, XV, पृ० 158)।

व्याघ्राग्रहार—यह पुलियूर (व्याघ्रगाँव) का संस्कृत समानार्थक है जो चिदांबरम का एक नाम है (सा० इं० इं०, भाग, I, 112 और आगे, पा० टि०)।

व्यास-सरोवर—जाजपुर रोड स्टेशन से दो मील दूर स्थित यह एक तालाब है जो अब पट गया है (ओ 'मेल्ली द्वारा लिखित, बिहार ऐंड उड़ीसा डिस्ट्रिक्ट गजेटियर, कटक, 1933)।

यौगध—यह गंजम से 18 मील दूर पश्चिमोत्तर में स्थित है। यहाँ पर अशोक का एक अभिलेख प्राप्त हुआ है (का० इं० इं०, जिल्द, I, आर्क० स० रि०, जिल्द, XIII)।

ययातिनगर—यह उड़ीसा में कटक का प्राचीन नाम है (एपि० इं०, III, 323 और आगे)। कुछ लोगों ने इसे उड़ीसा में जाजपुर से समीकृत किया है किन्तु यह मत ग्राह्य नहीं प्रतीत होता क्योंकि ययातिनगर महानदी तथा जाजपुर वैतरणी नदी के तट पर स्थित था। अपिच्, अभिलेख में निहित राजशास कटक से प्रचलित की गयी थी जो स्पष्टतः आधुनिक कटक नगर ही था (एपि० इं०, III, पृ० 341)।

येडातोर (इडैलितुरैनाडु)—यह मैसूर जिले में स्थित एक छोटा सा गाँव है। फ्लीट ने इसे एडेडोर के परगने से समीकृत किया है (सा० इं० इं०, जिल्द, III, पृ० 465)।

येवुर—यह मैसूर राज्य (भूतपूर्व निज़ाम हैदराबाद के राज्य में) के गुलबर्ग जिले के सोरपुर तालुक में स्थित एक गाँव है जहाँ से जयसिंह द्वितीय और विक्रमादित्य षष्ठम के समय के अभिलेख प्राप्त हुये थे (एपि० इं०, XII पृ० 268 और आगे)।

● ●

III

पूर्वी भारत

अग्रद्वीप—यह नदिया जिले में भागीरथी में स्थित एक द्वीप है (इंपीरियल गज़ेटियर्स ऑव इंडिया, ले० डब्ल्यू० डब्ल्यू० हंटर, जिल्द, I, पृ० 59)।

अहियारी—यह गाँव दरभंगा के पश्चिमोत्तर में लगभग 15 मील दूर कमतौल के थोड़ा दक्षिण-पूर्व में स्थित है। परंपरा के अनुसार यहाँ पर गौतम ऋषि का मंदिर था जिनकी पत्नी अहल्या अपने रूप-सौंदर्य के लिए विख्यात् थीं (ओ' मैल्ली द्वारा लिखित, बंगाल डिस्ट्रिक्ट गज़ेटियर्स, दरभंगा, पृ० 141)।

ऐरावाट्टमण्डल—यह पटोदाविषय में संमिलित था। इसे कटक जिले के वनकी थाना के अंतर्गत् रटागढ़ से समीकृत किया गया है (एपि० इं०, XXVI, भाग, 2, पृ० 78; ज० बि० उ० रि० सो०, XVII, 4)।

अजय—यह नदी बर्दवान जिले के कटवा में भागीरथी में मिलती है और बर्दवान तथा बीरभूम जिलों की प्राकृतिक सीमा निर्मित करती है (लाहा, रिवर्स ऑव इंडिया, पृ० 27)। इसे अजमती भी कहा जाता है। एरिअन की इंडिका के अनुसार यह काटद्वीप से प्रवाहित होने वाली अम्यस्टीज नदी है (ऐंश्येंट इंडिया ऐज़ डिस्क्राइब्ड बाई मेगस्थनीज़ ऐंड एरिअन, पृ० 191)। बंगाली महाकवि जयदेव केंदुलि (केण्दुविल्व) के समीप इस नदी के तट पर पैदा हुये थे।

अल्लकप्प—अल्लकप्प वेठदीप से अधिक दूर नहीं था। इसे शाहाबाद जिले में मसर से वैशाली जाने वाले रास्ते पर स्थित बतलाया जाता है। यह दस लीग विस्तृत था और यहाँ का राजा घनिष्ट रूप से वेठदीप के राजा वेठदीपक से संबंधित था (धम्मपद कमेंटरी, अंग्रेजी अनुवाद, हार्वर्ड ओरियटल सीरीज़, सं० 28, पृ० 247)। गणतंत्रात्मकजन बुलि अल्पकप्प के निवासी थे। उन्होंने बुद्ध के अवशेषों का एक भाग प्राप्त किया था और उनके ऊपर एक स्तूप का निर्माण कराया था (दीघ निकाय, II, पृ० 167)। कुछ लोगों के अनुसार बुलि जन गंगा के दोनों तटों पर आधुनिक मुजफ्फरपुर एवं शाहाबाद जिलों में रहते थे (एल० पीटेख, नर्दर्न इंडिया एकार्डिग टु शुई-चिग-चु, पृ० 52)।

अंबलट्ठिका—दीघ निकाय (I, 1) में वर्णित राजगृह और उसके निकट

स्थित यह एक बौद्ध स्थल है। अंबलट्ठिका में स्थित राजागारक राजा बिम्बिसार का उद्यान-गृह था (सुमंगलविलासिनी I, 41)। बुद्धघोष के अनुसार राजोद्यान का यह एक उचित नाम था क्योंकि उसके द्वार पर एक नया आम्र-कुंज था (सुमंगल-विलासिनी I, पृ० 41)। यह राजोद्यान-गृह राजगृह एवं नालंदा के बीचोंबीच था (विनय, II, पृ० 287)। बुद्ध-काल में राजगृह से नालंदा तथा और आगे पूर्व एवं उत्तर-पूर्व में जाने वाले राजपथ पर यह प्रथम विश्राम-स्थल था (दीघ निकाय, I, 1, वही, II, 72 और आगे)।

अम्बपालिवन—यह आम्र-त्रिकुंज वैशाली में स्थित था जहाँ कुछ समय के लिए महात्मा बुद्ध रुके थे। यह नगरवधू अम्बपाली द्वारा प्रदत्त उपहार था (दीघ निकाय, II, 94)।

अम्बसण्डा (आम्रखण्ड)—वेदियक पर्वत और इन्दसालगुहा के उत्तर में राजगृह के पूर्व में स्थित यह एक ब्राह्मण गाँव था (दीघ निकाय, II, 263)। इसका नामकरण समीपस्थ आम्रवनों के कारण था (सुमंगलविलासिनी, III, 697)।

अम्बवन—यह आम के वृक्षों का एक झुरमुट था (सुमंगलविलासिनी, II, 399)। यह राज-वैद्य जीवक का राजगृह में स्थित आम का बाग था। यहाँ पर बुद्ध कुछ समय तक थे रहे (दीघ, I, 47, 49)। मगध-नरेश अजातशत्रु बुद्ध का दर्शन करने यहाँ आया था।

अंधकविंद—यह मगध में था जहाँ पर बुद्ध एक बार रुके थे। ब्रह्मा सहमपति यहीं पर तथागत से मिले थे और उनकी उपस्थिति में उन्होंने कुछ गाथाएँ कही थीं (संयुत्त निकाय, I, 154)। एक कच्ची सड़क द्वारा यह राजगृह से मिला हुआ था (विनय-महावग्ग, I, 109)।

अंधपुर—सेरि राज्य के निवासियों ने, जो बर्तनों एवं भांडों के व्यापारी थे, तेलवाह नदी को पार करके इस नगर में प्रवेश किया था।

अङ्ग—अङ्ग प्राचीन भारत के षोडश्-महाजनपदों में से एक था और वहुत संपन्न एवं समृद्धिशाली था (अंगु०, I, 213; बि० च० लाहा, इंडिया ऐज़ डिस्क्राइब्ड इन अर्ली टेक्स्टस ऑव बुद्धज्म ऐंड जैनिज्म, पृ० 19; तु० महाभारत, 822, 46; महावस्तु, II, 2; विनय टेक्स्टस, सै० बु० ई०, II, 146, टिप्पणी)। इसका वर्णन योगिनीतंत्र में हुआ है (2, 2, 119)। अथर्ववेद में अङ्गों को मगधों, मुजावंतों और गन्धारों के साथ एकवि शिष्ट जन बतलाया गया है, यद्यपि उनके प्रदेश का निर्देश कहीं पर नहीं किया गया है (V. 22. 14)। उन्हें व्रात्य या कट्टर ब्राह्मण धर्म के प्रभाव के बाहर रहने वाला जन कहकर तिरस्कृत समझा जाता

था (ज०रा० ए० सो०, 1913, 155 और आगे; ज० ए० सो० बं०, 1914, 317 और आगे)। गोपथ-ब्राह्मण में उन्हें अङ्ग, मगध कहा गया है (11. 9)। पाणिनि ने अङ्ग, वङ्ग, कलिंग, पुण्ड्र आदि को एक वर्ग में रखा है (VI.I.170; II.4.62) जो सभी मध्यदेश में थे। महाभारत में अङ्ग, वङ्ग, कलिंग आदि को बालि की पत्नी सुदेष्णा से ऋषि दीर्घतमस् द्वारा उत्पन्न वंशज बतलाया गया है (I.104)। त्सिमर एवं ब्लूमफ़ील्ड के अनुसार अङ्ग जन बाद में गंगा और सोन के तट पर रहते थे और अनुमानतः इनका प्राचीन आवास भी वहीं था (अल्टिंडिशेज लेबेन, 35; हिम्स ऑव द अथर्ववेद, 446, 449)। पार्जिटर ने उन्हें अनार्य बतलाया है, जो समुद्र-पार से पूर्वी-भारत में आये थे (ज० रा० ए० सो०, 1908, पृ० 852)। प्रजात्या ये लोग कलिंगों एवं बंगाल के मैदान के अन्य जनों से संबंधित थे (कैंब्रिज हिस्ट्री ऑव इंडिया, I, पृ० 534)। भोजवर्मन के बेलाव-ताम्रपत्र के अनुसार वर्मन् नरेशों ने अपनी सत्ता इस देश तक स्थापित कर ली थी (न० गो० मजूमदार, इंस्क्रिपशंस ऑव बंगाल, जिल्द, III, पृ० 15 और आगे)। कर्ण के रेवल शिलालेख में अंगों का वर्णन काँगड़ा घाटी के कीरों, लाट, कुंतल एवं कुलाञ्च के साथ हुआ है। अंग में आधुनिक भागलपुर के निकटवर्ती भूभाग संमिलित थे (एपि० इं०, XXIV, भाग, 3, जुलाई, 1937)। कन्नौज की रानी कुमारदेवी के सारनाथ अभिलेख के अनुसार अङ्ग राजा रामपाल के अधीन मोहन नामक उपराजा द्वारा प्रशासित था जो कुमारदेवी का नाना था (एपि० इं०, IX, पृ० 311)। अमोघवर्ष के नवीं शती ई० में उत्कीर्ण नीलगुंड शिलालेख में कहा गया है कि अङ्ग, वङ्ग और मगध के राजा उसकी पूजा करते थे (एपि० इं०, VI, 103)। कृष्ण तृतीय के दिउली दानपत्र में बतलाया गया है कि अंग, मगध और अन्य जन कृष्ण द्वितीय की अभ्यर्थना करते थे (एपि० इं०, V, 193)।

अङ्ग जन का नामकरण उनके एक राजा अङ्ग के नाम पर हुआ था।[1] रामायण के अनुसार अङ्ग नाम पड़ने का यह कारण है कि कामदेव मदन रुद्र के कोप से अपनी रक्षा करने के लिए भाग कर इस देश में आये थे और यहाँ पर अपना शरीर त्याग कर अनंग हो गये थे। यह इसके नाम का एक रोचक भाषाशास्त्रीय विवेचन है।[2] आनव राज्य जिसकी धुरी अंग थी, पाँच राज्यों में विभक्त था, जिनका

---

[1] **ऐतरेय ब्राह्मण (VIII. 22) में अङ्ग वैरोचन का नाम अभिषिक्त राजाओं की सूची में संमिलित है।**

[2] **रामायण, 47, 14.**

नामाभिधान राजा बलि के पाँच पुत्रों के आधार पर हुआ बतलाया जाता है। पार्जिटर का विचार है कि आनवों के अधिकार में संपूर्ण पूर्वी विहार, बंगाल खास और उड़ीसा थे, जिसमें अङ्ग, वङ्ग, पुण्ड्र, सुह्म और कलिंग के राज्य संमिलित थे।[1] पार्जिटर के कथन की पुष्टि किसी अन्य विश्वसनीय साक्ष्य द्वारा नहीं होती। अङ्ग के राजकुमार बहुत सुन्दर थे और उनके निवास-स्थान को अंग कहा जाता था।[2] अंगों के अधिकार में संभवतः मुंगेर-सहित आधुनिक भागलपुर जिले के क्षेत्र संमिलित थे।[3]

पहले अङ्गों की राजधानी को मालिनी कहते थे; बाद में लोमपाद के प्रपौत्र[4] चंपा नामक राजा के सम्मान में इसका नाम बदलकर चंपा या चंपावती[5] कर दिया गया था। चंपा नगरी का निर्माण महागोविन्द ने करवाया था।[6] यहीं पर बुद्ध ने विवश होकर भिक्षुओं को चप्पल या खड़ाऊँ के प्रयोग की आज्ञा दी थी।[7] बुद्ध के काल में चंपा कोई गाँव नहीं था, वरन् एक बड़ा नगर था।[8] किसी समय यहाँ पर इक्ष्वाकु-वंशीय अशोक के पुत्र महिंद और उसके पुत्रों एवं पौत्रों का राज्य था।[9] उवासगदसाओ नामक एक जैन ग्रंथ में[10] कहा गया है कि महावीर के एक शिष्य सुधर्मन् के काल में चंपा में पुण्णभद्द चैत्य नामक एक देवस्थान था। बुद्ध एवं महावीर के आगमन से इस नगर की श्रीवृद्धि हुयी थी। महावीर ने यहाँ पर तीन बार चातुर्मास्य व्यतीत किया था।[11] यह जैनों के बारहवें तीर्थंकर वासुपूज्य

---

[1] ऐंश्येंट इंडियन हिस्टॉरिकल ट्रेडिशन, पृ० 293.

[2] सुमंगलविलासिनी, भाग, I, पृ० 279.

[3] बि० च० लाहा, इंडिया ऐज डिस्क्राइब्ड बाई अर्ली टेक्स्टस ऑव जैनिज्म ऐंड बुद्धिज्म, पृ० 50.

[4] महाभारत, XII, 5, 134; XIII, 42. 2359; वायु पुराण, 19, 1056; मत्स्य, 48, 97; ब्रह्माण्ड०, 13, 43; विष्णु०, IV, 18; 4.

[5] हरिवंश, XXXI, 1966-1700; महाभारत, शांतिपर्व, 34, 35.

[6] दीघ, II, पृ० 235.

[7] विनयपिटक, I, पृ० 179 और आगे।

[8] दीघ, II, पृ० 146.

[9] दीपवंस, पृ० 28; वंसत्थपकासिनी, (पा० टे० सो०), पृ० 128-129.

[10] हर्नले संस्करण, पृ० 2 टिप्पणियाँ।

[11] एस० स्टीवेंसन, हार्ट ऑव जैनिज्म, पृ० 41.

का जन्म एवं मृत्यु-स्थान था।[1] इसे चंदना और उसके पिता का मुख्यावास बतलाया गया है।[2] यह जैन मत का एक महान् केंद्र था। यहाँ प्रभव एवं स्वयंभव आये थे। स्वयंभव ने यहीं पर दशवैकालिक-सूत्र की रचना की थी।[3] चंपापुरी के एक ब्राह्मण ने पाटलिपुत्र-नरेश बिन्दुसार को सुभद्रांगी नामक एक लड़की दिया था।[4]

महाभारत[5] में चंपापुरी या चंपानगर या चंपामालिनी को एक तीर्थ-स्थान बतलाया गया है। युवान-च्वाङ ने इस पुर को चेन-पो (Chan'-po) कहा है। यह जैनियों का एक तीर्थस्थान है। चंपा नगरी आधुनिक भागलपुर से थोड़ी ही दूरी पर स्थित है। चंपा नदी अंग और मगध के मध्य की सीमा थी।[6] महाभारत-काल में भी यह चंपक वृक्षों के बागों से परिवृत[7] था। बुद्धघोष नामक एक बौद्ध भाष्यकार ने पाँच प्रकार के चंपक पुष्पों से युक्त गग्गरा नामक तालाब के पास एक उपवन का उल्लेख किया है।[8] जैन-ग्रंथ चंपकश्रेष्ठिकथा में चंपा को अति समृद्धिशाली दशा में बतलाया गया है। वहाँ पर गंधी, मसाला और मिश्री के विक्रेता, जौहरी, चर्मकार, मालाकार, बढ़ई, स्वर्णकार और बुनकर आदि थे।[9] बिम्बिसार के पिता भट्टिय के समय से ही यह मगध के उपराजा का केंद्र था। चंपा के निकट चंपा की रानी गग्गरा द्वारा निर्मित गग्गरापोखरणी नामक एक सरोवर था जो परिव्राजक मुनियों और संन्यासियों के विश्राम-स्थल के रूप में प्रसिद्ध था। यह दार्शनिक परिसंवादों की ध्वनि से गुंजित रहता था (समयपवादका)। दशकुमार-चरितम् में बतलाया गया है कि चंपा में दुष्टों का बाहुल्य था।[10] चंपा पर चन्द्रवर्मन ने अधिकार कर लिया था, जहाँ का राजा सिंहवर्मन सिंह की भाँति दुर्दांत था,

---

[1] सी० जे० शाह, जैनिज्म इन नार्थ इंडिया, पृ० 26, पा० टि० 5.

[2] इंडियन कल्चर, जिल्द, III.

[3] हेमचन्द्र कृत परिशिष्टपर्वन्, अध्याय, IV व V.

[4] रा० ला० मित्र, नेपालीज बुद्धिस्ट लिटरेचर, पृ० 8.

[5] वनपर्व, अध्याय, 85.

[6] जातक, IV, 454.

[7] अनुशासनपर्व, अध्याय, 42.

[8] सुमंगलविलासिनी, I, 279-80.

[9] शाह, जैनिज्म इन नार्थ इंडिया, पृ० 95.

[10] (मदनमोहन तर्कालंकार संस्करण) अध्याय, I, पृ० 3, 6; अध्याय, II, पृ० 7, 11, 12.

(दशकुमारचरितम्, पृ० 52)। अङ्ग देश में, राजधानी चंपा नगरी के बाहर, गंगा नदी के तट पर मरीचि नामक एक महर्षि रहते थे (वही, पृ० 59)। इस नगर में निधिपालित नामक एक धनी व्यापारी रहता था, जिसके नकद धन और सुरूप को लेकर वसुपालित से झगड़ा था (वही, पृ० 67)।

पाँचवीं शती ई० में भारत-भ्रमण करने वाले एक चीनी यात्री फाह्यान ने गंगा के प्रवाह का अनुसरण करते हुये पूर्व की ओर 18 योजन आगे जाकर, इस नदी के दक्षिणी तट पर चंपा राज्य को देखा था। यहाँ पर उसने कुछ स्तूप देखे थे।[1]

युवान-च्वाङ जो सातवीं शती ई० में भारत आया था, गंगा के दक्षिण की ओर स्थित चंपा गया था, जिसकी परिधि 4,000 ली से भी अधिक थी। उसने अधिकांशतया नष्टप्राय विहार देखे थे। चंपा नगरी में 200 से अधिक हीनयान भिक्षु थे, जहाँ बुद्ध गये थे।

अङ्ग में ईरणपर्वत संमिलित था, जहाँ से चंपा के अलावा युद्ध-गज प्राप्त होते थे।[2] रामायण के अनुसार सीता की खोज के लिए सुग्रीव ने अपने अनुगामी वानरों को पूरब में स्थित देशों में भेजा था, जिसमें अंग भी एक था।[3]

अङ्ग में 80,000 गाँव थे, जो एक अतिरंजित परंपरानुगत संख्या है।[4] अङ्ग ऋग्वेद के सुविख्यात ऋषि (औरव) का देश था।[5] ललितविस्तर[6] के अनुसार अङ्ग की एक विशिष्ट स्थानीय लिपि थी। कपिल नामक एक ब्राह्मण-तरुण ने अंग-नरेश द्वारा अधिकृत संपत्ति का उल्लेख किया है।[7]

प्राचीन अङ्ग में ऋष्यश्रृंग ऋषि का तपोवन, कर्णगढ़ या कर्ण का दुर्ग, जह्नु-आश्रम और मोदागिरि या मुंगेर संमिलित थे। महाभारत में अङ्ग और वंग को एक ही विषय या राज्य बतलाया गया है (44.9)। बुद्ध के काल में अङ्ग राज्य कुछ सुविख्यात-विधर्मी शिक्षकों का कार्यक्षेत्र था।[8]

---

[1] लेग्गे, द ट्रावेल्स ऑव फा-ह्यान, 100.

[2] वाटर्स, ऑन युवान-च्वाङ्, II, पृ० 181-182.

[3] रामायण, 652, 22-23.

[4] विनयपिटक, I, पृ० 179.

[5] X. 138; पार्जिटर, एं० इं० हि० ट्रै०, पृ० 132.

[6] ललितविस्तर, 125-26.

[7] रॉकहिल, लाइफ ऑव द बुद्ध, पृ० 129.

[8] मज्झिम निकाय, II, पृ० 2.

अङ्ग-राज्य में आपन[1] और भड्डियनगर जिसमें सुमनादेवी की पुत्री विशाखा रहती थी, जैसे अनेक नगर थे।[2] भड्डिय से आपन का मार्ग अंगुत्तराप होकर के था जो स्पष्टत: एक निचला क्षेत्र था।[3] अङ्गों का अस्सपुर नामक एक अन्य नगर था जहाँ पर बुद्ध गये थे।[4]

बुद्ध के काल में अंग-मगध में कई महाशालाएँ या स्नातक-संस्थाएँ थीं, जो राजा पसेनदि और बिम्बिसार द्वारा प्रदत्त राजकीय भूमिदानों के माध्यम से चलायी जाती थीं। महागोविन्द सुत्तांत के अनुसार महागोविन्द ने इस प्रकार के सात विद्यालयों की स्थापना अपने काल के सात प्रमुख राज्यों में की थी जिनमें उसकी राजधानी चंपा सहित अङ्ग भी संमिलित था। ये सभी धर्मशास्त्रीय विद्यालय थे, जिनमें केवल ब्राह्मण तरुणों (माणवका) को प्रवेश मिलता था। इनमें से प्रत्येक में विद्यार्थियों की संख्या तीन सौ से कम नहीं थी। कुलपति की व्यापक प्रसिद्धि के कारण यहाँ पर विविध स्थानों एवं विविध दिशाओं से छात्र आकर्षित होकर आते थे।[5]

अङ्ग जनों में स्त्री-बच्चों के विक्रय एवं रोगग्रस्तों के परित्याग की प्रथा थी।[6] चंपा एवं राजगृह के बीच जनता से कर वसूल करने के लिए एक शुल्कगृह था।[7]

दशरथ के अश्वमेध में अङ्ग देश का नरेश आमंत्रित था।[8] बिभाण्डक के पुत्र ऋषि ऋष्यश्रृंग रोमपाद के निमंत्रण पर अङ्ग आये थे जो उस समय अङ्ग देश का शक्तिशाली राजा था। राजा रोमपाद ने उनका हार्दिक स्वागत किया और उन्होंने उनसे अपनी पुत्री शान्ता का विवाह कर दिया, क्योंकि उक्त ऋषि ने उनके राज्य में पड़े हुये सूखे को समाप्त करने में सफलता प्राप्त की थी।[9] अङ्ग-नरेश रोमपाद

---

[1] संयुक्तनिकाय, V, पृ० 225-226.

[2] धम्मपद-कमेंट्री, I, 384 और आगे।

[3] विनय, I. 243 और आगे; धम्मपद-अट्ठकथा, III, 363.

[4] मज्झिम निकाय, I, 281 और आगे।

[5] नानादिसा नानाजनपदा माणवका आगच्छन्ति-दीर्घ, I, 114.

[6] महाभारत, VIII. 45, 14-16; 28, 34.

[7] दिव्यावदान, पृ० 275.

[8] रामायण, 27, 25.

[9] वही, नवाँ एवं दसवाँ सर्ग, पृ० 20-22; तु०, पार्जिटर, मार्कण्डेय पुराण, पृ० 464 तथा टिप्पणियाँ।

के निवेदन पर अपनी पत्नी शान्ता के साथ ऋष्यशृङ्ग रोमपाद के अनन्य मित्र राजा दशरथ का अश्वमेध संपादन करने के लिए अयोध्या आये थे।[1]

कर्ण को उसके मित्र दुर्योधन और अन्य कौरव प्रमुखों के आग्रह पर अङ्ग के सिंहासन पर अभिषिक्त किया गया था।[2] पाण्डवों और विशेष रूप से भीमसेन ने उसको सूतपुत्र कहकर अपमानित किया था, जिसको उन्होंने अपने भाई अर्जुन को जोड़ न मानने की घोषणा की थी। फलतः कर्ण पाण्डवों का कट्टर शत्रु हो गया था।[3] पञ्चाल देश के राजा द्रुपद की पुत्री, द्रौपदी के स्वयंवर-समारोह के अवसर पर कर्ण, अन्य क्षत्रिय राजकुमारों यथा, मद्र के शल्य और हस्तिनापुर के दुर्योधन के साथ वहाँ उपस्थित था। यहीं पर अर्जुन ने धनुर्विद्या के एक अद्भुत चमत्कार द्वारा द्रौपदी का पाणिग्रहण किया था। भीम और अर्जुन उस समय ब्राह्मणों के छद्म वेश में थे। द्रौपदी की प्राप्ति के विषय में एक झगड़ा प्रारंभ हुआ था जिसके कारण अर्जुन एवं कर्ण में लड़ाई हुयी और जिसके परिणामस्वरूप कर्ण पराजित हुआ था।[4] मणिपुर (असम) जाते समय अर्जुन एक तीर्थयात्री के रूप में अङ्ग देश गये थे और वहाँ पर धनराशि वितरित की थी।[5] भीमसेन ने अंग-नरेश कर्ण से युद्ध किया और युधिष्ठिर के राजसूय-यज्ञ के संपादन के पूर्व ही उसे अपने पौरुष का लोहा मनवाया था। उन्होंने मोदागिरि (मुंगेर) के राजा की हत्या की थी।[6] बतलाया जाता है कि कर्ण इन्द्रप्रस्थ में युधिष्ठिर के राजसूय-यज्ञ में उपस्थित हुआ था।[7] दुर्योधन के पौण्डरीक यज्ञ के अवसर पर अङ्ग देश का उल्लेख कर्ण की दिग्विजय के संदर्भ में हुआ था।[8] कुरुक्षेत्र के रणक्षेत्र में शरशैय्या पर लेटे हुये भीष्म ने कर्ण को इस भ्रातृघातक युद्ध से विरत रहने के लिये कहा था क्योंकि वह वस्तुतः सूतपुत्र नहीं था। कुंती उसकी माता थी। कर्ण ने कहा कि उसने दुर्योधन को पहले से ही पाण्डवों के विरुद्ध लड़ने का वचन दे दिया है।[9] दुर्योधन ने उसे कौरव-सेना

---

[1] **रामायण**, 24, 10-31.
[2] **महाभारत, वंगवासी संस्करण, पृ०** 140.
[3] **वही**, I, 25, **पृ०** 140-141.
[4] **वही**, I, 4, 178-179.
[5] **वही**, 9, 195; 195, 10.
[6] **वही**, V, 2, **पृ०** 242.
[7] **वही**, 7, 245.
[8] **वही**, 8-9, 513.
[9] **वही**, 1-39, 993–94.

का प्रधान सेनापति भी बनाया था।[1] यज्ञ के घोड़े की खोज में अर्जुन अङ्ग देश गये थे। अंग, काशी, कोशल, किरातों एवं तंगणों के राजा उसके प्रति राजनिष्ठा की शपथ लेने के लिए विवश किये गये थे।[2] बताया जाता है कि राजा जरासंध ने अङ्ग, वंग, कलिंग और पुण्ड्रों के ऊपर अपना आधिपत्य स्थापित कर लिया था।[3] महाभारत के द्रोणपर्व से ज्ञात होता है कि अङ्ग लोग किसी युद्ध में वासुदेव से भी पराजित हुये थे। महाभारत के शान्तिपर्व[4] से ज्ञात होता है कि अङ्ग-नरेश वसूपमा हिमालय के एक कूटक पर स्थित युञ्जवत नामक सुवर्ण गिरि पर गया था।

जिस समय बुद्ध ने महाभिनिष्क्रमण किया था और महावीर जिन हुये थे, उस समय अंग—मगध का राजा सेणिय बिम्बिसार था। मगध-नरेश भातिय के शासन-काल में उसके पुत्र बिम्बिसार ने अङ्ग पर उसके उपराजा के रूप में शासन किया था।

संपूर्ण जैन वाङ्मय में कूणिक अजातशत्रु को अङ्ग का राजा कहा गया है, जब कि तथ्य यह है कि वह अंग का केवल उपराजा था, जो मगध-जनपद का एक भाग था।[5] अंग का मगध में मिल जाना मगध के इतिहास की एक युगांतरकारी घटना है। महत्ता और आधिपत्य की दिशा में अग्रसर होने के लिए मगध-नरेश द्वारा उठाया गया यह पहला कदम था। इस स्थिति को मगध ने अनुवर्त्ती शताब्दियों में प्राप्त किया था। चंपेय जातक में अङ्ग और मगध नामक दो पड़ोसी राज्यों की लड़ाई का वर्णन है। समय-समय पर अंग और मगध युद्धरत रहते थे। एक बार पराजित होने के पश्चात् अंग की सेना द्वारा पीछा किये जाने पर मगध-नरेश ने अंग और मगध के बीच प्रवाहित होने वाली चंपा नामक नदी में कूद कर अपनी जान बचायी थी। उसने पुनः अङ्ग-नरेश को पराजित करके अपना अपहृत राज्य पुनः प्राप्त किया और अङ्ग पर भी विजय प्राप्त की। वह अङ्ग-नरेश से घनिष्ट रूप से संबंधित हो गया और प्रतिवर्ष चंपा नदी के तट पर वह बहुत धूमधाम से अर्घ्य अर्पित किया करता था।[6] विनय महावग्ग से सिद्ध होता है कि अङ्ग बिम्बिसार

---

[1] महाभारत, 43, 56, पृ० 1174.

[2] वही, 4-5, पृ० 2093.

[3] वही, XII, अध्याय, 6607.

[4] CXXII, 4469-75.

[5] तु० निरयावली सूत्र, स्थविरावलिचरित, आदि।

[6] जातक, फासबाल, IV. 454-55.

के अधीन था।[1] बौद्ध धर्म के उत्कर्ष के ठीक पहले उत्तर भारत में चार शक्तिशाली राजतंत्र थे, जिनमें से प्रत्येक ने पड़ोसी राज्यों को हड़प करके अपनी सीमाएँ परिवर्धित की थीं। इस प्रकार अङ्ग मगध में, काशी कोशल में, भग्ग वत्स में और संभवतः शूरसेन अवन्ती में मिला लिया गया था।

दीघनिकाय के सोनदण्ड सुत्तांत में राजकीय भूमिदान के रूप में अङ्ग की राजधानी चंपा को ब्राह्मण सोनदण्ड को प्रदान किये जाने का उल्लेख है।[2] मगध अङ्गराज के अधीन कर लिया गया था।[3] काशी एवं अंगनरेश धृतरत्थ, कलिंग-नरेश सत्तभू एवं मिथिला-नरेश रेणु का समकालीन था।[4] यह एक रोचक तथ्य है कि अङ्ग और मगध को वाराणसी के राजा ने जीत लिया था।[5] बिन्दुसार ने चम्पा-निवासी किसी ब्राह्मण की पुत्री से विवाह किया था, जिसने अशोक नामक एक पुत्र को जन्म दिया था।[6] श्री हर्ष ने दृढ़वर्मन नामक एक अंग-नरेश का वर्णन किया है जिसे कौशाम्बी के राजा उदयन ने उसके राज्य में पुनः अधिष्ठित किया था।[7] हरिवंश एवं पुराणों के अनुसार दधिवाहन अंग का पुत्र एवं उत्तराधिकारी था। यह वही दधिवाहन नहीं हो सकता है जिसे जैनियों ने महावीर का समकालीन एवं कौशाम्बी-नरेश शतानीक का एक निर्बल प्रतिद्वंद्वी बतलाया है।[8] हाथीगुम्फा अभिलेख से हमें यह ज्ञात होता है कि राजा बहसतिमित की पराजय के पश्चात् कलिंग-नरेश खारवेल अंग-मगध से संग्रहीत संपत्ति को अपनी राजधानी में ले गया।[9]

पालि बौद्ध-साहित्य से हमें अङ्गों के धर्म के विषय में कुछ जानकारी प्राप्त होती है।[10] अंग की राजधानी चंपा के भिक्षुओं की आदत विनय के नियमों के

---

[1] सै० बु० ई०, XVII, पृ० 1.

[2] दीघ, I, पृ०, 111 और आगे।

[3] जातक, VI, पृ० 272.

[4] दीघ, 220 और आगे।

[5] जातक, फॉसबाल, V, 316.

[6] दिव्यावदान, पृ० 7. 369-70.

[7] प्रियदर्शिका, IV अंक।

[8] ज० ए० सो० बं०, 1914, 320 और आगे।

[9] बरुआ, ओल्ड ब्राह्मी इंस्क्रिप्शंस, पृ० 272-273.

[10] विनय, I, 312-15, 179 और आगे; दीघ०, I, 111-26; वही, III, 272; मज्झिम, I, 271 और आगे; 281 और आगे।

प्रतिकूल कुछ आचरण करने की थी।[1] जिस समय बुद्ध चंपा में थे, उन्होंने वंगीस नामक अपने एक शिष्य को अपनी प्रशंसा में एक गाथा कहते हुये सुना था।[2] अंग एवं मगध के गृहस्थों के अनेक पुत्रों ने राजगृह से कपिलवस्तु जाते समय बुद्ध का अनुगमन किया था।[3] पसेनदि के पिता, राजा महाकोसल का पुरोहित बहुत से अन्य जनों के साथ बुद्ध का शिष्य बना था।[4] एक आजीविक ने स्वयं को बुद्ध का शिष्य घोषित किया था।[5] अङ्ग और मगध के अनेक ब्राह्मण गृहस्थों के साथ बिम्बिसार बौद्धमत में दीक्षित हुआ था।[6] बुद्ध ने अंग में रहते समय विशाखा का धर्म परिवर्तन किया था।[7] सभी उपलब्ध साक्ष्य इस तथ्य के प्रति संकेत करते हैं कि बुद्ध के बोधि-प्राप्त करने के प्रथम दशक में ही चंपा-सहित अनेक महत्त्वपूर्ण नगरों के निकटवर्ती विभिन्न स्थानों में बौद्धों के मुख्यावास स्थापित हो गये थे। इनमें से प्रत्येक स्थान पर बुद्ध के किसी न किसी प्रसिद्ध शिष्य के नेतृत्व एवं पथ-प्रदर्शन में भिक्षुओं का एक संप्रदाय विकसित हुआ।[8]

अङ्ग एवं मगध के निवासियों ने गया क्षेत्र के जटिलों द्वारा उरुवेल कस्सप के नेतृत्व में संपादित किये जाने वाले वार्षिक यज्ञ में गहन अभिरुचि प्रदर्शित की थी।[9]

अंगार—इस गाँव को या तो मँगराँव या इसके निकटवर्ती सँगराँव से समीकृत किया गया है (एपि० इं०, XXVI, भाग, VI, अप्रैल, 1942, पृ० 245)।

अंजनवन—यह साकेत में था जहाँ पर बुद्ध एक बार रुके थे (संयुक्त०, I, 54; V. 73, 219)। यह एक बाग था जहाँ पर वृक्ष लगाये गये थे (समन्त-पासादिका, I, पृ० 11)।

अंतरगिरि—यह संथाल परगना जिले की राजमहल पहाड़ियों में स्थित है

---

[1] विनयपिटक, I, 315 और आगे।

[2] संयुत्त०, I, 195-96.

[3] जातक, I, निदानकथा, पृ० 87.

[4] धम्मपद कमेंट्री, III, 241 और आगे।

[5] वही, II, 61-62.

[6] पेटवत्थु कमेंट्री, पृ० 22.

[7] धम्मपद कमेंट्री, I, 384 और आगे।

[8] लाहा, हिस्टॉरिकल ग्लीनिंग्स, पृ० 45.

[9] विनय, I, 27 और आगे।

(मत्स्यपुराण, अध्याय, 113, श्लोक, 44; पार्जिटरकृत मार्कण्डेयपुराण, पृ० 325, टिप्पणी)।

अप-गया—यह गया के निकट था। सुदर्शन के निमंत्रण पर बुद्ध यहाँ आये थे (महावस्तु, III, पृ० 324-325; बि० च० लाहा, ए स्टडी ऑव द महावस्तु', पृ० 156-157)।

अपापपुरी—पावापुरी के अंतर्गत देखिये।

अफषढ़—आदित्यसेन के अपषढ़ या अफषंड अभिलेख में अफषढ़ या अफषण्ड का उल्लेख है जिसे जफरपुर भी कहा जाता था जो सकरी नदी के दाहिने तट के समीप गया जिले में नवादा के पूर्वोत्तर में लगभग 15 मील दूर स्थित एक गाँव था (का० इं० इं०, जिल्द, III)।

अशोकाराम—अशोक-द्वारा निर्मित पाटलिपुत्र में यह एक बौद्ध संस्थान था (महावंस, V, श्लोक, 80)। इस संस्थान के भवन की देखरेख इन्दगुत्त नामक एक थेर किया करता था (समन्तपासादिका, I, पृ० 48-49)। अशोक के काल में यहाँ पर तृतीय बौद्ध संगीति हुयी थी (वही, पृ० 48)। मिलिन्दपञ्हो (पृ० 17-18) के अनुसार पाटलिपुत्र के एक व्यापारी ने पाटलिपुत्र के निकट ही एक चौराहे पर खड़े हुये स्थविर नागसेन को बतलाया था, 'यही सड़क अशोकाराम को जाती है। कृपया मेरा मूल्यवान कंबल ग्रहण करें।' नागसेन ने इसे स्वीकार किया और उक्त व्यापारी बहुत प्रसन्न होकर वहाँ से चल पड़ा। नागसेन तब थेर धम्मरक्खित से मिलने के लिये अशोकाराम गये। उन्होंने उनसे त्रिपिटकों में संकलित बुद्ध के अमृत वचनों और उनके गहन अर्थों को समझा। इसी समय हिमालय पर्वत के रक्खिततल पर एकत्रित अनेक स्थविरों ने नागसेन को बुलवाया जो अशोकाराम छोड़कर उनके पास गये।

महावंस में अशोकाराम में स्थित एक सरोवर का उल्लेख है (V. 163)। अशोक ने अपने एक अमात्य को इस आराम में भेजकर भिक्षु-संप्रदाय से उपोसथ-समारोह का समारंभ वहीं पर करने का निवेदन किया था (वही, V. 236)। इस आराम में यथार्थ धम्म का संकलन किया गया था (वही, V. 276)। अनेक भिक्षुओं के साथ मित्तिण्ण नामक एक स्थविर इस आराम से पाटलिपुत्र आया था (वही, XXIX, श्लोक, 36)।

औदंबरिक—जयनाग के वप्पघोषवाट अभिलेख में इस विषय का वर्णन है (एपि० इं०, XVIII, पृ० 60 और आगे)। कुछ लोगों ने सरकार औदंबर के उदुंबर (तु०, एपि० इं०, XIX, पृ० 286-89) और बंगाल के बर्दवान मंडल

में मल्लसारुल गाँव के दक्षिण में (एपि० इं०, XXIII, भाग, V, विजयसेन का मल्लसारुल ताम्रपत्र) भौगोलिक संबंध स्थापित किया है।

अदिपुर—यह गाँव उड़ीसा में मयूरभंज की पांचपिर तहसील में है (एपि० इं०, XXV, भाग, IV, अक्टूबर, 1939)।

आलवी—एक प्रदेश के रूप में यह कोशल-साम्राज्य में संमिलित था। यह नगर श्रावस्ती से 30 योजन एवं वाराणसी से 12 योजन दूर था (वाटर्स, ऑन युवान-च्वाङ्, II, 61)। यह श्रावस्ती एवं राजगृह के बीच में स्थित था। श्रावस्ती से आलवी का मार्ग किटागिरि से होकर गुजरता था (विनय, II, 170, और आगे)। कुछ लोगों का विचार है कि आलवी गंगा के तट पर स्थित था। कुछ लोगों के अनुसार इसे उत्तर प्रदेश के उन्नाव जिले में स्थित नेवल या नवल से समीकृत किया जा सकता है जबकि अन्य लोगों के अनुसार यह इटावा से 27 मील पूर्वोत्तर में स्थित अविव है। आलवी नगर के निकट अग्गालव चेतिय नामक एक मंदिर था, जहाँ पर एक बार बुद्ध रुके थे (जातक, I, पृ० 160)।

आमगाचि—बंगला देश के दिनाजपुर जिले में स्थित यह एक गाँव है जहाँ सेविग्रहपाल तृतीय का एक ताम्रपत्र अभिलेख उपलब्ध हुआ था (एपि० इं०, XV, 293 और आगे)।

आम्रगर्त्तिका—यह आधुनिक अंबहुला हो सकता है जिसे मल्लसारुल के दक्षिण में स्थित सीमासिमी भी कहते हैं (एपि० इं०, XXIII, भाग, V, पृ० 158)।

आरणघाटा—नदिया जिले में रानाघाट से लगभग छह मील उत्तर में स्थित यह एक गाँव है। इस गाँव से चूर्णी नदी बहती है और इसके तट पर जुगलकिशोर का हिंदू मंदिर स्थित है। यह हिंदुओं का एक तीर्थ-स्थान है (विस्तृत विवरण के लिए, द्रष्टव्य, लाहा, होली प्लेसेज़ ऑव इंडिया, पृ 2)।

आराम—ऊँची इमारतों, मंदिरों और तालाबों आदि से युक्त यह उड़ीसा का एक समृद्धिशाली नगर बतलाया गया है। यह सोनपुर नगर से अधिक दूर पर नहीं प्रतीत होता है। यथार्थतः यह एक प्रमद वन था, जहाँ पर राजा यदा-कदा रहता था (एपि० इं०, XXIII, भाग, VII)।

आरियालखाल—पद्मा के दाहिनी ओर से, जिसके निचले प्रवाह को बंगला देश में फरीदपुर जिले के राजनगर में राजा राजवल्लभ के स्मारकों एवं इमारतों के बीच कीर्तिनाशा कहा जाता है, फरीदपुर नगर के आगे आरियालखाल नदी निकलती है। बाकरगंज (बंगला देश) जिले एवं फरीदपुर की मदारीपुर तहसील से गुजरती हुयी यह बंगाल की खाड़ी में गिरती है। एक छोटी नदी इस खाल और मधुमती को मिलाती है जो मदारीपुर नगर के थोड़ा पहले खाल से निकलती

है और मदारीपुर तहसील में गोपालगंज के थोड़ा पहले मधुमती में मिलती है (लाहा, रिवर्स ऑव इंडिया, पृ० 28)।

आत्रेयी—आत्रेयी नदी और छोटी यमुना राजशाही जिले (बंगला देश) में परस्पर मिलती हैं, और तब इस संयुक्त प्रवाह में दो छोटी उपनदियाँ एक दाहिनी ओर से और दूसरी बाँईं ओर से मिलती है। तत्पश्चात् यह नटोर के पूरब में दो शाखाओं में बँट जाती है। मुख्य प्रवाह राजशाही जिले में बोलिया के दक्षिण-पूर्व में गंगा में मिलती है, और छोटी सरिता करतोया में मिलती है (लाहा, रिवर्स ऑव इंडिया, पृ० 29)।

बड़गंगा—डबोका के लगभग 14 मील पश्चिमोत्तर में यह एक क्षुद्र सरिता है (एपि० इं०, XXVII, 18)।

बदाल—यह उत्तर बंगाल के दिनाजपुर जिले (बंगला देश) में है। यहाँ से तीन मील दूर नारायणपाल के समय का एक स्तंभ लेख उपलब्ध हुआ है। यहाँ पर एक स्तंभ प्राप्त हुआ है जिस पर पौराणिक गरुड पक्षी की आकृति बनी हुयी है (एपि० इं०, II, 160-167)। गुडवमिश्र के समय में अंकित बदाल स्तंभ लेख में देवपाल को उत्कल प्रजाति और हूणों के दर्पदलन करने का श्रेय दिया गया है।

बडकाम्ता—यह मेघना नदी के उत्तरी तट के समीप स्थित है। बंगला देश में कोमिल्ला शहर के निकट इसे कमांत कहा जाता था। आधुनिक गाँव बडकाम्ता (जय-कर्मांत्तवासकाट, एपि० इं०, XVIII, पृ० 35) कोमिल्ला नगर से 12 मील पश्चिम में स्थित है।

बहुपुत्त—वैशाली में स्थित यह एक चैत्य था (दीघ, II, पृ० 118)।

बैद्यनाथ—इसे हार्द्पीठ और देवघर भी कहा जाता है। पूर्वी रेलवे के जसीडीह् जंक्शन स्टेशन से चार मील दक्षिण में और कलकत्ता से कोई 200 मील ठीक पश्चिम में स्थित यह एक छोटा-सा कस्बा है। उत्तरकालीन मुसलमानों के शासनकाल में यह बीरभूम जिले में संमिलित था। अब यह बिहार के संथाल परगना जिले में संमिलित है। यह हिंदुओं का एक तीर्थ-स्थान है। यह एक चट्टानी-मैदान में स्थित है जिसके उत्तर में एक छोटा सा जंगल, पश्चिमोत्तर में एक निचली पहाड़ी, पूरब में कोई पाँच मील दूर त्रैकूट-पर्वत नामक एक बड़ी पहाड़ी, दक्षिण-पूर्व, दक्षिण और दक्षिण-पश्चिम में विभिन्न दूरियों पर अन्य पहाड़ियाँ स्थित हैं। कस्बे के ठीक पश्चिम में यमुनाजोर नामक एक क्षुद्र सरिता है। इसका क्षेत्र लगभग दो मील है। यहाँ की भूमि उर्वर एवं फसलें धान्यपूर्ण होती हैं। यह दुमका की एक तहसील है। बैद्यनाथ का मंदिर बिहार के प्रसिद्ध मंदिरों में से एक है। यहाँ वर्ष-पर्यंत तीर्थयात्री आते रहते हैं। डा० राजेन्द्रलाल मित्र के अनुसार

इसकी प्राचीनता कुछ पुराणों[1] में सृष्टि के त्रेता युग तक बतलायी गयी है। बैद्यनाथ का मंदिर नगर के बीच में स्थित है और एक विषम चतुर्भुजकार आँगन द्वारा परिवृत है। मुख्य मंदिर एक सादा पत्थरों का भवन है। इसका धरातल चार-खानेदार आकार वाले लंबवत और पड़ी रेखाओं के साँचों में ढला हुआ है। इस मंदिर के अधिष्ठाता देवता ज्योर्तिलिंग या बैद्यनाथ हैं। इसकी पूजा-विधि पर्याप्त सरल है। पूजा के मंत्र थोड़े एवं आहुतियाँ सीमित हैं। यह मंदिर अब बिना किसी जाति भेद के सभी हिंदुओं के लिए मुक्त कर दिया गया है (25 सितबंर 1953 से)। देवघर (जिसे अब बैद्यनाथ धाम कहा जाता है) में अनेक लघु मंदिर, तथा मुख्य मंदिर के अधिष्ठाता देवता की पत्नी पार्वती, काल भैरव, शुक्र या सान्ध्य-देवी और सूर्य-पत्नी सावित्री देवी के मंदिर हैं।[2]

बलबलभी—भुवनेश्वर प्रशस्ति में बलबलभी का उल्लेख है। हरप्रसाद शास्त्री ने इसे बागडी से समीकृत किया है।

बंसी—मंदर पहाड़ी के तल के निकट स्थित यह भागलपुर जिले में एक गाँव है। इस पुण्य पहाड़ी के तल के चारों ओर प्राप्त होने वाले असंख्य भवन, विशाल कुएँ, तालाब एवं पत्थरों की प्रतिमाओं से यह प्रकट होता है कि यहाँ पर कभी एक बड़ा नगर रहा होगा। यह पुर कैसे नष्ट हो गया—यह अज्ञात है, यद्यपि स्थानीय अनुश्रुतियों में कालापहाड़ को इसके नाश का कारण बतलाया गया है। मंदर पहाड़ी पर स्थित मधुसूदन के मंदिर के नष्ट हो जाने के पश्चात् देवता की प्रतिमा बंसी ले आयी गयी थी; यह अब वहाँ पर है। प्रतिवर्ष बंगाली पौषमास की पूर्णमासी के दिन उक्त प्रतिमा को बंसी से पहाड़ी के पाद तक ले जाया जाता है। पहाड़ी की तलहटी में एक पुण्य सरोवर है, जिसमें तीर्थयात्री स्नान करते हैं क्योंकि वे इसके जल को पवित्र मानते हैं (बिर्न, बंगाल डिस्ट्रिक्ट गजेटियर्स, 1911, पृ० 162-163, भागलपुर)।

बराबर पहाड़ी (द्रष्टव्य खलतिक)—गया से लगभग 16 मील उत्तर में स्थित इन पहाड़ियों में कुछ गुफाएँ स्थित हैं। सातघरा नाम से विश्रुत ये गुफाएँ दो वर्गों में विभक्त हैं, जिनमें बराबर-समूह की चार सबसे दक्षिणी गुफाएँ प्राचीनतम

---

[1] **शिवपुराण का 'वैद्यनाथ माहात्म्य', अध्याय, 4; पद्मपुराण का वैद्यनाथ माहात्म्य', अध्याय, 2.**

[2] **विस्तृत विवरण के लिये, द्रष्टव्य, ज० ए० सो० बं०, 1883, पृ० 164 और आगे में प्रकाशित डा० राजेन्द्र लाल मित्र का निबंध, 'ऑन द टेंपुल्स ऑव देवघर'।**

हैं। न्यग्रोध-गुहा स्फटिक-कूटक (Granite ridge) में काटी गयी है और दक्षिणाभिमुख है। यहाँ पर एक अभिलेख है, जिसमें अशोक-द्वारा आजीविकों को दिये गये गुहा-दान का उल्लेख है। लोमसऋषि गुहा इसके सदृश है किंतु यह अपूर्ण है। बाह्य कक्ष की पार्श्व-दीवालें तराशी हुयी और ओपदार हैं किंतु भीतरी कक्ष का आंतरिक भाग बहुत बेडौल है। प्रवेश-द्वार समापित है और निस्संदेह यह शिला में काटे हुये चैत्य महाकक्ष का प्राचीनतम प्रमाण है। बराबर-समूह की चौथी गुफा विश्व-झोपड़ी है। इसमें कक्ष हैं। किंतु यह अपूर्ण है। बाह्य कक्ष की दीवाल पर एक अभिलेख है, जिसमें अशोक के द्वारा गुफा-दान का आलेख है (लाहा, ज्यॉग्रेफिकल एसेज, पृ० 17, 341)।

बरनार्क—जीवितगुप्त द्वितीय के देव-बरनार्क अभिलेख में इसका उल्लेख हुआ है। शाहाबाद जिले में आरा के दक्षिण-पश्चिम में लगभग 25 मील दूर स्थित यह प्राचीन वारुणिक नामक गाँव है (का० इं० इं०, जिल्द, III)।

बरंतपुर (बरंतपुर)—यह भागलपुर जिले में मधिपुर से लगभग 15 मील दूर स्थित है। यहाँ पर एक दुर्ग के भग्नावशेष हैं जिसे महाभारत में वर्णित राजा विराट का आवास बतलाया जाता है। महाभारत के अनुसार पाण्डवों ने गुप्त वेष में उनके यहाँ सेवावृत्ति स्वीकार की थी। राजा विराट के साले कीचक ने पाण्डव बंधुओं की पत्नी द्रौपदी का अपहरण करना चाहा था, जिसकी हत्या भीमसेन ने इस गाँव में की थी। बताया जाता है कि राजा दुर्योधन के एक दल ने राजा-विराट के अनेक पशुओं का अपहरण किया था। अर्जुन ने उनके साथ लड़ाई की और पशुओं को पुनर्प्राप्त किया। उत्तरगोगृह या उत्तरी चारागाह इस गाँव के समीप ही स्थित था (बिर्न, बंगाल डिस्ट्रिक्ट गजेटियर्स, 1911, पृ० 162, भागलपुर)।

बराकर—यह वर्दवान जिले में है। यहाँ पर कुछ उत्तर मध्यकालीन मंदिर हैं (आर्क० स० इं०, एनुअल रिपोर्ट, 1917, 18, जिल्द, I, पृ० 9)। इसका प्राचीन नाम अज्ञात है।

बसाढ़—हाजीपुर से 20 मील पश्चिमोत्तर में स्थित इस गाँव को वैशाली से समीकृत किया गया है (जो 'मैल्ली, बिहार, डिस्ट्रिक्ट गजेटियर्स, पृ० 138-139, मुजफ्फरपुर)।

बानगढ़—यह बंगाल के दिनाजपुर जिले में स्थित है जहाँ से महीपाल प्रथम का दानपत्र उपलब्ध हुआ था (एपि० इं०, XIV, 324 और आगे)। बानगढ़ या बाननगर के भग्नावशेष पुनर्भवा नदी के पूर्वी तट पर प्राप्त हुये हैं, जो दिनाजपुर के 18 मील दक्षिण में स्थित गंगारामपुर से डेढ़ मील उत्तर में है। विस्तृत विवरण

के लिए, द्रष्टव्य, इंट्रोड्यूसिंग इंडिया, भाग, I, 79-80; प्रोसीडिंग्स ऑव इंडियन हिस्ट्री कांग्रेस, III, 1939-40; के० जी० गोस्वामी, एक्सकेवेशंस ऐट बाँगढ़ (कलकत्ता, 1948)। कोटिवर्षविषय देखिये।

बारिपादा—यह उड़ीसा के मयूरभंज जिले में स्थित है (एपि० इं०, XXVI, भाग, II, पृ० 74)।

बेलुगाम—यह वैशाली में स्थित एक गाँव था (संयुत्तनिकाय, V, 152)।

बेलवा—यह हिली स्टेशन के पूर्व में लगभग 15 मील दूर स्थित है। यह दिनाजपुर जिले के घोड़ाघाट थाने (बंगला देश) के अंतर्गत है (ज० ए० सो०, लेटर्स, भाग, XVII, सं० 2, 1951)।

भद्दियनगर—यह नगर अङ्ग जनपद में स्थित था, जहाँ पर विशाखा का जन्म हुआ था (धम्मपद कामेंट्री, जिल्द, I, पृ० 384)।

भगवानगंज—यह गाँव भरतपुर से कुछ मील दूर दक्षिणपूर्व में दिनाजपुर तहसील के दक्षिणपूर्व में स्थित है। यहाँ पर एक स्तूप के अवशेष हैं, जिसे युवान-च्वाङ द्वारा वर्णित द्रोण-स्तूप से समीकृत किया गया है। यह द्रोण एक ब्राह्मण था जिसने बुद्ध के महापरिनिर्वाण के पश्चात् बुद्ध के अवशेष वितरित किये थे। (तु० महापरिनिब्बान सुत्तांत, दीघ० II)। यह स्तूप लगभग 20 फीट ऊँचा लघु वृत्ताकार एक टीला है। इसके निकट ही पुनपुन नदी बहती है (आर्क० स० इं०, रिपोर्ट्स, भाग, VIII)।

भण्डगाम—यह वज्जियों के देश में स्थित था (अंगुत्तर निकाय, II, I)।

भागीरथी—इस नदी का वर्णन हरिवंश (I, 15) और योगिनीतंत्र (2.4, पृ० 128-129) में मिलता है। भगीरथ द्वारा लाये जाने के कारण इस पुण्य-सलिला का नाम भागीरथी है (ब्रह्माण्ड-पुराण, II, 18.42)। बंगाल में यह सुह्म से होकर बहती है (धोयीकृत पवनदूत, V. 36)। सेन और चन्द्र ताम्रपत्रों के अनुसार, भागीरथी गंगा ही है (इंस्क्रिपशंस ऑव बंगाल, जिल्द, III, पृ० 97)। बल्लालसेन के नैहटि ताम्रपत्र में बतलाया गया है कि भागीरथी को गंगा के समान माना जाता था और राजमाता ने सूर्यग्रहण के अवसर पर इसके तट पर एक महान् धार्मिक अनुष्ठान संपादित किया था (वही, पृ० 74)। लक्ष्मणसेन के गोविन्दपुर ताम्रपत्र से ज्ञात होता है कि हुगली नदी को जाह्नवी कहा जाता था, जो हावड़ा जिले में बेतड के किनारे से बहती थी (वही, पृ० 94, 97)।

भानी—गोविन्दचन्द्र के (विक्रमसंवत्, 1184) कमौली अभिपत्र में मड़वत्तल नामक पट्टल में स्थित भानी गाँव के दान का उल्लेख है (एपि० इं०, XXXVI, भाग, 2, अप्रैल, 1941)।

भाटेरा—यह गाँव सिलहट (बंगला देश) से लगभग 20 मील दूर पर स्थित है (एपि०, इं०, XIX, पृ० 277, गोविन्द-केशवदेव का भाटेरा ताम्रपत्र अभिलेख, 1049 ई०)।

भाटशाल—दिनाजपुर जिले के घोड़ाघाट (बंगला देश) थाने के अंतर्गत् यह एक गाँव है (ज० ए० सो०, लेटर्स, भाग, XVII, नं०, 2, 1951, पृ० 117)।

भोजपुर—बक्सर तहसील में डुमराँव से दो मील उत्तर में यह गाँव स्थित है। यहाँ पर भोजराजों के प्राचीन स्थानों के अवशेष है (ओ 'मैल्ली, बिहार ऐंड उड़ीसा डिस्ट्रिक्ट गजेटियर्स, 1924, पृ० 158, शाहाबाद)।

बोध-गया (बुद्ध-गया)—इसका प्राचीन नाम उरुविल्व या उरुवेला था जो बुद्धघोप के अनुसार एक विशाल रेतीले टीले का वाचक था (महावेला)। समन्त-पासादिका (V. 952) के अनुसार जब किसी पुरुष में बुरे विचार उत्पन्न होते थे, तब उसे निकटवर्ती एक स्थान तक मुट्ठी पर बालू ले जाने का आदेश दिया जाता था। इस प्रकार ले जायी गयी बालू से शनैः-शनैः एक विशाल टीला बन गया। यह गया से छह मील दक्षिण में स्थित है। बुद्ध-गया से गया की दूरी तीन गावुत या छह मील से थोड़ा अधिक थी (पपञ्चसूदनी, II, पृ० 188)। इसे बुद्ध-गया कहा जाता था, क्योंकि यहाँ पर गौतम बुद्ध ने प्रसिद्ध वट-वृक्ष (Bo-tree) के नीचे बोधि या सम्बोधि प्राप्त किया था। महानामन के बोधगया अभिलेख में (169 वाँ वर्ष) बोधगया के विख्यात् बौद्ध-स्थल का वर्णन मिलता है (का० इं० इं०, जिल्द, III, सं० 71, पृ० 274 और आगे)। इस अभिलेख में वट-वृक्ष के चतुर्दिक् बने हुये घेरे को 'बोधिमण्ड' कहा गया है। बोध-गया अभिलेख के एक अनुलेख से हमें ज्ञात होता है कि कोई चीनी तीर्थयात्री महाबोधि बिहार में लटकाने के लिए एक स्वर्ण-खचित काषाय ले आया था।

देवपालदेव के घोस्रवन अभिलेख के[1] अनुसार इन्द्रगुप्त का पुत्र वीरदेव नगरहार (आधुनिक जलालाबाद) में उत्पन्न हुआ था। वेदों का अध्ययन करने के पश्चात् उसने बौद्ध धर्म ग्रहण करने का निश्चय किया और इस उद्देश्य से वह कनिष्कविहार गया। सर्वज्ञशान्ति से दीक्षा लेने के पश्चात् उसने बौद्ध धर्म का वरण किया और महाबोधि में वज्रासन जाने के विचार से वह पूर्वी भारत में आया। वहाँ वह बहुत दिनों तक यशोवर्मपुरमहाविहार में रहा और देवपाल से समादरपूर्ण ध्यान पाता

---

[1] **ज० ए० सो० बं०, XVII, जिल्द, I, पृ० 492-501; इं० ऐं०, XVII, 307-12, गौडलेखमाला।**

रहा। वज्रासन की पूजा करने के लिए वीरदेव महाबोधि आया था। तत्पश्चात् अपने प्रांत के कुछ भिक्षुओं से मिलने के लिए वह यशोवर्मपुरमहाविहार की ओर बढ़ा।[1]

ब्रह्मपुत्र—ब्रह्मपुत्र असम की एक प्रमुख नदी है। योगिनीतंत्र (जीवानंद विद्यासागर संस्करण, 1.11, पृ० 60; 2-4, पृ० 128-129) में इसका वर्णन मिलता है। इसे लौहित्य भी कहा जाता है (ब्रह्मपुराण, अध्याय, 64; रघुवंश, IV, 81; योगिनीतंत्र, 2.2. 119) जो कालिदास के अनुसार, प्राग्ज्योतिष की पश्चिमी सीमा थी। जम्बुदीवपण्णत्ति के अनुसार इस नदी का स्रोत उसी सरिता से माना जाता है जो पूर्वी मानससरोवर झील की पूर्वी कुल्या से निकलती है। आधुनिक भौगोलिक अनुसंधानों से यह प्रकट होता है कि इसका स्रोत मानससरोवर के पूर्वी क्षेत्र में है। ब्रह्मपुत्र की तीन महत्त्वपूर्ण अग्र धाराएँ हैं : कुपि, चेम-युंगदुंग और अंगसी चु। ये अग्रधाराएँ हिमानी-प्रवाहों से फूटती हैं। कुपि नदी का सर्वाधिक निस्सारण होने के कारण, स्वेन हेडिन ने कुपि हिमनद को ही ब्रह्मपुत्र का स्रोत माना है। कैलास तीर्थ एवं मानससरोवर के स्वामी प्रणवानंद के अनुसार ब्रह्मपुत्र चेम-युंगदुंग हिमनद से निकलती है (विस्तृत विवरण के लिए, द्रष्टव्य, एस० पी० चटर्जी, प्रेसीडेंशियल ऐड्रेस टु द ज्यॉग्रफिकल सोसायटी ऑव इंडिया, ज्यॉग्रेफिकल रिव्यू ऑव इंडिया, सितंबर, 1953)। कालिकापुराण (अध्याय, 82) में ब्रह्मपुत्र की उत्पत्ति का एक पौराणिक विवरण प्राप्त होता है। इसमें बतलाया गया है कि ब्रह्मपुत्र चार पर्वतों के बीच में स्थित है, जिसके उत्तर और दक्षिण में क्रमशः कैलाश और गंधमादन है (अध्याय, 82, 36)। सदिया से यह दक्षिण-पश्चिम की ओर गारो पहाड़ियों के पहले तक बहती है। यह पुनः दक्षिण की ओर बहती है जिधर यह गोलंद घाट (बंगला देश) के थोड़ा पहले गंगा में मिलती है। दक्षिणी तिब्बत के पठार से प्रवाहित होने वाले ब्रह्मपुत्र के प्रवाह को सुन्प कहा जाता है। विस्तृत विवरण के लिए, द्रष्टव्य, बि० च० लाहा, रिवर्स ऑव इंडिया, पृ० 29-30.

असम के लखीमपुर जिले की पूर्वी सीमा पर ब्रह्मपुत्र में ब्रह्मकुण्ड नामक एक गहरा कुंड है। विष्णु के दशावतारों में से एक, भगवान् परशुराम ने अपना परशु इसी सरोवर में अभ्यर्पित कर दिया था जिससे उन्होंने क्षत्रियों का विनाश किया था। यह कुंड उस स्थान पर स्थित है, जहाँ नदी पहाड़ों से बाहर निकलती है,

---

[1] साहित्यिक उल्लेखों के लिए द्रष्टव्य, लाहा, ज्यॉग्रेफी ऑव अर्ली बुद्धिज्म, पृ० 45 और आगे; लाहा, ज्यॉग्रेफिकल एसेज़, I, पृ० 35 और आगे; बरुआ, गया ऐंड बुद्ध गया, 162 और आगे।

और चारों ओर से पहाड़ियों से घिर जाती है। भारत के प्रत्येक भाग से यहाँ प्रायः हिंदू, तीर्थयात्री आते हैं।

ब्राह्मणी—यह एक पवित्र नदी है जो उड़ीसा के बलसोर जिले से होकर पश्चिमोत्तर से दक्षिण-पूर्व की ओर प्रवाहित होती है (महाभारत, भीष्म पर्व, अध्याय, 9, पद्मपुराण, अध्याय, 3)।

बुरबलंग—यह नदी करकई का निचला प्रवाह है, जो दलभूम की पहाड़ियों से निकलती है और बलसोर जिले से होकर बहती है (लाहा, रिवर्स ऑव इंडिया, पृ० 45)।

बुरीदिहिंग—यह नदी जो ब्रह्मपुत्र की एक महत्त्वपूर्ण सहायक नदी है, असम में लखीमपुर के दक्षिण में ब्रह्मपुत्र में मिलती है। विस्तृत विवरण के लिए द्रष्टव्य, लाहा, रिवर्स ऑव इंडिया, पृ०, 30.

चंपा—यह नदी पूरब में अङ्ग एवं पश्चिम में मगध की सीमा है।[1] संभवतः यह वही नदी है जो भागलपुर शहर के अंचल में चंपानगर एवं नाथनगर के पश्चिम में है। पहले इसे मालिनी कहा जाता था।[2] कालिदास ने मालिनी नदी की तरंगों का उल्लेख किया है, जिसके पुलिन पर अपनी सहेलियों के साथ शकुंतला आयी थी (अभिज्ञानशकुन्तलम्, तृतीय अंक)। पद्मपुराण (अध्याय, 11) के अनुसार, यह एक तीर्थ स्थान था।

चंपापुरी (चंपा)—यह अङ्ग की राजधानी थी और पहले इसे मालिनी कहा जाता था (मत्स्य पुराण, अध्याय, 48)। जैन-ग्रंथ औपपातिक सूत्र में तोरणों, प्राकारों, प्रासादों, उपवनों और बागों, से अलंकृत एक नगर के रूप में इसका उल्लेख हुआ है। इसके अनुसार धन, ऐश्वर्य, आंतरिक आनंद एवं सुख से परिपूर्ण यह पुर यथार्थतः धरती का स्वर्ग था (बि० च० लाहा, सम जैन कैनॉनिकल सूत्राज़, पृ० 73)। यहाँ पर वासुपूज्य नामक बारहवें जिन उत्पन्न हुये थे, जिन्होंने केवलज्ञान एवं निर्वाण प्राप्त किया था। करकण्डु ने कुण्ड-सरोवर में पार्श्वनाथ की प्रतिमा अधिष्ठित की थी। बाद में उन्होंने निर्वाण प्राप्त किया। श्रेणिक के पुत्र कुणीक ने अपने पिता की मृत्यु के पश्चात् राजगृह त्याग कर चंपा को अपनी राजधानी बनाया था।[3] चंपा के समुद्री-व्यापारियों का एक सुंदर वर्णन हमें जैनग्रंथ नाया-

---

[1] जातक, IV, 454.

[2] महाभारत, XII, 5. 6-7; विष्णु०, IV, 18-20; मत्स्य०, 48, 97; वायु०, 99.105; हरिवंश, 31-49.

[3] बि० च० लाहा, सम जैन कैनॉनिकल सूत्राज़, पृ० 176.

धम्म कहा[1] में प्राप्त होता है। इसे चंपानगर, चंपामालिनी, चंपावती, चंपापुरी और चंपा आदि विविध नामों से पुकारा जाता था। यहाँ पर प्रायः आजीविक मत के प्रवर्तक गोशाल और जमालि आया करते थे (भगवती, 15; आवश्यक चूर्णि, पृ० 418)। यह नगर भागलपुर के पश्चिम में लगभग चार मील दूर स्थित था। महाभारत के अनुसार (वनपर्व, अध्याय, 85) यह एक तीर्थस्थान था। युवान-च्वाङ् यहाँ आया था और उसने इसे तीर्थस्थल कहा है। इसकी परिधि लगभग 4000 ली थी और चीनी इसे चेन-पो (Chenpo) कहते थे। यहाँ की भूमि समतल और उर्वर थी तथा सदा जोती जाती थी। यहाँ के निवासी सरल एवं ईमानदार थे। यहाँ पर संघाराम थे जो अधिकांशतः नष्टप्रायः थे। यहाँ पर कुछ देव मंदिर भी थे।[2]

चन्द्रद्वीप—श्रीचन्द्र के रामपाल दानपत्र में चन्द्रद्वीप का उल्लेख है जिस पर दसवीं या ग्यारहवीं शताब्दी ई० में में राजा त्रैलोक्यचन्द्र का शासन था।[3] इस देश में बाकरगंज (बंगला देश) के कुछ भाग संमिलित थे। कुछ विद्वानों के अनुसार प्राचीन साहित्य में बकला चन्द्रदीप ही अकेला चन्द्रदीप था, जब कि अन्य लोगों के भिन्न विचार हैं।[4] यह बकला चन्द्रद्वीप का वाचक था।[5] विश्वरूपसेन के मध्यपाड़ा अभिलेख में—'न्द्रद्वीप' का वर्णन है, जिसे कुछ विद्वानों ने कन्द्रद्वीप, इन्द्रद्वीप और चन्द्रद्वीप के रूप में पूर्ण किया है। यह इस तथ्य से पुष्ट होता है कि विवादग्रस्त क्षेत्र में घाघरकाट्टिपाट्टक संमिलित था। घाघरा पंद्रहवीं शती ई० में बाकरगंज के पश्चिमोत्तर में फुल्लश्री से प्रवाहित होने वाली एक सरिता थी (हिस्ट्री ऑव बंगाल, जिल्द, I, 18)।

चन्द्रनाथ—इस चोटी को शिव का एक प्रियस्थान माना जाता है क्योंकि परंपरा के अनुसार विष्णु के चक्र से कटकर सती का दाहिना हाथ यहीं पर गिरा था। वह चटगाँव जिले (बंगला देश) में है और बंगाल के सभी भागों से यहाँ तीर्थयात्री आते हैं। सीताकुण्ड के समीप ही चन्द्रनाथ एवं शंभुनाथ का मंदिर है। पहाड़ी की चोटी पर स्थित मंदिर में शिव का प्रतीक लिङ्गम् है और बतलाया जाता

---

[1] 97 और आगे; द्रष्टव्य, पीछे, अङ्ग के अन्तर्गत्।

[2] बील, बुद्धिस्ट रिकार्ड्स ऑव द वेस्टर्न वर्ल्ड, II, 191-192.

[3] न० गो० मजूमदार, इंस्क्रिप्शंस ऑव बंगाल, जिल्द, III, 2 और आगे।

[4] हिस्ट्री ऑव बंगाल, ढाका यूनिवर्सिटी, पृ० 18; भारत-कौमुदी, भाग, I, पृ० 53-54.

[5] ज० रा० ए० सो०, 1874.

है कि इस मंदिर पर चढ़ने से तीर्थयात्री पुनर्जन्म के कष्ट से मुक्त हो जाते हैं (इंट्रोड्यूसिंग इंडिया, भाग I, पृ० 83-84)।

चंद्रीमऊ—पटना जिले की बिहार तहसील में सिलाओ से गिरियेक जाने वाली प्राचीन सड़क पर गिरियेक थाने से लगभग तीन मील दूर यह गाँव स्थित है। यहाँ से अति सुंदर अनेक बौद्ध-प्रतिमाएँ उपलब्ध हुयी थीं, (आर्क० स० इं०, एनुअल रिपोर्ट, 1911-12, पृ० 161 और आगे)।

चत्तिवण्णा—(बृहत)-राजा नयपालदेव के इर्दा दान-ताम्रपत्र में वर्णित यह एक गाँव है। कुछ लोगों ने इसे बंगाल के मिदनापुर जिले में दासपुर थाने के अंतर्गत् आधुनिक चटना से समीकृत किया है (एपि० इं०, XXIV, भाग, I, 1937, जनवरी, 43-47)।

छिन्नमस्ता—यह गाँव हजारीबाग जिले की गोला तहसील में है जहाँ पर पहले नरबलि करके देवता को अर्पित किया जाता था। यह एक जंगल के बीच में स्थित है और भारत के सभी भागों से आने वाले तीर्थयात्री इस देवता की उपासना करते हैं। हजारीबाग शहर से तीस मील की दूरी पर स्थित रामगढ़ से यहाँ तक बस से पहुँचा जा सकता है (लाहा, होली प्लेसेज़ ऑव इंडिया, पृ० 14)।

चोरपपात—यह राजगृह के समीप एक पहाड़ी प्रतीत होती है (दीघ०, II, पृ० 116)।

दण्डभुक्ति—राजा नयपालदेव के इर्दा दान-ताम्रपत्र में दण्डभुक्ति का उल्लेख है। ऐसा प्रतीत होता है कि मूलत: यह गाँव दण्डनाम से विश्रुत था जो किसी भुक्ति का मुख्यावास था। इस नाम की उत्पत्ति अज्ञात है। मूलत: एक भुक्ति होने पर भी दण्ड वर्धमानभुक्ति के अधीन एक मंडल था (उत्तर राढ़) (एपि० इं०, जिल्द, XXIV, भाग, I, 1937, जनवरी, पृ० 46-47)। दण्डभुत्ति जिसे अन्यत: दण्डभुक्ति भी कहते हैं, एक प्रदेश का नाम है जहाँ के बाग मधुमक्खियों से भरे हुये थे (हुल्ट्श, सा० इं० इं०, I, पृ० 99)।

डवाक—डवाक को, जिसका वर्णन इलाहाबाद स्तंभ लेख में समतट, कामरूप और कर्त्तृपुर के साथ हुआ है असम के नवगाँव जिले में स्थित आधुनिक डबोक से समीकृत किया गया है। के० एल० बरुआ ने इसकी समानता असम की कोपिलि घाटी से की है (हिस्ट्री ऑव कामरूप, पृ० 42)। फ्लीट के अनुसार यह ढाका का प्राचीन नाम था।[1] बी० ए० स्मिथ ने इसे बोगरा, दिनाजपुर और राजशाही जिलों (बंगला देश) का वाचक बतलाया है।

---

[1] तु०, राय चौधरी, पो० हि० एं० इं०, चतुर्थ संस्करण, पृ० 456, नोट, 4.

दामोदर—भागीरथी की सहायक नदी दामोदर हजारीबाग जिले में बगोदर की निकटवर्ती पहाड़ियों से निकलती है और दक्षिण-पूर्व की ओर हजारीबाग से गुजरती हुयी, मानभूम एवं संथाल परगने जिलों के बीच में बहती है और तत्पश्चात् यह बर्दवान और हुगली जिलों में प्रवाहित होती है। हुगली जिले में बहती हुयी दामोदर नदी कई धाराओं में हुगली में गिरती है (लाहा, रिवर्स ऑव इंडिया, पृ० 27)।

दामोदरपुर—यह गाँव दिनाजपुर जिले में फूलबारी थाने से लगभग आठ मील पश्चिम में स्थित है, जहाँ से गुप्तयुगीन पाँच ताम्रपत्र उपलब्ध हुये थे (एपि० इं०, XV, पृ० 113)।

दापणिया-पाटक—लक्ष्मणसेन के माधैनगर ताम्रपत्र में उल्लिखित यह गाँव पौण्ड्रवर्धनभुक्ति के अंतर्गत् वरेंद्री में कांतापुरी के निकट स्थित् था।

देहार—यह बाँकुड़ा जिले में विष्णुपुर के निकट है। यहाँ पर सरेश्वर का एक छोटा-सा मंदिर है (आर्क्० स० इं०, एनुअल, रिपोर्ट, 1913-14, भाग, I, पृ० 5)।

देव-बरुनारक—यह महादेवपुर से छः मील पूर्वोत्तर में और आरा से 27 मील दक्षिण-पश्चिम में स्थित है। यहाँ पर सूर्य को समर्पित एक मंदिर है, जिसमें विष्णु की एक प्रतिमा है (ओ 'मैल्ली, बिहार ऐंड उड़ीसा डिस्ट्रिक्ट गजेटियर्स, पृ० 167, शाहाबाद)।

देवकालि—यह गाँव सीतामढ़ी से 11 मील पश्चिम में स्थित है। यहाँ पर महाभारत-कीर्त्ति वाले राजा द्रुपद का एक दुर्ग है (आर्क्० स० इं०, रिपोर्टस , भाग, XVI, 29-30; ओ 'मैल्ली, बिहार डिस्ट्रिक्ट गजेटियर्स, पृ० 144, मुजफ्फ़रपुर)।

देवपनि—यह असम के शिबसागर जिले में एक नदी है। इसके निकट ही एक जंगल में विष्णु-प्रतिमा पर उत्कीर्ण एक अभिलेख प्राप्त हुआ था (एपि० इं०, XVIII, 329)।

दिउलबाड़ी—कोमिल्ला से चटगाँव (बंगला देश) जाने वाले महापथ पर लगभग 14 मील दक्षिण में यह गाँव स्थित है (एपि० इं०, XVII, 357)।

देवग्राम—भुवनेश्वर-प्रशस्ति में देवग्राम का उल्लेख है जो प० बंगाल के कोमिल्ला नदिया जिले में स्थित बतलाया जाता है (तु०, बादाल-मैत्र की शिलालेख, गौडलेखमाला, I; पृ० 70 और आगे)।

धलेश्वरी—ढाका जिले (**बंगला देश**) में यह एक अत्यंत महत्त्वपूर्ण नदी है।

ह्वीगंज के आगे चौड़े पाट की एक नदी के रूप में मेघना में मिलने से पूर्व इसमें लक्ष्या का जल मिलता है। (विस्तृत विवरण के लिये द्रष्टव्य, बि० च० लाहा, रिवर्स ऑव इंडिया, पृ० 33)।

ढेक्करी—ईश्वरघोष के रामगंज ताम्रपत्र में ढेक्करी का उल्लेख प्राप्त होता है। कुछ लोगों ने जतोदा नदी और उसके तट पर स्थित ढेक्करी को बर्दवान संभाग में कटवा के समीप स्थित बतलाया है (यथा, द्रष्टव्य, एच० पी० शास्त्री, इंट्रोडक्शन टु रामचरित, पृ० 14)। अन्य जनों के अनुसार दोनों ही असम के गोलपारा एवं कामरूप जिले में स्थित है (यथा, द्रष्टव्य, एन० एन० वसु, वंगेर जातीय इतिहास, पृ० 250-51)।

ध्रुविलती—धर्मादित्य एवं गोपचन्द्र के ताम्रपत्रों में इसका वर्णन है। पार्जिटर ने इसे बंगला देश के फरीदपुर जिले में स्थित आधुनिक धुलत से समीकृत किया है।

दिसरा—दिसरा पटकई पहाड़ियों से निकलती है। असम में शिबसागर शहर के पश्चिमोत्तर में ब्रह्मपुत्र में मिलने के लिए यह पश्चिमोत्तर एवं पश्चिम में बहती है। यह ब्रह्मपुत्र-मेघना नदी-समूह में संमिलित है (लाहा, रिवर्स ऑव इंडिया, पृ० 30)।

दुआरबासिनी—अपने मंदिर के लिए प्रसिद्ध यह स्थान माल्दा जिले में है। यहाँ पर प्रायः हिंदू तीर्थयात्री आते रहते हैं (लाहा, होली प्लेसेज ऑव इंडिया, पृ० 1)।

दुर्वासा-आश्रम—इसे खल्लीपाहाड़ नामक पहाड़ी की सर्वोच्च चोटी पर स्थित बतलाया जाता है। यह भागलपुर जिले में कोलगोंग से दो मील उत्तर में और पाथारघाटा के दो मील दक्षिण में स्थित है (मार्टिन, ईस्टर्न इंडिया, II, पृ० 167; जे० ए० सो० बं०, 1909, पृ० 10)।

एकनाला—राजगृह पहाड़ी के दक्षिण में एक महत्त्वपूर्ण स्थान, दक्षिण-गिरि में स्थित यह एक ब्राह्मण गाँव था। यहाँ पर एक बौद्ध अधिष्ठान की स्थापना की गयी थी (सारत्थप्पकासिनी, I, पृ० 242)। संयुत्त निकाय (I, पृ० 172) में इसे स्पष्टया मगध में राजगृह के क्षेत्र के बाहर स्थित बतलया गया है।

गग्गरा—चंपा शहर के समीप ही यह एक सरोवर था। इसे गग्गरा रानी ने खुदवाया था। इस तालाब के तट पर बुद्ध ने चंपा के निवासियों को अपने मत की दीक्षा दी थी (सुमंगलविलासिनी, I, 279)। इस तालाब को चंपानगर की सीमा पर स्थित उस विशाल पंकिल झील से समीकृत किया जा सकता है जिसे

अब सरोवर कहते हैं और जिसके तल से बौद्ध एवं जैन प्रतिमाएँ उपलब्ध हुयी हैं (जे० ए० सो० बं०,1914, पृ० 335)।

गराई-मधुमती—गराई फरीदपुर जिले (बंगला देश) में पानसा से पहले गंगा नदी से निकलती है। वह फरीदपुर एवं जैसोर जिलों के बीच की सीमा निर्मित करती हुई मधुमती नाम से प्रवाहित होती है और बाकरगंज जिले में फिरोजपुर के थोड़ा पहले हरिघाटा नाम से बंगाल की खाड़ी में गिरती है (लाहा, रिवर्स ऑव इंडिया, पृ० 28)।

गरगाँव—शिबसागर जिले में यह नजीरा के समीप है (आर्क० स० इं०, एनुअल रिपोर्ट, 1918, 19, भाग, I, पृ० 7)।

गारो—गारो पहाड़ियाँ मेघलय पठार का पूर्वी प्रसरण है।[1] ये पहाड़ियाँ अकस्मात ब्रह्मपुत्र-घाटी में उत्तर एवं पश्चिम में उठती हैं, और असम तथा बंगाल के मैदानों की ओर एक विषम ढलान प्रस्तुत करती हैं (लाहा, माउंटेंस ऑव इंडिया, पृ० 9)।

गौड—हिंदू और मुसलमान-कालों में यह बंगाल की राजधानी थी। जैन ग्रंथ आचारांगसूत्र (II, 361a) की टीका के अनुसार गौडदेश दुकूल के लिए विख्यात् था। कुछ लोगों के अनुसार गौड नाम गुड़ या राब से व्युत्पन्न था, क्योंकि प्राचीन काल में गौड़ गुड एवं राब का व्यापारिक केंद्र था। गौड के भग्नावशेष वर्तमान माल्दह नगर के दक्षिण-पश्चिम में 10 मील की दूरी पर स्थित हैं। गंगा एवं महानंदा के संगम पर स्थित यह एक प्राचीन नगर था। इसका वर्णन महाकाव्यों एवं पुराणों में मिलता है। पद्मपुराण (189.2) में गौडदेश का उल्लेख हुआ है, जिसपर नरसिंह नामक राजा राज्य करता था। यह देवपाल, महेन्द्रपाल, आदिसूर बल्लालसेन तथा लगभग सोलहवीं शती ई० के अंत तक मुसलमान शासकों की राजधानी थी। चौथी, पाँचवीं एवं छठीं शताब्दी ई० में यह गुप्त सम्राटों की राजधानी थी। इस समय रामावती का लेशमात्र पता नहीं है जो पाल-नरेशों के अधीन प्राचीन गौड की राजधानी थी। कालिन्दी नदी के समीप यह भग्नावशिष्ट गौड के वर्तमान स्थल के उत्तर में कई मील दूर पर स्थित था। लक्ष्मणसेनद्वारा निर्मित लक्ष्मणावती सेन एवं मुसलमान शासकों के काल में गौड की उत्तरकालीन राजधानी थी। गौड के वर्तमान स्थल के निकट रामकेलि नामक प्राचीन स्थान है जहाँ पर चैतन्यदेव गये थे। राजा बल्ललासेन ने गौड में एक किला बनवाया था, जिसे बल्लालबाडी या बल्लाल भीटा कहते थे। इस किले के ध्वंसावशेष

---

[1] एस० पी० चटर्जी, ल' प्लेटयू डी मेघलय, पेरिस, 1937.

शाहदुल्लापुर में प्राप्त होते हैं। बंगाल के सागरदीघि नामक एक सबसे बड़े तालाब के निर्माण का श्रेय उसे दिया जाता है। रूप और सनातन के निवास, रूपसागर तालाब, कदंब वृक्ष, कुछ कुएँ और मदनमोहन का प्राचीन मंदिर वहाँ पर अब भी हैं। वहाँ पर मुसलमान युग के कुछ उल्लेखनीय पुरावशेष यथा, जान जान मियाँ की मस्जिद, हवेली खास के अवशेष, सोणा मस्जिद, लोटन मस्जिद, कदम रसूल मस्जिद एवं फीरोज मीनार हैं। इनके अतिरिक्त वहाँ पर गौडेश्वरी, जहर-वासिनी और शिव आदि के मंदिर हैं। गौड के प्राचीन स्थल के निकट खलीमपुर नामक एक अन्य गाँव है जहाँ से बंगाल के पालवंशीय राजा धर्मपाल का एक ताम्रपत्र प्राप्त हुआ था (एपि० इं०, IV, 243, और आगे)। गौड का पहला अभिलेखीय वर्णन 554 ई० में अंकित हराहा अभिलेख (एपि० इं०, XIV, पृ० 110, और आगे) में हैं, जिससे हमें यह ज्ञात होता है कि मौखरि वंशीय राजा ईशाणवर्मन् ने गौडों और गौडदेश पर विजय प्राप्त करने का दावा किया है। आदित्यसेन के अफसढ़ अभिलेख (655 ई०) में भी गौडदेश का उल्लेख है जिसमें अभिलेख के उत्किरणकार सूक्ष्मशिव को गौडदेश का निवासी बतलाया गया है। गौड का उल्लेख लक्ष्मणसेन के इंडिया ऑफिस अभिपत्र में भी है (एपि० इं०, XXVI, भाग, I)। बादल के गौड स्तंभ लेख में देवपाल को गौड देश का राजा बतलाया गया है (एपि० इं०, II, 160 और आगे)। दिउली अभिपत्रों में राष्ट्रकूट-नरेश कृष्ण द्वितीय को गौड को विनयशीलता सिखाने का श्रेय दिया गया है (वही, V, पृ० 190)। बतलाया जाता है कि राष्ट्रकूट-नरेश कृष्ण तृतीय ने गौडदेश के निवासियों का मानमर्दन किया था। (वही, IV, पृ० 287)। अमोघवर्ष प्रथम (866 ई०) के सिरुर एवं नीलगुंड अभिलेखों में गौड-निवासियों का उल्लेख है। वैद्यदेव के कामरूप ताम्रपत्र में गौडाधिपति का उल्लेख है (एपि० इं०, II, पृ०, 348)। लक्ष्मणसेन के माधाईनगर ताम्रपत्र-अभिलेख में कहा गया है कि लक्ष्मणसेन ने अचानक ही गौड राज्य छीन लिया था। उस दानपत्र से यह भी ज्ञात होता है कि अपने यौवन में लक्ष्मणसेन ने कलिंग की रमणियों के साथ विहार किया था। मालव राजाओं (1104-05 ई०) के नागपुर शिलालेख से ज्ञात होता है कि परमार राजा लक्ष्मणदेव ने गौडाधिपति को पराजित किया था (तु०, एपि० इं०, II, पृ० 193)। 554 ई० के हराहा-अभिलेख में मदोद्धत शत्रुओं को समुद्रतट पर रहने वाला (समुद्राश्रय) कहा गया है (एपि० इं०, XIV, पृ० 110 और आगे)। कुछ लोगों ने मदोद्धत शत्रुओं को गौड बताया है, जो छठीं शती० ई० में प्रायशः विजयरत रहते थे। अमोघवर्ष के संजन दानपत्र में कहा गया है कि ध्रुव ने गौड-नरेश के राजछत्र का अपहरण कर लिया था जब कि वह गंगा-यमुना

के मध्यवर्ती क्षेत्र से भाग रहा था (एपि० इं०, XVIII, पृ० 244)। राज्य-वर्द्धन के उत्तराधिकारी हर्ष ने कामरूप के राजा भाष्करवर्मन से संधि कर ली थी जिसके पिता सुस्थितवर्मन् मृगांक ने महासेनगुप्त से युद्ध किया था। भाष्कर के निधानपुर अभिपत्रों के अनुसार यह संधि गौडों के लिए हितकर नहीं सिद्ध हुयी। जिस समय ये अभिपत्र प्रचलित किये गये थे, कर्णसुवर्ण पर भाष्कर-वर्मन् का अधिकार था जो गौडाधिपति शशांक की राजधानी थी। भाष्कर द्वारा पराजित राजा जयनाग रहा होगा, जिसका नाम वप्पघोषवाट अभिलेख में आया है (एपि० इं०, XVIII, पृ० 60 और आगे)। गौड अपनी स्वतंत्रता खोकर मौन नहीं रहे।

गौतम-आश्रम––रामायण (आदिकाण्ड, 48 सर्ग, श्लोक, 15-16) के अनुसार यह आश्रम देवताओं द्वारा सुसम्मानित था। यहाँ पर महर्षि गौतम ने अहल्या के साथ कई वर्षो तक तपस्या की थी। योगिनीतंत्र (2.7.8) में इसका वर्णन आता है। यह जनकपुर के समीप स्थित था। कुछ लोगों के मतानुसार यह गोंडा में था। गौतम न्यायदर्शन के प्रणेता थे। जनक के राजप्रासादकी ओर जाते समय विश्वामित्र, राम एवं लक्ष्मण के साथ इस आश्रम में पधारे थे। वहाँ पर उन्होंने गौतम की पत्नी अहल्या के पति द्वारा अभिशप्त होने के कारण जड होने की घटना सुनाई की थी। इस दुःखद घटना के पश्चात् ऋषि ने आश्रम छोड़ दिया और हिमालय में आध्यात्मिकचर्या में तल्लीन रहे। राम ने इस आश्रम को निर्जन पाया था।

गया––महाभारत में इस पुण्य नगर का वर्णन है (अध्याय, 84,82-97, तु० ब्रह्म पुराण, 67. 19; कूर्मपुराण, 30, 45-48; तु०, अग्निपुराण, 109)। योगिनीतंत्र में भी इसका वर्णन है (1.11,62-63; 2.5,141 और आगे 2.5,166)। गया में उत्तर की ओर आधुनिक साहबगंज शहर और दक्षिण की ओर प्राचीन गया शहर संमिलित है। वायु पुराण, II, 105 और आगे) में गया के पुण्य-स्थलों का विवरण है, जिसमें अक्षयवट भी संमिलित है (वायु पुराण, 105, 45; 109. 16)। इसी पुराण (अध्याय, 105, श्लोक, 7-8,) के अनुसार गया का नामकरण गय के आधार पर हुआ है, जिन्होंने यहाँ पर यज्ञ किया था। गयातीर्थ[1] एक पुण्यस्थल है जहाँ गयासूर ने तपस्या की थी। ब्रह्मा ने गयासूर के सिर पर रखे हुए एक शिला-पट्ट पर एक धार्मिक यज्ञ किया था (वायु-पुराण, अध्याय, 105, 4-5)। एक बार बुद्ध गया में रुके थे और उनसे यक्ख

---

[1] **तु०, कूर्म-पुराण, पूर्वभाग, अध्याय, 30, श्लोक, 45-48; अग्निपुराण, अध्याय, 109.**

सुचिलोम मिला था (सुत्तनिपात, पृ० 47)। बौद्ध-साहित्य में गया का वर्णन एक गाँव (गाम) और एक तीर्थ (तित्थ) के रूप में हुआ है।[1] यह वायु पुराण के गयामाहात्म्य में वर्णित गयापुरी का वाचक हैं।

फाह्यान्, जो पाँचवीं शती ई० में गया नगर में आया था, के अनुसार नगर के भीतर चारों ओर सुनसान एवं निर्जनता थी (लेग्गे, ट्रावेल्स ऑव फाह्यान, पृ० 87)। युवान-च्वाङ के अनुसार गया की स्थिति सुदृढ़ थी। यहाँ पर थोड़े निवासी और एक हजार से अधिक ब्राह्मण परिवार थे। इस पुर के उत्तर में तीस 'ली' पहले एक निर्मल स्रोत था, जिसका जल पवित्र माना जाता था। नगर के दक्षिण-पश्चिम में, पाँच या छह ली की दूरी पर गहरे नदकंदर एवं दुरारोह शिखरों वाला गया पर्वत (गयाशिरस्) स्थित था। इस पर्वत के शिखर पर अशोक द्वारा निर्मित 100 फीट से भी अधिक ऊँचा एक पाषाण स्तूप था। गयापर्वत के दक्षिण-पूर्व में, कश्यप की नगरी में भी एक स्तूप था (वाटर्स, ऑन युवान-च्वाङ II, पृ० 110 और आगे)।

गयासीस—गयासीस जो गया की प्रमुख पहाड़ी है, (विनयपिटक, I, 34 और आगे; II, 199; लाहा, ए स्टडी ऑव द महावस्तु, पृ० 81) आधुनिक ब्रह्मयोनि है और महाभारत (III, 95, 9) में वर्णित गयाशिर एवं पुराणों के गयशिर के समान है, (द्रष्टव्य बरुआ, गया ऐंड बुद्ध गया, I, पृ० 68)। गया-शीर्ष या गयाशिर गया शहर के दक्षिण में विषम पहाड़ी है जो नगर से लगभग 400 फीट ऊँची है (बे० मा० बरुआ, गया ऐंड बुद्ध गया, I, 11)। अग्निपुराण (अध्याय, 219, V, 64) में एक तीर्थस्थान के रूप में इसका वर्णन हुआ है। योगिनीतंत्र (2. 1. 112-113) में गयशिर का उल्लेख मिलता है। वाई-कुओ-शिह ने गलती से इस पहाड़ी को धर्मारण्य-आश्रम की संज्ञा दी थी। बौद्धसंघ में भेद उत्पन्न करने के अनंतर देवदत्त पाँच सौ भिक्षुओं के साथ गयासीस पर रहा था (जातक, I, 142; विनय पिटक, II, 199; जातक, II,196)। जब तक वह इस पहाड़ी पर था, उसने यह घोषणा की थी कि जो कुछ भी बुद्ध ने बतलाया है, वह सम्यक सिद्धांत नहीं था और उसका सिद्धांत ही ठीक था (जातक, I, 425)। यहाँ पर उसने बुद्ध के कार्यों का अनुकरण करने की भी चेष्टा की थी, किंतु वह असफल रहा (जातक, I, 490 और आगे, जातक, II, 38)। बुद्ध ने यहीं पर अग्नि-स्कंध का प्रवचन दिया था और इसको सुनने के बाद एक हजार जटिलों

---

1. **सारत्थप्पकासिनी, I, 302; परमात्थजोतिका, II, पृ० 301; तु०, उदान कामेंट्री, (स्यामी संस्करण) पृ० 94.**

ने अर्हत्पद प्राप्त किया था (जातक, IV. 180; संयुत्त० IV, 19; विनय-पिटक, I, 34-35)। यहीं पर बुद्ध ने अंतर्ज्ञान पर भिक्षुओं के समक्ष एक प्रवचन दिया था (अंगुत्तर०, IV. 302 और आगे)। राजकुमार अजातशत्रु ने इस पहाड़ी पर देवदत्त के लिए एक विहार बनवाया था और उसके अनुगामियों को वह नित्यप्रति भोजन दिया करता था (जातक, I, 185 और आगे, 508)। प्राचीन बौद्ध भाष्यों में इसके आकार की हाथी के सिर से अद्भुत समानता के माध्यम से इसके नाम की उत्पत्ति का विवरण दिया है (सारत्थप्पकासिनी, सिंहली संस्करण, 4)।

घोस्रवान—यह गाँव बिहार के दक्षिण-पश्चिम में सात मील दूर पर स्थित है। यह एक प्राचीन बौद्ध-संनिवेश का स्थल है, जिसके अवशेष कई टीलों से लक्षित होते हैं। यहाँ पर वीरदेव ने जिसे देवपाल ने संरक्षित किया था, एक मंदिर बनवाया था। यहाँ पर एक बिहार भी बनवाया गया था (आर्क्० स० इं०, रिपोर्ट, जिल्द, I, जे० ए० सो० बं०, भाग, XLI, 1872)।

गिञ्जकावसथ—यह पाटलिपुत्र के समीप नादिका में स्थित था (अंगुत्तर०, III, 303, 306; वही, IV, 316; V. 322)।

गिरिव्रज—इस नगर को वसुमती भी कहते थे क्योंकि इसका निर्माण वसु ने करवाया था (रामायण, आदिकाण्ड, सर्ग, 32, श्लोक, 7)। इसे राजगृह भी कहा जाता था, जो मगध की प्राचीन राजधानी थी। विस्तृत विवरण के लिए द्रष्टव्य, राजगृह।

गोधग्राम—इसे मल्लसारुल के दक्षिण-पूर्व में दामोदर के तट पर स्थित गोहग्राम से समीकृत किया जा सकता है जो पश्चिमी बंगाल में वर्दवान जिले के गलसी थाने के अधिक्षेत्र के अंतर्गत् एक गाँव है (एपि० इं०, XXIII, भाग, V, पृ० 158)।

गोकुल—यह गाँव बोगरा जिले (बांगला देश) में महास्थान के निकट है। विस्तृत विवरण के लिए द्रष्टव्य, आ० स० इं०, एनुअल रिपोर्ट, 1935, 36, पृ० 67)।

गोंद्रम—देवानंददेव के बरिपद संग्रहालय के अभिपत्रों एवं उड़ीसा के चार अन्य ताम्रपत्रों में गोंद्रम का नाम वर्णित है, जो संक्षाभ के बेतुल अभिपत्रों में वर्णित अष्टादशाटवी राज्य (अठारह आटविक राज्य) के समान प्रतीत होते हैं (एपि०, इं०, VIII, पृ० 286-87)।

गोपिका—यह नागार्जुनि पहाड़ी की सबसे बड़ी गुफा का नाम है। यह 40 फ़ीट से अधिक लंबी और 17 फीट से अधिक चौड़ी है और इसके दोनों छोर अर्ध

वृत्ताकार हैं। इसकी महराबदार छत 4 फीट उन्नत है। प्रवेशद्वार के ठीक ऊपर एक छोटे फलक पर एक अभिलेख है, जिसमें अपने सिंहासनारोहण के अवसर पर दशरथ द्वारा आजीविकों को समर्पित गुहा का आलेख है, (लाहा, ज्यॉग्रेफिकल एसेज, पृ० 196; रा० कु० मुकर्जी, अशोक, पृ० 89)।

गोरथगिरि (गोरधगिरि)—यह आधुनिक बराबर पहाड़ी है (ज० बि० उ० रि० सो०, जिल्द, I, खंड, II, पृ० 162; बरुआ, ओल्ड ब्राह्मी इंस्क्रिप्शंस ऑन द उदयगिरि ऐंड खंडगिरि केव्स, पृ० 224)। इसका वर्णन महाभारत में हुआ है (सभापर्व, अध्याय, XX, श्लोक, 30—गोरथगिरि आसाद्य ददृशुर मागधम् पुरम्)। गोरथगिरि से मगध नगर देखा जा सकता है। कुछ लोगों के अनुसार पासाणकचेतिय को या तो गोरथगिरि से या इसके निकट किसी अन्य पहाड़ी से समीकृत किया जा सकता है (बरुआ, गया ऐंड बुद्ध गया, भाग, I, पृ० 84)। गोरथगिरि को कलिंग-नरेश खारवेल ने ध्वस्त किया था जिसने तब मगध पर आक्रमण किया था। जैन-ग्रंथ निसीथचूर्णी (पृ० 18) में इस पहाड़ी को गोरगिरि कहा गया है।

गोसिनशालवन—नादिका के समीप यह एक जंगली क्षेत्र था। बुद्धघोष के अनुसार इसके नाम पड़ने का यह कारण था कि इस जंगल में स्थित एक विशाल शालवृक्ष के तने से गाय की सींग की भाँति शाखाएँ फूटी थीं (पपञ्चसूदनी, II, पृ० 235)।

गोतमक—यह वैशाली में स्थित एक चैत्य या मंदिर था (दीघ, III, पृ० 9-10)।

गोविन्दपुर—यह बिहार के गया जिले में नवादा तहसील में स्थित है। यहाँ से कवि गंगाधर का एक शिलालेख प्राप्त हुआ था (एपि० इं०, II, पृ० 330 और आगे)।

गृध्रकूटपर्वत—(पालि, गिज्झकूट)—यह उन पाँच पहाड़ियों में से एक थी जो राजगृह के भीतरी क्षेत्र, गिरिव्रज को परिवृत किये हुये थीं। या तो इसके गृद्धाकार शिखर के कारण या इसके शिखर पर चीलों के बैठने के कारण इसका नाम गृध्रकूट पड़ा था। फाह्यान् के अनुसार गृध्रकूट के शिखर पर पहुँचने के लगभग 3 ली पहले दक्षिणाभिमुख शिला में एक गुहा है, जहाँ पर बुद्ध ने ध्यान लगाया था। इसके तीस कदम पश्चिमोत्तर में एक अन्य गुफा है जहाँ आनन्द ने ध्यान लगाया था। जब आनन्द ध्यानस्थ था, तब मार ने एक विशाल गृद्ध का रूप धारण करके इस गुहा के सामने बैठ कर आनन्द को भयभीत किया था। बुद्ध ने अपनी अलौकिक शक्तियों से शिला में दरार उत्पन्न करके अपने हाथ से आनन्द के कंधे

का स्पर्श किया जिससे तत्काल उसका भय समाप्त हो जाता। चूंकि पक्षी के पदचिन्ह एवं बुद्ध के हाथ की दरार अब भी वहाँ पर है, इसीलिए इस पहाड़ी का नाम 'गृध्रगुहाकूट' प्रचलित हो गया है (लेग्गे, ट्रावेल्स ऑव फा-ह्यान्, पृ० 83)। यह वेपुल्ल के दक्षिण में स्थित था। विमानवत्थु की टीका (पृ० 82) के अनुसार यह मगध में स्थित एक पहाड़ी थी। यहाँ नगर के पूर्वी फाटक से पहुँचा जा सकता था। इस पर्वत को गिरियेक पहाड़ी या युवान-च्वाङ द्वारा वर्णित इन्दसिलागुहा भी कहा जाता था, जो पञ्चाना नदी जो गिञ्झकूट पर्वत से निकलने वाली प्राचीन सप्पिनी ही है, के पार पटना जिले की दक्षिणी सीमा पर स्थित है। कनिंघम के अनुसार गिज्झकूट पर्वत शैलगिरि का एक भाग है तथा फाह्यान् द्वारा वर्णित गृध्र शिखर ही है जो राजगिर के दक्षिण-पश्चिम में छह मील दूर स्थित है। चीनी स्रोतों के प्रमाण को मानकर गृध्रकूट को रत्नगिरि के निकट कहीं पर स्थित माना जा सकता है। (इस विषय पर चर्चा के लिए द्रष्टव्य, एल० पीटेख, नार्दर्न इंडिया, एकार्डिंग टु द शुइ-चिंग-चु, सीरी ओरियण्टाले रोमा, II, पृ० 45-46)। इस पहाड़ी के शिखर से एक पत्थर का टुकड़ा फेंक कर देवदत्त ने बुद्ध की हत्या करने की चेष्टा की थी। इसिगिलि (ऋषिगिरि) के एक ओर इसके सामने कालशिला स्थित थी। मद्दकुच्ची का मृगवन भी इसके निकट ही स्थित था। चूंकि महर्षियों ने यहाँ पर तपस्या करके परम पद प्राप्त किया था इस कारण इसे गृध्रकूट कहा जाता था। इस पर एक शिवलिंग स्थापित किया गया था। इस पहाड़ी पर शिव के पदचिह्न भी विद्यमान हैं। यहाँ पर एक गुहा है जहाँ पर तीर्थयात्री अपने पितरों को आहुतियाँ अर्पित किया करते हैं। यहाँ पर एक वटवृक्ष है। वायु पुराण (108, 61-64) में यहाँ पर मृत-पूर्वजों की प्रेतात्माओं की स्वर्गप्राप्ति के लिए पिण्डदान देने के लिए एक पुण्य-क्षेत्र का उल्लेख है। गृध्रकूट गया के प्राचीन नगर के निकट था। डॉ० बरुआ के अनुसार यह सोचना कि गयामाहात्म्य में वर्णित गृध्रकूट, मगध की प्राचीन राजधानी गिरिव्रज या प्राचीन राजगृह को परिवेष्ठित करने वाली पाँच पहाड़ियों में से एक थी, गलत है (बे० मा० बरुआ, गया ऐंड बुद्धगया, पृ० 13)।

गुप्तेश्वर—शेरगढ़ से लगभग आठ मील दूर कैमूर पठार की एक सँकरी विषम घाटी में स्थित गुफाएँ यहीं पर हैं (ओ 'मैल्ली, बिहार ऐंड उड़ीसा डिस्ट्रिक्ट गजेटियर्स, पृ० 170, शाहाबाद)।

हडुवक—पुष्पगिरि-पञ्चाली विषय में स्थित इस गाँव के दान का उल्लेख एक पूर्वी गंग ताम्रपत्र में हुआ है। यह दान गुणार्णव के पुत्र महाराज देवेन्द्रवर्मन्

ने पतंगशिवाचार्य नामक एक विद्वान् ब्राह्मण शिक्षक को दिया था (एपि० इं०, XXVI, भाग, II, अप्रैल, 1941, पृ० 62 और आगे)।

हजो—यह गाँव असम के कामरूप जिले में ब्रह्मपुत्र के उत्तरी तट पर गौहाटी से सड़क-मार्ग से 15 मील दूर स्थित है। यह एक शिवमंदिर के लिए प्रसिद्ध है, जिसे मूलतः किसी ऋषि ने बनवाया था और मुसलमान सेनापति कालापाहार द्वारा नष्ट किये जाने के पश्चात् इसका जीर्णोद्धार किया गया था। यह न केवल हिंदुओं की ही वरन् बौद्धों की भी श्रद्धा की वस्तु है (लाहा, होली प्लेसेज़ ऑव इंडिया, पृ० 13, असम डिस्ट्रिक्ट गज़ेटियर्स, भाग, IV, पृ० 93-94)।

हरिकेल—हरिकेल एक पूर्वी देश था। कुछ लोगों ने इसे वंग से समीकृत किया है (इं० हि० क्वा०, II, 322; वही, XIX, 220)। कुछ लोगों की धारणा है कि यह समतट एवं उड़ीसा के मध्य स्थित एक तट-प्रदेश था (हिस्ट्री ऑव बंगाल, जिल्द, I, 134-135)। कुछ लोगों का विचार है कि इसे बाकरगंज और नोआखाली (बांगला देश) के कुछ भागों से समीकृत किया जा सकता है (पी० एल०, पाल, अर्ली हिस्ट्री ऑव बंगाल, भाग, I, पृ० iii-iv)। कुछ लोग तो यहाँ तक कहते हैं कि इसे चटगाँव और स्थूल रूप से टिपरा जिले (मेमनसिंह) के दक्षिण भाग वाले क्षेत्र से समीकृत किया जा सकता है (इं० हि० क्वा०, XX, 5)।[1] इत्सिंग के अनुसार हरिकेल[2] में (O-li-ki-lo या A-li-ki-lo) दो चीनी पुरोहित आये थे। ये दोनों पुरोहित दक्षिणी समुद्र-मार्ग से हरिकेल आये थे। ऐसा प्रतीत होता है कि हरिकेल एक अंतर्वर्ती देश था। यह ताम्रलिपि के उत्तर में लगभग 40 योजन दूर पर स्थित था। यह पूर्णतः मेघना नदी के पश्चिम में स्थित था। कर्पूरमञ्जरी (निर्णयसागर संस्करण, पृ० 13) के अनुसार यह पूर्वी भारत में स्थित था (तु०, इंडियन कल्चर, XII, 88 और आगे)।

हत्थिगाम—यह वज्जिदेश में था। राजगृह से कुशीनारा जाते समय बुद्ध यहाँ से गुजरे थे (दीघ निकाय, II, पृ० 123; संयुत्त निकाय, IV. 109)।

हिरण्यपर्वत (सुवर्णपर्वत)—कनिंघम के अनुसार यह पहाड़ी गंगा के तट पर स्थित थी (आर्क० स० रि०, XV, पृ० 15-16)। प्राचीन काल के लोग

---

[1] हरिकेल के समीकरण के विषय में द्रष्टव्य, प्रोसीडिंग्स ऑव द इंडियन हिस्ट्री कांग्रेस, VII, 1944.

[2] इत्सिंग, ए रिकार्ड ऑव द बुद्धिस्ट रिलीजन, तकाकुसू कृत अनुवाद, पृ० xlvi.

इसे मोदागिरि कहते थे जैसा कि महाभारत में कहा गया है। इसे मुद्‌गलगिरि भी कहते थे जिसे बिहार में आधुनिक मुंगेर से समीकृत करते हैं। ग्यारहवीं शताब्दी में इसे मुन-गिरि कहा जाता था (अल्बेरुनी कृत 'इंडिया', I, पृ० 200)। उत्तर में इसकी सीमाएँ गंगातट पर स्थित लक्ष्मीसरॉय से सुल्तानगंज तक और दक्षिण में पार्श्वनाथ पहाड़ी के पश्चिमी सिरे से बराकर एवं दामुदा नदी के संगम तक निर्धारित की जा सकती हैं (कनिंघम, एं० ज्यॉ० इं०, पृ० 545 और आगे)।

इचामती—इचामती ढाका जिले (बांगला देश) की एक प्राचीनतम नदी है। यह धलेश्वरी और पद्मा के बीच में प्रवाहित होती है। विस्तार के लिए द्रष्टव्य, लाहा रिवर्स ऑव इंडिया, पृ० 33)।

इन्दकूट—यह राजगृह के समीप एक पहाड़ी थी (संयुत्त, I, 206)। इस पहाड़ी पर इंदक यक्ख का निवास था। अनुमानतः यह एक प्रागैतिहासिक मंदिर था (संयुत्त०, I, 206)। या तो पहाड़ी का नामकरण यक्ख के आधार पर या यक्ख का नाम पहाड़ी के आधार पर पड़ा था (सारत्थप्कासिनी, I, 300)। यक्ख का निवासस्थान पत्थर से बने हुये एक महाकक्ष की भाँति था, जो एक पुण्यवृक्ष से लक्षित होता था। यह पहाड़ी या तो गिज्झकूट के सामने या इसके पार्श्व में स्थित थी (संयुत्त०, I, 206)।

इन्दसाल-गुहा—इन्दसाल-गुहा का वर्णन भरहुत के छठें जातक लेपपत्र में प्राप्त होता है। इसका नामकरण इसके द्वार पर स्थित इन्दसाल वृक्ष के आधार पर हुआ है (बरुआ ऐंड सिन्हा, भरहुत इंस्क्रिप्शंस, पृ० 61)। अम्बसण्ड नामक गाँव, जो राजगृह के क्षेत्र के बाहर किंतु मगध के अंतर्गत् है, से वेदियक पर्वत में इस गुहा की स्थिति का आभास मिलता है जो इसके उत्तर में है। इसी गुफा में बुद्ध ने देवराज इन्द्र के लिए सक्कपञ्ह सुत्तांत का प्रवचन किया था (दीघ०, II, पृ० 263-4, 269)। फाह्यान एवं युवान-च्वाङ् ने इस गुफा के लिए एक चीनी नाम इन-टो-लो- शी-ओ-किया- हो-शन (In-to-lo-shi-io-kio-ho-shan) बतलाया है जो संस्कृत इन्द्रशैलगुहा-पर्वत का वाचक है। फाह्यान् के अनुसार यह गुफा और पर्वत पाटलिपुत्र के दक्षिण- पूर्व में 9 योजन दूर पर और युवान-च्वाङ के अनुसार काल्पिनाक शहर के पूर्व में 30 ली (लगभग 5 मील) दूर पर स्थित था। कनिंघम ने इसे येनकेन प्रकारेण राजगिरि से छह मील दूर स्थित गिरियेक पर्वत से समीकृत किया है (कनिंघम, एं० ज्यॉ० इं०, मजूमदार संस्करण, 539 और आगे; बरुआ ऐंड सिन्हा, भरहुत इंस्क्रिप्शंस, पृ० 126; लाहा, ज्यॉग्रफी ऑव अर्ली बुद्धिज्म, पृ० 42)।

इसिगलिपिस्स–यह राजगृह को परिवेष्ठित करने वाली पाँच पहाड़ियों में से एक है (मज्झिम, III, 68 और आगे; परमात्थजोतिका, II, 382; विमान वत्थु अट्ठकथा, पृ० 82)। विभिन्न युगों में इसिगिलि के अतिरिक्त सभी पाँचों पहाड़ियों के भिन्न-भिन्न नाम रहे हैं (मज्झिम, III, 68 और आगे)। महाभारत (II, 21. 2) में इस पर्वत को ऋषिगिरि कहा गया है। संन्यासी गुरुओं का निगरण कर लेने के कारण (इस गिलतीति इसिगिल) (मज्झिम, III, 68; पपञ्चसूदनी, II, पा० टे० सो०, पृ० 63) इस पर्वत का नाम इसिगिलि पड़ा (चालमर्स, फरदर डायलाग्स ऑव द बुद्ध, II, पृ० 192)। इस पहाड़ी के पार्श्व में कालशिला नामक एक पहाड़ी थी जिस पर गोधिक एवं वक्कलि ने आत्महत्या की थी (संयुत्त०, I, 120 और आगे; III, 123-124)। इसिगिलिपस्स की कालशिला पर भिक्षु निवास करने के लिए इच्छुक रहते थे (विनय, II, पृ० 76)। बुद्ध राजगृह में इस पर्वत पर रुके थे और उन्होंने भिक्षुओं के समक्ष प्रवचन दिया था (मज्झिम, III, पृ० 68)। राजगृह के स्थलों के उनके सुखद संस्मरण सुस्पष्ट रूप से महापरिनिब्बान सुत्तांत में संकलित है। उन्होंने आनन्द से कहा था कि वह इसिगिलिपस्स में कालशिला पर रहेंगे (दीघ०, II, 116, और आगे)। एक बार बुद्ध यहाँ महामोग्गलान सहित अनेक भिक्षुओं के साथ रुके थे। बुद्ध की उपस्थिति में ही थेर वंगीस ने महामोग्गलान की बहुत प्रशंसा की थी (संयुत्त०, I, 194-195)। सारिपुत्र की मृत्यु का समाचार सुनते ही बुद्ध राजगृह आये और वेणुवन में अपना आवास बनाया। इस समय एक स्थविर जिसने दैवी शक्तियों में पूर्णसिद्धि प्राप्त की थी, इसिगिलि पर्वत के ढाल पर रहता था। विधर्मियों ने उनकी हत्या करने के कई निष्फल प्रयत्न किये थे (जातक, सं० 522, भाग, V)। पालिग्रंथ इसिगिलिसुत्त के अनुसार 500 प्रत्येक बुद्ध (पच्चेकबुद्ध) इस पहाड़ी के चिर निवासी थे (चिरनिवासिनो)। उन्हें इस पहाड़ी में प्रविष्ट होते हुये देखा गया था किंतु निकलते हुये नहीं। इस सुत्त में उनमें से अनेक का नाम वर्णित है (मज्झिम III, 68-71)। डॉ० बरुआ का विचार है कि इन तपस्वियों के निधन से इसिगिलि पर्वत पवित्र हुआ था (कलकत्ता रिव्यू, 1924, पृ० 61)।

इसिगिल नाम स्पष्टतः संस्कृत शब्द ऋषिगिरि, जिसका अर्थ तपस्वियों का पर्वत है, का स्थानीय या मागधी रूप था। बुद्ध के काल में ही अपनी प्राकृतिक वर्त्तिनी में इस नाम को एक जनप्रिय व्युत्पत्ति मिल गयी थी, जो विलक्षण होते हुये अपना कुछ महत्त्व रखती थी।

इटखोरी—यह चंपारन से लगभग 10 मील दक्षिण में है जो ग्रैंड ट्रंक रोड पर गया से देनुआ दर्रे के सिरे पर स्थित है। हजारीबाग जिले का यह एक अत्यंत

उपेक्षित स्थान है, जहाँ पर हिंदू, बौद्ध एवं जैन देवताओं की कई पाषाण-प्रतिमाएँ बिखरी हुयी मिली हैं। इसके समीप ही एक विस्तृत जंगल है। यहाँ से तारा की प्रतिमा पर उत्कीर्ण राजा महेन्द्रपाल का एक अभिलेख उपलब्ध हुआ है (आर्क्० स० इं० रि०, 1920-21, पृ० 35; लिस्टरकृत बिहार ऐंड उड़ीसा डिस्ट्रिक्ट गज़ेटियर्स, 1917, पृ० 201, हज़ारीबाग़)।

जह्नु-आश्रम—जह्नु-ऋषि का यह आश्रम भागलपुर के पश्चिम में सुल्तानगंज में स्थित था। इस आश्रम-स्थल पर स्थित गैवीनाथ महादेव का मंदिर, सुल्तानगंज के सामने गंगा के तट से निकलने वाली एक शिला पर स्थित है,। समुद्र की ओर गंगा के प्रवाहपथ में जल के वेग के द्वारा उक्त ऋषि की समाधि में विघ्न उत्पन्न होने के कारण उन्होंने इसे एक ही घूँट में पी लिया था। बाद में भगीरथ की मध्यस्थता से जह्नु ने इसे अपनी जाँघ या जह्न काट कर मुक्त किया। इसी कारण गंगा को जाह्नवी या जह्नु ऋषि की पुत्री कहा जाता है (लाहा, होली प्लेसेज़ ऑव इंडिया, पृ० 14; ज० ए० सो० बं०, X. 1914; XXXIII, पृ० 360; कनिंघम, आर्क्० सं० रि०, XV. 21)।

जैन्तिया—यह पहाड़ी बरैल पर्वत माला के पूर्व में स्थित है। उत्तर में यह क्रमशः ब्रह्मपुत्र की घाटी से उठती है और दक्षिण में सूरमा की घाटी की ओर एकाएक ढाल बनाती है (लाहा, माउंटेंस ऑव इंडिया, पृ० 9)।

जपला—सोन नदी के तट पर स्थित हुसेनाबाद नामक एक छोटे परगने का यह प्राचीन नाम है। पहले यह गया जिले में था (ओ 'मैल्ली, बिहार ऐंड उड़ीसा डिस्ट्रिक्ट गजेटियर्स, पृ० 183, पालामऊ)।

जयपुर—देवानंददेव के बरिपद संग्रहालय अभिपत्र में इस स्थान का उल्लेख प्राप्त होता है। अनुमानतः यह उड़ीसा के नंदवंश की राजधानी थी और इसे घेनकनल में स्थित जैपुर नामक एक गाँव से समीकृत किया गया है (एपि० इं०, XXVI, भाग, II, पृ० 74 और आगे; ज० बि० उ० रि० सो०, XV, 89; XVI, 457 और आगे; XVII, 17; भंडारकर की तालिका, नं० 2076)।

जीवक-अंबवन—यह वेणुवन की अपेक्षा जीवक के आवास के अधिक समीप था (सुमंगलविलासिनी, I, 133)। जीवक ने इस आम्रवन को एक विहार के रूप में परिवर्तित कर के इसे बुद्ध और इनके संघ को दान दे दिया था। यहाँ मगध-नरेश अजातशत्रु आया था (विस्तृत विवरण के लिए द्रष्टव्य, बि० च० लाहा का लेख, राजगृह इन ऐंश्येंट लिटरेचर, मे० आर्क्० स० इं०, नं० 58)।

झामटपुर—यह कटवा से (काटद्वीप) चार मील उत्तर में स्थित एक

गाँव है। कटवा श्रीचैतन्यचरितामृत के प्रसिद्ध लेखक कृष्णदास कविराज का निवास स्थान था (लाहा, ज्यॉग्रेफिकल एसेज़, पृ० 220)।

कैलान—समतट के श्रीधरण राट के नये कैलान-अभिपत्र में इस गाँव का उल्लेख हुआ है जो त्रिपुरा की सदर तहसील में चांदीना थाने के अंतर्गत् है। यह चांदीना से लगभग 10 मील दक्षिण में है (इं० हि० क्वा०, XXII और XXIII)।

कजंगल (कयंगल)—यह विस्तृत पहाड़ी क्षेत्र अङ्ग के पूर्व में स्थित था और उत्तर-पूर्व में गंगा से दक्षिण-पूर्व में सुवर्णरेखा तक फैला हुआ था। यह एक ब्राह्मण गाँव था जो नागसेन का जन्मस्थान था (मिलिन्दपञ्हो, पृ० 10)। एक बार बुद्ध कजंगल के वेलुवन में ठहरे थे (अंगुत्तर निकाय, V. 54)। कजंगल के मुखेलुवन में अपने प्रवास के समय बुद्ध ने इन्द्रियभावनासुत्त का प्रवचन दिया था (मज्झिम निकाय, III. 298)। बुद्ध के काल में यहाँ पर सुगमता से भोजन मिल जाता था (दब्बसंभारा सुलभा—जातक, IV, 310)। महावग्ग (विनय टेक्स्ट्स, सैं० बु० ई०, II, 38) और सुमंगलविलासिनी (II. 429) में इसे महाशाल नामक ब्राह्मण गाँव के आगे मध्यदेश की पूर्वी सीमा बतलाया गया है। यह युवान-च्वाङ द्वारा वर्णित का-चु-वेन-की-लो (Ka-chu-wen-ki-lo) है। इसकी परिधि 2000 'ली' थी और उत्तर में गंगा नदी इसकी सीमा थी। यह कहीं राजमहल क्षेत्र में स्थित था। यह पूर्वदेश की पश्चिमी सीमा थी। इसके दक्षिण पूर्व में सललवती नाम की एक नदी थी।

कलंदकनिवाप—यह वनस्थली राजगृह के वेलुवन में थी जहाँ पर बुद्ध एक बार ठहरे थे (अंगुत्तर०, II पृ० 35, 172, 179; III, 35; IV 402; मज्झिम०, III, पृ० 128)। राजा बिम्बिसार ने इस वेणुवन को बुद्ध को दान दे दिया था। यह बाग राजगृह के बहिर्भाग में न तो बहुत दूर और न तो बहुत निकट ही स्थित था किंतु फिर भी अत्यंत अनुकूल वातावरण में स्थित यह एक शान्तिपूर्ण आवास था (विनयमहावग्ग, I, 39; फॉसबाल, जातक, I, 85)। यहाँ पर नियमित रूप से गिलहरियों को भोजन दिये जाने के कारण, इसका यह नाम पड़ा था (समन्तपासादिका, III, 575)। जिस समय बुद्ध यहाँ ठहरे थे उस समय छह भिक्षुणियों का एक समूह गिरग्गसमज्जा नामक एक प्रकार के पर्व में भाग लेने के लिए कलंदकनिवाप में आया था (विनय, IV. 267)। जब बुद्ध यहाँ पर थे उस समय उस युग का गिरग्गसमज्जा नामक एक अत्यंत लोकप्रिय संगीत छह भिक्षुओं के दल की उपस्थिति में आयोजित किया गया था (विनय, II, 107)।

कलवालगाम—यह गाँव मगध में था। संघ में दीक्षित होने के सातवें दिन

इस गाँव के निकट रहते हुए मोग्गलान तंद्रा के वशीभूत हुये थे। बुद्ध की प्रेरणा से मोग्गलान ने तंद्रा का परित्याग करके ध्यान को पूर्ण किया। तब उन्होंने अर्हतपद प्राप्त किया (धम्मपद कामेंट्री, I, 96)।

कपिलाश्रम—योगिनीतंत्र (2.9, पृ० 214 और आगे) में इसका वर्णन आता है। बृहद्धर्मपुराण (अध्याय, 22) में भी इसका उल्लेख प्राप्त होता है। यह आश्रम गंगा के मुहाने के निकट सागर द्वीप में स्थित है।

करणगढ (करणागढ़)—भागलपुर जिले में भागलपुर शहर के समीप यह एक पहाड़ी है और धर्मात्मा हिंदू राजा कर्ण के आधार पर इसका यह नाम पड़ा है। यहाँ की एक मात्र उल्लेखनीय वस्तुओं में स्वल्प ख्याति वाले शैवमंदिर हैं, जिनमें से एक अत्यंत प्राचीन है (बिर्ने, बंगाल डिस्ट्रिक्ट गजेटियर्स, 1911, पृ० 166, भागलपुर)।

करतोया—यह ब्रह्मपुत्र की एक शाखा है। यह कामरूप की पश्चिमी सीमा थी (तु० महाभारत, वनपर्व, अध्याय, 85)। पद्मपुराण (अध्याय, 21) में यह एक पुण्य नदी के रूप में वर्णित है। मार्कण्डेय पुराण (57, 21-25) और योगिनीतंत्र (1.11.60; 1.12, 69; 2.1, 114) में भी इसका वर्णन आता है। कालिकापुराण (अध्याय, 51, 65 और आगे; अध्याय, 58, 37) के अनुसार यह नदी 30 योजन लंबी एवं 100 योजन चौड़ी थी। यह नदी रंगपुर जिले (बांगला देश) में दोमार के पहले निकलती है और इसी जिले में बाँईं ओर से इसमें एक सहायक नदी तथा बोगरा जिले (बांगला देश) में बाँईं ओर से एक अन्य नदी मिलती है। कुछ लोगों ने इसे सदानीरा से समीकृत किया है (तु० अमरकोष, I. 2, 3, 32; हैमकोष, IV. 151; लाहा, रिवर्स ऑव इंडिया, पृ० 24. विस्तृत विवरण के लिए द्रष्टव्य, लाहा, रिवर्स ऑव इंडिया, पृ० 32-33)।

कर्णफुली—कर्णफुली, जिसका कँचा नाम अधिक लोकप्रिय है, चटगाँव (बांगला देश) और चटगाँव के पहाड़ी क्षेत्र की तीन प्रमुख नदियों में सबसे बड़ी है। यह ल्युशाई पहाड़ियों से निकलती है जो चटगाँव के पर्वतीय क्षेत्र को असम के दक्षिण-पश्चिमी भाग से मिलाती हैं, और यह दक्षिण-पश्चिम में चटगाँव के पहाड़ी क्षेत्र के मुख्यावास राँगामाटी तक बहती है। राँगामाटी और चटगाँव शहर के बीच इसे कई छोटी सहायक नदियाँ आपूरित करती हैं। यह राँगामाटी तक संतरणीय है। विस्तृत विवरण के लिए द्रष्टव्य, लाहा, रिवर्स ऑव इंडिया, पृ० 36)।

कर्णसुवर्ण—भाष्करवर्मन् के निधानपुर-अभिपत्रों के प्रचलन करते समय,

कर्णसुवर्ण, जो किसी समय गौडाधिपति शशांक की राजधानी थी, भाष्कर के अधिकार में थी (एपि० इं०, XII, पृ० 65-79)। जयनाग कर्णसुवर्णक का निवासी था और जिस समय वह यहाँ था, उसने एक दानपत्र प्रचलित किया था, जिसकी तिथि छठवीं शती ई० के उत्तरार्द्ध में अनुमानित की जाती है (एपि० इं०, XVIII, पृ० 63)। महासामंत शशांकदेव की मुहर के पत्थर के साँचे में इसका वर्णन मिलता है (का० इं० इं०, जिल्द, III)। मुर्शिदाबाद जिले में गंगा के पश्चिमी तट पर स्थित राँगामाटी को कर्णसुवर्ण का स्थल माना जाता है। यह बंदेल से 94 मील दूर और चिरती रेलवे स्टेशन से $1\frac{1}{2}$ मील दक्षिण-पूर्व में स्थित है। यहाँ की मिट्टी लाल और कठोर है और इससे इस स्थान के नामकरण का सूत्र मिलता है। कुछ लोगों के अनुसार यह नाम रक्तभृत्ति या रक्तभित्ति (लो-तो-वेई-ची) (Lo-to-wei-chi) नामक एक प्राचीन बौद्ध विहार के नाम से ग्रहण किया गया है, जिसे युवान-च्वाङ ने सातवीं शताब्दी ई० में कर्णसुवर्ण में स्थित देखा था। इस राज्य की परिधि, जिसे चीनी लोग की-लो-ना-सु-फा-ला-ना (Kie-lo-na-su.fa-la-na) कहते थे, 1400 या 1500 'ली' थी। यहाँ की आबादी घनी थी, और गृहस्थ धनी थे। यहाँ की भूमि पर नियमित रूप से खेती होती थी और यहाँ फूलों का प्रचुर उत्पादन होता था। यहाँ की जलवायु सुखद थी। यहाँ के निवासी ईमानदार, मृदुव्यवहारी तथा मिलनसार थे। वे विद्या-प्रेमी थे। जनता में आस्तिक एवं विधर्मी दोनों ही थे। वहाँ पर कुछ संघाराम एवं देवमंदिर थे (बील, बुद्धिस्ट रिकार्डस ऑव द वेस्टर्न वर्ल्ड, II, 201)। यहाँ पर कुषाण एवं गुप्तयुगीन अनेक मुद्राएँ, ठाकुर-वाडी-दाँगा, राजवाडीदाँगा, सन्यासी-दाँगा आदि नामों से विश्रुत ईंटें और मिट्टी के कुछ टीले तथा कई तालाब उपलब्ध हुये हैं। यहाँ से महिषमर्दिनी नामक एक अष्टभुजी हिंदू देवी की पाषण-प्रतिमा प्राप्त हुयी है।

करूष—रामायण के अनुसार (बालकाण्ड, XXVII, 18-23) करूषों का देश या करुषदेश शाहाबाद जिले (बिहार) में स्थित प्रतीत होता है। सोन और कर्मनासा नदियों के बीच में स्थित दक्षिणी-शाहाबाद जिले को करूषदेश कहते थे (मार्टिन, ईस्टर्न इंडिया, I, पृ० 405)। इसकी पुष्टि शाहाबाद जिले में मसार से उपलब्ध एक आधुनिक स्थानीय अभिलेख से होती है, जिसमें इस क्षेत्र को करूषदेश की संज्ञा से अभिहित किया गया है (कनिंघम, आर्क्० स० रि०, III, 67-71)। ब्रह्माण्ड पुराण में (पूर्वखंड, अध्याय, 5) वेदगर्भपुरी या आधुनिक बक्सर को करूषदेश में स्थित बतलाया गया है। इस देश के करूष नामक निवासियों ने कुरुक्षेत्र के युद्ध में पाण्डवों के साथ लड़ाई की थी (द्रष्टव्य, महाभारत के उद्योग,

भीष्म एवं द्रोणपर्व)। उन्हें क्रिसेई (Chrysei) से समीकृत किया जा सकता है (एम० वी० सेंट मार्टिन, एतुदे सुर ला ज्यॉग : ग्रेक, पृ० 199 (Etude sur la Geog : Grecque)। करूषों के दध्र नामक एक राजा की हत्या उसके पुत्र ने की थी (हर्षचरित्, छठवाँ उच्छवास)। कौटिल्य के अर्थशास्त्र (पृ० 50) के अनुसार करूषदेश के हाथी, अङ्ग एवं कलिंग के हाथियों से हीन थे। विस्तृत विवरण के लिए द्रष्टव्य, लाहा, ट्राइब्स इन ऐंश्येंट इंडिया, पृ० 87-89)।

कस्सपकाराम—यह विहार राजगृह में था (संयुत्त, III, पृ० 124)।

कौशिकी—कामरूप-नरेश भाष्करवर्मन् के निधानपुर-राजपत्र में वर्णित यह एक नदी है। रामायण (आदि पर्व, अध्याय, 34); महाभारत, (अध्याय, 110, 20-22), वाराहपुराण, (अध्याय, 140) और पद्मपुराण (अध्याय, 21) में भी इस नदी का उल्लेख हुआ है। हिमालय पर्वत से निकलने वाली महाकौशिकी नदी के रूप में कालिकापुराण में भी (अध्याय, 14. 14; अध्याय, 14. 31) इसका वर्णन आता है। पंच-खंड नामक क्षेत्र से बहने वाली सिलहट की कुसियारा नदी से इसे समीकृत किया गया है। किंतु, इसके समीकरण के विषय में मतभेद है (इंडियन कल्चर, I, पृ० 421 और आगे)। हंटर ने बतलाया है कि कुशी या कौशिकी पहले करतोया नदी में मिलती थी (स्टेटिस्टिकल एकाउंट ऑव बंगाल, पूर्णिया)। इस नदी के प्रवाह मार्ग में परिवर्तन होते रहते हैं (ज० ए० सो० बं०, LXIV, पृ० 1-24)।

कादंबरी—यह चंपा के निकट एक जंगल था। इसके समीप काली नामक एक पहाड़ था। पार्श्वनाथ यहाँ लगभग चार महीनों तक कालीकुण्ड के सामने घूमते रहे जो एक विशाल सरोवर था (बि० च० लाहा, सम जैन कैनॉनिकल सूत्राज, पृ० 177)।

कालशिला—ऋषिगिरि (इसिगिलि) के ढाल पर यह एक काली चट्टान थी (दीघ, II, 116; पपञ्चसूदनी, II, 63)। यह शिला गिज्झकूट के इतनी समीप थी कि बुद्ध के लिए वहाँ से जैन मुनियों को देखना संभव था जो आसनों का बहिष्कार करके वहाँ खड़ी मुद्रा में घोर तप का अभ्यास कर रहे थे (मज्झिम निकाय, I, 92)। इसी शिला पर गोधिक एवं वक्कलि ने आत्महत्या की थी (संयुक्त निकाय, I, 120 और आगे; III, 124)। कालशिला जैनग्रंथ उवासगदसाओ में वर्णित गुणशिलाचैत्य नामक स्थान के अतिरिक्त संभवतः और अन्य कोई जगह नहीं थी।

कालना—यह वर्दवान जिले में है और हिंदुओं का एक अत्यंत पवित्र स्थान

माना जाता है। यह सूर्यदास, गौरीदास, जगन्नाथदास और भगवानदास नामक प्रसिद्ध वैष्णव संतों का आवास था। यह अंबिका-कलना नाम से भी प्रसिद्ध है (इंट्रोड्यूसिंग इंडिया, भाग, I, पृ० 76)।

कामरूप—यह उत्तर में भूटान से, पूरब में दरंग और नवगाँव जिलों से, दक्षिण में खासी पहाड़ियों और पश्चिम में गोलपारा से घिरा हुआ है। कामरूप का बृहत्तर भाग एक विशाल मैदान है जिसके निचले भाग से ब्रह्मपुत्र अविरत रूप से पूर्व से पश्चिम में प्रवाहित होती रहती है। इस नदी के दक्षिण में यह मैदान पहाड़ियों द्वारा बहुत खंडित है (बी० सी० एलेन, असम डिस्ट्रिक्ट गजेटियर्स, भाग, IV, अध्याय, I, कामरूप)। इलाहाबाद स्तंभ लेख में इसका वर्णन गुप्त-साम्राज्य की सीमाओं के बाहर स्थित एक प्रत्यंत राज्य के रूप में हुआ है, जिसकी राजधानी प्राग्ज्योतिषपुर थी (कालिकापुराण, अध्याय, 38) जिसे आधुनिक गौहाटी से समीकृत किया गया है (ज० रा० ए० सो०, 1900, पृ० 25)। कामरूप के प्राचीन राज्य में साधारणतया आधुनिक असम प्रदेश की अपेक्षा अधिक विशाल क्षेत्र संमिलित था और पश्चिम में यह करतोया नदी तक फैला हुआ था। योगिनीतंत्र (1.11, 60.61; 1.12, 68; 2.2, 119) के अनुसार कामरूप-राज्य में रंगपुर (बांगला देश) और कूचबिहार के सहित ब्रह्मपुत्र (लौहित्य) की संपूर्ण घाटी संमिलित थी (इंपीरियल गजेटियर ऑव इंडिया, XIV, पृ० 331)। इस राज्य में मनीपुर, जैन्तिया, कछार, पश्चिमी असम और मैमनसिंह (बांगला देश) तथा सिलहट (बांगला देश) के कुछ भाग संमिलित थे। आधुनिक जिले गोलपारा से गौहाटी तक फैले हुए थे (लांसेन, इं० ऐं०, I, 87; II, 973)। कामरूप देश की परिधि लगभग 10,000 ली और इसकी राजधानी की लगभग 30 ली थी। यहाँ की भूमि नीची होने के बावजूद भी निरंतर जोती जाती थी। वैद्यदेव कामरूप राज्य का शासक था। (एपि० इं०, II, पृ० 355)। वैद्यदेव के कमौली-दानपत्र में प्रदत्त गाँव को कामरूपमंडल एवं प्राग्ज्योतिष-भुक्ति में स्थित बतलाया गया है (एपि० इं०, II, 348)। कामरूप का नरेश समुद्रगुप्त को कर दिया करता था (फ्लीट, का० इं० इं०, III, पृ० 6-8)। ग्यारहवीं शताब्दी ई० में उत्कीर्ण सिलिमपुर-अभिलेख के अनुसार, कामरूप-नरेश जयपाल ने वरेंद्री के एक ब्राह्मण को स्वर्णमुद्राएँ दी थीं (एपि०इं०, XIII, 292, 295)। देवपारा एवं माधाईनगर से उपलब्ध ताम्रपत्र के अनुसार, विजयसेन और लक्ष्मणसेन ने कामरूप पर विजय प्राप्त की थी। भोजवर्मन् के वेलाव ताम्रपत्र से हमें ज्ञात होता है कि राजा वज्रवर्मन् ने कामरूप-नरेश को अशक्त कर दिया था (न० गो० मजूमदार, इंस्क्रिप्शंस ऑव बंगाल, भाग, III, पृ० 15

और आगे)। लक्ष्मणसेन के इंडिया-आफिस के अभिपत्रों में कलिंग, काली आदि के साथ कामरूप का उल्लेख हुआ है (एपि० इं०, XXVI, भाग, I)। कामरूप को प्राग्ज्योतिष भी कहा जाता है, किंतु रघुवंश में (IV. 83-84) का रूप एवं प्राग्ज्योतिष के जनों को दो भिन्न राष्ट्र बतलाया गया है। प्राग्ज्योतिष के राजा ने अपनी पग-धूलि से अभिचार-कृत्य किये थे (विस्तार के लिए द्रष्टव्य बि० च०, लाहा, प्राग्ज्योतिष, ज० उ० प्र० हि० सो०, XVIII, भाग, I, और II, पृ० 43 और आगे)।

1912 में सिलहट जिले (बांगला देश) के पंच खंड परगने के अंतर्गत् निधानपुर[1] नामक गाँव से तीन ताम्रपत्र प्राप्त हुये थे। ये अभिपत्र कामरूप-नरेश भास्कर-वर्मन् द्वारा उसके कर्णसुवर्ण के स्कंधावार से ब्राह्मणों को दिये गये भूमिदान के अंश हैं। बाद में दो और अभिपत्र उपलब्ध हुये थे। कामरूप-नरेश वैद्यदेव की आज्ञा से उत्कीर्ण ताम्रपत्र वाराणसी के समीप कमौली से प्राप्त हुये हैं (एपि० इं०, II, 347 और आगे)। विस्तृत विवरण के लिए द्रष्टव्य, इं० हि० क्वा०, भाग, VI, नं० 1, पृ० 60 और आगे)।

चीनी तीर्थयात्री युवान-च्वाङ के अनुसार कामरूप देश, जिसे चीनी लोग किया-मो-लिउ-पो (Kia-mo-leu-po) कहते थे, पुण्ड्रवर्धन के पूरब में 900 'ली' (या 150 मील) आगे स्थित था और इसकी परिधि 10,000 'ली' थी। यह स्थान नीचा और नम था और यहाँ पर फसलें नियमित रूप से होती थी। यहाँ की जलवायु सुखद और निवासी ईमानदार थे। वे अध्यवसायी विद्यार्थी होते थे और छोटे कद तथा साँवले रंग के थे। चीनी तीर्थयात्री ने यहाँ पर अशोक-युगीन कोई स्मारक नहीं देखा था। यहाँ के निवासी बौद्ध-मत में विश्वास नहीं करते थे। कुछ लोगों की धारणा है कि कुछ शताब्दियों तक कामरूप में महायान बौद्धधर्म का एक अत्यंत विकृत रूप प्रचलित था (के० एल० बरुआ, अर्ली हिस्ट्री ऑव कामरूप, पृ० 304)। यहाँ पर बहुसंख्यक देवमंदिर और विविध संप्रदायों के निष्ठावान समर्थक थे। राजा विद्या-प्रेमी था और उसकी प्रजा उसका अनुगमन करती थी। यद्यपि राजा स्वयं बौद्ध नहीं था, किंतु वह प्रवीण भिक्षुओं का यथोचित सम्मान करता था।

उत्तर-पूर्व में कामरूप स्वतंत्र प्रतीत होता है और यह अशोक के धर्मप्रचार

---

[1] भास्करवर्मन् के निधानपुर दानपत्र को नाधनपुर दानपत्र भी कहते हैं (द्रष्टव्य कत्रे एवं गोडे द्वारा संपादित, ए वाल्यूम ऑव ईस्टर्न ऐण्ड इंडियन स्टडीज प्रजेंटेड टु एफ० डब्ल्यू० टॉमस, पृ० 85 और आगे)।

के क्षेत्र के बाहर बना रहा। प्रत्यंत नृपतियों एवं गणराज्यों की गणना से, जिनके शासक समुद्रगुप्त की अधीनता मानते थे और उसे कर देते थे, उसके राज्य की निश्चित सीमाएँ निर्धारित करने और चौथी शताब्दी ई० में भारत के राजनीतिक प्रभागों का स्वरूप समझने में हमें सहायता मिलती है (वी० ए० स्मिथ, अशोक, तृतीय संस्करण, पृ० 81; अर्ली हिस्ट्री ऑव इंडिया, 1924, सं० 302)। दीर्घकाल तक यहाँ पर ब्राह्मण धर्म का प्रभुत्व बना रहा। यद्यपि यह गुप्तवंशीय महान् राजाओं को कर देता था, किंतु आंतरिक प्रशासन में इसकी स्वाधीनता बनी रही। राज्यवर्धन के उत्तराधिकारी हर्ष ने कामरूप-नरेश भाष्करवर्मन् से संधि कर ली थी, जिसके पिता सुस्थितवर्मन मृगांक ने महासेनगुप्त से युद्ध किया था। सुस्थितवर्मन् के लौहित्य (लौहित्य) या ब्रह्मपुत्र नदी से संबंधित होने से यह स्पष्टतः प्रकट होता है कि वह कामरूप का राजा था। पालवंशीय धर्मपाल के पुत्र एवं उत्तराधिकारी देवपाल ने कामरूप पर विजय प्राप्त की थी। रामचरित् के अनुसार रामपाल ने भी इसे जीता था। बारंबार गौड नरेशों ने भी इसे जीता था। कामरूप राज्य बंगाल के कुछ पाल-नरेशों के साम्राज्य में संमिलित था। चन्द्र-नरेश बालचन्द्र के पुत्र विमलचन्द्र ने कामरूप पर शासन किया था। तेरहवीं शताब्दी ई० के प्रारंभ से इस देश पर अहोम प्रमुख ने अपना शासन स्थापित कर लिया था।

कामाख्या—असम में यह एक तीर्थस्थान है (बृहत्-धर्मपुराण, I, 14; कालिकापुराण, अध्याय, 62)। गौहाटी के समीप कामाख्या में स्थित शिव की पत्नी, शक्ति का मंदिर प्राचीनकाल में प्रसिद्ध था। तंत्रों में समझायी गयी ऐंद्रिय पूजा-पद्धति का यह महान् केंद्र था। यहाँ पर महामाया नामक एक देवी थी जो मानवीय इच्छाओं को पूर्ण करने के लिए सदैव तत्पर रहती थी (कालिकापुराण, पूर्व खंड, अ० 12) और „योगिनीतंत्र में कई राजाओं के नाम सुरक्षित हैं, जिनकी उपाधियों से आदिमवासियों से उनकी उत्पत्ति का रहस्य प्रकट होता है और जिनका उत्तराधिकारी प्राग्ज्योतिष्पुर नामक प्राचीन एवं प्रसिद्ध शहर का संस्थापक नरक था। परंपरा के अनुसार नरक ने करतोया नदी से ब्रह्मपुत्र-घाटी के पूर्वी छोर तक शासन किया था। नरक का पुत्र भगदत्त, दुर्योधन का मित्र था (महाभारत, उद्योगपर्व, अध्याय, 4)। कामरूप में कामाख्या का मंदिर इस मत के उपासकों की श्रद्धा की एक विशेष वस्तु है क्योंकि यह उस स्थान पर स्थित बतलाया जाता है जहाँ पर विष्णु द्वारा शक्ति का शरीर छिन्न-भिन्न किये जाने पर उसकी जननेंद्रिय गिरी थी। किंतु असम के निवासियों में शाक्त मत लोकप्रिय नहीं है। शक्ति की पुरुष-प्रतिमूर्ति शिव के उपासक, अधिकांशतः सूरमा-घाटी में पाये

जाते हैं। अपने सिद्धांतों की विलक्षणता के लिए उल्लेखनीय सहजभजन एक अन्य छोटा संप्रदाय है। इस मत का प्रत्येक उपासक किसी स्त्री को अपना आध्यात्मिक मार्ग-दर्शक मान कर मुक्ति प्राप्त करने की चेष्टा करता है। गौहाटी के समीप नीलाचल पहाड़ी पर स्थित कामाख्या और गौहाटी के पश्चिमोत्तर में सड़क मार्ग पर लगभग 15 मील दूर पर स्थित हजो में हयग्रीव माधव के मंदिर महत्त्वपूर्ण देवालय हैं। (विस्तृत विवरण के लिए द्रष्टव्य, बनीकांत ककती कृत, द मदर-गॉडेस कामाख्या, 1948)।

काम्तापुर—यह कूच बिहार शहर के दक्षिण-पश्चिम में लगभग 19 मील की दूरी पर स्थित है। अब यह उजाड़ है। अपने ईस्टर्न इंडिया नामक ग्रंथ में डॉ० बुखनान हैमिल्टन ने इस स्थान का एक रोचक विवरण प्रस्तुत किया है। उनके अनुसार काम्तापुर तीन ओर से लगभग 20 से 40 फीट ऊँची मिट्टी के एक प्राकार से सुरक्षित था। पठानों ने अत्यंत महत्त्वपूर्ण काम्तेश्वरी मंदिर को नष्ट किया था।

केदारपुर—फरीदपुर जिले (बांगला देश) में पालंग थाने के अधिकारक्षेत्र के अन्तर्गत् यह एक गाँव है। यहाँ से श्रीचन्द्रदेव का एक ताम्रपत्र प्राप्त हुआ है, जिसपर बौद्ध-प्रतीक धर्मचक्र और दो तरफ बैठे हुये मृगों के चित्र हैं (इं० हि० क्वा० भाग, II, पृ० 313 और आगे)।

केन्दुलि—(केन्द्रविल्ल)—सूरी तहसील के बोलपुर थाने में स्थित यह एक गाँव है। यह बीरभूम जिले में सूरी से लगभग 22 मील दक्षिण और इलमबाजार के कुछ मील पश्चिम में अजय नदी के उत्तरी तट पर स्थित है। यह बारहवीं शती० ई० के महान् संस्कृत कवि जयदेव का जन्मस्थान होने के कारण प्रसिद्ध है, जिन्होंने राधिका एवं कृष्ण की प्रशंसा में गीतगोविन्द नामक एक सुप्रसिद्ध संस्कृत गीति-काव्य की रचना की थी। उनकी मृत्यु के बाद उनके शरीर को जलाया न जाकर दफ़नाया गया था, और यहाँ पर सुंदर कुंजों एवं वृक्षों से परिवृत्त उनकी समाधि को अब भी देखा जा सकता है। यहाँ पर अधिकांशतः वैष्णव तीर्थयात्री आया करते हैं (इंट्रोड्यूसिंग इंडिया, भाग, I, रा० ए० सो० बं० का प्रकाशन, 1947, पृ० 72)।

केरकेर—आदिपुर परगने में स्थित यह एक गाँव का नाम है जो खिजिंग के दक्षिण—दक्षिण-पूर्व में लगभग 12 मील दूर स्थित है (एपि० इं०, XXV, भाग, IV, अक्टूबर, 1939)।

केशिपुर—योगिनीतंत्र (1. 14, 84-85) में इसका वर्णन मिलता है।

खड-दह—कलकत्ता के 12 मील उत्तर हुगली नदी के तट पर, बैरकपुर तहसील में स्थित यह एक गाँव है। यह वैष्णवों का एक तीर्थस्थान है। चैतन्य के एक महान शिष्य नित्यानंद, कुछ समय तक यहाँ रहे थे। वे यहाँ पर तपस्या करने के लिए आये थे। विस्तृत विवरण के लिए द्रष्टव्य, बि० च० लाहा, ज्यॉग्रेफिकल ऐसेज़, पृ० 219)।

खलतिक पहाड़ियाँ—ये गया जिले में स्थित आधुनिक बराबर पहाड़ियाँ हैं। अशोक के बराबर पहाड़ी-गुहालेखों से हमें ज्ञात होता है कि खलतिक पहाड़ियों में अशोक ने आजीविकों को चार गुहावास समर्पित किये थे (तु०, पतञ्जलि का महाभाष्य, I, 2. 3; बि० च० लाहा, इंडिया ऐज़ डिस्क्राइब्ड इन द अर्ली टेक्सट्स ऑव बुद्धिज्म ऐंड जैनिज्म, पृ० 27)। उत्तरकालीन अभिलेखों में खलतिक (गंजी पहाड़ी) पहाड़ी को गोरथगिरि (गोरधगिरि) तथा और बाद में प्रवरगिरि कहा जाने लगा था (देखिए, बि० च० लाहा, राजगृह इन ऐंश्येंट लिट्रेचर, मे० आर्क्० स० इं०, नं० 58)।

गया जिले की जहानाबाद तहसील में स्थित बराबर पहाड़ी में अशोक और उसके पौत्र दशरथ के काल की सातघरा और नागार्जुनी गुफाएँ स्थित हैं। यह पटना-गया रेलपथ पर बेला स्टेशन से लगभग 7 मील दूर पूरब में स्थित है। दक्षिण में, और गिरि-पाद के निकट शिला काट कर बनायी गयी सातघरा नामक सात गुफाएँ हैं। इन सात गुफाओं में से तीन नागार्जुनी पहाड़ी पर हैं।

विशाल शिला पर स्थित एक मंदिर को बुद्ध के काल में पासाणकचेतिय नामक एक बौद्ध विहार के रूप में परिवर्तित किया गया था जो मगध के धार्मिक क्षेत्र के अंतर्गत् स्थित था। कुछ लोगों ने इसे गोरथगिरि या इसके समीप किसी अन्य पहाड़ी से समीकृत किया है।

खण्डजोतिक—संभवतः यह बंगाल के वर्दवान संभाग के मल्लसारुल और गोहग्राम के बीच में स्थित खण्डजुली है (एपि० इं०, XXIII, V, पृ० 158)।

खरगपुर पहाड़ियाँ—मुंगेर शहर के ठीक दक्षिण में एक पर्वतमाला स्थित है। यह पहाड़ी जो विन्ध्य पर्वत के उत्तरी मुख से अंकुरित होने वाली एक प्रशाखा है, 30 मील लंबी है (ज० ए० सो० बं०, भाग, XXI)।

खसिया—गारो के अंतर्गत् देखिए।

खाड़ी—बारहवीं शती ई० के सेन ताम्रपत्रों में खाडिविषय और खाडि-मण्डल का उल्लेख मिलता है। खाड़ि को सुंदरबन (डायमंड हार्बर तहसील) में स्थित खाड़ि परगने से समीकृत किया गया है (इंस्क्रिप्शंस ऑव बंगाल, III, 60, 170)।

खालिमपुर—यह माल्दह जिले में गौड़ के समीप है, जहाँ से धर्मपालदेव का एक अभिपत्र प्राप्त हुआ था (एपि० इं०, IV, 243)।

खानुमत—यह मगध का एक समृद्धिशाली ब्राह्मण गाँव था, जहाँ राजा बिम्बिसार द्वारा प्रदत्त एक भूमिदान पर एक वैदिक संस्था चलाई जा रही थी (सुमंगलविलासिनी I, 41; दीघ, I, 127)। मगध-नरेश बिम्बिसार ने ब्राह्मण कूटदंत को यह दान दिया था। यह वही स्थान था जहाँ ब्राह्मण कूटदंत जीवन और धन पर संपूर्ण अधिकार के साथ रहता था जैसे कि वह स्वयं राजा हो। प्रति-वर्ष यहाँ पर एक महायज्ञ होता था, जिसमें अनेक बैल, बछड़े, बकरे और भेड़ों की बलि दी जाती थी (दीर्घ०, I, 127)।

खेतुर—यह राजशाही जिले (बंगला देश) में स्थित एक गाँव है। सोलहवीं शताब्दी ई० के एक महान् हिंदू धर्म-सुधारक श्रीचैतन्य यहाँ पर आये थे, जिनके सम्मान में यहाँ पर एक मंदिर बनवाया गया था (इंट्रोडच्यूसिंग इंडिया, भाग, II, पृ० 78)।

कोल्हुआ—यह बसाढ़ के पश्चिमोत्तर में तीन मील दूर स्थित है। यहाँ पर सिंह-शीर्षक एक पाषाण-स्तंभ, एक भग्नस्तूप, एक प्राचीन तालाब और प्राचीन भवनों का स्थान लक्षित करने वाले कुछ लघु टीले हैं। ये सब अवशेष वैशाली के पश्चिमोत्तर में स्थित अवशेषों के विवरण से स्पष्ट रूप से संगत हैं (ओ 'मैल्ली बिहार डिस्ट्रिक्ट गजेटियर्स, पृ० 141-42, मुजफ़्फरपुर)।

कोलिकगाम—यह गाँव नालंदा विहार से 8 या 9 ली ($1\frac{1}{2}$ मील) दूर दक्षिण-पश्चिम में स्थित था। यह सारिपुत्त से संबंधित है (वाटर्स, ऑन युवान-च्वाङ्, II, 171)। इस गाँव में मोग्गलान जन्मे और मरे थे (धम्मपद कमेंट्री, पा० टे० सो०, भाग, I, 89)।

कोल्लाग—यह संनिवेश कुण्डपुर के आगे और अधिक पूर्वोत्तर दिशा में स्थित था। ऐसा प्रतीत होता है कि मुख्य रूप से यहाँ पर नाय या ज्ञात्री कुल के क्षत्रिय रहते थे, जिसमें स्वयं महावीर उत्पन्न हुये थे (हर्नले द्वारा अनूदित, उवासगदसाओ, भाग, II, पृ० 4, टिप्पणी, 8)।

कोटिगाम—यह विज्जियों का एक गाँव था (संयुत्त निकाय, V, 431)। राजगृह से कुशीनारा जाते समय बुद्ध यहाँ से गुजरे थे (दीघ निकाय, II, 90-91)।

कोटिशिला—यह मगध में एक तीर्थ था। यहाँ पर अनेक संतों ने तपस्या की और सिद्धि प्राप्त की थी (लाहा, सम जैन कैनॉनिकल, सूत्राज़, पृ० 178)।

कोटिवर्षविषय—(जैनकोडिवरिस या कोडिवरिसिया)—इसे पुण्ड्रवर्धन-भुक्ति की एक तहसील बतलाया गया है। बंगाल के पालों एवं सेनों के अभिलेखों में प्राय: यह नाम आता है। निश्चय ही इसमें संपूर्ण दिनाजपुर या इसका एक भाग संमिलित रहा होगा। बाणग्राम, आधुनिक बानगढ़, कोटिवर्ष का मुख्य नगर था। जैनग्रंथ आवश्यक निर्युक्ति (1305) के अनुसार कोडिवरिस का राजा कालिय एक जैन मुनि हो गया था। दिनाजपुर से 18 मील दक्षिण में स्थित गंगारामपुर से 1½ मील उत्तर में पुनर्भवा नदी के पूर्वी तट पर बानगढ़ के भग्नावशेष प्राप्त होते हैं। गंगारामपुर के परिवर्ती क्षेत्र को, उत्तरी बंगाल में कोटिवर्ष की राजधानी, कोटिकपुर या प्राचीन देवकोट से समीकृत किया जा सकता है। अनुश्रुतियों के अनुसार बानगढ़ असुर-राजा बाण का सुरक्षित शहर था। बताया जाता है कि उसकी पत्नी कालाराणी ने गंगारामपुर में कालदीघि नामक एक तालाब खुदवाया था। बानगढ़ से उपलब्ध महीपाल प्रथम के ताम्रपत्र के अनुसार महीपाल ने अपना खोया हुआ पैतृक राज्य पुन: प्राप्त किया था। बानगढ़ से प्राप्त कुछ प्राचीन अवशेष अब दिनाजपुर प्रासाद में रखे गये हैं। यहाँ पर हमें निकष-प्रस्तर से निर्मित एक अतिशय अलंकृत पाषाण-स्तंभ, एक शिवमंदिर और लगभग ग्यारहवीं शती का बना हुआ एक बौद्ध चैत्य प्राप्त हुआ है। बुधगुप्त और जयदत्त के समय के दामोदरपुर दानपत्र के अनुसार (एपि० इं०, XV, 138 और आगे) दोंगा नामक एक गाँव पुण्ड्रवर्धनभुक्ति के कोटिवर्षविषय की हिमवच्छिखर (शाब्दिक रूप से हिमालय का शिखर) नामक तहसील में स्थित था (इं० क०, V, पृ० 433)।

कोट्याश्रम—वशिष्ठ के इस आश्रम को बारीपादा से 32 मील दूर कुटिंग से समीकृत किया गया है (एपि० इं०, XXV, भाग, IV, अक्टूबर, 1938)।

क्रौन्चश्वभ्र—धर्मपालदेव के खलीमपुर दान ताम्रपत्र में वर्णित यह एक प्रदत्त गाँव का नाम है (गौडलेखमाला, I, पृ० 9 और आगे)। यह पौण्ड्रवर्धन-भुक्ति के व्याघतटी-मण्डल के अधिकार-क्षेत्र के अंतर्गत् महंताप्रकाश विषय (जिले) में स्थित था (एपि० इं०, IV, पृ० 243 और आगे)।

क्रिनिल—समुद्रगुप्त के नालंदा अभिपत्र में उल्लिखित इस विषय का वर्णन देवपाल के मुंगेर दानपत्र में भी है। इसके अनुसार यह श्रीनगरभुक्ति या पटना में स्थित बतलाया जाता है (एपि० इं०, XXV, भाग, II, अप्रैल, 1939)।

कृपा (या कूपा)—इस नदी को आधुनिक कोपा से समीकृत किया जा सकता

है, जो पूर्वी भारत में बाबला की एक सहायक नदी थी (लाहा, रिवर्स ऑव इंडिया, पृ० 45)।

कुक्कुटपादगिरि (गुरुपादगिरि भी इसका नाम है)—स्टाइन ने इसे कुर्किहार के और आगे दक्षिण-पश्चिम में और वज़ीरगंज गाँव से लगभग 4 मील दूर पर स्थित पर्वतमाला के सर्वोच्च शिखर, सोभनाथ पहाड़ी पर स्थित बतलाया है (इं० ऐं०, मार्च, 1901, पृ० 88)। कुछ लोगों ने इसे बोध गया से लगभग 100 'ली' पूरब में स्थित गुरपा पहाड़ी से समीकृत किया है (जे० ए० सो० बं०, 1906, पृ० 77)। कनिंघम ने इसे कुर्किहार के उत्तर में लगभग एक मील और गया के पूर्वोत्तर में 16 मील दूर स्थित तीन शिखरों से समीकृत किया है (कनिंघम, एं० ज्यॉ० इं०, मजूमदार संस्करण, पृ० 721)। ये तीन शिखर बौद्ध संत महाकाश्यप के कुछ अलौकिक कार्यों के स्थल बतलाये जाते हैं। युवान-च्वाङ के अनुसार कुक्कटपाद या गुरुपाद के उत्तुंग शिखर अनंत हैं और इसकी गहन घाटियाँ अपरिमित कन्दराएँ हैं। इसके निचले ढलानों की कुल्यायें लंबे वृक्षों से और इसकी दुरारोह ऊँचाइयाँ विपुल वनस्पति-राशि से आच्छादित हैं। एक त्रिकूट शैल अपने एकाकी गगनचुंबी और बादलों से मिलती-सी उत्तुंगत्ता में ऊपर निकला हुआ है। महाकाश्यप ने इसी पर्वत पर अपना आवास बनाया था (वाटर्स, ऑन युवान-च्वाङ, II, पृ० 143)।

कुक्कुटाराम—यह विहार पाटलिपुत्र में था (संयुत्त, V, 15, 17, 171, 173)। मुण्ड नामक एक मगध-नरेश यहाँ पर नारद ऋषि को देखने और उनका उपदेश सुनने आया था। ऋषि ने उनको उपदेश दिया और रानी भद्दा की मृत्यु के दुःख से अभिभूत होने के कारण उसे सांत्वना दी। तत्पश्चात् उन्होंने सदा की भाँति अपने कर्त्तव्यपालन किये (अंगुत्तर, III, 53 और आगे)। इस आराम में भद्द नामक एक भिक्षु रहता था और उसने बुद्ध के प्रसिद्ध शिष्य आनन्द से बातचीत की थी (संयुत्त, V, 15-16; 171-72)। बुद्धघोष के अनुसार कुक्कुटसेट्ठी ने इस आराम का निर्माण कराया था (मज्झिम कामेंट्री, II, 571)। युवान-च्वाङ का कथन है कि यह पाटलिपुत्त के प्राचीन नगर के दक्षिण-पूर्व में स्थित था और बौद्ध धर्म ग्रहण करने के पश्चात् अशोक ने इसका निर्माण करवाया था (बील, रिकार्डस ऑव द वेस्टर्न वर्ल्ड, II, 95)। दिव्यावदान में प्रायः इसका उल्लेख हुआ है (पृ० 381 और आगे; 430 और आगे)। यह आराम कौशाम्बी में स्थित कुक्कुटाराम से भिन्न था (विनय, I, 300)।

कुलाञ्च—इस नगर की स्थापना काचर नामक ऋषि ने की थी। इसे कोलाञ्च, क्रोडांचि या क्रोडांज से समीकृत किया गया है। यह स्थान शाण्डिल्य-

गोत्रीय ब्राह्मणों का केंद्र प्रतीत होता है। राजा आदिसूर के निमंत्रण पर एक वैदिक यज्ञ का संपादन करने के लिए इन ब्राह्मणों के पाँच पूर्वज कौलाञ्च से वंग गये थे। यह स्थान गंगा-तट पर स्थित प्रतीत होता है (एपि० इं०, XXIV, भाग, III, जुलाई, 1937)। कुछ लोगों की धारणा है कि यह पूर्वी या उत्तरी भारत में स्थित है।

कुलुह पहाड़ी—यह हंटरगंज से छह मील दक्षिण-पश्चिम में स्थित है। यहाँ पर कई भग्न मंदिर हैं। यह हिंदुओं का एक तीर्थस्थान है (बिहार ऐंड उड़ीसा डिस्ट्रिक्ट गजेटियर्स, हजारीबाग, 1917, पृ० 202)।

कुमारी—इस नदी को आधुनिक कुमारी से समीकृत किया जा सकता है जो मानभूम में डल्मा पहाड़ियों को सींचती है (लाहा, रिवर्स ऑव इंडिया, पृ० 45)।

कुंभीनगर—कुंभीनगर को बंगाल में बीरभूम जिले के रामपुरहाट में स्थित कुम्हीर से समीकृत किया जा सकता है (द्रष्टव्य, लक्ष्मणसेन का शक्तिपुर ताम्रपत्र एपि० इं०, XXI, पृ० 214)।

कुण्डपुर—इसे खत्तिय कुण्डग्गाम भी कहा जाता है। इसे वैशाली के उपकंठ में स्थित बसुकुण्ड से समीकृत किया जाता है। यह महावीर का जन्म-स्थान था (आवश्यक चूर्णि, पृ० 243)।

लक्ष्या—इसका वर्णन योगिनीतंत्र (1.11, पृ० 60-61 में लक्ष्यासंगम के रूप में मिलता है। यह ढाका जिले (बंगला देश) की कमनीयतम नदी है। यह प्राचीन ब्रह्मपुत्र से निकलनेवाली तीन सरिताओं से बनी है। यह मदनगंज में धलेश्वरी में मिलती है (लाहा, रिवर्स ऑव इंडिया, पृ० 34)।

लंबेव—इसे उड़ीसा राज्य के नरसिंहपुर के अंतर्गत् लिंबु से समीकृत किया जा सकता है (एपि० इं०, XXVI, भाग, II, पृ० 78)।

लठ्ठिवन–(संस्कृत यष्ठिवन)—यह गया जिले में तपोवन से लगभग 2 मील उत्तर में स्थित है। पालि भाष्यकार बुद्धघोष के अनुसार यह एक ताड़वन (तालुज्जान) था (समन्तपासादिका, सिंहली संस्करण, पृ० 158, पा० टे० सो०, संस्करण, V. 972)। बुद्ध ने यहाँ पर बिम्बिसार को धर्म-परिवर्तित किया था (मनोरथपूरणी, पृ० 100)। यह बाग जो राजगृह नगर की सीमा पर स्थित (राजगृहनगरुपचारे) था, वेणुवन की तुलना में अधिक दूर माना जाता था (जातक, I, 85, तु०, विनयमहावग्ग, I, 35)। यह बिम्बिसार के राजोद्यान का नाम था जहाँ बुद्ध गयासीस से आकर राजगृह जाते समय धर्म परिवर्तन करने वाले जटिलों के साथ रुके थे (विनय-महावग्ग, I,35)। युवान-च्वाङ् ने इसे

वाँसों का एक घना जंगल बतलाया है जो एक पहाड़ को आच्छादित किये था और इसके 10 ली दक्षिण-पूर्व में दो गरम कुंड थे (वाटर्स. ऑन युवान-च्वाङ, II, 146)।

लौहित्य—ब्रह्मपुत्र के अंतर्गत् देखिए। इसका वर्णन योगिनीतंत्र (2.5, 139 और आगे) में मिलता है। इसे एक अत्यंत पुण्य स्थान माना जाता है (कालिका पुराण, अध्याय, 58. 39)।

लौरिया-नंदनगढ़—यह गाँव अशोक के स्तंभ के लिए विख्यात है। यह चंपारन जिले में बेतिया से कोई 16 मील पश्चिमोत्तर में गंडक नदी की घाटी में स्थित है जहाँ पर नेपाल की सीमा की ओर जाने वाले दो प्रमुख मार्ग मिलते हैं। अत्यंत प्राचीन काल से यह अवश्यमेव बहुत महत्वपूर्ण स्थिति में रहा होगा। इस स्थान पर किये गये उत्खनन के विवरण के लिए, द्रष्टव्य, आर्क्० स० इं०, एनुअल रिपोर्ट, 1906-1907, पृ० 119 और आगे; 1935-36 पृ० 55 और आगे, पहले के अन्वेषण के लिए, द्रष्टव्य, आर्क्० स० इं० रिपोर्ट, I, पृ० 68 और आगे। XVI, 104 और आगे; XXII, 47 और आगे।

लोहित—सदिया जिले में ब्रह्मपुत्र में मिलने वाली बड़ी सहायक नदी लोहित या लौहित्य है (महाभारत, भीष्मपर्व, अध्याय, 9; अनुशासनपर्व, 7647; तु०, रामायण, किष्किन्ध्याकाण्ड, XL. 26; एशियाटिक रिसचर्ज़, भाग, XIV, पृ० 425)। यह नमकिउ पर्वत के पहले उत्तर-पूर्व से चार नदियों के संयुक्त प्रवाह के रूप में प्रवाहित होती है, (लाहा, रिवर्स ऑव इंडिया, पृ० 30)। यह नदी असम में प्राग्ज्योतिष या गौहाटी की सीमा थी (रघुवंश, IV. 81)।

लुपतुरा—संभवतः यह पटना (उड़ीसा राज्य में, पहले एक रियासत) की लिपतुंगा ही है। कुछ लोगों ने इसे पटना (रियासत में) बोलंगिर से छह मील दक्षिण-पूर्व में स्थित लेप्ता से समीकृत किया है (एपि० इं०, XXIII, भाग, VII)।

लुशाई—लुशाई पहाड़ियाँ मणिपुर राज्य से दक्षिण की ओर फैली हुई हैं। ये पूरब में चिन और पश्चिम में चटगाँव पहाड़ियों से घिरी हुयी हैं। अराकान योमा लुशाई पहाड़ियों के दक्षिण में स्थित है। विस्तृत विवरण के लिए द्रष्टव्य, बि० च० लाहा, माउंटेंस ऑव इंडिया, पृ० 9)।

मकलगाम—यह मगध में एक सुमापित गाँव था, जहाँ पर लोग सूर्य एवं चन्द्र देवता की उपासना करते थे। बुद्ध के आविभाव के बहुत पहले ही यह सड़कों, विश्रामगृहों, सरोवरों एवं विशाल भवनों से सुशोभित था (जातक, I, 199,

206; धम्मपद कामेंट्री, I, 265-80; सुमंगलविलासिनी, III, 710 और आगे)।

मद्दकुच्ची-मिगदाय (मिगदाव)—मद्दकुच्ची में स्थित मृगवन राजगृह में या इसके समीप एक महत्त्वपूर्ण स्थान था (विनय, I, 105; संयुत्त०, I, पृ० 27)। बुद्धघोस ने मद्दकुच्ची को इसका वास्तविक नाम माना है जहाँ पर कृष्णसागर मृग स्वच्छंदतापूर्वक रहा करते थे (सारत्थप्पकासिनी, I, 77)। स्पष्टतया यह स्थान मैदान में स्थित था। यह राजगृह की एक पहाड़ी पर किसी मोड़ के समीपवर्ती रिक्त स्थान में स्थित था।

मगध—पाणिनि ने अपनी अष्टाध्यायी (4. 1. 170) और पतञ्जलि ने अपने महाभाष्य (1. 1. 2, पृ० 56 में इसका उल्लेख किया है। पाणिनि ने मागध एवं पतञ्जलि ने भी सुमगधा रूप का प्रयोग किया है (2. 1. 2, पृ० 48)। दशकुमारचरितम् (एच० एच० विल्सन संस्करण) के अनुसार मगध के अधिपति ने मालवा नरेश से युद्ध किया जिसके परिणामस्वरूप मालव-नरेश पराजित हुआ और जीवित ही बंदी बनाया गया। किन्तु मगध-नरेश ने उदारता-पूर्वक उसे उसके राज्य में पुनरधिष्ठित किया (पृ० 3 और आगे)। मगध के राजकुल की नारियों को सुरक्षित रूप से विन्ध्याटवी में किसी स्थान पर रखा जाता था जो शत्रुओं के लिए दुर्गम था (पृ० 6)। रघुवंश (सर्ग, I, श्लोक, 31) से ज्ञात होता है कि राजा दिलीप की मगध के राजकुल से संबंधित सुदक्षिणा नामक एक विधि-विवाहिता रानी थी।

मगध का वर्णन अशोक के भाब्रू शिलालेख तथा भागवत पुराण (IX. 22, 45; X. 2, 2; X. 52, 14; X. 73, 33; X. 83, 23) में भी मिलता है। तिब्बती बौद्ध-भूगोल में मगध प्राची में न होकर मध्यदेश में बतलाया गया है। इसमें गया और पटना जिले संमिलित हैं। कुछ लोग इसे अङ्ग के पश्चिम में स्थित बतलाते हैं जिसे चंपा नदी अङ्ग से विभक्त करती थी। अपने भाब्रू शिलालेख में संघ का अभिवादन करने के पश्चात् अशोक ने उनके लिए अपाबाधता और सुख-विहारता (स्वास्थ्य और सुखद गतिविधि) की कामना की थी। यह संभव प्रतीत होता है कि अशोक के सारनाथ स्तंभ लेख में हमें पाटलिपुत्र के नाम के प्रथम दो अक्षर (पाट) लिखे हुये मिलते हैं। भरहुत अभिलेखों से यह निश्चित होता है कि पाटलिपुत्र से तीन पुरुष वहाँ गये थे। हाथीगुम्फा अभिलेख से प्रकट होता है कि जिस समय बृहस्पति मित्र अंग-मगध का राजा था (दूसरी शताब्दी ई० पू०) कलिंग-नरेश खारवेल ने गोरथगिरि को ध्वस्त करके मगध की ओर प्रयाण किया था और मगध की प्राचीन राजधानी राजगृह को परिपीडित किया

था (राजगृहम उपपीडापयति,--एपि० इं०, X, संभावित सं० 1345; तु०, एक्टा ओरियंटेलिया, II, 265; बरुआ, ओल्ड ब्राह्मी इंस्क्रिप्शंस इन द उदयगिरि ऐंड खण्डगिरि केव्स, पृ० 17[1] स्कन्दगुप्त की मृत्यु के पश्चात् मगध का साम्राज्य पूर्णतः नहीं नष्ट हो गया था। यहाँ पर पुरगुप्त, नरसिंहगुप्त, कुमारगुप्त द्वितीय और बुधगुप्त ने शासन किया था। तत्पश्चात् सम्राट-परंपरा ग्यारह गुप्तवंशीय राजकुमारों के हाथ में चली गयी। दामोदरपुर अभिपत्रों, सारनाथ के अभिलेखों, बुद्धगुप्त के एरण अभिलेख और 518 ई० में अंकित परिव्राजक महाराज संक्षोभ के बेतूल अभिपत्रों से इस तथ्य की पुष्टि होती है कि गुप्त साम्राज्य का सार्वभौम अधिकार पाँचवीं शती के उत्तरार्द्ध तथा छठीं एवं सातवीं शताब्दी ई० तक निरंतर बना रहा। सातवीं शताब्दी ई० के पूर्वार्द्ध में पहले से ही निष्प्रभ गुप्त सत्ता को आदित्यसेन ने नष्ट कर दिया था, जिसने परमभट्टारक एवं महाराजाधिराज की उपाधियाँ धारण की थीं। जैसा कि अफसढ़ एवं देव बरनार्क अभिलेखों से सिद्ध होता है, आदित्यसेन और उसके उत्तराधिकारी मगध एवं मध्यदेश पर यथार्थतः प्रभुत्व स्थापित करने वाले एकमात्र उत्तरभारतीय राजा थे। लगभग आठवीं शताब्दी ई० के प्रारंभ में मगध के सिंहासन पर एक गौड राजा गोपाल ने अधिकार कर लिया जैसा कि पाल-अभिलेखों से प्रकट होता है। शक्तिवर्मन् के रघोली अभिपत्रों के अनुसार, कलिंग-नरेश शक्तिवर्मन मगध-कुल से संबंधित था। अभिपत्रों में स्पष्ट रूप से कहा गया है कि प्रतापी महाराज शक्तिवर्मन् मगध-कुल (मागध-कुलांतक) के थे (एपि० इं०, XII, 2 और आगे)। महाशिवगुप्त के शासनकाल के सीरपुर शिलालेख में (एपि० इं०, XI, 184 और आगे) महाशिवगुप्त की माता, वासला को सूर्यवर्मन् नामक मगध-नरेश की पुत्री (मगधाधिपत्या बतलाया गया है। मंगलेश के महाकूट-अभिलेख में बतलाया गया है (इं० ऐं०, XII, 14 और आगे) कि कीर्त्तिवर्मन् प्रथम उर्फ पुरु-रणपराक्रमांक ने मगध सहित अनेक नगरों के राजाओं पर विजय प्राप्त की

---

[1] अधोलिखित उद्धरण के विविध शब्दों के पाठ एवं अर्थ-निर्णय के विषय में मतभेद है: "अठमे च वसे महता सेन (आ) गोरधगिरिम घाटापयिता राजागहम उपपिडापयति। जायसवाल और रा० दा० बनर्जी ने गोरधगिरि शब्द का अर्थ राजगृह की सीमा पर स्थित एक पहाड़ी दुर्ग से लगाया है, किन्तु डॉ० बरुआ ने इसे किसी व्यक्ति का नाम माना है (द्रष्टव्य, ओल्ड ब्राह्मी इंस्क्रिप्शंस इन द केव्स ऑव उदयगिरि ऐंड खंडगिरि, पृ० 223-27; तु० बि० उ० रि० सो०, I, 162)।

थी। काठमांडू स्थित जयदेव के अभिलेख में मगध-नरेश महान् आदित्यसेन की पौत्री का उल्लेख मिलता है (मगध-दौहित्री मगधाधिपस्य महत: आदित्यसेनस्य)।

महामण्डलेश्वर चामुण्ड द्वितीय के ऐहोल अभिलेख में कहा गया है (इं० ऐं०, IX. 96 और आगे) कि मगध, गुर्जर, आंध्र, द्राविड और नेपाल के राजा शक्तिशाली राजा चामुण्डराज की प्रशंसा किया करते थे (प्रबल-बलयुतम वीर चामुण्ड-भूपालाम्)। अमोघवर्ष प्रथम के काल के सिरपुर अभिलेख से ज्ञात होता है (एपि० इं०, VII. 202 और आगे) कि वंग, अंग, मगध, मालव ओर वेंगी के राजा-गण अतिशय धवल (अमोघवर्ष प्रथम) की अर्चना करते थे (वङ्ग-अङ्ग मगध-मालव-वेंगीशैर अर्चितोतिशयधवल:)। इसी प्रकार अमोघवर्ष प्रथम के काल के नीलगुंड अभिलेख में हमें इस तथ्य का विशद् विवरण मिलता है। इसमें बताया गया है कि वैरी राजाओं के मुकुट अतिशयधवल का चरण चूमते थे। और आगे कहा गया है कि उसकी वीरता की प्रशंसा इस संसार में सर्वत्र होती है एवं उसकी उपासना उपर्युक्त स्थानों के राजागण किया करते हैं। कवि गंगाधर के गोविन्दपुर शिलालेख (एपि० इं०, II, 330 और आगे) से हमें ज्ञात होता है कि मगध के श्रीमान् राजा (श्री मगधेश्वर) ने उसे व्यास की संज्ञा दी थी। अब्लुर अभिलेख के अनुसार (एपि० इं०, V, 237 और आगे) कल्चुरि नरेश बिज्जन (बिज्जल) ने आंध्र, गुर्जर, वंग, कलिंग, चोल, लाटों आदि के साथ मगध को पराजित किया था। मगध के पूर्ण विवरण के लिए द्रष्टव्य बि० च० लाहा, द मगधाज़ इन ऐंश्येंट इंडिया, (रा० ए० सो० मोनोग्राफ, संख्या, 24)।

महादेव—युवान-च्वाङ के वर्णन के अनुसार यह एक लघु, एकाकी और दो शिखरों वाली पहाड़ी थी। यहाँ पर बुद्ध ने यक्ख वकुल पर विजय प्राप्त की थी। कुछ लोगों के अनुसार यह हिरण्यपर्वत की पश्चिमी सीमा पर स्थित था इसके पश्चिम में कुछ गरम कुंड थे (ज० ए० सो० बं०, भाग, XI, खंड, I, 1892)।

महानदी—योगिनीतंत्र (2.5, पृ० 139-140) में इसका वर्णन मिलता है। महानदी उड़ीसा की सबसे बड़ी नदी है जो बरार के दक्षिण पूर्वी कोण में स्थित पहाड़ियों से निकलती है। यह सिहोआ से होती हुयी मध्यप्रदेश में बस्तर से गुजरती है। यह बिलासपुर जिले की दक्षिणी सीमा पर पहुँचती है। यह पाँच सहायक नदियों द्वारा आपूरित है। यह दक्षिण-पूर्वी दिशा में प्रवाहित होती है और कटक शहर से गुजरती है। विस्तृत विवरण के लिए, द्रष्टव्य लाहा, रिवर्स ऑव इंडिया, पृ० 44)।

महास्थान—पौण्ड्रवर्द्धनभुक्ति देखिये। पकी मिट्टी की बनी हुयी किसी देवी की शुंगयुगीन एक प्रतिमा बोगरा जिले में महास्थानगढ़[1] (बंगला देश) से एक नाली खोदते समय प्राप्त हुयी थी। इससे यह तथ्य पुष्ट करने में हमें सहायता मिलती है कि महास्थान बंगाल के प्राचीनतम नगरों में से एक था और दूसरी शती० ई० पू० से बारहवीं शती० ई० तक आबाद था (आर्क्० स० इं०, एनुअल रिपोर्टस, 1930-34, पृ० 128)।

महास्थान से पीले बालुकाश्म से निर्मित एक लघु-गुटिका की उपलब्धि सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण है। इसपर लगभग तीसरी शताब्दी ई० पू० की प्राचीन ब्राह्मी-लिपि में छह पंक्तियाँ उत्कीर्ण हैं और बंगाल से कभी उपलब्ध होने वाला अपनी तरह का यह पहला आलेख है। इस अभिलेख में पुडनगर (संस्कृत, पुण्ड्रनगर) के स्पष्ट वर्णन से पुण्ड्रवर्धन या पुण्ड्रनगर से महास्थान के समीकरण की पुष्टि होती है जिसे सर्वप्रथम जनरल कनिंघम ने प्रस्तावित किया था (आर्क्० स० रि०, XV, 104 और आगे)। अन्वेषण के विवरण के लिए द्रष्टव्य, आर्क्० स० इं०, एनुअल रिपोर्ट्स, 1934-35, पृ० 40 और आगे; एक्सकेवेशंस ऐट महास्थान, ले० टी० एन० रामचन्द्रन, आर्क्० स० इं० एनुअल रिपोर्ट, 1936-37 (1940)।

महावन—वैशाली नगर के बाहर स्थित यह एक प्राकृतिक वन था जो एक क्रम में हिमालय तक फैला हुआ था। एक विशाल भूखंड पर फैले होने के कारण इसे महावन कहा जाता था (सुमंगलविलासिनी, I, 309; संयुक्त, I, 29-30)।

महावन-बिहार—महावंस (IV. 32) के अनुसार यह बिहार वृज्जि देश में था। फाह्यान् ने अपने यात्रा-वृत्तांतों में इसका उल्लेख किया है।

मैनामाटी—शक संवत् 1141 में स्थित रनवंकमल्ल हरिकालदेव के मैनामाटी ताम्रपत्र में कोमिल्ला शहर (बंगला देश) से लगभग 5 मील पश्चिम में स्थित मैनामाटी पहाड़ियों का उल्लेख है। ताम्रपत्र में लाल-माई की अपेक्षा केवल मैनामाटी पहाड़ियों का वर्णन है (हरप्रसाद मेमोरियल वाल्यूम, पृ० 282 और आगे)। मैनामाटी नाम संभवतः चन्द्रों के राजा, मानिक-चन्द्र की रानी मयनामती से संबंधित है, जिन्होंने दसवीं और ग्यारहवीं शताब्दी ई० में बंगाल पर शासन किया था। इस रानी और इसके पुत्र गोपीचन्द्र ने बंगाली लोक गीतों में एक महत्त्वपूर्ण भूमिका संपादित की है। रानी मयनामती गोरक्षनाथ

---

[1] इंट्रोड्यूसिंग इंडिया, भाग, I, पृ० 79.

नामक एक महान् शैवयोगी की शिष्या प्रतीत होती है जब कि उसका पुत्र किसी निम्नजातीय सिद्ध का शिष्य था। वर्णन है कि राजभवन के एक अधिकारी ने पट्टिकेरक में सहजयान बौद्ध मत का वरण कर लिया था। मैनामाटी पहाड़ियों तक फैले हुये कोमिल्ला के एक गाँव का नाम अब भी पाटिकारा या पैटकारा चला आ रहा है। पट्टिकेर राज्य के अस्तित्व की प्राचीनता आठवीं शती ई० तक बतलायी जा सकती है। मैनामाटी से चन्द्रवंश की मुद्राओं के सदृश मुद्राएँ और अराकानी एवं बर्मी नर-नारियों की आकृतियों के मृण्फलक उपलब्ध हुये हैं। इन मुद्राओं में पटिकेर का नाम आता है। ऐसा प्रतीत होता है कि बर्मा एवं पट्टिकेर राज्य में घनिष्ठ संबंध था। रनवंकमल्ल हरिकालदेव इस स्थान का प्रमुख था जब कि देव लोग उस समय स्वतंत्र शासक थे। पालयुगीन पट्टिकेरक विहार एक महत्त्वपूर्ण विहार था। मैनामाटी का एक टीला, जिसे आनन्दराजा के महल का खंडहर कहते हैं, एक विहार प्रतीत होता है। अभिलेखों में वर्णित चन्द्रवंशीय कुछ नरेशों यथा, श्रीचन्द्र, गोविन्दचन्द्र, सुवर्णचन्द्र और पूर्णचन्द्र ने 900 और 1050 ई० के मध्य पूर्वी एवं दक्षिणी बंगाल पर अपनी राजधानी रोहितगिरि से शासन किया था। मैनामाटी से उपलब्ध एक जैन तीर्थंकर की नग्न पाषाण-प्रतिमा से इस क्षेत्र में जैन मत का प्रभाव प्रकट होता है। गणेश, हर-गौरी और वासुदेव, जैसे देवताओं की उपलब्धि से वहाँ पर हिंदू धर्म का प्रभाव व्यक्त होता है। आनन्दराजा और भोजराजा के प्रासाद, चण्डीमुरा, रूपबानमुरा, शालबनराजा के प्रासाद, यहाँ पर स्थित कुछ उल्लेखनीय टीले हैं। इनमें से एक टीले पर हमें शिव एवं चण्डी के मंदिर मिलते हैं। पहाड़पुर विहार के सदृश यहाँ पर एक वर्गाकार विहार स्थित था। केंद्रीय मंदिर की दीवालों पर उभरे हुये चित्र एवं कमल की पखुंड़ियाँ आदि बनी हैं। यहाँ से नक्काशी किये हुये अनेक मृण्फलक, जिन पर यक्षों, किंपुरुषों, गंधर्वों, विद्याधरों, किन्नरों, बुद्ध, पद्मपाणि, योद्धाओं, पशुओं और कमल के पुष्पों की आकृतियाँ बनी हुयी हैं, उपलब्ध हुये हैं। यहाँ से प्राप्त मृण्भांड अधिकांशतः खंडित हैं। यहाँ से बुद्ध की कुछ छोटी कांस्य प्रतिमाएँ भी उपलब्ध हुयी हैं।[1]

---

[1] विस्तृत विवरण के लिए द्रष्टव्य, बि० च० लाहा, वाल्यूम, भाग, II, पृ० 213 और आगे में प्रकाशित टी० एन० रामचन्द्रन का लेख, 'रीसेंट आर्क्यालॉजिकल डिस्कवरीज एलांग द मैनामाटी ऐंड लालमाई रेंजेज'; इंट्रोड्यूसिंग इंडिया, भाग, I, पृ० 82-83, हरिकेल ऐंड द रुइंस ऑव मैनामाटी; इं० हि० क्वा०, XX, 1944, पृ० 1-8.

मकुलपर्वत—कुछ लोगों ने इसकी पहचान कलुहा पहाड़ी से की है जो बुद्ध गया के लगभग 26 मील दक्षिण में और हजारीबाग जिले में चातरा से लगभग 16 मील उत्तर में स्थित है। यहाँ पर बौद्ध-शिल्प के अवशेष और बुद्ध की प्रतिमाएँ अधिकता से मिलती हैं। बताया जाता है कि बुद्ध ने अपना छठवाँ चार्तुमास्य (वस्स) इसी पर्वत पर व्यतीत किया था।

मल्लपर्वत—यह हजारीबाग जिले में इसरी रेलवे स्टेशन से दो मील दूर पर स्थित परेशनाथ पहाड़ी है। यह जैनों की एक पुण्य-पहाड़ी है। यह यूनानियों द्वारा वर्णित मलायुस पर्वत (Mount Maleus) है। मैंक्रिडिल, मेगस्थनीज़ ऐंड एरिअन, पृ० 63, 139. इसे समेतशिखर, समिदगिरि और समाधिगिरि भी कहते हैं।

मल्लसारुल—यह बंगाल के बर्दवान जिले में जलसी थाने के अधिकार क्षेत्र में दामोदर नदी के उत्तरी तट से लगभग डेढ़ मील दूर स्थित एक गाँव है। यहाँ से विजयसेन का एक ताम्रपत्र मिला था (एपि० इं०, XXIII भाग, V, पृ० 155)।

मंदार पहाड़ी—कालिकापुराण (अध्याय, 13. 23) में इस पर्वत का वर्णन मिलता है। यह भागलपुर जिले की बंका तहसील में भागलपुर से 30 मील दक्षिण में और बंसी से तीन मील उत्तर में स्थित है। यह पहाड़ी लगभग 700 फीट ऊँचा है। यहाँ के प्राचीनतम भवन दो मंदिर हैं जो अब खंडहर हो चुके हैं। यहाँ पर सीताकुंड सरोवर सबसे विशाल है जिसकी लंबाई 100 फीट और चौड़ाई 500 फीट है। फ्लीट के अनुसार यह भागलपुर से लगभग 35 मील दक्षिण में स्थित है (का० इं० इं०, 211; आर्क० स० इं०, VIII, 130)। मेगस्थनीज़ और एरियन ने इसे मल्लुस (Mallus) कहा है। यह एक एकाकी पहाड़ी है जिसके शिखर पर एक हिंदू मंदिर स्थित है। यहाँ पर बौद्ध मंदिर और प्रतिमाओं के अवशेष भी हैं (बर्न, बिहार डिस्ट्रिक्ट गज़ेटियर्स, भागलपुर पृ० 162, 163, 169)। इस पहाड़ी का विशद् वर्णन बर्न द्वारा लिखित भागलपुर नामक पुस्तक के दूसरे अध्याय (पृ० 31 और आगे) में दिया गया है।

मँगराँव—यह बिहार में शाहाबाद जिले की बक्सर तहसील में, वहाँ से लगभग 14 मील दक्षिण-पश्चिम में स्थित एक गाँव है। यहाँ से विष्णुगुप्त के काल का (17 वें वर्ष का) एक अभिलेख उपलब्ध हुआ है (एपि० इं०, XXVI, भाग, VI, अप्रैल, 1942, पृ० 241 और आगे)।

मरकटह्रद—जब बुद्ध वैशाली में थे तब वह मरकटह्रद के तट पर स्थित कूटागारशाला (कंगूरेदार महाकक्ष) में रुके थे (दिव्यावदान, पृ० 200)।

महावस्तु में मरकटह्रद चैत्य का उल्लेख है, जहाँ पर बुद्ध भी रुके थे (लाहा, ए स्टडी ऑव द महावस्तु, पृ० 44)।

मसार—आरा से लगभग 6 मील पश्चिम में स्थित इस गाँव की पहचान मो-हो-सो-लो (Mo-ho-so-lo) से की गयी है जहाँ सातवीं शती ई० में युवान-च्वाङ् गया था। इसका पुराना नाम महासार था (आर्क्० स० इं०, रिपोर्ट्स, जिल्द, III)।

मेघना—ढाका जिले (बांगला देश) से प्रवाहित होने वाले सुरमा नदी के निचले प्रवाह को साधारणतया मेघना कहते हैं। यह नदी सुरमा, बराक एवं पुइनी नदियों का संयुक्त प्रवाह है। ढाका एवं त्रिपुरा जिलों के बीच मुंशीगंज के थोड़ा आगे धलेश्वरी में मिलने के पूर्व मेघना वक्र गति से बहती है। मेघना एवं पद्मा का संयुक्त प्रवाह एक साथ ही बंगाल की खाड़ी में गिरता है (लाहा, रिवर्स ऑव इंडिया, पृ० 25)।

मेहार—यह गाँव कोमिल्ला जिले की चाँदपुर तहसील में स्थित है, जहाँ से दामोदरदेव का एक ताम्रपत्र प्राप्त हुआ था। इसे मेहारग्राम भी कहा जाता है। दामोदरदेव के मेहार अभिपत्र में मेहार को वायिसग्राम तहसील में स्थित बतलाया गया है, जो पौण्ड्रवर्धनभुक्ति के अंतर्गत् समतटमण्डल के परलायि-विषय में संमिलित था (एपि० इं०, XXVII, भाग, IV, पृ० 182 और 185)।

मेसिका—देवपालदेव के मुंगेर दान ताम्रपत्र में वर्णित यह एक प्रदत्त गाँव है (गौडलेखमाला, I, पृ० 33 और आगे)। यह श्रीनगरभुक्ति के अधिकार-क्षेत्र के अंतर्गत् क्रिमिल विषय (जिले) में स्थित था। कुछ लोगों के अनुसार जिसमें दक्षिणी बिहार के जिले संमिलित थे, (इं० हि० क्वा०, XXVI, भाग, II, पृ० 138)।

मिश्मि—यह पर्वत ब्रह्मपुत्र के पूर्वी मोड़ पर छाया हुआ, असम के उत्तरी सीमांत का भाग है। अपक्षरण की शक्तियों ने इसे काफी विरदित किया है, जिसके फलस्वरूप 15,000 फीट ऊँचे शिखरों से मंडित शैल शिलाओं का यह एक जटिल पुंज बन गया है (बि० च० लाहा, माउंटेंस ऑव इडिया, पृ० 9)।

मिथिला—मिथिला विदेह की राजधानी थी (महाभारत, वनपर्व, 254; तु०, महावस्तु, III, पृ० 172; दिव्यावदान पृ० 424) जिसे तीरभुक्ति (आधुनिक तिरहुत) भी कहा जाता था। रामायण के अनुसार (आदिकाण्ड, XLIX, 9-16; तु० महाभारत का शांतिपर्व, CCCXXVII, 12233-8)। यह देश और राजधानी दोनों का ही नाम था। इसे नेपाल की सीमा पर स्थित आधुनिक जनकपुर नामक एक छोटे कस्बे से समीकृत किया गया है। इसके

उत्तर में मुजफ्फरपुर और दरभंगा जिले मिलते हैं (लाहा, ज्यॉग्रेफी ऑव अर्ली बुद्धिज्म, पृ० 31; कनिंघम, ऐंश्येंट ज्यॉग्रेफी ऑव इंडिया, एस० एन० मजुमदार संस्करण, पृ० 718; कनिंघम, आर्क्० स० रि०, XVI, 34)। बील ने विव्यान डी सेंट मार्टिन को उद्धृत किया है, जिन्होंने चैन-सु-ना नाम (Chen-su-na) को जनकपुर से संबंधित किया है (बील, बुद्धिस्ट रिकार्डस ऑव द वेस्टर्न वर्ल्ड, II, पृ० 78, टिप्पणी)। विदेह-राज जनक के शासन काल में राजर्षि विश्वामित्र को अयोध्या से मिथिला पहुँचने में चार दिन लगे थे जब कि मार्ग में विश्राम-हेतु वह केवल एक रात के लिये विशाला में रुके थे (रामायण, वंगवासी संस्करण, 1-3; वही, ग्रिफ़िथ का अनुवाद, पृ० 90-91)। रीज डेविड्स के अनुसार, मिथिला वैशाली से लगभग 35 मील पश्चिमोत्तर में स्थित थी। यह सात लीग और विदेह राज्य 300 लीग विस्तृत था (जातक, III, 365; वही, IV, पृ० 316)। यह अंग की राजधानी चंपा से 60 योजन की दूरी पर स्थित थी (जातक, VI, पृ० 32)। तीरभुक्ति (आधुनिक तिरहुत) पूरब में कौशिकी (कोसी) नदी से, दक्षिण में गंगा, पश्चिम में सदानीरा (गण्डक या राप्ती) और उत्तर में हिमालय से घिरा हुआ था (लाहा, ज्यॉग्रेफी ऑव अर्ली बुद्धिज्म, 30-31)। तीरभुक्ति, से व्युत्पन्न है, जिनका अर्थ क्रमश: तट और सीमा है। कनिंघम ने ठीक ही बतलाया है कि उक्त नाम किसी जिले की सीमाओं की अपेक्षा नदियों के तटवर्ती प्रदेशों का उल्लेख करती है। इन भूखंडों को बूढ़ी गण्डक और बागमती नदियों की घाटी से समीकृत किया जा सकता है (कनिंघम ऐंड गैरिक, रिपोर्ट्स ऑव टुअर्स इन नार्थ ऐंड साउथ बिहार इन 1880-81, आर्क्० स० इं०, पृ० 1-2)। विदेह का नामकरण विदेघ माथव के नाम पर हुआ है, जिसने शतपथ ब्राह्मण के अनुसार (I.IV.1) यहाँ पर उपनिवेश स्थापित किया था। विदेह का नाम सिनेरु पर्वत के पूर्व में स्थित एशिया के पूर्वी उपमहाद्वीप पुब्बविदेह के प्राचीन आप्रवासियों या आगंतुकों से ग्रहण किया गया है (पपञ्चसूदनी, सिंहली संस्करण, I, पृ० 484; धम्मपद अट्ठकथा, सिंहली संस्करण, II, 482)। महाभारत में इसी क्षेत्र को भद्राश्ववर्ष कहा गया है (महाभारत, भीष्मपर्व, 6, 12, 13, 7,13; 6,31)।

भविष्यपुराण के अनुसार निमि के पुत्र, मिथि ने मिथिला के सुरम्य नगर की स्थापना की थी। इस शहर का संस्थापक होने के कारण उन्हें जनक कहा जाने लगा (तु० भागवतपुराण, IX, 13.13)। दीघ निकाय (II, पृ० 235) के महागोविन्द सुत्तांत के अनुसार विदेह को एक राज्य के रूप से सीमांकित किया गया था जिसकी राजधानी गोविन्द द्वारा निर्मित मिथिला थी। विष्णुपुराण

(388 और आगे) में मिथिला के नाम की व्युत्पत्ति का एक काल्पनिक विवरण दिया गया है। इन्द्र के यज्ञ का अनुष्ठान करने के पश्चात् वशिष्ठ राजा निमि का यज्ञ प्रारंभ करने के लिए मिथिला गये थे। वहाँ पहुँच कर उन्होंने देखा कि कर्मकांड संपादित करने के लिए राजा ने गौतम को नियुक्त कर लिया था। राजा को सोता हुआ देख कर उन्होंने राजा निमि को शरीर रहित होने का शाप दिया। जागने पर राजा ने वशिष्ठ को नष्ट हो जाने का शाप दिया, क्योंकि उन्होंने एक सोते हुए राजा को अभिशप्त कर दिया था। ऋषियों ने निमि के मृत शरीर का मंथन किया और इसके परिणामस्वरूप एक शिशु उत्पन्न हुआ जो कालांतर में मिथि नाम से विश्रुत हुआ (तु०, भागवतपुराण, IX,24. 64)। मिथि के आधार पर मिथिला नाम पड़ा था और वहाँ के नरेशों को मैथिल कहा गया (वायुपुराण, 89. 6; ब्रह्माण्डपुराण, III, 64. 6. 24; वायु० 89, 23; विष्णु०, IV, 5, 14)।

मिथिला के चार प्रवेश-द्वारों में प्रत्येक पर एक बाजार था (जातक, VI, पृ०, 330)। यहाँ पर हाथी, घोड़ों, रथों, बैलों, भेड़ों और इसी प्रकार के अन्य पशुधनों के साथ ही सोने, चाँदी, मुक्ता और मणियों एवं अन्य मूल्यवान वस्तुओं का बाहुल्य था (बील, रोमांटिक लीजेंड ऑव शाक्य बुद्ध, पृ० 30)। यह नगर भव्य और विस्तृत था तथा प्राकारों, फाटकों, कँगूरेदार दुर्ग और प्राचीरों-सहित शिल्पियों ने भली प्रकार से इसे अभिकल्पित किया था। प्रत्येक ओर से यहाँ पर पारगामी सड़कें थीं तथा यह रमणीक सरोवरों एवं उद्यानों से अलंकृत था। यह एक उल्लासपूर्ण नगर था। इस शहर में रहने वाले ब्राह्मण काशी में बने वस्त्र धारण करते, चंदन, सुवासित और मणियों से अलंकृत रहते थे। यहाँ के प्रासाद एवं सभी रानियाँ राजसी वस्त्रों एवं मुकुटों से अलंकृत रहती थीं (जातक, VI. 46 और आगे; तु०, महाभारत, III, 206, 6-9)। यह गंगा के उत्तरी तट पर स्थित एक उर्वर नगर था (ग्रिफ़िथ द्वारा अनूदित रामायण, XXXIII, पृ० 51)। लंबी प्राचीरों से आवेष्ठित यह एक शान्त नगर था, (वही, अध्याय, LXVI, पृ० 89)। रामायण के अनुसार मिथिला एक मनोरम एवं स्वच्छ नगर था॥ इसके निकट एक प्राचीन और निर्जन जंगल था (वही, अध्याय, XLVIII, पृ० 68)। यह नगर सुरक्षित और यहाँ पर सुयोजित सड़के थीं। यहाँ के निवासी स्वस्थ थे जो नित्य उत्सवों में भाग लिया करते थे (महाभारत, वनपर्व, 206, 6-9)। यह उन उन्नीस नगरों में से था, जिस पर सूर्यवंशी विविध राजवंशों के राजकुमारों ने निरंतर कई बार राज्य किया था (वंसत्थपकासिनी, I, पृ० 130)। मिथिला में एक मंदिर था जहाँ पर महागिरि अध्यापक रहते थे (लाहा,

पञ्चालाज ऐंड देयर कैपिटल अहिच्छत्र, मे० आर्क्० स० इं०, नं० 67, पृ० 11)।

विदेह-राजाओं में बहुविवाह की प्रथा प्रचलित होती है (जातक, IV, 316, और आगे)। बुद्ध-युग में विदेह व्यापार का एक केंद्र था। विदेहों की महती समृद्धि दूसरे देशों यथा, वाराणसी से व्यापार करने के कारण थी। अपना माल बेचने के लिए लोग श्रावस्ती से विदेह आते थे। बुद्ध का एक शिष्य ढेर का ढेर माल लेकर व्यापार के लिए विदेह गया था (परमात्थदीपनी ऑन द थेरगाथा, सिंहली संस्करण, III, 277-78)।

मिथिला के राजाओं में जनक सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण था जिसने मिथिला में अपना यज्ञ संपादित किया था (महाभारत, वनपर्व, अध्याय, 132, 134) आदि)। मिथिला के निवासी जनक का साम्राजिक प्रभुत्व मानते थे। वह अयोध्या के राजा दशरथ का मित्र था। वह अत्यंत संस्कृत और दृढ़ निश्चय वाला व्यक्ति था (ग्रिफ़िथ द्वारा अनूदित रामायण, अध्याय, XII, पृ० 23, 95)। जनक की एक उक्ति बतलायी जाती है। अपने नगर को आग में जलता हुआ देख कर उसने यह गीत कि 'इसमें मेरा कुछ नहीं जल रहा है' गाया था (महाभारत, XII, 17, 18-19; 219, 50; तु०, उत्तराध्ययन सूत्र, जैन सूत्राज़, II, 37)। कुछ विवाहार्थी जनक की पुत्री सीता को लेने आये थे (रामायण, XXXIII, पृ० 89)। शिव के धनुर्भंग का प्रतिशोध लेने के लिये परशुराम मिथिला आये, राम का अपमान और युद्ध के लिए आह्वान किया जिसमें वह पराजित हुये थे (कीथ, संस्कृत ड्रामा, पृ० 245)। निमि मिथिला के राजवंश के आदिपुरुष थे (रामायण, I, 71. 3)। मिथिला-नरेश अंगति के पास उसके प्रशासन में सहायता करने के लिए तीन मंत्री थे। सूर्यप्रज्ञप्ति के अनुसार जियसत्तु मिथिला का राजा था। वह कोशलाधिपति प्रसेनजित् के अतिरिक्त और कोई अन्य न था (तु०, भगवती सूत्र, पृ० 244; हर्नले द्वारा अनूदित, उवासगदसाओ, पृ० 6)। जैन-ग्रंथ निरयावलिय सुत्त के अनुसार विदेह-जन चेटक को अपना राजा मानते थे (जैन सूत्राज़, I, पृ० xiii)। वह लिच्छवि राज्यसंघ का एक प्रभावशाली नेता था। उसकी पुत्री छलना का विवाह मगध के श्रेणिक बिम्बिसार के साथ हुआ था और वह अजातशत्रु की माँ बनी। राजा पुष्पदेव मिथिला का शासक था जिसके चन्द्र और सूर्य नामक दो धर्मात्मा पुत्र थे (बोधि सत्त्वावदान-कल्पलता, 83वाँ पल्लव, पृ० 9)। दानी मिथिलानरेश विजितावी को उसके राज्य से निर्वासित कर दिया गया था (महावस्तु, III, पृ० 41)। अपनी दिग्विजयों के अंतर्गत् कर्ण ने मिथिला को जीत लिया था (महाभारत, वनपर्व, 254)।

मिथिलानरेश साधिन अनेक वर्षों तक सुख से था। उसने न्यायपरायणता से इस नगर पर राज्य किया था (जातक, भाग, IV, 355 और आगे)। मिथिला पर शासन करने वाला राजा महाजनक था। उसकी मृत्यु के उपरांत उसका ज्येष्ठ पुत्र उसका उत्तराधिकारी बना और उसका कनिष्ठ पुत्र उपराजा या वाइसराय बनाया गया। मिथिला शहर में ज्येष्ठाधिकार-नियम प्रचलित प्रतीत होता है (जातक, VI, 30 और आगे)। पालवंशीय रामपाल ने कैवर्त अपहर्त्ता को पराजित करके मिथिला पर विजय प्राप्त की थी। वरेंद्र एवं मगध पर बंगाल के सेनों का अधिकार हो जाने के बाद तिरहुत में नानदेव के नेतृत्व में एक नये राजवंश का उदय हुआ (कनिंघम ऐंड गैरिक, रिपोर्ट्स ऑव टुअर्स इन नार्थ ऐंड साउथ बिहार इन 1880-81, आर्क्० स० इं०, पृ० 1-2)।

मिथिला जैन धर्म के वर्द्धमान महावीर और बौद्ध मत के प्रवर्त्तक गौतम बुद्ध के चरण-रज से पवित्र हुयी थी। अपने सिर से उखाड़े हुए एक पके बाल को देखकर मिथिला के राजा मखादेव को सांसारिक वस्तुओं की नश्वरता का अनुभव हुआ था। बाद में वह संन्यासी हो गये थे और उन्होंने एक श्रेष्ठ आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि अर्जित कर ली थी (जातक, I, 137-38)। मिथिला के साधिन नामक एक धर्मात्मा राजा ने पंचमहाव्रतों का पालन और निर्धारित उपवास दिवसों के व्रतों का अनुपालन किया था (जातक, IV, 355 और आगे)।

भारतीय तपस्वियों के इतिहास में विदेह-राज्य ने महत्त्वपूर्ण भूमिका प्रस्तुत की है (मज्झिम, II, 74 और आगे)। बुद्ध मिथिला में रुके थे और वहीं उन्होंने मखादेव तथा ब्रह्मायुसुत्तों का प्रवचन दिया था (मज्झिम, II, 74 और आगे, 133 और आगे)। बासिट्ठी नामक एक थेरी मिथिला में बुद्ध से पहली बार मिली थी और उनके धार्मिक उपदेशों को सुन करके बौद्ध-संघ में प्रविष्ट हुयी थी (थेरथेरीगाथा, पा० टे० सो०, 136-137)। कोणागमन बुद्ध ने भी मिथिला में प्रवचन दिया था और पदुमुत्तर बुद्ध ने मिथिला के एक उद्यान में अपने संभ्राताओं को अपने उपदेश दिये थे (बुधवंस कामेंट्री, सिंहली संस्करण, पृ० 159)।

भागवतपुराण (IX, 13, 27) में मैथिलों को साधारणतया आत्मन विषयक ज्ञान में दक्ष बतलाया गया है। बुद्ध के काल में विदेह में ब्राह्मण-धर्म प्रचलित था (मज्झिम, II, 74 और आगे; 133 और आगे)। विदेह और मिथिला में बुद्ध के धर्म-प्रचार कार्य के विषय में बौद्ध निकाय मौन हैं। केवल मज्झिम निकाय से हमें ज्ञात होता है कि बुद्ध मिथिला में मखादेव के आम्र-वन में रुके थे और उन्होंने ब्रह्मायु नामक एक विख्यात् ब्राह्मण शिक्षक का धर्म-परिवर्तन किया था।

मिथिला के राजा सुसंस्कृत व्यक्ति थे। जनक ब्राह्मण युग के एक महान् ऋषि थे। वह न केवल एक महान् और श्रेष्ठ यज्ञकर्त्ता वरन् संस्कृति एवं दर्शन के एक महान् संरक्षक भी थे (आश्वलायन श्रौतसूत्र, X. 3, 14)। उसकी राजसभा कोशल एवं कुरु-पञ्चाल देशों के विद्वान् ब्राह्मणों से सुशोभित रहती थी।

बौद्ध युग में मिथिला के राजा सुमित्र ने धम्म के अभ्यास में अपना मन लगाया था (बील, रोमांटिक, लीजेंड ऑव द शाक्य बुद्ध, पृ० 30)। मिथिला-नरेश विदेह को धर्मोपदेश देने के लिए उनके पास चार ऋषि थे (जातक, VI. 333)। उनके पुत्र की शिक्षा तक्षशिला में हुयी थी (ज० ए० सो० बं०, XII, 1916)। पिंगुत्तर नामक मिथिला का एक युवक तक्षशिला गया और उसने एक प्रसिद्ध शिक्षक से शिक्षा ग्रहण की थी। उसने शीघ्र ही अपनी शिक्षा पूर्ण कर ली थी (जातक, VI, 347 और आगे)। ब्रह्मायु नामक मिथिला का एक ब्राह्मण इतिहास, व्याकरण तथा किंकर्त्तव्य-मीमांसा में भली भाँति निष्णात् था और वह एक महा-पुरुष के सभी लक्षणों से संपन्न था (मज्झिम, II, पृ० 133-34)।

मिथिला पंच-भारत में से एक थी। बंगाल की सभ्यता, विशेषतया तर्कशास्त्र की नयी विद्या, जिसने नदिया के विद्यालयों को संपूर्ण भारत में प्रसिद्धि दी थी, मिथिला से आयी थी, जब कि मगध ने पूर्वी भारत को प्रकाश देना बंद कर दिया था (वी० ए० स्मिथ, अर्ली हिस्ट्री ऑव इंडिया, चतुर्थ संस्करण, पृ० 353, पा० टि० 2)।

भारत पर मुसलमानों की विजय के पश्चात् भारतीय तर्कशास्त्र की नयी शाखा की स्थापना गंगेश ने मिथिला में की थी और मिथिला से ही यह मत बंगाल के नवद्वीप में प्रचलित हुआ था। प्रसिद्ध वैष्णव कवि एवं गायक विद्यापति बंगाल, असम और उड़ीसा के वैष्णव कवियों के पूर्वगामी थे। विस्तृत विवरण के लिए द्रष्टव्य लाहा, इंडोलॉजिकल स्टडीज़, भाग, III, लाहा, ट्राइब्स इन ऐंश्येंट इंडिया, अध्याय, XLVII.

मोर—मोर नदी आधुनिक मोर ही है (जिसे मयूराक्षी भी कहते हैं)। इसका वर्णन लक्ष्मणसेन के शक्तिपुर ताम्रपत्र में हुआ है (एपि० इं०, XXI, पृ० 124)। कुछ लोगों ने मोरखी से इसकी पहचान की है। यह नदी उत्तरराढ़ क्षेत्र में बहा करती थी। यह बीरभूम जिले में पश्चिम ओर से संथाल परगना से प्रवेश करती है और पूर्व की ओर प्रवाहित होती है। मयूराक्षी नदी योजना पश्चिमी बंगाल में अपनीं तरह की प्रथम योजना है।

मोरनिवाप—यह सुमागधा के तट पर स्थित था। बुद्ध यहाँ पर आये थे। यह राजगृह में था (दीघ, III, पृ० 39; अंगुत्तर, I, पृ० 291)।

मुद्गगिरि—धर्मपाल के पुत्र, देवपालदेव के मुंगेर दानपत्र में इसका वर्णन मिलता है, जिसकी पहचान चार्ल्स विल्किसन ने आधुनिक मुंगेर से की है (गौड-लेखमाला, I, पृ० 33 और आगे)। इससे प्रकट होता है कि मुंगेर (मोदागिरि या मुद्गगिरि) देवपाल के राज्य में संमिलित था। मुद्गगिरि या मोदागिर को साधारणतया बिहार में स्थित मुंगेर की पहाड़ियों से समीकृत किया गया है। मुंगेर को मुद्गलपुरी, मुद्गलाश्रम आदि भी कहते थे। मुद्गलों या मुंगेर के निवासियों का उल्लेख महाभारत (द्रोण पर्व, XI, 397) में प्राप्त होता है। यह एक रोचक तथ्य है कि अङ्ग-राज कर्ण को पराजित करने के पश्चात् भीमसेन ने मोदागिरि पर एक युद्ध किया था और इसके प्रमुख को मार डाला था। यह स्थान दसवीं शताब्दी ई० में पाल राजाओं के शाही पड़ाव का स्थल था। विस्तृत विवरण के लिए द्रष्टव्य, आर्क० सं० इं०, रिपोर्ट्स, भाग, XV; ओ'मैल्ली द्वारा संपादित बिहार ऐंड उड़ीसा डिस्ट्रिक्ट गज़ेटियर्स, मुंगेर, पृ० 232-48)।

मुक्शुदाबाद या मुक्शुसाबाद (मुर्शिदाबाद)—यह भागीरथी नदी के तट पर कलकत्ता से 122 मील की दूरी पर स्थित है। यह बंगाल के अंतिम स्वतंत्र शासक, नवाब मुर्शिदकुली खाँ की सुनिर्मित राजधानी थी जो उस समय बंगाल का सूबेदार था। इस शहर में अनेक भव्य भवन और महल थे। यह विस्तृत, जनसंकुल एवं समृद्ध था। इमामबाड़ा, मोती झील, हजारदुआरी, नवाब शरफराज खाँ का मकबरा, जो शुजा खाँ की मृत्यु के बाद एक वर्ष के लिए मुर्शिदाबाद के नवाब हुये थे, त्रिपोलिया दरवाजा, तोपखाना, निजामत-अदालत और सदर दीवानी अदालत उल्लेखनीय हैं। नवाब सिराज-उद्-दौला का मकबरा बेरहाम-पुर शहर से बहने वाली गंगा के दूसरे तट पर स्थित है (इंट्रोड्यूसिंग इंडिया, भाग, I, पृ० 76-77)।

नगरभुक्ति—धर्मपालदेव के नालंदा अभिपत्र में इसका उल्लेख है, जिसे आधुनिक पटना से समीकृत किया गया है। एक मंडल के रूप में इसमें गया, पटना, और शाहाबाद के जिले संमिलित थे (एपि० इं०, XXIII, भाग, VII, पृ० 291)। देवपाल के नालंदा-अभिलेख से हमें ज्ञात होता है कि नगरभुक्ति में राजगृह एवं गया विषय संमिलित थे।

नंदपुर—बुधगुप्त के नंदपुर ताम्रपत्र में (गुप्त संवत् 169 में लिखित) नंदपुर का उल्लेख हुआ है जो मुंगेर जिले में स्थित एक गाँव है। यह मुंगेर जिले

में सूरजगढ़ा के पूर्वोत्तर में लगभग 2 मील दूर गंगा के दक्षिणी तट पर स्थित एक गाँव है (एपि० इं०, XXIII, भाग, II, अप्रैल, 1935, पृ० 53)।

नवद्वीप—यह वष्णवों का एक तीर्थस्थान है। नौ द्वीपों का समुच्चय होने के कारण इसे नवद्वीप कहा जाता है। यह वर्तमान नवद्वीपघाट रेलवे स्टेशन के पश्चिम में स्थित है जो नदिया जिले में कृष्ण नगर कस्बे से आठ मील दूर है।

बंगाल में नूतन वैष्णवमत के महान् प्रवर्तक श्रीचैतन्य ने अपने इस जन्म-स्थान को 24 वर्ष की आयु में छोड़ दिया था और एक संन्यासी का जीवन व्यतीत करने लगे थे। बल्लालसेन द्वारा विनिर्मित प्रासाद के भग्नावशेष वर्तमान् मायापुर से आधा मील दूर उत्तर में, गंगा के पूर्वी तट पर अब भी प्राप्त होते हैं। लक्ष्मणसेन के पौत्र और बल्लालसेन के प्रपौत्र, अशोकसेन ने यहाँ पर एक न्यायालय की स्थापना की थी। किसी समय यह संस्कृत विद्या का एक महान केंद्र था (इंट्रोड्यूसिंग इंडिया, भाग, I, 73-74)।

नवग्राम—दक्षिण राढ़ में स्थित नवग्राम की पहचान बंगाल में हुगली जिले के भुरशुत परगने में इसी नाम के एक गाँव से की गयी है। अमरेश्वर मंदिर के हलायुध स्तोत्र में इसका उल्लेख हुआ है (इंडियन-कल्चर, I, 702; II, 360; एपि० इं०, XXV, भाग, IV, अक्टूबर, 1939, पृ० 184)।

नागवन—यह वृज्जियों के देश में स्थित था (अंगुत्तर, IV. 213)।

नागा पहाड़ियाँ—नागा पहाड़ियाँ नागालैंड की पूर्वी सीमाएँ हैं। नागा हिल्स उत्तर में शिबसागर और पश्चिम में शिबसागर, नवगाँव तथा उत्तरी कछार पहाड़ियों, दक्षिण में मणिपुर और पूरब में स्वतंत्र नागा कबीलों द्वारा निवसित पर्वतमालाओं से घिरी हुयी हैं। संपूर्ण क्षेत्र में पहाड़ी प्रदेश की एक पतली पट्टी संमिलित है और इसकी अधिकतम् लंबाई 138 मील तथा औसत चौड़ाई लगभग 25 मील है। ये पहाड़ियाँ सघन सदाबहार वनों से आच्छादित हैं। कोहिमा के उत्तर में मुख्य पर्वतमाला की ऊँचाई क्रमशः कम होती जाती है। नागा पहाड़ियाँ साधारणतया प्राक्-तृतीयक शिलाओं से निर्मित हैं, जिनके ऊपर तृतीयक स्तर की शिलाएँ हैं। नागा पहाड़ियों का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण कोयला-क्षेत्र इस की सीमाओं के बाहर स्थित है।

शीत-ऋतु में इन ऊँची पहाड़ियों की जलवायु ठंडी और स्फूर्तिदायक है। यहाँ के दिन साधारणतया प्रकाशमान एवं दीप्तमान होते हैं किंतु रात का कुहरा भी किसी प्रकार साधारण नहीं है। मैदानों की निकटवर्ती पहाड़ियों की नीची श्रृंखलाएँ अस्वास्थ्यकर हैं। वहाँ पर रहने वाले नाग ज्वर से अधिक पीड़ित रहते हैं और साधारणतया उनका स्वास्थ्य गिर जाता है।

नागों का विशाल समूह अब भी अपने पूर्वजों के धर्म में निष्ठावान है। वे सर्वोच्च स्रष्टा के अस्तित्व में विश्वास करते हैं। बीमारियों और अपने ऊपर पड़ने वाली अन्य विपत्तियों को वे प्रेतात्माओं के अनिष्टकारक प्रभाव का परिणाम मानते हैं। यज्ञों से वे उनको तुष्ट करने की चेष्टा करते हैं। उनमें से बहुतों का विश्वास है कि मनुष्य में कोई ऐसी वस्तु है जो शरीर की मृत्यु के बाद भी जीवित रहती है परंतु वे यह नहीं कह सकते कि वह कौन सी वस्तु है और कहाँ चली जाती है (बी० सी० एलेन, असम डिस्ट्रिक्ट गजेटियर्स, भाग, IX, 1905, पृ० 1-39, नागाहिल्स ऐंड मनीपुर)।

नागार्जुनि पहाड़ी—अनंतवर्मन् के नागार्जुनि पहाड़ी के गुहा-लेख में इस पहाड़ी का वर्णन है जो विन्ध्य-पर्वत माला का एक भाग है। यह जफरा नामक गाँव से उत्तर की ओर लगभग एक मील दूर पर स्थित है जो गया के पूर्वोत्तर में लगभग 15 मील दूर पर है (का० इं० इं०, जिल्द, III; खलतिक पहाड़ियाँ भी देखिये)।

नालकगाम—यह मगध में स्थित एक गाँव था जहाँ पर सारिपुत्त की मृत्यु हुयी थी (संयुत्त०, V. 161)। कुछ लोगों ने इसे मगध के उत्तरी भाग में स्थित बतलाया है (विमानवत्थु कामेंट्री, पा० टे० सो०, पृ० 163)। इस गाँव को नलगामक से समीकृत किया जा सकता है, जो राजगृह के समीप ही स्थित था (संयुत्त०, V. 161)। जातक (I. 391) में उस गाँव का नाम जहाँ थेर सारिपुत्र उत्पन्न हुये थे, नाल बतलाया गया है। इस जातक में कहा गया है कि उनकी मृत्यु वरक में हुयी थी।

नालंदा—नालंदा मगध में राजगृह के अंचल में स्थित है। नालंदा नाम इसी नाम वाले एक नगर से ग्रहण किया गया है जो नालंदा-विहार के दक्षिण में एक आम्र-कुंज में स्थित किसी तालाब में रहा करता था। पू-सा (Pu-sa) के रूप में जु-लाई (Ju-lai) किसी समय एक राजा था, जिसकी राजधानी नालंदा थी। चूंकि राजा को उसकी करुणहृदयता और दानशीलता के कारण "न+अलं+दा" या 'दान देने से कभी न तृप्त होने वाले' की उपाधि देकर सम्मानित किया गया था, इसलिए विहार का नामकरण भी इसी उपाधि से हुआ था। इस अधिष्ठान की भूमि मूलतः एक आम्र-कुंज थी जिसे 500 व्यापारियों ने 10 कोटि स्वर्ण-मुद्राओं से खरीदा था और उन्होंने इसे बुद्ध को दान दे दिया था। बुद्ध के महापरिनिर्वाण के बाद, शीघ्र ही, इस देश के एक भूतपूर्व राजा शक्रादित्य ने एकयान में आदर, और त्रिरत्नों में श्रद्धासहित इस विहार का निर्माण कराया (वाटर्स, ऑन युवान-च्वाङ, II, पृ० 164)। युवान-च्वाङ

नालंदा शब्द की उस व्याख्या को नहीं मानता जिसके अनुसार इसका नाम आम्रवन में स्थित सरोवर के नालंदा नामक नगर से ग्रहण किया गया है। वह जातक की कहानी को वरीयता प्रदान करता है जो इस नाम को न-अलम्-दा या 'दान देने से कभी न थकने वाले' विरुद से संबंधित बतलाती है। उक्त उपाधि बुद्ध को उनके एक पूर्वजन्म में दी गयी थी जब वह यहाँ के राजा थे (वाटर्स, ऑन युवान-च्वाङ, II, 166)।

राजगृह (आधुनिक राजगीर) से नालंदा की दूरी एक योजन है (सुमंगल-विलासिनी, I, 35)। किंतु महावस्तु के अनुसार यह राजगृह से केवल आधे योजन की दूरी पर स्थित है (भाग, III, 56)। इसमें एक समृद्ध गाँव के रूप में इसका वर्णन है। इसे आधुनिक बड़ा-गाँव से समीकृत किया जाता है जो पटना जिले में राजगीर से सात मील पश्चिमोत्तर में स्थित है (कनिंघम, ऐंश्येंट ज्यॉग्रेफी, एस० एन० मजूमदार संस्करण, पृ० 537)। राजगृह से नालंदा तक एक सड़क थी और बुद्ध ने अपनी यात्रा में इसी सड़क का अनुसरण किया था। गौतम को इस सड़क पर बैठे हुये देखा गया था (संयुत्त निकाय, II, पृ० 220)।

नालंदा प्रभावशाली, समृद्धिशाली, लोकयुक्त और महात्मा बुद्ध के भक्तों से परिपूर्ण था। यहाँ पर कई सौ इमारतें थीं। नालंदा के एक धनी एवं समृद्ध गृहस्थ के यहाँ एक सुंदर स्नानागार था जिसमें कई सौ स्तंभ थे। यहाँ पर हस्तियाम नामक एक उद्यान था (जैन सूत्राज़, II, 419 और आगे)। प्राचीन सरोवरों और विनष्ट टीलों से परिवृत बड़ागाँव या नालंदा में मूर्ति-कला के उत्कृष्ट नमूने थे। वहाँ के अवशेषों में ईंटों के असंख्य खंडहरों के समूह हैं जिनमें सर्वाधिक मनोहर, उत्तर से दक्षिण फैले हुये सूच्याकार उत्तुंग टीलों की पंक्ति है। ये ऊँचे टीले नालंदा के प्रसिद्ध विश्वविद्यालय से संलग्न भीमकाय मंदिरों के अवशेष हैं। बड़ागाँव के अवशेषों पर अनेक बिहार और कई उत्कीर्ण गुंबद बिखरे पड़े हैं। बड़ागाँव में अनेक उल्लेखनीय वस्तुएँ हैं, उदाहरणार्थ साधक बुद्ध की एक भीमकाय प्रतिमा, तपस्वी बुद्ध की एक देहदीर्घ मूर्ति तथा एक हिंदू मंदिर में अवस्थित कई छोटी प्रतिमाएँ; बड़ागाँव ग्राम के उत्तर में दो नीचे टीले हैं जिनमें से एक पर गरुड पर स्थित चतुर्भुज विष्णु की प्रतिमा और दूसरे पर कुर्सी पर बैठे हुये बुद्ध की दो मूर्तियाँ तथा बुद्ध गया के महा-मंदिर जैसी शिल्प-शैली में निर्मित एक जैन मंदिर है। वहाँ पर कई जैन मूर्तियाँ भी हैं। वहाँ पर सरोवर हैं, जिन्होंने अवशेषों को चारों ओर से परिवृत कर रखा है (द्रष्टव्य, कनिंघम, आर्क्यॉलॉजिकल सर्वे ऑव इंडिया, रिपोर्ट्स, 1862-1865; जिल्द, I, पृ० 28 और आगे; एनुअल रिपोर्ट ऑव द आर्क्यॉलॉजिकल सर्वे ऑव इंडिया,

1915-16, भाग, I, पृ० 12-13)। इनके अतिरिक्त नालंदा से अनेक लघु-प्रतिमाएँ और मुहरें प्राप्त होती हैं। यहाँ पर अनेक विहारों के अवशेष प्राप्त हुये हैं और नालंदा अधिष्ठान की सरकारी मुहर की प्राप्ति पुरातत्व विभाग की एक महत्त्वपूर्ण खोज है (एनुअल रिपोर्ट ऑव द आर्कयॉलॉजिकल सर्वे ऑव इंडिया, भाग, I, 1916-17, पृ० 15)। सभी उपलब्ध साक्ष्य इस तथ्य के प्रति संकेत करते हैं कि बुद्ध के महाबोधि प्राप्त करने के वाद कतिपय वर्षों में ही अनेक महत्त्वपूर्ण स्थानों में बौद्ध महाविहार स्थापित किये गये थे, जिनमें नालंदा का नाम भी आता है (द्रष्टव्य, बि० च० लाहा, लाइफ ऐंड वर्क्स ऑव बुद्धघोष, पृ० 49)। टी० डब्ल्यू० रीज डैविड्स ने बतलाया है कि सावत्थी से राजगृह जाने वाले व्यापारिक मार्ग के यात्रियों के लिये नालंदा एक पड़ाव था (बुद्धिस्ट इंडिया, पृ० 103)। पाँचवीं शताब्दी ई० में गुप्तवंशीय नरसिंह-गुप्त ने मगध में नालंदा में 300 फीट से भी अधिक ऊँचा ईंटों का एक मंदिर बनवाया था। यह मंदिर अपने अलंकरण की मंजुलता और अपने उपस्कर की अपरिमित साज-सज्जा के लिये उल्लेखनीय है (वी० ए० स्मिथ, अर्ली हिस्ट्री ऑव इंडिया, चतुर्थ संस्करण, पृ० 329)।

बुद्ध ने अपना अधिकांश समय नालंदा में पावारिक के आंबवन (आम्रवन) में व्यतीत किया था। इसी स्थान पर सारिपुत्त उनका दर्शन करने के लिये आये थे और उनमें धर्म की परंपरा के विषय में परिचर्चा हुयी थी (दीघ निकाय, II, 81-83)। भिक्षुओं के साथ बुद्ध ने सम्यक् आचार, सम्यक् संकल्प और सम्यक् वाक् के विषय में व्यापक वार्ता की थी (दीघ निकाय, II, 83-84)। जिस समय बुद्ध यहाँ पर थे, एक धनी पौर ने बुद्ध को एक विहार और एक वन की भेंट प्रदान की थी। सारिपुत्त उनके पास आये और बोले, 'क्या भिक्षु—क्या ब्राह्मण, कोई भी व्यक्ति ऐसा नहीं है जो तथागत से तत्त्व-ज्ञान में वड़ा हो और यहीं विश्वास है जो मैं अपने मन में संजोये हुये हूँ।' इसके उत्तर में बुद्ध ने धर्म के विषय में एक प्रवचन दिया जिससे उनको सन्तोष हुआ (तु०, दीघ निकाय, III, 99)। यहाँ पर दीघतपस्सी नामक एक जैन बुद्ध से मिला था। उक्त जैन से उन्होंने निगण्ठ नाथपुत्त द्वारा बताये गये कर्मों की संख्या पूँछा जिनसे पापकर्मों को नष्ट किया जा सकता है (मज्झिम; भाग, I, पृ० 371 और आगे)। उपालि नामक एक गृहस्थ बुद्ध का दर्शन करने नालंदा आया था और उसने इस जीवन में अपने मरने का कारण पूछा (संयुत्त, IV, 110)। एक गाँव का असिबंधकपुत्त नामक मुखिया बुद्ध के पास गया था। बुद्ध ने उसे बताया कि मनुष्य को भूमि की उर्वरता के अनुसार बीज बोना चाहिये (संयुत्त, IV, पृ० 311 और आगे)। जिस

समय बुद्ध नालंदा में रुके थे, उन्होंने केवद्ध नामक एक तरुण गृहस्थ को देवताओं के तीन चमत्कार के विषय में बताया (दीघ, I, केवढ्ढसुत्त)। जब बुद्ध नालंदा के आम्रवन में रुके थे, उन्होंने तीन प्रकार के दंडों आदि के विषय में जैन दीघतपस्सी के साथ विचार-विमर्श किया था। बुद्ध ने मानसिक विकारों को सर्वाधिक कलुषित माना है (लाहा, हिस्टॉरिकल ग्लीनिंग्स, पृ० 91-92)। नालंदा में ही महावीर मक्खलि गोसाल से मिले थे। इस मिलन के परिणाम भीषण प्रतीत होते हैं। छः वर्षों तक महावीर और मक्खलि गोसाल ने एक साथ रहकर घोर तपस्या की किंतु बाद में गोसाल ने महावीर से अलग होकर अपना एक निजी धार्मिक संप्रदाय प्रचलित किया (उवासगदसाओ, पृ० 109 और आगे; तु०, कैंब्रिज हिस्ट्री ऑव इंडिया, भाग, I, पृ०, 158-59)। नालंदा के उपकंठ में महावीर ने चौदह चार्तुमास्य व्यतीत किये थे और उन्होंने अपने धर्मप्रचारक जीवन का अधिकतर भाग इसी स्थान पर व्यतीत किया था। यहाँ पर महावीर का एक सुंदर जैन मंदिर है (नं० ला० दे, ज्यॉग्रेफिकल डिक्शनरी, पृ०137)।

बालादित्य का शिलालेख नालंदा में स्थित एक मंदिर के द्वार पर मिला था (गौडलेखमाला, I, पृ० 102)। बालादित्य ने नालंदा में बुद्ध के लिए यह मंदिर बनवाया था (एपि० इं०, XX, 37 और आगे)। विष्णुगुप्त की मृण्मुहर नालंदा के विहारस्थल सं० 1 से खोदकर निकाली गयी थी (एपि० इं०, XXVI, भाग, V, जनवरी, 1942)। नालंदा के विहारस्थल संख्या 1 से दो मौखरि-मुहरें भी उपलब्ध हुयी थीं (एपि० इं०, XXIV, भाग, V, अप्रैल, 1938)। आदित्यसेन के शाहपुर पाषाण-प्रतिमा अभिलेख में शाहपुर के निकटवर्ती क्षेत्रों में इसका उल्लेख है जिसे कनिंघम ने राजगिरि के सात मील उत्तर में स्थित आधुनिक बड़ागाँव से समीकृत किया है। नालंदा के भग्नावशेषों से एक पाषाण तिमा लेख जिसका नाम नालंदा-वागीश्वरी पाषाण-प्रतिमा अभिलेख है, प्राप्त हुआ था। इस अभिलेख में गोपालदेव के शासनकाल के प्रथम वर्ष में नालंदा में वागीश्वरी की मूर्ति की प्रतिष्ठापना का आलेख है (ज० ए० सो० बं०, 1908, VI, नयी माला, पृ० 105-106)। देवपालदेव के काल के घोसवन अभिलेख में (इं० ऐं०, XVII, 307 और आगे) नगरहार के इन्द्रगुप्त के पुत्र वीरदेव को नालंदा का प्रशासन सौंपा गया था (नालंदा परिपालनाय नियतः संघशिते यः स्थितः)। बौद्ध संघों से संबंधित मुहरों में अधिकांश नालंदा के महाविहार की हैं (एपि० इं०, XXI, 72 और आगे; वही, 307 और आगे)। नालंदा में शास्त्रों और कलाओं में निष्णात् सुविख्यात् विद्वान् थे (एपि० इं०, XX, 43)।

बुद्ध की मृत्यु के पश्चात् शक्रादित्य, बुधगुप्त, तथागतगुप्त, बालादित्य एवं वज्र नामक पाँच राजाओं ने नालंदा में पाँच विहार बनवाये थे (वाटर्स, ऑन युवान-च्वाङ, II, पृ० 164-65)। नालंदा विश्वविद्यालय को 450 ई० में राजकीय मान्यता प्राप्त हुयी (स० चं० विद्याभूषण, हिस्ट्री ऑव इंडियन लॉजिक, पृ० 515)। तिब्बती विवरणों के अनुसार वह दिशा, जिसमें अपने विपुल पुस्तकालय के साथ विश्वविद्यालय स्थित था, धर्मगञ्ज कही जाती थी। यहाँ पर तीन भव्य भवन थे जिन्हें क्रमशः रत्नसागर, रत्नोदधि और रत्नरञ्जक कहा जाता था। रत्नोदधि में, जो एक नौमंजिली इमारत थी, प्रज्ञापारमिता नामक धर्मलिपियाँ और समाजगुह्य नामक तांत्रिक ग्रंथ रखे हुये थे (वही, 516)। काञ्चीपुर जिसे मद्रास राज्य में आधुनिक कांजीवरम् कहते हैं, के धर्मपाल नामक एक निवासी ने इस विश्वविद्यालय में अध्ययन किया था और विशेष योग्यता प्राप्त की थी। कालांतर में वह इस विश्वविद्यालय का कुलपति हो गया था (वही, पृ० 302; तु० बील, बुद्धिस्ट रिकार्ड्स ऑव द वेस्टर्न वर्ल्ड, II, 110)। शीलभद्र नामक एक ब्राह्मण, जो समतट (निचले बंगाल) के राजवंश से संबंधित था, धर्मपाल का शिष्य था। वह भी इस विश्वविद्यालय का कुलपति बन गया था (बील, बुद्धिस्ट रिकार्ड्स ऑव द वेस्टर्न वर्ल्ड, II, पृ० 110)। इत्सिंग जो 671 ई० में भारत यात्रा के लिए चला था, 672 ई० में हुगली नदी के मुहाने पर स्थित ताम्रलिप्ति पहुँचा था। उसने राजगृह के पूर्वी छोर पर स्थित बौद्ध शिक्षा के केंद्र नालंदा में अध्ययन किया था (इत्सिंग, ए रिकार्ड ऑव द बुद्धिस्ट रिलीजन, भूमिका, पृ०, XVII)। उसने बतलाया है कि नालंदा विश्वविद्यालय के श्रद्धास्पद एवं विद्वान पुरोहित कभी घोड़ों पर नहीं चलते थे वरन् पालकियों में यात्रा करते थे (वही, पृ० 30)। उसके अनुसार नालंदा के विहार में पुरोहितों की संख्या 3000 से अधिक थी। इस विहार में आठ महाकक्ष और तीन सौ कमरे थे। पूजा केवल पृथकतः की जा सकती थी (वही, 154)। इत्सिंग ने इस विश्वविद्यालय में बौद्ध-साहित्य का अध्ययन करते हुये कई वर्ष व्यतीत किये थे। चीनी यात्री युवान-च्वाङ भी कई वर्षों तक इस विश्वविद्यालय का विद्यार्थी था। उसके अनुसार भारत में इस प्रकार के हजारों विद्यालय थे। किंतु महत्ता की दृष्टि से कोई भी नालंदा के समान नहीं था। यहाँ पर 10,000 विद्यार्थी थे, जो विविध विषयों का, जिनमें बौद्ध एवं ब्राह्मण साहित्य संमिलित थे, अध्ययन करते थे और यहाँ पर प्रतिदिन सौ मंचों से उपदेश दिये जाते थे। वहाँ पर व्याख्यान-कक्ष थे और शिक्षकों एवं विद्यार्थियों के विशाल समागम के लिये सभी आवश्यक सामग्रियाँ प्रदान की जाती थीं। इस उद्देश्य के लिए लगभग

100 गाँवों का राजस्व प्रदत्त था और इस प्रकार के दो सौ गाँव बारी-बारी से अंतेवासियों की दैनिक आवश्यकताओं की पूर्ति करते थे। अत: यहाँ के विद्यार्थी इतने प्रचुर रूप से संभरित या आपूर्त्त थे कि उनको चार आवश्यकताओं, यथा, भोजन, वस्त्र, बिस्तर एवं औषधि की अपेक्षा नहीं करनी पड़ती थी। प्रातः-काल से रात्रि तक विद्यार्थी एवं शिक्षक स्वयं परिचर्चाओं में लीन रहते थे। अपनी शंकाओं का समाधान करने के लिए विभिन्न नगरों से वहाँ बहुसंख्या में विद्वज्जन आया करते थे और नालंदा के छात्र, जहाँ कहीं भी जाते थे, सर्वत्र सर्वोत्तम विद्यार्थी माने जाते थे। नालंदा उच्च-विद्यार्थियों के लिए था और विद्यार्थियों को एक कठिन प्राथमिक परीक्षा उत्तीर्ण करनी होती थी। नालंदा विश्वविद्यालय निश्चय ही शिक्षा के उच्चतम आदर्श का प्रतिरूप था। विस्तृत विवरण के लिये, द्रष्टव्य, बि० च० लाहा, द मगधाज इन ऐंश्येंट इंडिया, रा० ए० सो० मोनोग्राफ नं० 24, पृ० 41-43; हीरानंद शास्त्री, नालंदा ऐंड इट्स एपिग्रेफिक मैटिरियल (मे० आर्क्० स० इं०, नं० 66); नीलकंठ शास्त्री का जर्नल ऑव द मद्रास यूनिवर्सिटी, भाग, XIII, नं० 2 में प्रकाशित लेख, 'नालंदा; ए० घोष, ए गाइड टु नालंदा, दिल्ली, द्वितीय संस्करण, 1946; नालंदा इन ऐंश्येंट लिटरेचर, पंचम इंडियन ओरियंटल कान्फ्रेंस, 1930; रा० कु० मुकर्जी, द यूनिवर्सिटी ऑव नालंदा, ज० बि० उ० रि० सो०, XXX, भाग, II, 1944; आर्क्० स० इं०, रिपोर्ट्स, ईस्टर्न सर्किल, 1901-02, 1915-16, 1919-20; ज० बि० उ० रि० सो०, मार्च, 1923; ओ' मैल्ली, बिहार ऐंड उड़ीसा डिस्ट्रिक्ट गजेटियर्स, पटना, पृ० 217-223. नालंदा के उत्खनन के विवरण के लिए द्रष्टव्य, आर्क्० स० इं०, एनुअल रिपोर्ट्स, 1930-34, पृ० 130-140; 1936-1937 (1940)।

नान्यमण्डल—इसका वर्णन श्रीचन्द्र के रामपाल ताम्रपत्र में आता है और यह पौड्रवर्धनभुक्ति से संबंधित था (न० गो० मजूमदार, इंस्क्रिप्शंस ऑव बंगाल III, पृ० 2)।

नेहकाष्ठि—पौण्ड्रवर्धनभुक्ति के नान्यमण्डल के अंतर्गत् स्थित एक गाँव के रूप में इसका वर्णन श्रीचन्द्र के रामपाल ताम्रपत्र में है (न० गो० मजूमदार, इंस्क्रिप्शंस ऑव बंगाल, III, पृ० 2)।

नेरञ्ज़रा—(नैरञ्जना, चीनी, नी-लिएन-चॉन—Ni-lien-ch' an)—यह फल्गु नदी है। नीलाजना और मोहना इसकी दो शाखाएँ हैं और इनके संयुक्त प्रवाह का नाम फल्गु है। इस नदी का उद्गम-स्थल हजारीबाग जिले में सिमेरिया के समीप है। इस नदी के पश्चिम में थोड़ी दूर पर बुद्ध-गया (बोध गया) स्थित

है। पालि धर्म-ग्रंथों के साक्ष्य के आधार पर डॉ० बरुआ की धारणा है कि नैरञ्जना नदी को फल्गु नदी या गया से नहीं संमिश्रित करना चाहिए। उनके अनुसार दोनों पृथक नदियाँ हैं (गया ऐंड बुद्ध गया, पृ० 101)।

नेरञ्जरा नदी, जो घनिष्ट रूप से ऊरुवेला से संबंधित थी, का जल निर्मल, शुद्ध, नीला और शीतल था जिसमें स्नान करने के लिए घाट बने थे, जिनमें नीचे उतरने के लिए सीढ़ियाँ थीं (पपञ्चसूदनी, पा० टे० सो०, II, 173; तुलनीय, ललितविस्तर, बिविल्योथेका इंडिया सीरीज़, पृ० 311; महावस्तु, II, 123-124)। इसके तट पर सुप्पतिट्ठित (सुप्रतिष्ठित) एक घाट था जहाँ पर बोधिसत्तजन अपने निर्वाण के दिन स्नान करते थे (जातक, I, 70)। इसके तट पर एक विशाल शालवन था (महाबोधिवंस, पृ० 28)। यहाँ पर हिरन पाये जाते थे (जातक, IV, 392-397)। प्रायः यह नदी नागकन्याओं की उपस्थिति से सुशोभित रहती थीं जो इसमें जलविहार का आनंद लेती थीं (ललितविस्तर, पृ० 386; महावस्तु, II, 264)। जटिल बंधु भी शरद् ऋतु में रात में इसमें गोता लगाने का अभ्यास करते थे (विनय, I, 31)।

जब सिद्धार्थ एक बोधिसत्त थे, वह इस नदी तक आये थे। वह सोने की तश्तरी जिसमें सुजाता ने खीर दी थी, बोधिसत्त ने इसके तट पर रखी थी। तब उन्होंने स्नान किया था और चावल की खीर खायी थी। उन्होंने तब इस तश्तरी को नदी में यह कहते हुये फेंक दिया कि यदि मैं आज बुद्ध हूँ तो इसे प्रवाह के प्रतिकूल बहना चाहिए, (जातक, I, 70; वही, I, 15-16; थूप०, V, पा० टे० सो०, पृ 5; बुद्ध० V, अध्याय, II, श्लोक, 64; वही, अध्याय, XX, श्लोक, 16; महाबोधि, V, पृ० 8; जिनचरित, V, 207; ललितविस्तर, अध्याय, 18, पृ० 267; धम्मपद कामेंट्री, I, 86; पपञ्चसूदनी, II, 183)।

इस नदी के समीप एक विशाल झुरमट था, जिसमें बोधिसत्व ने एक बार दिन व्यतीत किया था (धम्मपद कामेंट्री, I, 86; तुलनीय, महाबोधि, V, पृ० 29)। जब बोधिसत्व इसके तट पर ठहरे थे, उनसे पाँच भिक्षु मिले थे जो उनके शिष्य हो गये थे (मज्झिम, I, 170; वही, II, 94; संयुत्त, III, 66; विनय टेक्स्ट्स, सै० बु० ई०, I, पृ० 90)। इस के तट पर मार ने उन्हें प्रलोभित करने का दुःसाहस किया था, किंतु उसके सारे प्रयत्न निष्फल रहे (संयुत्त, I, 103 और आगे; वही, I, 122 और आगे; सुत्तनिपात, पा० टे० सो०, पृ० 74; V. 425; निद्देस, I, 455; जिनचरित्, श्लोक, 239-245; ललितविस्तर, अध्याय, 20; महावस्तु, II, 315; दिव्यावदान, पृ० 202; राकहिल, द लाइफ ऑव द बुद्ध, पृ० 31)।

इस नदी के तट पर बुद्ध के कार्य-कलाप कुछ कम महत्त्वपूर्ण न थे। संबोधि प्राप्त करने के पश्चात् यहाँ वट-वृक्ष के तले बुद्ध ने कुछ समय व्यतीत किया था (विनय, I, 1; तुलनीय, बुद्धचरित, बुक, XII, श्लोक, 87-88)। प्रसिद्ध जटिल बंधुओं को बुद्ध ने यहीं पर अपने मत में दीक्षित किया था, (विनय, I, 25 और आगे)। बुद्ध इस नदी के तट पर उरुवेला में अजपाल नामक वट-वृक्ष के नीचे रहते थे। यहाँ पर ब्रह्मा उनसे मिले थे, जिन्होंने उनसे अनेक विषयों पर परिचर्चा की थी। बुद्ध ने इस विचार के लिए उनका समर्थन प्राप्त किया कि उन्हें धम्म का आदर और इसका प्रचार करना चाहिए, (अंगुत्तर, II, 20-21; संयुत्त, I, 136 और आगे)। ब्रह्मा ने बुद्ध को बतलाया कि उन्होंने सावधानी से पंचेंद्रियों की क्रियाशक्ति पर मनन किया है (संयुत्त, V, 232 और आग)। कुछ ब्राह्मणों को उन्हें यह स्पष्ट करने का अवसर भी मिला था कि उनके मन में वयोवृद्ध ब्राह्मणों के प्रति आदर भाव था (अंगुत्तर, II, 22-23)। उन्होंने निर्वाणप्रद चतुर्विध विद्या का अनुभव किया था (संयुत्त, V, 167 और आगे; वही, 185 और आगे)। संबोधि-प्राप्ति के दिन बुद्ध ने अपने प्रयोग में आने वाले पात्र को महाकाल नाग को इस नदी के तट पर दिया था (महाबोधिवंस, पृ० 157)। संबोधि प्राप्ति के बाद बुद्ध ने यहीं पर अपने प्रतीत्यसमुत्पाद्य सिद्धान्त का क्रमबद्ध विवेचन किया था (उदान, पृ० 1-3)। इसी नदी के तट पर बुद्ध ने नागराज मुचलिंद को मुचलिंद वृक्ष के नीचे उपदेश दिया था और उन जीवों के विषय में बतलाया था जो नश्वर और दुःखपूर्ण हैं (वही, पृ० 32-33)।

निग्रोधाराम—यह विहार राजगृह में था (दीघ, II, 116)।

ओलाङ्ग—इस गाँव को क्योंझर (एक भूतपूर्व रियासत) की आनंदपुर तहसील में देलांग गाँव से समीकृत किया जा सकता है (एपि० इं०, XXV, भाग, IV; अक्टूबर, 1939)।

पलाशी—यह कलकत्ता से 93 मील दूर नदिया जिले में है। इसका नाम पलाश-वृक्षों (Butea Frondosa) से गृहीत है, जिनकी वहाँ पर प्रचुरता थी। वह रणक्षेत्र जहाँ लार्ड क्लाइव के नेतृत्व में अंग्रेजों ने 23 जून 1757 को बंगाल के अंतिम स्वतंत्र शासक, सिराज-उद्-दौला की सेना को पराजित किया था, रेलवे स्टेशन से लगभग 2 मील पश्चिम में स्थित है। आम्रकुंज के इस ऐतिहासिक युद्ध का पद्यवद्ध वर्णन नवीनचंद्र ने अपने 'पलाशीर युद्ध' नामक काव्य में योग्यतापूर्वक किया है। पलाशी से लगभग चार या पाँच मील की दूरी पर सिराजुद्दौला के सेनापति मीर मदन की समाधि है (इंट्रोड्यूसिंग इंडिया, भाग, I, पृ० 74)।

पलाशिनी—कुछ लोगों ने इस नदी को आधुनिक परास से समीकृत किया है जो छोटा नागपुर में कोयल की एक सहायक नदी है। यह एक नदी है, जो मार्कण्डेयपुराण के अनुसार शुक्तिमत पर्वत माला से निकली हुयी बतायी जाती है, जिसे मध्यप्रदेश के रायगढ़ में शक्ति से मानभूम में डल्मा पहाड़ियों तथा शायद संथाल परगना में भी स्थित पहाड़ियों तक फैली पहाड़ियों की शृंखला से समीकृत किया गया है (वि० च० लाहा, रिवर्स ऑव इंडिया, पृ० 45)।

पञ्चपाली (पाँचपाली)—इस गाँव को क्योंझर में आनंदपुर तहसील के पञ्चपाली से समीकृत किया जा सकता है (एपि० इं०, XXV, भाग, IV, अक्टूबर, 1939)।

पंडुआ—यह हुगली जिले में है जिसे प्रद्युम्ननगर भी कहा जाता है। सामान्यता इसे पेंडो कहा जाता है। विस्तृत विवरण के लिये द्रष्टव्य इंट्रोड्यूसिंग इंडिया, भाग, I, पृ० 76.

परिब्बाजकाराम—गृध्रकूट और राजगृह के समीप स्थित उदुंबरदेवी जमींदारी में परिव्राजकों के लिये निर्मित किया गया यह एक उल्लेखनीय विहार था (दीघ, III, 36; सुमंगलविलासिनी, III, 832)। सुमागध सरोवर के किनारे मोरनिवाप से यह कुछ कदम की दूरी पर स्थित था (दीघ, III, 39)।

पश्चिम-खाटिका—इसका वर्णन लक्ष्मणसेन के गोविंदपुर अभिपत्र में हुआ है। यह वर्धमान-भुक्ति में संमिलित था। वर्तमान हुगली नदी, पूर्व और पश्चिम दोनों खाटिकों के मध्य की प्राकृतिक सीमा थी (एपि० इं०, XXVII, भाग, III, 121)।

पटिभाणकूट—गिज्जकूट के निकट यह एक भयंकर ढलानवाली एक चोटी थी (संयुत्त, V, 448)। पालि भाष्यकार बुद्धघोष के अनुसार यह एक सीमा-वर्त्ती पहाड़ था जो एक विशाल पर्वत की तरह परिलक्षित होता है (सारत्थपकासिनी, III, 301)।

पटकई पहाड़ी—असम के लखीमपुर जिले के दक्षिण में ये औसतन लगभग 4000 फीट ऊँची पहाड़ियाँ फैली हुयी हैं। मुख्य पर्वत-माला में लगभग 7000 फीट ऊँचे शिखर हैं। इन पहाड़ियों के पार जाने वाले दर्रे बर्मा और असम के मध्य यातायात के एकमात्र स्थलमार्ग हैं (लाहा, माउंटेंस ऑव इंडिया, पृ० 9)।

पट्टिकेरा—मैनामाटी ताम्रपत्र में बेजखंड नामक एक गाँव में भूमिदान का उल्लेख है, जो पट्टिटेकेरा नगर में स्थित एक बौद्ध-विहार के लिये दिया गया था। उक्त अभिलेख में एक राजा का नाम सुरक्षित है जो 1203-04 में

पट्टिटेकेरा के सिंहासन पर आरूढ़ हुआ था (हरप्रसाद मेमोरियल वाल्यूम, पृ० 283 और आगे; बि० च० लाहा बाल्यूम, भाग, I, पृ० 215-216)।

पौण्ड्रवर्धनभुक्ति (पुण्ड्रवर्धन-भुक्ति)—कई बार महाभारत में वर्णित पौण्ड्र या पौण्ड्रकों को कभी तो वंगों और किरातों से (सभापर्व, XIII, 584) संबंधित बतलाया गया है जबकि अन्य स्थानों पर उनका वर्णन उड्रों, उत्कलों, मेकलों, कलिंगों एवं आंध्रों के साथ किया गया है (वनपर्व, LI, 1988; भीष्मपर्व, IX, 365; द्रोणपर्व, IV, 122)। ऐतरेय ब्राह्मण (VII. 18) में भी उनका वर्णन हुआ है। दशकुमारचरितम् के अनुसार (पृ० 111) पुण्ड्र देश पर विशालवर्मा की सेना ने आक्रमण किया था। उत्तर बंगाल का एक विशाल खंड जिसे उस समय पुण्ड्रवर्धनभुक्ति कहा जाता था, 443 ई० से 543 ई० तक गुप्त-साम्राज्य का एक अभिन्न भाग था और जिस पर गुप्त सम्राट् के सामंतों के रूप में उपरिक महाराजों की एक पंक्ति ने शासन किया था।[1] भानुगुप्त के काल के (533-34 ई०) दामोदरपुर ताम्रपत्र अभिलेख के अनुसार अयोध्या के एक कुलपुत्र ने पुण्ड्रवर्धन भुक्ति के प्रांतीय राज्य के अधीन कोटिवर्ष के स्थानीय प्रशासन के राज्यपाल स्वयंभुवदेव से मिलकर निवेदन किया था कि उसे प्रचलित प्रथा के अनुसार एक ताम्रपत्र के दस्तावेज़ के माध्यम से थोड़ी बंजरभूमि का हस्तांतरण करने की आज्ञा दी जाय। उसकी प्रार्थना स्वीकृत की गयी थी। पुण्ड्रवर्धन युवान-च्वाङ द्वारा वर्णित पुन-न-फ-टन-न (Pun-na-fa-tan-na) के समान है। पार्जिटर का विचार है कि एक समय पौण्ड्रों का अधिकार उन प्रदेशों पर था जिनमें आज संथाल परगना तथा बीरभूम के आधुनिक जिले और हजारीबाग के उत्तरी भाग संमिलित हैं। पुण्ड्रवर्धन को मिलाने के लिये मध्यदेश की पूर्वी सीमा को और आगे पूरब में बढ़ा दिया गया है (तुलनीय, दिव्यावदान, पृ० 21-22)। प्राचीन युगों में पुण्ड्रवर्धनभुक्ति में वरेंद्र संमिलित था जो स्थूल रूप से उत्तर बंगाल के समान है। पुण्ड्रवर्धन-भुक्ति में संपूर्ण बंगाल संमिलित प्रतीत होता है। धर्मपाल के खलीमपुर दानपत्र, देवपाल के नालंदा अभिलेख और लक्ष्मणसेन के अनुलिया ताम्रपत्र में वर्णित व्याघ्रतटी (बागड़ी) नामक एक गाँव, कालिदास के रघु-विजय के विवरण के अर्थानुसार बंगाल के संभागों में से एक था। ह० प्र० शास्त्री ने बलवलभी को बागड़ी से समीकृत किया है। अनुलिया ताम्रपत्र में व्याघ्रतटी के अधिकार-क्षेत्र के अंतर्गत् प्रदत्त भूदान का उल्लेख है जो पुण्ड्रवर्धनभुक्ति में था।

---

[1] **रायचौधरी, पोलिटिकल हिस्ट्री ऑव एंश्येंट इंडिया, चतुर्थ सं०, पृ० 456-457.**

एस० एन० मजूमदार ने व्याघ्रतटी को बागड़ी से समीकृत किया है (सर आशुतोष कम्मेमोरेशन वाल्युम, ओरियंटेलिया, भाग, II, पृ० 424) पुण्ड्रवर्धन नगर का उल्लेख अधोलिखित पाल-अभिलेखों में भी है: धर्मपाल का खलीमपुर दानपत्र, देवपाल का नालंदा दानपत्र, महीपाल प्रथम का बानगढ़ दानपत्र, विग्रहपाल तृतीय का आमगच्चिया दानपत्र और मदनपाल का मनहली दानपत्र। सेन अभिलेख के अंतर्गत् इसका उल्लेख विजयसेन के बैरकपुर दानपत्र, लक्ष्मणसेन के अनुलिया, तर्पणदीघि, माधाईनगर और सुंदरबन ताम्रपत्रों, केशवसेन के एडिलपुर ताम्रपत्र और विश्वरूपसेन के मदनपाड़ा और साहित्य परिषत् ताम्रपत्रों में है। पुण्ड्रवर्धन भुक्ति के एक संक्षिप्त रूप पौण्ड्रभुक्ति का वर्णन श्रीचन्द्रदेव के रामपाल ताम्रपत्र, भोजवर्मन् के बेलाव ताम्रपत्र और श्रीचन्द्र के घुल्ल अभिपत्र में है (द्रष्टव्य, न० गो० मजूमदार, इंस्क्रिप्शन्स ऑव बंगाल, जिल्द, III, पृ० 2, 15.)।[1] राष्ट्रकूट-नरेश गोविन्द चतुर्थ के संगली अभिपत्र में पौण्ड्रवर्धन का उल्लेख है। लक्ष्मणसेन के तर्पण दीघि दानपत्र में वरेंद्री को पौण्ड्रवर्धन के अंतर्गत् बतलाया गया है। विजयसेन के देवपाड़ा अभिलेख में वरेंद्र के कलाकारों की एक श्रेणी का उल्लेख है जिसमें पुण्ड्रवर्धन का एक विशाल भाग समाविष्ट था। वैद्यदेव के कमौली अभिपत्र में, विष्णु-प्रतिमा और देवपाड़ा अभिलेखों में भी वरेंद्र का उल्लेख है।

पालों के काल में (लगभग, 730-1060 ई०) पुण्ड्रवर्धनभुक्ति में निश्चय ही एक विशाल भूभाग संमिलित था, जब कि सेनों ने अपेक्षाकृत एक बृहत्तर भूभाग पर शासन किया था। इन दोनों राजवंशों के अभिलेखों में पुण्ड्रवर्धनभुक्ति के विशालतर मंडल में संमिलित निम्नलिखित उपमंडलों का उल्लेख है: कोटिवर्षविषय (दिनाजपुर), व्याघ्रतटी मंडल (माल्दह), खाडि-विषय (जो सुन्दरबन और चौबीस परगनों के समान है), वरेंद्री (मोटे तौर पर राजशाही, बोगरा, रंगपुर और दिनाजपुर के समान) और वंग (पूर्वी बंगाल, विशेष रूप से ढाका प्रभाग—संप्रति बंगला देश में)। यह तथ्य कि पुण्ड्रवर्धन में वरेंद्री और गौड (माल्दह और दिनाजपुर) संमिलित थे, पुरुषोत्तम-कोष (ग्यारहवीं शताब्दी ई०) के इस उल्लेख से भी सिद्ध होता है जहाँ यह लिखा है कि 'पुण्ड्राः स्युर वरेंद्री-गौड-निवृत्ति, जिसका तात्पर्य यह है कि पुण्ड्रों में वरेंद्री और गौड-देश संमिलित थे। सन्ध्याकर-नंदी (ग्यारहवीं शताब्दी ई०) के रामचरितम् के अनुसार श्री पुण्ड्रवर्धनपुर

---

[1] **विस्तार के लिए द्रष्टव्य बि० च० लाहा, ज्यॉग्रेफिकल एसेज, पृ० 37; लाहा, ज्यॉग्रेफी ऑव अर्ली बुद्धिज्म, पृ० 33 और 68.**

वरेंद्री में स्थित प्रतीत होता है क्योंकि उसमें कहा गया है कि वरेंद्री पूर्व का अग्रतम स्थान था और पुण्ड्रवर्धनपुर इसका मुकुटमणि या सर्वसुंदर अलंकार था (कवि प्रशस्ति V.1)। यह गौड-साम्राज्य का सबसे बड़ा प्रांत था। दामोदरपुर से प्राप्त एक अभिपत्र के अनुसार यह उत्तर में हिमालय से दक्षिण में सुंदरबन क्षेत्र में स्थित खाडि तक फैला हुआ था। विश्वरूपसेन के मध्यपाड़ा अभिपत्र में इसकी पूर्वी सीमा समुद्र तक फैली हुयी बतलायी गयी है। तेरहवीं शताब्दी ई० के मेहेर ताम्रपत्र के अनुसार इसमें त्रिपरा का एक भाग संमिलित था (हिस्ट्री ऑव बंगाल, भाग, I, पृ० 24; विस्तृत विवरण के लिये द्रष्टव्य, समतट)। सामंत लोकनाथ के त्रिपरा दान ताम्रपत्र में (एपि० इं०, XV, 301-15)। त्रिपरा के समीपवर्ती क्षेत्रों में शासन करने वाले कुछ करद प्रमुखों का उल्लेख है। कोमिल्ला शहर से लगभग 18 मील पश्चिमोत्तर में और देवीद्वार थाने से डेढ़ मील दक्षिण-पश्चिम में स्थित गुनैघर में एक तालाब से कीचड़ निकालते समय किसी ग्रामवासी को एक नया ताम्रपत्र प्राप्त हुआ था। इसे वैण्यगुप्त का गुनैघर दानपत्र भी कहा जाता है (इं० हि० क्वा०, VI, 45 और आगे)। एपिग्रेफिया इंडिका (XXI. पृ० 85) से हमें ज्ञात होता है कि मौर्य-युग में पुण्ड्रवर्धन नगर एक महामात्र का केंद्र था, किंतु यह संदेहास्पद है। डा० दे० रा० भंडारकर के अनुसार महास्थान अभिलेख के काल में संवंगीयों की राजधानी पुण्ड्रनगर थी जो वंगीयों का नहीं वरन् पुण्ड्रों का मुख्यावास था, निश्चय ही जिनके आधार पर इसे पुण्ड्रनगर कहा जाता था (एपि० इं०, XXI, पृ० 91)।

महास्थान या महास्थानगढ़ के वर्तमान् अवशेष बोगरा के आधुनिक नगर से सात मील उत्तर में स्थित है। कनिंघम ने पुण्ड्रवर्धन के प्राचीन नगर से इस स्थान की पहचान बतलायी है। करतोया नदी जो अब भी महास्थान के टीले के मूल का प्रक्षालन करती है, पुण्ड्रवर्धनभुक्ति को और पूरब में स्थित असम के प्राग्ज्योतिष या कामरूप से पृथक करती है। सातवीं शती ई० में युवान-च्वाङ पुण्ड्रवर्धनभुक्ति आया था। इस चीनी तीर्थयात्री के अनुसार इसकी परिधि 4000 ली से अधिक थी और इसकी राजधानी की 30 ली से अधिक। इस शहर की महत्ता बारहवीं शती ई० के तीसरे चतुर्थक से समाप्त हो गयी क्योंकि बंगाल के उत्तरकालीन सेन राजाओं ने अपनी राजधानी पहले तो राजशाही जिले में देवपाड़ा में और बाद में माल्दह जिले में गौड में स्थानांतरित कर दी। तेरहवीं शती० ई० के अंत या चौदहवीं शती ई० के प्रारंभ में पुण्ड्रवर्धन पर मुसलमानों का अधिकार हो गया था।

पाहाड़पुर—सोमपुर को बंगाल के दिनाजपुर जिले में पाहाड़पुर से समीकृत किया गया है (विपुलश्रीमित्र का नालंदा अभिलेख, एपि० इं०, XXI, भाग, III, जुलाई, 1931)। पाहाड़पुर में 80 फीट ऊँचे ईंटों के विशाल टीले के कारण संभवतः इसका यह नाम पड़ा था क्योंकि यह एक पहाड़ की भाँति दिखलायी पड़ता था। सोमपुर में धर्मपाल के नाम पर अभिहित एक विहार था जिसे दीक्षित ने पाहाड़पुर से समीकृत किया है। बौद्ध भिक्षुओं के लिये भारत में किसी भी समय निर्मित किये गये विहारों में पाहाड़पुर का विहार एक सबसे बड़ा आराम था। इसका निर्माण आठवीं शताब्दी ई० में बंगाल के पाल राजाओं के अधीन हुआ था। पाहाड़पुर से उपलब्ध पुरानिधियों में मृण्फलक के बहुसंख्यक नमूने हैं। यहाँ पर ब्राह्मण और बौद्ध देवता समान रूप से प्राप्त होते हैं। उनमें चित्रित ब्राह्मण देवताओं में ब्रह्मा, विष्णु, गणेश और संभवतः सूर्य हैं। उत्तर भारत में बौद्ध धर्म के एक केंद्र के रूप में पाल युग में इस स्थान को निश्चय ही अतिशय महत्त्व प्राप्त हुआ।

पाहाड़पुर के अवशेष राजशाही जिले (बंगला देश) में जमालगंज रेलवे स्टेशन से पश्चिम में तीन मील की दूरी पर स्थित है। पाहाड़पुर-बिहार जावा के बोरोबुदुर और प्रांबनान एवं कंबोडिया के अंकोरवट जैसे बड़े स्तूपों एवं मंदिरों के सदृश है। पाहाड़पुर के बौद्ध विहार में हमें एक वर्गाकार मंदिर मिलता है, जिसमें अनेक कक्ष हैं, जिनमें से प्रत्येक के सामने एक आँगन और एक लघु ओसारा है। एक ऊँची वेदी प्राप्त होती है जो संभवतः धार्मिक उपासना के लिए थी। इस मंदिर के पूर्व में सत्यपिरेरभिटा नामक एक लघु-स्तूप है जहाँ पर हमें तारा का एक मंदिर मिलता है। विहार की दीवालों के मृण्फलकों पर पञ्चतंत्र एवं हितोपदेश की कहानियाँ चित्रित हैं। यहाँ पर राधा और कृष्ण की पाषाण प्रतिमाएँ, कृष्ण की जीवनगाथा, धेनुकासुर के बध और कृष्ण द्वारा गोवर्धन-धारण की कहानियाँ कहने वाली कुछ मनोहर आकृतियाँ प्राप्त होती हैं। बालि-सुग्रीव का युद्ध, बालि-वध, सुभद्राहरण आदि के समान महाकाव्यों एवं पुराणों के दृश्य यहाँ प्राप्त होते हैं। पाँचवीं शती ई० में पाहाड़पुर में एक जैन मंदिर था। बताया जाता है कि दीपंकर श्रीज्ञान नामक प्रसिद्ध तिब्बती बौद्ध विद्वान् ने अपने गुरु रत्नाकर शान्ति के चरणों में सोमपुरमहाविहार में अनेक वर्ष व्यतीत किये थे। पाहाड़पुर के उत्खननों के विवरण के लिये द्रष्टव्य आर्क्० स० इं०, एनुअल रिपोर्ट, 1920-30, पृ० 138 और आगे; आर्क्० स० इं०, एनुअल रिपोर्टस, 1930-34, पृ० 113-128; के० एन० दीक्षित, एक्सकेवेशंस ऐट पाहाड़पुर, में० आर्क्० स० इं०, सं० 55; इंट्रोड्यूसिंग इंडिया, भाग, I, पृ० 78; पाहाड़पुर मंदिर की तिथि

के विषय में एस० के० सरस्वती के विचार के लिये द्रष्टव्य, इंडियन कल्चर, VII, 1940-41, पृ० 35-40.

पालामक—देवपाल के नालंदा दानपत्र में गया-विषय में स्थित इस गाँव का वर्णन है (एपि० इं०, XVII, पृ० 318 और आगे)।

पाण्डवपर्वत—इसे राजगृह के उत्तर उत्तर-पूर्व में स्थित आधुनिक विपुलगिरि से समीकृत किया जा सकता है (बि० च० लाहा, राजगृह इन ऐंश्येंट लिटरेचर, मे० आर्क्० स० इं०, 58, पृ० 3-6, 28-30)।

पाण्डुया—(1) यह स्थान जिसे सामान्यतया पेडो कहा जाता है, कलकत्ता से 38 मील दूर पर स्थित है। यह हुगली जिले में है और माल्दह जिले के पाण्डुया से बिल्कुल भिन्न है। पंद्रहवीं शती ई० में गौड राजा समसुद्दीन ईसुफ शाह ने पाण्डुया के हिंदू राज्य को जीत लिया था, जहाँ पर अनेक हिंदू मंदिर थे। सूर्यदेवता को समर्पित एक प्राचीन हिंदू मंदिर को मस्जिद के रूप में परिवर्तित कर दिया गया था। यहाँ पर 127 फीट ऊँची एक मीनार और जोरापुकुर एवं पीरपुकुर नामक दो सरोवर हैं।

(2) माल्दह जिले में पाण्डुया के अवशेष महानंदा नदी के पूर्व में स्थित हैं। यहाँ पर एक भग्न नाले में हिंदू अवशेषों के स्पष्ट चिन्ह दिखायी पड़ते हैं जिसके नीचे हिंदू देवताओं की प्रतिमाएँ दबी हैं। मुसलमान युग के अनेक अवशेष यथा, आदिना मस्जिद, सोणा मस्जिद, आसानसाही दरगाह, सलामी दरगाह, बायेस्क-हाज़ारी दरगाह, और एक्लाखी मस्जिद आदि पाये जाते हैं (इंट्रोड्यूसिंग इंडिया, भाग, I, पृ० 76)।

पापहारिणी—यह बिहार में एक पहाड़ी का नाम है। पापहारिणी पहाड़ी के तल में एक रमणीक सरोवर है जहाँ पौष मास की पूर्णिमा को प्रायः लोग आते हैं जब मधुसूदन की मूर्ति बंशी से इस पहाड़ी के तल में स्थित एक मंदिर में लायी जाती है। इस सरोवर को आदित्यसेन की पत्नी कोणदेवी ने खुदवाया था। आदित्यसेन हर्षवर्धन की मृत्यु के पश्चात् कन्नौज राज्य के छिन्न-भिन्न हो जाने पर, सातवीं शती ई० में मगध का स्वतंत्र राजा बन गया था (का० इं० इं०, III, 211)।

पार्श्वनाथ—यह हज़ारीबाग जिले में है जहाँ बहुधा जैन मतावलंबी आते हैं। यह पहाड़ी लगभग 5000 फीट ऊँची है। हिमालय के दक्षिण में यह सबसे ऊँचा पहाड़ है। एक उभरे हुये भूखंड से निकलता हुआ, पर्याप्त ऊँचाई वाला चित्ताकर्षक यह एक अति सुंदर पहाड़ है (विस्तृत विवरण के लिए द्रष्टव्य, बिहार ऐंड उड़ीसा डिस्ट्रिक्ट गजेटियर्स, हज़ारीबाग, पृ० 202 और आगे)। इसके

शिखर पर एक दिगंबर जैन मंदिर और इसके तल से कुछ श्वेतांबर मंदिर प्राप्त होते हैं। समेतशिखर नाम से भी विख्यात यह पहाड़ी वन्य-पशुओं से आकीर्ण एक घने जंगल में स्थित है। अपनी मृत्यु के पहले पार्श्वनाथ इस पहाड़ी के तल में आये थे और मुक्ति प्राप्त किया था (बि० च० लाहा, ज्यॉग्रेफिकल एसेज़, पृ० 213)।

पाटलिपुत्र—मगध की उत्तरकालीन राजधानी पाटलिपुत्र (आधुनिक पटना) थी। राजोद्यान के अहाते में उगे हुये बहुसंख्यक पुष्पों के कारण इसके प्राचीन संस्कृत नाम कुसुमपुर और पुष्पपुर थे। यूनानी इतिहासकार इसे पलिबोथ्रा और चीनी तीर्थयात्री पा-लिन-टु (Pa-lin-tou) कहते थे।

महान् चीनी यात्री युवान-च्वाङ ने इस नगर के नाम की उत्पत्ति का एक पौराणिक प्रसंग दिया है (वाटर्स, ऑन युवान-च्वाङ, भाग, II, पृ० 87)। जैन अनुश्रुतियों के अनुसार दर्शक के पुत्र उदय ने इस नगर का निर्माण किया था। मगधनरेश अजातशत्रु ने इसका प्रथम सूत्रपात किया था। मगध से वैशाली जाते समय बुद्ध ने अजातशत्रु के अमात्यों को नगर-मापन करते हुये देखा था (द्रष्टव्य, माडर्न रिव्यू, मार्च, 1918)।

पाटलिपुत्र मूलतः मगध में स्थित पाटलिग्राम नामक एक गाँव था, जो गंगा के दूसरी ओर कोटिग्राम के संमुख था। यह मागधी गाँव राजगृह से वैशाली और अन्य स्थानों को जाने वाले महापथ पर स्थित एक पड़ाव था। पाटलिग्राम के दुर्गीकरण से, जिसे बुद्ध के जीवन काल में सुनीध और वर्षकार नामक मगध के दो मंत्रियों ने प्रारंभ किया था, पाटलिपुत्र के महानगर की नींव पड़ी थी (दीघ, II, 86 और आगे; सुमंगलविलासिनी, II, पृ० 540)। इस प्रकार अजातशत्रु को मगध का वास्तविक संस्थापक माना जा सकता है।

पाटलिपुत्र का निर्माण मध्यदेश की गंगा, सोन और गंडक नामक महानदियों के संगम के समीप हुआ था, किंतु सोन नदी अब यहाँ से कुछ दूर हट गयी है। यह नगर 600 फीट चौड़ी और तीस हाथ गहरी एक परिखा से सुरक्षित था। मेगस्थनीज़ के अनुसार यह 80 स्टेडिया लंबा और 15 स्टेडिया चौड़ा था (मैक्रिंडिल, ऐंश्येंट इंडिया ऐज़ डिस्क्राइब्ड बाई मेगस्थनीज़ ऐंड एरियन, पृ० 65)।

अंतस्थ परिखा से चौबीस फीट की दूरी पर एक प्राकार था, जिसमें 570 अट्टालक और 64 फाटक थे (मैक्रिंडिल, ऐंश्येंट इंडिया ऐज़ डिस्क्राइब्ड बाई मेगस्थनीज़ ऐंड एरिअन, पृ० 67)। इस नगर के चार फाटक थे, जिनसे अशोक

की दैनिक आय, 4,00,000 कहापण थी। सभा में नित्य उसे 1,00,000 कहापण मिला करते थे (समन्तपासादिका, I, पृ० 52)।

फा-ह्यान् जो पाँचवीं शती ई० में इस पुर में आया था, इसकी गरिमा और वैभव से बहुत प्रभावित हुआ था। वह कहता है कि नगर के मध्य में स्थित राज-प्रासाद और महाकक्ष भव्य थे। इस नगर में महायान धर्म का राधसामि नामक एक ब्राह्मण आचार्य था। अशोकद्वारा निर्मित स्तूप के पार्श्व में एक हीनयान-विहार था। यहाँ के निवासी धनी, समृद्ध और धर्मात्मा थे (लेग्गे, फा-ह्यान्, पृ० 77-78)। फा-ह्यान् ने आगे पाटलिपुत्र के एक भव्य बौद्ध जुलूस का रोचक वर्णन किया है (वहीं, पृ० 79)। युवान-च्वाङ के अनुसार, जो सातवीं शती ई० में यहाँ आया था, गंगा के दक्षिण में लगभग 70 ली से अधिक परिधि वाला एक प्राचीन नगर स्थित देखा था, जिसकी नींवें तब भी दृष्टिगोचर होती थीं, यद्यपि नगर बहुत पहले ही वीरान हो चुका था। उसके अनुसार यह प्राचीन नगर पाटलिपुत्र था (वाटर्स, ऑन युवान-च्वाङ्, भाग, II, पृ० 87)। कवि दण्डिन् ने पाटलिपुत्र को सभी नगरों में श्रेष्ठ और रत्नों से युक्त बतलाया है (दशकुमार-चरितम्, प्रथम उच्छवास, श्लोक, 2, पूर्व पीठिका)।

पाटलिपुत्र उत्तरकालीन शिशुनागों, नंदों और महान् मौर्यसम्राट् चन्द्रगुप्त एवं अशोक की राजधानी थी, किंतु समुद्रगुप्त की विजयों के समापन के पश्चात् यह गुप्त सम्राटों का साधारण आवास नहीं रहा (वि० स्मिथ, अर्ली हिस्ट्री ऑव इंडिया, चतुर्थ संस्करण, पृ० 309)। चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य के शासनकाल में यह एक भव्य एवं जन-संकुल नगर था और छठीं शताब्दी ई० में हूण-आक्रमण के समय तक स्पष्टतः यह नष्ट नहीं हुआ था। हर्षवर्धन, जो सातवीं शताब्दी ई० में उत्तरी भारत का परमाधिपति सम्राट् था, ने इसे पुनरस्थापित करने की कोई चेष्टा नहीं की (वि० स्मिथ, अर्ली हिस्ट्री ऑव इंडिया, चतुर्थ संस्करण, पृ० 310)। गौड एवं कर्णसुवर्ण के राजा शशांक नरेन्द्रगुप्त ने पाटलिपुत्र में बुद्ध के पद्चिन्हों को नष्ट और अनेक बौद्ध मंदिरों एवं विहारों को ध्वस्त किया था (स० चं० विद्याभूषण, हिस्ट्री ऑव इंडियन लॉजिक, पृ० 349)। बंगाल और बिहार के पाल नरेशों में सर्वाधिक शक्तिशाली धर्मपाल ने पाटलिपुत्र के गौरव का पुनर्नवीकरण करने के लिए कदम उठाया (वि० स्मिथ, अर्ली हिस्ट्री ऑव इंडिया, चतुर्थ संस्करण, पृ० 310-311)।

पाटलिगाम के उपासकों ने एक आवसथागार के उद्घाटन-समारोह के अवसर पर बुद्ध को आमंत्रित किया था (विनयपिटक, I, पृ० 226-28)। वाराणसी के एक प्रभावशाली ब्राह्मण गृहस्थ ने उदेन नामक एक बौद्ध भिक्षु

के लिए पाटलिपुत्र में एक विहार का निर्माण कराया था (मज्झिम०, II, 157 और आगे)। भद्दनामक एक भिक्षु पाटलिगाम के निकट कुक्कुटाराम में रहता था और उसने बुद्ध के प्रसिद्ध शिष्य आनन्द के साथ बातचीत की थी (संयुत्त, V, 15-16; 171-172)। पाटलिपुत्र का राजा पाण्डु बौद्ध धर्म में दीक्षित किया गया था (लाहा, दाथावंस, इंट्रोडक्शन, xii-xiv)। कतिपय जैन भिक्षुओं के नेता स्थूलभद्र ने महावीर की मृत्यु के लगभग 200 वर्षों के बाद जैन धार्मिक-साहित्य का संकलन करने के लिए पाटलिपुत्र में एक संगीति बुलायी थी। भद्रबाहु ने इस सभा का कार्य करने से अस्वीकार कर दिया था (स्टीवेंसन, हार्ट ऑव जैनिज्म, पृ० 72)।

भारत सरकार के पुरातत्व विभाग द्वारा पाटलिपुत्र में रोचक अनुसंधान किये गये हैं। यहाँ कुछ का वर्णन किया जा सकता है :

1. लोहनीपुर, बुलंदीबाग, महाराजगंज से काष्ठ के स्तंभ वलय, और मंगली सरोवर;

2. गोलकपुर से उपलब्ध पंचाहत मुद्राएँ;

3. दीदारगंज से उपलब्ध प्रतिमा;

4. दारुखियादेवी एवं पारसीक-यवनानी शैली का स्तंभ शीर्ष;

5. संभवतः शुंगयुगीन जँगल के स्तंभ;

6. कुषाण एवं गुप्त नरेशों की मुद्राएँ;

7. पूरब दरवाजा के निकट से प्राप्त मिट्टी की पूजा-गुटिका;

8. फा-ह्यान् के काल के हीनयान और महायान विहारों के अवशेष, स्थूलभद्र के तथा अन्य जैनमंदिर और छोटी एवं बड़ी पटनदेवी के मंदिर (मनोरंजन घोष कृत पाटलिपुत्र, पृ० 14-15)। विस्तृत विवरण के लिये द्रष्टव्य, लाहा, इंडोलॉजिकल स्टडीज़, भाग, III; लाहा, द मगधाज़ इन ऐंश्येंट इंडिया, (ज० रा० ए० सो० प्रकाशन, संख्या, 24); लाहा, ट्राइब्स इन ऐंश्येंट इंडिया, अध्याय, XLVI.

पाथरघाटा—यह पहाड़ी भागलपुर जिले में गंगा के तट पर स्थित है। इस पहाड़ी के उत्तर की ओर पत्थर की कुछ प्राचीन मूर्तियाँ हैं। इस पहाड़ी में कुछ गुफाएँ भी हैं। कुछ लोगों ने इसे विक्रमशिला से समीकृत किया है (बर्न, बिहार डिस्ट्रिक्ट गजेटियर्स, भागलपुर, पृ० 171)।

पावापुरी—पावापुरी प्राचीन पापा या अपापपुरी का आधुनिक नाम है। यह बिहार तहसील में गिरियेक से तीन मील उत्तर में स्थित एक गाँव है। इसी

स्थान पर जैन धर्म के प्रवर्त्तक महावीर की मृत्यु हुयी थी जब वे पावा के षष्टिपाल के प्रासाद में रुके हुये थे।

जिस स्थान पर महावीर ने अपने नश्वर शरीर का परित्याग किया था वहाँ चार सुंदर जैन मंदिर बनवाये गये थे। यहीं पर बुद्ध ने चुंड लोहार के घर पर अपना अंतिम भोजन ग्रहण किया था और उसके बाद ही वह पेचिश रोग के शिकार हुये। यहाँ पर मल्लगण रहा करते थे। महान् जिन की मृत्यु की स्मृति के लिए भी जिन लोगों ने शुक्ल पक्ष की परिवा के दिन प्रकाश-सज्जा की प्रथा यह कह कर आरंभ की थी कि "चूँकि ज्ञान का प्रकाश चला गया, इसलिए हम सबको भौतिक पदार्थों के माध्यम से प्रकाश करना चाहिए," उनमें नवमल्ल-प्रमुख भी थे।

पावा, पापा या पावापुरी की स्थिति के विषय में मतभेद है। कुछ लोगों के अनुसार यह गोरखपुर जिले के पूर्व में छोटी गंडक के तट पर स्थित कसिया ही है। ऐसा प्रतीत होता है कि यह नगर बिहार में राजगीर के समीप स्थित था। विस्तृत विवरण के लिए द्रष्टव्य, बि० च० लाहा, ज्यॉग्रेफिकल ऐसेज, पृ० 210; पी० सी० नाहर, तीर्थ पावापुरी, 1925; आर्क् स० इं०, रिपोर्ट्स, भाग, VIII, और IX; ओ' मैल्लीकृत बिहार ऐंड उड़ीसा डिस्ट्रिक्ट गज़ेटियर्स, पटना, पृ० 223-224)।

पावारिक-अंबवन––यह नालंदा के पावारिक नामक श्रेष्ठि का आम्र-वन था, जिसका प्रयोग प्रमद-वन के रूप में किया जाता था। बुद्ध का प्रवचन सुनने के बाद प्रसन्न होकर पावारिक ने यहाँ पर एक विहार का निर्माण कराया था। इसे उसने बुद्ध के सभापतित्व में भिक्षुओं के एक संघ को समर्पित कर दिया था (पपञ्चसूदनी, III, पृ० 52)। एक बार बुद्ध यहाँ रुके थे और किसी गृहस्थ के केवढ्ढ नामक पुत्र को चमत्कारों के विषय में बतलाया था (दीघ निकाय, I, 211)।

फल्गु––यह नदी लक्खीसराय के पूर्वोत्तर में मुंगेर जिले में गंगा में मिलती है। यह नैरञ्जना (आधुनिक नीलाजान) और महानद (आधुनिक मोहना) नामक दो पर्वतीय सरिताओं के संयुक्त प्रवाह के अतिरिक्त और कुछ नहीं है जो बोधगया के आगे परस्पर मिलता है। इसमें दो सहायक नदियाँ : एक पटना ज़िले में और दूसरी मुंगेर जिले में मिलती हैं। नीलाजान या निरञ्जना का उद्गम-स्थल हज़ारीबाग ज़िले में समेरिया के निकट है। इस नदी के पश्चिम में थोड़ी दूर पर बुद्धगया स्थित है। मज्झिमनिकाय (स्यामी संस्करण), भाग, II, पृ० 233) की टीका के अनुसार इस नदी की निर्मल धारा प्रवाहित होती

है, जिसमें स्नान के लिए क्रमिक अवरोह वाली सीढ़ियोंयुक्त घाट बने हुये हैं। इसका जल, शीतल, निर्मल, पंकहीन और शुद्ध है (पपञ्चसूदनी, भाग, II, पृ० 233; तु० ललितविस्तर, पृ० 311; महावस्तु, भाग, II, पृ० 123)। ललितविस्तर में वृक्षों एवं झाड़ियों से सुशोभित तटवाली एक नदी के रूप में इसका वर्णन है। पालि भाष्यकारों के अनुसार नेरञ्जरा नाम से निर्मल जलवाली (नेला-जला) या नीले जल वाली (नीला-जला) एक सरिता का बोध होता है। विस्तृत बिवरण के लिए द्रष्टव्य, बे० मा० बरुआ, गया ऐंड बुद्धगया, पृ० 5, 103-104 आदि।

फलगुग्राम—विश्वरूपसेन का मदनपाड़ा एवं केशवसेन का एदिलपुर दानपत्र फल्गुग्राम से प्रचलित किया गया था। कुछ लोगों ने इसे गया जिले में फल्गु नदी के एक स्थान से समीकृत किया है, किंतु यह संदेहास्पद है।

फुलिया—यह एक गाँव है जो नदिया जिले में शान्तिपुर से लगभग चार मील दूर पर स्थित है। यह रानाघाट से 9 मील और कलकत्ता से 54 मील दूर है। यह महान् बंगाली कवि कीर्त्तिवास का जन्मस्थान है जो बंगाली रामायण के प्रणेता थे। यहाँ श्रीचैतन्य के सुविख्यात् मुसलमान अनुयायी यवन हरिदास ने धार्मिक तपस्या में अपने दिन व्यतीत किये थे। हाल में सरकार ने फुलिया में एक नया नगर बसाना प्रारंभ किया है (इंट्रोड्यूसिंग इंडिया, भाग, I, पृ० 74)।

पिञ्जोकाष्टि—इस गाँव का वर्णन विश्वरूपसेन के मदनपाड़ा दानपत्र में है। यह पौण्ड्रवर्धनभुक्ति के अंतर्गत् वंग के विक्रमपुर मंडल में स्थित है।

पिप्पलगुहा या पिप्पलिगुहा या पिप्फलिगुहा—यह वैभारगिरि के ऊपर उत्तर में स्थित थी। यह गुहा कब्रस्तान के दक्षिण-पश्चिम में कोई 300 कदम पर थी (लेग्गे, फा-ह्यान्, पृ० 84-85)। यह महाकस्सप का एक प्रिय स्थान था (संयुत्त, V, 79; उदान, पृ० 4)। फा-ह्यान कहता है कि यह पहाड़ में स्थित एक आवास था जिसमें दोपहर का भोजन करने के बाद बुद्ध नियमित रूप से ध्यानावस्थित होते थे (लेग्गे, फा-ह्यान, पृ० 85)। युवान-च्वाङ के अनुसार बुद्ध इस गुहा में आये थे। यहाँ पर वे प्रायः रहा करते थे (वाटर्स, ऑन युवान-च्वाङ्, II, 154)। जब महाकस्सप गंभीर रूप से बीमार थे, तब बुद्ध यहाँ आये थे (संयुत्त, V, 79)। इस गुहा को पिप्पलि या पिप्फलि कहते थे क्योंकि इसके बगल में पिप्पलि या पिप्फलि का एक वृक्ष था (उदानवण्णना, पृ० 77)। मञ्जुश्रीमूलकल्प (पृ० 588) में इसे वराह पर्वत पर स्थित बतलाया गया है। कुछ चीनी वृत्तांतों में इसे गिज्झकूट पर्वत पर स्थित बतलाया गया है (तुलनीय, वाटर्स, ऑन युवान-च्वाङ् II, 155)।

पिप्फलिवन—यह मौर्यों की राजधानी थी जिसकी पहचान युवान-च्वाङ द्वारा वर्णित न्यग्रोधवन या पिप्पलिवन से की गयी है जहाँ पर प्रसिद्ध अंगार स्तूप स्थित था (वाटर्स, ऑन युवान-च्वाङ, II, पृ० 23-24)। यह दुल्व में दिये गये तिब्बती विवरण से मेल खाता है (राकहिल, लाइफ ऑव द बुद्ध, पृ० 147)। कुछ लोगों की धारणा है कि पिप्फलिवन संभवतः नेपाल की तराई में रुम्मिनदेई और गोरखपुर जिले में कसया के मध्य स्थित था। (हे० चं० रायचौधरी, पोलिटिकल हिस्ट्री ऑव एंश्येंट इंडिया, चतुर्थ संस्करण, पृ० 217)। पिप्फलिवन के मोरिय बुद्धयुगीन एक गणतंत्रात्मक जन थे (दीघ, II, 167)। उन्होंने बुद्ध के अवशेषों का एक अंश प्राप्त किया और उनके ऊपर उन्होंने एक स्तूप का निर्माण किया था (बुद्धिस्ट सुत्ताज, सै० बु० ई०, पृ० 135)। महावंस के अनुसार (श्लोक, 16) अशोक का प्रपिता चन्द्रगुप्त मोरिय खत्तियों के वंश में उत्पन्न हुआ था।

प्रभासवन—यह राजगृह में गृध्रकूट पहाड़ी पर स्थित है (रा० ला० मित्र, नर्दर्न बुद्धिस्ट लिटरेचर, पृ० 166)।

प्रवरगिरि—अनन्तवर्मन् के बराबर पहाड़ी गुहालेख में पनारी गाँव के उत्तर की ओर स्थित प्राचीन प्रवरगिरि का उल्लेख है जो गया जिले के मुख्यावास गया नगर से पूरब और उत्तर की ओर लगभग 14 मील दूर पर स्थित है (का० इं० इं०, जिल्द, III)।

प्राग्ज्योतिष—दोनों महाकाव्यों के अनुसार प्राग्ज्योतिष[1] एक प्रसिद्ध देश था। योगिनीतंत्र (1.12, पृ० 65) में भी इसका वर्णन प्राप्य है। कालिका-पुराण (अध्याय, 40. 73) के अनुसार यह नरक के प्रभुत्व में एक सुंदर पुर था। विदेह-नरेश इसे अलकापुरी (इन्द्र के सौध या सदन) के समान मानता था (अध्याय, 38. 152)। इसमें न केवल कामरूप देश वरन् उत्तर-बंगाल और संभवतः उत्तर-बिहार का भी एक बड़ा भाग संमिलित प्रतीत होता है। वैद्यदेव के कमौली दानपत्र में कामरूप-मंडल एवं प्राग्ज्योतिष-विषय का उल्लेख है, जिसका तात्पर्य है कि प्राग्ज्योतिष-विषय एक विशालतर प्रशासकीय प्रभाग था, जिसमें कामरूप संमिलित था। इसका अर्थ पूर्वी ज्योतिष का नगर है। सर एडवर्ड गैट के अनुसार प्राग्ज्योतिष आधुनिक गौहाटी शहर का प्रतिरूप है। यहाँ पर इन्द्रपाल का शासन था जिसे महाराजाधिराज की उपाधि दी गयी थी (प्राग्ज्योतिष के इन्द्रपाल का

---

[1] साहित्यिक एवं अन्य साधनों के लिये द्रष्टव्य, बि० च० लाहा, प्राग्ज्योतिष, ज० उ० प्र० हि० सो०, जिल्द, XVIII, खंड, I और II.

गौहाटी दान ताम्रपत्र)। यहाँ पर कृषकों से करों की वसूली और दंड-यातना विरले ही होती थी (द्रष्टव्य, नवगाँव ताम्रपत्र)। लक्ष्मणसेन के इंडिया आफिस अभिपत्र के अनुसार (एपि० इं०, XXVI) प्राग्ज्योतिष-नरेश ने राजा लक्ष्मण-सेन की पगधूलि से कुछ अभिचार कृत्य संपादित किये थे। रत्नपाल के बड़ागाँव दानपत्र में प्राग्ज्योतिषपुर को अभेद्य और ब्रह्मपुत्र या लौहित्य नदी द्वारा सुशोभित होने वाला बतलाया गया है (एपि० इं०, XII, पृ० 37 और आगे)। प्राग्ज्योतिष दोनों महाकाव्यों में सुप्रसिद्ध है। महाभारत में इसे एक म्लेच्छ राज्य बतलाया गया है, जिस पर राजा भगदत्त शासन करता था (कर्णपर्व, V, 104-05; सभापर्व, XXV, 1000 और आगे)। इसी महाकाव्य में इसका उल्लेख एक असुर राज्य के रूप में भी हुआ है (वनपर्व, XII, 488)। यह देश किरातों एवं चीनों के राज्य की सीमा पर स्थित प्रतीत होता है (महाभारत, उद्योगपर्व, XVIII, 584 और आगे)। रघुवंश के अनुसार यह स्पष्टतः ब्रह्मपुत्र नदी के उत्तर में स्थित था।

हेमचन्द्र के अभिधानचिन्तामणि (IV. 22) में 'प्राग्ज्योतिषाः कामरूपाः" का वर्णन है। पुरुषोत्तम (त्रिकाण्ड पृ० 93) के अनुसार प्राग्ज्योतिष कामरूप है। बृहत्संहिता (XIV. 6) में इसका वर्णन है। कालिकापुराण (अध्याय, XXXVIII) के अनुसार प्राग्ज्योतिष की राजधानी को कामाख्या या गौहाटी से समीकृत किया गया है (ज० रा० ए० सो०, 1900, पृ० 25)। राजशेखर की काव्यमीमांसा (अध्याय, XVII) में प्राग्ज्योतिष को पूर्व में स्थित बताया गया है। हर्षचरित के अनुसार प्राग्ज्योतिष के राजकुमार ने भाष्करद्युति नामक एक दूत श्रीहर्ष के पास भेजा था। कीलहार्न के अनुसार इस राजकुमार का नाम कुमार था। विस्तृत विवरण के लिये द्रष्टव्य, ज० उ० प्र० हि० सो०, जिल्द XVIII, खंड, 1 व 2 में बि० च० लाहा का लेख 'प्राग्ज्योतिष'; मार्डन रिव्यू, मार्च, 1946, में एस० सी० राय का लेख 'प्राग्योतिषपुर'; बी० के० बरुआ ए कल्चरल हिस्ट्री ऑव असम, जिल्द, I, पृ० 9 और आगे)।

प्रेतकूट (प्रेतशिला)—गया माहात्म्य में वर्णित यह एक शिखर है। गया से पाँच मील पश्चिमोत्तर में स्थित यह 540 फीट ऊँची एक पहाड़ी है। तीर्थयात्रियों के लिए यह एक पुण्यस्थल है। इस पहाड़ी के शिखर पर बैठे हुये हाथी के समान प्रतिभासित होने वाला एक स्फटिक (granite) गोलाश्म है (बे० मा० बरुआ, गया ऐंड बुद्धगया, पृ० 14)। प्रेतकूट के पाद में प्रेतकुण्ड नामक एक स्नान-स्थल है, जिसे ब्रह्मकुण्ड भी कहते हैं (वायुपुराण, 108.67)।

पुनपुन्न—यह आधुनिक पुनपुन है जो पटना के ठीक आगे गंगा में मिलती है।

डाल्टनगंज जिले (पलामू) में इसका स्रोत है और इसमें दो उपनदियाँ मिलती हैं (लाहा, रिवर्स ऑव इंडिया, पृ० 26)।

पुण्ड्रवर्धनभुक्ति—देखिये पौण्ड्रवर्धनभुक्ति।

पूर्वखाटिका—वह पश्चिमी सुंदरबन क्षेत्र के एक विशाल भाग पर फैला हुआ प्रतीत होता है (एपि० इं०, XXVII, भाग, III, पृ० 121)।

पुष्करण—चन्द्रवर्मन् के सुसुनिया शिलालेख में पुष्करण का उल्लेख है, जो सुसुनियाँ पहाड़ी से लगभग 25 मील पूर्व में बाँकुड़ा जिले में दामोदर नदी के तट पर स्थित आधुनिक पोखरन है। यह राजा चन्द्रवर्मन् के राज्य की राजधानी थी, (आर्क्० स० इं०, एनुअल रिपोर्ट, 1927-1928, पृ० 188, इंट्रोड्यूसिंग इंडिया, भाग, I, पृ० 72)।

पुष्कराम्बुधि—ल्युडर्स की तालिका में एक देश के रूप में इसका वर्णन है. (सं० 961)।

राढ़—भट्टट-भवदेव के भुवनेश्वर-अभिलेख में इस प्रांत का उल्लेख है। राजेन्द्र चोल के तिरुमलाई शिलालेख में दो पृथक् जनपदों के रूप में उत्तर राढ़ और दक्षिण राढ़ का वर्णन है। भोजवर्मन् के बेलाव और बल्लालसेन के नैहटि ताम्रपत्रों में भी उत्तर राढ़ का वर्णन हैं जो वर्धमानर्भुक्ति से संबंधित है। कुछ लोगों के अनुसार उत्तर राढ़, जिसका वर्णन गण्डरादित्य देव के कोल्हापुर ताम्रपत्र (शक संवत् 1048, एपि० इं०, XXIII, भाग, II) और गंग देवेन्द्रवर्मन् के 398वें वर्ष में कालांकित इंडियन म्यूज़ियम अभिपत्र में भी है (एपि० इं०, XXIII, भाग, II, अप्रैल, 1935, पृ० 76) बंगाल का वह भाग है जिसमें मुर्शिदाबाद जिले का एक अंश संमिलित है। राढ़ प्रांत में हुगली, हाबड़ा, बर्दवान और बाँकुडा, जिले तथा मिदनापुर जिले के अधिकांश भाग समाविष्ट प्रतीत होते हैं। आचारांग-सूत्र (आयारांग सुत्त) में एक दुर्गम देश के रूप में (राढ़) का वर्णन है, जिसके दो उप-प्रभाग हैं : सुब्भभूमि (जो संभवतः, संस्कृत सुह्म है) और वज्जभूमि जिसे आधुनिक मिदनापुर जिले का वाचक माना जाता है। इसमें राढ़ देश के निवासियों को रुक्ष और साधारणतया मुनियों के प्रति विद्वेषी बतलाया गया है। जैसे ही मुनि उनके गाँवों के समीप दृष्टिगत होते थे, वैसे ही राढ़ के निवासी उनके पीछे कुत्ते छोड़ देते थे (1, 8, 3-4)। वे उपद्रवी जिनसे एकाकी मुनियों को निपटना पड़ता था, गोपालक थे जो उनसे व्यावहारिक मज़ाक किया करते थे (अचाराङ्ग सूत्र, 18,3-10; तुलनीय, मज्झिम, I, 79)।

राजगह (राजगृह)—इस नाम के एक नगर का वर्णन महाभारत (84, 104) और ल्युडर्स-तालिका, संख्या, 1345 में है। यह मगध की प्राचीन राजधानी थी जिसे गिरिव्रज भी कहते थे। एक राजा द्वारा निर्मित होने के कारण इसका यह नाम था और इसका प्रत्येक घर एक महल के सदृश था। इसे कुशाग्रपुर भी कहा जाता था (श्रेष्ठ कुश घास का नगर)। पाँच पहाड़ियों[1] से परिवृत्त होने के कारण इसका नाम गिरिव्रज पड़ा था, महाकाव्यों में जिसका वर्णन मगध-नरेश जरासंध की राजधानी के रूप में आया है। सासनवंश के अनुसार इसे मान्धाता ने बनवाया था (पृ० 152)। इसमें 32 फाटक और 64 पृष्ठद्वार थे (स्पेंस हार्डी, मैनुअल ऑव बुद्धिज्म, पृ० 323)। विनयपिटक के अनुसार (जिल्द, IV, पृ० 116-117) इस शहर में एक द्वार था जो सायंकाल बंद कर दिया जाता था और कोई भी व्यक्ति यहाँ तक कि राजा को भी द्वार बंद हो जाने के बाद नगर में प्रवेश नहीं करने दिया जाता था। पूरब से पश्चिम में राजगृह विस्तृत और उत्तर से दक्षिण में संकीर्ण था (वाटर्स, ऑन युवान-च्वाङ II, पृ० 148)। यह एक उल्लासपूर्ण नगर था जहाँ पर उत्सव मनाये जाते थे जिनमें लोग अपने को मदिरापान, माँस-भक्षण, नृत्य और संगीत में लिप्त रखते थे (जातक, I, 489)। यहाँ पर नक्खट्टकीड़ा नामक एक पर्व होता था जो एक सप्ताह तक चलता था और जिसमें धनी लोग भाग लेते थे (विमानवत्थु कामेंट्री, पृ० 62-74)। इस नगर में गिरग्गसमज्जा नामक एक अन्य उत्सव आयोजित किया गया था और छः भिक्षुओं के एक दल ने इसमें भाग लिया था (विनयपिटक, II, 107; तुलनीय, वही, IV, 267)। यह पुर अनेक धनी श्रेष्ठियों का आवास था (पेतवत्थु कामेंट्री, पृ० 1-9)। राजगृह के संथागार में सभाएँ होती थीं, जिनमें लोग मिलते थे और लोक-कल्याण के साधनों पर परिचर्चा करते थे (जातक, IV, पृ० 72 और आगे)। यहाँ के निवासी भिक्षुओं की आवश्यकताओं को तृप्त करने के लिए इस विश्वास से सदैव तत्पर रहते थे कि इस प्रकार के पुण्य कर्मों से किसी उच्चतम क्षेत्र में उनका पुनर्जन्म होगा (विमान वत्थु कमेंट्री, पृ० 250-51)। सारिपुत्त और मोग्गलान सहित बुद्ध के अनेक प्रसिद्ध शिष्य इस नगर में आये और बुद्ध ने यहीं पर उनका धर्म परिवर्तन किया था (कथावत्थु, I, पृ० 97)। यहीं पर उपालि को भी भिक्षु के रूप में दीक्षित किया

---

[1] **इन पहाड़ियों-विषयक पूर्ण विवरण के लिए द्रष्टव्य, बि० च० लाहा, राजगृह इन ऐंश्येंट लिटरेचर, मे० आर्क्० स० इं०, सं० 58; बि० च० लाहा, द मगधाज़ इन ऐंश्येंट इंडिया, पृ० 33 और आगे।**

गया था। इस नगर में बुद्ध की क्रियाशीलता उल्लेखनीय है।[1] महावीर ने यहाँ चौदह चार्तुमास्य व्यतीत किये थे (नायाधम्मकहाओ, II, 10)। यह बीसवें तीर्थंकर का जन्मस्थान था (आवश्यक निर्युक्ति, 325, 383)। यहाँ पर बुद्ध ने सभी भिक्षुओं को बुलाया और बौद्ध संघ के लिये कल्याण की सात दशाओं के कई वर्ग निर्धारित किये। मगध-नरेश अजातशत्रु ने राजगृह के चारों ओर धातु-चैत्य बनवाये (महावंस, I, गाइगर संस्करण, पृ० 247) और 18 महा-विहारों का जीर्णोद्धार कराया (समन्तपासादिका, I, पृ० 9-10)।

मगध-नरेश बिम्बिसार का राजवैद्य जीवक राजगृह का निवासी था, (विनयपिटक, II, 119 और आगे)। इस नगर का आकासगोत्त नामक एक अन्य वैद्य था (विनयपिटक, I, 215)।

बौद्ध धर्म के इतिहास में राजगृह एक ऐसे स्थान के रूप में प्रसिद्ध है जहाँ 500 प्रसिद्ध स्थविरों ने महाकस्सप के नेतृत्व में मिलकर बुद्ध के अभिधम्म एवं विनय सूत्रों का पाठ किया और बौद्ध-शास्त्र को स्थिर किया (विनय-चुल्लवग्ग, XI)। इस उद्देश्य के लिए राजगृह को चुनने का मुख्य कारण यह था कि यहाँ पर 500 स्थविरों के लिए पर्याप्त स्थान की व्यवस्था की जा सकती थी। राजगृह नगर में बुद्ध और उनके शिष्य प्राय: बहुत आते थे (विमानवत्थु कामेंट्री, पृ० 250-51; धम्मपद कामेंट्री, I, पृ० 77 और आगे; समन्तपासादिका, I, पृ० 8-9)। विनय-चुल्लवग्ग में राजगृह के एक श्रेष्ठि का उल्लेख है, जिसने चंदन की लकड़ी का टुकड़ा प्राप्त करके इससे भिक्षुओं के लिए एक कटोरा बनवाया था (विनय टेक्स्ट्स, III, 78)। राजगृह के एक अन्य श्रेष्ठि ने भिक्षुओं के लिए एक विहार बनवाया था। वहाँ इसमें भिक्षुओं के निवास के लिये उसे बुद्ध की सहमति लेनी पड़ी थी (विनय पिटक, II, 146)। जब बुद्ध इस नगर में थे देवदत्त की अभिवृद्धि एवं कीर्ति पूर्णतः नष्ट हो गयी थीं (विनय पिटक, IV, 71)। इसी नगर में बुद्ध ने श्रावस्ती के अनाथपिण्डिक नामक महाश्रेष्ठि को बौद्ध धर्म में दीक्षित किया था। (संयुत्त, I, 55-56)। व्यापारी अपने माल का क्रय या विक्रय करने के लिये यहाँ आया करते थे (विमानवत्थु कामेंट्री, पृ० 301)।

---

[1] विनयपिटक, IV, पृ० 267; II, पृ० 146; दीघ, II, पृ० 76-81; III, पृ० 36 और आगे; संयुत्त, I, पृ० 8 और आगे; पृ० 27-28, 52, 160-161, 161-63, 163-64; अंगुत्तर०, II, पृ० 181-82; III, 366 और आगे, 374 और आगे, 383 और आगे; थेरीगाथा, पृ० 16, 27, 41, 142; जातक, I, प० 65-84, 156.

राजगृह के बहुत से लोग वाणिज्य और व्यापार में लगे हुये थे (जातक, I, पृ० 466-467; पेटवत्थु कामेंट्री, पृ० 2-9)। इसके लंबे इतिहास-क्रम में इस नगर के अनेक नाम थे (सुमंगलविलासिनी, I, 132; उदानवण्णना, पृ० 32 और आगे)।

बिम्बिसार और अजातशत्रु के शासनकाल में राजगृह अपने वैभव की चरम-सीमा पर था। बुद्ध की मृत्यु के कोई 28 वर्ष के पश्चात् उदायिभद्र द्वारा पाटलिपुत्र को राजधानी बना लेने पर अवश्य ही इसकी गरिमा समाप्त हो गयी थी।

न केवल बौद्ध धर्म के विकास के साथ ही वरन् जैन धर्म तथा नाग और यक्ख-पूजा जैसे प्राचीन धर्मों के साथ भी इसका घनिष्ट संबंध था। यह उस युग के विधर्मियों एवं वामपंथियों का ज्ञात प्राचीनतम केंद्र था (तुलनीय, मज्झिम, I, पृ० 1-22)। विस्तृत विवरण के लिए द्रष्टव्य, बि० च० लाहा, राजगृह इन ऐंश्येंट लिटरेचर, मे० आर्क० स० इं०, सं० 58; ज्यॉग्रेफिकल एसेज, जिल्द, I, 208 और आगे; ज्याग्रेफी ऑव अर्ली बुद्धिज्म, पृ० 6, 8, 9, 15, 16, 28, 31, 33 आदि; मगधाज़ इन ऐंश्येंट इंडिया, पृ० 24-33; कुरेशी द्वारा लिखित एवं अ० घोष द्वारा पुनरावृत्त, 'ए गाइड टु राजगिरि, 1939; राजगिरि के 'उत्खनन के लिये, ए० रि० आर्क० स०, 1936-37, (1940); आर्क० स० इं० रि०, I, (1871), पृ० 21 और आगे; ऐ० रि० आर्क० स० इं०, 1905-1906 (1909), 86 और आगे, 1913-14 (1917) पृ० 265; 1925-26 (1928), 121 और आगे; 1930। 1934, भाग, I, (1936), 30 और आगे, 1935-36 (1938), पृ० 52 और आगे।

राजमहल पर्वतमाला—महाभारत के भीष्मपर्व में वर्णित अंतर्गिरियों द्वारा निवसित दो पर्वतमालाएँ बिहार के संथाल परगने में स्थित हैं। भागलपुर एवं मुंगेर क्षेत्रों की पहाड़ियों की सीमाओं पर रहने वाले लोग, अंतागिर्य थे। पतञ्जलि के अनुसार इसे कालकवन भी कहा जाता था (महाभाष्य, II, 4, 10; तुलनीय, बौधायन० I, 1. 2)।

राक्षसखालि—यह द्वीप हुगली नदी के मुहाने पर पुनीत सागर नामक द्वीप से लगभग 12 मील दूर पूरब में स्थित है (एपि० इं०, XXVII, भाग, III, पृ० 119)।

रामकेलि—यह गाँव (बंगला देश) माल्दह से लगभग 18 मील दूर दक्षिण पूरब में राजशाही जिले में स्थित है। यहाँ श्रीचैतन्य आये थे (चैतन्य भागवत, अध्याय, IV)।

रामपूर्वा—यह गाँव बिहार के चंपारन जिले में है। यह 1877 ई० में कार्लाइल द्वारा खोजे गये अशोक के स्तंभ के लिये सुविख्यात् है (ज० रा० ए० सो० 1908, 1085 और आगे)।

राणीपुर-झरियल—यह उड़ीसा में पटना (पहले रियासत) में तितिलागढ़ से लगभग 21 मील पश्चिम में स्थित एक गाँव है जहाँ से कुछ अभिलेख उपलब्ध हुये थे। यह अनेक प्राचीन मंदिर के लिए विख्यात है (एपि० इं०, XXIV, भाग, V, जनवरी, 1938)।

रेवतिका—समुद्रगुप्त के जाली गया ताम्रपत्र में गया-विषय में स्थित इस गाँव के दान का उल्लेख है, जिसे समुद्रगुप्त ने किसी ब्राह्मण को दिया था (का० इं० इं०, जिल्द, III)।

रोहितागिरि—महासामंत शशांकदेव के रोहतासगढ़ से प्राप्त पत्थर की मुहर के साँचे में रोहतासगढ़ के पहाड़ी दुर्ग का वर्णन है जो शाहाबाद जिले में सहसराम तहसील के मुख्यावास सहसराम से 24 मील दक्षिण-पश्चिम में स्थित है (का० इं० इं०, जिल्द, III)। श्रीचन्द्र के रामपाल ताम्रपत्र के अनुसार चन्द्र लोग रोहितागिरि के शासक थे जिसे बिहार में शाहाबाद जिले के रोहतासगढ़ से समीकृत किया जा सकता है (न० गो० मजुमदार, इंस्क्रिप्शंस ऑव बंगाल, जिल्द, III, पृ० 2 और आगे)। रोहतास के प्राचीन पहाड़ी दुर्ग रोहतासगढ़ का नामकरण सूर्यवंशी राजा हरिश्चन्द्र के पुत्र राजकुमार रोहिताश्व के नाम पर हुआ है (हरिवंश, अध्याय, 13)। इसका वर्णन तुंग वंश से संबंधित उड़ीसा से उपलब्ध ताम्रपत्रों में भी हुआ है। उड़ीसा के तुंग एवं बंगाल के चन्द्र—दोनों ही रोहितागिरि से आये थे (इं० हि० क्वा०, II, 655-656)। कुछ लोगों के अनुसार रोहतास पहाड़ी, विन्ध्य पर्वत की एक शाखा—कैमूर पर्वतमाला का एक पर्वत प्रक्षेप है (नं० ला० दे, ज्यॉग्रफिकल डिक्शनरी, पृ० 170)। विस्तृत विवरण के लिये द्रष्टव्य, ओ' मैल्लीकृत बिहार ऐंड उड़ीसा डिस्ट्रिक्ट गज़ेटियर्स, शाहाबाद, पृ० 174 और आगे।

ऋषिगिरि—(पालि, इसिगिलि)—यह राजगृह के समीप है। यह गिरिव्रज को परिवेष्टित करने वाली पाँच पहाड़ियों में से एक है। गिरिव्रज राजगृह का प्राचीन नाम था (विमानवत्थु कामेंट्री, पा० टे० सो०, पृ० 82)।

ऋष्यश्रृंग आश्रम—ऋषि ऋष्यश्रृंग का आश्रम, भागलपुर से 28 मील पश्चिम और बरियारपुर से चार मील दक्षिण-पश्चिम में ऋषिकुण्ड में था। यह मैरा पहाड़ी (मरुक पहाड़ी) द्वारा निर्मित एक गोलाकार घाटी में स्थित था। इस आश्रम के समीपस्थ ऋषिकुण्ड एक सरोवर था जो ठंडे और गरम

स्रोतों की एक समवायित जलराशि थी। इस सरोवर के उत्तर की ओर ऋषि ऋष्यश्रृंग और उनके पिता विभाण्डक ध्यान लगाया करते थे। कजरा स्टेशन के दक्षिण में आठ मील की दूरी पर स्थित ऋष्यश्रृंग पर्वत को ऋषि का तपोवन होने का सम्मान प्राप्त है (रामायण, आदिकाण्ड, अध्याय, 9)। गंगा से ऋषिकुण्ड की निकटता के कारण, जिससे अंग-नरेश लोमपाद द्वारा इस तरुण ऋषि को तपस्या से विमुख करने के लिये भेजी गयी वेश्याओं को सुविधा मिली थी, इसी स्थान को वरीयता दी जानी चाहिए, जहाँ संभवतः ऋषि और उनके पिता ने तपस्या की थी। महाभारत (वनपर्व, अध्याय, 110 और 111) के अनुसार यह आश्रम कुशी नदी के (प्राचीन कौशिकी) के निकट ही और चंपा से 24 मील दूर पर स्थित बतलाया जाता है।

रूपनारायण—यह नदी हबड़ा और मिदनापुर जिलों की सीमा है। यह मानभूम की पहाड़ियों से निकलती है और बाँकुड़ा, हुगली तथा मिदनापुर जिलों से बहती हुयी तामलुक के समीप हुगली नदी में मिलती है। (विस्तार के लिये देखिये, लाहा, रिवर्स ऑव इंडिया, पृ० 27)।

सलंदि—वयोंझर (एक भूतपूर्व रियासत) की पहाड़ियों से निकलकर यह नदी वैतरणी के पहले बलसोर जिले से बहती है (लाहा, रिवर्स ऑव इंडिया, पृ० 45)।

समतट—समुद्रगुप्त के इलाहाबाद स्तंभ लेख में (का० इं० इं०, जिल्द, III, नं० 1) पूर्वोत्तर भारत के प्रत्यन्त राज्यों के एक सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण राज्य के रूप में समतट का वर्णन है, जिसने शक्तिशाली गुप्त-सम्राट् की अधीनता स्वीकार की थी। चूँकि यहाँ की नदियों के दोनों ओर समान ऊँचाई वाले चौरस और समतल तट थे, इसलिये इसका यह नाम था (कनिंघम, एं० ज्यॉ० इं०, एस० एन० मजूमदार संस्करण, पृ०, 729)। यह वंग के विशालतर प्रभागों में संमिलित था। कुछ विद्वानों की धारणा है कि यह वंग से भिन्न था जो पूर्व में मेघना, दक्षिण में समुद्र और उत्तर में गंगा के प्राचीन प्रवाह बूढ़ी गंगा के बीच में स्थित था। समतट का वर्णन बृहत्संहिता में है (अध्याय, XIV) और यह गंगा और ब्रह्मपुत्र के डेल्टा के समान प्रतीत होता है तथा अभिलेखीय साक्ष्यों के अनुसार इसमें त्रिपुरा, नोआखाली, सिलहट (बांगला देश) (ज० ए० सो० बं०, 1915, पृ० 17-18) जिलों और संभवतः बरीसाल के कुछ भाग अवश्यमेव संमिलित रहे होंगे। कर्मात जिसे कोमिल्ला से 12 मील पश्चिम में स्थित बडकाम्ता से समीकृत किया जाता है, से प्रायः समतट की राजधानी की पहचान की गयी है (दे, ज्यॉग्रफिकल डिक्शनरी, पृ० 175; ज० ए० सो० बं०, 1914, पृ० 87;

भट्टसालि, स्कल्पचर्स इन द ढाका म्युजियम, पृ० 6)। नारायणपाल के भागलपुर दानपत्र में, महीपाल प्रथम के बघौरा अभिलेख में, विजयसेन के बैरकपुर दानपत्र में, वीर्येन्द्रभद्र के बोधगया अभिलेख और असरफपुर ताम्रपत्र में समतट का उल्लेख है (न० गो० मजूमदार, इंस्क्रिप्शंस ऑव बंगाल, जिल्द, III)। दामोदर-देव के मेहरग्राम ताम्रपत्र से (बरुआ और चक्रवर्ती द्वारा संपादित) हमें पुण्ड्र-वर्धनभुक्ति के अंतर्गत् समतटमण्डल की स्थिति का निश्चित पता लगता है। इसमें परणयी (विषय) जिले और वैसग्राम उपप्रभाग (खण्डल) का उल्लेख है जिसमें कोमिल्ला जिले की वर्तमान चाँदपुर तहसील में स्थित मेहर नामक गाँव संमिलित था। पुण्ड्रवर्धनभुक्ति से दशरथदेव द्वारा सेनों का उन्मूलन किये जाने के पूर्व, तेरहवीं शताब्दी ई० के प्रारंभ में कोमिल्ला जिले एवं चटगाँव (बांगला देश) में देव राजाओं का शासन था। कोमिल्ला शहर से लगभग 18 मील पश्चिमोत्तर में स्थित गुनैघर नामक गाँव से एक नया ताम्रपत्र उपलब्ध हुआ है। यह अभिपत्र बांगला देश में प्राप्त होने वाला सर्वप्राचीन प्रलेख है। यह फरीदपुर के चार अभिपत्रों से प्राचीन है, जिनके साथ इसकी लाभप्रद तुलना की जाती है। इस अभिपत्र में अपने सामंत महाराज रुद्रदत्त के कहने पर महाराज वैन्यगुप्त द्वारा उसके क्रीपुर के जयस्कंधावार से महायान धर्म के वैवर्त्तिक संप्रदाय के भिक्षुओं के एक बौद्ध-संघ को दिये गये भूदान का उल्लेख है। इस संघ की स्थापना आचार्य शान्तिदेव नामक एक बौद्ध भिक्षु ने अवलोकितेश्वर को समर्पित एक बिहार में की थी। विस्तृत विवरण के लिये द्रष्टव्य, इं० हि० क्वा०, जिल्द, VI, नं० 1, पृ० 45 और आगे। गुनैघर दानपत्र में गुनैकाग्रहार में भू-दान का प्रलेख है, जिसे त्रिपुरा में 508 ई० में तिथित दानपत्र के प्राप्तिस्थान गुनैघर से समीकृत किया जा सकता है। दूतक महासामंत महाराज विजयसेन था जो अपने समय का कोई महत्त्वपूर्ण व्यक्ति प्रतीत होता है।

जब युवान-च्वाङ (640 ई०) इस देश में आया था, तब समतट एक महत्त्वपूर्ण राज्य था। उसने इसे दोनों ओर समान ऊँचाई वाले समतल और चौरस तटों वाली नदियों वाला देश बतलाया है। इस देश की परिधि, जिसे चीनी लोग सन-मो-ता-चा (San-mo-ta-cha) कहते थे, लगभग 3000 ली थी। यह फल-फूल और धान्य से समृद्ध था। यहाँ की जलवायु सम और लोग सुभग थे। यहाँ के लोग स्वभाव से निर्भीक, छोटे कद और कृष्ण-वर्ण के थे। वे विद्याव्यसनी थे (बील, बुद्धिस्ट रिकार्डस ऑव द वेस्टर्न बर्ल्ड, II, 199)। यहाँ पर अनेक बौद्ध संघाराम एवं हिंदू मंदिर थे। इस देश में अनेक जैन मुनि थे। युवान-च्वाङ और सेंगची के यात्रा-काल में समतट खड्ग वंश के शासन के

अधीन प्रतीत होता है (मे० आर्क० सं० बं०, जिल्द, I, नं० 6)। ऐसा प्रतीत होता है कि समतल समेत संपूर्ण वंग पर चन्द्रवंश का आधिपत्य था। ग्यारहवीं शती ई० के प्रारंभ में वर्मनों ने समतट को चन्द्रों के अधिकार से छीन लिया था, जिन्होंने उसी शताब्दी के अंत में क्रमशः सेनों के लिये स्थान दिया।

सप्पसोण्डिक-पब्भार—यह निकटवर्ती एक शिला का सर्प के फन के आकार वाला एक ढाल है (सारत्थप्पकासिनी, III, 17)। यह राजगृह में सीतवन के समीप था।

सप्पिनी—यह राजगृह के निकट एक नदी या क्षुद्र नदी थी। यह तिर्यक् प्रवाह वाली एक सरिता थी। प्रायः बुद्ध इस नदी के तट पर प्रवास किया करते थे (संयुत्त, I, 153)। ऐसा प्रतीत होता है कि बुद्ध-काल में यह राजगृह के दक्षिण में बहती थी। कुछ पारिव्राजकों से मिलने के लिए (परिब्बाजक) बुद्ध गिज्झकूट से इस नदी के तट पर आये थे। पञ्चान नदी संभवतः प्राचीन सप्पिनी है।

सप्तग्राम—पूर्व काल में इसका तात्पर्य सात गाँवों से था : बंसबेरिया, कृष्ण-पुर, बासुदेवपुर, नित्यानंदपुर, शिवपुर, संवचोरा और वलदघाटी। प्राचीन सप्तग्राम के अवशेष कलकत्ता से लगभग 27 मील दूर आदिसप्तग्राम नामक वर्तमान रेलवे स्टेशन के समीप प्राप्त होते हैं। यह एक महत्त्वपूर्ण नगर एवं गंगा के तट पर स्थित राढ़ का एक बंदरगाह था। चूँकि यहाँ पर राजा प्रियव्रत के सात पुत्र तपस्या करके ऋषि हुये थे इसलिए इसका यह नाम है। सरस्वती नदी के तल के सादपूर्ण हो जाने के कारण एक बंदरगाह के रूप में इसका महत्त्व समाप्त हो गया। नवीं शती ई० में श्री-श्री रूपनारायणसिंह नामक एक शक्तिशाली बौद्ध राजा सप्तग्राम में शासन करता था। तेरहवीं शती ई० में मिस्री यात्री इब्नबतूता यहाँ आया था। बाद में जफर खाँ ने इसे जीत लिया था जिसका मकबरा अब भी त्रिवेणी में प्राप्त होता है। यहाँ पर मुसलमान शासकों की बहुत मुद्राएँ प्राप्त हुयी हैं। गौड के अलाउद्दीन हुसेनशाह के शासनकाल में यह एक शाही टकसाल का केंद्र था। सोलहवीं शती ई० में राजीवलोचन नामक एक हिंदू राजा ने इसे गौड के तत्कालीन सुल्तान सुलेमान से जीत लिया था। यह चण्डी के प्रणेता का जन्म-स्थान है। बंकिमचन्द्र के कपाल-कुण्डला एवं हरप्रसाद शास्त्री के बेनेर मेये से हमें इसकी समृद्धि की एक झलक मिलती है। श्रीचैतन्य के एक अनुयायी उद्धारण दत्त का घर होने के कारण यह वैष्णवों का एक तीर्थस्थल है। श्रीचैतन्य के दाहिने हाथ-तुल्य नित्यानंद ने इस स्थान पर अनेक वर्ष व्यतीत किये थे। विस्तृत विवरण के लिये द्रष्टव्य, लाहा, होली प्लेसेज़ ऑव इंडिया,

ज० ए० सो० बं०, 1810; पेरिप्लस०, 26; इंट्रोड्यूसिंग इंडिया, भाग, I, पृ० 75.

सतट-पद्मावती—ग्यारहवीं शती० ई० के श्रीचन्द्र के एदिलपुर ताम्रपत्र में इस विषय (ज़िले) का उल्लेख है (एपि० इं०, XVII, 190)।

सत्तपण्णिगुहा—यह वेभार पर्वत के एक ओर थी, जहाँ पर राजा अजातशत्रु की संरक्षता एवं महाकस्सप के सभापतित्व में प्रथम बौद्ध संगीति हुयी थी (समन्त-पासादिका, I, पृ० 10)। इसका नाम सप्तपर्ण लता से ग्रहण किया गया है जो इसे लक्षित करती हुयी, इसके पार्श्व में थी। महावस्तु के (जिल्द, I, पृ० 70) अनुसार यह वैहार पर्वत की एक सुंदर ढलान के उत्तर की ओर थी। यह फा-ह्यान् के विवरण से मिलता है जिसने गुहा को पहाड़ी के उत्तर में स्थित बतलाया है (लेग्गे, फा-ह्यान्, पृ० 84-85)। फा-ह्यान् से सहमत युवान च्वाङ् ने गुहा को वेणुवन के दक्षिण-पश्चिम में लगभग 5 या 6 ली की दूरी पर एक विशाल वेणुवन में दक्षिणपर्वत के उत्तर की ओर स्थित बतलाया है (वाटर्स, ऑन युवान च्वाङ्, II, 159)।

सालिन्दिय—यह राजगृह के पूर्व में एक ब्राह्मण गाँव था (जातक,II I, 293)।

शाल्मली—इसकी पहचान बंगाल के बर्दवान जिले में गलसी थाने के अधिकार क्षेत्र के अंतर्गत् दामोदर नदी के उत्तरीतट से कोई $1\frac{1}{2}$ मील दूर स्थित मल्लसारुल नामक एक गाँव से की जा सकती है (एपि० इं०, XXIII, भाग, V, पृ० 158)।

शानवत्य—महाभारत (II, 48, 15) में वर्णित यह देश गया जिले में है। कुछ लोगों ने इस देश के निवासियों को संथालों से समीकृत किया है जो मेरे विचार से संदिग्ध है (मोतीचन्द्र, ज्यॉग्रेफिकल ऐंड इकॉनॉमिक स्टडीज़ इन द महाभारत, पृ० 110)।

शान्तिपुर—यह स्थान नदिया जिले में गंगातट पर स्थित है। यहाँ पर अनेक हिंदू मंदिर हैं। यहाँ पर श्रीचैतन्य के समकालीन एवं प्रशंसक महान् वैष्णव सुधारक अद्वैताचार्य रहते थे जो तपस्या किया करते थे (इंट्रोड्यूसिंग इंडिया, भाग, I, पृ० 74)।

सावथिदेश (या सावथिका)—यह स्थूल रूप से बंगाल में दक्षिण दिनाजपुर और उत्तर बोगरा (बांगला देश) का वाचक है (एपि० इं०, XXIII, भाग, IV, अक्टूबर, 1935, पृ० 103, गाओनरी से उपलब्ध तीन ताम्रपत्र।

सेनानिगाम—(बुद्धघोष[1] के अनुसार सेनानि-निगम)—यह एक मागधी

---

[1] **सारत्थप्पकासिनी, I, 172.**

गाँव था जहाँ पर एक रमणीक वन एवं नदी थी। यह एक समृद्ध गाँव था जहाँ पर भिक्षा सुलभ थी (विनय महावग्ग, I, पृ० 166-167)।

सेनापतिगाम—यह उरुविल्व में था जहाँ पर छः वर्षों तक बुद्ध गंभीर चिंतन में लीन थे। गवा नामक एक नगर-वधू ने एक वृक्ष पर समाधि के बाद बुद्ध के प्रयोग के लिए मोटा कपड़ा रख दिया था (बि० च० लाहा, ए स्टडी ऑव द महावस्तु, पृ० 154)।

यह उल्लेखनीय है कि सेनानिगाम, जो बुद्ध के युग में वास्तव में उरुवेला की प्रमुख बस्ती थी, संस्कृत बौद्ध ग्रंथों में वर्णित सेनापतिग्राम का वाचक है (ललित-विस्तर, मित्र द्वारा संपादित, पृ० 311; महावस्तु, II, 123)। बुद्धघोष के अनुसार प्राचीन काल में यह एक सैनिक पड़ाव के रूप में काम आता था (बे० मा० बरुआ, गया ऐंड बुद्धगया, पृ० 103)।

शाहपुर—आदित्यसेन के शाहपुर पाषाण-प्रतिमा अभिलेख में इसका उल्लेख है। यह गाँव सकरी नदी के दाहिने तट पर बिहार के दक्षिण-पूर्व में कोई 9 मील दूर पर स्थित है (का० इं० इं०, जिल्द, III)।

शिबसागर—संभवतः यह कामरूप के प्राचीन राज्य का अंग था। असम में शिवसागर ज़िला उत्तर में लखीमपुर और दरंग जिलों से, पूर्व में लखीमपुर और स्वतंत्र नाग कबीलों द्वारा अधिकृत पहाड़ियों से, दक्षिण में उक्त पहाड़ियों एवं नागा हिल्स (त्वेनसांग जिला, नागालैंड) से तथा पश्चिम में नवगाँव जिले से परिवृत है। शिबसागर के तीन प्राकृतिक भाग हैं। यहाँ का सबसे अधिक जन-संकुल एवं महत्वपूर्ण भाग नागा हिल्स एवं ब्रह्मपुत्र के बीच में स्थित एक चौड़ा एवं स्वास्थ्यकर मैदान है। ब्रह्मपुत्र एवं धनसिरि इस जिले में दो प्रसिद्ध नदियाँ हैं।

मैदान कछारी उत्पत्ति का है और इसमें विभिन्न अनुपातों में चिकनी मिट्टी एवं रेत का मिश्रण है। ब्रह्मपुत्र के समीप यहाँ पर शुद्ध रेत है और कहीं पर इतनी कड़ी मिट्टी है जो कृषि के सर्वथा अनुपयुक्त है।

शेष ऊपरी असम की भाँति शिबसागर में ठंडा शरद् और शीतल एवं सुहावना बसंत होता है। वर्ष भर में औसत वर्षा 90 से 95 इंच के मध्य घटती-बढ़ती रहती है। इस नगर में बिरले ही संहारक तूफान आया होगा, यद्यपि शेष असम की भाँति यहाँ भूकंप आ सकते हैं।

चावल यहाँ के निवासियों का प्रमुख भोजन, एवं कृषि प्रधान उद्यम है। अन्य महत्त्वपूर्ण फसलें चाय एवं बाग-बगीचों की फसले हैं। लाख एवं सिल्क के कीड़ों का पालना, मिट्टी के बैडोल बर्तनों, धातु के बर्तनों एवं आभूषणों का निर्माण, चटाई बनाना एवं बुनना शिबसागर के उद्योग हैं। इस जिले में तीन विभिन्न

प्रकार के सिल्क का उत्पादन होता है (बी० सी० एलेन, असम डिस्ट्रिक्ट गज़ेटियर्स जिल्द, VII, शिबसागर, 1906)।

शिबसागर में अहोम राजाओं द्वारा बनवाये गये अनेक मंदिर हैं, जो उच्च कोटि की पतली ईंटों से बने हैं और साधारणतया अध्युच्चित्र द्वारा अलंकृत हैं। ऊँटों की आकृतियाँ जो प्रायशः दृष्टिगत होती हैं, यह व्यंजित करती है कि ये मंदिर विदेशी कलाकारों के निर्देशन में बने थे, क्योंकि असम जैसे दलदली देश में ऊँट सदा ही अत्यंत दुर्लभ रहे हैं। वहाँ पर मंदिर साधारणतः विशाल तालबों के तट पर बने हुये थे। वहाँ पर एक जीर्ण छोटा मंदिर था जहाँ चुतिया पुरोहित प्रतिवर्ष देवता को नरबलि चढ़ाया करते थे।

सिद्धल––यह उत्तर-राढ़ में स्थित एक गाँव का नाम है और इसका वर्णन भोजवर्मन् के बेलाव ताम्रपत्र एवं भट्ट भवदेव के भुवनेश्वर अभिलेख में है। (न० गो० मजूमदार, इंस्क्रिप्शंस ऑव बंगाल, भाग, III, पृ० 16 और आगे)। कुछ लोग सिद्धल को बीरभूम जिले में अहमदपुर के समीप सिधल नामक वर्तमान् गाँव से समीकृत करते हैं (द्रष्टव्य, एच० के० मुखर्जी कृत बीरभूम विवरण, भाग, II, 234)।

शिला-संगम (या विक्रमशिला संघाराम)––इस पहाड़ी में शिला काट कर तराशी हुयी सात अत्यंत प्राचीन गुहाएँ हैं जिनमें देवताओं की प्रतिमाओं को रखने के ताख बने हुये हैं। सातवीं शती ई० में जब युवान-च्वाङ चम्पा आया था तब उसने इसका वर्णन किया था। कुछ लोगों ने इसकी पहचान पाथरघाटा पहाड़ी से की है (द्रष्टव्य विक्रमशिला)।

सिल्मिपुर––यह राजशाही मंडल के बोगरा जिले (बांगला देश) में है जहाँ पर जयपालदेव के काल का एक शिलापट्ट अभिलेख प्राप्त हुआ था (एपि० इं०, XIII, 283 और आगे)।

सिलुआ––यह बांगला देश के नोआखली में है। इस स्थल के प्राचीन अवशेषों में एक नीचा टीला है जिस पर किसी भीमकाय प्रतिमा के विशीर्ण टुकड़े हैं। इसकी पीठिका पर दूसरी शताब्दी ई० पू० का एक अभिलेख है (आर्क० स० इं०, एनुअल रिपोर्टस, 1930-34, पृ० 38)।

सिंहपुर––सिंहपुर की पहचान अनिश्चित है। कुछ लोग इस स्थान को सीहपुर से समीकृत करते हैं जो महावंश के अनुसार (VI. 35 और आगे) लाढ़ या राढ़ देश में स्थित था। संभवतः यह कलिंग का एक भाग था जिसमें राढ़ का एक भाग शामिल रहा होगा। अन्य लोगों के अनुसार यह शिकाकोल एवं नरसन्नपेत के मध्य आधुनिक सिंगुपुरम हो सकता है (एपि० इं०, IV, 143)। भोजवर्मन्

के बेलाव ताम्रपत्र से सिद्ध होता है कि सिंहपुर पर वर्मनों ने शासन किया था, (न० गो० मजूमदार, इंस्क्रिप्शंस ऑव बंगाल, जिल्द, III, पृ० 16)।

सिगटिया—यह वल्लालसेन के नैहटि ताम्रपत्र में वर्णित एक नदी का नाम है। यह खाण्डयिल्ला, जिसे आधुनिक खारुलिया से समीकृत किया जाता है, नामक गाँव के उत्तर से और बंगाल के मुर्शिदाबाद जिले में आंबयिल्ला (अम्बग्राम) नामक गाँव के पश्चिम से प्रवाहित होती है (न० गो० मजूमदार, इंस्क्रिप्शंस ऑव बंगाल, जिल्द, III, पृ० 71 और आगे)।

सितहाटि—यह वर्दबान जिले की कटवा तहसील में है। नैहटि और इस गाँव के बीच में बल्लालसेन का दान-पत्र उपलब्ध हुआ था (एपि० इं०, XIV, पृ० 156)।

सीतवन—यह एक सीतवन अर्थात् शवस्थान-कुंज था (सारत्थप्पकासिनी, III, पृ० 17, स्यामी संस्करण)। यह स्थल शवाधिस्थान (शव-क्षेत्र) के रूप में प्रयुक्त होता था, जहाँ शव स्वाभाविक रूप से नष्ट होने के लिए फेंक या छोड़ दिये जाते थे (संयुत्त, I, पृ० 210-11) या मांसभक्षी पशुओं, पक्षियों एवं कीड़ों के खाने के लिये डाल दिये जाते थे (दीघ निकाय, II, 295,296)। यह बाग एक प्राचीर से घिरा हुआ था और इसमें दरवाजे लगे थे जो रात में बंद रहते थे (संयुत्त, I, पृ० 211)। यह वेणुवन के आगे बैभार पहाड़ी के निकट उत्तर की ओर स्थित था। निश्चय ही इसकी स्थिति जरासंघ की बैठक के आगे थी (बि० च० लाहा, राजगृह इन ऍंश्येंट इंडिया, पृ० 10–11)।

सीताकुण्ड—यह चटगाँव जिले (बांगला देश) में स्थित एक गाँव है जो चटगाँव कस्बे से 24 मील दूर पर है। इसी नाम पर एक पर्वतमाला का नामकरण हुआ है, जो चटगाँव कस्बे से उत्तर की ओर फैली हुयी है जिसकी ऊँचाई सीताकुण्ड में सबसे अधिक हो जाती है। चटगाँव जिले में यह हिंदुओं का पवित्रतम स्थान है क्योंकि ऐसी अनुश्रुति है कि वनवास काल में राम और सीता इस पहाड़ी पर और इसके निकट घूमे थे और सीता ने यहाँ के तप्तजलकुंड में स्नान किया था जो उनके नाम से संबद्ध है।

इसी नाम का एक गाँव मुंगेर तहसील में भी है जो मुंगेर शहर से चार मील पूरब में स्थित है जहाँ सीताकुण्ड नामक गरम जल का एक कुंड है, जिसका नामकरण रामायण के सुप्रसिद्ध उपाख्यान के आधार पर हुआ है। विस्तृत विवरण के लिए द्रष्टव्य, ज० ए० सो० बं०, 1890;ओ 'मैल्ली कृत बिहार ऐंड उड़ीसा डिस्ट्रिक्ट गज़ेटियर्स, मुंगेर, पृ० 259-262)।

सोमपुर—पाहाड़पुर देखिए।

श्रीहट्ट—योगिनीतंत्र (2.1, 112-113; 2.2.119) में इसका वर्णन है। सिल-हट (बांगला देश) सुरमा नदी की निचली घाटी में स्थित है। इसके उत्तर में खासी और जैन्तिया पहाड़ियाँ, पूरब में कछार, दक्षिण में टिपरा पहाड़ी (जो पहले एक रियासत थी) और पश्चिम में टिपरा और मेमनसिंह जिले (बांगला देश) हैं। यह एक विस्तीर्ण और समतल घाटी है जिसके प्रत्येक ओर बड़ी ऊँची पहाड़ियाँ हैं। बरक यहाँ का प्रधान नदी है जो मणिपुर, कछार और सिलहट से बहती हुई अंत में भैरब बाजार के समीप ब्रह्मपुत्र के पुराने नदी तल में गिरती है। सिलहट की जलवायु ऊष्णतर है और असम की घाटी की तुलना में कम नम नहीं है (बी० सी० एलेन, असम डिस्ट्रिक्ट गज़ेटियर्स, जिल्द, II, सिलहट)।

श्रीनगरभुक्ति—देवपालदेव के मुंगेर दान ताम्रपत्र में इसका वर्णन है जिसे चार्ल्स विल्किसन ने आधुनिक पटना से समीकृत किया है।

शृंङ्गवेर—इसे राजशाही जिले (बांगला देश) की नतोर तहसील में स्थित सिंगरा थाने से समीकृत किया गया है (इं० हि० क्वा०, XIX)।

सुह्‌म—सुह्मदेश एक अधिक व्यापक क्षेत्र का अंग था, जिसे बाद में राढ़ कहा जाता था। यह गंगातट पर था (धोयी कृत पवनदूत, V. 27)। सुब्भभूमि सुह्मों का देश ही प्रतीत होता है। महाकाव्यों और पुराणों के अनुसार सुह्मदेश बंग एवं पुण्ड्र से पृथक् था। महाभारत में दिये गये भीम की पूर्वी विजय के विवरण में सुह्मों के देश को बंग एवं ताम्रलिप्त से भिन्न बतलाया गया है। महा भारत पर नीलकण्ठ की टीका से हमें ज्ञात होता है कि सुह्म एवं राढ़गण एक ही लोग थे। जैन ग्रंथ आयारांग-सुत्त से हमें ज्ञात होता है कि सुह्मदेश राढ़ देश का एक भाग था। महाभारत (सभापर्व, अध्याय, 30, 16) से हमें ज्ञात होता है कि पाण्डवों की विजयिनी सेना सुह्म गयी थी। सुह्म पर पाण्डु (महाभारत, आदिपर्व, 113) और कर्ण ने क्रमश: विजय प्राप्त की थी (महाभारत, कर्णपर्व, 8, 19)। जिस समय बुद्ध सुह्म में थे, उन्होंने जनपद-कल्याणी सुत्त का प्रवचन किया था (जातक, I, 393)। रघु के प्रति समर्पण करके सुह्म के निवासियों ने अपनी रक्षा की थी (रघुवंश, 49, 35)। रघु ने कापिसा नदी पार की और कलिंग की ओर आगे बढ़े। उत्कल-नरेश ने उनका पथ-प्रदर्शन किया था। (वही, 49, 38)। मित्रगुप्त की यात्रा के विवरण में सुह्म देश का उल्लेख है जहाँ पर उस समय तुंगधन्वा नामक राजा शासन करता था (दशकुमारचरित, छठवाँ उच्छ्वास, पृ० 102)। उस राजा ने गंगा के पवित्र जल में उपवास करके प्राणोत्सर्ग किया था (दशकुमारचरित, पृ० 119)। राजशेखर की काव्यमीमांसा (अध्याय, 17) में

सुह्म् सहित अनेक देशों का उल्लेख है। हर्षचरित (षष्ठम उच्छवास) के अनुसार सुह्मों के राजा देवसेन की हत्या देवकी ने की थी।

दशकुमारचरित् में दामलिप्ति का वर्णन सुह्मों के एक नगर के रूप में किया गया है (अध्याय, VI; ज० ए० सो० वं०, 1908, 290, नोट)। सुह्मदेश में दामलिप्ति नगर के बाहर एक महान् समारोह का आयोजन किया गया था। यहाँ के निःसंतान राजा तुंगधन्वा ने दो संतानों की प्राप्ति के लिये पार्वती के चरणों की वंदना की थी (दशकुमारचरितम् विल्सन संस्करण, पृ० 141-142)।

शुक्तिमत पर्वतमाला—कनिंघम ने इसे सेहोआ और कांकर के दक्षिण में स्थित उन पहाड़ियों से समीकृत किया है जो छत्तीसगढ़ को बस्तर से पृथक करती हैं (आर्क० स० रि०, XVII, पृ० 24, 26)। बेगलर ने इस पर्वतमाला को हजारीबाग जिले के उत्तर में स्थित बतलाया है (वही, VIII, पृ० 124-125)। पार्जिटर ने इसकी पहचान गारो, खासी और टिपरा पहाड़ियों से की है (मार्कण्डेय पुराण, 285, 306, नोट्स)। चि० वि० वैद्य ने इसे पश्चिमी भारत में स्थित बतलाया है और इसकी पहचान काठियावाड़ पर्वतमाला से की है (एपिक इंडिया, पृ० 276)। अन्य लोगों ने शुक्तिमत को सुलेमान पर्वतमाला से समीकृत किया है (जेड० डी० एम० जी०, 1922, पृ० 281, नोट)। कुछ लोगों ने उस पर्वतमाला को शुक्तिमत नाम दिया है जो मध्यप्रदेश के रायगढ़ में कुमारी नदी द्वारा सिंचित शक्ति से मानभूम में डलमा पहाड़ियों तक फैली हुयी है। बावला की सहायक नदियों द्वारा परिक्षालित संथाल परगने की पहाड़ियों का भी शायद यह नाम है (हे० चं० रायचौधरी, स्टडीज़ इन इंडियन ऐंटिक्विटीज, पृ० 113 120)।

सुल्तानगंज—यह गाँव भागलपुर जिले में गंगा के निकट स्थित है। यहाँ पर बौद्ध विहारों के विस्तृत अवशेष हैं। रेलवे स्टेशन के समीप एक प्राचीन स्तूप है। यहाँ पर दो बड़ी स्फटिक-शिलाएँ हैं, जिनमें से एक पर गैविनाथ (धैवीनाथ) महादेव का प्रसिद्ध मंदिर है, जो हिंदुओं की दृष्टि में एक अत्यंत पवित्र स्थान है (बर्न कृत बिहार डिस्ट्रिक्ट गजेटियर्स, भागलपुर, पृ० 175)।

सुमागधा—यह राजगृह के समीप एक तालाब था (संयुत्त निकाय, V, पृ० 447)।

सुंभ—यह सुंभों का देश था जिसकी राजधानी सेतक थी। कुछ लोगों ने इसे सुम्ह (आधुनिक मिदनापुर जिला, प० बंगाल में) से समीकृत किया है, किंतु इसकी स्थिति अनिश्चित है। इस देश में बुद्ध आये थे जो इस देश में देसक

शहर के निकट एक जंगल में रुके थे जहाँ पर उन्होंने जनपदकल्याणीसुत्त विषयक एक कहानी कही थी (कावेल, जातक, I, पृ० 232)।

सुंदरबन—सुंदरबन (बंगाल) में एक दानपत्र की उपलब्धि बतलायी जाती है जो अब खो गया है। सुंदरबन का वन्य क्षेत्र पहले समतट या बागड़ी (व्याघ्रतटी) में संमिलित था। सातवीं शती ई० में चीनी तीर्थ यात्री युवान-च्वाङ् ने समतट में अनेक हिंदू, बौद्ध और जैन मंदिर देखे थे, किंतु अभी तक उनका कोई पता नहीं लग पाया है। यहाँ से कुछ अलंकृत ईंटें, पत्थर की मूर्तियों के टुकड़े, हुविष्क और स्कन्दगुप्त की मुद्राएँ, सूर्य की एक प्रतिमा और एक नवग्रह-पट्ट उपलब्ध हुये हैं (इंट्रोड्यूसिंग इंडिया, भाग, I, पृ० 84)।

सुर्मा—यह असम की दूसरी महत्त्वपूर्ण नदी है। इसे मेघना का ऊपरी प्रवाह समझा जाता है। हबीबगंज में बराक में संगमित होने के पूर्व इसमें दाहिनी ओर से पाँच सहायक नदियाँ मिलती हैं। (विस्तृत विवरण के लिये द्रष्टव्य, वि० च० लाहा, रिवर्स ऑव इंडिया, पृ० 34)।

सुसुनिया पहाड़ी (देखिये पुष्करण)—यह प० बंगाल के बाँकुड़ा जिले में स्थित एक पहाड़ी का नाम है जो बाँकुडा से लगभग 12 मील दूर पश्चिमोत्तर में स्थित है (एपि० इं०, XIII, पृ० 133)।

सुवर्णपुर—तेल और महानदी के संगम पर स्थित यह आधुनिक सोनपुर शहर ही है (का० इं० इं०, XXIII, जिल्द, VII; ज० बि० उ० रि० सो०, II, 52; भंडारकर की तालिका, संख्या, 1556)।

सुवर्णरेखा—यह नदी मानभूम जिले से निकलती है और जमशेदपुर से होती हुयी बंगाल की खाड़ी में गिरने के लिए आगे धलभूम और मिदनापुर जिले से प्रवाहित होती है (लाहा, रिवर्स ऑव इंडिया, पृ० 43)।

तर्पनदीधि—यह गाँव दिनाजपुर जिले (बांगला देश) में स्थित है, जहाँ से लक्ष्मणसेन का एक दान ताम्रपत्र उपलब्ध हुआ था (एपि० इं०, XII, पृ० 6)।

तर्पणघाट—यह दिनाजपुर जिले (बांगला देश) के नवाबगंज थाने में है। यह वह स्थान है जहाँ रामायण के प्रणेता महर्षि वाल्मीकि ने स्नान किया था और धार्मिक कृत्य संपादित किये थे (इंट्रोड्यूसिंग इंडिया, भाग, I, पृ० 80)।

ताम्रलिप्ति—ताम्रलिप्ति प० बंगाल के मिदनापुर जिले में रूपनारायण और हुगली के संगम से लगभग 12 मील दूर पर स्थित तामलुक ही हैं। यह अब मिदनापुर जिले में सिलै (सिलावती) और दलकिसोर (द्वारिकेश्वरी) के संयुक्त प्रवाह रूपनारायण के पश्चिमी तट पर स्थित है। रघुवंश (IV. 38)

के अनुसार तामलुक कपिशा नदी के तट पर स्थित है, जिसे पार्जिटर ने मिदनापुर जिले से प्रवाहित होने वाली कसई नदी से समीकृत किया है। इस प्राचीन नगर का वर्णन महाभारत (भीष्मपर्व, अध्याय, 9; सभापर्व, अध्याय, 29, 1094-1100) में है, जिसके अनुसार ताम्रलिप्त और सुह्म दो पृथक देश थे। टॉलेमी ने इसे टैमेलाइटीज (Tamalites) कहा है। दूधपानी शिलालेख (एपि० इं०, II, 343-45) के अनुसार तीन भाई व्यापार करने के लिये अयोध्या से ताम्रलिप्ति गये और उन्होंने प्रभूत धन अर्जित किया। छठीं शताब्दी ईसवी में यह सुह्म के प्राचीन राज्य की राजधानी थी और मौर्यों के अधीन यह मगध राज्य का एक भाग था (स्मिथ, अशोक, पृ० 79)। छठीं शती ईसवीं में होने वाले दशकुमारचरित् के लेखक दण्डिन् के अनुसार, विन्दुवासिनी का मंदिर ताम्रलिप्ति में स्थित था जहाँ पाँचवी शताब्दी ईसवी में चीनी तीर्थयात्री फाह्यान् और सातवीं शताव्दी ईसवी में युवान-च्वाङ् गये थे। यह प्राचीन मंदिर रूपनारायण नदी के क्रोध से नष्ट हुआ था।

फाह्यान् ने ताम्रलिप्ति को चम्पा के पूर्व में 50 योजन दूर पर समुद्र-तट पर स्थित बतलाया है (कनिंघम, एं० ज्यॉ० इं०, एस० एन० मजूमदार संस्करण, पृ० 732)। सातवीं शती इसवीं में इत्सिंग ताम्रलिप्ति के बराह नामक एक प्रसिद्ध विहार में रहता था। परंपरानुसार ताम्रलिप्ति या दमलिप्ति मयूरध्वज और उसके पुत्र ताम्रध्वज की राजधानी थी जो अर्जुन और कृष्ण के साथ लड़े थे। कथासरित्सागर (अध्याय, 14) के अनुसार ताम्रलिप्ति चौथी से बारहवीं शती ईसवी तक एक समुद्री बंदरगाह और वाणिज्य का एक केंद्र बना रहा। वायुपुराण के अनुसार गंगा इससे होकर बहती है। ब्रह्मपुराण में वर्णित बर्गभीमा का मंदिर, जो एक प्राचीन विहार था, अब भी ताम्रलिप्ति (तामलुक) में स्थित है। जैन धर्मग्रंथ प्रज्ञापणा में ताम्रलिप्ति का उल्लेख मिलता है। महावंस (XI, 38; XIX, 6) से यह ज्ञात होता है कि अशोक के धर्मप्रचारकों ने लंका के लिये इसी बंदरगाह से प्रस्थान किया। ताम्रलिप्ति, जिसे चीनी तन-मो-ली-ती (Tan-mo-li-ti) कहते थे, की परिधि 1400 या 1500 ली थी। यहाँ की भूमि नीची और उर्वर थी, जिस पर निरंतर खेती होती थी। यहाँ की जलवायु उष्ण थी। यहाँ के निवासी निर्भीक एवं वीर थे। यहाँ पर कुछ संघाराम एवं मंदिर थे (बील, बुद्धिस्ट रिकार्डस ऑव द वेस्टर्न वर्ल्ड, II, 200)। विस्तृत विवरण के लिये द्रष्टव्य, इंट्रोड्यूसिंग इंडिया, भाग, I, पृ० 73)।

1940 में पुरातत्व-विभाग द्वारा तामलुक के प्राचीन स्थल पर उत्खनन-कार्य किया गया था। यहाँ की पुरानिधियों में विचित्र आकार वाले मृण्पात्र थे

जिनमें से कुछ अच्छी दशा में थे। तामलुक से उपलब्ध नमूनों की कोई निश्चित तिथि बताना कठिन है, किंतु निश्चय ही ये मिस्र एवं भारतीय बंदरगाह ताम्रलिप्ति के बीच व्यापारिक संबंधों के साक्ष्य प्रस्तुत करते हैं (जे० पीएच० फोगेल, नोट्स ऑन टॉलेमी, बु० स्कू० ओ० ऐं० अ० स्ट०, XIV, भाग, I, पृ० 82)।

ताराचण्डी—यह दक्षिण बिहार के शाहाबाद जिले में सहसराम (सासाराम) के निकट स्थित है। यहाँ पर शिला पर उत्कीर्ण एक अभिलेख उपलब्ध हुआ है (एपि० इं०, V, परिशिष्ट, पृ० 22)।

तेत्रावान—यह गाँव बिहार तहसील के दक्षिण में, गिरियेक से 10 मील पूर्वोत्तर में और बिहार से 6 मील दक्षिण-पूर्व में स्थित है। इसमें प्राचीन बौद्ध-भवनों के स्थानों को लक्षित करने वाले कई टीले हैं। यहाँ का विहार महत्त्वपूर्ण था (आर्क्० स० इं०, रिपोर्ट्स, जिल्द, XI; ज० ए० सो० बं०, जिल्द, XLI, 1872)।

तेजपुर—यह असम के दरंग जिले का मुख्यावास है जहाँ से वल्लभदेव के पाँच ताम्रपत्र उपलब्ध हुये थे (एपि० इं०, V. 181)।

तीरभुक्ति (तिरहुत)—यह उत्तर में हिमालय से, दक्षिण में गंगा, पश्चिम में गंडक और पूर्व में कोसी नदी से घिरा हुआ था। इसमें चंपारन, मुजफ्फरपुर और दरभंगा के आधुनिक जिले तथा नेपाल तराई की पट्टी संमिलित थे। परंपरा के अनुसार तीरभुक्ति का अर्थ उस भूमि से है जिसमें तीन महान् यज्ञाग्नियाँ संपादित की गयीं थीं (देवीपुराण, अध्याय, 64)। कनिंघम (आर्क्० सं० इं०, रिपोर्ट्स, जिल्द, XVI) की धारणा है कि छोटी गंडक और बाघमती नदियों में स्थित क्षेत्र तीरभुक्ति में संमिलित थे (ओ 'मैल्ली, बंगाल डिस्ट्रिक्ट गजेटियर्स, दरभंगा, पृ० 157-158; ओ 'मैल्ली, बंगाल डिस्ट्रिक्ट गजेटियर्स, पृ० 159-160, मुजफ्फरपुर)।

तोसड्ड—इसे पटना ई० एस० ए० (भूतपूर्व रियासत, उड़ीसा में) में तोसरा गाँव से समीकृत किया जा सकता है। कुछ लोग इसे अरंग के दक्षिण-पूर्व में लगभग 30 मील दूर दुमरपल्ली के निकट तुसदा से समीकृत करते हैं (एपि० इं०, XXIII, भाग, I, 20)।

त्रिस्रोता—कालिकापुराण (अध्याय, 78, 43; तुलनीय, 78, 60) में इस नदी का वर्णन है जो इसमें स्नान करने वाले व्यक्ति की मनोकामना पूर्ण करती है।

त्रिवेणी—इसे मुक्तवेणी भी कहा जाता है (बृहत् धर्म पुराण, पूर्व खण्ड, अध्याय, 6)। यह वर्तमान् बंदेल जंक्शन स्टेशन से 5 मील दूर है। भागीरथी और

सरस्वती के संगम पर स्थित यह हिंदुओं का एक तीर्थस्नान है। यह एक प्राचीन स्थान है क्योंकि इसका वर्णन धोयी के पवनदूत (श्लोक, 33) । में है। कालिदास ने अपने रघुवंश (XIII. 54 और आगे) में इस नदी का उल्लेख किया है। मुस्लिम इतिहासकारों ने इसे तिरपाणि या फिरोजाबाद कहा है। मुसलमान काल में यह एक महत्त्वपूर्ण नगर एवं बंदरगाह था। किसी समय यह संस्कृत विद्या का केंद्र था। मध्ययुगीन बंगाली कवि मुकुंदराम ने इसका वर्णन एक पुण्यस्थल के रूप में किया है। यहाँ पर सप्तग्राम के विजेता जफर खाँ का मकबरा है जो एक हिंदू-मंदिर के ऊपर बनाया गया था जिसमें महाकाव्यों के कुछ दृश्य उत्कीर्ण थे (इंट्रोड्यूसिंग इंडिया, भाग, I, 75-76)।

उदेन—वैशाली के पूर्व में स्थित यह एक चैत्य या मंदिर था (दीघ, II, 102-103, 118)।

उदुंबरपुर—यह मगध जनपद में एक नगर था जिसका वर्णन मञ्जु-श्रीमूल-कल्प में हुआ है (गणपति शास्त्री संस्करण, पृ० 633—मागधम् जनपदम् प्राप्य पुरे उदुंबराह्वये)।

उक्काचेला—यह वज्जि जनपद में गंगा नदी के तट पर स्थित था। (मज्झिम निकाय, I, पृ० 225-27)। अपने दो प्रमुख शिष्यों, सारिपुत्त एवं मोग्गल्लान की मृत्यु के थोड़े ही समय बाद, तथागत भिक्षुओं की एक बड़ी संख्या के साथ यहाँ रुके थे (संयुत्त निकाय, V, पृ० 163)।

उपतिस्सगाम—यह गाँव राजगृह के समीप था (धम्मपद कामेंट्री, I, 88)।

उप्यलिका—यह गाँव कौशाम्बी-अष्टगच्छखण्डल से संबंधित था जो पौण्ड्रवर्धनभुक्ति के अधःपट्टन-मण्डल में था (न० गो० मजूमदार, इंस्क्रिप्शंस ऑव बंगाल, जिल्द, III, पृ० 15 और आगे)।

उरेन—यह गाँव मुंगेर तहसील में कजरा रेलवे स्टेशन से तीन मील पश्चिम में स्थित है। यहाँ पर कई बौद्ध अवशेष हैं, जिनका कर्नल वैड्डेल ने सर्वप्रथम पता लगाया था। विस्तृत विवरण के लिए द्रष्टव्य, ज० ए० सो० बं०, जिल्द, I, 1892 में वैड्डल का लेख, 'डिस्कवरी ऑव बुद्धिस्ट रिमेंस ऐट माउंट उरेन इन मुंगेर (मुंगेर) डिस्ट्रिक्ट, ओ, 'मैल्ली कृत, बिहार ऐंड उड़ीसा डिस्ट्रिक्ट गजेटियर्स, पृ० 263-67)।

ऊर्त्तिविषय—इसे क्योंझर (जो पहले एक रियासत थी) में ऊर्त्ति नामक एक गाँव से समीकृत किया जा सकता है जो वैतरणी नदी के उत्तरी तट पर खिचिंग के पश्चिमोत्तर में लगभग 12 मील दूर पर स्थित है (एपि० इं०, XXV, भाग, IV, अक्टूबर, 1939)।

उरुवेला (उरुविल्व)—यह मगध में था। बोधिसत्त्व ने संन्यासी जीवन ग्रहण करने के पश्चात् ध्यान एवं संबोधि प्राप्ति के लिए इस स्थान को सबसे अधिक उपयुक्त स्थान चुना था (जातक, I, 56)। बोधि प्राप्त करने के ठीक पश्चात् बुद्ध नेरञ्जना नदी के तट पर अजपाल वटवृक्ष के नीचे उरुवेला में रहते थे (संयुत्त, I, 103 और आगे; 122, V, 167, 185)। यहाँ पर उनसे कुछ वयोवृद्ध ब्राह्मण मिले थे, और उनके साथ उन्होंने वृद्धों का आदर करने के विषय में विवाद किया था (अंगुत्तर, II, 20 और आगे)। इसिपतन में अपने प्रथम चालीस दिन व्यतीत करके बुद्ध पुनः उरुवेला आये थे (जातक, I, 86)। उरुवेला आते समय उन्होंने कप्पासिय नामक एक उद्यान में तीन भद्दवग्गिय राजकुमारों का धर्म-परिवर्तन किया था। उरुवेला पहुँच कर उन्होंने तीन-जटिल बंधुओं को उनके अनुगामियों सहित गयासीस में धर्म-परिवर्तित किया था (जातक, I, 82; IV, 180)। राजगृह और उरुवेला के मध्य आराल कालाम एवं उद्र रामपुत्र नामक दो व्यक्ति रहते थे, जिन्होंने योग में शिष्यों को प्रशिक्षण देने के लिये विद्यालय खोले थे (मज्झिम, I, 163 और आगे; जातक, I, 66 और आगे; ललितविस्तर, 243 और आगे; महावस्तु, II, 118; III, 322; बुद्धचरित, VI, 54; वाटर्स, ऑन युवान-च्वाङ, II, 141)। बुद्ध यहाँ पर आये थे और यहाँ पर उन्होंने सुन्दर वृक्ष, मनोहर झीलें, समतल मैदान और नैरञ्जना नदी के निर्मल जल को देखा था (महावस्तु, II, 123)। उरुवेला या उरुवेल को बोध-गया के समीप उरेल नामक आधुनिक गाँव से समीकृत किया जा सकता है (द्रष्टव्य, आर्क० स० इं०, एनुअल रिपोर्ट, 1908-9, पृ० 139 और आगे)।

वदथिक—यह नागार्जुनि पहाड़ियों में स्थित एक गुहा है जिसमें दशरथ के अभिलेख हैं।

बहियका—यह गया के समीप नागार्जुनि पहाड़ियों में स्थित एक गुहा है जिसमें दशरथ के अभिलेख हैं।

वैभारगिरि—(पालि, वेभार; संस्कृत व्यवहार)—यह मगध में है। यह पहाड़ियों से घिरे हुये गिरिव्रज नामक प्राचीन नगर को परिवेष्टित करनेवाली पाँच पहाड़ियों में से एक है (तुलनीय, विमानवत्थु कामेंट्री, पृ० 82)। यह दक्षिण और पश्चिम की ओर फैली हुयी है, जिससे अंततः सोणगिरि के साथ राजगिरि का पश्चिमी प्रवेशद्वार बनता है। जैन ग्रंथ, विविधतीर्थकल्प में वैभारगिरि को एक पवित्र पहाड़ी के रूप में बतलाया गया है जिसमें गरम और शीतल जल-कुंडों (तप्तशीताम्बुकुण्डम्) के निर्माण की संभावनाएँ व्यक्त की जाती हैं। बुद्धघोष ने तपोदा नदी के उद्गम-स्थल तप्त-जलकुंडों को बेभार पर्वत से संबद्ध

बतलाया है। यह वैहार पर्वत ही है, महाभारत में जिसका वर्णन विपुलशैल के रूप में हुआ है। राजगृह नगर, त्रिकूट, खण्डिक और अन्य प्रदीप्त शिखरों के सहित वैभारगिरि की घाटी में देदीप्यमान था। इस पहाड़ी में कुछ अँधेरी गुफाएँ भी थीं। इस पहाड़ी के निकट सरस्वती तथा अन्य सुखद जलवाली सरिताएँ थीं जिनमें रोगों को दूर करने की शक्ति थी। इस पहाड़ी पर बौद्धों ने विहार और जैनियों ने इस पर निर्मित मंदिरों में तीर्थंकरों की प्रतिमाएँ अधिष्ठित की थीं। वेभार एवं पाण्डव दो ऐसी पहाड़ियाँ प्रतीत होती हैं, जो गिरिव्रज के उत्तर की ओर स्थित थीं और अपनी शैलगुहाओं के लिए विख्यात् थी (थेरगाथा, XLI, श्लोक, 1)। वैभ्राज निश्चय ही राजगृह में स्थित वैभारगिरि है।

बहुत बाद की अनुश्रुतियों पर विश्वास करके जैनियों ने राजगृह को परिवेष्टित करने वाली सात पहाड़ियों की स्थिति इस प्रकार बतलायी है : यदि कोई व्यक्ति उत्तर से राजगृह में प्रवेश करे तो दाहिनी ओर स्थित पहाड़ी वैभारगिरि है; इसके बाँई ओर विपुलगिरि; विपुलगिरि के समकोण पर वैभारगिरि के समानांतर दक्षिण की ओर नाले वाली पहाड़ी रत्नगिरि है; रत्नगिरि का पूर्वी प्रसार चठागिरि और चठागिरि के बाद स्थित पहाड़ी शैलगिरि है। चठागिरि के सामने उदयगिरि और रत्नगिरि के दक्षिण और उदयगिरि के पश्चिम में स्थित पहाड़ी सोणगिरि है (लाहा, राजगृह इन एंश्येंट लिटरेचर, मे० आर्क्० स० इं०, सं० 68, पृ० 3)।

वैशाली—विशाल नगरी वैशाली लिच्छवियों की राजधानी थी जो छठवीं शताब्दी ई० पू० में पूर्वी भारत के एक महान् एवं शक्तिशाली जन थे। भारतीय इतिहास में यह लिच्छवि राजाओं की राजधानी तथा महान् एवं शक्तिशाली वज्जिसंघ के मुख्यावास के रूप में विश्रुत है। कनिंघम ने इस विशाल नगरी को तिरहुत में मुजफ्फरपुर जिले में स्थित बसाढ़ नामक वर्तमान् गाँव से समीकृत किया है जो प्राचीन काल में वैशाली की स्थिति को लक्षित करता है (आर्क्० सर्वे रिपोर्ट, जिल्द, I, पृ० 55-56 और जिल्द, XVI, पृ० 6)। विवियेन डी सेंट मार्टिन उनसे सहमत हैं। इस निष्कर्ष पर पहुँचने के लिये कनिंघम द्वारा प्रस्तुत साक्ष्य अधिक पूर्णता एवं स्पष्टता के साथ नहीं रखे गये थे। रिज़ डैविड्स का कथन है कि वैशाली तिरहुत में ही कहीं पर स्थित थी (बुद्धिस्ट इंडिया, पृ० 41)। डा० डब्ल्यू हो ने वैशाली को छपरा या सारन जिले में चेराँद से समीकृत करने की चेष्टा की है (ज० ए० सो० बं०, 1900, जिल्द, LXIX, भाग, I, पृ० 78-80, 83)। वी० ए० स्मिथ ने अपने वैशाली-विषयक निबंध में इस समीकरण को पूर्णतः अमान्य बतलाया है (ज० रा० ए० सो०, 1902, पृ० 267, नोट, 3)।

वह यह सिद्ध करने में सफल रहे हैं कि आधुनिक बसाढ़ का वैशाली से कनिंघम द्वारा प्रस्तावित समीकरण असंदिग्ध है। यह समीकरण और निश्चयात्मक रूप से डा० टी० ब्लाख द्वारा 1903-04 में इस स्थान पर किये गये पुरातत्वीय उत्खननों से सिद्ध होता है। ब्लाख ने राजा विशाल का गढ़ नामक एक टीले को खोदा था और परीक्षणार्थं केवल आठ खंत्तियाँ खोदी गयी थीं। यहाँ पर तीन स्पष्ट परतें प्राप्त हुयीं थीं, जिनमें सबसे ऊपरी परत इस स्थान के मुसलमानयुगीन आवास की है; दूसरी परत, जो धरातल से लगभग 5 फीट गहरी है, गुप्त सम्राटों के काल की तथा तीसरी और अधिक गहरी है जो प्राचीन युग की किसी अनिश्चित तिथि की है (आर्क्० स० इं०, एनुअल रिपोर्ट, 1903-04, पृ० 74)। दूसरे परत या स्तर की उपलब्धियाँ, विशेषत: एक छोटे कक्ष से उपलब्ध मिट्टी की सात सौ मुहरों का एक ढेर मूल्यवान है जो स्पष्टत: पत्रों या अन्य साहित्यिक आलेखों के ऊपर लगायी जाती थीं। ये अंशत: अधिकारियों और अंशत: अशासकीय व्यक्तियों ——साधारणत: व्यापारियों या श्रेष्ठियों से संबंधित थीं, किंतु एक नमूने पर दोनों ओर त्रिशूलसहित लिंग की आकृति है और इस पर आम्राटकेश्वर विरुद अंकित है जो स्पष्टत: किसी मंदिर से संबंधित थी (आर्क्० स० इं०, एनुअल रिपोर्ट, 1903-4, पृ० 74)।

कतिपय मुहरों पर गुप्त-राजाओं, रानियों एवं राज-कुमारों के नाम और पुरालिपि-साक्ष्य यह स्पष्टत: प्रदर्शित करते हैं कि ये चौथी और पाँचवीं शताब्दी की थीं, जब गुप्त सम्राट् राज्य कर रहे थे (वही, पृ० 110)। कुछ मुहरों से व्यक्त होता है कि उस प्राचीन काल में भी इस प्रांत को तीरभुक्ति की संज्ञा दी गयी थी, और कुछ में स्वयं नगर का नाम वैशाली लिखा हुआ है। एक गोलाकार मृण्मुहर पर पुष्प-समूह के बीच में दो परिचारकों से सेवित एक खड़ी हुयी नारी-प्रतिमा अंकित है जिसके नीचे दो पड़ी पंक्तियों में यह लिखा हुआ है, "वैशाली के ···गृहस्थों की मुहर" (वही, पृ० 110)। इनसे वैशाली से इस स्थान की पहचान सिद्ध होती है और अब इस निष्कर्ष पर संदेह करने का कोई आधार नहीं प्रतीत होता है। यह दयनीय है कि अर्थाभाव के कारण पुरातत्व विभाग ने इस स्थान का उत्खनन बंद कर दिया है।

क्षेत्र के विशाल या लंबा-चौड़ा होने के कारण इसका वैशाली नाम पड़ा है। रामायण (अध्याय, 47, श्लोक, 11, 12) के अनुसार इसकी स्थापना इक्ष्वाकु और अलम्बुषा नामक एक दिव्य-अप्सरा के एक पुत्र ने की थी। उसके नाम विशाल के आधार पर इस शहर का नाम विशाला पड़ा। विष्णुपुराण (विल्सन संस्करण, भाग, III, पृ० 246) में कहा गया है कि अलम्बुषा द्वारा उत्पन्न तृणबिन्दु का विशाल नामक एक पुत्र था, जिसने इस नगर की स्थापना की थी।

पाँचवीं शताब्दी ई० में चीनी तीर्थयात्री फाह्यान् वैशाली आया था। उसके अनुसार इसके उत्तर में एक विशाल वन था जिसमें दो गलियारे वाला एक बिहार था जहाँ पर बुद्ध रहते थे और आनन्द के शरीरार्ध के ऊपर निर्मित एक स्तूप था (लेग्गे, फाह्यान्, पृ० 72)। युवान-च्वाङ् नामक एक अन्य चीनी तीर्थयात्री जो सातवीं शताब्दी ई० में यहाँ आया था, ने बतलाया है कि वशाली के प्राचीन नगर की नींव की परिधि 60 या 70 ली थी और महल्ल के नगर की परिधि 4 या 5 ली थी (वाटर्स, ऑन युवान-च्वाङ् भाग, II, पृ० 63)। इस नगर की परिधि 5000 ली से अधिक थी और यह आमों, केलों तथा अन्य फलों से युक्त एक अत्यंत उपजाऊ क्षेत्र था। यहाँ के लोग ईमानदार, सत्कार्यों में अभिरुचि रखने वाले और ज्ञान का समादर करने वाले थे। विश्वासों में वे धर्मी एवं विधर्मी दोनों ही थे (वही, II, पृ० 63)। तिब्बती विवरण (दुल्व, III, पृ० 80) के अनुसार वैशाली में तीन विषय (जिले) थे। पहले जिले में सुनहली मीनारों वाले 7000 घर; बीच के जिले में रजत मीनारों वाले 14000 घर और तीसरे जिले में ताम्र मीनारों वाले 21000 घर थे। इनमें उच्च, मध्य एवं निम्नवर्ग के लोग अपनी मर्यादा के अनुसार रहते थे (राकहिल, लाइफ ऑव द बुद्ध, पृ० 62)। बुद्ध के काल में यह नगर तीन प्राचीरों से परिवृत था जो एक दूसरे से एक गावूत (गव्यूति) की दूरी पर थीं और तीन स्थानों पर पहरे की मीनारों और इमारतों सहित फाटक बने हुये थे (जातक, I, 504)।

वैशाली एक वैभवपूर्ण, समृद्धिशाली, जनसंकुल और प्रचुर खाद्य-पदार्थों वाला नगर था। यहाँ पर अनेक ऊँचे भवन, कँगूरेदार इमारतें प्रमद-वन और पुष्कर थे (विनय टेक्स्ट्स, सैं० बु० ई०, भाग, III, पृ० 171; तुलनीय, ललित-विस्तर, लेफमान संस्करण, अध्याय, III, पृ० 21)। यह नगर जैन एवं बौद्ध दोनों ही धर्मों के प्रारंभिक इतिहास के साथ घनिष्ठ रूप से संबंधित है। इसके साथ पूर्वोत्तर भारत में 500 ई० पू० में विकसित होने वाले दो महान् धर्मों के प्रवर्त्तकों की पुण्य-स्मृतियाँ जुड़ी हुयी हैं।

जैन धर्म के प्रवर्त्तक महावीर को वैशाली अपना ही नागरिक मानती है। इसीलिए उन्हें वेसालिये या वैशालिक—वैशाली नगर का निवासी कहा जाता था (जैन सूत्राज़, सैं० बु० ई०, भाग, I, इण्ट्रोडक्शन, XI,)। वैशाली के उपकण्ठ में स्थित कुण्डग्राम वास्तव में उनका जन्म स्थान था (वही, XXII, पृ० XXI)। अपने तपस्वी जीवन में भी उन्होंने अपने जन्म-स्थान की उपेक्षा नहीं की और उन्होंने कोई बारह वस्सा काल वैशाली में व्यतीत किये थे (जैकोबी, जैन सूत्राज़, भाग, I, कल्पसूत्र, 122वाँ खंड)।

वैशाली से बुद्ध का संबंध कुछ कम निकट और घनिष्ट नहीं है। उनके श्रमण-जीवन के प्रारंभ में उनके चरण-रज से इस नगर की श्रीवृद्धि हुयी थी और उनके अनेक अमर प्रवचन यहीं पर दिये गये थे (अंगुत्तर, पा० टे० सो०, II, 190-94; 200-02; संयुत्त, V, 389-90; अंगुत्तर, III, 75-78; 167-68; V. 133; थेरीगाथा, V, 270; मज्झिम, I, 227-37)।

बुद्ध के निर्वाण प्राप्त कर लेने के पश्चात् वैशाली के प्रति संपूर्ण बौद्ध संघ का ध्यान और अवधान आकर्षित हुआ था। संपूर्ण संघों के प्रतिनिधि यहाँ पर मिले थे और उन्होंने अपने सुखकामी भिक्षुओं के आचरण की भर्त्सना की थी। यह बौद्ध-संघ की द्वितीय संगीति थी (कर्न, मैनुअल ऑव इंडियन बुद्धिज्म, पृ० 103-109)। वैशाली के विषय में विस्तृत विवरण के लिए द्रष्टव्य, लाहा, सम क्षत्रिय ट्राइब्स ऑव ऐंश्येंट इंडिया, अध्याय, I; लाहा, ऐंश्येंट इंडियन ट्राइब्स, पृ० 294 और आगे; लाहा, इंडोलॉजिकल स्टडीज़, भाग, III)।

वैतरणी—यह भारत की पवित्र नदियों में से एक है जो सिंहभूम जिले के दक्षिणी भाग में स्थित पहाड़ियों और उस स्थान से थोड़ा आगे जहाँ यह उड़ीसा में प्रविष्ट होती है, से निकलती है (विस्तार के लिए द्रष्टव्य लाहा, रिवर्स ऑव इंडिया, पृ० 43)।

वक्कतक—यह आधुनिक बक्ता प्रतीत होता है जो प० बंगाल के बर्दवान मंडल में दामोदर नदी के तट पर गोहग्राम के ठीक पूर्व में स्थित है। वर्धमान-भुक्ति के एक भाग वक्कटविथी में दामोदर नदी के उत्तरी तट पर स्थित भूभाग की एक पट्टी संमिलित थी (एपि० इं०, XXIII, भाग, V, पृ० 158)।

वंक—यह राजगृह के समीप एक पर्वत था। इसका प्राचीन नाम वेपुल्ल था (द्रष्टव्य, एनल्स ऑव द भंडारकर ओरियंटल रिसर्च इंस्टीट्यूट, VIII, 164; तुलनीय, संयुत्त, II, 191-92)। इसका वर्णन जातक (VI. 491, 513, 520, 524-25, 580, 592) में हुआ है।

वंशवाटी—यह हुगली जिले में है जहाँ हंसेश्वरी का एक प्राचीन मंदिर है। वासुदेव का मंदिर भी जिसकी दीवालों पर पौराणिक दृश्य हैं, एक प्राचीन मंदिर है (लाहा, रिवर्स ऑव इंडिया, पृ० 44)।

वंग—यह बंगाल का प्राचीन नाम है (द्रष्टव्य, प्राकृत इंस्क्रिप्शंस फ़ॉम ए बुद्धिस्ट साइट ऐट नागार्जुनिकोण्ड)। वंग का वर्णन जो मुख्य बंगाल का अभिधान है, ऐतरेय आरण्यक (II. 1. 1; तुलनीय, कीथ, ऐतरेय आरण्यक, 200) और बौधायन धर्मसूत्र (I, 1. 14) में हुआ है। पाणिनि ने अपनी अष्टाध्यायी (4. 1. 70) में वंग का उल्लेख किया है। भागवतपुराण (IX. 23, 5) और

काव्यमीमांसा (अध्याय, 3) में एक देश के रूप में इसका वर्णन है। योगिनी-तंत्र (2.2, 119) में वंग का वर्णन है। ग्यारहवीं शती ई० के राजेन्द्र चोल के तिरुमलाई शिलालेख और चेदि कर्णदेव के गोहरवा अभिपत्र में वंग देश को बंगालदेशम कहा गया है, जिसे तेरहवीं शताब्दी ई० में बंगाल और मुसलमान युग में बंगला कहा जाने लगा था। तिरुमलाई अभिलेख में वंग को न केवल दक्षिण राढा (तक्कन लाढ़म) से ही वरन् उत्तर राढ़ा (उत्तिल लाढ़म) से भी पृथक बतलाया गया है। सिंहली ग्रंथों में वंग राज्य की यही स्थिति बतलायी गयी है जिसके अनुसार लाल्ह् वंग एवं कलिंग के बीच में स्थित था। वंग का प्रथम अभिलेखीय वर्णन संभवतः मैहरोली के लौह-स्तंभ लेख में किया गया है (का० इं० इं०, जिल्द, III, पृ० 141 और आगे) जहाँ पर 'चन्द्र नामक एक प्रबल राजा ने वंग देश में युद्ध में अपने सीने से शत्रुओं को विमुख किया था जो संगठित होकर उसका विरोध करने आये थे और युद्ध करते करते जिसने सिन्धु (Indus) के सात मुहानों को पार करके वाल्हीकों पर विजय प्राप्त की थी।' हरप्रसाद, शास्त्री ने शक्तिशाली राजा चन्द्र को प्रयाग स्तंभलेख में वर्णित राजा चन्द्रवर्मन् से समीकृत किया है जो पोखराणा का उसी नाम का एक राजा था। पोखराणा को उन्होंने राजस्थान में मारवाड़ में स्थित बतलाया है। वंग देशों का उल्लेख महाकूट स्तंभ-लेख में भी है (एपि० इं०, जिल्द, V) जिससे हमें ज्ञात होता है कि छठवीं शताब्दी ई० में चालुक्यवंशीय कीर्त्तिवर्मन् ने वंग, अङ्ग, और मगध, जिसे त्रिकलिंग कहा जाता था, के राजाओं पर विजय प्राप्त की थी। पृथ्वीसेन के पीठपुरम अभिपत्र में (1108 ई०) वंगदेश के नरेश को राजा मल्ल द्वारा पराजित बतलाया गया है। वंगदेश का वर्णन कामरूप के वैद्यदेव के दान ताम्र-पत्र में भी हुआ है जिसने दक्षिण-वंग में विजय प्राप्त की थी (एपि० इं०, जिल्द, II, पृ० 335)। इसका वर्णन केशवसेन के एदिलपुर अभिपत्र, विश्वरूपसेन के मदनपाड़ा और साहित्य परिषद् अभिपत्रों में भी किया गया है (इंस्क्रिप्शंस ऑव बंगाल, भाग, III, पृ० 119, 133, 141)। श्रीचन्द्रदेव के रामपाल-अभिपत्र (एपि० इं०, जिल्द, XII, पृ० 136,) से हमें यह ज्ञात होता है कि किसी चन्द्रवंश ने समतट-सहित संपूर्ण वंग पर अधिकार कर लिया था। लक्ष्मीकर्ण के गोहरवा-दानपत्र के अनुसार लक्ष्मणराज ने वंग, पाण्ड्य, लाट, गुर्जर और काश्मीर के राजाओं पर विजय प्राप्त की थी (एपि० इं०, XI, 142)। साहित्यिक उल्लेखों के लिये द्रष्टव्य, बि० च० लाहा, ट्राइब्स इन ऐंश्येंट इंडिया, अध्याय, LI.

अल्हणदेवी के भेड़ाघाट अभिलेख से हमें यह ज्ञात होता है कि गांगेयदेव

के पुत्र एवं उत्तराधिकारी चालुक्य-नरेश कर्ण ने वंग या पूर्वी बंगाल के राजा पर विजय प्राप्त की थी (एपि० इं०, XXIV, भाग, III, जुलाई, 1937)।

पूर्व बंगाल के वैष्णव वर्मन् वंश के राजा भोजवर्मन् के बेलाव ताम्रपत्र के साक्ष्य के आधार पर चूलवंश में वर्णित विजयबाहु प्रथम की द्वितीय रानी त्रिलोक-सुंदरी को त्रैलोक्यसुंदरी से समीकृत करने का प्रयत्न हाल में ही किया गया है, जिसकी प्रशंसा बेलाव अभिलेख में भोजवर्मन् के निकटतम पूर्वज और पिता, राजा सामलवर्मन् की पुत्री के रूप में की गयी है।

यह ठीक ही बताया गया है कि बेलाव ताम्रपत्र में पूर्वी बंगाल के वर्मनों ने सिंहपुर के राजवंश से अपनी उत्पत्ति बतलायी है और भोजवर्मन् ने करुणापूर्ण शब्दों में राक्षसों द्वारा किये गये बैरपूर्ण कृत्यों से तत्कालीन सिंहली नरेश के लिये उत्पन्न कठिनाइयों के लिये चिंता व्यक्त की है। यदि थोड़ी देर के लिए भोजवर्मन् और विजयबाहु प्रथम के मध्य व्यक्तिगत संबंध को एक ऐतिहासिक तथ्य मान लिया जाय तब यह समझना कि क्यों भोजवर्मन् ने लंका के राजा के प्रति चिंता व्यक्त की थी, सरल हो जाता है। पूर्वी बंगाल के वर्मन् वंश के साथ विजयबाहु प्रथम का वैवाहिक संबंध इस तथ्य से भी व्यक्त होता है कि विजयबाहु और उसके उत्तराधिकारी सिंहपुर के राजवंश से अपनी उत्पत्ति बताने में अपने को गौरवान्वित अनुभव करते थे। सिंहपुर संभवतः कलिंग में स्थित एक स्थान था (ज० रा० ए० सो०, 1903, पृ० 518; दे० रा० भंडारकर वाल्यूम, पृ० 375)। विश्वरूप-सेन के एक दान ताम्रपत्र के अनुसार नाव्य वंग का एक भाग था (वंग नाव्ये)।

उत्तरी बंगाल पर किसी बंगाल-नरेश की सेना ने आक्रमण किया था जिसके क्रम में सोमपुर विहार (आधुनिक पहाड़पुर) में स्थित बौद्ध शिक्षक करुणाश्रीमित्र के घर में आग लगा दी गयी थी और वह जल मरे थे (एपि० इं०, XXI, 97-131)। विपुलश्रीमित्र के नालंदा-अभिलेख के अनुसार (जिसकी तिथि बारहवीं शताब्दी ई० का मध्य है), करुणाश्रीमित्र, विपुलश्रीमित्र से शिक्षकों की दो पीढ़ी बाद में हुआ था।

बंगाल—राजेन्द्र चोल प्रथम के तिरुमलाई अभिलेख और डाकार्णव नामक महायान ग्रंथ में वर्णित यह संभवतः पूर्वी बंगाल है (एपि० इं०, XXI, भाग, III; वंग भी द्रष्टव्य)।

बर्धमानभुक्ति—मल्लसारुल ताम्रपत्र में वर्धमानभुक्ति का उल्लेख है और इसमें पाँच महायज्ञों को संपादित करने के लिये किसी ब्राह्मण को दिये गये भूमिदान का भी उल्लेख है। यह अभिलेख बंगाल के बर्दवान जिले में स्थित

गलसी के निकट एक गाँव में मिला था। नैहटि ताम्रपत्र में वर्णित वर्धमानभुक्ति कलकत्ता के समीप कम से कम गंगा के पश्चिमी तट तक फैली हुयी थी। नवीं शताब्दी ई० के कान्तिदेव के चटगाँव अभिपत्र में वर्धमानपुर का वर्णन है। राजा नयपालदेव के इर्द दान ताम्रपत्र जिसमें वर्धमानभुक्ति के दण्डभूतिमण्डल में किसी ब्राह्मण को दी गई कुछ भूमि का आलेख है, का प्रचलन प्रियंगु की राजधानी जिसकी स्थापना राजा राज्यपाल ने की थी, से की गई थी। वर्धमानभुक्ति उत्तर-राढ़ में और प्रियंगु की राजधानी बंगाल में दक्षिण-राढ़ में है (एपि० इं०, XXIV, भाग, I, जनवरी, 1937)। वर्धमान या वर्धमानभुक्ति की पहचान आधुनिक बर्दवान से की जाती है।

वट्टुम्बी—यह आवृत्ति बाश्चस का भाग है जो पौण्ड्रवर्धनभुक्ति में स्थित है (एपि० इं०, XXVI, भाग, I)।

वाल्लहिठ्ठ—यह एक प्रदत्त गाँव का नाम है जो वर्धमानभुक्ति के उत्तर-राढामण्डल से संबंधित स्वल्प दक्षिणविथी में स्थित था। इसे बर्दवान जिले की उत्तरी सीमा नैहटि से लगभग 5 मील पश्चिम में स्थित वर्तमान् बालुटिया से समीकृत किया जाता है (न० गो० मजूमदार, इंस्क्रिप्शंस ऑव बंगाल, भाग, III, बल्लालसेन का नैहटि ताम्रपत्र, पृ० 69 और आगे)।

वालुकाराम—कालाशोक के शासन काल में वैशाली के बालुकाराम में द्वितीय बौद्ध संगीति आयोजित की गयी थी (समन्तपासादिका, पृ० 33-34)।

वाणियगाम—इसे मुजफ्फरपुर में बसाढ़ के निकट बनिया नामक एक गाँव से समीकृत किया जाता है। यहाँ प्रायः महावीर आया करते थे (आवश्यक नियुक्ति, X. 496)।

वारहकोना—मोर के लगभग एक मील उत्तर में और सैन्थिया रेलवे स्टेशन से 1¼ मील दूर पर सूरी में आधुनिक बरकुण्ड से वारहकोना को समीकृत किया जाता है (लक्ष्मणसेन का शक्तिपुर ताम्रपत्र, एपि इं०, XXI, पृ० 124)।

वारकमण्डलविषय—राजा धर्मादित्य के फरीदपुर दान ताम्रपत्र में वारकमण्डलविषय का उल्लेख है, जो पूर्वी बंगाल में फरीदपुर जिले की आधुनिक गोलन्दो एवं गोपालगंज नामक तहसील हैं।

वातसवन—यह एक पहाड़ी है, जिसे दक्षिण बिहार में बठन से समीकृत किया गया है (आर्क्० स० रि०, VIII, 46)।

बेभार—यह पहाड़ी मगध देश में है। यह गिरिव्रज को परिवृत करने वाली पाँच पहाड़ियों में से एक है (विमानवत्थु कामेन्ट्री, पृ० 82)। द्रष्टव्य, **बैभार-गिरि**)।

वेदथिका—गया के समीप नागार्जुनि पहाड़ियों में स्थित यह एक गुहा है (ल्युडर्स की तालिका, संख्या, 956)।

वेदियक—कनिंघम ने इस पहाड़ी को गिरियेक से समीकृत किया है। इसमें इन्दसालगुहा नामक प्रसिद्ध गुहा है (दीघ, II, 263; सुमंगलविलासिनी, III 697; बि० च० लाहा, इंडिया ऐज डिस्क्राइब्ड इन द अर्ली टेक्स्ट्स ऑव बुद्धिज्म ऐंड जैनिज्म, पृ० 29)।

वेलुवन— (**वेणुवन**)—राजगृह में स्थित यह एक मनोहर उद्यान था, जो बाँसों से घिरा हुआ था (संयुत्त, I, 52; सुत्तनिपात कामेंट्री, पृ० 419; दिव्यावदान, पृ० 143, 554)। यह अठारह हाथ ऊँची एक दीवाल से सुरक्षित था और जिसमें सुंदर फाटक एवं लैपिस लाजुली से अलंकृत मीनारें बनी हुयी थीं (समन्तपासादिका, III, 575)। इस स्थल का पूरा नाम वेलुवन कलन्दकनिवाप था। इस नाम के द्वितीय पद से यह प्रकट होता है कि यहाँ गिलहरियाँ स्वच्छंदता-पूर्वक विचरण करती थीं और उनके चुगने के लिये यह एक सुंदर स्थान था।[1] यह स्थान राजगृह नगर के प्रांतर के बाहर—न तो इसके बहुत समीप और न बहुत दूर पर था। चीनी तीर्थयात्रियों ने इस वन की बिभिन्न स्थितियाँ बतलायी हैं। फाह्यान् और युवान-च्वाङ् दोनों के संमिलित विवरण के आधार पर यह आंतरिक नगर के उत्तरी फाटक से एक 'ली' की दूरी पर श्मशान से आधे मील दक्षिण, वैभार पर्वत की पिप्पलगुहा से 300 कदम पूर्वोत्तर और कलन्द सरोवर से 200 कदम दक्षिण में स्थित था।

वेपुल्ल—यह मगध में एक पर्वत है। बहुत प्राचीन काल में इसका नाम पाचीनवंस था जिसे बाद में बदल कर वंकक कर दिया गया था। इसके बाद इसका नाम सुपस्स पड़ा और इसके भी बाद इसे वेपुल्ल कहा जाने लगा (संयुत्त, II, 190 और आगे) और इसके निवासियों को मागध कहा जाने लगा (तुलनीय, बि० च० लाहा, इंडिया ऐज डिस्क्राइब्ड इन द अर्ली टेक्स्ट्स ऑव बुद्धिज्म ऐंड जैनिज्म, पृ० 29-30)। यह राजगृह को परिवृत करने वाली पाँच पहाड़ियों में से एक थी। राजा वेस्सन्तर को इस पहाड़ी पर निष्कासित कर दिया गया था। इसके शिखर तक पहुँचने में उन्हें तीन दिन लगे थे (विनयपिटक, II, 191-192)। विपुल पर्वत थोड़ी दूर तक दक्षिण-पूर्व में बिहारशरीफ-नवादा रोड पर स्थित गिरियेक नामक गाँव तक फैली हुयी उत्तरी पर्वतमाला तक फैला हुआ है। युवान-च्वाङ ने इस पर्वत को निश्चयपूर्वक पि-पु-लो (Pi-pu-lo) कहा है जो शब्दशः विपुल

---

[1] **समन्तपासादिका, III, 575; पपंचसूदनी, II, पृ० 134.**

के समान है। उसने बताया है कि गिरिव्रज के उत्तरी फाटक के पश्चिममें विपुल पर्वत था। उसने आगे और बतलाया है कि दक्षिण-पश्चिमी ढाल के उत्तर में किसी समय गर्म जल के पाँच सौ कुंड थे, जिनमें से उसके समय तक कई बचे हुये थे जिनमें कुछ गर्म एवं कुछ ठंडे जल के थे। इन कुंडों का स्रोत अनवतप्त झील थी। यहाँ का जल निर्मल था और यहाँ पर विभिन्न क्षेत्रों से लोग इस जल में स्नान करने के लिये आया करते थे जो पुराने रोगों से पीड़ित जनों के लिए लाभकर था। विपुल पर्वत पर एक स्तूप था जहाँ पर एक बार बुद्ध ने प्रवचन दिया था। इस पर्वत पर प्रायः दिगम्बर जैनी आया करते थे (वाटर्स, ऑन युवान-च्वाङ्, II, पृ० 153-54)। राजगृह के पर्वतों में विपुल पर्वत को सर्वश्रेष्ठ बतलाया गया है (संयुत्त, I, 67)। यह गिज्झकूट के उत्तर में और मगध की पर्वत मेखला के बीच में स्थित था।

वेठदीप—युवान-च्वाङ् ने द्रोणस्तूप नामक स्थान को जो वेठद्वीप ही है, महासागर से 100 ली दक्षिण-पूर्व में स्थित बतलाया है जिसे आरा के पश्चिम में छः मील दूर पर स्थित मसार नामक गाँव से समीकृत किया गया है। कुछ लोगों ने इसे कसिया से (एं० ज्यॉ० इं०, 1924, 714) और बिहार के चंपारन जिले में बेतिया से समीकृत किया है (ज० रा० ए० सो०, 1906, 900)। वेठदीप, जो ब्राह्मण द्रोण का घर था, अल्लकप्प से अधिक दूर नहीं था (बि० च० लाहा, ज्यॉग्रेफी ऑव अर्ली बुद्धिज्म, पृ० 25)।

वत्रगर्त्ता—यह वक्कट्टोकवीथी के अंतर्गत् स्थित था जो वर्धमानभुक्ति के एक भाग का प्रतिरूप प्रतीत होता है (प० बंगाल का आधुनिक बर्दवान मंडल, एपि० इं०, XXIII, भाग, V)।

विड्डारशासन—यह एक गाँव था, गंगा जिसकी पूर्वी सीमा थी। इसे हावड़ा जिले में आधुनिक बेतड से समीकृत किया जा सकता है।

विक्रमपुर—यह ढाका (बांगला देश) की मुंशीगंज तहसील में स्थित है। इसका एक भाग फरीदपुर जिले (बांगला देश) में संमिलित है। विक्रमपुर नाम साधारणतया उस भूभाग को दिया जाता है, जो उत्तर में धलेश्वरी, दक्षिण में इदिलपुर परगना, पूरब में मेघना और पश्चिम में पध्न द्वारा घिरा हुआ है। इस स्थान का नाम विक्रम नामक एक राजा के आधार पर पड़ा है जिसने कुछ समय तक यहाँ शासन किया था। विक्रमपुर की प्राचीन राजधानी रामपाल, मुंशीगंज से तीन मील पश्चिम में स्थित थी। श्रीविक्रमपुर नाम बल्लालसेन के सीताहाटी ताम्रपत्र में आया है। यहाँ पर चन्द्रवंशीय श्री चन्द्रदेव का एक ताम्रपत्र प्राप्त हुआ है। नालंदा के प्रसिद्ध बौद्ध विश्वविद्यालय के प्रधानाचार्य, शीलभद्र का

जन्म-स्थल रामपाल कुछ समय तक बंगाल के हिंदू राजाओं का पूर्वी मुख्यावास था। यहाँ पर बल्लालवाड़ी, अनेक प्राचीन सरोवर और पालयुगीन अनेक हिंदू और बौद्ध देवताओं के अवशेष उपलब्ध हुये हैं। रामपाल के दक्षिण-पश्चिमी कोने में स्थित बज्रयोगिनी नामक गाँव, दसवीं शती ई० के प्रसिद्ध बौद्ध-विद्वान दीपङ्कर श्रीज्ञान का जन्मस्थान था। श्रीचन्द्र के केदारपुर, केशवसेन के एडिलपुर, विजयसेन के बैरकपुर, लक्ष्मणसेन के अनुलिया और भोजवर्मन् के बेलाव ताम्रपत्रों में विक्रमपुर का उल्लेख है, जिसका अब भी यही नाम है। केवल थोड़े समय के लिये बर्मनों ने इस पर राज्य किया था। विजयसेन के बैरकपुर ताम्रपत्र से प्रकट होता है कि संभवतः विक्रमपुर विजयसेन की एक राजधानी थी, जिसका वहाँ पर प्रायः स्थायी निवास-स्थान सा था। सेन राजाओं के प्रायः सभी दानपत्र विक्रमपुर से प्रचलित किये गये थे (न० गो० मजूमदार, इंस्क्रिप्शंस ऑव बंगाल, भाग, III, पृ० 10 और आगे, 60 और आगे; इंट्रोड्यूसिंग इंडिया, भाग, I, पृ० 81-82)।

विक्रमशिला—यह गाँव बिहार तहसील में, बिहार से दस मील दक्षिण में स्थित है। यह अपने बौद्ध बिहार के लिए विख्यात् है जो ग्यारहवीं शताब्दी ई० में विद्या का एक महान् केंद्र था। यह बिहार मुसलमानों की विजय तक अस्तित्व-शील था, जब कि इसे आक्रांताओं ने जला दिया था। इस गाँव का आधुनिक नाम शिलाओं है जो विक्रमशिला का संक्षिप्त रूप है (आर्क० स० इं०, रिपोर्ट्स, भाग, VIII; ज० ए० सो० बं०, जिल्द, LX, भाग, I, 1891)। विक्रमशिला गंगा के दाहिने तट पर एक चौड़े मोड़ पर स्थित एक बौद्ध बिहार था। इसमें 8000 व्यक्तियों के एकत्रित होने भर को पर्याप्त स्थान था। इसमें अनेक मंदिर एवं इमारतें थीं। पाथरघाटा की विकासशील उत्तुंग पहाड़ी के शिखर पर एक बौद्ध बिहार के अवशेष हैं। यह पाथरघाटा प्राचीन बिक्रमशिला थी (ज० ए० सो० बं०, न्यू सीरीज़, भाग, V, नं०, I, पृ० 1-13)। इस विश्वविद्यालय में अनेक भाष्य लिखे गये थे। यह तंत्र-विद्या का एक केंद्र था। इस विश्वविद्यालय का प्रधानाचार्य सदैव एक अत्यंत विद्वान् एवं पुण्यात्मा ऋषि हुआ करता था। यहाँ पर विशेष रूप से व्याकरण, अध्यात्म विद्या, (तर्कशास्त्र) और कर्मकाण्ड-विषयक पुस्तकों का अध्ययन किया जाता था। इस विश्वविद्यालय की दीवालों पर विद्वानों के चित्र अंकित थे जो अपनी विद्या एवं चरित्र के लिये विख्यात् थे। विश्वविद्यालय के फाटकों, जिनकी संख्या 6 थी, की रक्षा करने के लिए अत्यंत विद्वान् ऋषियों की नियुक्ति की जाती थी (वि० च० लाहा, द मगधाज़ इन ऐंश्येंट इंडिया, पृ० 43-44)।

विंझाटवी—यह एक निर्जन वन था। यह उस वन का प्रतिरूप था जिससे होकर पाटलिपुत्र से ताम्रलिप्ति का मार्ग गुजरता था (महावंस, XIX. 6; दीप वंस, XVI, 2; समन्तपासादिका, III, 655)।

विष्णुपुर—यह पश्चिम बंगाल के बाँकुड़ा जिले में है। इसका नामकरण राजवंश के देवता विष्णु के आधार पर हुआ है। दीर्घकाल तक यह मल्लराजाओं की राजधानी थी, जिन्होंने अपने द्वारा शासित देश को मल्लभूमि (पहलवानों का देश) की संज्ञा दी थी। मल्लभूमि में संपूर्ण आधुनिक बाँकुड़ा जिला एवं बर्दवान, मिदनापुर, मानभूम, और सिंहभूम, के निकटस्थ जिलों के कुछ भाग संमिलित थे। आदिमल्ल जो प्रथम मल्लराजा था, कुश्ती एवं धनुर्विद्या के क्षेत्र में अपनी महती प्रतिभा के लिये प्रसिद्ध था। रघुनाथ विष्णुपुर के मल्लवंश का संस्थापक था। उसने जयपुर थाने के अंतर्गत् स्थित प्रद्युम्नपुर के निकटवर्ती प्रमखों को पराजित किया जिसे उसने अपनी राजधानी बनाया था। मल्लभूमि के शासकों के राजचिह्न पर साँप के फन की मुहर बनी हुयी थी। बख्तियार खिल्जी द्वारा की गयी मुस्लिम विजय के पूर्व पश्चिमी बंगाल के अधिकांश भाग पर विष्णुपुर हिंदू राजा राज्य करते थे। विष्णुपुर के एक राजा जगतमल्ल ने प्रद्युम्नपुर से राजधानी बदल कर विष्णुपुर कर दी थी। विष्णुपुर के राजा शैव थे। मल्लेश्वर-महादेव का मंदिर यहाँ पर उपलब्ध मंदिरों में सर्वप्राचीन है। कालांतर में यहाँ के राजा मृण्मयी के कट्टर उपासक हो गये थे, जो शक्ति का एक स्वरूप थीं और वहाँ पर अब भी जिसका एक मंदिर है। रमई पंडित द्वारा प्रचलित की गयी धर्म की पूजा यहाँ पर अत्यधिक लोकप्रिय हुयी। प्रसिद्ध बंगाली गणितज्ञ शुभंकर राय विष्णुपुर के मल्ल राजाओं के अधीन थे। विष्णुपुर के मंदिर अधिकांशतया वर्गाकार भवन हैं, जिनकी छतें गोलाकार हैं, जिनके मध्य में एक छोटी मीनार होती है। कुछ में छत के चारो कोने में मीनारें हैं। कुछ मंदिरों की दीवालों पर रामायण एवं महाभारत के दृश्य अंकित हैं। श्यामराय का मंदिर बंगाल में पंचरत्न शैली का एक प्राचीनतम मंदिर है। सोलहवीं शती ई० में वीर हम्मीर ने रासमंच का भव्य मंदिर बनवाया था, जिसे विष्णुपुर के दुर्ग के विशाल पाषाण-तोरण और दलमर्दन नामक बड़ी तोप के निर्माण का श्रेय दिया जा सकता है (इंट्रोड्यूसिंग इंडिया, भाग, I, पृ० 71-72)।

दलमर्दन तोप लालबंध झील के बगल में अधगड़ी हुयी पड़ी थी और यह 'ऐंश्येंट मानुमेंट प्रिजर्वेशन ऐक्ट' के अंतर्गत् चढ़ाई गयी और सुरक्षित रखी गयी है। यह एक साथ संधानित पिटे हुये लोहे की तिरसठ छरपट्टियों या लघु बेलनों से निर्मित हैं और पिटे हुए लोहे के एक अन्य बेलन के ऊपर स्थित है। यद्यपि यह सब

ऋतुओं में खुली रहती थी, किंतु अब भी इसमें मोर्चा नहीं लगा है और इसका पृष्ठ भाग काला ओपयुक्त है। इसकी लंबाई 12 फीट $5\frac{1}{2}$ इंच है और इसकी नली का व्यास नालमुख पर साढ़े ग्यारह इंच है। यह वही तोप है जिसे मदन-मोहन ने चलाया था जब कि मराठों ने भास्कर पंडित के नेतृत्व में विष्णुपुर पर आक्रमण किया था। सामने के फाटक के ठीक बाहर ऊँचे प्राकार पर अब भी दो तोपें पड़ी हुयी हैं।

विष्णुपुर का दुर्ग मिट्टी की एक ऊँची दीवाल से घिरा हुआ है और इसके चारों ओर एक चौड़ी परिखा है। प्रवेश-मार्ग कंकड़ाश्म के बने हुए एक सुंदर विशाल द्वार से है। प्रवेशमार्ग के दोनों ओर धनुर्धरों एवं तुपकधारियों के लिये झिरियाँ बनी हुयी थीं।

नगर के अंचल में और प्राचीन किलेबंदियों के बीच सात सुरम्य झीलें हैं, जिनको प्राचीन शासकों ने बनवाया था, जिन्होंने प्राकृतिक गढ्ढों का लाभ उठाकर उनके ऊपर बाँध बनवाया। इनसे नगर एवं किले को निरंतर ताजा जल की पूर्ति में सहायता मिलती थी। ये झीलें अब पट गयी हैं और उनके अधिकांश भाग धान के खेत बन गये हैं।

पाषाण-निर्मित प्रवेशद्वार के उत्तर में स्थित अनेक ऐतिहासिक घटनाओं का मौन द्रष्टा, मुर्चपाहार नाम से अधिक विश्रुत प्राकार सदैव विचारशील मस्तिष्कों के लिये एक अनुकूल आश्रय स्थल रहा है। वहाँ खड़े होने पर चतुर्दिक ऐतिहासिक दृश्यों के परिदृश्य को देखने से जब कि सूर्य मंदगति से महाराष्ट्र डाँग के पीछे पश्चिम में अस्तमित होता है, मनुष्य का मस्तिष्क विषण्ण हो जाता है। इस ऐतिहासिक नगर और इसके अवशेषों पर अब अंधकार का आवरण चढ़ चुका है (जे० एन० मित्र, द रूइन्स ऑव विष्णुपुर, पृ० 13-16)।

विश्वामित्र-आश्रम—यह बिहार के शाहाबाद जिले में बक्सर में स्थित था। बताया जाता है कि रामचन्द्र ने यहाँ पर ताड़का नामक राक्षसी की हत्या की थी (तुलनीय, रामायण, बालकाण्ड, अध्याय, 26)।

व्याघ्रतटी—इसकी पहचान बागड़ी से की जाती है जो बंगाल के चार परंपरानुगत मंडलों में से एक है। बागड़ी में गंगा एवं ब्रह्मपुत्र का डेल्टा संमिलित था (कनिंघम, आर्क० स० रि०, XV, पृ० 145-46)। विस्तृत विवरण के लिए द्रष्टव्य, पौण्ड्रवर्धन।

यष्टिवन (लाठी या यष्टि का वन)—ग्रियर्सन ने इसे गया जिले में सुप-तीर्थ के निकट तपोवन से लगभग 2 मील उत्तर में स्थित जेठियन से समीकृत किया है (नोटस ऑन द डिस्ट्रिक्ट ऑव गया, पृ० 49)। यह राजगृह से लगभग 12

मील दूर पर स्थित था। बुद्धघोष के अनुसार यह एक खजूरवन था (समन्तपासादिका, सिंहली संस्करण, पृ० 158)। यह बिम्बिसार के राजवन का नाम था, जहाँ पर गयासीस से बुद्ध गये थे। राजगृह नगर जाते समय जटिल धर्म-परिवर्तन कारियों के साथ बुद्ध यहाँ रुके थे (विनय महावग्ग, I, पृ० 35; फासबाल, जातक, I, 83)। राजगृह नगर की सीमाओं पर स्थित यह खजूर बन वेणुबन की अपेक्षा अधिक दूर माना जाता था (जातक, I, 85)। बुद्ध के काल में यह सुपतित्थ चेतिय नामक एक वट-मंदिर के लिए प्रसिद्ध था (समन्तपासादिका, सिंहली संस्करण, पृ० 158)। निश्चय ही यह स्थान राजगृह के पश्चिम में था। महावस्तु में इसे एक पहाड़ी के अभ्यंतर में स्थित बतलाया गया है (अन्तरगिरिस्मिन, III, 441)। युवान-च्वाङ ने यष्टिवन को बाँस का एक घना जंगल बतलाया है जो एक पर्वत को आच्छादित किये हुए था और जिसके दक्षिण-पश्चिम में दस ली (लगभग 2 मील) आगे दो तप्त जलकुंड थे (वाटर्स, ऑन युवान-च्वाङ, II, 146)। विस्तृत विवरण के लिए द्रष्टव्य, बि० च० लाहा, राजगृह इन ऐंश्येंट लिटरेचर, मे० आर्क० स० इं०, नं० 58, पृ० 16-18, 25, 39, 40.

यतोद्भव—इस नदी को यतोदा भी कहा जाता है जो जलपाईगुड़ी और कूच बिहार जिलों से होकर प्रवाहित होने वाली, ब्रह्मपुत्र की एक सहायक नदी है (तुलनीय, कालिका पुराण, अध्याय, 77)।

IV

पश्चिमी भारत

●

अब्लूर—यह मैसूर के धारवाड़ जिले के कोड़ तालुक के मुख्यावास कोड़ से लगभग दो मील पश्चिम में स्थित एक गाँव है। प्राचीन अभिलेखों में इसका अधिक पूर्ण नाम अब्बलूर मिलता है (एपि० इं०, V, 213 और आगे)।

अद्रिजा—इस नदी का वर्णन महाभारत में है (अनुशासन पर्व, CLXV, 7648)। यह ऋक्ष एवं विन्ध्य पर्वतों से निकलती है।

अगस्त्य-आश्रम—यह आश्रम नासिक के पूर्व में अकोल्हा में स्थित था (रामायण, आरण्यकाण्ड, अध्याय, 11; महाभारत, अध्याय, 96, 1-3; पद्म-पुराण, अध्याय, 6, श्लोक, 5)। रामायण (आरण्यकाण्ड, सर्ग, 11, श्लोक, 40-41) में बतलाया गया है कि यह आश्रम अगस्त्य के भाई के आश्रम के दक्षिण में उससे एक मील की दूरी पर स्थित था। योगिनीतंत्र (2.7.8) में इस आश्रम का उल्लेख है। कुछ लोगों की धारणा है कि नासिक के दक्षिण-पूर्व 24 मील दूर स्थित अगास्तपुरी में अगस्त्य ऋषि का आश्रम था। कुछ लोगों का विचार है कि यह आश्रम मलयकूट के शिखर पर, जिसे श्रीखण्डाद्रि या चंदनाद्रि भी कहा जाता था, स्थित था (तुलनीय, धोयीकृत पवनदूतम्)। बलराम यहाँ पर आये थे। मनु ने यहाँ पर तपस्या की थी (भागवत, VI. 3.35; X.79.16; मत्स्य, I. 12)। अगस्त्य, जो अगस्त्यसंहिता के प्रसिद्ध लेखक थे, दक्षिण भारत में आर्य सभ्यता के परिचायक थे। यह आश्रम हर प्रकार के कष्टों के लिए अभेद्य था क्योंकि इस शक्तिशाली ऋषि ने अपनी आध्यात्मिक शक्तियों से राक्षसों को मार डाला था। जिस समय वह हवन कर रहे थे, राम, लक्ष्मण और सीता उनसे मिले थे। ऋषि ने उनका स्वागत किया और राम को उन्होंने अपना दिव्य धनुष, बाण एवं अन्य शस्त्रास्त्र प्रदान किये। इस आश्रम से लगभग सात मील दूर पंचवटी वन स्थित था।

अलंदतीर्थ—इसे भोर (भू० पू० रियासत) के मुख्य नगर भोर से पाँच मील पूर्वोत्तर में और सतारा से लगभग 35 मील उत्तर में आधुनिक आलुंदा से समीकृत किया जा सकता है (इं० ऐं० XX, 304)।

अलिना—शीलादित्य सप्तम के अलिना ताम्रपत्र में (वर्ष 447) गुजरात के नाडियाद तालुक के मुख्य नगर नडियाद से लगभग 14 मील पूर्वोत्तर में स्थित इस गाँव का उल्लेख है (का० इं० इं०, III)।

आमलकटक—आम्टी से 12 मील दक्षिण पश्चिम में स्थित, यह अमोड है (इंपार्टेंट इंस्क्रिप्शंस फ़ाम द बड़ौदा स्टेट, जिल्द, I, पृ० 20)।

अंबरनाथ—यहाँ पर 9वीं शती ई० का एक सुंदर मंदिर है जो विशुद्ध हिंदू स्थापत्य-कला का एक सुंदर नमूना है। यह कल्याण के समीप है (लाहा, होली प्लेसेज ऑव इंडिया, पृ० 42)।

अंबापाटक—पूरवी या पूर्णा के तट पर और नौसारी से लगभग पाँच मील दूर पर स्थित यह आमडपुर ही है। कुछ शताब्दियों पूर्व इस गाँव को आम्रपुर कहा जाता था (एपि० इं०, XXI, जुलाई, 1931)।

अमरेली—यह काठियावाड़ के दक्षिण में अमरेली नामक जिले का मुख्यावास है। इसकी प्राचीनता खरग्रह प्रथम के अमरेली अभिपत्रों से सिद्ध होती है (इंपार्टेंट इंस्क्रिप्शंस फ़ॉम द बड़ौदा स्टेट, जिल्द, I पृ० 7)।

अणस्तु—यह बड़ौदा जिले में करजन नामक एक तालुक के इसी नाम के मुख्यावास करजन से लगभग 2½ मील पश्चिमोत्तर में स्थित एक गाँव है जहाँ से दो दान ताम्रपत्र उपलब्ध हुये थे (इंपार्टेंट इंस्क्रिप्शंस फ़ॉम बड़ौदा स्टेट, जिल्द, I, पृ० 16)।

अंजनेरि—यह नासिक जिले के मुख्यावास में स्थित एक गाँव है जहाँ से पृथ्वीचन्द्र भोगशक्ति के दानपत्र उपलब्ध हुये थे (एपि० इं०, XXV, भाग, V, जनवरी, 1940, पृ० 225)।

अंलिका—इसे बड़ौदा जिले के पादरा तालुक में आधुनिक आम्ती से समीकृत किया जाता है (इंपार्टेंट इंस्क्रिप्शंस फ़ॉम बड़ौदा स्टेट जिल्द, I, पृ० 20)।

अनूपनिवृत—अनूप देश (ल्युडर्स की तालिका, संख्या, 965) अनूपों का देश सुराष्ट्र एवं आर्नत्त के समीप स्थित था। अभिलेखीय साक्ष्य से यह धारणा पुष्ट होती है कि अनूप जन नर्मदा-तट पर स्थित माहिष्मती के परितः सुराष्ट्र के दक्षिण-वर्ती क्षेत्र में रहते थे। रानी गौतमी बलश्री के नासिक गुहा-लेख में कहा गया है कि अन्य देशों सहित अनूप पर उसके पुत्र ने विजय प्राप्त की थी। रुद्रदामन के जूनागढ़ शिलालेख में इस देश पर उसके अधिकार विस्तार का उल्लेख है। विस्तार के लिए द्रष्टव्य, बि० च० लाहा, ट्राइब्स इन ऐश्येंट इंडिया, पृ० 389; बि० च० लाहा, इंडोलॉजिकल स्टडीज़, भाग I, पृ० 53-54.

असिक—यह अर्सक या फारस के सुविख्यात् पार्थियन राजा अर्सकिडाई

के नाम का वाचक प्रतीत होता है। नासिक-अभिलेख में गौतमीपुत्र को इस पर शासन करते हुए कहा गया है (द गजेटियर ऑव द बांबे प्रेसिडेंसी, 1883, जिल्द, XVI)।

असितमसा——भरहुत-अभिलेखों में इसका उल्लेख है (बरुआ ऐंड सिन्हा, पृ० 32)। कनिंघम ने इसे कहीं तमसा या टोंस के तट पर स्थित बतलाया है। वामनपुराण में पश्चिमी भारत के देशों में असिनील और तमसा का वर्णन है।

अय्यपोलिल——यह अय्यवोले का तमिल नाम है जिसे मैसूर के बीजापुर जिले के हुनगुंड ताल्लुक में स्थित ऐहोड़ से समीकृत किया जाता है। यह एक अति समृद्धिशाली व्यापार-निगम के मुख्यावास के रूप में प्रसिद्ध था (एपि० इं०, XXIII, भाग, VII)।

आभीर देश——अबिरिया या आभीर देश पर पश्चिमी क्षत्रपों या पश्चिमी भारत के शक राजाओं ने राज्य किया था जिनका अधिकार यूनानी भूगोलवेत्ता टॉलेमी द्वारा वर्णित इंडो-सीथिया के संपूर्ण राज्य पर प्रतीत होता है (तुलनीय, एपि० इं०, VIII, पृ० 36 और आगे)। शकाधिपति रूद्रसिंह (181 ई०) के गुंड अभिलेख के अनुसार उसके राज्य में रूद्रभूति नामक एक आभीर सेनापति ने एक तालाब खुदवाया था। थोड़े दिनों के बाद (भंडारकर के अनुसार 188-90 ई० में; रैप्सन के अनुसार 236 ई० में) आभीर जाति के ईश्वरदत्त नामक एक व्यक्ति ने महाक्षत्रप का पद धारण किया था। संभवतः इसकी पहचान ईश्वर-सेन नामक आभीर राजा से की जा सकती है जो पश्चिमी भारत का महाक्षत्रप बना था और जिसने तीसरी शताब्दी ई० में सातवाहन राजाओं से महाराष्ट्र के कुछ भूभाग छीन लिये थे। यह कहा जाता है कि ईश्वरसेन के राजवंश की पहचान अपरांत के त्रैकूटक वंश से की सकती जा है और 248 ई० में प्रारंभ होने वाले त्रैकूटक संवत की स्थापना उत्तरी महाराष्ट्र और निकटवर्ती क्षेत्र के राज्य पर सातवाहनों के बाद आभीरों के अधिकार को लक्षित करता है (तुलनीय, रायचौधरी, पोलिटिकल हिस्ट्री ऑव ऐंश्येंट इंडिया, चतुर्थ संस्करण पृ० 418, पा० टि० 2)। समुद्रगुप्त के इलाहाबाद स्तंभ लेख में पश्चिमी एवं दक्षिण-पश्चिमी भारत के एक गण-राज्य के रूप में आभीर देश का भी वर्णन है जो इस महान् गुप्त सम्राट् के करद, प्रणामी एवं आज्ञाकारी थे और जो उसके साम्राज्य की सीमाओं के बाहर रहने वाली एक अर्ध-स्वतंत्र जाति थी। (उनके पूर्ण इतिहास के लिए द्रष्टव्य, लाहा, ट्राइब्स इन ऐंश्येंट इंडिया, पृ० 81; एपि० इं०, X, पृ० 99 और 127)। कुछ लोगों ने उन्हें मध्य प्रदेश के पार्वती और बेतवा नदियों के बीच में स्थित अहिरवाड़ा क्षेत्र से समीकृत किया है।

आभीर शूद्रों से संबंद्ध थे, जिनकी पहचान अति संभवतः सिकंदर युगीन यूनानी इतिहासकारों द्वारा वर्णित सोड्राई या सोग्डाई से की जाती है जो विष्णुपुराण के अनुसार (विल्सन, II, अध्याय, III, पृ० 132-135) पारिपात्र, पर्वत के पास रहने वाले सुराष्ट्रों, शूद्रों, अर्बुदों, कारुषों और माल्वों के साथ सुदूर पश्चिम में स्थित बतलाये गये हैं। मार्कण्डेय पुराण (अध्याय, 57, श्लोक, 35-36) में उनका वर्णन वाह्लीकों, वाटधानों, शूद्रों, मद्रकों, सुराष्ट्रों तथा सिन्धु-सौवीरों के साथ हुआ है जिनमें सभी का अधिकार अपरांतक में (पश्चिमी भारत) में संमिलित देशों पर था। पार्जिटर ने बतलाया है कि आभीर गण महाभारत-युद्ध की अनुवर्त्ती घटनाओं से कुछ संबंधित थे। गुजरात के यादवों पर क्रूर आभीरों ने आक्रमण किया और उन्हें ध्वस्त किया था (ऐं० इं० हि० ट्रे०, पृ० 284)। महाभारत (सभापर्व, अध्याय, 51) के अनुसार वे भारत के पश्चिमी प्रभाग में स्थित थे। महाभारत का यह साक्ष्य 'पेरिप्लस ऑव द इरिथ्रियन सी' के लेखक एवं टॉलेमी द्वारा पुष्ट होता है। महाभारत (IX. 37, 1) में आभीरों को निश्चित रूप से पश्चिमी राजस्थान में स्थित बतलाया गया है जहाँ सरस्वती नदी लुप्त हो जाती हैं। पतञ्जलि संभवतः प्रथम व्यक्ति है जिन्होंने अपने महाभाष्य (1. 2. 3) में उनका भारतीय इतिहास में परिचय दिया है। दूसरी शताब्दी ई० पू० के मध्य आभीरों एवं उनके देश पर निश्चय ही बाख्त्री-यवनों का आधिपत्य हो गया था जिन्होंने उनके संपूर्ण देश पर अधिकार कर लिया था जिसे टॉलेमी ने इंडो-सीथिया कहा है और जिसमें अबेरिया या अबीरिया संमिलित था। मार्कण्डेय पुराण (अध्याय, 57-58, श्लोक, 45-48 और श्लोक, 22) में उन्हें दक्षिणात्य जनों के साथ स्थित बतलाया गया है। वायुपुराण (अध्याय, 45, 126) से इसकी पुष्टि होती है और इसमें आभीरों को "दक्षिणापथ-वासिनः" कहा गया है। विस्तृत विवरण के लिए बि० च० लाहा कृत इंडोलॉजिकल स्टडीज़, भाग, I, पृ० 54 और आगे द्रष्टव्य।

आलूर—यह मैसूर के धारवाड़ जिले गडगतालुक में स्थित एक गाँव है (एपि० इं०, XVI, पृ० 27)।

आनंदापुर—धरसेन द्वितीय के मलिय ताम्रपत्र में इसका उल्लेख है। इसका आधुनिक नाम आनंद है जो आनंद तालुक का मुख्यावास है (का० इं०, इं०, जिल्द, III)।

आनंदपुर या वडनगर—इसे नगर भी कहा जाता है जो गुजरात के नागर ब्राह्मणों का मूल-स्थान था। कुमारपाल ने इसके चारों ओर एक प्राकार बनवाया था (एपि० इं०, I, पृ० 295)।

आनर्त्त—यह उत्तर काठियावाड़ में स्थित एक देश का नाम है (ल्युडर्स की तालिका, सं० 965)। कुछ लोगों के अनुसार यह क्षेत्र द्वारका के समीप और कुछ अन्य के अनुसार वडनगर के समीप स्थित था (तुलनीय, बांबे गज़ेटियर I, 1.6)। शक महाक्षत्रप रुद्रदामन ने इस देश को गौतमीपुत्र से पुनः जीत लिया था (द्रष्टव्य, बि० च० लाहा, इंडोलॉजिकल स्टडीज़, भाग, I, पृ० 52-53)। स्कन्दपुराण (अध्याय, I, 5-6) के अनुसार इस देश में वैदिक ऋचाओं का पाठ करने वाले यतियों से भरा हुआ एक आश्रम था।

आसट्टिग्राम—ब्यूलर ने इस गाँव को नवसारी से सात मील दक्षिण-पूर्व में अष्टगाम से समीकृत किया है (एपि० इं०, VIII, 229 और आगे; इंडियन ऐंटिक्वेरी, XVII, पृ० 198)। कुछ लोगों की धारणा है कि इसका मुख्य नाम अष्टग्राम है न कि आसट्टिग्राम (एपि० इं०, VIII, पृ० 231)।

आटविकराज्य—फ्लीट (का० इं० इं०, III, 114) का कथन है कि आटविक राज्य घनिष्ट रूप से डभाला—आधुनिक जबलपुर क्षेत्र से संबंधित थे (एपि० इं०, VIII, 284-87; बि० च० लाहा, द मगधाज इन ऐंश्येंट इंडिया, रायल एसियाटिक सोसायटी मोनोग्राफ, संख्या, XXIV, पृ० 19)। समुद्रगुप्त ने आटविक राजाओं को परिचारिकी-कृत किया था (तुलनीय, समुद्रगुप्त का प्रयाग स्तंभलेख, परिचारिकीकृत सर्वाटविकराज्यस्य)। आटव्य[1] या आटविक जन संभवतः मध्य प्रदेश के वन्य क्षेत्रों में निवास करने वाली आदिवासी प्रजातियाँ थीं।

बदरिका—दन्तिदुर्ग के एलौरा अभिपत्रों में इसका वर्णन है जो दक्षिण गुजरात में स्थित है (एपि० इं०, XXV, भाग, I, जनवरी, 1939, पृ० 29)।

बहाल्—यह गाँव महाराष्ट्र के खानदेश जिले की चालिसगाँव तहसील में स्थित है। यहाँ पर यादव नरेश सिंहन का एक अभिलेख उपलब्ध हुआ था (शक संवत् 1144) (एपि० इं०, III, 110)।

बलेग्राम—इस गाँव को नासिक जिले के ईगतपुरी तालुक में स्थित आधुनिक बेलगाम तरल्हा से समीकृत किया जा सकता है (एपि० इं०, XXV, भाग, V, जनवरी, 1940, पृ० 230, पृथ्वीचन्द्र भोगशक्ति के दो दानपत्र)।

बलिस—अल्लशक्ति के एक दानपत्र में (भारत इतिहास संशोधक मंडल, पूना, द्वारा प्राप्त किये गये) इस गाँव का वर्णन है जिसे सेन्द्रक राजकुमार अल्लशक्ति

---

[1] **वायुपुराण, XLV, 126; मत्स्यपुराण, CXIII, 48; लाहा, ट्राइब्स इन ऐंश्येंट इंडिया, पृ० 383**

ने दिया था। इस गाँव की पहचान सूरत जिले के बारदोली तालुक में स्थित वनेस से की गई है (दे० रा० भंडारकर वाल्यूम, पृ० 53)।

बलसाणे—यह महाराष्ट्र में पश्चिम खानदेश जिले के पिम्पलनेर तालुक में स्थित है। यह चालुक्य शैली में निर्मित कई मंदिरों के लिये विश्रुत है (एपि० इं०, XXVI, भाग, VII, जुलाई, 1942, पृ० 309 और आगे)।

बंकापुर—इसे मैसूर के धारवाड़ जिले में स्थित वंकापुर तालुक भी कहा जाता था। प्राचीन शहर जिसे मले बंकापुर कहा जाता था, आधुनिक नगर से दक्षिण, दक्षिण-पश्चिम में लगभग 2 मील की दूरी पर स्थित है (एपि० इं०, XIII, पृ० 168)।

बरगाँव—यह जबलपुर जिले की मुरवारा तहसील के मुख्यावास मुरवारा के उत्तर-पश्चिम में 27 मील दूर स्थित एक गाँव है। यहाँ पर खंडित शिला-पट्ट पर उत्कीर्ण एक अभिलेख उपलब्ध हुआ है (एपि० इं०, XXV, भाग, VI, अप्रैल, 1940)।

बामणी—यह गाँव कोल्हापुर जिले के कागल (एक भूतपूर्व रियासत) के मुख्यावास कागल से पाँच मील दक्षिण-पश्चिम में स्थित है। यहाँ पर शिलाहार वंशीय विजयादित्य का एक शिलालेख उपलब्ध हुआ था (एपि० इं०, III, 211)।

बासुरविषय—इसमें 140 गाँव थे और इसके अंतर्गत् धारवाड़ जिले के हवेली तालुक के दक्षिणी भाग संमिलित थे (एपि० इं०, XXIII, भाग, V, पृ० 194)।

बेलवोला—अमोघवर्ण के वेंकटपुर अभिलेख (शक संवत, 828) में इस स्थान का उल्लेख है जिसमें धारवाड़ जिले के आधुनिक गडग, रोग और नवलगंड ताल्लुक स्थित थे (एपि० इं०, XXVI, भाग, II, अप्रैल, 1941, पृ० 59 और आगे)।

भद्रकसत—यह कान्यकुब्ज या कन्नौज में स्थित था। वाराणसी के राजकुल एवं भद्रकसत के आदिवासी नरेश राजा महेन्द्रक में वैवाहिक संबंध थे (रा० ला० मित्र, नर्दर्न बुदिस्ट लिटरेचर, 143, और आगे)।

भद्रारक—इसकी पहचान भदर से की जा सकती है जो आम्ती के दक्षिण-पश्चिम में लगभग 2 मील दूर पर स्थित था (इंपार्टेंट इंस्क्रिप्शंस फ्रॉम बड़ौदा स्टेट, जिल्द, I, पृ० 20)।

भैरणमट्टी—मैसूर के बीजापुर जिले के बागलकोट तालुक के मुख्यावास बागलकोट से दस मील पूर्व में स्थित यह एक गाँव है। यहाँ से एक शिलालेख उपलब्ध हुआ था (एपि० इं०, III, 230)।

भरण—यह (गुजरात के जामनगर जिले में) कच्छ की खाड़ी में खंभलिया नामक एक बंदरगाह के निकट स्थित एक गाँव है। यहाँ पर एक शिलालेख उपलब्ध हुआ था।

भरुकच्छ (भृगुकच्छ)—भरुकच्छ (समुद्री दलदल) भृगुकच्छ, भीरुकच्छ'[1] सभी की पहचान आधुनिक भड़ौच या ब्रौच से की जाती है जो टॉलेमी[2] एवं पेरिप्लस ऑव द इरिथ्रियन[3] सी द्वारा वर्णित बैरीगाजा है। काठियावाड आधुनिक भड़ौच है। टॉलेमी द्वारा दिया गया इसका नाम भृगुक्षेत्र या भृगुकच्छ का यूनानी अपभ्रंश है (ऐंश्येंट इंडिया ऐज डिस्क्राइब्ड बाई टॉलेमी, पृ० 153-4)। भरुकच्छ एक बंदरगाह था। जूलियन ने इसका नाम बराउ-गचेव (Barougatcheva) बतलाया था जिसे सन्त मार्टिन ने बारुकटचेव (Baroukatcheva) बतलाया था। चीनी तीर्थयात्री, युवान-च्वाङ के काल में इसे पो-लु-का-चे,-पो (Po-lu-ka-che,-po) कहा जाता था। भृगुकच्छ, भरुकच्छ का संस्कृत रूप है जिसका तात्पर्य ऊँचा तट-प्रदेश है। यह नगर ठीक एक ऊँचे तट देश पर स्थित था। बृहत्संहिता (XIV. 11) और योगिनीतंत्र (2. 4) में इसका उल्लेख है। इसका वर्णन हुविष्क के मथुरा बौद्ध-प्रतिमा-लेख में भी है। गुर्जर-नरेश जयभट्ट तृतीय के एक दानपत्र में भी (कल्चुरि संवत्, 486; एपि० इं०, XXIII, भाग, IV, अक्टूबर, 1935; तुलनीय, ल्युडर्स की तालिका, संख्या, 1131) इस नगर का वर्णन हुआ है। भागवतपुराण (VIII. 18. 12) में इसे नर्मदा के उत्तरी तट पर स्थित बतलाया गया है। यूनानी भूगोलवेत्ता टॉलेमी के अनुसार समुद्र से कोई तीन मील दूर पर, नर्मदा नदी के उत्तर की ओर स्थित बैरीगाजा एक बड़ा पुर था (ऐंश्येंट इंडिया ऐज डिस्क्राइब्ड बाई टॉलेमी, पृ० 153)। मार्कण्डेयपुराण (बंगवासी संस्करण, अध्याय, 58, श्लोक, 21) में इसे वेण्वा नदी पर स्थित बतलाया गया है।

दिव्यावदान (पृ० 545-576) के अनुसार भरुकच्छ घना बसा हुआ एक संपन्न एवं समृद्धिशाली नगर था। युवान-च्वाङ, जो सातवीं शती ई० में यहाँ आया था, ने इसकी परिधि 2400 या 2500 ली बतलाया है। यहाँ की भूमि लवणयुक्त थी। यह लवणाक्त थी और यहाँ पर विरल हरियाली थी। समुद्री जल को गरम करके नमक बनाया जाता था और लोगों की जीविका का आधार समुद्र

---

[1] **मत्स्य पुराण, CXIII, 50; मार्कण्डेयपुराण, LVII, 51.**

[2] **ऐंश्येंट इंडिया ऐज डिस्क्राइब्ड बाई टॉलेमी, पृ० 38, 153.**

[3] **वही, पृ० 40, 287.**

था। वृक्ष एवं झाड़ियाँ कम एवं बिखरी हुयीं थीं। जलवायु गरम थी। यहाँ के निवासी क्षुद्र, धोखेबाज, मूर्ख एवं कट्टरपंथ तथा विधर्म दोनों में विश्वास करते थे। यहाँ पर दस से अधिक बौद्ध विहार थे जिनमें महायान स्थविर संप्रदाय के अनुयायी 300 भिक्षु रहते थे। यहाँ पर लगभग दस देव मंदिर थे जिनमें विविध संप्रदायों के मतावलंबी रहते थे।[1]

दिव्यावदान (पृ० 544-586) में भरुकच्छ या भृगुकच्छ नाम के विषय में एक अत्यंत रोचक कहानी है। कहा जाता है कि सौवीर में स्थित रोरुक (जिसे कुछ लोग सिंध के एक प्राचीन शहर अलोर से समीकृत करते हैं) के राजा रुद्रायन की हत्या उसके पुत्र-शिखण्डिन ने कर दी थी। इस अपराध के दंडस्वरूप पितृ-हंता राजा शिखण्डिन का राज्य बालू की दुधर्ष वर्षा द्वारा नष्ट कर दिया गया। केवल तीन पुण्यात्मायें दो मंत्री और एक बौद्ध भिक्षु बच रहे थे। ये नये भूभाग की खोज में निकले। भिरू जो उक्त दो मंत्रियों में से एक था, ने एक नये नगर की स्थापना की जिसे उसके नाम के आधार पर भिरुक या भिरुकच्छ कहा गया जिससे भरूकच्छ नाम पड़ा। भिरुराज्य और इसकी राजधानी की बुद्धकाल में स्थापना विषयक अनुश्रुति में केवल इस कारण विश्वास नहीं किया जा सकता क्योंकि यह राज्य और इसका बंदरगाह बुद्धयुग के बहुत पहले से ही था।

आर्य-जन काठियावाड़ से भरुकच्छ और भरुकच्छ से शूर्पारक की समुद्र-यात्रा करते थे।[2] प्राचीन बौद्ध-साहित्य एवं ईस्वी सन् की प्रारंभिक शतियों में भरुकच्छ समुद्री व्यापार एवं वाणिज्य का एक महत्त्वपूर्ण केंद्र था। स्थानीय उपभोग के लिये प्रत्येक माल उज्जयिनी से बैरीगाजा लाया जाता था (भृगुकच्छ, पेरिप्लस ऑव द इरिथ्रियन सी, खंड, 48)। पेरिप्लस (खंड, 49) में कहा गया है कि बैरीगाजा में सुलेमानी पत्थरों का आयात होता था। टॉलेमी के अनुसार यह पश्चिमी भारत में व्यापार का सबसे बड़ा केंद्र था।[3] सुसोन्दि जातक में गंधर्व सग्ग की वाराणसी से भरुकच्छ की यात्रा का उल्लेख है जो एक बंदरगाह (पत्तनगाम) था जहाँ से विभिन्न देशों को जहाज जाया करते थे। इस बंदर-गाह के कुछ व्यापारी सुवर्णभूमि (लोअर बर्मा से समीकृत) के लिए प्रस्थान कर रहे थे। भरुकच्छ आने वाले एक गंधर्व ने उनसे मुलाकात की और गाना

[1] वाटर्स, ऑन युवान-च्वाङ्, II, पृ० 241; बील, रिकार्ड्स ऑव द वेस्टर्न वर्ल्ड, पृ० 259, 260.

[2] भंडारकर, कार्माइकेल लेक्चर्स 1918 पृ० 23.

[3] एँश्येंट इंडिया ऐज़ डिस्क्राइब्ड बाई टॉलेमी, पृ० 153.

गाने का वचन दिया यदि वे उसे अपने जहाज पर ले जाते। वे उसे जहाज पर ले गये और उसके संगीत ने समुद्र में मछलियों को इतना अधिक उत्तेजित किया कि जहाज बुरी तरह से ध्वस्त हो गया[1]। भरुकच्छ में खारे पानी से आहत होने के कारण एक महानाविक की दोनों आँखें जाती रहीं। राजा ने तब उसे मूल्य-निरूपक के रूप में नियुक्त किया। उसने यह नौकरी छोड़ दी और भरुकच्छ में आकर रहने लगा। कुछ व्यापारियों ने उससे अपना जहाज चलाने को कहा यद्यपि वह अंधा था। उनके द्वारा अधिक विवश किये जाने पर उसने अपनी सम्मति दे दी। अंततः उसने जहाज को विनष्ट होने से बचाया और उसे सुरक्षित रूप से उसके गंतव्य तक पहुँचाया जो कि भरुकच्छ का बंदरगाह था[2]।

क्षेमेन्द्र कृत बोधिसत्त्वावदानकल्पलता में कहा गया है कि अपनी वृद्धावस्था में सुरपारग ने कुछ व्यापारियों के साथ भरुकच्छ के निवासियों से व्यापार करने के लिए समुद्रयात्रा की[3]। गण्डव्यूह नामक एक महायान बौद्ध ग्रंथ में भरुकच्छ के मुक्तसार नामक एक स्वर्णकार का उल्लेख हुआ है[4]।

मिलिन्दपञ्हों[5] में किसी एक कुशल शिल्पी द्वारा एक नगर निर्माण के संदर्भ में अनेक देश के निवासियों के साथ भरुकच्छ के निवासियों (भरुकच्छक) का उल्लेख है। वढढ भरुकच्छ के एक सामान्य कुल का था। उसने गृहस्थ जीवन का परित्याग करके बौद्ध-संघ में प्रवेश किया था[6]। वढढ की माँ का पुनर्जन्म इस नगर के एक स्वजातीय परिवार में हुआ था। बाद में अपने संबंधियों को अपना पुत्र देकर उसने बौद्ध-संघ में प्रवेश किया[7]।

सीहवाहु का पुत्र लाड़-देशीय विजय तीन महीने तक भरुकच्छ में रुका था और तब उसने जहाज से पुनः यात्रा की[8]।

इस पत्तन ग्राम में कोरिण्ट नामक एक वन था। यह नर्मदा के तट पर था।

[1] जातक III, पृ० 188 और आगे।

[2] वही, IV, पृ० 137, और आगे।

[3] तुलनीय, रा० ला० मित्र, नार्दर्न बुद्धिस्ट लिटरेचर, पृ० 51.

[4] वही, पृ० 92.

[5] ट्रेवनर संस्करण, पृ० 331.

[6] मिसेज रीज डेविड्स, साम्स ऑव द ब्रेदेरेन, पृ० 194.

[7] थेरीगाथा कामेंट्री, पृ० 171.

[8] दीपवंस, IX. V. 26.

जिन सुव्रत यहाँ जितशत्रु को उपदेश देने के लिए आये थे जो उस समय अश्वमेध-यज्ञ का संपादन कर रहा था।

भरुकच्छ में अनेक लोकप्रिय मंदिर थे। उदय के पुत्र वाहडदेव ने सितुज्ज और उसके अनुज अम्ब ने शकुणिका-विहार का जीर्णोद्धार कराया था।[1]।

भाजा––यह बंबई-पूना मार्ग से लगभग $2\frac{1}{2}$, मील दक्षिण में और मलब्ली रेलवे स्टेशन से कोई एक मील दूर पर स्थित है। प्रथम गुहा एक प्राकृतिक गुफा है। अन्य गुहाएँ सादे विहार हैं। छठवीं गुफा एक अत्यंत जीर्ण विहार है। इसमें एक विषम महाकक्ष या हाल है जिसमें तीन कोठरियाँ हैं। यहाँ पर एक सुंदर चैत्य है। गुफाएँ 2000 ई० पू० से अधिक प्राचीन है। यहाँ पर मेहराब एवं अलंकृत कोनियाँ हैं। चार स्तंभों में बौद्ध प्रतीक लक्षित किये जा सकते हैं। छत धनुषाकार है और इसके सामने अलंकृत मेहराब एवं दोहरा जँगला या वेदिका है। इसके निकट चारों ओर अनेक छोटे विहार हैं।

भाण्डुप––यह महाराष्ट्र में थाना जिले के सालसेट तालुक में स्थित एक गाँव है जहाँ से चित्तराजदेव के अभिपत्र उपलब्ध हुये थे (एपि० इं०, XII, 250 और आगे)।

भेटालिका––यह गाँव पच्छात्री विषय (जिला) में स्थित था (एपि० इं०, XXVI, भाग, V, जनवरी, 1942, पृ० 209)।

बिल्वीश्वर––कीर्तिराज के सूरत अभिपत्र में वर्णित बिल्वीश्वर को पलसेना से दो मील उत्तर में स्थित बलेश्वर या बलेसर नामक एक छोटे कस्बे से समीकृत किया जा सकता है (इं० ऐं०, XXI, पृ० 256)।

ब्रह्मगिरि––नासिक जिले में त्र्यंबक के समीप यह एक पर्वत है जहाँ से गोदावरी निकली है।

ब्रह्मणापुरी––यह पंचगंगा नदी के तट के समीप कोल्हापुर के एक भाग का स्थानीय नाम है (एपि० इं०, XXIII, भाग, I, जनवरी, 1935; एपि० इं०, XXIII, भाग, II)।

ब्राह्मणाबाद––यूनानियों द्वारा अभिहित पेटेलीन के लघुराज्य का नामकरण उसकी राजधानी पट्टल के आधार पर हुआ था। साधारणतया पेटेलीन को सिन्धु नदी के डेल्टा से समीकृत किया जाता है और इसकी राजधानी पाटल (संस्कृत, प्रस्थल) को आधुनिक ब्राह्मणाबाद में या इसके समीप स्थित माना जाता है। डायोडोरस के अनुसार पाटल (टौआल, Tauala) का संविधान

---

[1] जिन विजय सूरि द्वारा संपादित विविधतीर्थकल्प, पृ० 20-22.

स्पार्टा के संविधान जैसा था। वहाँ ज्येष्ठकों की एक परिषद् थी जिसमें व्यवस्था एवं सामान्य प्रशासन के संचालन के लिए सर्वोच्च अधिकार निहित थे। स्ट्रेबो के अनुसार (एच० ऐंड एफ०, II, 252-253) सिकंदर के आक्रमण के बहुत दिन बाद पेटलीन पर बारब्त्री-यवनों का अधिकार हो गया था। कालान्तर में यह इंडो-ग्रीक राजाओं के शिकंजे से निकलकर शकों या इंडो-सीथियन राजाओं के अधिकार में चला गया था। विस्तृत विवरण के लिए द्रष्टव्य, बि० च० लाहा, इंडोलॉजिकल स्टडीज़, भाग, I, पृ० 37; कैं० हि० इं०, I, 378-79; इं० ऐं०, 1884, 354.

कडिज—इसे महाराष्ट्र के पनवेल तालुक में उरन से लगभग 2 मील पश्चिम में उसके पास गंजे से समीकृत किया जा सकता है(एपि० इं०, XXIII, भाग, VII)।

कैम्बे (खंभात)—यह गुजरात के खैरा जिले में है। यहाँ पर एक जैन मंदिर से एक शिलालेख उपलब्ध हुआ है। स्तंभतीर्थ आधुनिक खंभात (Cambay) है।

चंपक—यह आधुनिक चंपानेर है (एपि० इं०, XXIV, भाग, V, पृ० 217)। इसे चंपकपुर भी कहा जाता है (वही, पृ० 219)।

चंपानक—घुम्ली से उपलब्ध सैन्धव दान ताम्रपत्र में इस गाँव का वर्णन है जिसे जूनागढ़ से उत्तर में लगभग 15 मील दूर पर स्थित चावण्ड से समीकृत किया जा सकता हैं (एपि० इं०, XXVI, भाग, V, जनवरी, 1942, पृ० 223)।

चन्द्रपुरी—इसकी पहचान संभवतः अंजनेरी से 12 मील दक्षिण-पश्चिम में स्थित चन्द्राचीमेट से की जाती है (एपि० इं०, XXV, भाग, V, पृ० 230)।

चिकुल—भरहुतअभिलेखों में इसका वर्णन हुआ पे (बरुआ ऐंड सिन्हा, पृ० 14)। चिकुल, चेकुल या चिउल है जो संभवतः बंबई के निकट चाउल है (एपि० इं० II, 42)।

चिप्लून—यह रत्नगिरि जिले के चिप्लून तालुक का मुख्य नगर है जहाँ से पुलकेशिन् द्वितीय के दो अभिपत्र उपलब्ध हुये थे (एपि० इं०, III, 50 और आगे, इंपार्टेंट इंस्क्रिप्शंस फ्रॉम द बड़ौदा स्टेट, I, पृ० 44)।

दधिपद्र—इसे कुमारपाल द्वारा स्थापित द्रोहद से समीकृत किया जाता है। जयसिंह के अभिलेखों में इसका वर्णन है (एपि० इं०, XXIV, भाग, V, पृ० 220)।

दधिपद्रक—यह गाँव पच्छत्री विषय (जिले) में स्थित था जो धुमली से 6 मील पश्चिम में पक्तार्दी ही है (एपि० इं०, XXVI, भाग V, जनवरी, 1942, पृ० 204)।

दण्डकवन—दण्डकवन (दण्डकारण्य) जो रामायण में (आदिकाण्ड, सर्ग, I, श्लोक, 46) राम के बनवास के संबंध में विश्रुत है, संपूर्ण मध्य प्रदेश में बुंदेल खंड क्षेत्र से कृष्णा नदी तक फैला हुआ था (ज० रा० ए० सो०, 1894, 241; तुलनीय, जातक, V, 29); किंतु महाभारत (सभापर्व, XXX, 1169; वन पर्व, LXXXV, 8183-4) में दण्डकवन को केवल गोदावरी के उदगम-स्थल तक ही सीमित बतलाया गया है। भागवत पुराण (IX. 11. 19; X. 79. 20) के अनुसार दक्कन में स्थित इस वन में राम एवं बलराम गये थे। पद्मपुराण (अध्याय, 21) में इसका वर्णन अन्य तीर्थ स्थानों में हुआ है। इस वन में एक सरिता थी। यहाँ पर एक गुहा भी थी (दशकुमारचरितम्, पृ० 20)। इस वन को जनस्थान के पश्चिम में चित्रकुञ्जवत भी कहा जाता था (उत्तर चरितम्, अंक, I, 30)। दण्डकारण्य क्षेत्र में अनेक जलकुण्ड, आश्रम, पहाड़ियाँ, सरिताएँ एवं झीलें आदि थीं (वही, अंक, II, 14)। बाण ने अपने हर्षचरित (प्रथम उच्छ्वास) में इस वन का उल्लेख किया है। मिलिन्दपञ्हो (पृ. 130) में भी इस वन का वर्णन है। जैन ग्रंथ निशीथचूर्णी में इस वन के जलकर भस्मीभूत हो जाने की एक विचित्र कहानी है (16. 1113)। विन्ध्य के पार्श्व में स्थित दण्डकारण्य वस्तुतः मज्झिमदेश को दक्खिणापथ से पृथक करता था।

दशपुर—बृहत्संहिता (अध्याय, XIV. 20) में एक नगर के रूप में इसका वर्णन प्राप्य है। पश्चिमी रेल-पथ की राजस्थान-मालवा शाखा पर यह एक सुप्रसिद्ध स्थान है। इसे मध्यप्रदेश के मंदसोर जिले से समीकृत किया जाता है का० इं० इं०, III, 79, फ्लीट की टिप्पणी, बाणकृत कादम्बरी (बंबई संस्करण, पृ० 19) के अनुसार यह उज्जयिनी के निकट मालवा में स्थित था। अति संभवतः यह पश्चिमी मालवा में था (गज़ेटियर ऑव बांबे प्रेसीडेंसी, 1883, नासिक, पृ० 636)। प्राचीन दशपुर शिप्रा की एक सहायक नदी सिवन के उत्तरी या बाएँ तट पर स्थित था। यशोवर्मन के मंदसोर पाषाण-स्तंभ लेख में मंदसोर या, और औचित्य से दसोर का वर्णन है जो मंदसोर जिले का मुख्य नगर है (ग्वालियर स्टेट गज़ेटियर, I, 265 और आगे)। बन्धुवर्मन के मंदसोर-अभिलेख में लाट एवं दशपुर का वर्णन है। कुमार गुप्त प्रथम के अभिलेखों में उल्लिखित दशपुर अनुमानतः मालवगण या पश्चिमी मालवों का मुख्य नगर था। नरवर्मन् एवं उसका पुत्र विश्ववर्मन यहाँ पर राज्य करते थे जो स्वतंत्र राजा थे। यह

प्रारंभिक गुप्त साम्राज्य का एक महत्त्वपूर्ण प्रदेश (भुक्ति) या प्रांत था। पूर्व-कालीन सातवाहनों ने स्पष्टतः क्षहरात क्षत्रप नहपान के अधिकार से दशपुर, नासिक, शूर्पारक, भृगुकच्छ एवं प्रभास जैसे स्थान छीने थे। क्षहरात क्षत्रप नहपान के शासनकाल में उसके दामाद उषवदात ने दशपुर में लोकोपयोगी अनेक कार्य करके अशोक जैसी ख्याति अर्जित की थी। दशपुर एवं विदिशा दो पड़ोसी नगर थे जो गुप्तकाल में उज्जयिनी की शान से स्पर्धा करते थे। गुप्त-वंशीय सम्राटों के शासन काल में मालव या कृत संवत् का प्रयोग दशपुर तक ही सीमित था। मालवगण संभवतः मंदसोर क्षेत्र में चले गये थे जहाँ समुद्रगुप्त के उत्तराधिकारियों से संबंधित अधिकांश लेख उपलब्ध हुये हैं। इस क्षेत्र को अंगुत्तरनिकाय में वर्णित प्राचीन महाजनपद अवन्ती, रुद्रदामन के जूनागढ़-शिलालेख में अवन्ती तथा जैनग्रन्थ भगवतीसूत्र में वर्णित मलय (मालवा) से समीकृत किया जाता है। जैनग्रंथ आवश्यक चूर्णी (पृ० 400 और आगे) से विदित होता है कि दशपुर में कुछ व्यापारी निवास करते थे और तब से इसे दशपुर कहा जाता था। मंदसोर के राजा 58 ई० पू० में प्रारंभ होने वाले कृत संवत् का प्रयोग करते थे जिसे परंपरागत रूप से मालवगण ने आगे चलाया था। इस संवत् से मालवों को संबद्ध करने वाले अभिलेख न केवल मंदसोर क्षेत्र में ही वरन् अन्य स्थानों यथा उदयपुर जिले में नागरी एवं कोटा जिले में कांसुवाम में भी प्राप्त हुये हैं। यशोधर्मन के पाषाण-स्तंभ लेख में मालवा के राजा यशोधर्मन द्वारा हूण आक्रांता मिहिरकुल की पराजय का उल्लेख है (का० इं० इं०, III; तुलनीय, एपि० इं०, XII, 315 और आगे; तुलनीय, नरवर्मन के काल का, मालव संवत् 461 का मंदसोर अभिलेख)। पाँचवीं शताब्दी ई० के मध्य इस पर हूणों का अधिकार हो गया था जिन्हें मालवा से भगाया गया था। मंदसोर में सूर्य का एक प्राचीन मंदिर है जिसका निर्माण कुमारगुप्त प्रथम के शासनकाल में हुआ था। मंदसोर से 3 मील दक्षिण-पश्चिम में स्थित सोन्दनी गाँव में सिंह एवं घंटाकार शीर्षवाले दो भव्य एकाश्मक प्रस्तर स्तंभ हैं।

कुमारगुप्त एवं बन्धुवर्मन के मंदसोर शिला-लेख में दशपुर का वर्णन एक नगर के रूप में हुआ है। दशपुर-नरेश यशोधर्मन के राजकवि ने रेवा नदी से पारिपात्र पर्वत और अवर सिन्धु क्षेत्र तक फैले राज्य क्षेत्र का विशद् कवित्वपूर्ण वर्णन किया है (विस्तृत विवरण के लिए दृष्टव्य, लाहा, उज्जयिनी इन ऐंश्येंट इंडिया)।

दाभिग्राम—(एपि० इं० I, 317)—इसे उत्तर गुजरात में स्थित डाभी से समीकृत किया जा सकता है।

देवल—यह मध्ययुग में एक बंदरगाह, और सिन्धु नदी की एक मंडी थी। कुछ लोग इसे कराँची (पाकि०) में स्थित बतलाते हैं। अन्य लोगों के अनुसार यह कराँची एवं थथा (पाकि०) के बीच में किसी स्थान पर स्थित था। इसे बघार नदी पर स्थित बतलाया जा सकता है। हैमिल्टन के अनुसार यह लारीबंदर के निकट था। विंसेंट स्मिथ का विचार है कि यह पीर पठो के वर्त्तमान मंदिर के पास था (अर्ली हिस्ट्री ऑव इंडिया, तृतीय संस्करण, पृ० 105)। विस्तृत विवरण के लिए द्रष्टव्य, कनिंघम, एं० ज्यॉ० इं०, पृ० 340 और आगे)।

देवथन—नासिक जिले में योला से कोई 16 मील पूरब में योला तालुक में स्थित यह एक गाँव है। यहाँ औरंगाबाद जाने वाली पक्की सड़क पर 14 मील तक कार द्वारा पहुँचा जा सकता है (आर्क० स० इं० एनुअल रिपोर्ट्स, 1930-34, पृ० 318)।

धम्भिक—नासिक जिले में स्थित यह एक गाँव है (ल्युडर्स की तालिका, संख्या, 1142)।

धंकतीर्थ—यह पच्छत्री विषय (जिले) में स्थित एक गाँव था। यह स्पष्टतः घुमली से लगभग 25 मील दूर पूरब में गोन्दल में स्थित घाँक ही है। घाँक इसी नाम की एक पहाड़ी की सीमा पर स्थित है और यह जैनियों का एक तीर्थ-स्थान है (एपि० इं०, XXVI, भाग, V, जनवरी, 1942, पृ० 199)।

धुलिया—यह महाराष्ट्र के खानदेश जिले में स्थित है जहाँ पर कर्कराज के अभिपत्र उपलब्ध हुये थे (एपि० इं०, VIII, 182, और आगे)।

दोहद—यह गुजरात के पञ्चमहल जिले की दोहद तहसील का प्रमुख नगर है जो बड़ौदा से 77 मील पूर्वोत्तर में स्थित है (एपि० इं०, XXIV, भाग, V, जनवरी, 1938, पृ० 212)।

द्वारवती-(द्वारका-जैन बारवै)—इसे कुशस्थली भी कहा जाता है। स्कन्दपुराण (अध्याय, I, 19-23) के अनुसार यह एक तीर्थस्थान है। योगिनी-तंत्र 2.4, पृ० 128-129) में भी इसका उल्लेख हुआ है। मूलतः यह गिरनार पर्वत के समीप स्थित थी किंतु बाद में इसे काठियावाड़ के सुदूर पश्चिमी तट पर समुद्र तट पर स्थित माना जाने लगा। यह पेरिप्लस द्वारा वर्णित 'बराके' है (पृ० 389)। जैनग्रंथ नायाधम्मकहाओ में (V, पृ० 68) कहा गया है कि बारवै द्वारावती कृष्ण वासुदेव (कण्ह वासुदेव) का निवास-स्थान था।* इसे रेवत ने बसाया था। कृष्ण ने यहाँ अश्वमेध किया था (भागवत, I. 8. 10-27; X. 89. 22)। अन्तगडदसाओ (पृ० 5) में भी इसे अंधक-वृष्णियों (अन्धग वण्हि) का निवास-स्थान बतलाया गया है। हरिवंश (अध्याय, CXV,

45-49) के अनुसार यह नगर फाटकों द्वारा समुचित रूप से सुरक्षित, अतिसुन्दर भित्तियों से अलंकृत, परिखाओं द्वारा परिवेष्टित, प्रासादों से युक्त, पुष्करों और निर्मल जलवाली लघुसरिताओं तथा वाटिकाओं से सुसज्जित था। दश-बंधुओं ने जो अंधक वेण्हु के पुत्र थे, संपूर्ण भारत पर विजय प्राप्त करने की इच्छा की थी। अयोध्या पर विजय प्राप्त करने के बाद वे द्वारावती की ओर बढ़े जिसके एक ओर समुद्र और दूसरी ओर पर्वत थे। इस नगर में चार फाटक थे। पहले तो वे इस पर अधिकार करने में असफल रहे किंतु बाद में वे सफल हुये। इसको दस भागों में विभक्त करने के अनंतर वे इस नगर में रुके (जातक, IV, पृ० 82-84)। उक्त दश-बंधुओं में सबसे बड़े वासुदेव की जंबावती नामक एक प्रिय पत्नी थी जो चण्डाल जाति की थी। एक दिन वह द्वारावती के बाहर गये और एक उद्यान में जाते समय मार्ग में उन्होंने एक सुंदरी लड़की को देखा। वह उससे प्रेम करने लगे और उसे अपनी महारानी बनाया। उसने शिवि नामक एक पुत्र को जन्म दिया जो अपने पिता की मृत्यु के बाद द्वारावती का राजा बना (जातक, VI, पृ० 421)। इस नगर में एक अति सुंदर हिंदू मंदिर है। कुकुरों ने द्वारका क्षेत्र पर अधिकार कर लिया था जिसे 'कुकुरान्ध वृष्णिभिः युप्ताः', कहा गया है। भागवत[1] एवं वायुपुराणों में इस जाति का उल्लेख है जब इसमें यादवों के राजा उग्रसेन को कुकुर जाति में उत्पन्न बतलाया गया है (कुक्कुरोद्भव)। काम्बोजों का देश द्वारका से संबंधित एक सार्थ-पथ पर स्थित था (पेटवत्थु, पृ० 23)। चण्डाल-स्त्री से उत्पन्न वासुदेव का पुत्र यहाँ राज्य करता था (जातक, VI, पृ० 421)। द्वारावती का राजा विजय, उन कतिपय प्राचीन नरेशों में था जिन्होंने संन्यासियों के रूप में पूर्णता प्राप्त की थी (उत्तराध्ययन-सूत्र, XVIII)। द्वारावती के अंधकवेण्हु तरुणों ने कण्हदीपायन के साथ दुर्व्यवहार किया और अंत में उनकी हत्या कर दी। विस्तृत विवरण के लिए द्रष्टव्य, बि० च० लाहा, इंडोलॉजिकिल स्टडीज़, I, पृ० 52)।

एरण्डपल्ल—(इलाहाबाद स्तंभ लेख में वर्णित)—इसे एरण्डोल से समीकृत किया जा सकता है जो महाराष्ट्र के पूर्वी खानदेश जिले में इसी नाम की एक तहसील का मुख्य नगर है (ज० रा० ए० सो०, 1898, पृ० 369-70)। कुछ लोगों के अनुसार इसे संभवतः आंध्रप्रदेश के समुद्र-तट पर शिकाकोल के निकट

---

[1] इं० ऐं०, जिल्द, XXVIII, (1899), पृ० 2, भागवत पुराण की भौगोलिक तालिका द्रष्टव्य।

एरण्डपली से समीकृत किया जा सकता है जिसका वर्णन देवेन्द्रवर्मन के सिद्धांतम् अभिपत्रों में हुआ है (एपि० इं०, XII, पृ० 212)।

एरण्डि—यह नर्मदा की एक सहायक नदी उरी है (पद्म पुराण, अध्याय, IX)।

एरुथन—इसका वर्णन कीर्त्तिराज के सूरत अभिपत्रों में है। यह बलेसर से दो मील पश्चिमोत्तर में स्थित आधुनिक एरथन है।

गदग—यह मैसूर के धारवाड़ जिले के गदग तालुक का मुख्य नगर है। यहाँ पर त्रिकूलेश्वर का मंदिर स्थित है। इस मंदिर की पार्श्व प्राचीर के सामने स्थित एक शिला पर उत्कीर्ण एक अभिलेख मिला है।इ स अभिलेख में होयसल राजा वीरवल्लाल द्वितीय द्वारा प्रदत्त एक भू-दान का उल्लेख है (एपि० इं०, VI, 89 और आगे; एपि० इं०, XV, 348 और आगे)। गदग के त्रिकूलेश्वर मंदिर से यादव भिल्लम का एक शिलालेख उपलब्ध हुआ था (एपि० इं० III, 217)।

गंधारिकाभूमि—यह कल्याण में एक स्थान है (ल्युडर्स की तालिका, सं० 998)।

गाभलाग्राम—(एपि० इं० II, 26)—उत्तर गुजरात में संभवतः यह दिल्मल के निकट है।

गाधिपुर—कन्नौज (द्रष्टव्य, कन्नौज)।

घरपुरी—यह अपोलोबंदर से लगभग 6 मील पूर्वोत्तर में बंबई पोताश्रय में स्थित सुविख्यात एलीफैंटा द्वीप है। पुर्तगालियों ने इसे इस कारण एलीफैंटा की संज्ञा दी है क्योंकि इस विशाल गुहा के प्रवेशद्वार पर पत्थर का एक भीमकाय हाथी बना हुआ था। एलीफैंटा की गुफाएँ ब्राह्मण एवं बौद्धमत से प्रभावित है। यहाँ की तीन गुफाएँ नष्ट हो चुकी हैं। एक गुफा में यहाँ पर एक बौद्ध चैत्य है। मुख्य कक्ष की दीवाल पर ब्राह्मणधर्म के त्रिदेवों की प्रतिमा त्रिमूर्ति मिलती है।

घुम्ली—यह काठियावाड़ में नवनगर में स्थित है जहाँ से छः दान ताम्रपत्र उपलब्ध हुये थे। प्राचीन काल के लोग इसे भूतांबिलिका कहते थे। अनुश्रुतियों के अनुसार भूतांबिलिका जेठवा राजपूतों की प्राचीन राजधानी थी, पोरबंदर के राणा जिनके आधुनिक प्रतिनिधि है (एपि० इं०, XXVI, भाग, V, अक्टूबर, 1941, पृ० 185 और आगे)।

गिरिनगर—**(गिरनार)**—ल्युडर्स की तालिका (सं० 965-966) में इसका वर्णन एक नगर के रूप में हुआ है। जैनग्रन्थ अनुयोगद्वार (सूय 130, पृ० 137)। के अनुसार गिरिनयर या गिरिनगर ऊर्जयंतपर्वत के समीप स्थित

था। स्कन्दगुप्त के जूनागढ़ शिला-लेख में गुजरात के काठियावाड़ द्वीपकल्प में जूनागढ़ के मुख्य-नगर जूनागढ़ का वर्णन है। इसे गिरिनगर या गिरनार भी कहा जाता है जिसे अभिलेखों में ऊर्जयत भी कहा गया है (का० इं० इं०, III)। महाक्षत्रप रुद्रदामन के जूनागढ़-शिलालेख से हमें ज्ञात होता है कि राजा अशोक के शासन-काल में तुषास्फ नामक एक अधीनस्थ यवनराज राष्ट्रिक (राज्यपाल) के रूप में सुराष्ट्र पर राज्य करता था जिसकी राजधानी गिरिनगर थी। जूनागढ़ के समीप ही गुजरात में गिरनार या रैवतक पहाड़ी स्थित है जिसे जैन तीर्थङ्कर नेमिनाथ का जन्म-स्थल माना जाता है। इस पहाड़ी पर गुरुदत्तचरण नामक पदचिह्न है। यह जैनियों का एक तीर्थ-स्थल है क्योंकि यहाँ पर नेमिनाथ एवं पार्श्वनाथ के मंदिर हैं। यहाँ पर दत्तात्रेय ऋषि का आश्रम भी है। सुवर्णरेखा नदी (-पलाशिनी) इस पहाड़ी के नीचे बहती है। जैनग्रंथ उत्तराध्ययन सूत्र (अध्याय, XLV) के अनुसार यहाँ पर वृद्धावस्था में अरिष्टनेमि की मृत्यु हुयी थी। गोविन्ददास की कर्चा से हमें ज्ञात होता है कि प्रसिद्ध वैष्णव सुधारक श्री चैतन्य गिरिनगर आये थे। विस्तृत विवरण के लिए द्रष्टव्य, लाहा, सम जैन कैनाँनिकल, सूत्राज, पृ० 180; ऊर्जयत भी द्रष्टव्य।

गिरणा––यह नदी सह्य या पश्चिमी घाट से निकलती है और पूर्वोत्तर दिशा में बहती हुयी खानदेश में चोपदा के आगे ताप्ती नदी में मिलती है। यह ताप्ती नदी-समूह से संमिलित है और दाहिनी ओर से एक तथा बाँईं ओर से दो सरिताओं द्वारा आपूरित है (लाहा, रिवर्स ऑव इंडिया, पृ० 42)।

गोपालपुर––यह गाँव जबलपुर जिले में भेड़ाघाट से कोई तीन मील दक्षिण-पश्चिम में स्थित है। यह नर्मदा नदी के दाहिने तट पर स्थित है (एपि० इं० XVIII, 73)।

गोवर्धन––योगिनीतंत्र (1.14, पृ० 83) के अनुसार यह पर्वत केशी नामक राक्षस की पार्थिव भस्म के पुंज से निर्मित थे। चूँकि इस पर उगी घास से गायों का भरण-पोषण होता था, इसलिए इसका नाम गोवर्धन पड़ा था। हरिवंश (अध्याय, LXII, 25-26) के अनुसार मंदार पर्वत की भाँति यह एक ऊँचे शिखर वाला विशाल पर्वत है। इसके केंद्र में अंजीर का एक विशाल वृक्ष है जिसकी शाखाएँ ऊँची एवं एक योजन तक फैली हुयी हैं। यह एक तीर्थस्थान है और यहाँ आकर लोग पाप-मुक्त होते हैं। यह महाराष्ट्र राज्य में आधुनिक नासिक के पास है (हुविष्क का मथुरा बौद्ध प्रतिमा लेख)। इसे गोवर्धनपुर भी कहा जाता है, (द्रष्टव्य, मार्कण्डेयपुराण, अध्याय, 57; भंडारकर, अर्ली हिस्ट्री ऑव द डेकन, पृ० 3)। नहपान एवं पुलुमावि के शासनकाल में यह

कुछ महत्वपूर्ण प्रतीत होता है। उषवदात ने गोवर्धन में एक विश्राम-गृह का निर्माण कराया था। अभिलेखों से प्रतिभासित होता है कि नहपान के शासन-काल में और बाद में पुलुमावि के अधीन गोर्वधन राजधानी थी। इसे नासिक से छः मील पश्चिम में गोदावरी के दाहिने तट पर स्थित गोवर्धन गंगापुर नामक विशाल आधुनिक गाँव से समीकृत किया जा सकता है (गज़ेटियर ऑव द बांबे प्रेसिडेंसी, भाग XVI, 1883, नासिक, पृ० 636-637)।

गुर्जर—युवान-च्वाङ ने इसे कियु-चे-लो (Kiu-che-lo) कहा है। यह वलभी से 300 मील उत्तर में एवं उज्जैन से 467 मील पश्चिमोत्तर में स्थित था। यहाँ के निवासी किसी समय पंजाब में रहते थे और बाद में काठियावाड़ द्वीपकल्प में आये जिसे अब उनके कारण गुजरात कहा जाता है (कनिंघम, एं० ज्यॉ० इं०, पृ० 357 और आगे, 696)। प्राचीनकाल में जयसिंहदेव ने गुर्जर देश में नेमि का एक नया मंदिर बनवाया था। गुर्जर-नरेश के दो प्रसिद्ध मंत्री वास्तुपाल एवं तेजपाल थे। कान्यकुब्ज-नरेश की पुत्री महानदेवी ने अपने पिता से गुर्जर का उत्तराधिकार प्राप्त किया था। तेजपाल ने गिरनार में एक सुंदर नगर एवं पार्श्वनाथ के मंदिर का निर्माण कराया था। उसने कुमारसर नामक एक सुंदर झील भी बनवाई थी। दशदशा का मंदिर सुवर्णरेखा के तट पर स्थित है। उसने तीन चैत्य बनवाये थे। वस्तुपाल ने मरुदेवी का मंदिर बनवाया था (लाहा, सम जैन कैनॉनिकल सूत्राज़, पृ० 181-182)।

हरिश्चन्द्रगढ़—पश्चिमी घाट के एक अत्यंत मनोरम स्थल और अकोला से 19 मील दक्षिण-पश्चिम में महाराष्ट्र के अहमदनगर जिले के अकोला तालुक में स्थित यह एक दुर्ग है। यह समुद्रतल से 4,000 फीट से भी अधिक ऊँचाई पर स्थित है। इसके शिखर पर स्थित किले एवं मंदिरों को देखने प्रतिवर्ष असंख्य तीर्थयात्री आते हैं (लाहा, होली प्लेसेज़ ऑव इंडिया, पृ० 43)

हरिसेणाणक—यह गाँव स्वर्ण मञ्जरी विषय (जिले) में स्थित था। यह संभवतः नवनगर में स्थित हरियासन नामक आधुनिक गाँव ही है (एपि०, इं०, XXVI, V, जनवरी, 1942, पृ० 218)

हस्तवप्र—(हस्तकवप्र)—यह आधुनिक हाटब है जो काठियावाड़ में भावनगर जिले में गोघा के छह मील दक्षिण में स्थित एक गाँव था जिसपर शीला-दित्य तृतीय का अधिकार था। यह भड़ौच जिले के ठीक सामने है (इंपार्टेंट इंस्क्रिप्शंस ऑफ द बड़ौदा स्टेट, जिल्द 1, पृ० 18)। छठीं शती ईस्वी के कई वलभी ताम्रपत्र राज्याज्ञाओं में इसे किसी विषय (जिले) का मुख्यावास बतलाया

गया है (जे० पीएच० फोगेल, नोट्स ऑन टॉलेमी, बु० स्कू० ओ० अ० स्ट०, जिल्द, XIV, भाग, I)।

हुलुम्गूर (हुलगूर)—यह गाँव मैसूर के धारवाड़ जिले की बंकापुर तहसील में, शिवगाँव से कोई 8 मील पूर्वोत्तर में स्थित था जहाँ से विक्रमादित्य षष्ठम के राज्यकाल के अभिलेख उपलब्ध हुये हैं (एपि० इं० VIII, पृ० 329)।

इँटवा—इँटवा का प्राचीन स्थल किसी गहन वन के बीच में स्थित एक पहाड़ी पर था जो सौराष्ट्र में अशोक, रुद्रदामन एवं स्कन्दगुप्त के अभिलेखों के लिए विश्रुत जूनागढ़ की विख्यात चट्टान से लगभग 3 मील दूर पर थी (एपि० इं०, XXVIII, भाग, IV, अक्टूबर, 1949, पृ० 174)।

जरक—यह छोटा कस्बा सिन्धु नदी के पश्चिमी तट पर, हैदराबाद एवं थथा (पाकि०) के प्रायः बीच में स्थित है। यह मध्य सिंधु एवं अवर सिंधु के बीच की वर्त्तमान सीमा है (कनिंघम, एं० ज्यॉ० इं०, पृ० 329-30)।

जयपुर—यह गाँव आधुनिक जितपुर ही है जो नंदोद से 6 मील पूर्व एवं तोरन से लगभग आठ मील दक्षिणपूर्व में स्थित है (एपि० इं० XXV, भाग, VII, जुलाई, 1940)।

जीर्णदुर्ग—इसे आधुनिक जूनागढ़ से नहीं किंतु एक दुर्ग से समीकृत किया जा सकता है। जूनागढ़ नगर के भीतर दामोदर घाट की सीमा और गिरनार के उन्नत ढलान पर स्थित दुर्ग को जीर्णदुर्ग कहा जाता था (एपि० इं०, XXIV, भाग, V, पृ० 221)।

जूनागढ़—द्रष्टव्य गिरिनगर (गिरनार)।

जुन्निनगर—इसकी पहचान संभवतः पूना से लगभग 55 मील उत्तर में स्थित जुन्नार नामक प्रसिद्ध स्थान से की जा सकती है (एपि० इं०, XXV, भाग, IV, पृ० 168)।

कच्छ—यह पश्चिमी भारत का एक देश है (ल्युडर्स तालिका, सं० 965)। इसे कूच या भरुकच्छ से समीकृत किया जा सकता है (तुलनीय, बृहत्संहिता अध्याय, XIV)। पाणिनि ने अपनी अष्टाध्यायी (2.4.1.133) में इसका वर्णन किया है।

कलियाणग्राम—(इं० ऐं०, VI, 205, और आगे) यह उत्तर गुजरात में है और इसे कालियना से समीकृत किया जा सकता है।

कल्लिवन—यह नासिक जिले के पश्चिमोत्तर भाग में स्थित कल्वान है (एपि० इं०, XXV, भाग, V, पृ० 230—पृथ्वीचन्द्र भोगशक्ति के दो दानपत्र)।

कन्हेरी—बंबई से लगभग 20 मील उत्तर में कन्हेरी नामक की गुफाओं का एक विशाल समूह स्थित है। अनेक वर्षों तक इन गुफाओं में बौद्ध भिक्षुओं का निवास था। ये थाना के निकट स्थित हैं। ये गुहाएँ एक सघन वन के बीच में स्थित एक पहाड़ी की विशाल कंदरा में बनायी गयी हैं। इन गुहाओं में से अधिकांश में एक कमरा है जिसके सन्मुख एक छोटी दालान स्थित होती है। शिल्प परवर्त्ती आठवीं या नवीं शताब्दी ई० का है। इन गुफाओं से उत्तर में एक विशाल गुहा है जिसमें तीन डगोबा एवं कुछ मूर्त्तियाँ है। फर्ग्यूसन के अनुसार यह गुहा मंदिर 86 फीट लंबा एवं 39 फीट चौड़ा है। इसमें 34 खंभे एवं एक सादा डगोबा है। यहाँ पर बुद्ध की दो भीमकाय प्रतिमाएँ एवं बोधिसत्व अवलोकितेश्वर की एक खड़ी हुयी प्रतिमा है। यहाँ पर अनेक लघु कोठरियाँ हैं जो एक के ऊपर एक बनी हुयी हैं। दसवीं गुफा दरबारहाल (महाकक्ष) है जो तंगघाटी के दक्षिण की ओर स्थित है। कंदरा के दक्षिण की ओर पहाड़ी के ढाल पर खोदी गयी कोठरियों की कई पंक्तियाँ हैं। गुफा के बाहर पत्थरों की कुछ चौकियाँ हैं। यहाँ पर एक डगोबा भी है जिसकी छत में एक छत्र खुदा हुआ है। इन गुफाओं का काल-निर्णय करना कठिन है किंतु इतना अवश्य स्वीकार्य होना चाहिए कि कार्ली एवं यहाँ पर स्थित गुहाओं के बीच में शैली का अधिक अपकर्ष हुआ है। यहाँ की कुछ मूर्तियाँ निःसंदेह बहुत बाद की हैं।

करहकट—(करहाटनगर या करहाट)—भरहुत अभिलेखों में इसका वर्णन हुआ है (ब्रुआ ऐंड सिन्हा, पृ० 11, 12; 17, 33)। यह एक नगर है जिसे हुल्ट्श ने महाराष्ट्र के सतारा जिले में स्थित आधुनिक करहद से समीकृत किया है जहाँ से कृष्ण तृतीय के ताम्रपत्र उपलब्ध हुये थे (एपि० इं०, IV, 278 और आगे)। एपि० इं०, (XXVI, पृ० 323) के अनुसार यह आधुनिक कराड़ है।

कर्दम-आश्रम—कर्दम ऋषि का आश्रम गुजरात में सिद्धपुर में था (भागवत पुराण, III, 24.9)।

कालयान—(कालिअन, कलियान, कालियन)—यह एक नगर का नाम है (ल्युडर्स की तालिका, संख्या, 1024, 986, 1032, 998)।

काल्लण—(कल्याण या कालयन)—यह एक पुर का नाम है (ल्युडर्स की तालिका, सं० 988)।

कान्हैरी—इसे खानदेश में चालिसगाँव से आठ मील दक्षिण पश्चिम में स्थित कन्हेर से समीकृत किया जा सकता है (एपि० इं०, XXV, भाग, V, जनवरी, 1940, पृ०, 208)।

कार्ली—बंबई एवं पूना के बीच बोरघाटा पहाड़ी में कार्ली और भाजा

नामक दो प्रसिद्ध बौद्ध गुहा-मंदिर हैं। उनकी तिथि लगभग ईसवी सन् के प्रारंभ में बतलाई जाती है। कार्ली की गुफाएँ बंबई-पूना पथ के लगभग 2 मील उत्तर में स्थित है। निकटतम रेलवे स्टेशन मलवली है। इन गुफाओं में उत्कीर्ण अभिलेखों में नहपान एवं ऋषवदात के नाम आते हैं। दो अभिलेखों में धूतपाल नामक किसी महान राजा का वर्णन है जिसे शुंगवंशीय देवभूति माना जाता है। इन गुहाओं के स्तंभ पूर्णतः लंबवत हैं। मूल रक्षावरण पर मूर्त्तियों से अलंकृत एक पत्थर का पर्दा डाल दिया जाता है। इन गुहाओं के प्रवेशद्वार पर चार सिंहों से मंडित एक स्तंभ है जिसके मुख खुले हुये और चारों दिशाभिमुख है। दाहिने हाथ की ओर एक शिव मंदिर है और उसके निकट ही चक्र से मंडित एक दूसरा स्तंभ है। बाहरी द्वार मंडप भवन के आकार से अधिक चौड़ा है। यहाँ पर चैत्य-गोमुखों से सज्जित अनेक लघुरूप मंदिरों के अग्र भाग हैं। द्वारों के दोनों ओर विशाल युग्म आकृतियाँ कान्हेरी की प्रतिमाओं के समान प्रतीत होते हैं। यहाँ पर बुद्ध के साथ पद्मपाणि चित्रित किये गये हैं और अति संभवतः कमल पर अपना पैर रखे हुये सिंहासन पर बैठे हुये मंजुश्री को चित्रित किया गया है। प्रवेश द्वार में गलियारे के नीचे से तीन दरवाजे हैं। यहाँ पर पंद्रह स्तंभ हैं जिनके आधार-पीठ लक्ष्मी के जलकलश है; दण्ड अष्ट पार्श्वीय हैं जो संघ का प्रतिरूपक है। स्थापत्य की दृष्टि से ये सभी गुफाएँ श्रेष्ठ हैं। जाली का काम प्रायः सर्वश्रेष्ठ है। पहली एवं दूसरी गुफाओं का चैत्य एक तिमंजिला विहार है। सर्वोच्च मंजिल में चार स्तंभों युक्त एक दालान है। सर्वोच्चमंजिल की बाँईं ओर पाँच कोठरियों के सामने एक ऊँचा चबूतरा है। दरवाजे अच्छी तरह से लगे हैं। तीसरी गुफा एक दुमंजिला विहार है। चौथी गुफा चैत्य के दक्षिण में स्थित है और अभिलेखों से यह विदित होता है कि आंध्र-नरेश गौतमी पुत्र पुलमायि के शासन काल में हरफन ने इसे दान दिया था (कार्ली की गुफा में स्थित अभिलेखों के लिए द्रष्टव्य, एपि० इं०, VI, 47 और आगे)।

केलोडि (केलवडी)—बीजापुर जिले के मुख्य नगर बादामी से लगभग 10 मील उत्तर में स्थित यह एक गाँव है जहाँ से सोमेश्वर प्रथम के शासनकाल का एक अभिलेख (1053 ई० में लिखित) उपलब्ध हुआ था (एपि० इं०, IV, 259 और आगे)।

खर्जूरिका—यह गाँव मालवा के समीप या मालवा क्षेत्र के अंतर्गत् स्थित था। उज्जैन के परितः खजुरिया सामान्य वस्तु है (एपि० इं०, XXIII, भाग, IV, अक्टूबर, 1935)।

खानापुर—यह महाराष्ट्र राज्य के सतारा जिले के खानापुर तालुक का

प्रमुख शहर है (एपि० इं०, XXVI, भाग, VIII, जुलाई, 1948, पृ० 312)।

खेद—युवान-च्वाङ के अनुसार यह मालवा से 50 मील पश्चिमोत्तर में स्थित था। कुछ लोगों ने इसे गुजरात में स्थित बतलाया है। चीनी तीर्थयात्री के अनुसार इसकी परिधि 500 मील थी (कनिंघम, एं० ज्या० इं०, पृ० 563 और आगे)।

खेटक—यह गुजरात में आधुनिक खेरा है (एपि० इं०, XXIII, भाग, IV, अक्टूबर, 1935, पृ० 103)। कुछ लोगों ने इसे कैरा से समीकृत किया है (इंपार्टेंट इंस्क्रिप्शंस फ़ॉम द बड़ौदा स्टेट, जिल्द, I, पृ० 29)।

कोडवल्ली—इसकी पहचान कोल्हापुर से लगभग सात मील पूरब में स्थित कोडोली से की जा सकती है (एपि० इं०, XXIII, भाग, I व II, 1925)।

कोल्लगिरि—इसका वर्णन बृहत्संहिता (XIV, 13) में है। कुछ लोगों ने उसे कोल्हापुर से समीकृत किया है।

कोल्लापुर—यह आधुनिक कोल्हापुर का प्राचीन नाम है (एपि० इं०, III, 207; XXIII, भाग, I, जनवरी, 1935, पृ० 30)।

कोलूर—यह गाँव करजगीशहर से प्रायः पश्चिम में लगभग तीन मील दूर पर धारवाड़ जिले के करजगी तालुक में स्थित है (एपि० इं०, XIX, पृ० 179)।

कोटिनारा—यह सुराष्ट्र का एक महत्त्वपूर्ण नगर है जहाँ वेदों एवं आगमों में सुनिष्णात सोम नामक एक ब्राह्मण रहता था। वह नियमतः छः विहित कर्मों को संपादित किया करता था (लाहा, सम जैन कैनोंनिकल सूत्राज, पृ० 181)।

कुकुर—यह उत्तरी काठियावाड़ में आनर्त्त के समीप एक देश था (ल्युडर्स की तालिका, सं०, 965)। भागवत पुराण में वर्णित कुकुर द्वारका क्षेत्र में निवास करते प्रतीत होते हैं। बृहत्संहिता (XIV. 4) में उन्हें पश्चिमी भारत में स्थित बतलाया गया है। गौतमी बलश्री के नासिक गुहालेख के अनुसार उसके पुत्र ने सुरठों, मूलकों, अपरान्तों, अनूपों, विदर्भों एवं अन्य जनों के साथ कुकुरों को भी जीता था। रुद्रदामन के जूनागढ़ शिलालेख से हमें ज्ञात होता है कि कुकुरों-समेत उनमें से अधिकांश इन जनों को उसने पुनः पराजित किया था। अति संभवतः इन लोगों को दक्कन के तत्कालीन सातवाहन नरेश के अधिकार से अपहृत कर लिया गया था। विस्तृत विवरण के लिए द्रष्टव्य बि० च० लाहा, ट्राइब्स ऑव ऐंश्येंट इंडिया, पृ० 390)।

कुलेनुर—यह मैसूर के धारवाड़ जिले में स्थित एक गाँव है जहाँ पर जयसिंह द्वितीय के शासनकाल का अभिलेख उपलब्ध हुआ था (एपि० इं०, XV, 329 और आगे)।

कुंभारोटकग्राम—(एपि० इं०, XIX, 236)—यह उत्तरी एवं मध्य गुजरात में है और इसकी पहचान मोदस से 13 मील पूर्व में स्थित कामरोद से की जाती है।

कुशस्थलपुर—इलाहाबाद स्तंभ में इसका वर्णन कुस्थलपुर के रूप में किया गया है। कुशस्थलपुर द्वारका[1] के एक तीर्थस्थान का नाम है। यह आनर्त्त की (काठियावाड़) राजधानी थी।

कुशावर्त्त—योगिनीतंत्र (2.4, पृ० 128-129) में इसका वर्णन है। यह गोदावरी के स्रोत के निकट, नासिक से 21 मील दूर एक पुण्य सरोवर है।

लक्ष्मेश्वर—यह मैसूर के धारवाड़ जिले की सीमा के अंतर्गत् लक्ष्मेश्वर तालुक का मुख्यावास है जहाँ से युवराज विक्रमादित्य का स्तंभ-लेख उपलब्ध हुआ था (एपि० इं०, XIV, 188 और आगे)।

लाट—बंधु-वर्मन के मंदसोर-अभिलेख में लाट का वर्णन मिलता है। प्रतीहार-नरेश कक्कुक के घाटियाला अभिलेख के अनुसार उसने लाट देश में बहुत यश पाया था (एपि० इं०, IX, 278-80)। कुछ लोगों के अनुसार लाट माही एवं निचली ताप्ती नदियों के मध्य स्थित खानदेश सहित दक्षिण गुजरात था। कुछ लोग उसे मही एवं किम नदियों के मध्य स्थित मानते है (इंपार्टेंट इंस्क्रिप्शंस फ्रॉम द बड़ौदा स्टेट, जिल्द I, पृ० 29)। इसमें सूरत, भड़ौच, खेदा जिले एवं बड़ौदा के कुछ भाग संमिलित थे (नं० ला० दे, ज्यॉग्रेफिकल डिक्शनरी, पृ० 114)। यह उत्तरी कोंकण एवं गुजरात का प्राचीन नाम था। ब्युलर के अनुसार लाट मही एवं किम नदियों के बीच का क्षेत्र केंद्रीय गुजरात है और इसका मुख्य नगर भड़ौंच था। कर्ण के (रीवाँ शिलालेख में लाट का उल्लेख है जिसकी पहचान साधारणतया केंद्रीय एवं दक्षिण गुजरात से की जाती है (एपि० इं०, XXIV, भाग, III, जुलाई, 1937, पृ० 110)। लाटराष्ट्र (पालि लालरट्ठ—दीपवंस, पृ० 54; महावंस, पृ० 60) की पहचान गुजरात के प्राचीन राज्य लाट से की जाती है, दीपवंस (पृ० 54) के अनुसार जिसकी राजधानी सिंहपुर (सीहपुर) थी।

---

[1] **तुलनीय, भागवत पुराण, I, 10, 27; VII. 14. 31; IX, 3. 28; X. 61. 40; X. 75. 29; X. 82. 36; XII. 12. 36.**

इस देश का प्रथम वर्णन संभवतः टॉलेमी ने किया था। उसके अनुसार लारिके (Larike) इंडो-सीथिया (Indo-Scythia) के पूर्व में समुद्र-तट पर स्थित था (मैक्रिंडिल, टॉलेमीज ऐंश्येंट इंडिया, पृ० 38, 152-153)। लंका के पालिवृत्तों में लाल देश का उल्लेख राजकुमार विजय के नेतृत्व में लंका में आर्यों के प्रथम देशांतर के संदर्भ में हुआ है। लाल को गुजरात में लाट या लाड तथा बंगाल में राढ़ दोनों से समीकृत करने की चेष्टा की गयी है और दोनों देश लंका में आर्य-संस्कृति के प्रसार के श्रेय के लिए समान रूप से दावेदार हैं। प्राचीन गुप्त सम्राटों के काल में लाट देश को लाट विषय के अंतर्गत एक प्रशासकीय प्रांत के रूप में गिना गया था। लाटदेश अतिसंभवतः गुर्जर एवं राष्ट्रकूट अभिलेखों में वर्णित लाटेश्वर देश ही है। बड़ौदा ताम्रपत्र में (श्लोक, 11) एलपुर को लाटेश्वर की राजधानी बतलाया गया है। अणहिलवाडपाटन (961 ई०) के चालुक्यों की अधीनता में धीरे-धीरे लाट नाम के स्थान पर गुर्जर भूमि संज्ञा व्यवहृत होने लगी थी। लास्सेन ने लारिके को संस्कृत शब्द राष्ट्रिक के प्राकृत रूप लाटिक से समीकृत किया है जो सुगमता से लाट के समान हो जाता है यद्यपि राष्ट्रिक एवं लाटिक का तादात्म्य ग्राह्य नहीं है। अधिक विवरण के लिये द्रष्टव्य, बि० च० लाहा, इंडोलॉजिकल स्टडीज़, भाग, I, पृ० 27; लाहा, ट्राइब्स इन ऐंश्येंट इंडिया, पृ० 351-53.

लोन—इसकी पहचान भिवंडी तालुक में भिवंडी से 6 मील पूर्व में स्थित लोनद नामक एक गाँव से की जाती है (एपि० इं०, XXIII, भाग, VII, पृ० 257)।

महल्ल-लाट—इसका अर्थ बृहत्तर लाट है जो बेलोरा से लगभग 18 मील पश्चिम-उत्तर में स्थित, अमरावती जिले के मोर्सी तालुक में स्थित लडकी का प्रतिरूप है (एपि० इं०, XXIV, भाग, VI, अप्रैल, 1928)।

मोहनजोदड़ो—यह सिंध (पाकिस्तान) के लरकाना जिले में है। यहाँ के अवशेष तृतीय सहस्राब्दी के उत्तरार्ध की एक सुविकसित नागरीय सभ्यता का परिचय देते हैं। यह साधारणतया स्वीकार किया जाता है कि मोहेनजोदड़ो में ताम्रपाषाणिक-युग की सभ्यता के प्रचुर अवशेष हमें प्राप्त होते हैं। अभी तक उत्खनित सिन्धु-घाटी के प्रागैतिहासिक स्मारकों का अध्ययन सतर्कतापूर्वक विभिन्न दृष्टिकोणों से किया जा चुका है किंतु अभी तक की शोधों का सर्वाधिक अद्भुत अंश-सिन्धु के अभिलेखों को पढ़ना अभी शेष है। भूमिगत जलनिःसारण प्रणाली सुंदर थी। यहाँ के 39 फीट लंबे, 29 फीट चौड़े एवं 8 फीट गहरे विशाल स्नानागार में नीचे उतरने के लिए सीढ़ियाँ बनी हुयी थीं। कुछ भवन एक मंजिले

एवं कुछ दो मंजिलें थे। विवरण के लिए द्रष्टव्य, जे० मार्शल, मोहेनजोदड़ो ऐंड इंडस सिविलाइज़ेशन, I-III, मेके, फर्दर एक्सकेवेशंस ऐट मोहेन-जोदड़ो, III; रायल एशियाटिक सोसायटी, बंगाल के सभापति-भाषण, 1948.

मही—इसके अन्य नाम महती (वायु० XLV, 97), महित (महाभारत, भीषमपर्व, XI, 328) एवं रोही (वराहपुराण, (lxxxv) हैं। यह नदी पारिपात्र पर्वत से निकलती है और खंभात की खाड़ी में गिरती है। बंसबाड़ा (राजस्थान में) तक इसका प्रवाह दक्षिण-पश्चिमाभिमुख है जहाँ से यह दक्षिण की ओर मुड़कर गुजरात से प्रवाहित होती है।

ममजरवाटक—यह सतारा जिले में तासगाँव नामक तालुक के उसी नाम के मुख्यावास से 9 मील पूर्वोत्तर में मामजारड नामक आधुनिक गाँव है (एपि० इं०, XXVII, भाग, V, पृ० 210)।

मनगोलि—यह बीजापुर जिले के बागेवाड़ी तालुक के मुख्यावास बागेवाड़ी से लगभग 11 मील पश्चिमोत्तर में स्थित एक गाँव है (एपि० इं०, V, 9 और आगे)।

मंदसोर—देखिये दशपुर।

मंकणिका—यह बड़ौदा जिले के संखेडा तालुक में स्थित आधुनिक मामकणी है (इंपार्टेंट इंस्क्रिप्शंस फ़्रॉम द बड़ौदा स्टेट, जिल्द, I, पृ० 4)।

मौरेयपल्लिका—यह नासिक से तीन मील दक्षिण–पश्चिम में स्थित मोरवाड़ी है (एपि० इं०, XXV, भाग, V, जनवरी, 1940, पृ० 230, पृथ्वीचन्द्र भोग-शक्ति के दो दानपत्र)।

मयूरखण्डी—गोविन्द तृतीय के अञ्जनवती अभिपत्रों में इसका उल्लेख है जो गोविन्द तृतीय के काल में राष्ट्रकूटों की राजधानी रही होगी। ब्युलर ने मयूरखण्डी को सातमाला या अजंता पर्वतमाला में, सप्तशृंगि के निकट और नासिक जिले में वणी के उत्तर में स्थित मोरखण्ड नामक एक पहाड़ी दुर्ग से समीकृत किया है (इं० ऐं०, VI, पृ० 64)।

मिन्नगर—दूसरी शताब्दी ई० में यह अवर सिंध की राजधानी थी। इस स्थान की वास्तविक स्थिति संदिग्ध है (कनिंघम, एं० ज्या० इं०, पृ० 330 और आगे)। 'पेरिप्लस ऑव द इरिथ्रियन सी' के अनुसार यह इंडो-सीथिया की राजधानी थी। टॉलेमी ने इसे बिनगर कहा है। मैक्रिंडिल, ऐंश्येंट इंडिया ऐज़ डिस्क्राइब्ड बॉई टॉलेमी, पृ० 152)। डा० दे० रा० भंडारकर की धारणा है कि इसे मंदसोर से समीकृत किया जा सकता है। पेरिप्लस के लेखक ने राजा

मेम्बेरस का उल्लेख किया है (जिसे कुछ लोग नहपाण से समीकृत करते हैं) जिसकी राजधानी एरियाके, जो अपरान्तिक है, में मिन्नगर थी।

मिराज—यह महाराष्ट्र में दक्षिणी सतारा जिले में स्थित मिराज नामक स्थान है जहाँ पर जयसिंह द्वितीय के 1024 ई० के अभिपत्र उपलब्ध हुये थे (एपि० इं०, XII, पृ० 303)।

मिरिञ्जी—इसकी पहचान मिराज से की जा सकती है (एपि० इं०, XXIII, भाग, I, 1935, पृ० 30)।

मोहडवासक—इसका वर्णन हरसोल दानपत्र में है (एपि० इं०, XIX, 236)। इसकी पहचान अहमदाबाद जिले में प्रंतेज तालुक में मोहदसा नामक आधुनिक गाँव से की जा सकती है।

मुकुडसिवायिवा—यह कल्याण में एक स्थान है (ल्युडर्स की तालिका, सं० 998)।

मूलवासर—यह गाँव काठियावाड़ के ओखा मंडल क्षेत्र में द्वारका से लगभग 10 मील दूर पर स्थित है जहाँ पर 200 ई० में लिखित महाक्षत्रप रुद्रदामन प्रथम का एक शिलालेख उपलब्ध हुआ था (इंपार्टेंट इंस्क्रिप्शंस फ़ॉम द बड़ौदा स्टेट, जिल्द, I, पृ० 1)।

मुलगुण्ड—इसे धारवाड़ जिले के गडग तालुक में स्थित इसी नाम के एक आधुनिक गाँव से समीकृत किया जाता है (एपि० इं०, XXVI, भाग, II, अप्रैल, 1941, पृ० 61)।

मूषिक—मूषिक या मूषक (महाभारत, भीष्मपर्व, IX, 366, 371) लोग एक उत्तरी कबीले की प्रशाखा थे जिन्हें सिकंदर के इतिहासकारों ने मौसिकेनोज कहा है। मौसिकनोज के देश में आधुनिक सिंध (संप्रति, पाकिस्तान में) का एक विशाल भाग संमिलित था। इसकी राजधानी को सिखूर जिले में स्थित अलोर से समीकृत किया गया है। एरियन के अनुसार (चिन्नॉक, एरियन, पृ० 319) इस क्षेत्र में ब्राह्मण लोग बहुत प्रभावशाली थे। कहा जाता है कि मकदूनियाँ के आक्रांता के विरुद्ध जन-विद्रोह कराने में ये लोग प्रमुख अभिकर्त्ता थे। किंतु सिकंदर ने उन पर अचानक आक्रमण किया और उन्हें उसके सामने शस्त्र डाल देना पड़ा (कैं० हि० इं०, I, 377)। स्ट्रेबो ने इस प्रदेश के निवासियों का एक रोचक विवरण प्रस्तुत किया है (एच० ऐंड एफ० द्वारा अनूदित, III, पृ० 96)। भारतीय साहित्य में हमें मूषिकों के प्रति प्रायः उल्लेख प्राप्त होते हैं। मार्कण्डेयपुराण (LVIII. 16) में वर्णित मृषिक अति संभवतः मूषक या मूषिक ही थे जो पार्जिटर के अनुसार (मार्कण्डेय पुराण, 366) संभवतः मूषी

नदी के तट पर निवास करते थे, जिसके तट पर आधुनिक हैदराबाद (पाकि०) अवस्थित है। मूषिकों का यह नाम संभवतः इसलिए पड़ा था कि उनका क्षेत्र पश्चिमोत्तर सार्थ-पथ के उस भाग में स्थित था जिसे मूषिक-पथ (Red-tract) कहते थे, (बरुआ, अशोक ऐंड हिज इंस्क्रिप्शंस, अध्याय, III)। पतञ्जलि द्वारा उसके महाभाष्य (IV. 1. 4) में वर्णित मौषिकार जन अति संभवतः मूषिकों से संबंधित थे।

नंदिवर्धन—इसका तादात्म्य रामपुर* जिले में रामटेक के समीप नगरधन या नंदरधन से किया जा सकता है (एपि० इं०, XXIV, भाग, VI, अप्रैल, 1938)। इसका वर्णन कृष्ण तृतीय के दिउळी अभिपत्रों में भी हुआ है।

नरवन—रत्नगिरि जिले के गुहागड़पेट में समुद्रतट पर स्थित यह एक गाँव है। नरवन से कोई चार मील पूर्वोत्तर के चिन्द्रमाड़ स्थित है जो आधुनिक चिन्द्रवल है (एपि० इं०, XXVII, भाग, III, पृ० 127)।

नरेन्द्र—यह गाँव मैसूर के धारवाड़ जिले में स्थित है। यह धारवाड़ बेलगाँव राज-पथ के समीप, धारवाड़ से लगभग $4\frac{1}{2}$ मील, उत्तर, उत्तर-पश्चिम में स्थित है (एपि० इं०, XIII, पृ० 298)।

नौसारी—द्रष्टव्य, नागसारिका।

नवपट्टला—उस जिले में, जिसमें यह स्थित था, आधुनिक नयाखेड़ा के परिवर्ती क्षेत्र संमिलित हो सकते हैं जो तिखारी से लगभग आठ मील पश्चिम में स्थित हैं (एपि० इं०, XXV, भाग, VII, जुलाई, 1940)।

नागसारिका—कक्कराज सुवर्णवर्ष के सूरत अभिपत्रों में नागसारिका (नवसारिका) का वर्णन है जो सूरत के दक्षिण में लगभग बीस मील दूर पर स्थित आधुनिक नौसारी है (दंतिदुर्ग के एलोरा अभिपत्र भी द्रष्टव्य, एपि० इं०, XXV, जनवरी, 1939, पृ० 29; एपि० इं० XXI, भाग, III, जुलाई, 1931; ज० बां० ब्रां० रा० ए० सो०, 26, 250)। नौसारी गुजरात के सूरत जिले के नौसारी मंडल का मुख्यावास है जहाँ से 421 वर्ष में अंकित शीलादित्य के ताम्रपत्र उपलब्ध हुये थे (एपि० इं० VIII, 229 और आगे)। इसे नवराष्ट्र भी कहते हैं जो भड़ौच जिले में स्थित टॉलेमी के नोआग्राम्म के समान है (तुलनीय, महाभारत, सभापर्व, अध्याय, 31)।

नागुम—इसे नागौन से समीकृत किया जा सकता है जो महाराष्ट्र के पनवेल

---

*यह रामपुर भूल से लिखा गया है। वस्तुत इसे नागपुर होना चाहिए।

तालुक में उरन के दक्षिण-पश्चिम में लगभग दो मील दूर पर स्थित है (एपि० इं०, XXIII, भाग, VII)।

नांदिपुरविषय—गुर्जर जयभट्ट तृतीय के अञ्जनेरी अभिपत्रों में इसका वर्णन है जिसकी पहचान गुजरात (भूतपूर्व राजापिप्ला रियासत) में करजन नदी के तट पर स्थित नान्दोद से की जा सकती है (एपि० इं०, XXV, भाग, VII, जुलाई, 1940)। लाटदेश में स्थित नांदिपुर नर्मदा-तट पर स्थित आधुनिक नान्दोद है (एपि० इं०, XXIII, भाग, IV, अक्टूबर, 1935, पृ० 103)।

नासिक—(नसिक)—गुहाओं में स्थित यह दो प्राचीनतम अभिलेखों (20 व 22) में वर्णित है। बीसवें अभिलेख में नासिक के लोग दान देते हुये वर्णित हैं और उसी अभिलेख में एक गुफा का भी वर्णन है। बाईसवें अभिलेख में नासिक के श्रमण अमात्य द्वारा प्रदत्त एक गुफा का वर्णन है। नासिक का वर्णन अड़तीसवीं भरहुत पूजापरक नाम-पत्र (Votive label) में भी हुआ है। यह पुराणों में वर्णित नासिकी या नैसिक तथा रामायण का जनस्थान ही है। यह बृहत्संहिता (XIV. 13) में वर्णित नासिक्या है। ल्युडर्स की तालिका (सं० 799, 1109) में इसका वर्णन एक नगर—नासिक के रूप में हुआ है। ब्रह्माण्ड पुराण के अनुसार यह नर्मदा के तट पर स्थित था। जनस्थान गोदावरी-तट पर स्थित पञ्चवटी के निकट ही था। लक्ष्मण द्वारा यहाँ शूर्पणखा की नाक काट लिये जाने के कारण इसका नाम नासिक पड़ा। नासिक आधुनिक नासिक है जो बंबई से लगभग 75 मील पश्चिमोत्तर में स्थित है। नासिक जिले का मुख्यावास नासिक गोदावरी के दाहिने तट पर नासिक रोड स्टेशन से लगभग चार मील पश्चिमोत्तर में स्थित है। आंध्र के सातवाहन-नरेशों के शासन-काल में नासिक बौद्धों के भद्रयानिय संप्रदाय का गढ़ था (बरुआ ऐंड सिन्हा, भरहुत इंस्क्रिप्शंस, पृ० 16, 128; तुलनीय, ल्युडर्स की तालिका, सं०, 1122-1149)।

नासिक की जलवायु स्वास्थ्यकर एवं सुखद है। नौ पहाड़ियों पर स्थित होने के कारण इस मत की पुष्टि होती है कि यह नौ कोणों वाला था। नगर के तीन भाग हैं : गोदावरी नदी के बाएँ तट पर स्थित पञ्चवटी या प्राचीन नासिक, पञ्चवटी के दक्षिण में, गोदावरी नदी के दाहिने तट पर नौ पहाड़ियों पर स्थित मध्य नासिक और पञ्चवटी के पश्चिम में उक्त नदी के दाहिने तट पर स्थित आधुनिक नासिक (गज़ेटियर ऑव बांबे प्रेसिडेंसी, नासिक, बंबई, 1883, जिल्द XVI, पृ० 466 और आगे)। गोदावरी नदी के दाहिने तट पर उमा महेश्वर के मंदिर से लगभग 70 गज दक्षिण-पूर्व में नीलकण्ठेश्वर का मंदिर स्थित है।

यह रुचिर ढंग से तराशे एवं अच्छी तरह से नक्काशे हुये कूट से दृढ़ बना हुआ है। यह नदी के पार पूर्व की ओर अभिमुख है और इसमें द्वार-मंडप का एक गुंबद एवं सुष्ठु आकार वाला एक शिखर है। आराध्य एक अत्यंत प्राचीन लिंग बतलाया जाता है जो राम के श्वसुर राजा जनक के काल का बतलाया जाता है (नासिक, गज़ेटियर, आँव बांबे प्रेसीडेंसी, जिल्द, XVI, 1883, पृ० 505)।

पञ्चवटी से लगभग एक मील पूर्व में तपोवन स्थित है। यहाँ पर एक प्रसिद्ध मंदिर एवं राम की प्रतिमा है जो इस वन से लक्ष्मण द्वारा संचित किये हुए फलों पर जीवन निर्वाह करते थे (वही, 537)।

नासिक की बौद्ध गुहाएँ सुविख्यात हैं। उनको पाण्डुलेण कहा जाता है। वे सड़क-तल से लगभग 300 फीट की ऊँचाई पर हैं। वे हीनयान बौद्धों के एक संप्रदाय भद्रयानिकों द्वारा खुदवायी गयी हैं। वहाँ पर कुल तेईस गुफाएँ हैं। सबसे प्राचीन चैत्य गुफा है जिसकी तिथि ईस्वी सन् के प्रारंभ में है। वहाँ पर चार विहार हैं। पहली गुफा एक अपूर्ण विहार है। दूसरी गुफा में उत्तर कालीन महायान बौद्धों द्वारा अनेक संवर्द्धन किये गये हैं। तीसरी गुहा एक बड़ा विहार है जिसमें 41 फीट चौड़ा एवं 46 फीट गहरा एक महाकक्ष है। प्रवेश-द्वार पर बोधि-वृक्ष, डगोबा, चक्र एवं द्वारपाल दृष्टिगत् होते हैं। दसवीं गुहा एक विहार है जिसमें नहपाण के कुल का एक अभिलेख है जिसने 120 ई० के पूर्व उज्जैन में शासन किया था। दालान के स्तंभों पर घंटाकार पारसीक शीर्ष है। तीन सादे दरवाजों एवं दो खिड़कियों से युक्त महाकक्ष लगभग 43 फीट चौड़ा और 45 फीट गहरा है। सत्रहवीं गुहा का महाकक्ष 23 फीट एवं 32 फीट गहरा है। बरामदे में सामने स्थित छह सीढ़ियों से पहुँचा जाता है जो दो केंद्रीय अष्टकोणीय स्तंभों के बीच बनी हुयी है। पिछली दीवाल पर बुद्ध की एक खड़ी हुयी प्रतिमा है। दाहिनी ओर चार कोठरियाँ हैं। यहाँ पर एक अभिलेख है जिससे हमें ज्ञात होता है कि गुहा का निर्माण सुवीर देश के निवासी धर्मदेव के पुत्र इन्द्राग्निदत्त ने कराया था। सत्रहवीं गुहा बहुत बाद की है। उन्नीसवीं गुहा लगभग दूसरी शताब्दी ई० की एक विहार गुहा है। तेइसवीं गुहा में पद्मपाणि एवं वज्रपाणि द्वारा परिसेवित बुद्ध की मूर्ति है। धर्मचक्रमुद्रा एवं ध्यानमुद्रा दोनों में ही बुद्ध की कतिपय प्रतिमाएँ हैं। अधिक विवरण के लिए द्रष्टव्य, गज़ेटियर आँव बांबे प्रेसिडेंसी, भाग, XVI, नासिक, पृ० 542 और आगे।

निदगुण्डि—यह मैसूर के धारवाड़ जिले में बंकापुर तालुक के मुख्यावास, शिवगाँव से लगभग चार मील दक्षिण, दक्षिण-पश्चिम में स्थित यह एक गाँव है

जहाँ पर विक्रमादित्य षष्ठम् का एक अभिलेख उपलब्ध हुआ था (एपि० इं० XXIII, 12 और आगे)।

निर्गुण्डिपद्रक—इसकी पहचान दभोई से 12 मील दूर, आधुनिक नागरवाड़ा से की जाती है (एपि० इं०, II, '23)।

निषाद—निषाद-जनपद का प्रथम अभिलेखीय वर्णन रुद्रदामन के जूनागढ़-शिलालेख में हुआ है, जिसे निषाद् समेत पूर्वी-पश्चिमी मालवा, प्राचीन माहिष्मती क्षेत्र, गुजरात में द्वारका का परिवर्ती जिला, सुराष्ट्र, अपरान्त, सिन्धु-सौवीर एवं अन्य देशों पर विजय प्राप्त करने का श्रेय दिया जाता है। इस देश का वर्णन ल्युडर्स की तालिका (संख्या, 965) में भी हुआ है। विक्रम संवत् 1485 में लिखित मोकल के चितौरगढ़-अभिलेख में कहा गया है कि मोकल ने अंगों, कामरूपों वङ्गों, चीनों एवं तुरुष्कों समेत निषाद के जनपद को पराजित किया था (एपि० इं० II, 416 और आगे)। निषादों का वर्णन पहली बार उत्तरकालीन संहिताओं और ब्राह्मणों (तैत्तिरीय संहिता, IV, 5.4.2; काठक संहिता, XVII, 13; मैत्रायणी संहिता, II, 9, 5; वाजसनेयी संहिता, XVI.27; ऐतरेय ब्राह्मण, VIII, 11; पञ्चविंश ब्राह्मण, XVI; 6.8 आदि) में हुआ है। लाट्यायन श्रौतसूत्रमें (VIII.2.8) निषादों के एक गाँव का एवं कात्यायन श्रौतसूत्र में (I.1.12) में किसी प्रकार के कौशल में अग्रणी निषादस्थपति का उल्लेख है। मछली मारकर मानवीय उपभोग के लिये प्रदान करना निषादों का विहित सामाजिक कर्त्तव्य था (मनु, X.48)। पालिग्रंथों के अनुसार वे जंगली आखेटक एवं मछुवारे थे (फिक, डी सोश्येल ग्लीडेरुंग, 12, 160, 206 और आगे)। पार्जिटर का अभिमत है कि वे लोग बर्बर संस्कृति वाले या आदिवासी जन थे (ऐं० इं० हि० ट्रे०, पृ० 290) और वे आर्यावर्त्त के बाहर रहते थे। इसकी पुष्टि रामायण (आदिकाण्ड, अध्याय, I; अयोध्याकाण्ड, अध्याय, 51) में वर्णित निषादराज गुह की कहानी से होती है जो एक वन्य जाति के बतलाये गये हैं। मनु ने निषादों की उत्पत्ति किसी ब्राह्मण पिता एवं शूद्रा माता से उत्पन्न संतति के रूप में बतलायी है (मनुसंहिता, X, 8)। महाकाव्यों एवं पुराणों के काल में निषादों का सन्निवेश झलवर एवं खानदेश की सीमा निर्धारित करने वाली विन्ध्य एवं सतपुड़ा पर्वत-मालाओं के मध्य स्थित पर्वतों में था (मैल्कम, मेमायर्स ऑव सेंट्रल इंडिया, ज़िल्द, I, पृ० 452)। यह महाभारत से सिद्ध होता है (III, 130.4) जिसमें निषादराष्ट्र को पारिपात्र या पारिपात्र के समीप पश्चिमी विन्ध्य एवं सरस्वती के क्षेत्र में स्थित बतलाया गया है (महाभारत, XII, 135. 3-5)। इसी महाकाव्य में निषादों को वत्सों एवं भर्गों से संबंधित बतलाया गया

है (II. 30. 10-11)। उनका संन्निवेश पूर्व में भी था (बृहत्संहिता, XIV. 10)। रामायण के (II. 50, 33; 52, 11) अनुसार प्रयाग के सामने गंगा के उत्तरी तट पर स्थित शृंगवेरपुर निषाद-राज्य की राजधानी थी। यह राम के मित्र निषाद-राजा गुह द्वारा शासित एक विशाल नगर था। उसने राम की सत्कारपूर्वक अभ्यर्थना की थी (अयोध्याकाण्ड, XLVI, 20; XLVII 9-12; तुलनीय, ज० रा० ए० सो०, 1894, पृ० 237; एफ० ई० पार्जिटर, द ज्यॉग्रफी आँव रामाज़ इक्ज़ाइल)। दूसरी शताब्दी ईस्वी के मध्य निषाद देश पर पश्चिमी क्षत्रपों का आधिपत्य था (बि० च० लाहा, ट्राइब्स इन ऐंश्येंट इंडिया, अध्याय, XXV)। अधिक विवरण के लिये द्रष्टव्य बि० च० लाहा, इंडोलॉजिकल स्टडीज़, भाग, I, पृ० 42-43)।

ओस्सडियोई—संत मार्टिन जैसे कुछ विद्वानों के अनुसार ओस्सडियोई की पहचान अति संभवतः महाभारत में वर्णित, सिन्धु-सौवीरों एवं शिवियों से संबद्ध वशाति से की जाती है (महाभारत, VII, 19, 11; 89, 37; VIII. 44-49; VI. 106. 8; 51. 14)। इस कबीले की ठीक भौगोलिक स्थिति नहीं निश्चित की जा सकती (लाहा, इंडोलॉजिकल स्टडीज़, भाग I, पृ० 33-4)।

ओसुम्भल—इस गाँव का तादात्म्य कमरेज से सात मील दक्षिण में स्थित आधुनिक उंबेल से किया जाता है। सूरत से प्राप्त अल्लशक्ति के एक दानपत्र से इस गाँव में एक खेत के दान का निबंधन है (दे० रा० भंडारकर वाल्यूम, पृ० 54-55)।

पछत्रि—इस गाँव का समीकरण घुमली से छ: मील पश्चिम में स्थित आधुनिक पछतर्दि नामक गाँव से करना चाहिए (एपि० इं०, XXVI, भाग, V, जनवरी, 1942, पृ० 199)।

पडिवस—इसका तादात्म्य या तो उरान से दो मील उत्तर-पूर्व में स्थित फुंद से या महाराष्ट्र राज्य के पनवेल तालुक में उरान से लगभग तीन मील उत्तर में पंज से किया जा सकता है (एपि० इं०, XXIII, भाग, VII, पृ० 279)।

पलाशवनक—यह कीर्त्तिराज के सूरत अभिपत्र में उल्लिखित है। इसका समीकरण सूरत जिले में पलसना तहसील के मुख्यावास आधुनिक पलसना से किया जा सकता है (एपि० इं०, XXI, पृ० 256)।

पंपा—यह तुंगभद्रा नदी की सहायक नदी है। इसका उद्गम अनगण्डि पहाड़ियों से आठ मील दूर ऋष्यमुख पर्वत में है (तुलनीय बांबे गज़ेटियर, भाग, I, खंड ,II, पृ० 369)। इस नदी के तट पर राम हनुमान से मिले थे, (रामायण, आदिकाण्ड, सर्ग, I, श्लोक, 58)। लक्ष्मण भी यहाँ आये थे। यह नदी रक्त-

कमलों से सुशोभित थी। इसका जल निर्मल और मनोरम था (रामायण, किष्किन्ध्याकाण्ड, सर्ग, I, श्लोक, 64-66; सर्ग, I, श्लोक, 1-6)। वहाँ पर पंपा नामक एक सरोवर था जो अत्यंत सुंदर भी था। इसका जल निर्मल था (रामायण, किष्किन्ध्या काण्ड, सर्ग, I, श्लोक, 1-6)।

पञ्चवटी—यह पहले जनस्थान में अथवा उसकी सीमा पर थी। दो रघुवंशियों के साथ सीता यहाँ आयी थीं। जनस्थान की निवासिनी शूर्पणखा यहीं राम से मिली थी (रामायण, आदिकाण्ड, I, 47; आरण्यकाण्ड, XXIII; 12; महाभारत, 83, 162; ज० रा० ए० सो०, 1894, पृ० 247)। यहाँ पर लक्ष्मण ने शूर्पणखा के नाक-कान काट लिये थे (रामायण, आरण्यकाण्ड, सर्ग, 21, श्लोक, 7; उत्तरचरितम्, प्रथम अंक, 28)। यह वन गोदावरी नदी के समीप अगस्त्य के आश्रम के निकट था (वही, सर्ग, 13, श्लोक, 13-19, वंगवासी संस्करण)। वन-पशुओं, मृगों आदि तथा फल-फूलों से सज्जित यह गोदावरी के तट पर स्थित थी। यह एक समतल, आनंदकर एवं सुंदर स्थान था। यह पक्षियों से परिपूर्ण था (रामायण, आरण्यकाण्ड, सर्ग 15, 1-5, 10-19)। यहाँ पर एक पर्ण-कुटी बनवायी गयी थी जिसमें सीता एवं लक्ष्मण के साथ कुछ समय के लिये रामचन्द्र रुके थे (वही, 20-31)।

पञ्चाप्सर—यह सरोवर पञ्चवटी एवं चित्रकूट के मध्य कहीं पर स्थित था (रघुवंश, XIII, 34-47)। इसका वर्णन शातकर्णि के विहार-कुण्ड के रूप में किया गया है (रघुवंश, XIII, 36)।

पंढारपुर—यह नगर भीमा नदी के दाहिने तट पर स्थित है और यहाँ पर विठोबा का प्रसिद्ध मंदिर है (लाहा, होली प्लेसेज़ ऑव इंडिया, पृ० 43)।

पलासिनी—यह एक नदी का नाम है जो ऊर्जयत (ऊर्जयंत) पर्वत से निलकती है (ल्युडर्स की तालिका, सं० 965)। कुछ लोग इस नदी को छोटा नागपुर की कोयल की सहायक नदी परास से समीकृत करते हैं (लाहा, रिवर्स ऑव इंडिया, पृ० 45)।

पलिताना—यह भावनगर जिले (गुजरात) में है जहाँ पर सिंहादित्य के दो ताम्रपत्र उपलब्ध हुये थे (एपि० इं०, X I, पृ० 16)।

पट्टदकल—यह मैसूर राज्य के बीजापुर के बादामी तालुक या तहसील के मुख्यावास बादामी से उत्तर एवं पूर्व में लगभग आठ मील दूर पर स्थित एक गाँव है जहाँ से कीर्तिवर्मन द्वितीय के काल का एक स्तंभ लेख उपलब्ध हुआ था (एपि० इं०, III, 1 और आगे)।

पानाड—इसकी पहचान महाराष्ट्र के कोलाबा जिले में अलीबाग से लगभग

आठ मील पूर्व और उत्तर में स्थित पेनाद से की जा सकती है (एपि० इं०, भाग, VI, अप्रैल, 1942, पृ० 287)।

पारसिक—यह थाना के समीप कोई द्वीप हो सकता है। इसकी स्मृति पारसिक नामक एक पहाड़ी द्वारा सुरक्षित है। कुछ लोगों के अनुसार यह फारस की खाड़ी में स्थित ओरमुज नामक द्वीप हो सकता है (इंपार्टेंट इंस्क्रिप्शंस फ्रॉम द बड़ौदा स्टेट, जिल्द, I, पृ० 66)।

पावकदुर्ग—इसे गुजरात में गोध्रा से लगभग पच्चीस मील दक्षिण में और बड़ौदा से सड़क मार्ग से 29 मील दूर पञ्चमहल जिले में पावागढ़ नामक पहाड़ी दुर्ग से समीकृत किया जा सकता है (एपि० इं०, XXIV भाग, V, पृ० 221)।

प्राभास—इसका वर्णन नहपाण के काल के नासिक गुहालेख में (119-124 ई०) हुआ है। यह काठियावाड़ में है (तुलनीय, मथुरा बुद्धिस्ट इमेज इंस्क्रिप्शंस ऑव हुविष्क)। यह काठियावाड़ में दक्षिणी समुद्रतट पर स्थित सुप्रसिद्ध प्रभास-पाटन या सोमनाथ पाटन है (गज़ेटियर ऑव बांबे प्रेसीडेंसी, 1883, नासिक, 637)। इसे प्रभासतीर्थ कहते हैं (ल्युडर्स की तालिका, सं० 1099-1131)। भागवत पुराण (X. 45, 38; X. 78, 18; X. 79 9-21; X. 86, 2; XI. 6 35; XI. 30, 6; XI. 30. 10) में इस पुण्यतीर्थ को समुद्र-तट पर स्थित बतलाया गया है। भागवतपुराण (VII. 14. 31) के अनुसार हरि के लिये पवित्र यह तीर्थ स्थान पश्चिम की ओर प्रवाहित होने वाली सरस्वती के लिए प्रसिद्ध है। यहाँ पर अर्जुन एवं बलराम आये थे (भागवत, X. 86, 2; X. 78, 18)। महाभारत (118. 15; 119. 1-3) में प्रभासतीर्थ का वर्णन है। कूर्मपुराण में इसका उल्लेख भारत के एक प्रसिद्ध तीर्थ स्थल के रूप में हुआ है (अध्याय, 30, श्लोक, 45-48; तुलनीय, अग्निपुराण, अध्याय, 109)। योगिनीतंत्र (2. 4. 128; 2. 5. 141) में भी इसका वर्णन है। पद्मपुराण (अध्याय, 133) में प्रभास में सोमेश्वर का वर्णन है।

प्रायेस्तिक्षेत्र—आक्सीकेनोस के देश के लोगों को प्रायेस्ति कहा जाता था जो महाभारत (VI. 9, 61) में वर्णित प्रोष्ठों के वाचक हैं। कनिंघम के अनुसार आक्सीकेनोस का क्षेत्र सिन्धु नदी के पश्चिम में लारखान (पाकि०) के परिवर्त्तीय समतल क्षेत्र में स्थित था (इनवेज़न ऑव अलेक्जेंडर, पृ० 158)। आक्सीकेनोज़ ने सिकंदर का विरोध करने की चेष्टा की थी किंतु निष्फल रहे (कैं० हि० इं०, 377)।

पुरंधर—सास्वद के निकट पूना के दक्षिण-पश्चिम में यह एक पहाड़ी दुर्ग है। यहाँ पर अनपहचानी गुहाएँ हैं और इस प्रकार की गुहाएँ भारत में अभी तक नहीं मिली हैं (ज० रा० ए० सो०, भाग, 3 व 4, 1950, पृ० 158 और आगे)।

पूरावि—पूरावि पूर्णा नदी है जिसके तट पर नौसारी स्थित है (एपि० इं० XXI, भाग, III, जुलाई, 1931)।

रैवतक पहाड़ी—रैवत या रैवतक द्वारका के समीप थी। महाभारत में (आदिपर्व, CCXIX, 7906-17) कहा गया है कि इस पहाड़ी पर एक उत्सव हुआ था जिसमें द्वारका के नागरिकों ने भाग लिया था। पार्जिटर इसे हलार में बरदा पहाड़ियों से समीकृत करने के पक्ष में हैं (मार्कण्डेय पुराण, पृ० 289)। स्कन्दगुप्त के जूनागढ़ अभिलेख में रैवतक पहाड़ी का वर्णन है जो ऊर्जयंत के सामने है (द्रष्टव्य, एपि० इं०, XXIV, भाग, V, जनवरी, 1938, पृ० 216 में प्रकाशित महमूद का दोहत शिलालेख)। ईश्वरवर्मन मौखरि के जौनपुर शिलालेख में इसका वर्णन विन्ध्य पर्वत के साथ हुआ है (का० इं० इं० जिल्द, III)। फ्लीट ने रैवतक को गिरनार की दो में से एक पहाड़ी से समीकृत किया है न कि मुख्य गिरनार से (का० इं० इं०, III, पृ० 64, नोट, 11; इं० ऐं०, VI. पृ० 239)। बुद्ध-संहिता (XIV. 19) में इसको दक्षिण-पश्चिम संभाग में स्थित बतलाया गया है। प्राचीन काल में रैवत एवं ऊर्जयंत गिरनार में स्थित दो भिन्न पहाड़ियों के नाम रहे होंगे किंतु बाद में उन्हें एक ही माना जाने लगा (बांबे गज़ेटियर, जिल्द, VIII, पृ० 441)। महमूद के दोहद शिलालेख में वर्णित रैवतक वह पहाड़ी है जिस पर मंदिर है और जिसे अब गिरनार कहा जाता है (एपि० इं०, XXIV, भाग, V, पृ० 222)। गुजरात में जूनागढ़ के समीप रैवतक पहाड़ी या गिरनार स्थित है जिसे राजा दत्तात्रेय के धर्म-गुरु (पुरोहित) नेमिनाथ का जन्म-स्थान माना जाता है। इस पहाड़ी के पाद में सुवर्णरेखा नदी प्रवाहित होती है। गिरनार पहाड़ी पर गुरुदत्तचरण नामक एक पदचिन्ह है। यहाँ पर नेमिनाथ एवं पार्श्वनाथ के मंदिर प्राप्त होते हैं। गिरिनगर का नाम बृहत्संहिता (XIV. 11) में आता है। गिरनार अशोक, रुद्रदामन एवं स्कन्दगुप्त के अभिलेखों में प्रसिद्ध है। जूनागढ़ के पूर्व में अनेक बौद्ध गुहाएँ हैं। रुद्रदामन एवं स्कंदगुप्त के अभिलेखों से हमें ज्ञात होता है कि गिरनार में चन्द्रगुप्त, अशोक और गुप्त सम्राटों के प्रांतीय राज्यपाल रहते थे। इसके निकट ही वहाँ पर स्वयंवर झील है। यहाँ पर सुराष्ट में रैवतक पहाड़ी के शिखर पर नेमिनाथ का एक ऊँचा शिखरयुक्त मंदिर है। अधिक विवरण के लिये द्रष्टव्य बि० च० लाहा, समजैन कैनॉनिकल सूत्राज, पृ० 181-182.

रङ्गपुर—यह अहमदाबाद जिले में धन्धुक के तीन मील पश्चिमोत्तर में या लिंबडी के मुख्यावास लिंबडी से बीस मील दक्षिण-पूर्व में स्थित है। विवरण के लिए द्रष्टव्य, आर्क० स० इं०, एनुअल रिपोर्टस, 1934-35, पृ० 34 और आगे।

रामतीर्थ—यह सोरपारग (ल्युडर्स की तालिका, सं० 1131) में है। यह बंबई से लगभग 40 मील उत्तर में, बसीन के समीप सोपारा में एक पुण्य झील है। उषवदात वहाँ रहने वाले कुछ भिक्षुकों को दिये गये दान का उल्लेख करता है (गज़ेटियर ऑव द बांबे प्रेसीडेंसी, नासिक, भाग, XVI)।

रामतीर्थिका—यह उस तहसील का मुख्यावास है जिसमें किणिहिका संमिलित थी। अति संभवत: इसकी पहचान रामतीर्थ से की जा सकती है जहाँ पर नासिक गुहालेख के अनुसार उषवदात ने ब्राह्मणों को कुछ दान दिया था (एपि० इं० XXV, भाग, IV, अक्टूबर, 1939, पृ० 168)।

राष्ट्रिक—अशोक के पंचम शिलालेख में राष्ट्रिकों का उल्लेख है।

रायगढ़—यह महाराष्ट्र के कोलाबा जिले में है जहाँ से विजयादित्य के तीन ताम्रपत्र उपलब्ध हुये थे (एपि० इं०, X, 14 और आगे)।

रेट्टुरक—यह सतारा जिले के करहाद तालुक में स्थित रेटरे है। कृष्णा नदी के दोनों तटों पर स्थित इसी नाम के दो गाँव हैं (एपि० इं०, XXVII, भाग, VII, जुलाई, 1948, पृ० 316)।

रोन—रोन मैसूर के धारवाड़ जिले में रोन तालुक का मुख्यावास आधुनिक रोउ है (एपि० इं०, XX, पृ० 67)।

रोरुक—दिव्यावदान (पृ० 544 और आगे) के अनुसार रोरुक एक महत्त्वपूर्ण नगर था। यह आदित्त जातक में वर्णित (जातक, III, 470) सोवीर की राजधानी थी। रोरुव का भरत नामक राजा अत्यंत लोकप्रिय एवं धर्मात्मा था। उसने निर्धनों, परिब्राजकों, मित्रकों एवं पच्चेक बुद्धों को बहुत दान दिया था (जातक, III, 470-474)। कनिंघम ने सोवीर की गुजरात राज्य में खम्भात की खाड़ी के मुख पर स्थित एडर नामक स्थान से समीकृत किया है। बोधिसत्वावदानकल्पलता में रौरुक या रौरुक के रुद्रायन नामक एक प्रसिद्ध राजा का उल्लेख है (चालीसवाँ पल्लव)। रोरुक-नरेश रुद्रायन मगध-नरेश बिम्बिसार का समकालीन था और वे दोनों घनिष्ट मित्र थे। राजगृह एवं रोरुक में व्यापारिक संबंध थे।

साबरमती—यह नदी पारिपात्र पर्वत से निकलती है और अहमदाबाद से गुजरती हुयी खंभात की खाड़ी में गिरती है।

शकदेश—पाणिनि ने अपनी अष्टाध्यायी (4.1.175) में इसका उल्लेख किया है। बृहत्संहिता (XIV. 21) में शकों के देश के रूप में इसका वर्णन है। अधिक विवरण के लिए द्रष्टव्य लाहा, ट्राइब्स इन ऐंश्येंट इंडिया, 3-6, 77, 84, 92, 94, 157.

शंभु (सैम्बोस प्रदेश)—यूनानी लेखकों के अनुसार सैम्बोस, मौसिकेनोस क्षेत्र के निकटवर्ती पहाड़ी प्रदेश पर राज्य करते थे। इन दो पड़ोसियों में पारस्परिक ईर्ष्या एवं शत्रुता थी। इस देश की राजधानी सिन्दिमन थी जिसकी पहचान सिन्धु नदी के तट पर स्थित सेहवन नामक नगर से की जाती है (मैक्रिंडिल, इन-वेजन ऑव अलेक्जेंडर, पृ० 404)। सैम्बोस ने सिकंदर के प्रति समर्पण किया था। अधिक विवरण के लिये द्रष्टव्य, बि० च० लाहा, इंडोलॉजिकल स्टडीज भाग, I, पृ० 36-37.

समुद्रपाट—इसकी पहचान जबलपुर से चार मील दक्षिण में समद पिपारिया से की जा सकती है (एपि० इं०, XXV, भाग, VII, जुलाई, 1940)।

शरमपुर—राजा महासुदेवराज के रायपुर ताम्रपत्र में इसका उल्लेख है (का० इं० इं०, जिल्द, III)।

शत्रुञ्जय या सिद्धाचल—जैनियों के अनुसार यह काठियावाड़ में स्थित पाँच पहाड़ियों में सबसे पवित्र है। इसके पूर्व में सूरत से 70 मील पश्चिमोत्तर में, पलितना नामक नगर स्थित है। शत्रुञ्जय मंदिर का जीर्णोद्धार गुजरात में स्थित बाघभट्टदेव नामक राजा कुमार पाल के एक अधिकारी ने कराया था। शत्रुञ्जय पहाड़ी के शिखर पर स्थित समस्त जैन मंदिरों में चौमुख मंदिर सब से ऊँचा है। शत्रुञ्जय पहाड़ी पर स्थित जैन मंदिरों में कुछ अभिलेख मिले थे (एपि० इं०, II, 34 और आगे)। शत्रुञ्जय जिसे सिद्धक्षेत्र भी कहा जाता था, में बड़ी संख्या में ऋषभसेन जैसे सिद्ध ऋषि आये थे। अनेक संतों एवं राजाओं ने पूर्णत्व का आनंद प्राप्त किया था। यहीं पर कुंती सहित पाँचों पाण्डवों ने भी पूर्णता प्राप्त की थी। जैनियों का यह तीर्थस्थान पाँच कूटों से अलंकृत है। श्रीमद्-ऋषभ के उत्तर में पाण्डवों द्वारा स्थापित गुहा अब भी स्थित है। अजित चैत्य के निकट अनुपम झील है। मरुदेवी के समीप शान्ति का भव्य चैत्य है। राजा मेघघोष ने यहाँ पर दो मंदिरों का निर्माण कराया था। शत्रुञ्जय उसके एवं उसके पिता धर्मदत्त के शासन के अंतर्गत् था। अधिक विवरण के लिए द्रष्टव्य लाहा, सम जैन कैनॉनिकल, सूत्राज पृ० 179-180.

सालोटगि—यह मैसूर के बीजापुर जिले के इण्डि तालुक के मुख्यावास इण्डि से छः मील दक्षिण-पूर्व में स्थित एक विशाल गाँव है (एपि० इं० IV, पृ० 57)।

सातोदिक—यह सुराष्ट्र देश की एक नदी थी। राजगुरु का पुत्र जोतिपाल, जो तक्षशिला में शिक्षित हुआ था, संन्यासी हो गया था। उसने ध्यान में पूर्णता प्राप्त की थी। उसके अनेक शिष्य थे और उनमें से एक सुरट्ठ देश गया था और इस नदी के तट पर निवास किया था (जातक, III, पृ० 463 और आगे)।

सेरिव—जातक में इसका वर्णन है। सेरि राज्य में दो व्यापारी थे जो भांडों एवं कड़ाहों का व्यापार करते थे। वे अपना माल सड़कों पर बेंचा करते थे (जातक, I, पृ० 111-114)। कुछ लोगों के अनुसार इसकी पहचान सेरियापुट (सेरिया का बंदरगाह) से की गयी है जिसका वर्णन भरहुत स्तूप के एक पूजा-पट्ट में हुआ है। अन्य लोगों के अनुसार इसकी पहचान श्रीराज्य या मैसूर के परवर्ती गंग राज्य से की जा सकती है (रायचौधरी, पो० हि० एं० इं०, पृ०64; बरुआ ऐंड सिन्हा, भरहुत इंस्क्रिप्शंस, पृ० 32)। बरुआ एवं सिन्हा की यह धारणा ठीक है कि सेरियापुट, शूपरिक एवं भरुकच्छ की भाँति भारत के पश्चिमी समुद्रतट पर स्थित एक महत्त्वपूर्ण बंदरगाह था और इसका तादात्म्य सेरिव से किया जा सकता है (वही, पृ० 132)।

सेरियापुट—भरहुत-अभिलेखों में इसका वर्णन है (बरुआ ऐंड सिन्हा, पृ० 32)। सुप्पारक एवं भरुकच्छ की भाँति भारत के पश्चिमी समुद्रतट पर स्थित यह एक महत्त्वपूर्ण बंदरगाह प्रतीत होता है। तेलवाह नदी पार करके सेरिव के व्यापारी अंधपुर पहुँचते थे (जातक, नं० 3)।

सिग्गावे—इसे धारवाड़ जिले के सिरगाँव से समीकृत किया जा सकता है (एपि० इं०, VI, पृ० 257)।

सिहरग्राम—(एपि० इं०, VIII. 222)—यह दक्षिणी गुजरात में है और इसकी पहचान देलवाड से आठ मील पूर्वोत्तर में स्थित सेरसे की जा सकती है।

सिन्धु-सौवीर—पणिनि ने अपनी अध्टाध्यायी (4.2.66; 4.1.148) में सोवीर एवं सुवीर का वर्णन किया है। पतञ्जलि ने भी अपने महाभाष्य में (4.2.76) इसका उल्लेख किया है। सिन्धु-सौवीर नाम से यह व्यंजित होता है कि सौवीर सिन्धु और झेलम के तट पर स्थित था। यह तथ्य कि सौवीर प्रायः सिन्धु से संबंधित थे, यह निश्चित करता है कि ये दोनों जन जिन्हें कालांतर में एक ही माना जाने लगा,—सिन्धु के तट पर रहते थे। इन्होंने कुरू-क्षेत्र के युद्ध में महत्त्वपूर्ण भाग अदा किया था। रुद्रदामन के जूनागढ़ शिलालेख में (150 ई०) पूर्वापराकरावन्ती, अनूपनित, आनर्त सुराष्ट्र, स्वप्न, मरु,

कच्छ, कुकुर, अपरान्त और अन्य देशों के समेत सिन्धु-सौवीर पर महाक्षत्रप की विजय का उल्लेख है। इसका वर्णन ल्युडर्स की तालिका सं०, 965, में हुआ है। बृहत्संहिता (XIV. 17) में इसका वर्णन है।

भगवती-सूत्र के अनुसार सौवीर देश के उदयन का उत्तराधिकारी उसका भतीजा केशी हुआ था जिसके राज्य में वीतहव्य पूर्णरूपेण विनष्ट हुआ था। वह संसार का परित्याग करने तक को उद्यत हो गया था किंतु जब उसके पुत्र अभि के उत्तराधिकार का प्रश्न उसके समक्ष आया तब उसने स्वयं अपने से यह कहा कि 'यदि मैं अभि को राज्याभिषेक करके संसार से संन्यास लूँ तब अभि राजसुख और मानवीय आनंदों के उपभोग का अभ्यस्त हो जायेगा। तब वह इस संसार में भ्रमण करता रहेगा। इसके अनंतर उसने अपने भानजे केशी का राज्याभिषेक करके (पृ० 619-20) संसार का परित्याग किया। यह सौवीर देश में प्रचलित मातृप्रधान व्यवस्था का एक उदाहरण प्रतीत होता है।

क्षत्रपों ने सिन्धु-सौवीर देश को कुषाणों से मुक्त किया था। क्षत्रपों के पश्चात् संभवतः यह देश गुप्तों के अधिकार में और तदनंतर वलभी के मैत्रकों के अधीन हो गया था। गुजरात के चालुक्यों के एक नौसारी दान-ताम्रपत्र में पुलकेशीराज (8 वीं शती ई०) को ताजिकों को पराजित करने का श्रेय दिया गया है जिन्हें साधारणतया अरबों से समीकृत किया जाता है। इसमें बतलाया गया है चालुक्य नरेश द्वारा पराजित होने के पूर्व ताजिकों ने सैन्धवों, कच्छेलों, सुराष्ट्रों, कावोटकों, गुर्जरों एवं मौर्यों को पराजित किया था (बांबे गज़ेटियर, जिल्द, I, पृ० 109)। कनिंघम ने सौवीर को गुजरात में खंभात की खाड़ी के मुहाने पर स्थित एडर नामक स्थान से समीकृत किया है। रौरुक इसकी राजधानी थी (जातक, III, पृ० 470)। सिन्धु-सौवीर संज्ञा से यह व्यंजित होता है कि सौवीर झेलम एवं सिन्धु के बीच में स्थित था। राजगृह एवं रौरुक के मध्य घनिष्ट व्यापारिक संबंध थे (दिव्यावदान, 544 और आगे)। रौरुक नरेश रुद्रायन एवं मगधनरेश बिम्बिसार घनिष्ट मित्र थे। अधिक विवरण के लिए द्रष्टव्य बि० च० लाहा, इंडोलॉजिकल स्टडीज़, भाग, I, पृ० 40 और आगे।

शिरीषपद—शिरीष की समता श्रीस से की जा सकती है (बरुआ ऐंड सिन्हा, इंस्क्रिप्शंस, पृ० 21, पूजा-पट्ट, नं० 43)। यह दो गुर्जर अभिलेखों में वर्णित शिरीष-पद्रक नामक गाँव है (इं० ऐं०, XIII)।

सिरुर—यह सिरवुर का प्राचीन नाम है। यह मैसूर के धारवाड़ जिले के गडक तालुक में आलूर से लगभग तीन मील दूर पर स्थित एक गांव है जहाँ

से जयसिंह द्वितीय के शासनकाल का एक अभिलेख उपलब्ध हुआ था (एपि० इं०, XV, 334, और आगे)।

शिवपुर—शिवपुर को शोरकोट अभिलेख में वर्णित शिविपुर से समीकृत किया जा सकता है (एपि० इं०, 1921, पृ० 16)। डा० फोगेल ने शोरकोट के टीले को शिबियों के नगर का स्थल माना है। अधिक विवरण के लिए द्रष्टव्य बि० च० लाहा, ट्राइब्स इन ऐंश्येंट इंडिया, पृ० 83.

सोगल—यह मैसूर के बेलगाँव जिले के परषगड़ तालुक में एक गाँव है (एपि० इं०, XVI, पृ० 1)।

सोमनाथदेवपट्टन—यह काठियावाड में स्थित है और इसका आधुनिक नाम वेरावल है जहाँ से एक प्रतिमा-लेख उपलब्ध हुआ था (एपि० इं०, III, 302)।

सोमनाथ—यह जूनागढ़ में है और इसे चन्द्रप्रभास भी कहते हैं। यह जैनियों का एक तीर्थस्थान है। पहले यहाँ पर एक काष्ठ-मंदिर था किन्तु कालांतर में इसे संगमरमर का बना दिया गया था (लाहा, ज्यॉग्रेफिकल एसेज़, पृ० 212)।

सोन्नलिगे—यह आधुनिक सोलापुर का एक भाग है (एपि० इं०, XXIII, भाग, V, पृ० 194)।

सोन्ने—यह आधुनिक शास्त्री नदी है जो नरवन के दक्षिण में प्रवाहित होती है (एपि० इं०, XXVII, भाग, III, पृ० 127)।

श्रीमत-अणहिलपुर—(एपि० इं०, VIII, 219-29)—इसे उत्तर गुजरात में अणवाड़ा से समीकृत किया जा सकता है।

सुदर्शन—यह गिरिनगर से थोड़ी दूर पर स्थित एक झील है (गिरनार, दक्षिण काठियावाड़ में जैन गिरिनार)। मूलतः मौर्यनरेश चन्द्रगुप्त के वैश्य पुष्यगुप्त नामक एक राष्ट्रिय ने उस झील का निर्माण कराया था। तदनंतर यवन-राजा तुसाष्फ ने इसे प्रनाडी-सेतु से सज्जित किया था। बाद में यह एक तूफान में सुवर्णसिकता नदी के जल द्वारा नष्ट हो गयी थी (ल्युडर्स की तालिका, सं०, 965)।

सुदि—यह मैसूर के धारवाड़ जिले के रोन तालुक में स्थित सुण्डि नामक एक प्राचीन गाँव है। यह रोन शहर से लगभग 9 मील दूर उत्तर एवं पूर्व की ओर है (एपि० इं०, XV, 73)।

शूद्र-देश—मार्कण्डेय पुराण (अध्याय, 57, 35) के अनुसार शूद्रों का देश अपरान्त क्षेत्र या पश्चिमी क्षेत्र में स्थित था। महाभारत (IX. 37, 1) के अनुसार शूद्र लोग उस क्षेत्र में रहते थे जहाँ सरस्वती मरु में अदृष्ट हो जाती

है जो कि पश्चिमी राजस्थान में स्थित विनशन ही है (शूद्राभीरान् प्रतिद्वेषाद् यत्र नष्टा सरस्वती)। उनके प्रदेश की सही स्थिति के विषय में मतभेद है। अधिक विवरण के लिए द्रष्टव्य, बि० च० लाहा, इंडोलॉजिकल स्टडीज़, भाग, I, पृ० 34)।

शूलिक—शूलिकों की पहचान गुजरात के लेखों में वर्णित सोलकी या सोलंकी से की जा सकती है। कुछ लोगों ने उन्हें चालुक्यों से समीकृत किया है। ईषाणवर्मन मौखरि के हरहाअभिलेख में उनका वर्णन है। अधिक विवरण के लिए द्रष्टव्य बि० च०, लाहा, ट्राइब्स इन ऐंश्येंट इंडिया, पृ० 384-85.

सूनकग्राम—यह उत्तर गुजरात में है और इसकी पहचान उत्तर गुजरात में पट्टन से लगभग 15 मील पूर्व-दक्षिण पूर्व में और उंझा रेलवे स्टेशन से लगभग पाँच मील पश्चिम में स्थित सुनक नामक एक गाँव से की जा सकती है (एपि० इं०, I, 316)।

सुरथा—कूर्म (XLVII.30), वराह, (LXXXV) एवं भागवत पुराणों (XIX.17) में इस नदी का वर्णन है। इसका एक पाठांतर सुरसा है। यह ऋक्ष एवं विन्ध्य पर्वतों से निकलती है। द्रष्टव्य, बि० च० लाहा, ज्यॉग्रेफिकल एसेज, पृ० 111)।

सुराष्ट्र—प्राचीन भारत में सुराष्ट्र एक प्रसिद्ध जन थे। सुराष्ट्र देश (पालि, सुरठ, चीनी, सु-ल-च) का वर्णन रामायण (आदि काण्ड, अध्याय, XII); अयोध्याकाण्ड, X; किष्किन्ध्याकाण्ड, XLI) तथा पतञ्जलि के महाभाष्य (I.1.1, पृ० 31) में है। इसका वर्णन ल्युडर्स की तालिका, सं०, 965 में भी है। इसे सुरठ भी कहा जाता है (वही, 1123)। पद्मपुराण (190.2) के अनुसार यह गुर्जर में है। भागवतपुराण (I.10.34; I.15.39; VI.14.10; X.27.69; XI.30.18) में एक देश के रूप में इसका वर्णन है। बृहत्संहिता (XIX.19) में भी इसका वर्णन है। राजशेखर ने भी अपनी काव्यमीमांसा (गायकवाड़ ओरियंटल सीरीज, पृ० 93-94) में सुराष्ट्र को भृगुकच्छ, आनंत्त, अर्बुद, दशेरक एवं अन्य देशों के साथ ही पश्चिमी संभाग में रखा है। सुराष्ट्र में आधुनिक काठियावाड़ एवं गुजरात के अन्य भाग समाविष्ट हैं। कौटिलीय अर्थशास्त्र के अनुसार (पृ० 50) अंग एवं कलिंग के हाथियों की तुलना में सौराष्ट्र के हाथी अत्यंत हीन होते थे। सरभंग जातक (जातक, V.133) के अनुसार सतोदिका नामक एक नदी सुराष्ट्र देश की सीमा पर प्रवाहित होती थी और इसके तट पर निवास करने के लिये ऋषि भेजे जाते थे। कविट्ठक आश्रम के सालिस्सर नामक एक ऋषि ने उक्त आश्रम को सुरट्ठ

देश जाने के लिये त्याग दिया था वहाँ पर वह सतोदिका नदी के तट पर ऋषियों के साथ रहने लगा था। (जातक, III, पृ० 463)। इस नगर की समृद्धि व्यापार के कारण थी (अपदान, II, 359; मिलिन्द, 331, 359; जातक, III, 463; V. 133)। मौर्यों के एक अधीनस्थ सामंत के रूप में पिङ्गल नामक एक राजा ने सुराष्ट्र पर शासन किया था (पेटवत्थु, IV; 3; डा० दे० रा० भंडारकर वाल्यूम, 329 और आगे)। जैन ग्रंथ दसवेयालिय चूर्णी में (I, पृ० 40) सुरट्ठ या सुराष्ट्र का उल्लेख है जो प्राचीन काल में एक व्यापारिक केंद्र था।

चीनी तीर्थयात्री युवान-च्वाङ के अनुसार सुराष्ट्र की राजधानी युह्-शान-टा-पर्वत (प्राकृत उज्जंत, रुद्रदामन एवं स्कन्दगुप्त के अभिलेखों में वर्णित संस्कृत ऊर्जयत और इसकी पहचान जूनागढ़, प्राचीन गिरिनगर या गिरनार से की गयी है) के पाद में स्थित थी। महाभारत काल में सुराष्ट्र देश पर यादवों का राज्य था। कौटिल्य के अर्थशास्त्र (पृ० 378) से प्रकट होता है कि सुराष्ट्र में संघात्मक शासन व्यवस्था थी। स्ट्रैबो के अनुसार (बुक, XI, खंड, XI, 1; एच० ऐंड एफ०, भाग, II, पृ० 252-3) भारत में बाख्त्री-यवनों की विजय अंशतः मिलिन्द एवं अंशतः यूथेडेमास के पुत्र दिमित द्वारा प्राप्त की गयी थी। उन्होंने न केवल पेटेलेन पर ही वरन् सराओस्टोस (सुराष्ट्र) एवं साइगरडिस राज्यों पर भी अधिकार कर लिया था। टॉलेमी ने सिराष्ट्रेने नामक एक देश का उल्लेख किया है जिसे अनिवार्यतः सुराष्ट्र (कच्छ की खाड़ी पर स्थित आधुनिक सूरत) ही होना चाहिए। सिन्धु के मुहाने से कच्छ की खाड़ी तक फैला हुआ सिरास्ट्रेने टॉलेमी के काल में इंडो-सीथिया के तीन प्रभागों में से एक था। 'पेरिप्लस ऑव द इरिथ्रियन सी' में भी सिरास्ट्रेने का वर्णन अबेरिया के समुद्र-तट के रूप में हुआ है जिसकी पहचान इसके द्विभाजन से निर्मित होने वाले द्वीपीय भाग के आगे सिन्धु नदी के पूर्व में स्थित क्षेत्र से की जाती है। शकों के आधिपत्य के पश्चात् सुराष्ट्र पर गुप्तवंशीय राजाओं का अधिकार हो गया था (बि० च० लाहा, ट्राइब्स ऑव ऐंश्येंट इंडिया, पृ० 347-48)। इसका निश्चायक साक्ष्य हमें स्कन्दगुप्त (455-480 ई०) के जूनागढ़ अभिलेख में मिलता है। (का० इं० इं०, जिल्द III)। उदयगिरि गुहालेख से हमें यह ज्ञात होता है कि स्कन्द-गुप्त ने यह निश्चय करने के पूर्व कि सुराष्ट्र देश की रक्षा का महत्त्वपूर्ण दायित्व किसके विश्वास पर छोड़ दिया जाय कई दिनों तक निरंतर विचार किया था। समुद्रगुप्त के काल में सुराष्ट्र पर शकाधिपतियों का शासन था (शक-मुरुण्ड) (तुलनीय, समुद्रगुप्त का इलाहाबाद स्तंभ लेख)। सुराष्ट्र देश चन्द्रगुप्त के शासन

काल में ही मौर्यों के साम्राज्य में मिला लिया गया था क्योंकि रुद्रदामन के जूनागढ़ शिलालेख में चन्द्रगुप्त के राष्ट्रिय वैश्य पुष्यगुप्त का उल्लेख है जिसने सुदर्शन झील का निर्माण करवाया था। यह अशोक[1] के साम्राज्य में संमिलित था क्योंकि उसी अभिलेख में अशोक के उपराजा और उसके समकालीन पारसीक तुषास्फ का उल्लेख है जिसने झील के अवशिष्ट निर्माण-कार्य को पूर्ण करवाया था। रुद्रदामन के अभिलेख से यह स्पष्ट है कि यवनराज तुषास्फ सुराष्ट्र का एक स्वतंत्र शासक बन गया था। जूनागढ़ के प्राचीन नाम से यह प्रकट होता है कि इसके पर्वतीय दुर्ग के साथ ही इस नगर का निर्माण किसी यवन राजा ने कराया था (इं० क०, भाग, X, 87 और आगे)। सुराष्ट्र अशोक के काल में एक गणराज्य था। यह उसके पाँचवें शिलालेख से संभावित प्रतीत होता है।[2] अधिक विवरण के लिए द्रष्टव्य त्रि० च० लाहा, इंडोलॉजिकल स्टडीज़, भाग, I, पृ० 50-52)।

शूर्पारक—(पालि सुप्पारक)—यह महाराष्ट्र में बंबई से 37 मील उत्तर में और बस्सिम से लगभग चार मील पश्चिमोत्तर में थाना जिले में सुपारा या आधुनिक सौपारा है। यह सुनापरान्त या अपरान्त की राजधानी थी (मज्झिम III, 268; संयुक्त, IV, 61 और आगे)। पालि ग्रंथों के अनुसार सुनापरान्त के निवासी भयंकर एवं हिंस्र बतलाये गये हैं। सावत्थी से सुप्पार की दूरी 120 लीग थी (धम्मपद कामेंट्री, II, पृ० 213)। इसे सोपारग सोपारक, सोर-पारग (ल्युडर्स की तालिका, सं० 995, 998, 1095, और 1131) सौरपारक एवं सुप्पारिक भी कहा जाता है। प्रिंस ऑव वेल्स म्यूजियम में संगृहीत शिलाहार-अभिलेखों में सूरपारक का उल्लेख है जो महाराष्ट्र के बस्सिम तालुक में स्थित आधुनिक नल सोपर है (एपि० इं०, XXIII, भाग, VII)। शक उषवदात के एक अभिलेख में शूर्पारक का वर्णन है। यह समुद्रतट पर स्थित एक बड़ा पत्तन था (धम्मपद कामेंट्री II, 210) जिसे प्राचीन यूनानी भूगोलवेत्ताओं द्वारा वर्णित सोपारा से ठीक ही समीकृत किया गया है। हरिवंश के अनुसार (XCVI, 50) राम जामदग्न्य नामक एक ऋषि को शूर्पारक नगर के निर्माण का श्रेय दिया गया है। मार्कण्डेय पुराण (57) में इस नगर का वर्णन है। सभी पुराण समान

---

[1] द्रष्टव्य अशोक के पंचम शिलालेख का मानसेहरा संस्करण।

[2] द्रष्टव्य, अशोक के पंचम शिलालेख का मानसेहरा संस्करण; रा० कु० मुकर्जी, अशोक, पृ० 140, पा० टि० 6; हे० रायचौधरी, पो० हि० एं० इं०, चतुर्थ संस्करण, पृ० 236.

रूप से इसे पश्चिम में स्थित बतलाते हैं किंतु महाभारत में इसे दक्षिण में स्थित बतलाया गया है (सभापर्व, XXX, 1169; वनपर्व, LXXXVII, 8337)। सात सौ यात्रियों सहित एक पथभ्रष्ट जलपोत सुप्पार के बंदरगाह पर आया था। सुप्पार के निवासियों ने उन्हें पोत से उतरने का आमंत्रण दिया और खूब खिला पिलाकर उनका स्वागत किया (दीपवंस, IX, श्लोक, 15-16)। महावंस (VI. 46) के अनुसार विजय भारत के पश्चिमी समुद्रतट पर स्थित सुप्पारक बंदरगाह पर आये थे। सूरपारक वाणिज्य एवं व्यापार का एक महत्त्व-पूर्ण केंद्र प्रतीत होता है जहाँ अपने व्यापारिक माल को लेकर व्यापारी एकत्र होते थे (दिव्यावदान, 42 और आगे)। इस नगर में भव नामक एक गृहस्थ था जो बुद्ध का समकालीन था (दिव्यावदान, 24 और आगे)।

सूर्यपुर—यह आधुनिक सूरत है (ज० ए० सो० बं०, VI, 387)। यहीं पर शंकराचार्य ने वेदान्त पर अपना भाष्य लिखा था (नं० ला० दे, ज्यॉग्रेफिकल डिक्कशनरी, पृ० 198)।

सुसक—नासिक-अभिलेख में इसका वर्णन है जिस पर गौतमीपुत्र का शासन बतलाया जाता है। इसका तात्पर्य सु या यु-ची शक था जिनके अधिकार में पंजाब एव गंगा के कुछ क्षेत्र थे।

सुतीक्ष्ण-आश्रम—यह दण्डक वन में स्थित था। सुतीक्ष्ण ऋषि ने यज्ञाग्नि मेंआत्मदाह करके अपना प्राण-त्याग दिया था। इस तपोवन में राम, लक्ष्मण एवं सीता के साथ आये थे।

स्वभ्र—इसका वर्णन रुद्रदामन प्रथम के जूनागढ़ शिलालेख में (150 ई०) हुआ है। यह साबरमती के तट पर है (तुलनीय, पद्मपुराण, उत्तरखण्ड, अध्याय 52)। यह एक देश है (ल्युडर्स की तालिका, संख्या, 965)।

तलेगाँव—यह पूना जिले में है। यहाँ पर राष्ट्रकूट-नरेश कृष्ण प्रथम के काल का एक ताम्रपत्र उपलब्ध हुआ था।

तौरणक—यह करजन नदी के तट पर आधुनिक तोरन प्रतीत होता है (एपि० इं०, XXV, भाग, VII, जुलाई, 1940)।

तालध्वज—यह काठियावाड़ में है और इसकी पहचान सभवतः तलज से की जा सकती है (इं० ऐं०, XV, 360)।

टेकभर—विमलशिव के जबलपुर शिलालेख में इसका वर्णन है जिसकी पहचान जबलपुर से दक्षिण एवं पश्चिम में पाँच मील दूर तिखारी से की जा सकती है (एपि० इं०, XXV, भाग, VII, जुलाई, 1940)।

तिडगुण्डि—यह गाँव मैसूर के बीजापुर जिले के बीजापुर तालुक में बीजापुर

शहर से 20 मील उत्तर में स्थित है जहाँ पर, विक्रमादित्य षष्ठम के काल के अभिपत्र उपलब्ध हुये थे (एपि० इं०, III, 306)।

तोरंबगे—संभवतः इसकी पहचान कोल्हापुर में तुवंबे से की जा सकती है (एपि० इ०, XIX, पृ० 32)।

तोरणग्राम—यह दक्षिण गुजरात में है और इसका तादात्म्य तोरंगम से किया जा सकता है (ज० बां० ब्रां० रा० ए० सो०, जिल्द, 26)।

तोरखेडे—यह खानदेश जिले में स्थित एक गाँव है जहाँ से शक संवत् 735 में अंकित गुजरात के गोविन्दराज का एक दान ताम्रपत्र उपलब्ध हुआ था (एपि० इं०, III, 53 और आगे)।

त्र्यंबकेश्वर—यह एक गहनवन में स्थित है और महाराष्ट्र में हिंदुओं का एक महत्त्वपूर्ण तीर्थस्थान है। यहाँ से गोदावरी नदी निकलती है।

तुप्पडकुरहट्टि—यह धारवाड़ जिले के नवबुंद तालुक में स्थित एक गाँव है जहाँ पर अकालवर्ष कृष्ण तृतीय के शासनकाल का एक अभिलेख उपलब्ध हुआ था (एपि० इं०, XIV, 364 और आगे)।

उज्जंत गिरि—ऊर्जयन्त देखिये।

ऊना—यह जूनागढ़ के काठियावाड़ प्रायद्वीप के सुदूर दक्षिणी भाग में स्थित एक नगर है जहाँ से ताम्रपत्रों पर उत्कीर्ण दो संस्कृत अभिलेख उपलब्ध हुये हैं (एपि० इं०, IX, पृ० 1)।

उरण—यह आधुनिक उरन है (एपि०ई०, XXIII, भाग, VII, पृ० 279)

ऊर्जयत—रुद्रदामन एवं स्कन्दगुप्त के जूनागढ़ के अभिलेखों में वर्णित ऊर्जयत (उज्जंत) को जूनागढ़ के समीप गिरनार पहाड़ी से समीकृत किया जाता है। केलादि सदाशिव नायक के कप ताम्रपत्र में उज्जंतगिरि का उल्लेख है जो गिरनार है (एपि० इं०, XXIV, भाग, V, जनवरी, 1938; तुलनीय, फ्लीट, गुप्त इंस्क्रिप्शंस, का० इं०, इं०, जिल्द, III, पृ० 60)। इसे ऊर्जयतगिरि भी कहा जाता है (तुलनीय, रुद्रदामन का जूनागढ़ अभिलेख)। ल्युडर्स की तालिका के 965 वें अभिलेख में उसे ऊर्जयत कहा गया है। श्रीनेमि द्वारा पवित्र इस पर्वत को रैवतक, ऊर्जयंत आदि कहा जाता है। यह पर्वत सुराष्ट्र में स्थित है। वास्तुपाल ने यहाँ पर लोक कल्याण के लिए तीन मंदिरों का निर्माण कराया था। वास्तुपाल द्वारा निर्मित शत्रुञ्जय के मंदिर में ऋषभ, पुण्डरीक एवं अष्टापद की प्रतिमाएँ हैं (बि० च० लाहा, सम जैन कैनॉनिकल सूत्राज़, पृ० 180)।

वडाल—वडाल पच्छत्री विषय (जिले) में भेटलिका का आधुनिक नाम

है। जूनागढ़ से लगभग सात मील उत्तर में पश्चिमी रेलवे में यह एक स्टेशन है (एपि० इं०, XXVI, भाग, V, जनवरी, 1942, पृ० 210)।

वडनगर—इसकी पहचान सिद्धपुर से 70 मील दक्षिण में उत्तरी गुजरात में आनंदपुर से की जाती है।

वैदूर्यपर्वत—यह गुजरात में स्थित सतपुड़ा पर्वत माला है। इस पहाड़ी पर अगस्त्य ऋषि का आश्रम था (महाभारत, वनपर्व, अध्याय, 88)। इसका नाम बहुमूल्य लाजावर्द पत्थर मिलने के कारण वैदूर्य पर्वत है। सह्य पर्वत से संबद्ध सब से अधिक महत्त्वपूर्ण लघु पर्वत वैदूर्य है जिसकी पहचान साधारणतया टॉलेमी द्वारा वर्णित ओरंडियान पर्वत से की जाती है। यह पश्चिमी घाट के सब से उत्तरी हिस्से में अंतर्विष्ट है किंतु महाभारत से ज्ञात होता है कि इसमें दक्षिणी विन्ध्य एवं सतपुड़ा पर्वतमाला का एक भाग भी संमिलित था।

वल्लभी—यह गुर्जर देश में एक समृद्धिशाली नगर था जहाँ पर शीलादित्य नामक राजा राज्य करता था (लाहा, सम जैन कैनॉनिकल सूत्राज, पृ० 183-184)। वलभी या वल्लभी नगर के अवशेष गुजरात के पूरब में भावनगर के समीप प्राप्त हुये थे (आर्क० स० वे० इं०, जिल्द, II))। पाँचवीं शताब्दी ई० के एक अभिलेख में इसका वर्णन बलभद्र की सुंदर राजधानी के रूप में हुआ है (ज० ए० सो० बं०, 1838, पृ० 976)। सौराष्ट्र के इस नगर में गृहगुप्त नामक एक धनी महानाविक रहता था जिसके रत्नवती नामक एक पुत्री थी जिससे व्याह करने के लिए एक व्यापारी का बलभद्र नामक पुत्र मधुमती से आया था (दशकुमारचरितम्, पृ० 158)। युवान-च्वाङ ने इसे फा-ल-पी-कहा है। युवान-च्वाङ के अनुसार वलभी राज्य में संपूर्ण गुजरात प्रायद्वीप, भड़ौंच तथा सूरत के जिले संमिलित थे (कनिंघम, एं० ज्या० इं०, पृ० 363 और आगे; पृ० 697)।

वल्लवाड़—इसकी पहचान वलयवाड से की जा सकती है जिसे वलवाड़ भी कहा जाता है जो कोल्हापुर से लगभग 27 मील दक्षिण-पश्चिम में वर्त्तमान राधानगरी का स्थल है (एपि० इं०, XXIII भाग, I, एवं II)।

वंकिका—यह नदी वंकी नाला है जो नौसारी से लगभग 30 मील दक्षिण में स्थित है (एपि० इं०, XXI, भाग, III, जुलाई, 1931)।

वरदाखेट—संभवतः यह अमरावती जिले के मोरसी तालुक में स्थित वरुड है (एपि० इं०, XXIII, भाग, III)।

वटपर्दक—(वटपद्रपुर)—यह वटपट्टन का एक प्राचीन नाम है। इसका

वर्णन शक सवत् 734 में अंकित कर्कराज द्वितीय के बड़ौदा अभिपत्रों में है (इंपार्टेंट इंस्क्रिप्शंस फ़ॉम द बड़ौदा स्टेट, जिल्द, I, पृ० 97)।

वट्टार—इसकी पहचान नल-सोपर से लगभग 7 मील पश्चिमोत्तर में एवं महाराष्ट्र के बास्सिम तालुक में अगाशी से चार मील दक्षिण-पश्चिम में स्थित वतर नामक गाँव से की जाती है (एपि० इं०, XXIII, भाग, VII)।

वाघली—यह खानदेश जिले में चालीसगाँव से सात मील पूर्व या पूर्वोत्तर में स्थित एक गाँव है जहाँ से शक संवत् 991 में अंकित एक शिलालेख उपलब्ध हुआ था। इस गाँव में तीन मंदिर हैं : मघाई देवी का एक प्राचीन मंदिर, एक लघु जीर्ण मंदिर एवं मानभाव संप्रदाय का एक मंदिर (एपि० इं०, I,, 221 और आगे)।

वाहाउल—इसे गुजरात में बड़ौदा के अन्तर्गत् भिलोदिया से लगभग चार मील दक्षिण-पूर्व में स्थित वाहोरा नामक एक गाँव से समीकृत किया जाता है (एपि० इं०, XXVI, भाग, VI, अप्रैल, 1942, पृ० 251)।

वालुरक— नहपान के काल के (119-24 ई०) कार्ले गुहालेख में वर्णित वालुरक (वलूरक) कार्ले क्षेत्र का एक प्राचीन नाम प्रतीत होता है। कार्ले महाराष्ट्र के पूना जिले में स्थित है। ल्युडर्स की तालिका (सं० 1099, 1100) वालुरक एक गुहा का नाम है।

वेलुग्राम—इसकी पहचान किरात से तीन मील दक्षिण-पूर्व और पलघर से 14 मील पूर्व-पूर्वोत्तर में स्थित वेलगाँव से की जाती है (एपि० इं०, भाग, XXVIII, भाग, I, जनवरी, 1949)।

वेगवती—जैन अनुश्रुतियों में इस नदी को सौराष्ट्र में ऊर्जयंत पर्वत से संबद्ध बतलाया गया है।

वेणाकटक—गौतमीपुत्र शातकर्णि के नासिक गुहा लेख में वेणाकटक का उल्लेख है जो नासिक जिले में वेण्वा नदी के तट पर स्थित है।

वेरावल—काठियावाड़ में स्थित यह प्राचीन सोमनाथ देवपट्टन है जहाँ से एक प्रतिमा-लेख उपलब्ध हुआ था (एपि० इं०, III, 302)।

विन्ध्यपादपर्वत—महाभारत में इसका उल्लेख विन्ध्यपर्वत के रूप में हुआ है (अध्याय, 104, 1-15)। पद्मपुराण (उत्तरखण्ड, श्लोक, 35-38) में इसका वर्णन है। इस पर्वत से संलग्न विन्ध्याटवी का वर्णन दशकुमारचरितम् (पृ० 18) में है जो मनुष्यों की पहुँच से दूर, वन्य पशुओं के लिए एक उपयुक्त स्थल एवं एक भयावह गहन जंगल था। टॉलेमी ने इसे क्विंडोन कहा है। यह उत्तरी एवं दक्षिणी भारत के मध्य की सीमा है। ऋक्ष, विन्ध्य एवं पारिपात्र

उस संपूर्ण पर्वतमाला के अंग हैं जिसे संप्रति विन्ध्य कहा जाता है (लाहा, ज्यॉग्रैफिकल एसेज़, 107 और आगे)। इस पर्वत में रेवा नदी द्वारा अभिसंचित एक सुंदर कंदरा है (मार्कण्डेयपुराण, वंगवासी संस्करण, पृ० 19)। इसका वर्णन ल्युडर्स की तालिका, सं० 1123, में है।

विज्झा नामक एक अन्य संज्ञा से प्रसिद्ध इस पर्वत को सतपुड़ा पर्वतमाला से समीकृत किया जा सकता है। इस पर्वतमाला के एक पर्वत-प्रक्षेप पर शिला में कटी हुयी बावनगज नामक एक भीमकाय जैन प्रतिमा है। आधुनिक भूगोलवेत्ताओं के अनुसार विन्ध्यपर्वत पश्चिम में गुजरात से पूरब में बिहार तक लगभग 700 मील तक भरनेर, कैमूर आदि विभिन्न स्थानीय नाम धारण करता हुआ फैला है। इस पर्वत की औसत ऊँचाई 1500 से 2000 फीट तक है; इसके कुछ शिखर 5,000 फीट तक ऊँचे हैं। यह पर्वत एक वास्तविक विवर्तनिक प्रकार का नहीं है। यह मालवा के पठार के दक्षिणी छोर का प्रतिनिधित्व करता है जो किसी प्राचीन भू-वैज्ञानिक काल में भ्रंशित हो गया जिसके परिणामस्वरूप विन्ध्य पर्वत का निर्माण हुआ। ऐसा विश्वास किया जाता है कि विन्ध्य अरावली पर्वत से गृहीत तलछटों (अवसादों) से निर्मित हुआ था।

विझाटवी—इस वन में खानदेश एवं औरंगाबाद ज़िले संमिलित हैं जो नासिक समेत विन्ध्यपर्वत माला के पश्चिमी सिरे के दक्षिण में स्थित है। देवानमपियतिस्स का अरिट्ठ नामक एक अमात्य जिसे अशोक के पास बोधिवृक्ष की एक शाखा लाने के लिए भेजा गया था पाटलिपुत्र जाते समय इस वन से गुजरा था (दीपवंस, 15.87)।

वला—महाराज धरसेन द्वितीय के मलिय ताम्रपत्र में (152 वर्ष) काठियावाड़ मंडल में वला नामक भू० पू० रियासत के मुख्यावास वला का उल्लेख है (का० इं० इं०, जिल्द, III; एपि० इं०, XIII, पृ० 338)।

येक्केरि—यह बेलगाँव जिले के परषगड तालुक के मुख्यावास सौन्दत्ति से लगभग चार मील उत्तर-पूर्व में स्थित एक गाँव है जहाँ से पुलकेशिन् द्वितीय के काल का एक शिलालेख उपलब्ध हुआ था (एपि० इं० V, 6 और आगे)।

V

मध्य भारत*

अचलपुर—यह एक ग्राम है जो अमरावती जिले में आधुनिक एलिचपुर के समान है (एपि० इं० XXIII, भाग, I, जनवरी, 1935, पृ० 13; एपि०, इं०, XXVIII, भाग, I, जनवरी, 1949)।

अचावड (अच्चावट)—यह ऋक्षवत पर्वत है जहाँ पर कुरर-निवासी नागपिय नामक एक श्रेष्ठि रहता था। इसका उल्लेख ल्युडर्स की तालिका में है (सं० 339, 348, 581 और 1123)। ऋक्षवत टॉलेमी द्वारा वर्णित औक्सेन्टन है। यह उस संपूर्ण पर्वतमाला के एक भाग का नाम है जिसे सामान्यत: विन्ध्य नाम से जाना जाता है। टॉलेमी ने ऋक्षवत को तूंडिस (Toundis), दोसरोन (Dosaron), अदमस (Adames), क्विंदोन (Quindon), नेमेडोस (Namados) तथा ननगूना (Nanagouna) का उद्गम-स्थल बतलाया है। ऋक्षवत या ऋक्षवन्त से टॉलेमी का आशय नर्मद्रा के उत्तर में आधुनिक विन्ध्य पर्वतमाला के केंद्रीय भाग से था (लाहा, माउंटेंस ऑव इंडिया, पृ० 17; लाहा, ज्यॉग्रेफिकल एसेज़, पृ० 107 और आगे)।

अचेय—यह सिउना नदी के दाहिने तट पर परताबगढ़-मार्ग से कोई एक मील दक्षिण में, मंदसोर से लगभग 12 मील दक्षिण-पश्चिम में स्थित है।

अगर (शाजपुर)—यह उज्जैन के उत्तर में सड़क मार्ग से 41 मील दूर है।

ऐरिकिन—समुद्रगुप्त के एरण शिलालेख में इसका उल्लेख है जिसे बीणा के बाएँ तट पर स्थित एरण नामक गाँव से समीकृत किया गया है जो मध्य प्रदेश के सागर जिले की खुरई तहसील के मुख्यावास, खुरई से 11 मील पश्चिम एवं उत्तर में स्थित है (का० इं० इं० भाग, III)।

अजयमेरु—चाहमान सोमेश्वर के बिझोली शिलालेख (वि० सं० 1226)

***भूतपूर्व मध्यभारत संप्रति मध्यप्रदेश राज्य राजस्थान एवं गुजरात महाराष्ट्र द०पू०उ०प्र०एवं उड़ीसा में संमिलित हैं। —अनु०**

में अजयमेरु का उल्लेख है। चाहमान राजकुमार अजयदेव या अजयराज द्वारा 1100 और 1125 ई० के मध्य स्थापित यह वस्तुतः अजमेर ही है (एपि० इं०, XXVI, भाग, VII, जुलाई, 1941; इं० ऐं०, XVI, पृ० 163)।

अजयगढ़—यह कालञ्जर से सीधे दक्षिण-पश्चिम में लगभग 16 मील दूर पर एक पहाड़ी दुर्ग है जहाँ से दो चंदेल अभिलेख उपलब्ध हुये थे (एपि० इं०, I, 325)। यह कालञ्जर के चंदेल दुर्ग से लगभग 20 मील दक्षिण-पश्चिम में स्थित रायपुर दुर्ग का आधुनिक नाम है (ज० बां० ब्रां० रा० ए० सो०, जिल्द, 23, 1947, पृ० 47)।

अमरकण्टक—यह पहाड़ी नागपुर क्षेत्र के गोंडवाना में मेखल पहाड़ियों का एक भाग है जहाँ से नर्मदा एवं सोन नदियाँ निकलती हैं। इसलिए नर्मदा को मेखलसुता कहते हैं (पद्मपुराण, अध्याय, VI)। कुछ लोगों के अनुसार यह मेकाल पर्वत माला के सब से पूर्वी छोर पर रीवा में है, जो शहडोल रेलवे स्टेशन से कच्ची सड़क से 25 मील दूर, समुद्रतल से 3000 फीट ऊँचा है। यह हिंदुओं का एक तीर्थ स्थल है (अधिक विवरण के लिए द्रष्टव्य, बि० च० लाहा, होली प्लेसेज़ ऑव इंडिया पृ० 34)। अमरकण्टक कालिदास के मेघदूत में वर्णित (I, 17) आम्रकूट है। इसे सोमपर्वत एवं सुरथाद्रि भी कहा जाता है (मार्कण्डेय पुराण, अध्याय, 57)। मत्स्यपुराण के अनुसार यह पुण्य-पहाड़ी कुरूक्षेत्र से अधिक प्रकृष्ट थी (22-28; 186, 12-34; 188, 79, 82; 191. 25)। पद्मपुराण (अध्याय, 133, श्लोक, 21) में अमरकण्टक में चण्डिका-तीर्थ नामक एक तीर्थ-स्थान का वर्णन है।

अंबर—जयपुर रेलवे स्टेशन से लगभग सात मील पूर्वोत्तर में स्थित यह राजस्थान के जयपुर (भू० पू० रियासत) की प्राचीन राजधानी थी। जयपुर से अंबर के मार्ग में पहाड़ियों एवं जंगलों का एक विहंगम दृश्य दृष्टिगत होता है। वहाँ पर कुछ सुंदर मंदिर हैं।

जयपुर—(भू० पू० रियासत) की क्रमानुसार तीसरी राजधानी, अंबर नगर की स्थापना 10-11 वीं शताब्दीं ई० में हुयी मानी जाती है। इसे अंबावती भी कहा जाता है जो धुण्ड या धुण्ढाहृद् नामक क्षेत्र की राजधानी थी। कनिंघम ने अंबर के विशाल अंबिकेश्वर के मंदिर के नाम से अंबर का नाम गृहीत बतलाया है (दया राम साहनी, आर्क्यॉलाजिकल रिमेंस ऐंड एक्सकेवेशंस ऐट बैराट, पृ० 9 और आगे)।

आमेर—यह उदयपुर से लगभग डेढ़ मील दक्षिण में है।

अमोदा—यह बिलासपुर जिले में एक गाँव है। यहां पर दो विशाल पत्रों

पर उत्कीर्ण एक अभिलेख उपलब्ध हुआ है (एपि० इं०, XIX, 209 और आगे)।

अमरोल (ग्वालियर)—यह सेंट्रल रेलवे के अंत्री नामक स्टेशन से लगभग 10 मील पश्चिमोत्तर में स्थित है।

अनर्घवल्ली—यह बिलासपुर जिले की आधुनिक जाँजगिर तहसील को द्योतित करता है (एपि० इं०, XXIII, भाग, I, जनवरी, 1935, पृ० 3, प्रतापमल्ल के पेण्ड्राबंध अभिपत्र)।

अंघोर—यह कडवाह से ढाई मील दक्षिण में है।

अञ्जनवती—यह महाराष्ट्र में अमरावती से ठीक पूर्व में लगभग 22 मील दूर पर चंदुर तालुक में स्थित एक गाँव है (एपि० इं०, XXIII, भाग, I, जनवरी, 1935, पृ० 8)

अंत्रि—(ग्वालियर)—यह दिल्ली से दक्कन जाने वाले प्राचीन मार्ग पर ग्वालियर से लगभग 16 मील दक्षिण में स्थित है। यहीं पर अबुल फजल की हत्या की गयी थी।

अरञ्जरा—यह मज्झिमदेश में एक पर्वतमाला है। यहाँ पर यह एक बड़े जंगल में स्थित बतलाया गया है (जातक, V, 134)।

अरावल्ली—कुछ लोगों ने इस पर्वतमाला की पहचान अपोकोप से की है। संभवतः यह भारत का सर्वप्राचीन विर्वतनिक पर्वत है। यह पश्चिमी राजस्थान की रेतीली मरु-भूमि को पूर्वी राजस्थान के अधिक उर्वर क्षेत्रों से पृथक करता है। यह पर्वतमाला दिल्ली से जयपुर तक एक नीची पहाड़ी के रूप में फैली हुई है। और आगे दक्षिण में यह अधिक प्रखर हो जाती है। मारवाड़ के आगे इसकी ऊँचाई और अधिक बढ़ जाती है और इसके सर्वोच्च शिखर की ऊँचाई 4315 फीट हो जाती है। मुख्य पर्वतमाला सिरोही के दक्षिण-पश्चिम में तिरोहित हो जाती है। अरावली पर्वतमाला प्राक्-विन्ध्य युग की है। अर्बुद पर्वत भी जो एक सँकरी घाटी द्वारा अरावली पर्वतमाला से पृथक होता है प्राक-विन्ध्ययुग का है (अधिक विवरण के लिए द्रष्टव्य-,डब्ल्यू०-डब्ल्यू० हंटर कृत, इंपीरियल गज़ेटियर्स ऑव इंडिया, पृ० 214-215)।

अर्बुद—यह राजस्थान के सिरोही में अरावली पर्वतमाला में स्थित आबू पर्वत है। इसे बुद्धिमत्ता की पहाड़ी (Hill of wisdom) कहा जाता है। यहाँ पर ऋषि वशिष्ठ का आश्रम एवं अंबा भवानी का प्रसिद्ध मंदिर है। मेगस्थनीज़ एवं एरियन के अनुसार पुण्य अर्बुद या आबू पर्वत की पहचान कैपिटेलिया (Capitalia) से की जानी चाहिए जो 6500 फीट ऊँची होने के बावजूद भी

अरावली पर्वतमाला के किसी अन्य शिखर से कहीं अधिक ऊँचा है (मैक्रिंडिल, ऐंश्येंट इंडिया ऐंज़ डिस्क्राइब्ड बाई मेगस्थनीज़ ऐंड एरियन, पृ० 147)। साभ्रमती नदी का स्रोत अर्बुदपर्वत में है (पद्मपुराण, अध्याय, 136)। अधिक विवरण के लिय द्रष्टव्य, लाहा, सम जैन कैनानिकल सूत्राज़, पृ० 184-185; एर्सकाइन द्वारा संकलित राजपूताना गज़टियर्स ,भाग, III, पृ० 284 और आगे डब्ल्यू० डब्ल्यू० हृटंर कृत इंपीरियल गज़ेटियर्स ऑव इडिया, भाग, I पृ० 2 और आगे)।

अर्थूणा—यह राजस्थान के बाँसवाड़ो से पश्चिमाभिमुख दिशा में कोई 28 मील से अधिक दूर है (एपि० इं०, XIV, पृ० 295)।

अशी—यह उस तहसील का मुख्यावास है जिसमें महल्ला-लाट स्थित था। इसे अश्टि से समीकृत किया जा सकता है जो बेलोरा से केवल 10 मील दक्षिण-पूर्व में स्थित है (एपि० इं०, XXIV, भाग, VI, अप्रैल, 1938, पृ० 263)।

असीरगढ़—यह मध्य प्रदेश के निमाड़ जिले में खँडवा से 29½ मील दक्षिण-पश्चिम में स्थित एक दृढ़ किला है (इंपीरियल गज़ेटियर्स ऑव इंडिया, भाग, I, पृ० 230)। शर्ववर्मन के असीरगढ़ ताम्र-अभिमुद्रा लेख में मध्य प्रदेश के निमाड़ जिले की बुरहानपुर तहसील के मुख्यावास बुरहानपुर से लगभग 11 मील पूर्वोत्तर में स्थित असीरगढ़ के पहाड़ी-दुर्ग का वर्णन है जो पहले सिंधिया के अधिकार में था (का० इं० इं०, जिल्द, III)।

अवन्ती—ब्रह्माण्डपुराण के अनुसार इसे अवन्तिका भी कहा जाता था (IV, 40.91)। रुद्रदामन प्रथम के जूनागढ़-अभिलेख में अनूप प्रदेश (माहिष्मती राजधानी), आनर्त्त (उत्तर काठियावाड), सुराष्ट्र (दक्षिण काठियावाड़), साबरमती के तट पर स्थित श्वभ्र, कच्छ, (पश्चिमी भारत में स्थित कूच), सिंध (अवरसिन्धु नदी के पश्चिम में), सौवीर (उत्तर भारत में अवरसिन्धु के पूरब में), कुकुर (उत्तर काठियावाड़ में आनर्त्त के समीप), अपरान्त (पश्चिमी भारत में उत्तरी कोंकण), निषाध[1] एवं बिजयगढ़ में रहने वाले यौधेयों के साथ आकरावन्तीं (मालवा)[2], आकर (पूर्वी मालवा से समीकृत

---

[1] बि० च० लाहा, ट्राइब्स इन ऐंश्येंट इंडिया, पृ० 98 और आगे (निषाद या निषध), पृ० 75 और आगे।

[2] अवन्ती मालवा का प्राचीन नाम है (तुलनीय, कथासरित्सागर, अध्याय, XIX)।

जिसकी राजधानी विदिशा है) एवं अवन्ती (पश्चिमी मालवा से समीकृत जिसकी राजधानी उज्जयिनी है) का वर्णन है। अवन्ती, जिसकी राजधानी उज्जयिनी[1] थी, का वर्णन वाशिष्ठीपुत्र, पुलुमापि के नासिक गुहालेख में आकरावन्ती[2] के रूप में हुआ है, जबकि रुद्रदामन प्रथम के जूनागढ़-शिलालेख में पूर्व एवं अपर (पश्चिमी)—दो आकरावन्तियों का उल्लेख है। अशोक के प्रथम पृथक् शिला-लेख में उज्जयिनी का उल्लेख है जहाँ से कुमार महामात्रों को भेजता था। अशोक के अभिलेखों में भोज एवं ऋष्टिक-राष्ट्रिक क्षेत्र और उनकी प्रशाखाएँ अवन्ती नामक तत्कालीन मौर्य प्रांत की क्षेत्रीय सीमाओं के बाहर स्थित बतलायी गयी थीं (बरुआ, अशोक ऐंड हिज़ इंस्क्रिप्शंस, अध्याय, III)। पश्चिमी एवं दक्षिणी भारत के क्षहरात क्षत्रप नहपाण के समय के उषवदात के अभिलेखों पर जब सातवाहनों एवं शक क्षत्रपों के अभिलेखों के संदर्भ में विचार किया जाता है तब कालक्रम की एक जटिल समस्या उठती है। ऐसा कोई निश्चायक साक्ष्य नहीं है जिससे यह सिद्ध किया जा सके कि उज्जयिनी या मुख्य अवन्ती नहपाण के राज्य के अंतर्गत थी। सामान्यतया उषवदात के नासिक गुहालेख में मालयों (मालवों) के वर्णन से उज्जयिनी को नहपाण के राज्य में संमिलित होने का अनुमान लगाया जाता है किंतु अब भी यह प्रस्थापित करना यह शेष है कि उस समय अवन्ती मालवों की राजधानी थी।

जहाँ तक अवन्ती की स्थिति का प्रश्न है, महाभारत में इसे पश्चिमी भारत में स्थित बतलाया गया है (अवन्तिषु प्रतीच्यां वै-वनपर्व, III, 89, 8354), और पुण्यसलिला नर्मदा का वर्णन है जिसके तट पर अवन्ती स्थित है। महाभारत के विराट (IV, 1-12) में अर्जुन के मुख से पश्चिमी भारत के अन्य राज्यों यथा सुराष्ट्र एवं कुंति के साथ अवन्ती का भी वर्णन किया गया है। श्रीमती रीज़ डेविड्स की धारणा है कि अवन्ती विन्ध्य पर्वत के उत्तर में और बंबई के पूर्वोत्तर में स्थित था (साम्स ऑव द ब्रेदेरेन, पृ० 107, टिप्पणी, 1)। टी० डब्ल्यू० रीज़ डेविड्स का मत है कि दूसरी शताब्दी ई० तक इसे अवन्ती कहा जाता था किंतु

---

[1]ल्युडर्स की तालिका संख्या 172, 173, 210, 212, 218, 219, 231-237, 238 आदि में इसका वर्णन उज्जेनी नामक एक नगर के रूप में हुआ है। इस सूची में उजेनीहार नामक एक विषय (जिले) (सं० 268) का वर्णन आता है जिसकी पहचान करना कठिन है।

[2]इसे आकरावती भी कहा जाता है (ल्युडर्स की तालिका, संख्या 965)।

सातवीं या आठवीं शताब्दी ई० के पश्चात् इसे मालव कहा जाने लगा (बुद्धिस्ट इंडिया, पृ० 28)। उज्जयिनी जो अवन्ती या पश्चिमी मालव की राजधानी थी एवं जो चर्मण्वती (चंबल) की सहायक शिप्रा नदी के तट पर स्थित थी, मध्य प्रदेश में आधुनिक उज्जैन है (रैप्सन, ऐंश्येंट इंडिया, पृ० 175)। अवन्ती स्थूल रूप से आधुनिक मालवा, निमाड़ एवं मध्य प्रदेश में इनके निकटवर्ती भागों को द्योतित करती है। यह दो भागों में ,विभक्त थी : उत्तरी भाग जिसकी राजधानी उज्जयिनी थी एवं दक्षिणी भाग जिसकी राजधानी माहिस्सती या माहिष्मती ी।

अवन्ती-जन प्राचीन भारत के एक अत्यंत शक्तिशाली क्षत्रिय कबीले थे। उन्होंने विन्ध्य पर्वत के उत्तर में स्थित क्षेत्रों को अधिकृत किया था। बौद्ध धर्म के उत्कर्ष-काल में वे भारत के चार प्रमुख जनपदों में से एक थे जो कालांतर में मौरिय-साम्राज्य में विलयित हो गये थे[1]। वे एक प्राचीन जन थे जैसा कि हमें महाभारत से ज्ञात होता है। विंद एवं अनुविंद नामक उनके दो राजाओं ने कुरुक्षेत्र के युद्ध में दुर्योधन की सेना का नेतृत्व किया था। वस्तुत: अवन्ती-जन संपूर्ण कुरु-सेना के पंचमांश थे[2]। दृढ़ शक्ति एवं पौरुष से युक्त, युद्धों में निष्णात् वे दोनों महान् योद्धा एवं सर्वोत्तम सारथि थे[3]। संपूर्ण युद्ध-काल में वे प्रमुख रूप से अत्यधिक क्रियाशील थे और उन्होंने अनेक शानदार एवं वीरतापूर्ण कार्य संपादित किये थे। अपने वैयक्तिक पुरुषार्थ एवं सेनापतित्व तथा रणक्षेत्र में अपने नेतृत्व में विविध प्रकार के सैनिकों की असंख्य सेना के माध्यम से उन्होंने कौरव पक्ष की बहुत लाभप्रद सेवा की थी। युद्ध के प्रारंभिक चरण में उन्होंने भीष्म की सहायता की थी[4]। उन्होंने दुर्धर्ष अर्जुन के विरुद्ध आक्रमण किया था[5]। उन्होंने अर्जुन के पुत्र शक्तिशाली इरावत के साथ बहुत वीरतापूर्वक युद्ध किया था। उन्होंने पाण्डवों के सेनानायक धृष्टद्युम्न पर आक्रमण किया था। उन्होंने अर्जुन को घेरा और भीमसेन से युद्ध किया था[6]। इस प्रकार वे अपने अंतिम क्षण तक रणक्षेत्र में वीरतापूर्वक युद्ध करते रहे जब तक कि कुछ

---

[1] साम्स ऑव द ब्रेदेरेन, पृ० 107, सं० 1.

[2] महाभारत, V, 19-24.

[3] महाभारत, V, 166.

[4] वही, VI, 16; II, 17 आदि।

[5] वही, VI, 59.

[6] वही, VI, 102 और 113.

लोगों के अनुसार उनका वध अर्जुन ने[1] और अन्य जनों के अनुसार भीम ने नहीं कर दिया[2]।

मत्स्यपुराण (अध्याय, 43) के अनुसार अवन्तियों की उत्पत्ति हैहय राजवंश से हुयी थी[3] जिनका सब से अधिक प्रतापी राजा कार्त्तवीर्य अर्जुन था। अवन्तियों एवं यदुओं के राजकुल में वैवाहिक संबंध होते थे। एक यदु राजकुमारी-राज्याधिदेवी का विवाह अवन्ती के राजा के साथ हुआ था[4]। उससे विंद और उपविंद नामक पुत्रों का जन्म हुआ था जिनकी पहचान अतिसंभवतः विंद एवं अनुविंद नामक अवन्ती के दो वीर राजकुमारों से की जा सकती है, कुरुक्षेत्र में किये गये जिनके साहसिक कार्यों की कथा महाभारत[5] में वर्णित है।

सुविख्यात व्याकरणी पाणिनि ने अपने एक सूत्र में (IV, 1.176) अवन्ती का उल्लेख किया है। पतञ्जलि के महाभाष्य में भी इसका उल्लेख है (4.1.1, पृ० 36)। भागवत पुराण में एक नगर के रूप में इसका वर्णन है (X, 45, 31; X, 58-30; XI, 23.6, 23, 31)। स्कन्दपुराण में एक पुण्य नगर के रूप में इसका उल्लेख है (अध्याय, I, 19-23)। योगिनीतंत्र (2.2.119) में इसका वर्णन है।

यह एक रोचक तथ्य है कि अधिकांशतः उर्वर भूमिवाले अवन्ती देश को सिन्ध नदी से आगे आने वाले आर्यजनों ने उपनिवेशित या विजित कर लिया था। वे कच्छ की खाड़ी से पूरब की ओर मुड़ गये थे। कम से कम दूसरी शताब्दी ई० तक इसे अवन्ती कहा जाता था जैसा कि हमें रुद्रदामन के जूनागढ़-अभिलेख से विदित होता है किन्तु टी० डब्ल्यू० रीज डेविड्स के मतानुसार सातवीं या आठवीं शताब्दी ई० के पश्चात् इसे मालवा कहा जाने लगा[6]।

अवन्ती प्राचीन भारत के अत्यंत समृद्धिशाली राज्यों और जंबुदीप के षोडस् महाजनपदों में से एक था। इस देश में प्रचुर अन्न उपजता था और यहाँ के निवासी संपन्न एवं समृद्धिशाली थे[7]। कुछ लोगों के अनुसार पालि भाषा, जिसमें

---

[1] वही, VII, 99.

[2] वही, XI, 22.

[3] पार्जिटर, ऐंश्येंट इंडियन हिस्टॉरिकल ट्रेडिशन, पृ० 102, 267.

[4] विष्णुपुराण, IV, 12; अग्नि-पुराण, अध्याय, 275.

[5] महाभारत, IV, 14.

[6] बुद्धिस्ट इंडिया, पृ० 28.

[7] अंगुत्तर निकाय, IV, 252, 256, 261.

हीनयान बौद्धों के ग्रंथ लिखे गये हैं, अवन्ती या गन्धार में ही विकसित हुयी थी[1]।

अवन्ती बौद्ध धर्म का एक महान केंद्र था। इस धम्म के कई अत्यंत निष्ठावान एवं उत्साही अनुयायी यथा, अभयकुमार,[2] इसिदासी,[3] इसिदत्त,[4] धम्मपाल[5], सोण कूटिकण्ण[6] और विशेष रूप से महाकच्चान[7] या तो यहाँ उत्पन्न हुये थे या यहाँ पर रहते थे।

महाकच्चायन उज्जयिनी में राजा चण्ड पज्जोत के पुरोहित के परिवार में उत्पन्न हुये थे। उन्होंने तीनों वेदों का अध्ययन किया। अपने पिता के निधन के पश्चात् वह पुरोहित-पद पर उनका उत्तराधिकारी बना। वह बुद्ध के पास गये थे जिन्होंने उसको धम्म की इतनी प्रभावशाली शिक्षा दी कि दीक्षा के पश्चात् वह अपने अनुयाइयों के साथ अर्हत पद में प्रतिष्ठित हुआ। उसे धम्म के शब्दार्थ का गहन बोध था। अपने प्रयास से ही वह पज्जोत का धर्म-परिवर्तन करने में भी सफल हुआ था। स्वयं अवन्ती का निवासी होने के कारण उसने अपने प्रदेश-वासियों में इस नूतन धर्म का प्रचार करने में उत्साहपूर्वक कार्य किया। अपनी जन्म-भूमि में उसके धर्म–प्रचार की महती सफलता का बहुत कुछ रहस्य इस बात में है कि वह प्रारंभ में ही वहाँ के राजा चण्ड पज्जोत का धर्म-परिवर्तन कर सका[8]। जिस समय वह अवन्ती में निवास कर रहा था, उसने मुख्यतया कषिणों से संबंधित एक गाथा के अर्थ की विशद व्याख्या काली नामक एक उपासिका से इतनी सफलतापूर्वक की थी कि वह उसकी व्याख्या से अत्यधिक संतुष्ट हुयी थी। उसने हलिद्दिकानि नामक अवन्ती के एक गृहस्थ से वेदना, रूप, सञ्ञा (संज्ञा), विज्ञान, धातु एवं संस्कार के प्रश्नों से संबंधित एक गाथा की व्याख्या की थी और उक्त गृहस्थ अत्यधिक संतुष्ट हुआ था। वही निष्ठावान एवं जिज्ञासु

---

[1] **इलियट, हिंदुइज्म ऐंड बुद्धिज्म, I, 282.**

[2] **थेरगाथा कामेंट्री, 39.**

[3] **थेरीगाथा कामेंट्री, 261-4.**

[4] **थेरगाथा, 120.**

[5] **वही, 204.**

[6] **वही, 369.**

[7] **संयुक्त निकाय, III, पृ० 9; IV, 117; अंगुत्तर निकाय, I, 23; V, 46; मज्झिमनिकाय, III, 223.**

[8] **साम्स ऑव द ब्रेदेरेन, 238-9.**

गृहस्थ पुनः बौद्ध-धर्म के कुछ जटिल प्रश्नों के स्पष्टीकरण के लिये उसके पास गया था और उसने उसे उनको समझाया था (संयुक्त, IV, पृ० 115-116)। जब कभी बुद्ध धम्म के विषय में कोई प्रवचन देते थे, महाकच्चायन उपस्थित रहा करता था। इसलिये भिक्षु उसके लिये एक आसन[1] रिक्त रखते थे। अतएव यह स्पष्ट है कि निश्चय ही अवन्ती के पश्चिमी प्रांत में बौद्धमत के अनुयायी बहुसंख्यक होने के साथ ही प्रभावशाली भी थे जिससे यह प्रकट होता है कि थेर महाकच्चायन के सक्रिय नेतृत्व में शान्ति एवं निर्वाण का यह नूतन धर्म संपूर्ण प्रांत में दूर दूर तक फैल गया था।

कहा जाता है कि जैन-मत के महान् प्रवर्त्तक महावीर ने अवन्तीदेश में अपनी कुछ तपस्याएँ की थी। वह अवन्ती की राजधानी उज्जयिनी भी गये थे जहाँ उन्होंने एक श्मशान के निकट तपस्या की थी जबकि रुद्र एवं उसकी पत्नी ने व्यर्थ ही उनके मार्ग में विघ्न उपस्थित करना चाहा था।[2]

लिङ्गायत संप्रदाय का एक तीर्थस्थल अवन्ती के उज्जयिनी में स्थित है जहाँ पर प्रायः भ्रमणशील लिङ्गायत मुनि आया करते हैं।[3]

प्रद्योत-जन अवन्ती के राजा थे। राजा चण्ड पज्जोत (चण्ड प्रद्योत) बुद्ध का समकालीन था। बुद्ध के काल में मधुरा के राजा को अवन्तीपुत्त कहा जाता था जिससे यह प्रकट होता है कि मातृपक्ष से वह उज्जयिनी के राजकुल से संबंधित था।[4] भारत के राजनीतिक इतिहास में उज्जयिनी की महत्त्वपूर्ण भूमिका थी। प्रद्योतों की अधीनता में यह अति उन्नत स्थिति में पहुँच गया था और इसकी शक्ति एवं पौरुष से मगध के महान् सम्राट् भी डरते थे। उज्जैनी के राजा पज्जोत के एक संभावित आक्रमण की आशंका से अजातशत्रु ने अपनी राजधानी राजगृह को प्राकारावेष्ठित किया था। अवन्ती एवं कौशाम्बी के राजकुलों में वैवाहिक संबंध हुआ था। अवन्ती-नरेश पज्जोत ने क्रुद्ध होकर कोसाम्बी के राजा उदेन (कौशाम्बी-नरेश उदयन) पर यह जानते हुये भी कि उदेन की गरिमा उससे (पज्जोत से) अधिक है, आक्रमण करने का निश्चय किया था। पज्जोत ने काष्ठ का एक हाथी बनवाया और इसमें उसने साठ योद्धाओं को छिपा दिया। पज्जोत यह जानता था कि सुंदर हाथियों के प्रति उदेन की विशेष अभिरुचि थी।

---

[1] धम्मपद कामेंट्री, II, पृ० 176-77.

[2] स्टीवेंसन, द हार्ट ऑव जैनिज्म, पृ० 33.

[3] ईलियट, हिंदुइज्म ऐंड बुद्धिज्म, II, 227.

[4] दे० रा० भंडारकर कार्माइकेल लेक्चर्स, 1918, पृ० 53.

उसने अपने गुप्तचरों से उसके पास यह सूचना भिजवायी कि सीमावर्ती जंगल में एक अद्वितीय एवं भव्य हाथी मिल सकता है। उदेन जंगल में आया और शिकार की खोज में वह अपने अनुचरों से अलग हो गया। वह बंदी बना लिया गया। एक बंदी के रूप में वह राजा पज्जोत की पुत्री वासवदत्ता से अनुरक्त हो गया। राजधानी से पज्जोत की अनुपस्थिति का लाभ उठाकर वह वासुलदत्ता के साथ उसकी राजधानी से भाग आया। वासुलदत्ता को साथ लिये हुये, उदेन अपनी राजधानी पहुँचने में सफल रहा। उसने उसे अपनी रानी बनाया।[1] चौथी शती ई० पू० में उज्जेनी मगध के अधीन हो गयी। चन्द्रगुप्त का पौत्र अशोक अवन्ती देश के कुमारामात्य के रूप में उज्जैन में नियुक्त किया गया था।[2] उज्जैन के विख्यात् राजा विक्रमादित्य ने शकों को निष्कासित करने के पश्चात् भारत के एक विशाल भाग पर अपना अधिकार कर लिया था। उन्होंने हिंदू-राजतंत्र को उसकी प्राचीन गरिमा से पुर्नविभूषित किया[3]। परवर्ती युगों में अवन्ती के कुछ राजकुलों ने भारतीय इतिहास पर अपनी छाप छोड़ी है। पाल-वंशीय धर्मपाल ने इन्द्रायुध को अपदस्थ करके निकटवर्ती उत्तरी शक्तियों, यथा अवन्तियों, भोजों एवं यवनों की सहमति से उसके स्थान पर चक्रायुध को नियुक्त[4], किया। मालवा (प्राचीन काल में जिसे अवन्ती कहते थे) के परमार-वंश की स्थापना नवीं शताब्दी ई० के प्रारंभ में उपेन्द्र या कृष्णराज ने की थी। अपनी विद्वत्ता एवं वक्तृत्व के लिए प्रसिद्ध मुञ्ज न केवल कवियों का ही संरक्षक था वरन् वह स्वयं भी एक विश्रुत कवि था। मुञ्ज का भतीजा प्रसिद्ध भोज धारा के सिंहासन पर अधिष्ठित हुआ जो उस समय मालवा की राजधानी थी और उसने चालीस से अधिक वर्षों तक उस पर शान से शासन किया। तेरहवीं शताब्दी ई० के प्रारंभ तक मालवा का परमारवंश एक विशुद्ध स्थानीय सत्ता के रूप में अस्तित्वशील रहा। इस शताब्दी में तोमर–कुल के प्रमुखों ने इस राजवंश का अधिक्रमण किया जिनके पश्चात् चौहान राजाओं का आधिपत्य हुआ। 1401 ई० में यहाँ का राज्य चौहानों से मुसलमान राजाओं के हाथ में चला गया।

---

[1] तुलनीय, बुद्धिस्ट इंडिया, 4-7, और भास कृत स्वप्नवासवदत्ता।

[2] स्मिथ, अशोक, पृ० 235

[3] मैक्रिंडिल, ऐंश्येंट इंडिया ऐज डिस्क्राइब्ड बाइ टॉलेमी, पृ० 154-55.

[4] स्मिथ, अर्ली हिस्ट्री ऑव इंडिया, चतुर्थ संस्करण, पृ० 413.

अवन्ती एक महान व्यापारिक केंद्र बन गया। सुरपारक (सोपारा) और भृगुकच्छ (भड़ौच) बंदरगाहों वाले पश्चिमी समुद्रतट, दक्कन एवं कोशल (उ० प्र०) के श्रावस्ती से आने वाले तीन पथ यहाँ पर मिलते थे। पेरिप्लस आॅव द एरिथ्रियन सी (खंड, 48) से ज्ञात होता है कि ओज़ीनी (उज्जैन) से स्थानीय उपभोग या भारत के अन्य भागों में निर्यात के लिये बैरीगाजा में सुलेमानी पत्थर, पोर्सीलेन, अच्छी मलमल, बैंगनी रंग की रूई आदि माल आया करते थे।

अवन्ती विद्या का भी एक महान केंद्र था। हिंदू ज्योतिर्विद अपने देशांतर का प्रथम याम्योत्तर उज्जयिनी से गिनते थे। बसंतोत्सव के अवसर पर चतुर्थ शती ई० में प्रांताधिपति के दरबार के समक्ष कालिदास के नाटक अभिनीत होते थे[1]। उज्जयिनी-नरेश विक्रमादित्य की सभा को नव प्रसिद्ध व्यक्ति, जिन्हें नवरत्न कहा जाता था, सुशोभित करते थे।

उज्जयिनी का निर्माण अच्चुतगामी[2] ने किया था। स्कन्दपुराण के अवन्त्य-खण्ड (अध्याय, 43) के अनुसार महादेव, महान् त्रिपुरासुर को मारने के पश्चात् अवन्तियों की राजधानी अवन्तीपुर आये थे, जिसे महादेव की इस महती विजय के सम्मान में उज्जयिनी कहा जाने लगा।

सातवीं शताब्दी ई० में चीनी तीर्थयात्री युवान-च्वाङ यहाँ आया था। उसके अनुसार उज्जयिनी की परिधि 6,000 ली थी। यह एक जन संकुल नगर था। यहां पर कई संथागार थे किंतु वे अधिकांशतया भग्न थे। वहाँ पर अनेक पुरोहित थे। वहाँ का राजा ब्राह्मण जाति का था। नगर के समीप ही एक स्तूप था[3]।

उज्जैन में प्रचलित मुद्राओं का एक विशेष चिह्न था। कुछ दुर्लभ मुद्राओं पर दूसरी शताब्दी ई० पू० की ब्राह्मी लिपि में 'उजेनिय' शब्द उत्कीर्ण है। साधारणतया मुद्रा के एक ओर सूर्य प्रतीक के साथ एक व्यक्ति बना हुआ है और दूसरी ओर उज्जैन का विशेष चिह्न बना हुआ है। कुछ मुद्राओं पर एक ओर घेरे में एक बैल, (नंदि) या बोधिवृक्ष या सुमेरु पर्वत या लक्ष्मी की आकृति बनी हुयी है। उज्जैन की कुछ मुद्राएँ चतुष्कोणीय हैं जबकि अन्य वृत्ताकार[4]। शाहजहाँ

---

[1] रैप्सन, ऐंश्यंट इंडिया, पृ० 175.

[2] दीपवंस (ओल्डेनबर्ग), पृ० 57.

[3] बील, बुद्धिस्ट रिकार्डस आॅव द वेस्टर्न वर्ल्ड, II, 270-271.

[4] रा० दा० बनर्जी, प्राचीन मुद्रा, 108.

के काल तक इस नगर में वर्गाकार मुग़ल ताम्रमुद्राएँ निर्मित होती थीं[1]। उज्जैन से प्राप्त गोलाकार मुद्रा-समूह पर एक विशेष चिह्न या लक्षण (*) (Cross and balls) अंकित किया गया है जिसे उज्जैन अभिलक्षण (Ujjain Symbol) कहा जाता है[2]। अधिक विवरण के लिए द्रष्टव्य बि० च० लाहा, ट्राइब्स इन ऐंश्येंट इंडिया, अध्याय, IX; बि० च० लाहा, ज्यॉग्रेफिकल एसेज़, पृ० 33, 170; बि० च० लाहा, उज्जयिनी इन ऐंश्येंट इंडिया (ग्वालियर आर्क्योलॉजिकल विभाग); बि० च० लाहा, इंडोलॉजिकल स्टडीज़, I, 54.

आबुयग्राम—(एपि० इं०, VIII, 222)—इसकी पहचान आबू से की जा सकती है।

आमतरी—चाहमान सोमेश्वर के बिझोली शिलालेख में (विक्रम संवत् 1226) इसका उल्लेख है जिसकी पहचान उपरम्वाल-अंतरी से की जा सकती है। यह उस क्षेत्र का नाम है जिसमें बेगून, सिंगोली, कदवास, रतनगढ़ एवं खेड़ी आदि संमिलित है।

आनंदपुर—हरसोल दानपत्र में इसका वर्णन है (एपि० इं०, XIX, 236)। इसकी पहचान गुजरात में आधुनिक बडनगर से की जा सकती है।

आर्थुन—यह गाँव राजस्थान में बाँसवाड़ा से पश्चिम में लगभग 28 मील दूर पर स्थित है जहाँ से परमार चामुण्डराज का एक अभिलेख उपलब्ध हुआ था (एपि० इं०, XIV, 295)।

आवरकभोग—इसकी पहचान संभवतः उज्जैन के पूर्वोत्तर में अगर नामक नगर के परिवर्ती क्षेत्र से की जा सकती है (एपि०, इं०, XXIII, भाग, IV, अक्टूबर, 1935, 102)।

बधेर—यह शामशाबाद से पूर्वोत्तर में कच्ची सड़क पर लगभग दस मील दूर पर स्थित है जो भिलसा से पश्चिमोत्तर में पक्की सड़क से कोई 31 मील है।

बदोह—यह कुलहर रेलवे स्टेशन से कोई 12 मील दूर स्थित है।

बड़वा—यह अंतः से लगभग पाँच मील दक्षिण-पश्चिम में स्थित एक विशाल गाँव है। यह राजस्थान में कोटा में है जहाँ पर यूपों पर कृत संवत् 295 में

---

[1] **ब्राउन, क्वायंस ऑव इंडिया, पृ० 87.**

[2] **वही, पृ० 20; विक्रम वाल्यूम (सिंधिया ओरियंटल इंस्टीट्यूट, 1948) पृ० 281-288 पर प्रकाशित बि० च० लाहा का लेख अवन्ती इन ऐंश्येंट इंडिया भी द्रष्टव्य।**

अंकित तीन मौखरि अभिलेख उपलब्ध हुये थे (एपि० इं०, XXIII, भाग, II, अप्रैल, 1935, पृ० 42)।

बैराट—वैराट देखिये।

बलेव—यह राजस्थान में स्थित संचोर है। यहाँ से दो अभिपत्रों पर अंकित एक अभिलेख मिला है (एपि० इं०, X, 76 और आगे)।

बम्हनी—यह मध्य प्रदेश के रीवाँ जिले की सोहागपुर तहसील में है। यहाँ से एक ताम्रपत्र शास प्राप्त हुआ था जो प्राचीन भारतीय इतिहास के विद्यार्थी के लिए बहुत मूल्यवान है (द्रष्टव्य, भारत कौमुदी, भाग, I, पृ० 215 और आगे; तुलनीय, एपि० इं०, XXVII, सं० 24, पृ० 132)।

बँगला—यह नरवर दुर्ग से लगभग पाँच मील पूर्व में है।

बरई—यह पनिहर रेलवे स्टेशन से लगभग तीन मील दूर है (ग्वालियर शिवपुरी रेल-पथ)।

बरगाँव—यह गाँव मध्यप्रदेश के जबलपुर जिले की मुरवारा तहसील के मुख्यावास, मुरवारा से पश्चिम और उत्तर में 27 मील दूर स्थित है (एपि० इं०, XXV, भाग, VI, पृ० 278)।

बरणाल—यह राजस्थान में है। यह बरणाल के अंतर्गत् एक छोटा सा गाँव है जो लोलसोते—गंगापुर के मौसमी मार्ग से लगभग आठ मीलदूर पर स्थित है जहाँ से दो यूप-अभिलेख उपलब्ध हुये थे (एपि० इं०, XXVI, भाग, III, जुलाई, 1941, पृ० 118)।

बरो—यह निकटवर्ती पाथार नगर तक फैले हुए एक प्राचीन नगर के अवशेषों वाला प्राचीन स्थल है। मुख्य अवशेषों में हिंदू एवं जैन मंदिर हैं (ग्वालियर स्टेट गज़ेटियर, I, पृ० 199 और आगे)।

बाघ—यह गाँव धार से लगभग 25 मील दक्षिण-पश्चिम में मालवा के दक्षिण में स्थित है। यह बाघ या वाघ तथा गिरना नदियों के संगम पर अवस्थित है। यह कुक्षी से 12 मील उत्तर में, उदयपुर घाट के निकट एक प्रमुख प्राचीन मार्ग पर स्थित है (ग्वालियर स्टेट गज़ेटियर, I, 196-197)। इस गाँव के दक्षिण में एक विहार स्थित है जो अधिकांशतः भग्न हो चुका है। यहाँ पर नौ गुहाएँ हैं। इन गुहाओं में कोई अभिलेख नहीं प्राप्त होता है। दो अनुचरों द्वारा परिसेवित बुद्ध या किसी बोधिसत्व की प्रतिमाएँ हैं और वे दक्षिण-पश्चिमी समूह की दूसरी गुहा में प्राप्त होती हैं। बाघ की चित्रकला की तिथि छठवीं शताब्दी या सातवीं शताब्दी ई० का पूर्वार्द्ध हो सकती है। इनमें से कुछ गुहाओं में प्राप्त होने वाले डगोबा में बुद्ध की कोई प्रतिमा नहीं है। किंतु इन गुहाओं में यत्र-

तत्र बुद्ध की प्रतिमाएँ हैं। यहाँ का वास्तु-शिल्प नासिक की गुहाओं के सदृश नहीं है। पण्डवोंकीगुम्फा नामक दूसरी गुहा भली प्रकार से सुरक्षित है। यह एक वर्गाकार विहार है जिसके तीन ओर कोठरियाँ ओर पीछे की ओर स्थित चैत्य में एक स्तूप है। पार्श्वकक्ष के सामने स्तंभ हैं और इसकी दीवारें मूर्तियों से अलंकृत है। तीसरी गुहा एक विहार है। चौथी गुहा शिल्पकला का उज्ज्वलतम उदाहरण है। बाइस स्तंभों पर अवलंबित यहाँ पर 220 फीट से भी अधिक लंबा एक ओसारा है। पाँचवीं गुहा एक आयताकार गुफा है जिसकी छत स्तंभ की दो पंक्ति पर अवलंबित है। छठीं गुफा की छत भग्न है। दूसरी गुहा के सदृश प्रतिभासित होने वाली सातवीं गुहा भी जीर्ण है। ये सभी गुहाएँ विहार हैं। और स्पष्टतया इसमें संलग्न कोई चैत्य महाकक्ष या बौद्ध संघाराम नहीं है।

बाघेलखंड—त्रिलोक्यवर्मन् के रीवाँ दानपत्रों से यह प्रकट होता है कि बाघेलखंड का उत्तरी भाग तेरहवीं शताब्दी ई० में चंदेलों के अधीन था (इं० एं०, XVII, 230 और आगे)।

बालाघाट—यह मध्यप्रदेश में स्थित एक जिला है जहाँ से पृथ्वीसेन द्वितीय के पाँच अभिपत्र उपलब्ध हुये थे (एपि० इं०, IX, 267 और आगे)।

बालि—इस नगर में दो मंदिर हैं जिनमें से एक जैन मंदिर है जिसमें बारहवीं शती ई० का एक अभिलेख है। वह फलना रेलवे स्टेशन से कोई पाँच मील दक्षिण-पूर्व में स्थित है (एर्सकिन, राजपूताना गजेटियर, जिल्द, III, पृ० 178)।

बारदूला—यह मध्यप्रदेश के सारंगढ़ में स्थित एक गाँव है, (एपि० इं०, XXVII, भाग, VI, पृ० 287) जहाँ से महाशिवगुप्त के ताम्रपत्र (नवें वर्ष में कालांकित) उपलब्ध हुये थे।

बर्णासा—(बणासा)—यह एक नदी है जो पर्णाशा नदी के समान ही हो सकती है (ल्युडर्स की तालिका, सं० 1131)।

बासिम—यह महाराष्ट्र में अकोला जिले के बासिम तालुक का मुख्यावास है जहाँ से वाकाटक नरेश विन्ध्यशक्ति द्वितीय के कुछ अभिपत्र उपलब्ध हुये थे (एपि० इं०, XXVI, भाग, III, जुलाई, 1941)।

बेण्णकट—इस विषय (जिले) में भांडर जिले (महाराष्ट्र) की गोंदिया तहसील में कोसम्बा से 35 मील पूर्व में स्थित बेणी नामक आधुनिक गाँव के परिवर्ती क्षेत्र संमिलित थे (एपि० इं०, XXII, पृ० 170)।

बेतुल—यह मध्य प्रदेश के बेतुल जिले में है जहाँ से गुप्त संवत 199 में अंकित संक्षोभ के अभिपत्र उपलब्ध हुये थे (एपि० इं०, VIII, 284 और आगे)।

भैंमसड़ा—उदयपुर के जगन्नाथराय मंदिर के अभिलेखों में इस गाँव का वर्णन है जो चित्तौड़ के समीप स्थित है (एपि० इं०, XXIV, भाग, II, अप्रैल, 1937, पृ० 75)।

भौंसरोरगढ़—राजस्थान के उदयपुर में भैंसरोरगढ़ से लगभग तीन मील पूर्वोत्तर में स्थित बरोल्ली में भव्य हिंदू-मंदिरों का एक समूह है। घटेश्वर को समर्पित प्रमुख मंदिर प्राचीरावेष्टित एक आहाते में स्थित है। यहाँ पर शेष-शय्या पर लेटे हुये विष्णु की एक प्रतिमा है जो फर्ग्युसन के मतानुसार विशुद्ध हिंदू मूर्ति कला का एक अति सुंदर नमूना है।

भरुंड—यह राजस्थान में गोदवर में स्थित एक गाँव है जहाँ से एक अभिलेख उपलब्ध हुआ है।

भाब्रू—भाब्रू शासन या वैराट शिला-शासन भाब्रू की छावनी से लगभग 12 मील दूर पर स्थित बैराट की एक पहाड़ी से प्राप्त हुआ है (रिपोर्ट ऑव द आर्क्यॉलॉजिकल सर्वे, वेस्टर्न सर्किल, 1909-1910)। परवर्त्ती युगों में मत्स्य देश को विराट या वैराट कहा जाता था। वैराट में जयपुर (भूतपूर्व रियासत) का अधिकांश भाग संमिलित रहा होगा। इसकी निश्चित सीमा नहीं निर्धारित की जा सकती है किंतु उसका निर्धारण अनुमानतः उत्तर में झुनझुन से कोट कासिम तक 70 मील व पश्चिम में झुनझुन से अजमेर तक 120 मील; दक्षिण में अजमेर से बनास एवं चंबल के संगम तक 150 मील और पूरब में उक्त संगम से कोट कासी तक 150 मील या कुल मिलाकर 490 मील तक किया जा सकता है। अधिक विवरण के लिए द्रष्टव्य, मत्स्यदेश तथा वैराट।

भाण्डक—महाराज पृथ्वीसेन के नचने-की-तलाई शिलालेखों में वाकाटक का वर्णन है जो महाराष्ट्र के चाँदा में भाण्डक परगने के मुख्यावास आधुनिक भांडक का प्राचीन नाम है (का० इं० इं०, जिल्द, III; तुलनीय एपि० इं०, XIV, 121 और आगे)।

भेड़ाघाट—यह मध्य प्रदेश के जबलपुर जिले में नर्मदा के तट पर है। यहाँ रानी अल्हण देवी का 907 चेदि संवत् में लिखित एक शिलालेख उपलब्ध हुआ है (एपि० इं०, II, 7 और आगे)।

भिलय—यह उदयपुर से लगभग छह मील पूरब में और सीधे मार्ग से वसोदा से लगभग 18 मील दूर स्थित है।

भिल्लमाल—घुमली से प्राप्त सैन्धव दान-ताम्रपत्रों में इसका वर्णन है जिसकी पहचान राजस्थान में आबू पर्वत से 40 मील पूर्व में और पाटन के 80

मील उत्तर में स्थित आधुनिक भिनमल से की जा सकती है (एपि० इं०, XXVI, भाग, V, जनवरी, 1942, पृ० 204)। यह छठवीं एवं नवीं शताब्दियों के मध्य गुर्जरों की प्राचीन राजधानी थी।

भिलसा—यह बंबई से 535 मील की दूरी पर स्थित है। यह बेतवा नदी के पूर्वी तट पर स्थित है। कनिंघम के अनुसार इसकी स्थापना गुप्तयुग में हुयी थी। यहाँ के अवशेषों में साठ-बौद्ध स्तूपों की एक शृंखला है जिनमें से अनेक में अस्थि-मंजूषाएँ हैं। भिलसा के पश्चिमोत्तर में बेतवा एवं बेश नदियों के काँठे में प्राचीन बेसनगर का स्थल है जो अतीत काल में अशोक के समय से ही एक महत्त्वपूर्ण स्थान था। चौथी एवं पाँचवीं शती ई० में इस नगर पर गुप्त-वंशीय नरेशों का अधिकार था। इस पर नवीं शताब्दी ई० में मालवा के परमारों एवं बारहवीं शती ई० में चालुक्यों का अधिकार था (ग्वालियर स्टेट गज़ेटियर, I, पृ० 203 और आगे)। अधिक विवरण के लिए द्रष्टव्य विदिशा।

भीमवन—यह पथार नामक विशाल पठारी भाग की पर्वत-माला के परिवर्ती विस्तृत वन्य-क्षेत्र का प्राचीन नाम प्रतीत होता है (एपि० इं०, XXVI, भाग, III, जुलाई, 1941, पृ० 101)।

भिनमाल—यह नगर सिरोही जिले के जसवन्तपुर में स्थित है जहाँ से उदयसिंहदेव का शिलालेख उपलब्ध हुआ था (एपि० इं०, XI, पृ० 55)।

भितरवार—यह दबरा रेलवे स्टेशन के पश्चिम में सड़क-मार्ग से 19 मील दूर है।

भूमरा—गुप्त सम्राटों के काल के भूमरा स्तम्भलेख में इस गाँव का वर्णन है जो मध्य प्रदेश के सतना जिले में नागौद में उचेरा से 9 मील पश्चिमोत्तर में स्थित था (इं० हि० क्वा०, XXI, भाग, 2)।

भूखाडा—यह गाँव मध्य प्रदेश के राजनगर में है (एपि० इं०, XXIV, भाग, II, अप्रैल, 1937)।

बिहार-कोट्रा—यह मध्य प्रदेश के राजगढ़ में है जहाँ से एक अभिलेख उपलब्ध हुआ था (एपि० इं०, XXVI, भाग, III, जुलाई, 1941, पृ० 130)।

बीजापुर—यह निमाड़ जिले में है। यह सतपुड़ा में स्थित एक प्राचीन पहाड़ी दुर्ग है (लुअर्ड ऐंड दुबे, इंदौर स्टेट गजेटियर, II, 259)।

बिजयगढ़—यौधेयों के बिजयगढ़ शिलालेख में राजस्थान के भरतपुर जिले की बयाना तहसील में बयाना से लगभग दो मील दक्षिण-पश्चिम में स्थित बिजयगढ़ के पहाड़ी दुर्ग का वर्णन है (का० इं० इं०, जिल्द, III)

बिजोलिया-(बिझोली)—यह मेवाड़ में उदयपुर से लगभग 100 मील दूर एक गाँव है। इस गाँव में एक शिलालेख उपलब्ध हुआ है। यह एक जैन अभिलेख है जिसमें पार्श्वनाथ एवं अन्य जैन देवताओं की स्तुतियाँ प्राप्य हैं। चाहमान सोमेश्वर के बिझोली शिलालेख के अनुसार यह उदयपुर से लगभग 112 मील पूर्वोत्तर में स्थित एक सुदृढ़ एवं सुंदर नगर है। यह अरावली पहाड़ियों में पठार नामक पठारी क्षेत्र में सब से ऊपरी क्षेत्र के मध्य में स्थित है। यह पठार दक्षिण में बारोल्ली एवं भैंसरोरगढ़ से मेनाल, बिझोली और मंडलगढ़ से गुजरते हुए, उत्तर में जहाजपुर तक फैला हुआ है जो किसी समय साँभर एवं अजमेर के चाहमान राज्यों का एक महत्वपूर्ण भाग था (एपि० इं०, XXVI, भाग, II, अप्रैल, 1941)। संप्रति यह राजस्थान के उदयपुर जिले में है। बिझोली या बिझौली का प्राचीन संस्कृत नाम विन्ध्यावल्ली है जो कुछ अद्वितीय आकार वाले प्राचीन मंदिरों एवं अत्यधिक मूर्तियों से युक्त एक महत्त्वपूर्ण पुरातत्वीय स्थल है (एपि० इं०, XXIV, भाग, II, 84-85)। यह बिजोलिया या बिजोलिआ के नाम से लोक विश्रुत है। यह शब्द विन्ध्यवल्लिका से गृहीत है।

बोंथिकवाटक—प्रवरसेन द्वितीय के कोठुरक दानपत्र में बोंथिकवाटक का उल्लेख है (एपि० इं०, XXVI, भाग V, अक्टूबर, 1941)। यह नागपुर जिले में मनगाँव से लगभग साढ़े तीन मील पश्चिम एवं उत्तर में एवं दो मील उत्तर में स्थित आधुनिक बोठद है।

बुच्कला—यह राजस्थान के जोधपुर मंडल में बिलाड़ा में है जहाँ संवत् 872 में अंकित नागभट्ट का अभिलेख उपलब्ध हुआ था (एपि० इं०, IX, 198 और आगे)।

चैत—यह करहैय्या से लगभग पाँच मील उत्तर में है जो भिटवार-हरसी मार्ग पर स्थित देवरी गाँव से लगभग 12 मील उत्तर में है।

चम्मक—वाकाटक वंशीय महाराज प्रवरसेन द्वितीय के चम्मक ताम्रपत्र अभिलेख में भोजकट राज्य में स्थित चम्मक का वर्णन प्राप्य है जो (भूतपूर्व बरार अमरावती जिले (महाराष्ट्र) में या प्राचीन विदर्भ के एलिचपुर जिले के मुख्यावास) एलिचपुर से लगभग चार मील दक्षिण-पश्चिम में स्थित चर्मांक नामक प्राचीन गाँव है। चर्मांक नामक यह गाँव मधुनदी के तट पर स्थित है (का० इं० इं०, जिल्द, III)।

चंदेरी—यह मध्य प्रदेश के गुणा जिले में स्थित है और यहाँ पर एक पुराना दुर्ग है (ग्वालियर स्टेट गजेटियर, पृ० 209 और आगे)।

चन्द्रपुर—इसका तादात्म्य आधुनिक चाँदपुर से किया जा सकता है जो

सिवनी के दक्षिण में और वेन-गंगा नदी के पश्चिम में स्थित है (एपि० इं०, III, 260)।

चंद्रावती—कुछ लोगों ने इस प्राचीन नगर की पहचान टॉलेमी के संद्राब्रतिस (Sandrabatis) से की है। इस नगर के अवशेष आबू-रोड से लगभग चार मील दक्षिण-पश्चिम में और पश्चिमी बनास नदी के बाँए तट के समीप देखे जा सकते हैं (एर्सकाइन द्वारा संकलित राजपूताना गज़ेटियर्स, III-ए, पृ० 298)।

चर्मण्वती—पद्मपुराण (उत्तर खण्ड, श्लोक, 35-38), योगिनीतंत्र (2.5; पृ० 139-140) एवं पाणिनि की अष्टाध्यायी (VIII, 2, 12) में इस नदी का वर्णन हुआ है। चर्मण्वती या चंबल इंदौर के पश्चिमोत्तर में अरावली पर्वत-माला से निकलती है और पूर्वोत्तर की ओर पूर्वी राजस्थान से प्रवाहित होती हुयी यमुना में मिलती है। यह यमुना की एक सहायक नदी है। यह परिपात्र या पारियात्र पर्वत से संबद्ध है (मार्कण्डेयपुराण, 57.19-20)।

चहंद—यह परमारों की राजधानी थी जिसे संभवतः महाराष्ट्र के चाँदा जिले के मुख्यावास चाँदा से समीकृत किया जा सकता है (एपि० इं०, XXVI, भाग, V, अक्टूबर, 1941, पृ० 182)।

चेदि देश—पाणिनि ने अपनी अष्टाध्यायी (4.2.116) में इसका वर्णन किया है। यह यमुना के समीप एवं कुरु जनपद से मिला हुआ था। स्थूल-रूप से यह आधुनिक बुंदेलखंड एवं निकटवर्ती क्षेत्र को द्योतित करता है। चेदि देश की राजधानी सोत्थिवती पुरी थी (जातक, सं० 422) जिसे अतिसंभवतः महाभारत में वर्णित (III, 20.50; XIV, 83.2) शुक्तिमती नगर से समीकृत किया जा सकता है। चेदि देश बौद्धधर्म का एक उल्लेखनीय केंद्र था (अंगुत्तर, III, 355-56; IV, 228 और आगे; V, 41 और आगे; 157 और आगे; दीघ० II, 200, 201, 203; संयुत्त, V, 436-437)। वेस्सन्तर जातक के अनुसार चेत या चेतिराष्ट्र राजा वेस्सन्तर के जन्मस्थान जेतुत्तरनगर से तीस योजन दूर था (जातक, VI, 514-15)।

पूर्व वैदिक काल में चेदि-नरेश निश्चय ही अत्यंत एक शक्तिशाली राजा रहा होगा क्योंकि ऋग्वेद में (VIII, 5, 37, 39) उसे अपने एक यज्ञ में ब्रह्मा का पद सुशोभित करने वाले एक पुरोहित को दास के रूप में दस राजाओं का दान करते हुए बतलाया गया है। चेदि राजा कशु निश्चय ही ऋग्वेदिक-युग में एक प्रभविष्णु व्यक्तित्व रहा होगा क्योंकि उसने अनेक राजाओं को अपने अधीन किया था। महाभारत के अनुसार (एम० एन० दत्त, महाभारत, पृ०

83) चेदियों की सुंदर एवं श्रेष्ठ राजधानी को वसु पौरव ने जीता था। उसकी राजधानी शुक्तिमती नदी के तट पर स्थित शुक्तिमती थी। उसने अपना अधिकार पूरब में मगध तक एवं पश्चिमोत्तर में स्पष्टतया मत्स्य तक फैला लिया था। प्रतीत होता है कि महाभारत-काल में महान् चेदि-नरेश शिशुपाल अत्यधिक शक्तिशाली हो गया था। वह सभी पाण्डवों के सहित कृष्ण की हत्या करना चाहता था किंतु कृष्ण ने उसका बध कर दिया था। युधिष्ठिर ने उसके पुत्र को चेदियों के राज्य पर अधिष्ठित किया।

दे० रा० भंडारकर का कथन है कि चेत या चेतिय मोटे तौर पर आधुनिक बुंदेलखंड को द्योतित करता है (कार्माइकेल लेक्चर्स, 1918, पृ० 52)। उनके मत को कैंब्रिज हिस्ट्री ऑव इंडिया, पृ० 84 पर स्वीकृत किया गया है। रैप्सन का मत है कि चेदि मध्य प्रदेश के (भूतपूर्व सेंट्रल प्राविंस) उत्तरी भाग पर राज्य करते थे (ऐंश्येंट इंडिया, पृ० ,162)। पार्जिटर का अभिमत है कि चेदि यमुना के दक्षिण में है (ऐं० इं० हि० ट्रे०, 272)। कुछ लोगों की धारणा है कि चेदि में बुंदेलखंड का दक्षिणी भाग एवं जबलपुर का उत्तरी भाग अंतर्विष्ट था। चेदि को त्रिपुरी भी कहा जाता था (नं० ला० दे, ज्यॉ० डि०, 14)। सहजाति नामक एक चेदि नगर यमुना के दाहिने तट पर स्थित था। वत्स के पूर्व में स्थित पाचीनवंस में एक मृगवन था। अधिक विवरण के लिए द्रष्टव्य, बि० च० लाहा, ट्राइब्स इन ऐंश्येंट इंडिया, अध्याय, VI; एफ० ई० पर्जिटर, ऐंश्येंट चेदि, मत्स्य ऐंड करुष, ज० ए० सो० बं०, LXIV, भाग, I, (1895) पृ० 249 और आगे।

छत्तीसगढ़—यह हैहयों की तुम्माण शाखा के अधीन एक स्वतंत्र राज्य था (एपि० इं० ,XIX, 75 और आगे)।

छोटी देवरी—यह मध्यप्रदेश के जबलपुर जिले की मुरवारा तहसील में जोकाही से लगभग 16 मील पश्चिम में केन के बाँएँ तट पर स्थित है। यह गहन वन में दबे हुये अनगिनत लघु मंदिरों के कारण इसे माढ़ा देवरी भी कहा जाता है। कनिंघम के अनुसार ये सभी देवालय अति संभवतः शैव मंदिर थे (शंकरगण का छोटी देवरी शिलालेख, एपि० इं०, XXVII, भाग, IV, पृ० 170)।

चिञ्चापल्ली—यह नागपुर जिले में मनगाँव से आधे मील दक्षिण में वुन्ना नदी के दाहिने तट पर स्थित चिकोली ही है (एपि० इं०, XXVI, भाग, V, अक्टूबर, 1941)।

चिरवा—उदयपुर से लगभग दस मील उत्तर एवं नगदा से दो मील पूरब में स्थित यह एक गाँव है। यहाँ पर किसी विष्णु-मंदिर के दरवाजे पर उत्कीर्ण

एक शिलालेख प्राप्त हुआ है। शिलालेख का संपादन बी० गाईगर ने किया है (डब्ल्यू० जेड० के० एम०, XXI)।

चित्तौड़गढ़—वह राजस्थान में उदयपुर में है (भंडारकर द्वारा पुनरावृत्त, इंस्क्रिप्शंस ऑव नार्दन इंडिया, नं० 570, श्लोक, 1324)।

चित्रकूट—कुछ लोगों ने इसे बाँदा जिले में कालंजर के समीप चित्रकूट से समीकृत किया है। यह बुंदेलखंड में कंपला के समीप आधुनिक चित्रकोट या चतुरकोट पहाड़ी या जिला है। बृहत्संहिता (XIV. 13) में इसका वर्णन किया गया है। इसे चित्तूर नामक दुर्ग से भी समीकृत किया जाता है जिसे कृष्ण तृतीय ने गुर्जर-प्रतीहारों से जीत लिया था (द्रष्टव्य, ज० बि० उ० रि० सो०, 1928, पृ० 481; अभिलेखीय उल्लेखों के लिये द्रष्टव्य एच० सी० रे, डाइनेस्टिक हिस्ट्री ऑव नार्दन इंडिया, जिल्द I, पृ० 589)। जैन पद्मपुराण (चिन्ताहरण चक्रवर्ती द्वारा बंगला में लध्वीकृत, पृ० 20) के अनुसार राम एवं लक्ष्मण मालव देश में चित्रकूट पहाड़ी के पाद तक आये थे। यहाँ वन इतना सघन था कि मनुष्य के निवास का पता लगाना दुष्कर था।

चित्रकूट—यह ऋक्ष से निकलने वाली नदियों में से एक है जिसका कोई संबंध चित्रकूट पर्वत से हो सकता है (मार्कण्डेय पुराण, 57, 21-25; लाहा, रिवर्स ऑव इंडिया, पृ० 48; ज्यॉग्रेफिकल एसेज़, पृ०, 110)।

कुर्ली—यह ग्वालियर-झाँसी मार्ग पर तेकनपुर सिंचाई बाँध से आधे मील दक्षिण में है।

डबोक—यह गाँव मेवाड़ में उदयपुर से आठ मील पूर्व में स्थित है (एपि० इं०, XX, पृ० 122)।

दमोह—दमोह जिले के बतिहगढ़ अभिलेख में खरपरों का वर्णन है जिन्हें डा० भंडारकर समुद्रगुप्त के इलाहाबाद स्तंभ लेख में वर्णित खर्परिकों के समान मानते हैं (एपि० इं० ,XII, 46; इं० हि० क्वा०, I, 258; बि० च० लाहा, ट्राइब्स इन ऐंश्येंट इंडिया, पृ० 356)।

दंगुन—प्रभावतीगुप्ता के पूना-अभिलेखों में वर्णित यह एक गाँव का नाम है (एपि० इं०, XV, 39 और आगे)। इन अभिपत्रों में सुप्रतिष्ठाहार में स्थित इस ग्राम के दान का आलेख है। यह विलवणक के पूर्व में, शीर्ष-ग्राम के दक्षिण में कदापिञ्जन के पश्चिम में और सिदिविवरक के उत्तर में स्थित था। दंगुन का प्राचीन गाँव नागपुर जिले में आधुनिक हिंगणघाट से समीकृत प्रतीत होता है।

दशार्ण—साधारणतया इसे मध्य प्रदेश में वेदिस या भिलसा क्षेत्र से

समीकृत किया जाता है। इसका वर्णन महाभारत (II, 5-10) एवं कालिदास के मेघदूत (24-25) में हुआ है। पुराणों में दशार्ण देश के निवासियों को मालवों, कारूषों, मेकलों, उत्कलों एवं निषधों के साथ संबद्ध किया गया है। रामायण (किष्किन्ध्याकाण्ड 41.8-10) में उनके देश को मेकलों एवं उत्कलों के देश से संबंधित बतलाया गया है जहाँ सुग्रीव ने सीता की खोज में अपनी वानरसेना भेजी थी। दशार्ण जन नदी के तट पर किसी स्थल पर रहते थे जिसे अब भी सागर के निकट आधुनिक धसन के रूप में देखा जा सकता है जो भोपाल से निकल कर बुंदेलखंड से प्रवाहित होती हुई बेतवा (वेत्रवती) में गिरती है। यह उल्लेखनीय है कि रामायण एवं पुराणों में वर्णित दशार्ण-देश मेघदूत के दशार्ण-देश से भिन्न प्रतीत होता है (पूर्वमेघ, श्लोक, 24)। विल्सन के अनुसार (विष्णुपुराण, II, 160, पा० टि० 3) पूर्वी या दक्षिण-पूर्वी दशार्ण मध्य प्रदेश में छत्तीसगढ़ का एक भाग था (तुलनीय, ज० ए० सो० बं०, 1905, पृ० 7, 14)। दसरोन दशार्णों द्वारा निवसित क्षेत्र की नदी है (मैक्रिंडिल, एँश्येंट इंडिया ऐज़ डिस्क्राइब्ड बाइ टॉलेमी, मजूमदार संस्करण, पृ० 71)। कुरुक्षेत्र के महायुद्ध में क्षत्रदेव नामक दशार्ण के एक राजा ने, जो एक शक्तिशाली योद्धा था हाथी पर सवार होकर पाण्डवों की ओर से वीरतापूर्वक युद्ध किया था (कर्णपर्व, अध्याय, 22,3; द्रोणपर्व, अध्याय, 25, 35)। यह एक रोचक तथ्य है कि दशार्ण-नरेश क्षत्रदेव के सभी योद्धा शक्तिशाली नायक थे और हाथी पर सब से अच्छा युद्ध कर सकते थे। पार्जिटर (एँ० इं० हि० ट्रे०, पृ० 280) का मत है कि कुरुक्षेत्र-युद्ध के काल में दशार्ण एक यादव राज्य था। जैसा कि पेतवत्थु एवं उसके भाष्य में वर्णित है—एरकच्छ दसण्ण में (दशार्ण) एक नगर था (पेतवत्थु 20; पेत्वत्थु कामेंट्री, 99-105)। दशार्ण (दसण्ण) असि-निर्माण की कला के लिए प्रसिद्ध था (जातक, , III, 338; दसण्णकम तिक्खिण-धारम् असिम्)। महावस्तु (I, 34) एवं ललितविस्तर में यह षोड्श महाजन-पदों में से एक बतलाया गया है। दसण्ण के निवासियों ने बुद्ध के लिए एक विहार बनवाया था और उन्होंने उनके बीच ज्ञान बिखेरा था (लाहा, ए स्टडी ऑव द महावस्तु, पृ० 9)। दशार्णों के देश में नीचं नामक एक पहाड़ी थी (मेघदूत, पूर्वमेघ, श्लोक, 26)।

डावानीग्राम—(एपि० इं० VIII, 221)—इसकी पहचान आबू पर्वत में दिलवाड से सात मील पश्चिमोत्तर में डवानी से की जा सकती है।

देवगढ़—यह झाँसी जिले की ललितपुर तहसील के दक्षिणी-पश्चिमी सीमा के निकट बेतवा (वेत्रवती) नदी के दाहिने तट पर छाये हुये एक अर्द्ध गोलाकार

मोड़ पर स्थित है। यह ललितपुर से 19 मील एवं जखलौन से सात मील है। यहाँ पर ललितपुर से जिला-परिषद् के एक मौसमी मार्ग द्वारा मोटरकार या ताँगा से पहुँचा जा सकता है। यहाँ पर एक ऊँचे मैदान के पश्चिमी छोर पर स्थित एक एकाकी गुप्त युगीन मंदिर है जिसे स्थानीय रूप से सागर-मठ कहा जाता है। अधिक विवरण के लिए द्रष्टव्य मे० आर्क० सं० इं०, सं० 70; मा० स्व० वत्स, द गुप्त टेंपुल ऐट देवगढ़।

दिवली—यह नागपुर के समीप वर्धा से लगभग 10 मील दक्षिण पश्चिम में है (एपि० इं०, V, 188 और आगे)।

देवलिया—घुम्ली से 13 मील पूर्वोत्तर में स्थित यह एक गाँव है (एपि० इं०, XXVI, भाग, V, जनवरी, 1942, पृ० 204)।

बाड़ा—इसे आबू पर्वत पर स्थित दिलवारा नामक आधुनिक गाँव से समीकृत किया जाता है (एपि० इं० VIII, 208 और आगे)।

दिउला-पंचला—यह देवग्राम पट्टल में एक गाँव है जिसकी पहचान कुछ लोगों ने रीवाँ में (म० प्र०) खैरहा के निकट देवगाँवाँ से की है।

युब—कर्ण देव ने इस गाँव को गंगाधरशर्मन् नामक एक ब्राह्मण को दान दे दिया था (एपि० इं० XII, 205 और आगे)।

देवदह—यह गाँव चित्तोर के समीप स्थित है (एपि० इं० XXIV, भाग, II, अप्रैल, 1937, पृ० 65)।

देवगिरि—कालिदास ने इसे चंबल के निकट मंदसोर एवं उज्जैन के बीच में स्थित बतलाया है (मेघदूत, पूर्वमेघ, 42)।

घनिक—725 ई० के दबोक (मेवाड़) अभिलेख में इसका वर्णन हुआ है (एपि० इं० XII)। दे० रा० भंडारकर ने इस स्थान के अधिपति धवालप्पदेव की पहचान, 738 ई० के कनस्वा (राजस्थान में कोटा) अभिलेख में वर्णित मौर्य-वंशीय राजा धवल से की है।

धंकतीर्थ—यह घुमली से लगभग 25 मील पूर्व में गंदल (भूतभूर्व रियासत) में स्थित धाँक ही है (एपि० इं०, XXVI, भाग, V, जनवरी, 1942)।

धोवहट्ट—त्रैलोक्यमल्लदेव के काल के रीवाँ अभिपत्रों में इसका उल्लेख है जिसे मध्यप्रदेश में धुरेटी से समीकृत किया जा सकता है (एपि० इं०, XXV, भाग, I, जनवरी, 1939, पृ० 5)।

धुरेटी—रीवाँ शहर से लगभग सात मील दूर यह एक गाँव है (एपि० इं०, XXV, भाग, I, पृ० 1)।

दिनार—यह झाँसी शिवपुरी मार्ग पर, झाँसी से लगभग 16 मील पश्चिम में स्थित है।

दीर्घद्रह—यह अतिसंभवतः दीधि है जो अष्टि से लगभग 30 मील दक्षिण में वर्धा नदी के बाँएँ तट पर स्थित है (एपि० इं०, XXIV, भाग, VI, अप्रैल, 1938, पृ० 263)।

दिवरा—यह दक्षिण राजस्थान में डूंगरपुर (भूतपूर्व रियासत) में है। यहाँ से उपलब्ध एक प्रतिमा-लेख में वैज नामक किसी व्यक्ति द्वारा देवकर्ण (दिवरा) में एक प्रतिमा के निर्माण का आलेख है (एच० सी० रे, डाइनेस्टिक हिस्ट्री ऑव नार्दर्न इंडिया, जिल्द, II, पृ० 1006)।

दोंगरग्राम—यह गाँव महाराष्ट्र के योतमल जिले में पूसद से लगभग 10 मील दूर दोंगरगाँव के समान है। यह एक पहाड़ी पर स्थित है। इस गाँव में दो प्राचीन मंदिर हैं। यहाँ पर शक संवत् 1034 में लिखित जगदेव के काल का एक शिलालेख उपलब्ध हुआ है जिसमें इस गाँव के दान का आलेख है (एपि० इं, XXVI, भाग, V, अक्टूबर, 1941, पृ० 177 और आगे)।

दुदिया—यह मध्य प्रदेश के छिंदवाड़ा जिले में है जहाँ पर प्रवरसेन द्वितीय के चार सुरक्षित ताम्रपत्र उपलब्ध हुये थे (एपि० इं०, III, 258)।

दुर्द—चाहमान सोमेश्वर (विक्रम संवत् 1226) के बिझोली-शिलालेख में दुर्द का उल्लेख है जिसे पूर्व की दिशा में चाहमान-राज्य के समीप मध्य प्रदेश में आधुनिक दुद्दई या दूधाई से समीकृत किया जा सकता है (एपि० इं०, XXVI, भाग, II, अप्रैल, 1941, पृ० 84 और आगे)।

एरक्क—संवत् 1230 (1173 ई०) में तिथित् चंदेल परमर्दि के एक महोबा दान-ताम्रपत्र में एक जिले के मुख्यावास के रूप में एरक्क का वर्णन है।

फ़तेहाबाद—यह पश्चिमी रेलवे के राजपूताना-मालवा खंड में उज्जैन में एक रेलवे स्टेशन है। यह रणक्षेत्र है जहाँ शाहजहाँ एवं उसके पुत्र औरंगजेब में युद्ध हुआ था।

गंगाभेद—चाहमान सोमेश्वर (विक्रम संवत् 1226) के बिझोली शिलालेख में गंगाभेद का उल्लेख है (एपि० इं०, XXVI, 101 और आगे) जो स्पष्टतः टॉड के राजस्थान में वर्णित बारोल्ली में स्थित गंगाभेद है (III, 1766-1768)।

गंगधार—विश्ववर्मन् के गंगधार-प्रतिमा-लेख में वर्णित यह गाँव पश्चिमी मालवा में झलवाड़ (भूतपूर्व एक रियासत) के मुख्यावास, झलरापाटन से लगभग 52 मील दक्षिण-पश्चिम में स्थित है (का० इं० इं०, जिल्द, III)।

गौनरी—उज्जैन-देवास मार्ग पर उज्जैन से 11 मील दक्षिण-पूर्व में नरवल (भूतपूर्व एक रियासत) के मुख्यावास नरवल से तीन मील पूर्वोत्तर में स्थित यह एक गाँव है (एपि० इं०, XXIII, भाग, IV, अक्टूबर, 1935, पृ० 101, थ्री कॉपरप्लेट इंस्क्रिप्शंस फ्रॉम गौनरी)।

गालवाश्रम—यह राजस्थान में जयपुर से तीन मील दूर पर स्थित था। बृहत्-शिवपुराण (अध्याय, I. 83) के अनुसार यह चित्रकूट पर्वत पर स्थित था।

घटियाला—यह जोधपुर से 22 मील पश्चिम-पश्चिमोत्तर में स्थित है जहाँ से कक्कुक के अभिलेख उपलब्ध हुये थे (एपि० इं०, IX, 277 और आगे)।

घोसुण्डी—यह राजस्थान में चित्तौड़गढ़ जिले में नागरी के निकट एक गाँव है जहाँ से एक शिलालेख उपलब्ध हुआ था (एपि० इं०,-XVI, 25 और आगे)।

गोदुरपुर—यह मध्य प्रदेश के निमाड़ जिले में नर्मदा के दक्षिणी तट पर स्थित एक गाँव है (एपि० इं०, IX, 120)।

गोहसोदवा—यह मध्य प्रदेश में अञ्जनवती से $1\frac{1}{2}$ मील दक्षिण में स्थित आधुनिक गहवा है (एपि० इं०, XXIII, भाग, I, जनवरी, 1935, पृ० 13)।

गोश्रृंगपर्वत—यह मध्य प्रदेश में निषधभूमि के समीप है (महाभारत, सभापर्व, अध्याय, 31)।

गुञ्जि—यह मध्य प्रदेश के छत्तीसगढ़ में गुंजि के मुख्यावास शक्ति से 14 मील उत्तर और पश्चिम में स्थित एक लघु गाँव है। इस गाँव के समीप एक पहाड़ी के पाद में एक जल-कुंड है जिसमें निकटवर्ती पहाड़ियों से जल आता रहता है। इस कुंड के एक ओर शिला पर एक अभिलेख उत्कीर्ण है। यह किरारी से लगभग 40 मील पश्चिमोत्तर में है जहाँ से दूसरी शताब्दी ई० की ब्राह्मी लिपि में अंकित एक काष्ठ स्तंभ-लेख उपलब्ध हुआ है (कुमारवरदत्त का गुंजी शिलालेख, एपि० इं०, XXVII, भाग, I, पृ० 48)। यह उस देश के एक भाग में स्थित था जो ईस्वी सन् के प्रारंभ के पूर्व एवं पश्चात् एक समृद्धिशाली नगर था।

गुर्जरत्रा—दिदवाना, सीव एवं मगलोना से फैले हुये राजपूताना के इस भाग को गुर्जरत्रा (एपि० इं०, IX, पृ० 280) या गुर्जरभूमि कहा जाता था।

हर्ष—यह एक पहाड़ी है जिसके शिखर पर एक प्राचीन मंदिर के अवशेष प्राप्त होते हैं। इसे ऊँचापहाड़ भी कहा जाता है जो राजस्थान में जयपुर से

60 मील पश्चिमोत्तर एवं सीकर से लगभग सात मील दक्षिण में जयपुर के अंतर्गत् शेखावती में स्थित हर्षनाथ नामक गाँव के समीप है। यहाँ से विक्रम संवत् 1930 में अंकित चाहमान विग्रहराज का एक शिला लेख उपलब्ध हुआ था (एपि० इं०, II, 116, और आगे)।

हरसौद—यह मध्य प्रदेश के होशंगाबाद जिले में करवा नगर से कुछ मील दूर पर स्थित एक गाँव है (इं० ऐं०, XX, 310)। हर्षपुर को हरसौद से समीकृत किया जा सकता है जहाँ से एक मंदिर के खंडहर में एक शिलालेख प्राप्त हुआ है।

होली—यह गाँव गिरवा विषय (जिले) में है (एपि० इं०, XXIV, भाग, II, अप्रैल, 1937)।

जजा भुक्ति—जजा-भुक्ति या जेजाभुक्ति या जेजाकभुक्ति या जेजाभुक्तिक बुंदेलखंड का प्राचीन नाम है (एपि० इं०, I, 35, तुलनीय कल्चुरि जाजल्लदेव का मदनपुर शिलालेख; कनिंघम, आर्क० सं० रि०, भाग, X, फलक, XXXII)।

जाबालिपुर—यह राजस्थान के जोधपुर में है। यहाँ से उपलब्ध एक शिलालेख में जाबालिपुर (जो आधुनिक जालोर है) के कंचनगिरि विषय (जिले) में पार्श्वनाथ की प्रतिमा से युक्त एक जैन विहार के निर्माण का उल्लेख प्राप्य है (एपि० इं०, XI, 54 और आगे)। इस प्राचीन नगर के मध्य में पुरातत्वीय महत्त्व के दो स्मारक पहला, तोपखाना और दूसरा लगभग 1000 फीट ऊँची एक पहाड़ी पर स्थित एक किला है आर्क० स० इं०, एनुअल रिपोर्टस, 1930-34, पृ० 50)।

जेतुत्तर—इसकी पहचान चित्तौड़ से 11 मील उत्तर में स्थित नागरी नामक स्थान से की जाती है (नं० ला० दे, ज्यॉग्रेफिकल डिक्शनरी, पृ० 81)। स्पष्टतः यह अल्बेरुनी द्वारा वर्णित मेवाड़ की राजधानी जतरूर है (अल्बेरुनीज इंडिया, I, पृ० 202)।

कागपुर—(काकपुर)—इसे स्थानीय रूप से गधला-कागपुर कहा जाता है यह भिलसा-पचर मार्ग पर स्थित है और भिलसा से 17 मील उत्तर में स्थित है। जायसवाल ने इसे इलाहाबाद स्तंभ में वर्णित काकों की राजधानी से समीकृत किया है। यह बहुत पुरातत्वीय महत्त्व का है (ज० बि० उ० रि० सो०, XVIII, पृ० 212-213)।

काकंदकुटु—इसे देवरी से लगभग 6 मील पूरब में स्थित खुटुंड से समीकृत किया जा सकता है (एपि० इं०, XXVII, भाग, IV, पृ० 171)।

कणस्व—यह राजस्थान में कोटा में है।

कंखल—यह राजस्थान में आबू पर्वत में है (नं० 454, विक्रम सं०, 1265; डा० दे० रा० भंडारकर द्वारा पुनरावृत्त, इंस्क्रिप्शंस ऑव नर्दर्न इंडिया)।

कपिलधारा—इसका एक अन्य नाम मंदाकिनी है जो महाकाल-मंदिर के समीप बिझोली में एक पवित्र जलाशय है (एपि० इं०, XXVI, भाग, III, जुलाई, 1941, पृ० 101)।

करीकतिन—यह लगभग पूरब में स्थित कारीतलाई के सदृश है। यह देवरी माढ़ा से चार मील दक्षिण में स्थित खुरई से लक्षित होती है (एपि० इं०, XXVI, भाग, IV, पृ० 171)।

कसरावद—यह मध्य प्रदेश के निमाड़ जिले में नर्मदा नदी के दक्षिणी तट पर स्थित एक नगर है। यहाँ से उपलब्ध पुरानिधियों में छिद्रिल मृण्भांड, मृत्तिका-शंकु आदि है। कसरावद से सत्तर मील उत्तर में उज्जैन है। अधिक विवरण के लिये द्रष्टव्य, एनुअल रिपोर्ट ऑव आर्क० सर्वे०, ग्वालियर, 1938-39 इं० हि० क्वा०, मार्च, 1949)।

कविलासपुर—इसे बेलगाँव जिले के हुक्केरी तालुक में नुलेग्राम के समीप इसी नाम के एक आधुनिक गाँव से समीकृत किया जाता है। एपि० इं०, XXI, पृ० 11; XXIII, पृ० 194)।

कालिसिंध—निर्बिन्ध्या के अंतर्गत् देखिये।

कामन—यह राजस्थान में भरतपुर जिले में है जहाँ से एक शिलालेख उपलब्ध हुआ है। इसकी पहचान काम्यक से की जा सकती है (एपि० इं०, XXIV, भाग, VII, जुलाई, 1938, पृ० 329 और 332)।

काम्वा—यह बिझोली से लगभग 2 मील पूरब में स्थित आधुनिक कामा है।

कांतिपुर—कनिंघम ने इसे ग्वालियर से 20 मील उत्तर में कोतवल से समीकृत किया है (स्कंदपुराण, अध्याय, 47; आर्क० सं० रि०, जिल्द, II, पृ० 308)।

कारीतलाई—यह मध्य प्रदेश में जबलपुर जिले की मुड़वारा तहसील में स्थित एक गाँव है जहाँ से चेदि लक्ष्मणराज के शासनकाल का एक शिला-लेख उपलब्ध हुआ था (एपि० इं०, II, 174 और आगे)। यह मुड़वारा से 29 मील पूर्वोत्तर में स्थित एक छोटा गाँव है। यह बहुत प्राचीन प्रतीत होता है। यहाँ पर कई प्राचीन मंदिर हैं (एपि० इं०, XXIII, जुलाई, 1936, पृ० 255)।

कायथा—अनर्घमंडल में स्थित यह एक गाँव है। यह बिलासपुर जिले की जाँजगीर तहसील की दक्षिणी सीमा से लगभग चार मील आगे और पेण्ड्रबंध

से लगभग 14 मील प्राय: ठीक पश्चिम में आधुनिक कैता को द्योतित करता है (एपि० इं०, XXIII, भाग, I, जनवरी, 1935, पृ० 3)।

केसला—यह गाँव प्राचीन कैलाशपुर का वाचक माना जा सकता है। यह गाँव मल्लार के निकट लगभग आठ मील दक्षिण-पूर्व में है जहाँ पर एक प्राचीन मंदिर के खंडहर हैं (एपि० इं०, XXIII, भाग, IV, पृ० 120)।

खड़ुंवरा—यह बिझोली से लगभग छह मील दक्षिण-पूर्व में आधुनिक खडिपुर प्रतीत होता है (एपि० इं०, XXVI, भाग, III, जुलाई, 1941)।

खजुराहो (खजरहो)—यह मध्य प्रदेश के छत्तरपुर जिले में झाँसी (उ०प्र०) से लगभग 100 मील दक्षिण-पूर्व में स्थित है (दे० रा० भंडारकर द्वारा पुनरावृत्त इंस्क्रिप्शंस ऑव नार्दर्न इंडिया, नं० 300, विक्रम सं०, 1215)। खजुराहो के लक्ष्मण-मंदिर की नींव के अवशेषों में एक शिलालेख प्राप्त हुआ था और एक अन्य अभिलेख यहाँ पर जिन-मंदिर के चौखटे के बाँएँ बाजू पर उत्कीर्ण बतलाया जाता है (एपि० इं०, I, 123-35; 135-36; ज० ए० सो० बं०, XXXII, 279)।

चीनी तीर्थयात्री युवान-च्वाङ् ने इस स्थल का उल्लेख किया है। वह कहता है कि इस गाँव में अनेक विहार एवं लगभग दस मंदिर थे। वहाँ पर बुद्ध की एक भीमकाय प्रतिमा है जिस पर सातवीं या आठवीं शती ई० की लिपि में लोक-धम्म उत्कीर्ण है। इसका महत्त्व पूर्णतः यहाँ के भव्य मंदिरों की शृंखला के कारण है जो तीन मुख्य वर्गों में विभक्त है: पश्चिमी, उत्तरी एवं दक्षिण-पूर्वी। पश्चिमी मंदिर-समूह में मुख्यतया ब्राह्मण मंदिर, शैव एवं वैष्णव हैं। उत्तरी मंदिर-समूह में एक विशाल एवं कुछ लघु मंदिर हैं जो सभी वैष्णव हैं। दक्षिण-पूर्वी समूह में मुख्यतया जैन मंदिर हैं। पश्चिमी-समूह में सर्वप्राचीन मंदिर चौंसठ-योगिनी-मंदिर है। कंडरिया महादेव का मंदिर सर्वसुन्दर है। अधिक विवरण के लिये द्रष्टव्य, बि० च० लाहा, होली प्लेसेज ऑव इंडिया, पृ० 34-37)

खलारी—यह मध्य प्रदेश के रायपुर शहर से लगभग 45 मील पूर्व में स्थित एक गाँव है। यहाँ से विक्रम संवत् 1470 में अंकित हरिवर्मदेव के शासन काल का एक शिलालेख उपलब्ध हुआ है (एपि० इं०, II, 228 और आगे)।

खानदेश—यहाँ पर अम्मदेव नामक एक प्रसिद्ध श्वेतांबर जैन शिक्षक रहता था जिसने अनेक लोगों को जैन धर्म में दीक्षित कर लिया था (एपि० इं०, XIX, 71)।

खर्परिक—मध्य प्रदेश के दमोह के बातिहागढ़-अभिलेख में वर्णित खरपर को संभवतः खर्परिक से समीकृत किया जा सकता है (एपि० इं०, XII, पृ० 46; इं० हि० क्वा०, I, पृ० 258)।

खेजदिया भोप—यह गाँव मंदसोर जिले में है जहाँ पर अनेक बौद्ध गुहाएँ उपलब्ध हुयी थीं (अधिक विवरण के लिये द्रष्टव्य, आर्क० सं० इं०, एनुअल रिपोर्ट, 1916-17, भाग, I, पृ० 13-14)।

खोह—महाराज हस्तिन् के खोह ताम्रपत्र लेख में इसका वर्णन है। यह मध्य प्रदेश के बघेलखंड मंडल के नौगढ़ में उचहरा से लगभग तीन मील दक्षिण-पश्चिम में स्थित है (का० इं० इं०, जिल्द, III)।

किरारी—यह मध्य प्रदेश के छत्तीसगढ़ संभाग में स्थित एक गाँव है जहाँ से काष्ठ स्तंभ पर उत्कीर्ण एक ब्राह्मी अभिलेख उपलब्ध हुआ था (एपि० इं०, XVIII, 152)।

किराडु—यह जोधपुर में बाड़मेर से लगभग 16 मील पश्चिम-उत्तर-पश्चिम में स्थित हाथमा के निकट खंडहरों में है। यहाँ से अल्हणदेव का एक प्रस्तर लेख उपलब्ध हुआ है (एपि० इं०, XI, पृ० 43)।

किरीकैका—भोज के देपालपुर ताम्रपत्र में वर्णित यह गाँव उज्जयिनी के पश्चिम में स्थित है भोज ने जिसकी कुछ भूमि मान्यखेट से आने वाले एक ब्राह्मण को दान दी थी (इं० हि० क्वा०, VIII, 1932)।

कोनी—मध्य प्रदेश के छत्तीसगढ़ मंडल में बिलासपुर जिले के मुख्यावास, बिलासपुर से लगभग 12 मील दक्षिण एवं पूरब में आरपा नदी के बाँएँ तट पर स्थित यह एक लघु गाँव है। यहाँ पर कल्चुरि-नरेश पृथ्वी देव द्वितीय का एक अभिलेख उपलब्ध हुआ था (एपि०, इं० XXVII, भाग, VI, पृ० 276)।

कोठुरक—प्रवरसेन द्वितीय के कोठुरक दान में इस गाँव का वर्णन एक प्रदत्त स्थल के रूप में हुआ है। यह सुप्रतिष्ठाहार में स्थित था। यह उमा नदी के पश्चिम में, चिञ्चापल्ली के उत्तर में बोंथिकवाटक के पूरब में एवं मण्डुकीग्राम के दक्षिण में स्थित है। यह स्थल वुन्ना नदी के दाहिने तट पर मनगाँव में स्थित प्रतीत होता है, जो नागपुर जिले में जाँब से लगभग $2\frac{1}{3}$ मील उत्तर एवं पश्चिम में स्थित था (एपि० इं०, XXVI, भाग, V, अक्टूबर, 1941)।

कुडोपलि—यह गाँव उड़ीसा के संभलपुर जिले की बरगढ़ तहसील में स्थित है जहाँ महाभवगुप्त द्वितीय के काल के अभिपत्र भूमि में दबे हुये पाये गये थे (एपि० इं०, IV, 254, और आगे)।

कुंभी—यह जबलपुर से 35 मील पूर्वोत्तर में हेरन नदी के दाहिने तट पर

स्थित है। यहाँ से दो ताम्रपत्रों पर उत्कीर्ण एक लेख उपलब्ध हुआ है (ज० ए० सो० बं०, 1839, जिल्द, VIII, भाग, I, पृ० 481 और आगे)।

कुररघर-पर्वत—यह अवन्ती में था। किसी समय यहाँ पर महाकच्चायन रहते थे। काली नामक एक नारी उपासिका शिष्या उनके पास आयी और उनसे एक सूत्र (सुत्त) का सविस्तार अर्थ-निरूपण करने को कहा। उन्होंने अर्थ व्याख्या करके उसको संतुष्ट किया (अंगुत्तर, V, पृ० 46-47)।

कुरे—यह अञ्जनवती से तीन मील पश्चिमोत्तर में स्थित आधुनिक कुढ़ा है (एपि० इं०, XXIII, भाग, I, जनवरी, 1935, पृ० 13)।

कुरुस्पाल—यह नारायणपाल से एक मील एवं बस्तर जिले में जगदल्पुर से 22 मील दूर पर स्थित एक गाँव है जहाँ पर सोमेश्वर देव के काल के धारण महादेवी के दो अभिलेख उपलब्ध हुये थे (एपि० इं०, X, 31 और आगे)।

लघु-बिझोली—इस समय इसे छोटी बिझोलिया कहा जाता है और यह बिझोली से लगभग तीन मील पश्चिम में है (एपि० इं०, XXVI, पृ० 102 और आगे)।

बेव—इसकी पहचान नरसिमपुर में लिंवु से की जा सकती है (एपि० इं०, XXVI, भाग, II, अप्रैल, 1941, पृ० 78)।

लोधिया— यह मध्य प्रदेश के सारंगढ़ के सरिया परगना में स्थित एक लघु गाँव है (एपि० इं०, XXVII, भाग, VII, जुलाई, 1948, पृ० 316)।

लोहनगर—यह एक प्राचीन मंडल का मुख्यावास है जिसका प्रतिरूप वरूड से लगभग नौ मील दक्षिण-पश्चिम में स्थित लोणी हो सकता है (एपि० इं० XXIII, भाग, III, जुलाई, 1935, पृ० 84)।

लोहरी—यह उदयपुर के जहाजपुर में स्थित एक गाँव है। यहाँ पर भूतेश्वर-मंदिर के स्तंभ पर उत्कीर्ण एक प्रस्तर लेख उपलब्ध हुआ है।

मदनपुर—यह मध्य प्रदेश के सागर जिले में है (दे० रा० भंडारकर द्वारा पुनरावृत्त, इंस्क्रिप्शंस ऑव नर्दर्न इंडिया, नं० 684, विक्रम, 1385)। मदनपुर गाँव में एक प्राचीन मंदिर के मंडप के स्तंभों पर अंकित कुछ प्रस्तर लेख उपलब्ध हुये थे। यह गाँव दुदही से 24 मील दक्षिण-पूर्व में और सागर से 30 मील उत्तर में स्थित है (आ० सं० इं० रि०, जिल्द, X, पृ० 98-99)।

मद्दकभुक्ति—संभवत: इसे इंदौर के निकट सुप्रसिद्ध मऊछावनी से समीकृत किया जा सकता है (एपि० इं०, XXIII, भाग, IV)।

महल्ला-लाट—इसका अर्थ विशालतर लाट प्रतीत होता है। यह बेलोरा से लगभग 18 मील पश्चिमोत्तर में, अमरावती जिले के मोरसी तालुक में घाट

लाडकी या लाडकी से प्रतिनिधित्व होता है (एपि० इं०, XXIV, भाग, VI, पृ० 263)।

महौद—इसकी पहचान सतजुन से लगभग 25 मील दक्षिण में स्थित महोद गाँव से की जाती है (एपि० इं०, IX, 106)।

महाद्वादशक-मंडल—इसमें अवश्यमेव भोपाल के दक्षिण में राजशयन तक, उदयपुर एवं मध्यप्रदेश में स्थित भिलसा संमिलित थे (एपि० इं०, XXIV, भाग, V, पृ० 231)।

महानाल—चाहमान सोमेश्वर (विक्रम संवत् 1226) के बिझौली शिला-लेख में महानाल का उल्लेख है (एपि०इं०, XXVI, भाग, III, जुलाई, 1941) जिसकी समानता मेनाल से की जा सकती है, जिसका विवरण टॉड ने अपने 'राजस्थान, (जिल्द, III, पृ० 1800-05) में किया है।

मक्करकट—यह अवन्ती में एक वन था जहाँ पर एक पर्ण-कुटी में महा-कच्चायन रहते थे और जहाँ पर लोहिच्च के शिष्य उनसे मिले थे। उन्होंने उनको धम्म पर एक प्रवचन दिया (संयुक्त, IV, 116-117)। एक भाष्यकार के अनुसार यह एक नगर था (सारत्थप्पकासिनी, पा० टे० सो०, II, 397)।

मकसी (उज्जैन)—यह बंबई-आगरा मार्ग पर देवास के उत्तर में है।

मल्हार—यह मध्य प्रदेश में है जहाँ चेदि संवत् 919 में अंकित जाजल्लदेव का एक शिलालेख उपलब्ध हुआ था (एपि० इं०, I, 39)।

मल्लाल—यह मध्य प्रदेश में बिलासपुर से 16 मील दक्षिण-पूर्व में आधुनिक मल्लार है (एपि० इं०, XXVI, भाग, VI, अप्रैल, 1942, पृ० 258)।

मल्लार—यह मध्य प्रदेश के बिलासपुर जिले के मुख्यावास बिलासपुर से 16 मील दक्षिण-पूर्व में स्थित एक विशाल गाँव है जहाँ से महाशिवगुप्त के ताम्रपत्र उपलब्ध हुये थे (एपि० इं०, XXIII, भाग, IV, अक्टूबर, 1935, पृ० 113; एपि० इं०, XXVI, भाग, III, अप्रैल, 1941)।

मंडलकर—यह उदयपुर में आधुनिक माण्डलगढ़ है (एपि० इं०, XXVI, भाग, III, जुलाई, 1941, पृ० 101)।

मण्डल—इस नगर को महेशमतीपुर भी कहा जाता था (ज० ए० सो० बं०, 1837, 622)। यह अपर नर्मदा के तट पर स्थित देश की मूल राजधानी थी जिसे कालांतर में जबलपुर से छह मील दूर त्रिपुरी या तेवर ने स्थानापन्न कर दिया था। कनिंघम के अनुसार अपर नर्मदा के तट पर स्थित महेशमतीपुर को युवान-च्वाङ् द्वारा वर्णित महेश्वरपुर से समीकृत किया जा सकता है (कनिंघम, एं० ज्यॉ० इं०, पृ० 559-60)।

मण्डप—यह धार जिले में स्थितः आधुनिक नगर माण्डू है (एपि० इं०, IX, 109)।

मंदाकिनी—कनिंघम ने इस ऋक्ष-नदी को आधुनिक मंदाकिन से समीकृत किया है जो बुंदेलखंड में पैसुन्दि (पैसुनी) की एक लघु सहायक नदी है जो चित्रकूट पर्वत के किनारे प्रवाहित होती है (आर्क्० सं० इं० रि०, XXI, 11)। भागवत (V. 19. 18) एवं वायुपुराणों के अनुसार (45. 99) यह गंगा नदी है।

मंदार—यह तीर्थस्थान जाह्नवी नदी के दक्षिण की ओर विन्ध्य पर्वत पर स्थित है (वराह पुराण, 143. 2)। यहाँ पर समंतपञ्चक नामक एक आश्रम स्थित है (वही, 143, 48)।

मनसियागढ़—यह भिचोर से लगभग डेढ़ मील दक्षिण में है जो सिघांली से कोई 30 मील पश्चिम में है।

मत्स्यदेश—यह भारत के महाजनपदों में से एक है (अंगुत्तर, I, 213; IV, 252, 256, 260; तुलनीय, पद्मपुराण, अध्याय, 3; विष्णुधर्मोत्तर पुराण, अध्याय, 9)। वैदिक युग में इस देश के निवासियों को थोड़ी महत्ता मिली थी किंतु रामायण-काल में उन्होंने अपनी महत्ता खो दी थी। शतपथ ब्राह्मण (XIII, 5. 4. 9 में कहा गया है कि मत्स्यदेश के एक राजा की गणना प्राचीन भारत के उन महान् नरेशों में की जाती थी जिन्होंने अश्वमेध संपादन करके प्रसिद्धि प्राप्त की थी। मत्स्यों का वर्णन उशीनरों, कुरु-पञ्चालों एवं काशी-विदेहों के साथ हुआ है (कौषीतकि उपनिषद्, IV 1)। वे अपने पड़ोस में स्थित शाल्व नामक एक क्षत्रिय जाति से संबंधित थे (गोपथ ब्राह्मण, 1. 2. 9)। महाभारत से भी शाल्वों और मत्स्यों के संबंध की पुष्टि होती है (विराटपर्व अध्याय, 30, पृ० 1-2)। कालांतर में मत्स्य चेदि एवं शूरसेनों से संबद्ध थे कुरुक्षेत्र के युद्ध में अपने आचरण और परंपराओं की शुद्धता तथा अपने साहस एवं शौर्य के कारण उनकी विशिष्ट स्थिति थी। पुण्णक यक्ख के (राक्षस) साथ कुरु-नरेश की द्यूत-क्रीड़ा को मत्स्यों या मच्छों ने देखा था (जातक, VI, विधुरपण्डित जातक)।

मनुसंहिता (II, 19-20; वही, VII, 193) के अनुसार मत्स्यदेश ब्रह्मर्षि, देश का एक भाग था, जिसमें पटियाला (भूतपूर्व एक रियासत) का पूर्वी भाग, दिल्ली, अलवर और राजस्थान के आसन्न क्षेत्र तथा गंगा-यमुना के मध्यवर्ती क्षेत्र एवं उत्तर प्रदेश के मथुरा जिला संमिलित था (तुलनीय, रैप्सन, ऐंश्येंट इंडिया, पृ० 50-51)। प्राचीन काल में यमुना नदी एवं राजस्थान की अरावल्ली

पहाड़ियों के मध्य स्थित संपूर्ण प्रदेश पश्चिम में मत्स्य एवं पूरब में शूरसेन में विभक्त था, दशार्ण जिसकी दक्षिणी या दक्षिण-पूर्वी सीमा पर स्थित था। मत्स्य देश में जयपुर एवं भरतपुर के कुछ भाग समेत संपूर्ण आधुनिक अलवर क्षेत्र संमिलित था। वैराट भी मत्स्यदेश में था (कनिंघम, रिपोर्ट आ० स० इं०, भाग, XX, पृ० 2)। कालांतर में मत्स्यदेश को विराट या वैराट कहा जाने लगा था। युवान-च्वाङ के अनुसार, जो सातवीं शताब्दी ई० में वैराट आया था, वैराट की राजधानी की परिधि 3000 ली या 500 मील थी। यहाँ की भेंड़ें एवं बैल विख्यात् थे। किंतु यहाँ पर फल-फूल नहीं होते थे। उसके अनुसार वैराट की परिधि 14 या 15 ली थी और यहाँ के निवासी वीर एवं निर्भीक थे और इनका राजा युद्ध में अपनी वीरता एवं साहस के लिए विश्रुत था (कनिंघम, ऐंश्यंट ज्यॉग्रफी ऑव इंडिया, पृ० 393 और 395)।

विराटनगर को मत्स्यनगर भी कहा जाता था (महाभारत, IV, 13.1) यह पाण्डवों के मित्र, महाभारत के राजा विराट की राजधानी थी। राजा विराट एवं त्रिगर्तों में एक संघर्ष हुआ था जिसके फलस्वरूप राजा विराट बंदी बनाये गये थे किंतु द्वितीय पाण्डव भीम ने उनको मुक्त किया था (एम० एन० दत्त, महाभारत, विराटपर्व, अध्याय, XXII, XXXI)। मत्स्य राज्य में ही पाण्डवों ने अपने अज्ञातवास का एक वर्ष व्यतीत किया था। तदनंतर उन्होंने अपना परिचय प्रकट किया और अर्जुन के पुत्र अभिमन्यु एवं राजा विराट की पुत्री उत्तरा में विवाह हुआ (महाभारत, अध्याय, LXXII)।

वैराट का वर्त्तमान नगर तलहटी की निचली वनस्पतिहीन पहाड़ियों से परिवृत्त एक वृत्ताकार घाटी के मध्य स्थित है जो सदा से ताँबें की खानों के लिए विख्यात रही है। यह दिल्ली से 105 मील दक्षिण-पश्चिम में एवं जयपुर से 41 मील उत्तर में स्थित है। यहाँ की भूमि साधारणतया अच्छी है और यहाँ वृक्ष, विशेषतया इमली के वृक्ष अति सुंदर एवं प्रचुर हैं। वैराट लगभग एक मील लंबी एवं आधे मील चौड़े खंडहरों के एक टीले पर स्थित है। वैराट का प्राचीन नगर कई शताब्दियों तक विजन रहा जबकि संभवतः अकबर के शासनकाल में यह पुनः आबाद हुआ था।

जिस समय यह मत्स्य देश स्वतंत्र था, इसका संविधान संभवतः राजतंत्रात्मक था। शायद किसी समय यह निकटवर्ती चेदि राज्य में और सदैव के लिये मगध के साम्राज्य में मिला लिया गया था (रायचौधरी, पोलिटिकल हिस्ट्री ऑव ऐंश्यंट इंडिया, पंचम संस्करण, पृ० 66 और आगे; विंसेंट स्मिथ, अर्ली हिस्ट्री ऑव इंडिया, चतुर्थ संस्करण, पृ० 413; रा० दा० बनर्जी, बांगालार इतिहास,

पृ० 158)। यहाँ के आधुनिक इतिहास के लिए द्रष्टव्य इंपीरियल गजेयटिर्स ऑव इंडिया, जिल्द, XIII, 382 और आगे, द्रष्टव्य, वैराट।

मऊ—यह झाँसी जिले में है जहाँ से मदनवर्मनदेव का एक शिलालेख उपलब्ध हुआ था (एपि० इं०, I, 195)।

मयूरगिरि—भरहुत पूजा-पट्ट (सं० 28) में मयूरगिरि का नाम आता है जो चरणव्यूह भाष्य में उल्लिखित मयूरपर्वत है। ल्युडर्स तालिका (संख्या, 778, 796, 798, 808, 860) में मोरगिरि (मयूरगिरि) नामक एक स्थान का नाम आता है। कुछ लोगों ने इसे मध्य प्रदेश में स्थित बतलाया है।

मयूरखण्डी—कुछ लोगों के अनुसार इसकी पहचान महाराष्ट्र में चाँदा से 56 मील दक्षिण-पूर्व में वेनगंगा के तट पर मरकंडी नामक गाँव से की जा सकती है (एपि० इं०, XXIII, भाग, I, जनवरी, 1935, पृ० 13)। राष्ट्रकूटों के काल में मरकंडी एक समृद्धिशाली नगर था। यह गोविन्द तृतीय के कई दान-पत्रों में राजा के निवास-स्थान के रूप में वर्णित प्राचीन मयूरखण्डी रहा होगा।

माहिस्सति (माहिष्मती)—यह दक्षिण अवन्ती की राजधानी थी। माहिषक महाभारत में वर्णित माहिष्मक ही थे (अश्वमेघपर्व, LXXXIII, 2475)। वे माहिष्मती या माहिस्सती के निवासी थे। यह क्षेत्र विन्ध्य एवं ऋक्ष के मध्य नर्मदा नदी के तट पर स्थित प्रतीत होता है और इसकी पहचान सुरक्षित रूप से आधुनिक मान्धाता क्षेत्र से की जा सकती है। पुराणों के अनुसार (मत्स्य, XLIII, 10-29; XLIV-36; वायु, 94, 26; 95,35) माहिष्मती की स्थापना यदुवंश के एक राजकुमार ने की थी। यहाँ पर बलराम आये थे। यहाँ पर कार्त्तवीर्य ने कर्कोटक के पुत्र का वध किया था। कार्तवीर्यार्जुन ने यहाँ पर रावण को बंदी बनाया था। इसकी स्थापना माहिष्मान ने की थी और यह कार्त्तवीर्यार्जुन की राजधानी थी (भागवत, IX, 15.22; मत्स्य, 43, 29, 38; विष्णु, IV, 11.9.19)। अधिक विवरण के लिए द्रष्टव्य, लाहा, ट्राइब्स इन ऐंश्येंट इंडिया, पृ० 386-387)।

मालव देश—मालव देश जिससे स्पष्टतः उज्जयिनी एवं भिलसा (आधुनिक मालवा) के परिवर्ती क्षेत्र का बोध होता है, का वर्णन कई बाद के अभिलेखों में हुआ है—यथा गुर्जर प्रतीहारों के सागरतल अभिलेख एवं गोविंद तृतीय के पैठन अभिपत्र आदि। क्षत्रप नहपाण के दामाद, शक उषवदात (ऋषभदत्त) के नासिक गुहालेख में राजस्थान से जयपुर के समीप नगर क्षेत्र पर मालवों के अधिकार का वर्णन है (एपि० इं०, VIII, 44)। जयसिंहदेव के शासन-

काल के चेदिसंवत् 929 के तेवर प्रस्तर लेख में मालव देश का वर्णन है (एपि० इं०, II, 18-19)। विक्रमादित्य षष्ठम् के एक दण्डनायक अनंतपाल ने हिमालय पर्वत तक सप्त-मालव देशों को पराजित किया था (एपि० इं०,V, 229)। इलाहाबाद स्तंभ-लेख में वर्णित मालवों का अधिकार जयपुर के दक्षिण-पूर्वी भाग में स्थित वगरचाल नामक एक प्रांत पर था। उनका अधिकार दक्षिण-पूर्वी राजस्थान में मेवाड़ एवं कोटा तथा इससे आसन्न मध्य प्रदेश के कुछ भूभागों पर प्रतीत होता है (इं० ऐं०, 1891, पृ० 404)। परबल के पथरी स्तंभ-लेख में नवीं शती ई० के पूर्वार्द्ध में मालवा में एक राष्ट्रकूट कुल के अस्तित्व के प्रमाण मिलते हैं (एपि० इं०, IX, 248)।

मालव क्षेत्र का ठीक ठीक स्थान निर्धारण करना कठिन प्रतीत होता है। सिकंदर के काल में मालव-जन पंजाब में स्थित थे। स्मिथ का मत है कि इनका अधिकार झेलम और चेनाब नदियों के संगम के आगे वाले क्षेत्र पर था जिसमें झंग एवं मांटगोमरी जिले का (संप्रति पाकिस्तान में) एक भाग संमिलित था (ज० रा०ए० सो०, 1903,पृ० 631)। मैक्रिंडिल के अनुसार उनका अधिकार अपेक्षाकृत एक विशाल क्षेत्र पर था जिसमें रावी एवं चेनाब के आधुनिक दोआब और सिन्धु एवं चिनाब (अकेसिनीज़) के संगम तक के क्षेत्र संमिलित थे जिनकी पहचान आधुनिक मुल्तान जिले एवं मांटगोमरी जिले के कुछ भाग से की जा सकती है (इनवेज़न ऑव इंडिया, अपेंडिक्स, टिप्पणी, 357)। कुछ लोगों ने उन्हें अवर रावी की घाटी में स्थित बतलाया है। मो-ला-पो की पहचान जहाँ चीनी तीर्थयात्री युवान-च्वाङ आया था, अनेक वलभी दानपत्रों में वर्णित मालवक या मालवक-आहार से की जा सकती है जो वलभी के मैत्रकों के राज्य में संमिलित था। हर्षवर्द्धन के मधुवन एवं बाँसखेड़ा अभिलेखों में उल्लिखित महासेनगुप्त एवं देवगुप्त के मालव राज्य की पहचान संभवतः पूर्व मालव से की जा सकती है जो प्रयाग एवं भिलसा के मध्य स्थित था। युवान-च्वाङ के अनुसार इस देश की परिधि 6000 ली थी। यहाँ की भूमि उर्वर एवं सुंदर थी ; यहाँ पर अनंत झाड़ियाँ एवं वृक्ष थे; फल-फूल प्रचुर थे। यहाँ के निवासी विलक्षण प्रतिभा संपन्न, गुणवान एवं वश्य थे ; यहाँ पर अनेक संघाराम एवं देवमंदिर थे (बील, बुद्धिस्ट रिकार्ड्स ऑव द वेस्टर्न वर्ल्ड, II, 260 और आगे)। अधिक साहित्यिक विवरण के लिए बि० च० लाहा कृत ट्राइब्स इन ऐंश्येंट इंडिया, अध्याय, VIII, दृष्टव्य।

मांधाता—यह मध्य प्रदेश के निमाड़ जिले से संलग्न, नर्मदा के बाँएँ तट पर स्थित एक द्वीप है। यहाँ पर दो पत्रों पर उत्कीर्ण एक अभिलेख उपलब्ध

हुआ है (एपि० इं०, III, 46 एवं आगे; वही, XXV, भाग, IV, अक्टूबर, 1939)। इस द्वीप के समीप नर्मदा के दक्षिण तट पर अमरेश्वर नामक प्रसिद्ध तीर्थ-स्थान स्थित है जिससे अर्जुनवर्मन् के शासनकाल का तृतीय अभिलेख संबंधित है। मांधाता में सिद्धेश्वर मंदिर के समीप तीनों अभिपत्र उपलब्ध हुये थे (एपि० इं०, 103)।

माण्डुकिग्राम—इस गाँव का वर्णन प्रवरसेन द्वितीय के कोटुरक-दानपत्र में प्राप्य है। इसकी पहचान नागपुर जिले में मनगाँव से दो मील उत्तर में आधुनिक मांडगाँव से की जाती है। अनुश्रुतियों के अनुसार मांडगाँव का नामकरण माण्ड ऋषि के नाम पर हुआ है जिनके विषय में कहा जाता है कि उन्होंने नागपुर जिले में वुन्ना नदी के तट पर तपस्या की थी (वर्धा डिस्ट्रिक्ट गजेटियर, 1906, पृ० 250)।

मोराझरी—यह विन्ध्यवल्ली (बिझोली) का एक अन्य नाम है। चाहमान सोमेश्वर के बिझोली शिलालेख में (विक्रम संवत्, 1226) उल्लेख है कि किसी चाहमान राजकुमार ने यह गाँव पार्श्वनाथ को दान दे दिया था (एपि० इं०, XXVI, भाग, II, अप्रैल, 1941, पृ० 84 और आगे)।

आबूपर्वत (अर्बुदाद्रि या अर्बुदपर्वत)—यहाँ नेमिनाथ के मंदिर की प्राचीर पर सोमसिंह के दो अभिलेख उत्कीर्ण हैं (एपि० इं०, VIII, 208 और आगे)। आबू पर्वत राजस्थान के सिरोही की अरावल्ली पर्वतमाला में स्थित है। यह 5650 फीट ऊँचा है। यहाँ पर पाँच जैन मंदिर हैं और उनमें से दो अत्यंत सुंदर है। विमल साह ने एक मंदिर में ऋषभ देव की एक प्रतिमा स्थापित की थी जिन्होंने आबू पर्वत पर ग्यारह हजार भक्तों सहित अनेक शिवालय देखे थे। आबू पर्वत पर किसी समय वशिष्ठ महर्षि का आश्रम एवं अंबा भवानी का प्रसिद्ध मंदिर था। इस पर्वत पर एक झील है। मेगस्थनीज़ एवं एरिअन के अनुसार पुण्य अर्बुद या आबूपर्वत जिसे कैपिटेलिया से समीकृत किया गया है, अरावल्ली पर्वतमाला के किसी अन्य शिखर से कहीं अधिक ऊँचा है (मैक्रिंडिल, ऐंश्येंट इंडिया, पृ० 147)। पहले इस पर्वत को नंदिवर्धन कहा जाता था। अर्बुद नामक सर्प का निवास-स्थान होने के कारण कालांतर में इसका नाम अर्बुद पड़ा। इसके चारों ओर बारह गाँव हैं। यहाँ पर मंदाकिनी नामक एक नदी प्रवाहित होती है। यहाँ पर अचलेश्वर, वशिष्ठाश्रम एवं श्रीमाता जैसे तीर्थ-स्थल हैं। इस पर्वत के शिखर पर चालुक्य वंशीय कुमारपाल ने श्रीवीर के मंदिर का निर्माण करवाया था। अधिक विवरण के लिए द्रष्टव्य, लाहा, सम जैन कैनॉनिकल सूत्राज़, पृ० 184-185.

मुरुमुरा—यह रायपुर जिले की धमतरी तहसील में है जहाँ से दो प्रस्तर लेख उपलब्ध हुये थे (आर्क० स० इं०, एनुअल रिपोर्ट, 1916,17; भाग, I, पृ० 21)।

नद्दुल—यह राजस्थान के जोधपुर में आधुनिक नदोल है (एपि० इं०, IX, 62-64)।

नंदिपुर—यह नर्मदा तट पर आधुनिक नंदोद है (एपि० इं०, XXIII, भाग, IV)।

नंदिवर्धन—प्रवरसेन द्वितीय के कोठुरक दान-पत्र में इसका वर्णन है (एपि० इं०, XXVI, भाग, V, अक्टूबर, 1941, पृ० 155 और आगे)। प्रवरसेन द्वितीय द्वारा प्रवरपुर की स्थापना के पहले यह वाकाटकों की प्राचीन राजधानी मानी जाती है। इसकी पहचान महाराष्ट्र के नागपुर जिले में रामटेक के निकट नंदरधन या नगरधन से की गयी है (एपि० इं०, XV, 41; एपि० इं०, XXIV, भाग, VI, पृ० 263; एपि० इं०, XXVIII, भाग, I, जनवरी, 1949.) एक पुण्य तीर्थ के रूप में वर्णित इस स्थान का महत्त्व भोंसलों के काल तक यथावत् बना हुआ था। कृष्ण तृतीय के दिउली अभिपत्रों में भी इसका वर्णन है (एपि० इं०, V, 196)।

नरवर—यह अजमेर से लगभग 15 मील दूर पर किशनगढ़ क्षेत्र में स्थित प्राचीन नरपुर है (एपि० इं०, XXVI, भाग, III, जुलाई, 1941, पृ० 101; ज० रा० ए० सो०, 1913, पृ० 272, पा० टि०)।

नर्मदा—यह मध्य प्रदेश एवं पश्चिमी भारत की सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण नदी है। टॉलेमी के अनुसार इसे नेमेडोस कहा जाता था। पद्मपुराण (स्वर्गखण्ड छठाँ अध्याय, श्लोक, 15) भागवत पुराण (V, 19, 18, VI, 10.16; VIII, 18.21) एवं योगिनीतंत्र (2.5, पृ०, 139) में इसका वर्णन है। मत्स्य-पुराण (अध्याय, 193) के अनुसार वह स्थान जहाँ यह नदी समुद्र में गिरती है यामदग्नितीर्थ नामक एक महान् तीर्थ-स्थान के रूप में विश्रुत है। इस नदी के तट पर भृगुतीर्थ स्थित है। भृगु ऋषि ने यहाँ पर तपस्या की थी (मत्स्य-पुराण, 193, 23-49)। इसके तट पर कन्यातीर्थ भी स्थित है (मत्स्य, 193-194)। यह नदी मैकाल पर्वतमाला से निकलती है और न्यूनाधिक दक्षिण-पश्चिम की दिशा में मध्य प्रदेश एवं गुजरात से होकर प्रवाहित होती है। कुछ लोगों का विचार है कि यह अमरकंटक पर्वत से निकलती है और खंभात की खाड़ी में गिरती है। तत्पश्चात् यह नदी इंदौर एवं बंबई के रेवाकण्ठ से गुजरती हुयी भड़ौच में समुद्र में मिलती है। विन्ध्य एवं सतपुड़ा की दो बड़ी पर्वत-

मालाओं के बीच इसके प्रवाह मार्ग में इसमें अनेक सहायक नदियाँ मिलती हैं। इंदौर में प्रविष्ट होने के पूर्व इसमें कुछ उपनदियाँ मिलती हैं। इस नदी को रेवा, समोद्भवा एवं मेखलसुता भी कहते हैं। रेवा एवं नर्मदा नदियाँ मांडला के थोड़ा पहले संगमित होकर दोनों नामों से आगे प्रवाहित होती है। कालिदास ने अपने रघुवंश में (V, 42-46) इसे जंबु एव रक्तमाल वृक्षों के वन से प्रवाहित होते हुये बतलाया है। यह कवित्व पूर्ण-अभिव्यक्ति है। दशकुमारचरितम् (पृ० 197) के अनुसार विन्ध्यपर्वतवासिनी देवी का मंदिर रेवा नदी के तट पर स्थित था। महाभारत (अध्याय 85, 9; तुलनीय, कूर्मपुराण, 30, 45-48; अग्निपुराण, अध्याय, 109; सौरपुराण, 69.19,) के अनुसार नर्मदा अवन्ती के प्राचीन जनपद की दक्षिणी सीमा थी।

जातक (II, 344) में इस नदी में प्राप्त होने वाले केकड़ों का उल्लेख है। इस नदी के तट पर जाने वाली पायी कुररियों को व्याघ्र पकड़ते एवं मारते थे (जातक, IV, 392)।

नरोद—इसे रनोद भी कहा जाता है जो मध्यप्रदेश में एक प्राचीन एवं भग्न नगर था। यहाँ से एक प्रस्तर-लेख उपलब्ध हुआ था (एपि० इं०, I, 351; लुअर्ड, ग्वालियर स्टेट गज़ेटियर, पृ० 271)।

नरवर—कनिंघम ने इस नगर को पद्मावती से समीकृत किया है जो पुराणों के अनुसार नागों द्वारा अधिकृत एक नगर था। यहाँ से गणपति नाम धारण करने वाली मुद्राएँ एवं अभिलेख, जिसे समुद्रगुप्त के इलाहाबाद स्तंभ-लेख में एक नाग राजा बतलाया गया है, प्राप्त हुयी हैं (इं०, ऐं०, XII, 80, सं० 2 और 4; कनिंघम, आर्क० सं० रि०, II, 314; लुअर्ड, ग्वालियर स्टेट गज़ेटियर, पृ० 272)। परंपरानुसार इस स्थल को निषधराज नल का निवास-स्थान माना जाता है। महाभारत में वर्णित दमयंती के प्रति जिसके रूमानी प्रेम से सभी सुपरिचित हैं।

नवपत्तला—इसकी पहचान तिखारी से लगभग आठ मील पश्चिम में स्थित नयाखेड़ा से की जा सकती है (एपि० इं०, XXV, भाग, VII, पृ० 311)।

नाडोल—(296; विक्रमी, 1213;), ओसिया (सं० 384 विक्रमी, 1236) एवं फलोदी (850, विक्रमी, 1535) राजस्थान में जोधपुर में है (दे० रा० भंडारकर द्वारा पुनरावृत्त इंस्क्रिप्शंस ऑव नार्दर्न इंडिया)।

नान्दसा—यह गाँव उदयपुर के सहारा में स्थित है। यह भिलवारा रेल स्टेशन से लगभग 36 मील पूरब में, एवं ग्वालियर के अधिकार क्षेत्र के अंतर्गत् गंगापुर नामक शहर से लगभग चार मील दक्षिण में स्थित है। यहाँ पर यूप

पर उत्कीर्ण किसी मालव-नरेश के दो अभिलेख उपलब्ध हुय थे (एपि० इं०, XXVI, भाग, VI, पृ० 252)।

नाराणक—इसकी पहचान राजस्थान में जयपुर शहर से 41 मील पश्चिम और अजमेर से 43 मील पूर्वोत्तर में साँभर निजामत में नारायण से की जा सकती है (एपि० इं०, XXVI, भाग, III, जुलाई, 1941, पृ० 101)।

नाथद्वार—उदयपुर नगर से लगभग 30 मील उत्तर एवं उत्तर-पूर्व में, एवं मौली रेलवे स्टेशन से 14 मील पश्चिमोत्तर में, बनास नदी के दाहिने तट पर स्थित इस स्थान पर भारत का एक प्रसिद्ध वैष्णव मंदिर है। यहाँ पर कृष्ण की एक प्रतिमा है। इस प्रतिमा को कालांतर में वल्लभाचार्य ने मथुरा के एक लघु मंदिर में स्थापित किया और बाद में इसे गोवर्धन को स्थानांतरित कर दिया गया।

निकटगिरि—इसे भोजपुर पहाड़ी कहते हैं। भोपाल में भिलसा के दक्षिण में भोजपुर तक फैली हुयी नीची पर्वतमाला को भोजपुर पहाड़ी कहते हैं (कालिदास कृत मेघदूत, I, श्लोक, 26)।

निर्व्बिन्ध्या—कालिदास के मेघदूत में (I, 28-29) इस नदी को उज्जैन एवं वेत्रवती (बेतवा) के बीच में स्थित बतलाया गया है। वायुपुराण (XLV, 102) में इसको निर्ब्बन्ध्या कहा गया है। वस्तुतः यह नदी विदिशा एवं उज्जयिनीः दशार्ण (वेत्रवती की एक सहायक नदी धासन) एवं शिप्रा नदियों के मध्य स्थित थी। इसको आधुनिक कालीसिंध से समीकृत किया जाता है जो चर्मण्वती की सहायक नदी है (जर्नल ऑव द बुद्धिस्ट टेक्स्ट सोसायटी, V, पृ० 46)। कालीसिंध विन्ध्यपर्वतमाला से उत्तर की ओर दाहिनी ओर से चंबल में मिलने को प्रवाहित होती है। चूँकि कालीसिंध संभवतः कालिदास मेघदूत में वर्णित सिन्धु ही है, अतएव चंबल की एक अन्य सहायक नदी नेवाज से निर्व्बिन्ध्य का समीकरण अधिक तर्कसंगत प्रतीत होता है (थार्नटंस गज़ेटियर, ग्वालियर, भूपाल)।

निषध—वह देश जिसका उल्लेख पाणिनि ने अपनी अष्टाध्यायी में नैषध के रूप में किया है (4.1.172) नल की रानी दमयंती के देश विदर्भ से अधिक दूर पर नहीं था। विल्सन[1] का विचार है कि यह विन्ध्य एवं पयोष्णी नदी के पास था और यह उन सड़कों के निकट था जो यहाँ से, ऋक्ष पर्वत के पार अवन्ती और दक्षिण तथा विदर्भ एवं कोसल तक जाती थी। लास्सेन इसे सतपुड़ा

[1] **विष्णु पुराण, जिल्द, II, पृ० 156-90.**

पहाड़ियों के आश्रय में स्थित बरार के पश्चिमोत्तर क्षेत्र तक फैला हुआ मानते हैं। बर्गेस ने भी इसे मालवा के दक्षिण में स्थित बतलाया है (ऐंटिक्विटीज आंव काठियावाड़ ऐंड कच्छ, पृ० 131)। महाभारत में गिरिप्रस्थ को निषधों की राजधानी वतलाया गया है (III, 324. 12)। विष्णु पुराण में (IV, अध्याय, 24, 17) निषधों के नवराजाओं का उल्लेख है जबकि वायुपुराण में निषध देश के राजाओं का वर्णन है जिन्होंने मनु के अंत तक राज्य किया था। वे सभी राजा नल के वंशज थे और निषेध देश में रहते थे।[1] निषधराज नल एक कुशल सारथि थे और इनको घोड़ों की प्रकृति के विषय में बहुत ज्ञान था (नैषधीय-चरित्, सर्ग, 5, श्लोक, 60)।

ओसिया या ओसियाम—यह छोटा गाँव जोधपुर से 32 मील पश्चिम-पश्चिमोत्तर में एक मरुस्थलीय भाग में स्थित है। यहाँ पर मंदिर है (आर्क० सं० इं०, एनुअल रिपोर्ट, 1908-09, पृ० 100 और आगे)।

पद्मावती—यह मध्य प्रदेश के ग्वालियर जिले में आधुनिक नरवर है (एपि० इं०, I, 147-52)। यहाँ पर प्रसिद्ध कवि भवभूति उत्पन्न हुये थे (मालती-माधव, प्रथम अंक)। कुछ लोगों के अनुसार यह नगर विदर्भ में सिन्धु एवं पारा (पार्वती) नामक दो नदियों के संगम पर स्थित था। इसकी पहचान आधुनिक विजयनगर से की गई है जो नलपुर या नरवर से 25 मील आगे विद्या नगर का एक भ्रष्टरूप है। विंसेंट स्मिथ के अनुसार पद्मावती गणपति नाग की राजधानी थी। इसे आजकल नरवर नगर से 25 मील पूर्वोत्तर में पद्म-पवाया कहा जाता है। यह किसी समय सिंधिया के राज्य में संमिलित था (कैं० हि० इं०, 300; एनुअल रिपोर्ट, आर्क० सं० वें० स०, 1914-1915, पृ० 68)। स्कन्दपुराण (अवन्तीखण्ड, I, अध्याय, 36, 44) के अनुसार पद्मावती उज्जयिनी का एक अन्य नाम है (नं० ला० दे, ज्यॉग्रेफिकल डिक्शनरी, पृ० 143; आर्क० स० रि०, जिल्द, II, पृ० 308-18; ज० ए० सो० बं०, 1837, पृ० 17)। पद्मावती को पदमपुर भी कहा जाता है।

परसदा या परसदी—यह मध्य प्रदेश के रायपुर जिले में बलोदा बाजार तहसील में स्थित एक गाँव है (एपि० इं०, XXIII, भाग, I, जनवरी, 1935, पृ० 3)।

पथाहारी—यह मध्य प्रदेश में एक महत्त्वपूर्ण नगर है जहाँ से राष्ट्रकूट

---

[1] **वायु पुराण, अध्याय, 99. 376.**

वंशीय परबल का एक स्तंभ-लेख (विक्रम संवत् 917 में कालांकित) उपलब्ध हुआ था (एपि० इं०, IX, 248 और आगे)।

पट्टन—यह मध्य प्रदेश के बेतूल जिले की मुल्ताई तहसील में एक बड़ा गाँव है जिसकी जनसंख्या 1500 है। यह मुल्ताई-अमरावती मार्ग पर मुल्ताई से लगभग 10 मील दक्षिण में स्थित है (एपि० इं०, XXIII, भाग, III, जुलाई, 1935, पृ० 81, प्रवरसेन द्वितीय के पट्टन अभिपत्र)।

पौनी—यह महाराष्ट्र के भंडारा जिले के मुख्यावास, भंडारा से लगभग 32 मील दक्षिण में वैनगंगा के दाहिने तट पर स्थित एक प्राचीन नगर है। यहाँ से भार राजा भगदत्त का अभिलेख उपलब्ध हुआ था (एपि० इं०, XXIV, भाग, I, पृ० 11)।

पवाया—यह ग्वालियर से लगभग 40 मील दक्षिण-पश्चिम में पार्वती एवं सिंधु नदियों के संगम पर स्थित है। इसकी पहचान भवभूति की नगरी एवं नागों की तीन में से एक राजधानी प्राचीन पद्मावती से की जाती है (आर्क० स० रि०, 1915-1916)।

पयोष्णी—महाभारत (वनपर्व, LXXXVIII, 8329-35) एवं मार्कण्डेयपुराण (अध्याय, LVII, 24) में इस नदी का वर्णन है जिसे वैदूर्य पर्वत नर्मदा से पृथक करता था। महाभारत (CXX, 10289-90) के अनुसार यह विदर्भ की नदी थी। मत्स्यपुराण के अनुसार पयोष्णी नदी तमर एवं हंसमार्ग नामक दो जातियों से निवसित देशों से होकर प्रवाहित होती थी। कनिंघम ने इस नदी को सिंध एवं बेतवा के मध्य, जमुना की एक सहायक नदी पहोज से समीकृत किया है (आर्क० स० रि०, VII, फलक, XXII)। यह समीकरण अमान्य प्रतीत होता है।

पारा—मार्कण्डेयपुराण (अध्याय, LVII, 20) में मध्य प्रदेश की इस नदी का उल्लेख है। वायु पुराण के अनुसार इसे पारा कहा जाता है (XLV, 98)। यह आधुनिक पार्वती नदी है जो भूपाल से निकलती है और चंबल में मिलती है जो जमुना की सबसे बड़ी सहायक नदी है (पार्जिटर, मार्कण्डेय-पुराण, पृ० 295; कनिंघम, आर्क० सं० रि०, II, 308)।

पारिपात्र पर्वत—बौधायन धर्मसूत्र (I, 1, 25) के अनुसार यह आर्यावर्त्त की दक्षिणी सीमा है। स्कन्दपुराण के अनुसार यह भारतवर्ष के केंद्र कुमारी-खण्ड की सबसे दूरवर्ती सीमा है। इस पर्वत से उस देश का नामकरण हुआ है जिससे यह संबद्ध था। पार्जिटर ने पारिपात्र पर्वत को विन्ध्य पर्वतमाला के उस भाग से समीकृत किया है जो भूपाल के पश्चिम में अरावली पर्वत के साथ

स्थित है (लाहा, माउंटेंस आॅव इंडिया, पृ० 17-18; लाहा, ज्यॉग्रेफिकल एसेज़, 115 और आगे)।

पेण्ड्राबंध—यह मध्य प्रदेश के रायपुर जिले की बलोदा बाजार तहसील में स्थित एक गाँव है जहाँ से कल्चुरि-संवत् 965 में अंकित प्रतापमल्ल के अभिपत्र उपलब्ध हुये थे (एपि० इं०, XXIII, भाग, I, जनवरी, 1925, पृ० 1)।

पीपरडुला—यह गाँव प्रवरराज के एक दानपत्र के प्राप्ति-स्थान ठाकुरदिया से लगभग 20 मील दूर और मध्य प्रदेश में छत्तीसगढ़ के अन्तर्गत् सारंगगढ़ की पश्चिमी सीमा से कुछ ही मील पर है। इस गाँव का वर्णन शरभपुर के राजा नरेन्द्र के पीपरडुला ताम्रपत्र में है (इ० हि० क्वा०, भाग, XIX, सं० 2)।

पिपलियानगर—यह ग्वालियर के शुजालपुर परगना में एक गाँव है जहाँ से एक ताम्रपत्र उपलब्ध हुआ है। अर्जुनवर्मन ने इसका प्रचलन मण्डप दुर्ग से अपने राज्याभिषेक के अवसर पर किया था (ज० ए० सो० बं०, V, 378)।

पोक्षर—यह ल्युडर्स की तालिका, सं० 1131 में वर्णित राजस्थान में अजमेर से सात मील पर स्थित पुष्कर ही है। इसे पोखरा भी कहा जाता है। हिंदू लोग इसे अत्यंत पवित्र मानते हैं (द्रष्टव्य, पुष्कर)।

पोतोदा—इसकी पहचान हिंदोल में पोतल से की जा सकती है (एपि० इं०, XXVI, भाग, II, अप्रैल, 1941, पृ० 78)।

प्रार्जन—इलाहाबाद स्तंभ लेख में इनका वर्णन है। ये मध्य प्रदेश में नरसिंह गढ़ के समीप कहीं पर निवास करते थे। विंसेंट स्मिथ ने प्रार्जुनों को मध्य प्रदेश के नरसिंहपुर जिले में स्थित बतलाया है (ज० रा० ए० सो०, 1897, पृ० 892) किंतु उनको अधिक तर्कसम्मत रूप से मध्य प्रदेश के नरसिंहगढ़ में स्थित बतलाया जा सकता है (इं० हि० क्वा० ,भाग, I, पृ० 258) क्योंकि उनके साथ वर्णित तीन अन्य जातियाँ—सनकानिक, काक एवं खरपरिक न्यूनाधिक मध्य प्रदेश की सीमाओं के अंतर्गत् ही किन्हीं क्षेत्रों में रहती थीं। बृहत्संहिता के लेखक ने उन्हें भारत के उत्तरी संभाग में स्थित बतलाया है। समुद्रगुप्त के इलाहाबाद स्तंभलेख में प्रार्जुनों सहित अन्य जातियों के समूह का वर्णन है जो समुद्रगुप्त की राज्याज्ञाओं का पालन करते थे एवं सभी प्रकार के कर देते थे। कुछ लोगों की धारणा है कि प्रार्जुनों का कुछ संबंध महाभारत के नायक अर्जुन के नाम से था किंतु यह संदिग्ध है।

पूर्ण—पद्मपुराण (अध्याय, XLI) में इस नदी का वर्णन है जिसकी प्राचीन

पहचान अभी तक बनी हुयी है। यह विन्ध्यपर्वत माला की सतपुड़ा शाखा से निकलती है और बुरहानपुर के थोड़ा आगे ताप्ती में मिलती है।

पुष्कर—यह अजमेर में आधुनिक पोखर है। यह एक तीर्थ स्थल है (स्कन्दपुराण अध्याय, I, 19-23)। अजमेर से सात मील उत्तर में स्थित पुष्कर हिंदुओं का एक प्रसिद्ध तीर्थस्थान है। यहाँ पर एक सरोवर है जिसका जल अत्यंत पवित्र है। हिंदू परंपरा के अनुसार महानतम पापी भी केवल इसमें स्नान करके स्वर्ग प्राप्त करता है। यहाँ पर ब्रह्मा, सावित्री, बद्रीनारायण, वराह एवं शिव को समर्पित पाँच प्रमुख मंदिर हैं। ब्रह्मपुराण (अध्याय, 102) में सावित्रीतीर्थ का उल्लेख है जो एक पहाड़ी पर स्थित है जहाँ प्रायः हिंदू तीर्थयात्री जाते हैं। पद्मपुराण (उत्तरकाण्ड, श्लोक, 35-38) में इसका वर्णन है। यह नगर रमणीयरूप से तीन ओर से पहाड़ियों से परिवृत एक झील के तट पर स्थित है (वाटसन, राजपूताना डिस्ट्रिक्ट गज़ेटियर्स अजमेर-मेरवाड़, पृ० 18-20)। बृहत्संहिता (XVI, 31) एवं योगिनीतंत्र (2.4; 2.6) में इसका वर्णन हुआ है।

पुष्करण (पोखरन)—यह पोखरण ही है जिसे हर प्रसाद शास्त्री ने राजस्थान में मारवाड़ में स्थित बतलाया है। यह जैसलमेर की सीमा पर स्थित है (आर्क० स० इं०, एनुअल रिपोर्ट्स, 1930-34, पृ० 219)। हर प्रसाद शास्त्री ने मेहरौली लौह स्तंभलेख (का० इं० इं०, जिल्द, III, पृ० 141 और आगे) में वर्णित राजा चन्द्र को इलाहाबाद स्तंभ लेख के राजा चन्द्रवर्मन और पोखरणा के उसी नाम के राजा से समीकृत किया है। शक्तिशाली राजा चन्द्र को 'वंग देश में युद्ध में, अपने विरोध में आये हुये शत्रुओं के संगठित मोर्चे को अपने वक्ष से पीठ मोड़ते हुये' बतलाया गया है। कुछ लोगों ने पोखराणा या पुष्करण को सुसुनिया पहाड़ी से कोई 25 मील पूरब में पश्चिमी बंगाल के बाँकुड़ा जिले में दामोदर नदी के तट पर स्थित उसी नाम के एक गाँव से समीकृत किया है जिसमें चन्द्रवर्मन् का एक अभिलेख उपलब्ध हुआ है (रायचौधरी, पो० हि० ऐं० इं०, चतुर्थ संस्करण, 448; सु० कु० चटर्जी, द ओरिजिन ऐंड डेवेलपमेंट ऑव द बंगाली लैंग्वेज, II, 1061; इं० हि० क्वा०, I, भाग, II, 255)। चौथी शताब्दी ई० में राजस्थान में पुष्करण का राजा चन्द्रवर्मन् समुद्रगुप्त का समकालीन था जो 404-05 ई० के मंदसोर अभिलेख में वर्णित नरवर्मन् का भाई था। ये दोनों भाई मालवा के राजा थे (एपि० इं०, XII, 317)। पुष्करण मारवाड़ में एक सुप्रसिद्ध नगर है (इं० ऐ०, 1913, पृ० 217-19)। टॉड, अनल्स ऑव राजस्थान, द्वितीय संस्करण, जिल्द, I, पृ० 605)। जोधपुर के पुरातत्व विभाग

द्वारा पुष्करण से उपलब्ध दो स्तंभलेखों के विवरण के लिए द्रष्टव्य, आर्क० सं० इं०, एनुअल रिपोर्ट्स, 1930-34, पृ० 219-220.

रहतगढ़—यह मध्य प्रदेश में सागर जिले के मुख्यावास सागर से 25 मील पश्चिम में एक नगर है जहाँ पर एक दुर्ग स्थित है। जयवर्मन द्वितीय के सब से पुराने अभिलेख इसी दुर्ग से उपलब्ध हुये हैं (इं० ऐं०, XX, 84.)।

रतनपुर—यह मध्य प्रदेश के बिलासपुर जिले में बिलासपुर से 16 मील उत्तर में है जहाँ पर काले पत्थर पर उत्कीर्ण पृथ्वीदेव द्वितीय का एक अभिलेख रतनपुर दुर्ग के भीतर उपलब्ध हुआ था (एपि० इं०, I, 45, तुलनीय, एपि० इं०, XXVI, भाग, VI, अप्रैल, 1942, पृ० 256 और आगे)।

राजिम—राजा तीवरदेव के राजिम ताम्रपत्र में मध्य प्रदेश के रायपुर जिले के मुख्यावास रायपुर से कोई 24 मील दक्षिण-पश्चिम में महानदी के दाहिने तट पर स्थित राजिम नामक नगर का वर्णन है (का० इं० इं०, जिल्द, III; तुलनीय, एपि० इं०, XXVI, भाग, II, अप्रैल, 1941)। पद्मपुराण में इसे देवपुर भी कहा गया है। नल-राजा विलासतुंग के राजिम प्रस्तर-लेख के अनुसार, पैरी एवं महानदी के संगम पर, महानदी के पूर्वी तट पर स्थित, रायपुर से 28 मील दक्षिण और पूरब में यह एक प्रसिद्ध तीर्थस्थान है। यहाँ पर माघ-पूर्णिमा से एक पक्ष तक राजीवलोचन के सम्मान में मेला लगा करता है (एपि० इं०, XXVI, भाग, II, पृ० 49)।

राजोरगढ़—यह राजस्थान में अलवर जिले में अलवर शहर से लगभग 28 मील दक्षिण-पश्चिम में एक गाँव है (एपि० इं०, III, 263)।

रामनगर—यह मध्य प्रदेश के माँडला जिले में है (दे० रा० भंडारकर द्वारा पुनरावृत्त इंस्क्रिप्शंस ऑव नार्दर्न इंडिया, नं० 1017, विक्रम, 1724.)।

रामटेक (रामगिरि)—यह महाराष्ट्र के नागपुर जिले में उसी नाम की एक तहसील का मुख्यावास है (एपि० इं०, XXV, भाग, I, पृ० 7)। यह नागपुर से 24 मील उत्तर में स्थित है। यहाँ पर रामायण के शंबुक ने तपस्या की थी जैसा कि मिराशी एवं कुलकर्णी ने एपि० इं०, XXV, भाग, I, में प्रकाशित रामचन्द्र के काल के रामटेक अभिलेख विषयक अपने निबंध में माना है।

राणीपद्र—इसकी पहचान मध्यप्रदेश के गुणा में, झाँसी जिले (उ० प्र०) एवं गुणा के (एपि० इं० XXIV, भाग, VI, पृ० 242) प्रायः बीचोबीच नरवर से ठीक 45 मील दक्षिण में स्थित राणोद नामक एक प्राचीन भग्न नगर से की जाती है (एपि० इं०, I, पृ० 351)।

रायपुर—सतना रेलवे स्टेशन से कोई 30 मील और कालञ्जर से कोई

30 मील दक्षिण-पूर्व में कोठी के अंतर्गत् स्थित यह एक विशाल गाँव है (ज० बा० ब्रां०, रां० ए० सो०, जिल्द 23, 1947, पृ० 47-48)।

रायता—यह गाँव बिझौली से लगभग 11 मील दक्षिण-पूर्व में स्थित बेगून के अंतर्गत् है (एपि० इं०, XXVI, XXVI, भाग, III, जुलाई 1941)।

रेवणा—यह गाँव बिझौली से लगभग चार मील पूर्वोत्तर में आधुनिक रंधोलपुर के समान प्रतीत होता है। राजकुमार सोमेश्वर ने इसे पार्श्वनाथ को दान दे दिया था (एपि० इं०, XXVI, भाग, III, जुलाई, 1941, पृ० 101)।

रेवती—यह बिजोली में पार्श्वनाथ-मंदिर के बगल से प्रवाहित होने वाली एक लघु नदी है (एपि० इं०, XXVI, भाग, III, जुलाई, 1941)। इसका नामकरण रेवती कुंड के आधार पर हुआ है।

रेवा—यशोधर्मन् एवं विष्णुवर्धन् के मंदसोर शिलालेख (मालव संवत् 589) में वर्णित यह एक नदी है। भागवत पुराण (V, 19, 18; IX, 15, 20; X, 79, 21) में भी इसका वर्णन है। इस अभिलेख के अनुसार इस नदी का पीताभ जलसमूह विन्ध्यपर्वत के शिखरों के ढाल से प्रवाहित होता है (का० इं० इं०, जिल्द, III)। कालिदास के मेघदूत में भी इसका वर्णन है (पूर्वमेघ, 19)।

ऋक्षवत—ऋक्षवत आधुनिक विन्ध्य पर्वत का प्राचीन नाम था। टॉलेमी ने इसे औक्सेंटन (Quxenton) कहा है। टॉलेमी ने इस पर्वत को तूंडिस, दोसारन एवं अदमस का स्रोत बतलाया है। टॉलेमी के अनुसार दोसारन ऋक्ष पर्वत से निकलती थी। ऋक्ष से उसका तात्पर्य नर्मदा के उत्तर में आधुनिक विन्ध्य पर्वतमाला के मध्यवर्ती क्षेत्र से था (लाहा, माउंटेंस ऑव इंडिया, पृ० 17)।

शैलपुर—भरहुत-पूजा-वेदिका (संख्या, 41) में शैलपुर का वर्णन हुआ है (बरुआ ऐंड सिन्हा, भरहुत इंस्क्रिप्शंस, पृ० 16)।

सकराई—यह राजस्थान में जयपुर के अंतर्गत् खण्डेला से 14 मील पश्चिमोत्तर में शेखावती में एक गाँव है। शर्करा नामक एक छोटी नदी के तट पर शाकंभरी देवी के मंदिर के लिए प्रसिद्ध यह हिंदुओं का एक तीर्थ स्थान है। यहाँ से एक प्रस्तर लेख उपलब्ध हुआ था (एपि० इं०, XXVII, भाग, I, पृ० 27)।

सल्लईमाल—इसका प्रतिनिधित्व अब दो गाँव करते हैं जो मध्य प्रदेश में

अञ्जनवती से ढाई मील पश्चिम में सलोरा एवं लगभग पाँच मील दक्षिण-पश्चिम में स्थित अमला नामक ग्राम है (एपि० इं०, XXIII, भाग, I, जनवरी, 1935)।

सलोनी—पुरुषोत्तम द्वारा प्रदत्त इस गाँव की पहचान सरोनी से की जा सकती है जो कोनी से लगभग डेढ़ मील दक्षिण एवं पश्चिम में स्थित है (एपि०, इं०, XXVII, भाग, VI, पृ० 280)।

समुद्रपाट—संभवतः यह जबलपुर से चार मील दक्षिण में स्थित समंद पिपरिया है (एपि० इं०, XXV, VII, पृ० 311)।

सताजुना—यह मांधाता से लगभग 13 मील दक्षिण-पश्चिम में स्थित सताजुना नामक गाँव है (एपि० इं०, IX, 106)।

सत्यवान—यह पर्वत ऋक्ष एवं मञ्जुमान के मध्य स्थित है (पद्म पुराण, 140)।

साभ्रमती—इस नदी में सात सरिताएँ हैं। नंदीतीर्थ एवं कपालमोचन-तीर्थ नामक दो स्थान इस नदी के तट पर स्थित हैं (पद्मपुराण, अध्याय, 136)। यह नदी ब्रह्मवल्ली नदी में मिलती है (वही, अध्याय, 144)।

शाकंभरी—यह जयपुर में एक स्थान है। साँभर के भग्नावशेषों का अन्वेषण 1936-1938 में किया गया था (द० रा० साहनी, आर्क्यॉलॉजिकल रिमेंस ऐंड एक्सकेवेशंस ऐट साँभर)।

सामोली—यह राजस्थान में उदयपुर में है।

साँची—साँची का प्राचीन नाम काकनाद था (का० इं० इं०, जिल्द, III, 31; ब्यूलर्स की तालिका, संख्या, 350)। यह अपने प्राचीन बौद्ध स्तूपों के लिए प्रसिद्ध है। साँची के स्तूपों में पूजा-अभिलेखों की एक बड़ी संख्या प्राप्त होती है (एपि० इं०, II, 87 और आगे)। साँची मध्य प्रदेश में भूपाल से 20 मील पूर्वोत्तर में स्थित है (विस्तार के लिए द्रष्टव्य, कनिंघम, भिलसा टोप्स, पृ० 183)। चन्द्रगुप्त द्वितीय के साँची शिलालेख में साँची गाँव का वर्णन है जो मध्य प्रदेश में भूपाल की दीवानगंज तहसील से लगभग 12 मील पूर्वोत्तर में स्थित है (का० इं० इं०, जिल्द, III)। साँची के स्तूपों के निर्माणकाल के विषय में मतभेद है। अधिक विवरण के लिए द्रष्टव्य, मु० हामिद कृत एक्सकेवेशंस ऐट साँची, आर्क० स० इं०, एनुअल रिपोर्ट, 1936-37 (1940); सर जान मार्शल एवं अल्फ्रेड फाउचर, मानुमेंट्स ऑव साँची)।

साँचोर—यह राजस्थान में सिरोही जिले के अंतर्गत् इसी नाम का नगर है (एपि० इं०, XI, पृ० 57)।

सारंगढ़—यह मध्य प्रदेश में रायगढ़ से 32 मील दक्षिण में छत्तीसगढ़ मंडल में स्थित है (एपि० इं०, IX, 281 और आगे)।

सेवाड़ी—यह राजस्थान के जालोर जिले में बली नामक तहसील में एक गाँव है (एपि० इं०, XI, पृ० 304)।

शेरगढ़—यह राजस्थान के कोटा जिले में एक विजन नगर है। यह अत्रू रेलवे स्टेशन से लगभग 12 मील दक्षिण-पश्चिम में है जहाँ से दो अभिलेख उपलब्ध हुये हैं (एपि० इं०, XXIII, भाग, IV, अक्टूबर, 1935; पृ० 131)।

शिप्रा—इस नदी का उद्गम-स्थल हिमालय पर्वत के पश्चिम में स्थित शिप्रा नामक झील में है और यह दक्षिण समुद्र में गिरती है (कालिका पुराण, अध्याय, 19, पृ० 14,17)। इसका वर्णन मेघदूत (पूर्वमेघ, 31) में है। कालिदास ने इसे एक ऐतिहासिक नदी के रूप में अमर बना दिया है जिसके तट पर उज्जयिनी स्थित थी (तुलनीय, रघुवंश, VI, 35)। यह ग्वालियर की एक स्थानीय नदी है जो सितमन के थोड़ा आगे चंबल (चर्मण्वती) में मिलती है। । यह दो उपनदियों द्वारा आपूरित है (लाहा, रिवर्स ऑव इंडिया, पृ० 40)। हरिवंश (clxvii, 9509) में इस नदी का वर्णन है। पौराणिक सूची के अनुसार यह पारिपात्र पर्वत से निकलती है। स्कन्दपुराण के अवन्त्यखण्ड से विदित होता है कि अवन्ती में शिप्रा को उत्तरवाहिनी कहा जाता था जिसका अर्थ उत्तर की ओर प्रवाहित होने वाला था। जब रेवा नदी के जल ने पृथ्वी को आच्छादित कर दिया था, विन्ध्यपर्वत ने पृथ्वी की रक्षा की थी। रेवा, चर्मण्वती एवं क्षाता नामक तीन नदियाँ विन्ध्य के निकट अमरकंटक पहाड़ी से निकलती थी। विन्ध्य को चीर क्षाता रुद्रसरोवर के निकट शिप्रा में मिलने के लिये महाकालवन या उज्जयिनी की ओर प्रवाहित होती थी। शिप्रा एवं क्षाता के संगम को क्षातासंगम कहा जाता था जो एक महत्त्वपूर्ण तीर्थस्थान है (स्कन्दपुराण, अध्याय, 56, 6-12; पृ० 2868-69, वंगवासी संस्करण)। जैन आवश्यकचूर्णि (पृ० 544) में भी इस नदी का वर्णन है।

सिरोह—यह नरवर से लगभग तीन मील पश्चिमोत्तर में है।

सिरपुर—यह मध्य प्रदेश के रायपुर जिले की महासमुंद तहसील में महानदी के दाहिने तट पर स्थित एक लघु ग्राम है। यह रायपुर से 37 मील पूर्वोत्तर और आरंग से 15 मील दूर है। किसी समय यह महा-कोशल की राजधानी थी और तब इसे श्रीपुर कहा जाता था (एपि० इं०, XI, पृ० 184)।

श्रीमालपट्टन—यह आबू पर्वत से लगभग 50 मील पश्चिम में स्थित,

गुर्जरत्रा के प्राचीन प्रांत की राजधानी—सुप्रसिद्ध भिनमाल है (एपि० इं०, XXVI, भाग, III, जुलाई, 1941)। स्कन्दपुराण के अनुसार इसे श्रीमाल कहा जाता था।

श्रीमार्ग—चाहमान सोमेश्वर के बिझोली शिलालेख में (विक्रमसंवत् 1226) श्रीमार्ग का वर्णन आता है जहाँ पर यह श्रीपथ या श्रीपथा के पाठांतर के रूप में प्रयुक्त हुआ है जिसे फ्लीट ने भरतपुर के आधुनिक बयाना से समीकृत किया है (एपि० इं०, XXVI, भाग, II, अप्रैल, 1941, पृ० 84 और आगे)।

श्रीपुर—यह मध्य प्रदेश के रायपुर जिले में आधुनिक सिरपुर है (एपि० इं०, XXII, 22; द्रष्टव्य शिरपुर)।

सुनारपाल—यह बस्तर के नारायणपाल से लगभग 10 मील दूर पर एक गाँव है जहाँ से जयसिंहदेव का एक शिलालेख उपलब्ध हुआ था (एपि० इं०, X, 35 और आगे)।

सुनिक—शरभपुर के महासुदेवराज के एक नये राजपत्र में घकरिभाग में स्थित इस गाँव का वर्णन है (इं० हि० क्वा०, XXI, नं० 4)।

सुप्रतिष्ठ—यह उस आहार का मुख्यावास था जिसमें अब नागपुर जिले की हिंगनघाट तहसील में संमिलित क्षेत्र संमिलित थे (एपि० इं० XXVI, 157-58)। इस आहार का वर्णन प्रभावती गुप्ता के पूना अभिपत्रों में भी है (एपि० इं०, XV 39 और आगे)।

श्वेता—यह नदी साभ्रमती से निकलती है (पद्मपुराण, अध्याय, 137)।

तलहारी—इसमें बिलासपुर तहसील में मल्लार के परिवर्ती क्षेत्र संमिलित प्रतीत होते हैं (एपि० इं०, XXVII, भाग, VI, पृ० 280)। इसका प्राचीन नाम तरडमशकभुक्ति प्रतीत होता है जो मल्लार है निकट उपलब्ध महाशिवगुप्त बालार्जुन के एक पुराने दान ताम्रपत्र में वर्णित है।

तलेवाटक—यह अञ्जनवती से लगभग 10 मील दक्षिण-पश्चिम में आधुनिक तालेगाँव है (एपि० इं०, XXIII, भाग, I, जनवरी, 1935, पृ० । 3

तापी (ताप्ती)—निस्संदेह यह ताप्ती नदी है किंतु आश्चर्यजनक रूप से इसका वर्णन महाकाव्यों में, यहाँ तक कि महाभारत में भीष्मपर्व की तालिका में भी नहीं हुआ है (ल्युडर्स तालिका, नं० 1131)। भागवतपुराण (V, 19, 18; X, 79, 20) एवं पद्मपुराण (उत्तरखण्ड, श्लोक, 35-.38 में उस नदी का वर्णन है जिसका उदगम स्थल महादेव पहाड़ी के पश्चिम में मुल्ताई पठार में हैं और जो मध्य प्रदेश एवं बरार (महाराष्ट्र) के पश्चिमोत्तरी सिरे की

प्राकृतिक सीमा अंकित करती हुयी पश्चिम की ओर प्रवाहित होती है। यह बुरहानपुर से गुजरती और मध्य प्रदेश की सीमा पार करती हुयी सूरत (गुजरात) में समुद्र में मिलने के लिए महाराष्ट्र में प्रवेश करती है। इसे अनेक महत्वहीन उप-नदियाँ आपूरित करती हैं। विष्णुपुराण (II, 3, 11) के अनुसार यह नदी पहाड़ी से निकलती है। यहाँ पर बलराम आये थे (वायु, 45, 102; ब्रह्माण्ड, II, 16.32)।

टॉलेमी ने ननगौनस नदी का वर्णन किया है जो अवश्य ही ताप्ती है। ननगौनस नाम भारतीय स्रोतों में नहीं उपलब्ध होता है। टॉलेमी ने तटीय देशों के अपने विवरण-क्रम में इस नदी के मुहाने को ताप्ती के वास्तविक मुहाने से बहुत दूर बंबई से कोई 33 मील उत्तर में उसी ऊँचाई पर स्थित बतलाया है जिस पर आधुनिक नगर सोपारा (सूप्पारा) स्थित है। टॉलेमी ने ननगौनस के स्रोत को विन्ध्य के पूर्वी भाग में स्थित बतलाया है। ताप्ती विन्ध्य से नहीं निकलती है (जे० पीएच० फोगेल, नोट्स ऑन टॉलेमी, बु० स्कू० ओ० अ० स्ट०, XIV, भाग, I, पृ० 84)।

टेकभरा—इसे जबलपुर से पाँच मील दक्षिण एवं पश्चिम में तिखारी से समीकृत किया जा सकता है (एपि० इं०, XXV, VII, पृ० 311)।

तेमरा—यह मध्य प्रदेश में बस्तर में कुरुस्पाल से मिला हुआ एक छोटा गाँव है (एपि० इं०, X, 39 और आगे)।

तेरंबि—इसे राणोद से पाँच मील दक्षिण-पूर्व में तेराही से समीकृत किया जा सकता है (एपि० इं०, XXIV, भाग, VI, पृ० 242)।

तेवार—यह मध्य प्रदेश में जबलपुर के लगभग छह मील दक्षिण में स्थित एक गाँव है जहाँ चेदिसंवत् 928 का जयसिंहदेव के शासनकाल का एक शिलालेख उपलब्ध हुआ था (एपि० इं०, II, 17 और आगे)।

ठाकुरदिया—यह गाँव मध्य प्रदेश में छत्तीसगढ़ में सारंगढ़ से छह मील दूर पर है (एपि० इं०, XXIi, पृ० 15)।

टिहरी—यह जामिनी नदी के लगभग 5 मील पूरब में छतरपुर को ललितपुर से मिलाने वाली रेखा से थोड़ा आगे और सुराई से लगभग 30 मील उत्तर में स्थित आधुनिक टिहरी है। ये सभी बुंदेलखंड में हैं (ज० बां० ब्रां० रा० ए० सो०, जिल्द, 23, 1947, पृ० 47)।

तिमिस—यह मध्य प्रदेश में अज्जनवती के पश्चिम में स्थित पहाड़ियों का प्राचीन नाम है (एपि० इं०, XXIII, भाग, I, जनवरी, 1935, पृ० 13)।

तोसड्ड—इस गाँव को अरंग से लगभग 30 मील दक्षिण-पूर्व में डुमरपल्ली के समीप तुसदा से समीकृत किया जा सकता है (एपि० इं०, XXIII, भाग, I, जनवरी, 1925, पृ० 20)।

त्रिपुरी—यह जबलपुर से 6 मील दूर है (एपि० इं०, XXI, 93)। यह जबलपुर के समीप आधुनिक तेवर है। बृहत्संहिता में (XIV, 9) में एक नगर के रूप में इसका वर्णन है।

तुमैन—पचार रेलवे स्टेशन से लगभग 10 मील दक्षिण-पूर्व में मध्य प्रदेश के गुणा जिले में स्थित यह एक विशाल गाँव है (एपि० इं०, XXVI, भाग, III, जुलाई, 1941, पृ० 115)।

तुंबवन—साँची के महान् स्तूप के 6 पूजा-अभिलेखों में तथा गुप्त संवत् 116 में अंकित कुमारगुप्त और घटोत्कचगुप्त के तुमैन-अभिलेख में इसका वर्णन है (एपि० इं०, XXVI, भाग, III, जुलाई, 1941)। वराहमिहिर की बृहत्संहिता (XIV, 15) में इसका उल्लेख है। इसकी पहचान तुकनेरी रेलवे स्टेशन से 6 मील दक्षिण में और एरण (प्राचीन एरिकिण) से लगभग 50 मील पश्चिमोत्तर में तुमैन से की जाती है।

तुम्मान—इसे तुमान भी कहा जाता है जो बिलासपुर जिले में रतनपुर से लगभग 45 मील उत्तर में स्थित है (एपि० इं०, XXVII, भाग, VI, पृ०, 280)।

तुण्डरक—महानदी के तट पर स्थित सेओरी नारायण से लगभग 6 मील दक्षिण में और सारंगगढ़ से लगभग 35 मील पश्चिम में स्थित आधुनिक तुण्ड्रा से इसकी पहचान की जा सकती है। संप्रति यह रायपुर जिले की बलोदा बाजार तहसील में संमिलित है (एपि० इं०, IX, पृ० 283)।

उदयपुर—यहाँ पर, जगन्नाथराय का मंदिर है जहाँ अभिलेख प्राप्त हुये हैं (एपि० इं०, XXIV, भाग, II, अप्रैल, 1937)।

उदयगिरि—यह एक सुनसान बालुकाश्म-पहाड़ी में उत्खनित गुहा-मंदिरों के लिए विश्रुत है। चन्द्रगुप्त द्वितीय के उदयगिरि गुहालेख में इस सुप्रसिद्ध पहाड़ी का वर्णन है जिसके पूर्व की ओर मध्य प्रदेश में रायसेन जिले में विदिशा तहसील के मुख्यावास भिलसा से लगभग दो मील पश्चिमोत्तर में स्थित इसी नाम के एक छोटे से गाँव का उल्लेख है (का० इं० इं०, जिल्द, III)। कुछ लोगों के अनुसार यह पहाड़ी भिलसा रेलवे स्टेशन से 4 मील पश्चिमोत्तर में स्थित है। यह प्राचीन स्थल भिलसा से चार मील दूर बेतवा एवं बेश नदियों के बीच स्थित है। यहाँ पर बीस गुफाएँ हैं। यह क्षेत्र जिसमें वह पहाड़ी स्थित

है, प्राचीन काल में प्राचीन बौद्ध आगम में दशार्ण या दसण्ण के नाम से विश्रुत है। दस्सण्ण को साधारणतया आधुनिक भिलसा के परिवर्ती क्षेत्रों से समीकृत किया जाता है। उदयगिरि पहाड़ी लगभग डेढ़ मील लंबी है और इसकी सामान्य दिशा दक्षिण-पश्चिम से पूर्वोत्तर की ओर है। वेदिसगिरि, जहाँ अशोक का पुत्र महेन्द्र सिंहल प्रस्थान करने के पूर्व अपनी माँ के साथ एक विहार में रुका था, संभवतः उदयगिरि पहाड़ी ही हो सकती है। मूर्तिकला की दृष्टि से पाँचवीं गुहा उदयगिरि की सब से अधिक महत्त्वपूर्ण गुहा है। इसमें वराह अवतार का दृश्य अंकित है। छठवीं गुहा में दो द्वारपालों, विष्णु, महिषमर्दिनी एवं गणेश का मूर्ति निरूपण है। उदयगिरि गुहा में बारह अभिलेख हैं जिसमें से चार अत्यंत महत्त्वपूर्ण हैं। छठवीं गुहा के अभिलेख से प्रकट होता है कि इस क्षेत्र पर सनकानिकों का अधिकार था (द्रष्टव्य, रा० कु० मुकर्जी द्वारा संपादित विक्रम वाल्यूम में प्रकाशित डी० आर० पाटिल का लेख, 'द मानुमेंट्स ऑव उदयगिरि हिल्स, 1948, पृ० 377 और आगे; लुअर्ड, ग्वालियर स्टेट गजेटियर, I, पृ० 296)।

उदयपुर—यह मध्य प्रदेश में ग्वालियर में है। यहाँ पर निर्मित्त उदयादित्य के शिव मंदिर में एक शिलालेख उपलब्ध हुआ है (इं० ऐं०, XVIII, 344 और आगे)। उदयादित्य ने उदयपुर के महान नीलकंठेश्वर मंदिर का निर्माण कराया था (ज० ए० सो० बं०,IX, 548)।

उज्जैन—पतञ्जलि ने अपने महाभाष्य (3.1.21, पृ० 67-68) में इसका उल्लेख किया है। योगिनीतंत्र (2.2.119) में इसका वर्णन है। अशोक के द्वितीय लघु शिलालेख में उज्जयिनी (उज्जेनी) का वर्णन है।* अवन्ती या पश्चिमी मालवा की राजधानी उज्जयिनी चर्मण्वती (चंबल) की एक सहायक नदी शिप्रा के तट पर स्थित थी। यह मध्य प्रदेश में आधुनिक उज्जैन है। दीपवंस (पृ० 57) के अनुसार इसका निर्मण अच्चुतगामी ने कराया था। चीनी तीर्थयात्री युवान च्वाङ-के अनुसार इसकी परिधि, 6,000 ली थी। यहाँ पर कई संघाराम थे जो अधिकाशतः भग्नप्राय है। यहाँ पर कोई 300 पुरोहित थे जो हीनयानियों एवं महायानियों के सिद्धांतों का अध्ययन करते हैं। यहाँ का राजा ब्राह्मण था जो विधर्मियों के ग्रंथों में निष्णात् था किंतु जो बौद्ध-धर्म में विश्वास नहीं करता था (बील, बुद्धिस्ट रिकार्डर्स ऑव द वेस्टर्न वर्ल्ड, भाग,

---

***वस्तुतः उज्जयिनी का उल्लेख अशोक के द्वितीय लघु शिलालेख में न होकर उड़ीसा से प्राप्त द्वितीय पृथक शिलालेख में है। —अनूदक**

II, पृ० 270-271)। लगभग चौथी शती ई० में उज्जयिनी के प्रांताधिपति की राज-सभा के समक्ष बसंतोत्सव के अवसर पर कालिदास के नाटक अभिनीत होते थे (रैप्सन, ऐंश्येंट इंडिया, पृ० 175)। ज्योतिषी अपने अक्षांश की गणना यहीं से करते थे (मैक्रिंडिल, ऐंश्येंट इंडिया ऐज डिस्क्राइब्ड बाई टॉलिमी, पृ० 154)। 'पेरिप्लस ऑव एरिथ्रियन सी' नामक ग्रंथ में (खण्ड, 48) इस पुर को ओजीनी कहा गया है जहाँ से प्रत्येक माल स्थानीय उपभोग के लिए बैरीगाजा (भृगुकच्छ) लाया जाता था। यह व्यापार का एक महान् केंद्र था जो कम से कम तीन प्रमुख व्यापारिक मार्गों के मिलन बिंदु पर स्थित था।

मगध नरेश बिम्बिसार के उज्जयिनी की एक नगर-वधू पद्मावती से एक पुत्र था (थेरीगाथा कामेंट्री, पृ० 39)। यहाँ राजा चण्डपज्जोत के पुरोहित के कुल में महाकच्चायन उत्पन्न हुये थे जिन्होंने तीनों वेदों का अध्ययन किया एवं अपने पिता के उस पद के उत्तराधिकारी हुये। जैन मत के प्रवर्तक महावीर ने यहाँ पर तपश्चर्या की थी। चौथी शती ई० पू० में उज्जयिनी मगध के अधीन हो गया। तीसरी शताब्दी ई० पू० के प्रारंभ में अशोक यहाँ का कुमारामात्य नियुक्त था। जब वह यहाँ पर कुमारामात्य था, यहीं पर तब उसका पुत्र महेंद्र उत्पन्न हुआ था। उज्जयिनी के सुविख्यात राजा विक्रमादित्य ने जिसकी पहचान सामान्यतया चन्द्रगुप्त द्वितीय (लगभग 375 ई०) से की जाती है, शकों को निष्का-सित किया एवं भारत के एक विशाल भूभाग पर अपना अधिकार स्थापित किया था।

भारत का अपेक्षाकृत आधुनिक लोक-साहित्य उज्जयिनी के विक्रमादित्य एवं उसकी सभा को अलंकृत करने वाले नवरत्नों से संबंधित अनेक रोचक एवं हास्यप्रद कहानियों से ओत-प्रोत है। परंपरा से कुल मिलाकर यह प्रति-ध्वनित होता है कि उदार राजकीय संरक्षण में उज्जयिनी संस्कृत विद्या का एक महान् केंद्र बन गया था।

दशकुमारचरितम् (पृ० 31) के अनुसार पुष्पोद्भव ने एक व्यापारी के चन्द्रपाल नामक पुत्र से मित्रता करके उसके साथ उज्जयिनी में प्रवेश किया था। वह अपने माता-पिता को भी इस महा नगर में ले आया था।

उज्जयिनी के समीप प्राप्त दो पत्रों पर अंकित अभिलेख में महायक की पत्नी आसिनी के निवेदन पर वाक्‌पतिराज ने उज्जयिनी में भट्टेश्वरी देवी को सेंबलपुरक नामक ग्राम दान में दिया था (इं० ऐं०, XIV, 159 और आगे)।

प्राचीन भारतीय ताम्र-मुद्राओं में उज्जयिनी की मुद्रा का अपना विशिष्ट स्थान है। यहाँ पर तीसरी शती ई० पू० से प्रथम शती ई० के मध्य की आहत एवं ढली हुयी मुद्राएँ उपलब्ध होती हैं। उज्जयिनी के उत्खनन से 2 शती ई०

पू० से दूसरी शताब्दी ई० तक के काल-क्रम में मिट्टी के पदक एवं अभिमुद्राएँ उपलब्ध हुयी हैं। दूसरी शताब्दी ई० पू० से पाँचवीं शती ई० तक के कुछ मृण्पात्र भी यहाँ प्राप्त हुये हैं। यहाँ से एक प्रस्तर-मंजूषा भी उपलब्ध हुयी है (लगभग दूसरी शताब्दी ई० पू०)।

उज्जयिनी में महाकाल का मंदिर बनवाया गया था जो भारत के अत्यंत प्रसिद्ध बारह शैव मंदिरों में से एक था। सौर पुराण (अध्याय, 67, I) में उज्जैयिनी के महाकाल का उल्लेख है। यह लिङ्गायत संप्रदाय का एक प्रसिद्ध तीर्थस्थान भी है। लिङ्गायत परिव्राजक मुनि संपूर्ण भारत में विशेषरूप से पाँच लिङ्गायत क्षेत्रों में प्राय: विचरण करते हैं। जहाँ तक हिंदू-मंदिरों का प्रश्न है, कालिदास देवगिरि पर्वत पर स्थित कार्त्तिकेय के महामंदिर से परिचित थे। अधिक विवरण के लिए द्रष्टव्य, वि० च० लाहा, ट्राइब्स इन ऐंश्येंट इंडिया, अध्याय, LX; वि० च० लाहा, उज्जयिनी इन ऐंश्येंट इंडिया, (ग्वालियर आर्कयॉलॉजिकल डिपार्टमेंट)।

उमा—प्रवरसेन द्वितीय के कोठुरक दानपत्र में वर्णित इस नदी की पहचान नागपुर जिले में वुन्ना नदी से की गयी है (एपि० इं०, XXVI, भाग, V, अक्टूबर, 1941, 155 और आगे)। यह प्रदत्त गाँव कोठुरक की पूर्वी सीमा थी।

उंबरणीग्राम—(एपि० इं०, VIII, 220)—यह दक्षिण राजस्थान में है और इसकी पहचान देलवाड़ा से सात मील दक्षिण-पश्चिम में उमरणी से की जा सकती है।

उन—यह बंबई-आगरा मार्ग के समीप सनवड स्टेशन से साठ मील दूर नर्मदा के दक्षिण में है। यह मध्य प्रदेश के निमाड़ जिले में है जहाँ पर कुछ मंदिर हैं (आर्क्० स० इं०, एनुअल रिपोर्ट, 1918-19, भाग, I, पृ० 17)।

उपप्लव्य—यह राजा विराट के राज्य में एक नगर था जहाँ से पाण्डव अपना वनवास समाप्त करके दूसरे स्थान पर चले गये थे (महा०, IV, 72, 14)। धृतराष्ट्र ने कुरुओं के संदेशवाहक सञ्जय को इस नगर में भेजा था (वही, V, 22, 1)। महाभारत के टीकाकार नीलकण्ठ ने बतलाया है कि उपप्लव्य विराट नगर के समीप एक नगर था। किंतु इसका ठीक स्थान अनिश्चित है (महाभारत, IV, 72, 14 पर नीलकण्ठ की टीका)। यह मत्स्यों की राजधानी नहीं प्रतीत होती है जैसा कि कैंब्रिज हिस्ट्री ऑव इंडिया (पृ० 316) में बतलाया गया है, किंतु यह मत्स्य देश का केवल एक नगर मात्र था।

उत्तमाद्रिशिखर—यह उत्तर में जहाजपुर के दक्षिण में बोरोल्ली और मैंसरौर से फैले हुये सब से ऊपरी पठार का प्राचीन नाम प्रतीत होता है जिसका

लोकप्रिय नाम उपरमाल है (एपि० इं०, XXVI, भाग, III, जुलाई, 1941, पृ० 101)।

वदपुर—इसे वडनगर भी कहा जाता था। संत मार्टिन ने वल्लभी से 117 मील पश्चिमोत्तर में स्थित आनंदपुर नामक नगर को वडनगर से समीकृत किया है (कनिंघम, एं० ज्यॉ० इं०, 565; तुलनीय, इंपार्टेंट इंस्क्रिप्शंस फ़ॉम द बड़ौदा स्टेट, भाग, I, पृ० 78)।

वडउवा—यह बिझोली से लगभग 3 मील दक्षिण में आधुनिक बडउवा है (एपि० इं०, XXVI, 102 और आगे)।

वैराट—वैराट या वैराटनगर मत्स्यदेश की राजधानी थी, जो इन्द्रप्रस्थ के दक्षिण या दक्षिण-पश्चिम में एवं शूरसेन के दक्षिण में स्थित था (ऋग्वेद VII, 18, 6; गोपथ ब्राह्मण, I, 2. 9, बिब्ल्योथेका इंडिका सीरीज़)। मत्स्यराज-विराट की राजधानी होने के कारण उसे वैराटनगर कहा जाता था। यह जयपुर में एक तहसील का मुख्यावास है जहाँ अब दिल्ली को जयपुर से मिलाने वाली 52 मील लंबी एक सुंदर पक्की सड़क से पहुँचा जा सकता है। परंपरानुसार इसकी पहचान मत्स्यदेश के राजा विराट की राजधानी विराटपुर से की जा सकती है जहाँ द्रौपदी-सहित पाँचों पाण्डवों ने अपने बनवास का तेरहवाँ अज्ञात-वास का वर्ष व्यतीत किया था। जब उन्होंने अपना परिचय प्रकट किया तब अर्जुनपुत्र अभिमन्यु ने राजा विराट की पुत्री उत्तरा से विवाह किया (महाभारत, LXXii)। वैराटनगर अपनी ताँबे की खदानों के लिए प्रसिद्ध नीची पहाड़ियों से परिवेष्टित एक वृत्ताकार घाटी के मध्य स्थित है। यह दिल्ली से 105 मील दक्षिण-पश्चिम एवं जयपुर से 41 मील उत्तर में स्थित है। यह लगभग एक मील लंबे एवं आधा मील चौड़े, या और अधिक लगभग ढाई मील परिधि वाले खंडहरों के एक टीले पर स्थित है जिसके ½ भाग से अधिक पर वैराट नहीं है।

वैराट के प्राचीन अवशेषों का वर्णन आर्क्यॉलॉजिकल सर्वे रिपोर्ट्स, भाग, II, एवं VI में दिया गया है; (31 मार्च 1910 में समाप्त होने वाले वर्ष की, डा० दे० रा० भंडारकर द्वारा लिखित प्रोगेस रिपोर्ट ऑव द आर्क्यॉलॉजिकल सर्वे ऑव इंडिया, वेस्टर्न सर्किल भी द्रष्टव्य; डा० भंडारकर ने 1909-10 वैराट की यात्रा की थी)।

वर्तमान वैराट नगर पूरब से पश्चिम लगभग पाँच मील लंबी एवं तीन या चार मील चौड़ी एक घाटी के मध्य स्थित है जो तीन वर्तुलाकार पर्वतमालाओं से परिवेष्ठित है जिनकी सब से बाहरी सर्वोच्च एवं सब से भीतरी सबसे नीची

है। दिल्ली-जयपुर मार्ग इस घाटी में पश्चिमोत्तर के एक कोने से एक संकरे दर्रे से घुसता है। यह क्षेत्र दो नालों—यथा वैराट नाला जो उत्तर की ओर प्रवाहित होकर बानगंगा में मिलता है, तथा दक्षिण में बंदरोल नाला से अभि-सिंचित है। वैराट अशोक के रूपनाथ एवं सहसराम-शिला के वैराट संस्करण के लिए प्रसिद्ध है जिसको कार्लाइल ने भीम-जी की डुंगरी नामक एक पहाड़ी के पाद में एक विशाल शिलापर अंकित खोजा था। यह पहाड़ी वैराट नगर से लगभग एक मील पूर्वोत्तर में स्थित है। यहाँ पर एक विशाल कंदरा मिलती है जिसे द्वितीय पाण्डव बंधु भीम का आवास माना जाता है।

वैराट में एक जैन मंदिर है जो तहसील के निकट स्थित है और यहाँ पर एक देवालय है जिसके पहले एक विस्तृत सभा-मंडप है जो तीन ओर से चौड़े परिक्रमा-पथ से परिवेष्टित है (विस्तार के लिए द्रष्टव्य, द० रा० साहनी, आर्क्यॉलॉजिकल रिमेंस ऐंड एक्सकेवेशंस ऐंट वैराट, पृ० 16-17)।

बीजक-की-पहाड़ी के शिखर से उत्तर में भीम जी की डुंगरी पहाड़ी और उसके परिवर्ती स्मारकों तथा चारों ओर से इस ऊँचे नगर को घेरने वाले पूर्ण समतल मैदान सहित वैराट की संपूर्ण घाटी का एक रमणीक दृश्य दिखलायी पड़ता है। निस्संदेह वैराट अशोक के एक शिला-शासन के लिए प्रसिद्ध है जो शिला-थंब से भिन्न शिला-फलक पर उत्कीर्ण अशोक का एकमात्र ज्ञात शिलाशासन है। इस शिला-शासन से बौद्ध धर्म में अशोक की निष्ठा का निश्चित प्रमाण मिलता है। तदनंतर इसमें भिक्षु-भिक्षुणियों एवं उपासक-उपासिकाओं को बौद्ध शास्त्रों के सात संकलित उद्धरणों के अध्ययन एवं श्रवण के लिए उद्बोधन है। बुद्ध द्वारा प्रवर्त्तित करुणा के धर्म (Law of piety) की निरंतर प्रगति के लिए वह इन्हें अत्यंत हितकर मानता था और इनके प्रति स्वयं उसके मन में विशेष आग्रह था।

वैराट के प्राचीन स्थल के उत्खनन से मौर्य-युग एवं उसके तत्काल बाद के अनेक पुरावशेष प्राप्त हुये हैं। यहाँ से ज्ञात प्रमुख स्मारकों में अशोक के अन्य ज्ञात स्मारक स्तंभों के समान ही उसके दो स्तंभों के अवशेष, पूर्णतः एक नयी शैली का मंदिर और अशोक द्वारा निर्मित एक विहार है। बिहार का सर्वाधिक सुरक्षित भाग पूर्व की ओर था जहाँ छः-सात कोठरियों की दुहरी पंक्ति अवशिष्ट है। इन कोठरियों से प्राप्त संवहनीय पुरानिधियों में मृण्भांड, विभिन्न आकार और विविध प्रकार से अलंकृत पात्र संमिलित हैं। यहाँ से आहत रजत एवं कुछ यूनानी एवं इंडो-ग्रीक रजत मुद्राएँ भी उपलब्ध हुयी हैं। सूती कपड़े के एक टुकड़े की उपलब्धि से प्रथम शती ई० में प्रयुक्त होनेवाले कपड़ों पर रोचक

प्रकाश पड़ता है। यहाँ से प्राप्त संवहनीय पुरानिधियों में एक नर्तनशील लड़की या शिर-पैर विहीन एक यक्षी की प्रतिमा का वर्णन किया जा सकता है। उसका बाँयाँ हाथ नितंब पर है जबकि दाहिना हाथ वक्षस्थल पर बाँएँ उरोज को सहारा दिये था। यह आकृति प्रायः नग्न है। इस प्रकार की आकृतियाँ लगभग पहली शताब्दी ई० पू० के मथुरा के वेदिका स्तंभ (Railing Pillars) पर भी प्राप्त होती हैं। यहाँ पर प्राप्त गोलाकार मंदिर अशोक के स्तंभों के समकालीन सर्वाधिक मनोहर भवन है। आग लगने के कारण यह नष्ट हो गया था। दयाराम साहनी ने वैराट के उत्खनन की यह एक रोचक विशेषता बतलाई है कि यहाँ पर किसी रूप में या किसी उपकरण पर बुद्ध की मानवाकार प्रतिमा बिल्कुल नहीं मिलती है जो इस मत से पूर्णतः संगत है कि दूसरी शती ई० के पूर्व बुद्ध की प्रतिमा नहीं विकसित हुयी थी (डिपार्टमेंट ऑव आर्क्यॉलॉजिकल ऐंड हिस्टॉरिकल रिसर्च, जयपुर स्टेट द्वारा प्रकाशित द० रा० साहनी कृत आर्क्यॉलॉजिकल रिमेंस ऐंड एक्सकेवेशंस ऐट वैराट, पृ० 19 और आगे)। मत्स्यदेश भी द्रष्टव्य ।

वणिका—इसकी पहचान अलवर से 15 मील पश्चिमोत्तर में बेनका नामक गाँव से की जा सकती है (एपि० इं०, XXIII, IV, अक्टूबर, 1935, पृ० 102)।

वरदाखेट—यह संभवतः पट्टन से लगभग 12 मील दक्षिण में अमरावती जिले के मोरसी तालुक-में वरुड है (एपि० इं०, XXIII, भाग, III, जुलाई, 1935, पृ० 84)।

वरलायक—बिझौली के समीप यह एक सरोवर का नाम है जिसके किनारों पर प्राचीन मंदिरों के खंडहर बिखरे पड़े हैं (एपि० इं०, XXVI, भाग, III, जुलाई, 1941, पृ० 101)।

वरतु—इस नदी की पहचान वरत्रोयी नदी से की जा सकती है (एपि० इं० ,XXVI, भाग, V, जनवरी, 1942, पृ० 204) जो देवलिया गाँव से दूर पूरब एवं उत्तर में है।

बसन्तगढ़—यह राजस्थान में सिरोही में है जहाँ से पूर्णपाल के प्रस्तर लेख उपलब्ध हुये थे (एपि० इं०, IX, 10 और आगे)। यह एक अति प्राचीन स्थान है। ग्यारहवीं शताब्दी ई० के अंत तक इसे वट, वटकर एवं वटपुर कहा जाता था। यहाँ पर एक पहाड़ी पर स्थित एक प्राचीन दुर्ग मिला है। अधिक विवरण के लिए, द्रष्टव्य एर्सकाइन द्वारा संकलित राजपूताना गजेटियर्स, भाग III, पृ० 302 और आगे)।

वशिष्ठाश्रम—यह आश्रम अमरावती पर्वतमाला में आबू पर्वत पर स्थित

था। कालिदास ने अपने रघुवंश में वशिष्ठ के आश्रम को हिमालय में स्थित बतलाया है (रघुवंश, II, 26)। यहाँ पर विश्वामित्र आये थे। यह आश्रम रमणीक, ऋषि संकुल तथा विविध प्रकार के पुष्पों लताओं एवं वृक्षों से सुसज्जित था (रामायण, आदिकाण्ड, सर्ग, 51, श्लोक, 22-23)। कहा जाता है कि वशिष्ठ ने अपने अग्नि-कुंड से विश्वामित्र का विरोध करने के लिए परमार नामक एक योद्धा की सृष्टि की थी जिस समय वह उनकी प्रसिद्ध कामधेनु का अपहरण कर रहे थे। परमार राजपूतों के परमार-कुल का प्रजनक था। पुत्रकाम दिलीप एवं उसकी पत्नी ने इस आश्रम के लिये प्रस्थान किया था (रघुवंश, सर्ग, I, श्लोक, 35)।

वटपद्रक—यह कोशीर-नंदपुरविषय में स्थित था। इस गाँव की पहचान बारडूल से लगभग 14 मील दूर आधुनिक बटपदक से की जा सकती है। नंदपुर विषय के मुख्यावास की पहचान मध्य प्रदेश के बिलासपुर जिले के दो संलग्न ग्रामों से की जा सकती है (एपि० इं०, XXVII, भाग, VII, जुलाई, 1948, पृ० 289 और आगे)।

वटपुर—मध्य प्रदेश में कुरहा से लगभग एक मील पूरब में यह आधुनिक वडुर है (एपि० इं०, XXIII, भाग, I, जनवरी, 1935, पृ० 13)।

वटाटवी—आटविक राज्यों के अंतर्गत् वटाटवी एवं सहलाटवी का वर्णन किया जा सकता है (एपि० इं०, VII, 126; ल्युडर्स की तालिका, नं० 1195)।

वटुवारि—स्थूल रूप से इसकी पहचान भूतपूर्व भारतीय रियासत चरखारी से की जा सकती है (ज० बां० ब्रां० रा० ए० सो०, भाग, 23, 1947, पृ० 47)।

वाटोदक—गुप्त संवत् 116 में अंकित कुमारगुप्त एवं घटोत्कचगुप्त के तुमैन अभिलेख में इसका वर्णन है जिसकी पहचान एरण से लगभग 10 मील दक्षिण में, मध्य प्रदेश के रायसेन जिले में भिलसा के आधुनिक बदोह नामक एक छोटे गाँव से की जा सकती है (एपि० इं०, XXVI, भाग, III, जुलाई, 1941, पृ० 117)।

वेदिस (विदिशा)—प्राचीन काल में विदिशा एक महत्त्वपूर्ण नगर था जिसे कालिदास ने अपने मेघदूत में अमर बना दिया है। विदिशा[1] के निवासी वैदिक लोग थे इसे वैश्यनगर भी कहा जाता था जो बेसनगर का एक प्राचीन नाम था। रामायण (उत्तरकाण्ड, अध्याय, 121) के अनुसार रामचन्द्र ने शत्रुघ्न

---

[1] **मेघदूत, I, 24, 25 एवं 28.**

को यह पुर दिया था। गरुडपुराण[1] में इस नगर को धन एवं सुख-संपन्न बतलाया गया है (सर्वसम्पत्संमन्वितम्)। यहाँ पर नाना प्रकार के जनपद (नानाजन-पदाकीर्णम्), मणि, (नानारत्नसमाकुलम) संपन्न एवं शोभनीय (शोभाढ्यम्) भव्य इमारतें एवं प्रासाद थे। यह अनेक धर्मों का केन्द्र था (नानाधर्मसमन्विनम)।

विदिशा या वेदिस (संस्कृत वैदिश, वैदश) भिलसा के 2 मील के भीनर ही मध्यप्रदेश में बेतवा[3] (बेत्रवती) एवं बेस या विदिशा नदी के काँठे में स्थित बेसनगर का प्राचीन नाम है जो संप्रति खंडहर हो चुका है। पुराणों के अनुसार वैदिश विदिशा नदी के तट पर स्थित था जो पारिपात्र पर्वत से निकलती थी।[3] ल्युडर्स की तालिका संख्या, 254, 273, 500, 521-24, 712, 780, 784, 813, 835 एवं 885) में वर्णित विदिशा के प्राचीन नगर की पहचान भूपाल से 26 मील दूर पूर्वोत्तर में स्थित रायसेन जिले में भिलसा से की जा सकती है। यह पाटलिपुत्र से 50 योजन[4] की दूरी पर स्थित था।[5]

अशोक के पालि आख्यान के अनुसार पाटलिपुत्र से उज्जयिनी का मार्ग विदिशा नगर से होकर था[6]। यह मानने के लिये अनेक कारण हैं कि विदिशा अवन्ती के राज्य में संमिलित था।[7] मार्कण्डेयपुराण में विदशा का वर्णन अवन्ती के एक अपरान्त पड़ोसी के रूप में हुआ था। यह निश्चित रूप से ज्ञात है कि शुङ्गवंश के संस्थापक पुष्यमित्र का राज्य नर्मदा नदी तक फैला हुआ था एवं उसमें विदिशा, पाटलिपुत्र एवं अयोध्या संमिलित थे।[8] यदि हम अवन्ती को शुङ्ग साम्राज्य में संमिलित मान लें, तब यह मानना पड़ेगा कि उज्जयिनी के स्थान पर विदशा कुमारामात्य का मुख्यावास बना था।

विदशा पूर्वी मालवा की राजधानी थी।[9] बाण की कादम्बरी के अनुसार

---

[1] सदाशिव सेठ द्वारा प्रकाशित बंबई, संस्करण, अध्याय, 7, श्लोक, 34-35.

[2] मेघदूत, पूर्वमेघ, 25वाँ श्लोक।

[3] लाहा, ज्यॉग्रेफी ऑव अर्ली बुद्धिज्म, पृ० 3.

[4] एक योजनलगभग सात मील।

[5] महाबोधिवंस, 98-99.

[6] समन्तपासादिका, पृ० 70, उज्जेनिम गच्छन्तो वेदिसनगरम पत्वा।

[7] लाहा, उज्जयिनी इन ऐंश्येंट इंडिया, ग्वालियर आर्क्यॉलॉजिकल डिपार्टमेंट प्रकाशन, पृ० 4.

[8] रायचौधरी, पोलिटिकल हिस्ट्री, चतुर्थ संस्करण, पृ० 308.

[9] भंडारकर, कार्माइकेल लेक्चर्स, 1921, पृ० 85.

शूद्रक नामक एक महान् पराक्रमी राजा विदिशा पर राज्य करता था जिसकी आज्ञाएँ संसार के सभी राजाओं द्वारा मानी जाती थी। यह शुङ्गवंशीय पुष्यमित्र एवं अग्निमित्र की पश्चिमी राजधानी थी।[2] मेघदूत (श्लोक, 25-26) के अनुसार यह दशार्ण[3] देश की राजधानी थी जो जम्बुद्वीप के 16 जनपदों में से एक था।[1] विन्ध्यपाद के मेघदूत को दशार्ण देश की ओर जाना था जिस दिशा में सुप्रसिद्ध राजधानी विदिशा वेत्रवती के तट पर स्थित थी। महाभारत[4] में दशार्णों को कुरुक्षेत्र-युद्ध में पाण्डवों के साथ लड़ने वाली एक जाति बतलाया गया है जो दशार्ण नदी के क्षेत्र में रहते थे जिसकी पहचान आधुनिक धसन[5] नदी से की जा सकती है जो भूपाल से निकलकर बुंदेलखंड से प्रवाहित होती हुयी बेतवा नदी या बेत्रवती[6] में मिलती है। दशार्ण नाम के दो देश थे: पश्चिमी दशार्ण (महाभारत, अध्याय, 32) जिसमें पूर्वी मालवा एवं भूपाल थे; और पूर्वी दशार्ण (महाभारत, अध्याय, 30) जो मध्य प्रदेश में छत्तीसगढ़ मंडल का एक भाग था (ज० ए० सो० बं०, 1905, पृ० 7, 14)। मार्कण्डेयपुराण में दशार्ण नदी का उल्लेख है जिसके आधार पर इसके प्रवाह क्षेत्र का नाम दशार्ण पड़ा है।[7] सागर के समीप आधुनिक धसन (जिसे दुशान नदी भी कहा जाता है), जिससे दशार्ण की पहचान की गयी है, बेतवा (वेत्रवती) एवं केन नदियों के मध्य बहती है, जो वेत्रवती के आगे यमुना की एक उल्लेखनीय सहायक नदी है। एरियन ने इसे कैनस (Cainas) नदी कहा है। इसी पुराण (57, 19-20) में पारिपात्र पर्वत से निकलने वाली अन्य नदियों के अन्तर्गत् विदिशा एवं

---

[1] कैंब्रिज हिस्ट्री ऑव इंडिया, पृ० 523.

[2] महाभारत, आदिपर्व, CXIII, 4449; वनपर्व, LXIX, 2707-8; उद्योगपर्व, CXC-CXCIII; भीष्मपर्व, IX, 348, 350, 363; तुलनीय, मार्कण्डेय पुराण, 57, 52-55; मेघदूत, I, 24, 25 एवं 28.

[3] महावस्तु, I, 34; ललितविस्तर, लेफमान संस्करण, पृ० 22, सर्वस्मिन् जम्बुद्वीपषोडश जनपदेषु।

[4] कर्णपर्व, अध्याय, 22-3; भीष्मपर्व, अध्याय, 95, 41, 43; द्रोणपर्व, अध्याय, 25, 35.

[5] यह ऋक्षवन्त (ओक्सेंटन Ouxenton) से संबंधित है—लाहा, ज्यॉग्रेफिकल एसेज, पृ० 108.

[6] लाहा, ट्राइब्स इन ऐंश्येंट इंडिया, पृ० 375.

[7] तुलनीय, महाभारत, II, 5-10.

वेत्रवती[1] का वर्णन किया है। निश्चय ही विदिशा[2] नदी वेत्रवती के तट पर स्थित विदिशा नगर से संबंधित थी जो मिलिन्दपञ्हो[3] के अनुसार हिमालय से निकलने वाली 500 नदियों में से एक थी। भूपाल से 34 मील एवं साँची से 8 मील पर स्थित मध्य प्रदेश में रायसेन जिले के अंतर्गत् भिलसा में वेत्रवती के तट पर स्थित भैलस्वामी के मंदिर के कारण निश्चय ही भिलसा नगर का नाम पड़ा होगा।[4] पार्जिटर के अनुसार विदिशा उन अनेक लघु राज्यों में से एक था जिनमें यादव लोग विभिक्त थे।[5] विदिशा के पड़ोस में एव निश्चय ही कपास एवं कपास-उद्योग के लिए प्रसिद्ध आकरावन्ती के अंतर्गत् कार्पासीग्राम[6] नामक एक स्थान था (जिसका वर्णन साँची स्तूप I, के प्राकार (Railing) की तीन अभिलिखित वेदिकाओं में है। अशोक के काल में यह बौद्ध-धर्म का एवं कालांतर में वैष्णव-मत का एक महत्त्वपूर्ण केंद्र बन गया था। बौद्ध-मत में यह प्रथम बार अशोक के कुमारामात्यत्व के संबंध में महत्त्वपूर्ण बना था। पश्चिमी-तट के पत्तनों एवं पाटलिपुत्र तथा प्रतिष्ठान एवं श्रावस्ती के संचार-मार्गों पर इसकी केंद्रीय स्थिति के कारण दशार्ण के मुख्य नगर विदिशा का महत्व था।[7] विदिशा (वेदिसनगर या वेस्सनगर) दक्षिणा-पथ पर एक पड़ाव था।

विदिशा का हाथीदाँत कलाकारी के लिए प्रसिद्ध था[8]। साँची की एक मूर्ति

---

[1] इस नदी का जल पीने की दृष्टि से अच्छा था। इसकी लहरें आनंद से तरंगायित रहती थीं जैसा कि इसके कलकल नाद से गुंजरित होता था (मेघदूत V, 26; तुलनीय, जातक, IV, पृ० 388)। यह नदी यमुना में मिलती थी। इसका बहुत प्रयोग होता था। यहाँ पर अवगाहन के पश्चात् स्नानार्थियों द्वारा परित्यक्त बहुत सी दातौनें मिलती थीं (जातक, सं० 497) उज्जयिनी एवं इस नदी के बीच निर्बिन्ध्या नदी थी (लाहा, ज्यॉग्रेफिकल एसेज, पृ० 114; थार्नटन कृत गजेटियर, ग्वालियर, भोपाल; मेघदूत, I, 28-29; तुलनीय, भागवत पुराण IV, 14-15)।

[2] मार्कण्डेय पुराण, LVII, 20.

[3] ट्रेंक्नर संस्करण, पृ० 114; हिमवन्त पब्बता पंचानदी सतानि सन्दन्ति

[4] एपि० इं०, XXIV, भाग V, जनवरी, 1938, पृ० 231.

[5] ऐंश्येंट इंडियन हिस्टॉरिकल ट्रेडिशन, पृ० 273, एवं पा० टि० 7

[6] ल्युडर्स की तालिका, सं० 260, 515; लाहा, उज्जयिनी, पृ० 8

[7] कैंब्रिज हिस्ट्री ऑव इंडिया, पृ० 523

[8] वही, पृ० 632

विदिशा के हाथीदाँत के शिल्पियों की रचना थी।[1] पेरिप्लस में दोसरेने को हाथीदाँत के लिए विख्यात् बतलाया गया है।[2] यह नगर तीक्ष्ण-धार वाली तलवारों के लिए भी प्रसिद्ध था।[3]

बावरी के सोलह ब्राह्मण शिष्यों ने अन्य स्थानों के साथ विदिशा का भी भ्रमण किया था।[4] स्कन्दपुराण[5] में विदिशा का उल्लेख एक तीर्थ स्थान के रूप में हुआ है जहाँ सोमेश्वर की यात्रा के बाद जाना चाहिए।

विदिशा के अट्ठारह दाताओं ने प्रचुर रूप से भिलसा में बौद्ध-स्तूपों के निर्माण के लिए दान दिया था।[6] भरहुत स्तूप के पहले स्तंभ की पूजा-वेदिका से प्रकट होता है कि यह विदिशा की एक महिला, रेवतीमित्र की पत्नी चम्पादेवी द्वारा प्रदत्त था[7]। इसमें विदिशा से प्रदत्त वेणिमित्र की पत्नी वशिष्ठी[8], फगुदेव, अनुराधा[9] आर्यमा[10] एवं भूतरक्षित[11] के दानों का उल्लेख प्राप्य है।

भिलसा में उदयपुर के नीलकण्ठेश्वर मंदिर का उल्लेख एक प्रस्तर-पट्ट पर अंकित उदयपुर-प्रशस्ति में है।[12] अशोक की पत्नी देवी द्वारा अपने पुत्र[13] के निवासस्थान के लिए निर्मित वेदिस गिरिमहाविहार, संभवतः प्रथम बौद्ध विहार था जिसके बाद भिलसा से 5½ मील दक्षिण-पश्चिम में स्थित साँची के स्तूपों का निर्माण हुआ था। देवी

---

[1] कैं० हिं० इं०, पृ० 643.

[2] शॉफ़, पेरिप्लस ऑव द इरिथ्रियन सी, पृ० 47, 253.

[3] जातक, III, 338, दसण्णकम तिक्खिणधारम असिम्।

[4] सुत्तनिपात, श्लोक, 1006-1013.

[5] बंगवासी संस्करण, पृ० 2767-68.

[6] ल्युडर्स की तालिका, उद्धरणों के प्रतिभौगोलिक अनुक्रमणी।

[7] बरुआ ऍंड सिन्हा, भरहुत इंस्क्रिप्शंस, पृ० 3, वेदिसा चापादेवाय (चापदेवाय) रेवतीमितभारियाय, पठमो थभो दानम्।

[8] बरुआ ऍंड सिन्हा, भरहुत इंस्क्रिप्शंस, पृ० 35—वेदिसा वासिठिया वेलिमितभारियाय दानम्।

[9] वही, पृ० 14—वेदिसा फगुदेवस दानम्; वेदिसा अनुराधाय दानम्।

[10] वही, पृ० 17, वेदिसा अयमाय दानम्।

[11] वही, पृ० 20, वेदिसातो भूतरक्खितस दानम्।

[12] एपि० इं०, I, 233.

[13] थूपवंस, पृ० 44.

द्वारा उत्पन्न अशोक का पुत्र महिंद इस विहार में एक मास तक रुका था।[1] वह वहाँ पर अपनी माँ से मिलने आया जिसने अपने प्रियपुत्र का स्वागत किया था और उसे स्वयं अपने द्वारा बनाया हुआ भोजन खिलाया था।[2] वेदिस-गिरि से वह सिंहल गया।[3] वेदिस में हत्थाल्हकाराम[4] नामक एक विहार भी था।

विदिशा अपने स्तूपों के लिए सुविख्यात है, जिसमें (1) भिलसा से 5 मील दक्षिण-पश्चिम में स्थित साँची के स्तूप, (2) साँची से 6 मील दक्षिण-पश्चिम में सोनारी स्तूप; (3) सोनारी से तीन मील दूर सतधार स्तूप; (4) भिलसा से 6 मील दक्षिण-दक्षिण-पूर्व में स्थित भोजपुर स्तूप; (5) और भिलसा से 9 मील पूरब-दक्षिण-पूर्व में स्थित अंधेर स्तूप संमिलित है।[5] रेवतीमित्र संभवत: विदिशा में नियुक्त शुङ्ग-मित्र कुल का एक सदस्य था।

भारतीय पुरातत्व-सर्वेक्षण के तत्कालीन महानिदेशक जे० एच० मार्शल को बेसनगर से पाषाण-स्तंभ पर अंकित एक अभिलेख उपलब्ध हुआ था। इस अभिलेख में दिओन के पुत्र, यूनानी राजदूत हैलियोडोरस द्वारा इसके अभिषेक के बारहवें वर्ष में कृष्ण-वासुदेव के सम्मान में गरुड-मंडित एक स्तंभ के निर्माण का उल्लेख है।[6] तक्षशिला-निवासी हेलियोडोरस को यूनानी नरेश अंतियाल-सिडास ने कौत्सी-पुत्र भागभद्र की सभा में भेजा था जो स्पष्टत: विदिशा में राज्य करता था। यद्यपि वह यूनानी था तथापि उसे भागवत कहा गया है जिसने वी० ए० स्मिथ के मतानुसार 32 वर्षों की एक दीर्घ अवधि तक शासन किया था[7]। इस पर स्वयं उसने अपने नूतन धर्म की कुछ शिक्षाएँ उत्कीर्ण करवायी थी जिसका वरण संभवत: उसने विदिशा में किया था। ये शिक्षाएँ स्तंभ के दूसरी ओर उत्कीर्ण दो पंक्तियों में सन्निहित हैं। पुराणों में वर्णित भागवत भागभद्र का एक भ्रष्ट रूप हो सकता है जो विदिशा में युवराज की हैसियत से राज्य

---

[1] दीप, VI, 15; XII, 14; 35; समन्तपासादिका, I, 70, 71; तुलनीय, महावंस कॉमेंट्री, पृ० 321.

[2] महावंस, अध्याय, 13 श्लोक, 6-11, दीप, अध्याय 6, 15-17; अध्याय, 12, श्लोक, 14.

[3] महाबोधिवंस, 116; थूपवंस, 43.

[4] वही, पृ० 169.

[5] कनिंघम, भिलसा टोप्स, पृ० 7.

[6] आर्क्यॉलॉजिकल सर्वे रिपोर्ट I, 1913-1914, भाग, II, पृ० 190.

[7] अर्ली हिस्ट्री ऑव इंडिया, चतुर्थ संस्करण, पृ० 214.

करने वाला कोई शुङ्ग राजकुमार हो सकता है जैसे कालिदास के मालविकाग्निमित्र के अनुसार उसका एक पूर्वज अग्निमित्र अपने पिता पुष्यमित्र के शासनकाल में था। वी० ए० स्मिथ ने भागवत जो कि भागभद्र है, की तिथि 108 ई० पू० बतलाया है।[1] जे० एच० मार्शल जिन्होंने इस प्राचीन स्थल का निरीक्षण किया था, का ध्यान प्रमुख स्थल से थोड़ा पूर्वोत्तर में और बेतवा नदी की एक शाखा द्वारा विभक्त एक विशाल टीले के समीप स्थित एक प्रस्तर स्तंभ की ओर आकर्षित किया गया था। इस स्तंभ का नाल एकाश्म है जिसका आधार अष्ठकोणीय, मध्य षोडशकोणीय एवं शीर्ष बत्तीस कोणीय है जिसमें एक माला ऊपरी एवं मध्यवर्ती भागों को विभक्त करती है। इसका शीर्ष पर्सीपोलिस की घंटाकार शैली का है जिसको एक विशाल शीर्ष-फलक मंडित करता है जो अद्भुत अपरिचित आकार वाले एक ताल-पत्र के अलंकरण से सुशोभित है। तीर्थयात्री इस स्तंभ की पूजा पीढ़ी दर पीढ़ी से करते थे। मार्शल का विचार है कि यह स्तंभ गुप्त संवत् से कई शताब्दियों अधिक प्राचीन था।[2] इस अभिलेख में वर्णित राजा भागभद्र काशी की एक महिला का पुत्र था (काशीपुत्रस)। फ्लीट ने काशीपुत्रस का अर्थ काशी जनों की किसी महिला का पुत्र अथवा काशी नरेश की पुत्री का पुत्र माना है।[3]

विडूडभ[4] से भयान्वित शाक्यों ने विदिशा में शरण ली थी। जब अशोक अवन्ती के मौर्य उपराजा के रूप में कार्यभार सँभालने उज्जयिनी जा रहा था, तब वह विदिशा नगर में रुका था।[5] यहाँ पर उसने विदिशा के देव नामक एक श्रेष्ठिन् की तरुणी कन्या[6] देवी से विवाह किया था जो महान् व्यक्तियों के लक्षणों से युक्त थी। महाबोधिवंस (पृ० 98, 110) के अनुसार उसे वेदिस-महादेवी के रूप में सम्मानित किया जाता था एवं इसे शाक्य राजकुमारी बतलाया जाता

---

[1] ज० बां० ब्रां० रा० ए० सो० भाग, XXIII, पृ० 104-106.

[2] ज० रा० ए० सो०, पृ० 1053-56.

[3] ज० रा० ए० सो०, 1910, पृ० 141-142.

[4] महाबोधिवंस, पृ० 98.

[5] संमतपासादिका, I, पृ० 70.

[6] महावंस कामेंटरी I, पृ० 324—वेदिसगिरिनगरे देवनामकस्स सेठ्ठिस घरे निवासम उपगन्त्वा तस्स सेठ्ठिस्स धितरम लक्खणसम्पन्नम यौब्बनप्पत्तम वेदिसदेवीम नाम कुमारिकम दिस्वा ताय पाटिबद्धचित्तों मातापितुनम कथापेत्वा तम तेहि दिन्नम पतिलभित्वा ताय साधिम समवासम कप्पेसि।

था। देवी उज्जमिनी ले जायी गई जहाँ उसने महिंद नामक एक पुत्र एवं तदनंतर दो वर्षों के बाद संघमित्ता[1] नामक एक पुत्री को जन्म दिया था। देवी विदिशा में रुक गयी थी किंतु उसके बच्चे अपने पिता के साथ पाटलिपुत्र आये जब उसने पाटलिपुत्र पर अधिकार कर लिया। संघमित्ता का विवाह अशोक के भानजे (भागिनेय्यो)[2] अग्निब्रह्मा के साथ हुआ था और सुमन नामक उनके एक पुत्र उत्पन्न हुआ था। डा० बरुआ ने ठीक ही बतलाया है कि इस विषय में संस्कृत आख्यान एवं अशोक के अभिलेख मौन हैं।[3] अशोक के राज्याभिषेक के समय वेदिसमहादेवी उसके बगल में थी।[4] डॉ० बरुआ का विचार है कि देवी के विदिशा निवास से इस विचार को बल मिलता है कि निजी पत्नियाँ विभिन्न नगरों[5] में अपने अलग पारिवारक संस्थान रख सकती थीं।

बेसनगर अभिलेख से तक्षशिला के यवन् राजा एवं विदिशा नरेश में कूट-नीतिज्ञ संबंधों की पुष्टि होती है।[6] रघुवंश (XV, 36) में कहा गया है कि शत्रुघातिन एवं सुबाहु नामक शत्रुघ्न के दो पुत्र मथुरा एवं विदिशा के अधिपति नियुक्त किये गये थे। विदिशा-नरेश के साथ वैशाली के राजा करंधम के पुत्र अवीक्षित की प्रगाढ़ शत्रुता थी और अवीक्षित बंदी बनाया गया था। करंधम ने अपने पुत्र को छुड़ाया था। पार्जिटर की धारणा है कि मार्कण्डेय पुराण के अनुसार (121-131) विदिशा के एक स्वयंवर से झगड़े का सूत्रपात हुआ था।[7] प्रायः करंधम के काल में यादव शाखा के राजा वैशाली-नरेश परावृत ने अपने सबसे छोटे दो बच्चों को विदिशा भेज दिया था, विदेह नहीं।[8]

[1] महाबोधिवस, 98-99; थूपवंस, 43.

[2] महावंस, V, पृ० 169.

[3] अशोक ऐंड हिज इंस्क्रिप्शंस, पृ० 51-52.

[4] वही, पृ० 53.

[5] वही, पृ० 53.

[6] कैंब्रिज हिस्ट्री ऑव इंडिया, पृ० 558.

[7] ऐंश्येंट इंडियन हिस्टॉरिकल ट्रेडिशन, पृ० 268, पा० टि० 4.

[8] वही, पृ० 268-69; मार्कण्डेयपुराण, सर्ग, CXXII, श्लोक, 20-21, में इस तथ्य का और अधिक स्पष्टीकरण किया गया है। यह बतलाया गया है कि जब वेदिश-राजा विशाल की पुत्री वैशालिनी अपने स्वयंवर में उपयुक्त क्षण की प्रतीक्षा कर रही थी, करंधम के पुत्र अवीक्षित ने उसका अपहरण कर लिया। इसी पुराण में और आगे बतलाया गया है कि अवीक्षित बंदी बनाया गया था। राजा विशाल के साथ सभी राजाओं ने उसे बंदी बनाकर प्रसन्नतापूर्वक वैदिशनगर में प्रवेश किया।

साहित्य एवं अभिलेखों में शुङ्ग लोग विदिशा के राज्य से विशेष रूप से संबद्ध हैं।[1] मालविकाग्निमित्र में अपने पिता पुष्यमित्र[2] के उपराजा एवं विदिशा के राजा अग्निमित्र का विदर्भ (बरार) की राजकुमारी मालविका के प्रति प्रेम का उल्लेख है जो उसकी राज-सभा में प्रच्छन्न रूप से रहती थी। 170 ई० पू० में विदिशा एवं विदर्भ में एक युद्ध हुआ था जिसमें विदिशा की विजय हुयी थी। यज्ञसेन के एक चचेरे भाई एवं अग्निमित्र के समर्थक माधवसेन को बंदी बनाया गया था और उसे यज्ञसेन के प्रांतपाल के यहाँ बंदी रखा गया जबकि वह (माधवसेन) विदिशा जा रहा था। इससे शुङ्ग-नरेश अग्निमित्र ने वीरसेन को विदर्भ पर आक्रमण करने के लिए कहा। यज्ञसेन पराजित हुआ एवं विदर्भ का राज्य उसके दो चचेरे भाइयों में बाँट लिया गया।[3] विदिशा में अपने पिता के उपराजा के रूप में शासन करने के अनंतर अग्निमित्र ने उसके उत्तराधिकारी के रूप में आठ वर्षों तक राज्य किया था।[4] विदिशा-नरेश काशीपुत्र (काशी की एक राजकुमारी का पुत्र था)।[5] शुङ्गों ने विदिशा में मूलरूप से मौर्यों के सामन्तों के रूप में राज्य किया था।[6] पुष्यमित्र एवं अग्निमित्र दोनों ही विदिशा के थे।

पुराणों में एक अनुश्रुति मिलती है जिसमें शुंग-सत्ता की समाप्ति के पश्चात् विदिशा में शिशुनन्दि नामक व्यक्ति के शासन का प्रारंभ बतलाया गया है। उनसे हमें यह ज्ञात होता है शुङ्गों की अवशिष्ट सत्ता विदिशा में काण्वों की सत्ता के साथ-साथ चलती रही। साधारणतया यह माना जाता है कि पहले विदिशा एवं तदनंतर उज्जयिनी चन्द्रगुप्त द्वितीय का सरकारी मुख्यावास था।[7]

प्राचीन विदिशा में मौर्यों के उत्कर्ष के थोड़ा पहले से कम से कम गुप्त सत्ता के प्रारंभ तक—कोई 600 वर्षों से अधिक—ताम्र-कार्षापण परिनिष्ठित सिक्का था।[8] बेसनगर (प्राचीन विदिशा) से पंचाहत मुद्राएँ प्राप्त हुयी थीं। इन मुद्राओं

---

[1] ज० रा० ए० सो० 1909, पृ० 1053-56.

[2] मालविकाग्निमित्र, पंचम अंक, 20.

[3] लाहा, इंडोलॉजिकल स्टडीज़, भाग, I, पृ० 50.

[4] कैं० हि० इं०, पृ० 520.

[5] वही, पृ० 522.

[6] वही, पृ० 522

[7] रायचौधरी, पोलिटिकल हिस्ट्री, चतुर्थ संस्करण, पृ० 468.

[8] भंडारकर, कार्माइकेल लेक्चर्स, 1921, पृ० 88.

पर उनका निजी चिह्न अंकित होता था। उनके चौथी शताब्दी ई० तक के स्तर थे।[1] बेसनगर से उपलब्ध कार्षापण नदी तट पर टंकित प्रतीत होता है। उनके ऊपर एक वक्र चिह्न होता था जिससे नदी का तट संकेतित होता था।[2] डा० भंडारकर का अभिमत है कि ताँबेके मूल्य की वृद्धि के कारण प्राचीन विदिशा नगर के कुछ युगों में ताम्र कार्षापणों का वजन घटा दिया गया था।[3]

वेदिशगिरि—यह एक पर्वत था जिस पर महिंद की माता ने वेदिशगिरि-महाविहार का निर्माण कराया था। समन्तपासादिका (पृ० 70) के अनुसार महिंद यहाँ रुके थे और वह यहीं से तंबपण्णी गये थे।

वेत्रवती (पालि, वेत्तवती)—इस नदी का वर्णन मार्कण्डेयपुराण (पृ० 20, 57) एवं मिलिन्दपञ्ह (पृ० 114) में भी हुआ है। निस्संदेह यह कालिदास के मेघदूत में वर्णित (पूर्वमेघ, श्लोक, 25) वेत्रवती के समान है। यह आधुनिक बेतवा है जो भूपाल के निकट से निःसृत होती है और यमुना में मिलती है। पुराणों के अनुसार यह पारिपात्र पर्वत से निकलती है। बाण ने अपनी कादम्बरी में बतलाया है कि यह नदी विदिशा से होकर बहती है (एम० आर० काले द्वारा संपादित, बंबई, पृ० 14)। साँची से आठ मील एवं भूपाल से 34 मील दूर मध्य प्रदेश में रायसेन के समीप भिलसा में इसके तट पर भैलस्वामी का मंदिर स्थित था। इससे ही इस नगर का नाम भिलसा पड़ा होगा।[4] वेत्रवती नदी के तट पर वेत्रवती नगर स्थित था।[5] वेत्रवती नगर के निकट ही एक ब्राह्मण रहता था जो अपने वंश पर अत्याधिक गर्व करता था किंतु उसका दर्प चूर्ण कर दिया गया था।[6]

वेयघन—यह अञ्जनवती से तीन मील दक्षिण में वैगाँव है।[7]

विदर्भ—यह आधुनिक बरार है। दण्डिन् के अपने काव्यादर्श (I, 40) में विदर्भ के निवासियों का उल्लेख किया है। पुराणों[8] के अनुसार यहाँ के लोग

---

[1] वही, पृ० 185.

[2] वही, पृ० 100-01.

[3] वही, पृ० 161.

[4] एपि० इं०, XXIV, भाग, V, जनवरी, 1938, पृ० 231.

[5] जातक, IV, पृ० 388.

[6] जातक, IV, पृ० 388 और आगे।

[7] एपि० इं०, XXIII, भाग, I, जनवरी, 1935.

[8] मत्स्यपुराण, 114-46-48; वायु, 45, 126, मार्कण्डेय, 57, 45-48.

पुलिन्दों, दण्डकों, विन्ध्यों एवं अन्य जनों के साथ दक्षिणापथवासी थे। पतञ्जलि ने अपने महाभाष्य (I, 4. 1, पृ० 634) में वैदर्भ का वर्णन किया है। योगिनी-तंत्र में (2.4) भी इसका एक उल्लेख है। भागवतपुराण (IV, 28, 28; IX, 20, 34; X. 52, 21, 41; X, 84, 55) में एक देश के रूप में इसका वर्णन हुआ है। बृहत्संहिता (XIV 8) में भी इसका वर्णन है। महाभारत के अनुसार विदर्भ नल की रानी दमयंती का राज्य था। विदर्भ देश में भोज राजवंश का एक रत्न पुण्यवर्मन रहता था जो साक्षात् गुण का अंशावतार था। वह मनसा-कायसा शक्तिशाली, सच्चा, आत्म संयमी, शानदार, उन्नत एवं पुरुषार्थी था। वह लोगों को अनुशासित बनाता था और श्रेष्ठ जनों को ही अपना आदर्श बनाता था। वह बुद्धिमानों का संरक्षक, भृत्यों को प्रभावित, अपने संबंधियों को सौख्य एवं शत्रुओं को संताप देता था। वह तर्कहीन वार्ताओं के प्रति वधिर था एवं उसकी गुण-पिपासा अशमनीय थी। वह आचारपरक एवं आर्थिक विषयों का गंभीर आलोचक था। वह सजगतापूर्वक सभी अधिकारियों पर नियंत्रण रखता था एवं विवेकशील व्यक्तियों को दान एवं सम्मान देकर प्रोत्साहन देता था। वह मनुष्य के जीवन को योग्य कर्मों से संपन्न बनाता था।[1] कालिदास ने अपने मालविकाग्निमित्रम् (V अंक, 20) में हमें यह बतलाया है कि शुङ्गवंश की स्थापना विदर्भ में एक नये राज्य की स्थापना के साथ हुयी थी। अग्निमित्र के मंत्री ने उक्त राज्य को अचिराधिष्ठित एवं इसकी समानता एक नये संरोपित वृक्ष से की है (नव संरोपणशिथिलस्तरु)। विदर्भ के राजा को मौर्य-मंत्री का संबंधी एवं शुङ्गों का सहजशत्रु (प्रकृत्यमित्र) बतलाया गया है।[2] बृहद्रथ मौर्य के राज्यकाल में मगध-साम्राज्य में दो दल थे जिनमें एक का नेता राजा का मंत्री एवं दूसरे का उसका सेनापति था। मंत्री द्वारा समर्थित यज्ञसेन को विदर्भ का राज्यपाल नियुक्त किया गया था। जब सेनापति ने राज-सिंहासन का अपहरण कर लिया तब उसने (यज्ञसेन) अपनी स्वतंत्रता घोषित कर दी एवं अपहर्त्ता कुल के साथ संघर्ष प्रारंभ किया। यज्ञसेन के चचेरे भाई एवं अग्निमित्र के समर्थक कुमार माधवसेन को, जब वह विदिशा जा रहा था, यज्ञसेन के प्रांतपाल ने बंदी बनाकर कैद कर लिया। इससे शुंग-नरेश अग्निमित्र ने वीरसेन को विदर्भ पर आक्रमण करने को कहा। यज्ञसेन पराजित हुआ

---

[1] दशकुमारचरितम, पृ० 180

[2] हे० चं०, रायचौधरी, पोलिटिकल हिस्ट्री ऑव ऐंश्येंट इंडिया, चतुर्थ संस्करण, पृ० 309.

और विदर्भ-राज्य को दोनों चचेरे[1] भाइयों में बाँट दिया गया और वरदा नदी इन दोनों राज्यों की सीमा बनी। नासिक-गुहालेख के अनुसार रानी गौतमी बलश्री के पुत्र ने विदर्भ पर विजय प्राप्त की थी (रायचौधरी, पो० हि० एं० इं०, चतुर्थ संस्करण, 309 और आगे; बि० च० लाहा, इंडोलॉजिकल स्टडीज़, भाग, I, पृ० 50)। अधिक विवरण के लिए द्रष्टव्य, लाहा, ट्राइब्स इन ऐंश्येंट इंडिया, पृ० 49, 100, 123, 174 एवं 389.

विलापद्रक—इसकी पहचान शेरगढ़ से लगभग 11 मील दक्षिण दक्षिण-पूर्व में स्थित बिलंडि से की जा सकती है। कुछ लोगों ने इसे शेरगढ़ से लगभग 25 मील पूरब में स्थित बिलवारो नामक गाँव से समीकृत किया है (एपि० इं०, XXIII, भाग, IV, अक्टूबर, 1935, पृ० 135)।

विन्ध्यवल्ली—यह बिझोली का प्राचीन नाम है। लोकप्रिय रूप से इसे बिजोलिया या बिजोलिआ कहा जाता है (एपि० इं०, XXVI, भाग, III, 101)।

वोढग्राम—(एपि० इं०, X, 78-79)—यह दक्षिण राजस्थान के सत्यपुर-मण्डल में है और अतिसंभवतः इसकी पहचान बोदन से की जा सकती है।

व्याघ्रेरक—इसकी पहचान अजमेर से लगभग 47 मील दक्षिण-पूर्व में आधुनिक बाघेर से की जा सकती है (एपि० इं०, XXVI, भाग, III, जलाई, 1941)।

वडगाँव—यह चाँदा जिले की वरोरा तहसील में है जहाँ से वाकाटक प्रवरसेन द्वितीय के अभिपत्र उपलब्ध हुये थे (एपि० इं०, XXVII, भाग, II, पृ० 74)।

यौधेय—यौधेयगण एक गणतंत्रात्मक जन थे जो प्रसिद्ध व्याकरणी पाणिनि के काल में भी थे (पाणिनि का सूत्र, 5.3.116-117)। उनका जातीय संघटन बाद में चौथी शताब्दी ई० तक यथावत बना रहा जबकि समुद्रगुप्त के इलाहाबाद स्तंभ-लेख में मालवों, अर्जुनायनों, मद्रकों, आभीरों एवं अन्य गणतंत्रात्मक प्रजातियों के समकक्ष उनका वर्णन हुआ है। छठीं शती ई० में भी इनका वर्णन इसी प्रकार से मिलता है जैसा कि हमें वराहमिहिर की बृहत्संहिता (XIV, 28) से ज्ञात होता है।

इस जन का संभवतः सर्वप्राचीन उल्लेख पाणिनि ने किया है। पाणिनि के न प्राच्य भर्गादि यौधेयादिभ्यः, (IV, 1, 178) में यौधेयादि शब्द में दो कबीले

---

[1] **मालविकाग्निमित्रम, एस० एस० अय्यर द्वारा संपादित, पृ० 14 और आगे।**

यौधेय एवं त्रिगर्त्त संमिलित हैं। सूत्रों में अन्यत्र कहीं (V, 3.117) त्रिगर्त्तों समेत यौधेयों को एक आयुधजीवीसंघ कहा गया है जो प्रमुखरूप से शस्त्रजीवी एक वीर जाति थी। इस कबीले की ऐतिहासिक परंपरा और अधिक प्राचीन है। पुराणों में[1] यौधेयों को उशीनर से अवतरित बतलाया गया है। हरिवंश में भी (हरिवंश, अध्याय, 32; तुलनीय, पार्जिटर मार्कण्डेयपुराण, पृ० 380) यौथयों को उशीनरों से संबंधित बतलाया गया है। पार्जिटर का विचार है कि राजा उशीनर ने पंजाब की पूर्वी सीमा पर यौधेयों, अंबष्ठों, नवराष्ट्रों के पृथक राज्यों एवं कृमिल नगर की स्थापना की थी और उसके प्रसिद्ध पुत्र शिवि औशीनर ने शिवियों को शिवपुर में उत्पन्न किया था (ऐं० इं० हि० ट्रे०, पृ० 264)। त्रिगर्त्तों, अंबष्ठों एवं शिवियों के साथ यौधेयों के संबंध से पंजाब में उनके सन्निवेश की पुष्टि होती है। महाभारत में बतलाया गया है कि (द्रोणपर्व, अध्याय, 18, 16; कर्णपर्व) अध्याय, 5, 48) अर्जुन ने मालवों एवं त्रिगर्तों समेत यौधेयों को पराजित किया था। सभापर्व (अध्याय, 52, 14-15) में शिवियों, त्रिगर्तों एवं अंबष्ठों के साथ उन्हें एकत्रित होकर युधिष्ठिर के प्रति सम्मान निवेदित करते हुये बतलाया गया है। महाभारत में अन्यत्र कहीं (द्रोण-पर्व, अध्याय, 159, 5) इस कबीले का वर्णन अद्रिजों (यूनानियों के अद्रैस्टाई ?), मद्रकों एवं मालवों के साथ किया गया है (यौधेयानाद्रिजान राजन मद्रकान मालवानपि)।

बृहत्संहिता में यौधेयों को आर्जुनायनों के साथ भारत के उत्तराखण्ड में स्थित बतलाया गया है। वे टॉलेमी द्वारा वर्णित पंजाब में निवास करने वाली पैंडनोई या पाण्डव जाति से संबंधित रहे होंगे (इंडियन एंटिक्वेरी, XIII, 331, 349)। महाभारत में यौधेय युधिष्ठिर के एक पुत्र का नाम प्रतीत होता है (आदिपर्व, अध्याय, 95, 76)[2]।

यौधेय जाति की मुद्राओं के साक्ष्य के आधार पर कनिंघम ने[3] यौधेयों को जोहिया राजपूतों एवं उनके देश को मुल्तान के परिवर्ती जिले जोहियाबार (त्र्यौधेय-वर) से समीकृत किया है।[4] उनके अनुसार जोहिया तीन जातियों में विभक्त

---

[1] **ब्रह्माण्डपुराण, III, अध्याय, 74; वायु पुराण, अध्याय, 99; ब्रह्मपुराण, अध्याय, 13; मत्स्यपुराण, अध्याय, 48; विष्णुपुराण, अध्याय, 17 आदि।**

[2] **रायचौधरी, पो० हि० ऐ० इं०, चतुर्थ संस्करण, पृ० 457.**

[3] **ऐ० ज्यॉ० इं०, पृ० 281-282.**

[4] **अलन, क्वायंस ऑव इंडिया, पृ० cli,**

है और वह अपने इस समीकरण का एक सबल प्रमाण यौधेयजाति की मुद्राओं में प्राप्त करते हैं जिनमें तीन विभिन्न जातियों के अस्तित्व का परिचय मिलता है।

रुद्रदामन के जूनागढ़-शिलालेख[1] में यौधेयों का भी वर्णन है जहाँ शक-राजा ने यौधेयों का उन्मूलन कर देने का दंभ भरा है। उनके विषय में हमें बिजयगढ़ शिलालेख से ज्ञात होता है (का० इं० इं०, जिल्द, III, पृ० 250-51) कि इन्होंने भरतपुर के समीप बिजयगढ़ क्षेत्र पर अधिकार कर लिया था।[2] इससे संभवतः यह प्रकट होता है कि इस शक्तिशाली कबीले का अधिकार सुदूर दक्षिण तक था, अन्यथा शक-क्षत्रपों से इनका संघर्ष संभव न होता। किंतु शक-आक्रमण के प्रवाह में यह गणतंत्रात्मक कबीला नहीं बह सका जो कम से कम समुद्रगुप्त के काल तक अस्तित्वशील रहा। समुद्रगुप्त के इलाहाबाद-स्तंभलेख में आर्यावर्त्त के पश्चिमी एवं दक्षिणी-पश्चिमी सीमांत पर स्थित जातीय राज्यों की सूची में यौधेय भी संमिलित है जो समुद्रगुप्त को आदर करते थे।[3] कुछ लोगों के अनुसार, यौधेय लोग उस क्षेत्र में रहते थे जिसकी पहचान मोटे तौर पर पूर्वी पंजाब से की जाती थी।[4] अधिक विवरण के लिए द्रष्टव्य, बि० च० लाहा, इंडोलॉजिकल स्टडीज़, भाग, I, 56 और आगे।

येक्केरि—यह गाँव बेलगाँव जिले के परासगढ़ तालुक के मुख्य नगर सौन्दत्ति से लगभग चार मील उत्तर एवं पूरब में स्थित है (एपि० इं०, V, पृ० 6)।

---

[1] एपि० इं० भाग, VIII, पृ० 36 और आगे।

[2] पुरालिपि की दृष्टि से यह अभिलेख पुराना है। इसकी लिपि तथाकथित इंडो-शक प्रकार की है। इस अभिलेख में उल्लिखत यौधेय कबीले के नेता को 'महाराज' एवं 'महासेनापति' की उपाधि दी गयी है। तुलनीय, ज० रा० ए० सो०, 1897, 30.

[3] तुलनीय, रायचौधरी, पो० हि० एँ० इं०, चतुर्थ संस्करण, पृ० 457.

[4] मोतीचन्द्र, ज्याँग्रेफ़िक ऐंड इकॉनॉमिक स्टडीज़ इन द महाभारत, पृ० 94.

VI

परिशिष्ट

* प्राचीन भारत का ऐतिहासिक भूगोल (परिशिष्ट)

लेे० : डॉ० बि० च० लाहा

अनुवर्ती पृष्ठों में विविध साधनों से उपलब्ध अतिरिक्त भौगोलिक सामग्री को क्रमबद्ध एवं वर्णक्रमानुसार विभिन्न क्षेत्रों के अंतर्गत् जिनसे वे संबंधित हैं, व्यवस्थित करके संकलित करने का प्रयास किया गया है। वे पूर्णतः सप्रमाणित हैं और उन्हें सोसायटी डी पेरिस से 1954 में प्रकाशित मेरी पुस्तक, 'हिस्टॉरिकल ज्यॉग्रेफी ऑव ऐंश्येंट इंडिया' का परिशिष्ट मानना चाहिए। हमारा विश्वास है कि इस पत्रक में समाविष्ट अतिरिक्त सामग्री प्राचीन भारत में अभिरुचि रखने वाले भूगोलवेत्ताओं एवं इतिहासकारों के लिए अतीव सहायक होगी। प्राचीन यूनानियों के भारत विषयक विवरण बहुत मूल्यवान हैं। हमने इस विषय का विशद् विवेचन अपनी नवीन पुस्तक 'इंडोलॉजिकल स्टडीज़' भाग, IV, अध्याय, I) में किया है।

उत्तरी भारत

अचिरवती—जैन धर्म ग्रंथ, थानङ्ग (5.470) में इस नदी को जैन आवी या आदी कहा गया है। यह एरावै, अचिरावती या अजिरवती ही प्रतीत होती है। हमने इस नदी का विशद विवरण पी० के० गोड कम्मेमोरेशन वाल्यूम, पृ० 233 और आगे में किया है। मेरी पुस्तक इंडोलॉजिकल स्टडीज़, भाग, IV, अध्याय, IX, भी द्रष्टव्य है।

अद्धिस्तान—यह काश्मीर की राजधानी है जिसे श्रीनगर[1] से समीकृत किया जाता है।

*** यह अंश जर्नल ऑव इंडियन हिस्ट्री, जिल्द XLI भाग, I, अप्रैल, 1963. क्रम सं०. 121, से पुनर्मुद्रित है।**

[1] लाहा, अलबिरुनीज़ नॉलेज ऑव इंडियन ज्यॉग्रेफी, पृ० 10.

अहिच्छत्र—अ० घोष एवं के० सी० पाणिग्रही कृत 'पॉटरी ऑव अहिच्छत्र, डिस्ट्रिक्ट बरेली, उ० प्र०; आर्क्यॉलॉजिकल सर्वे ऑव इंडिया का मुख पत्र ऐंश्येंट इंडिया, नं० 1, जनवरी, 1946, पृ० 37 और आगे; और वा० शा० अग्रवाल कृत टेराकोटा फिगरिंस ऑव अहिच्छत्र, डिस्ट्रिक्ट बरेली, यू० पी०, आर्क्यॉलॉजिकल सर्वे ऑव इंडिया का मुख पत्र ऐंश्येंट इंडिया, नं० 4, जुलाई, 1947, जनवरी, 1948, पृ० 104 और आगे भी द्रष्टव्य है।

ऐरावती—कुछ लोगों ने इसे कंबिस्थोली (कपिस्थल) राज्य से प्रवाहित होने वाली रावी नदी से (एरिअन की हाइड्राओटीस) समीकृत किया है। एरिअन एवं डायोडोरस को विज्ञात हाइफेसिस, प्लिनी एवं कर्टिअस की हाइपेसिस, स्ट्रैबो, की हाइपैनिस तथा अन्य क्लासिकल लेखकों की बिपासिस (संस्कृत, विपाशा) को आत्मसात करके केकियन (उत्तर पंजाब के केकय देश) देश से निकलकर अस्ट्रिबाई तथा सरंगीज देशों से प्रवाहित होती हुई यह अकेसिनीज (आधुनिक चेनाब) नदी में गिरती थी।[2]

अक्कस्थली—जैन निशीथचूर्णी, II, पृ० 23 के अनुसार यह मथुरा में थी।

अङ्गद पुर—कालिदास ने परोक्षतः अपने रघुवंश (XV, 90) में उसका उल्लेख किया है।

अरवाल—यह काश्मीर-गन्धार में स्थित एक झील है।[3]

अरिष्टपुर (अरिट्ठपुर)—जैन पण्हा-वागरनैम (4. पृ० 88) की टीका में वर्णित यह एक नगर है।

अष्टावक्र-आश्रम[4]—यह आश्रम हरिद्वार से चार मील पहले स्थित था। कुछ लोगों की धारणा है कि यह गढ़वाल में श्रीनगर के समीप पौड़ी में स्थित था।

अत्रि-आश्रम—रामायण (II, 117.5) में इसका वर्णन है। यह आश्रम दक्षिण भारत में था। यहाँ पर राम, लक्ष्मण एवं सीता आये थे जबकि अत्रि ऋषि अनुसूया के साथ यहाँ रहते थे। वहाँ पर अनेक तपस्वी अध्यात्मिक तपश्चर्या में लीन रहते थे।

अविमुक्त—यह वाराणसी में एक सुप्रसिद्ध तीर्थस्थान था।[5]

---

[2] रामायण, II, 68, 19-22; VII, अध्याय, 113 और 114.

[3] समन्तपासादिका, पा० टे० सो०, I, 65.

[4] महाभारत, अनुशासनपर्व, 25.41.

[5] एपि० इं०, XXXII, भाग, VI, अप्रैल, 1958.

आदित्यतीर्थ—यह सरस्वती नदी के तट पर स्थित था।[6]

आलवी—यहाँ पर जैन धर्म के प्रवर्त्तक महावीर आये थे।

आमलकप्प—यहाँ पर महावीर आये थे। इसकी पहचान अल्लकप्प से की जाती है जो वेठदीप के समीप था। बील (सी-यू-की) के अनुसार दोण नामक ब्राह्मण का जन्मस्थान वेठदीप शाहाबाद जिले में मसार से वैशाली जाने वाले मार्ग पर स्थित बतलाया जाता है।[7]

आपया—यह कुरुक्षेत्र की सात या नौ पवित्र नदियों में से एक है।[8] आपया दृषद्वती एवं सरस्वती नदियों के साथ कुरुक्षेत्र की सीमाओं में प्रवाहित होने वाली नदी थी।[9] ऋग्वेद (iii,23. 4) में इस नदी का वर्णन केवल एक बार हुआ है। पिशेल ने इस नदी को कुरुक्षेत्र में बतलाया है। महाभारत में इस नदी का वर्णन आपगा के नाम से हुआ है (वनपर्व, LXXXIII, 6038-40; कनिंघम, आर्क्० सर्वे० इं०, रि०, XIV, 88; पार्जिटर द्वारा अनूदित मार्कण्डेय पुराण, पृ० 293)। महाभारत[10] के अनुसार सिद्धात्माएँ इस पवित्र नदी का प्रयोग करती थीं। लुडविग (ऋग्वेद का अनुवाद, 3. 200) इसे आपगा से समीकृत करने के पक्ष में है किंतु त्सिमर ने इसे ठीक ही सरस्वती के समीप स्थित बतलाया है।[11]

आर्जीका—(अर्जीकीय)—हिलेब्रांत के अनुसार यह कश्मीर में या उसके समीप स्थित एक देश था।[12] कुछ लोग आर्जीकीया को एक नदी का नाम मानते हैं। त्सिमर नदी की स्थिति नहीं बतलाते और पिशेल ने इसके समीकरण की संभावना अस्वीकार की है। हिलेब्रांत इसे ऊपरी सिन्धु मानते हैं।

आत्रेयी—आत्रेयी नदी दिनाजपुर जिले से होकर प्रवाहित होती है। यह तिस्ता नदी की एक शाखा है। उत्तर से बहने वाली लघु यमुना और यह नदी

---

[6] **महाभारत, शल्यपर्व, 49. 17.**

[7] **धम्मपद कामेंटरी, हार्वर्ड ओरियंटल सीरीज, 28, पृ० 247; लाहा, ज्यॉग्रेफी ऑव अर्ली बुद्धिज्म, पृ० 25; नं० ला० दे, ज्यॉग्रेफिकल डिक्शनरी, पृ० 30.**

[8] **महाभारत, वनपर्व, 83, 68; वामनपुराण, 34. 7.**

[9] **महाभारत, III, 83, 68; पिशेल, वेदिशे स्टूडियेन, 2. 218.**

[10] **वनपर्व, 88, श्लोक, 68;—आपगा नाम विख्याता नदी सिद्धनिषेविता।**

[11] **वेदिक इंडेक्स, I, पृ० 58.**

[12] **वेदिक इंडेक्स, I, 62-63; वेदिशे माइथॉलोजी, I, पृ० 126-137.**

राजशाही जिले (बंगला देश) में परस्पर मिलती है। इस संयुक्त प्रवाह में दो छोटी उपनदियाँ मिलती हैं, एक दाईं ओर से और दूसरी बाँई ओर से। यहाँ से नतोर के पूर्व में यह दो शाखाओं में विभक्त हो जाती है।[13]

बभ्रुतीर्थ—यह उस स्थान पर स्थित है जहाँ माही नदी समुद्र में मिलती है।[14]

बदरिकाश्रम—यह आधुनिक बद्रीनाथ है जो श्रीनगर के 55 मील पूर्वोत्तर में परगनामहल्ला पैनखण्डा में स्थित एक गाँव है।[15] आनंदभट्ट के बल्लालचरित (II. 7) के अनुसार यह आश्रम गढ़वाल में केदार के निकट गंगातट पर स्थित देवदारुवन या दारुवन में स्थित है।[16]

बाल्हीक—अथर्ववेद (V, 22. 5. 7. 9) में वर्णित यह एक कबीले का नाम है। बाल्हीक एक उत्तरी जन थे। त्सिमर के अनुसार इस मामले में ईरानी प्रभाव का अनुमान नहीं करना चाहिए।[17]

बल्ख—(फो-हो)[18]—यह देश कुंदुज़ के निकट पश्चिम या उत्तर-पश्चिम में स्थित था। यह प्राकृतिक उत्पादनों में संपन्न था। यहाँ पर सौ से अधिक विहार थे जिनमें 3,000 से अधिक हीनयान संप्रदाय के भिक्षु थे। राजधानी के बाहर दक्षिण-पश्चिम की ओर एक नया विहार था जो हिन्दुकुश के उत्तर में स्थित अकेला बौद्ध संस्थान था जहाँ पर धर्म के भाष्यकारों की अविच्छिन्न परंपरा थी।[19] यह अपने भव्य भवन के लिए उल्लेखनीय था। हीनयान अभिधम्म में निष्णात् प्रज्ञाकार नामक एक भिक्षु इस विहार में रहता था।[20]

---

[13] लाहा, रिवर्स ऑव इंडिया, पृ० 28.

[14] स्कन्दपुराण, 1, 2, 13, 107.

[15] एपि० इं०, XXXI, भाग, VI, अप्रैल, 1936.

[16] रामायण, किष्किन्ध्याकाण्ड, अध्याय, 43; कूर्मपुराण, II, अध्याय, 37-38; लाहा, अर्ली इंडियन मानेस्टरीज़, द इंडियन इंस्टीट्यूट ऑव वर्ल्ड कल्चर, टांजैक्सशन नं० 29, पृ० 5.

[17] अल्टिंडिशेज लेबेन, 130; वेदिक इंडेक्स, II, 63; लाहा, ट्राइब्स इन ऐंश्येंट इंडिया, अध्याय, XI.

[18] इत्सिंग ने इसे फो-को-लो लिखा है।

[19] वाटर्स, ऑन युवान-च्वाङ्, I, पृ० 108.

[20] बील, लाइफ ऑव युवान-च्वाङ्, I, पृ० 49-51.

बामियन—एक पहाड़ी पर स्थित यह बल्ख के आधे आकार का एक नगर है। यहाँ पर कुछ बौद्ध विहार थे जिनमें हीनयान संप्रदाय के भिक्षु रहते थे।[21]

बनगर—यह काबुल एवं सिन्धु के संचार मार्ग पर स्थित एक नगर एवं जिले का नाम था। पाँचवीं एवं सातवीं शताब्दी ईस्वी में क्रमशः वहाँ फाह्यान् एवं युवान-च्वाङ आये थे।[22]

बाहुका (बाहुदा)—सुंदरिका एवं सरस्वती[23] नदियों की भाँति यह नदी आंतरिक शुद्धि के लिए उपयुक्त नहीं समझी जाती थी।

भरद्वाज-आश्रम—कालिदास के अनुसार[24] यह आश्रम शत्रुघ्न के मार्ग में था जब वह लवणासुर को मारने के लिए अयोध्या से आधुनिक मथुरा के 5 मील दक्षिण-पश्चिम में स्थित मधुपघ्न जा रहे थे।

भिड या भिर या भेर—यह पश्चिमी पंजाब के शाहपुर जिले में झेलम के तट पर स्थित था।[25]

ब्रह्मपुर—यहाँ पर पाँच बौद्ध विहार किंतु थोड़े ही भिक्षु थे।[26]

ब्रह्मावर्त्तजनपद—कालिदास ने अपने मेघदूत में इसका वर्णन किया है (पूर्वमेघ, 48)। यह सरस्वती एवं दृषद्वती नदियों के मध्य स्थित देश था।

चन्द्रभागा—विष्णुस्मृति (85. 48) में इस नदी का वर्णन है जिसके तट धार्मिक अनुष्ठान आदि के संपादन के लिए पवित्र माने जाते थे।

गंभीर—यह चंबल नदी (चर्मण्वती) के पहले यमुना की एक सहायक नदी है। कालिदास के मेघदूत (पूर्वमेघ, 40) में इसका वर्णन है।

गण्डकी (गण्डक)—शतपथ ब्राह्मण (I, 4, 1, 14 और आगे) में वर्णित इस नदी को वेबर ने गण्डकी से समीकृत किया है।[27]

---

[21] वाटर्स, आन युवान-च्वाङ्, I, पृ० 116.

[22] टॉलेमी कृत ऐंश्येंट इंडिया, पृ० 141.

[23] पपंचसूदनी, I, पृ० 178.

[24] रघुवंश, XV, 11-5.

[25] कनिंघम, ऐंश्येंट ज्यॉग्रफी ऑव इंडिया, पृ० 177-78.

[26] वाटर्स ऑन युवान-च्वाङ्, I, पृ० 329

[27] इंपीरियल गजेटियर ऑव इंडिया, 12, 125.

गंदरी (गंदराइतिस)—यह खोस्पीस एवं सिन्धु के बीच में तथा काबुल नदी के तट पर स्थित था।[28]

गन्धमादन—कालिदास के विक्रमोंवशीय (पृ० 87) में भी इस पर्वत का वर्णन है।[29]

गन्धार—इस क्षेत्र में पेशावर एवं रावलपिंडी (संप्रति पाकिस्तान में) के आधुनिक जिले संमिलित हैं। इसमें अफगानिस्तान में स्थित काबुल भी संमिलित है। भंडारकर का कथन है कि इसमें पश्चिमी पंजाब एवं पूर्वी अफ़गानिस्तान संमिलित थे।[30] कनिंघम के अनुसार गन्धार की निम्नलिखित सीमाएँ बतलायी जा सकती है : पश्चिम में लमगान एवं जलालाबाद, उत्तर में स्वात एवं बुनिर की पहाड़ियाँ, पूर्व में सिन्धु नदी और दक्षिण में कालबाग की पहाड़ियाँ।[31]

गंगा—कुमारसम्भवम् (I, 30, 54; VI, 36; VII, 36, 70; तुलनीय, मेघदूत, 50. 63) में इस नदी का वर्णन हुआ है। कालिदास के विक्रमोर्वशीय (पृ० 121) में गंगा-यमुना के संगम का उल्लेख है (गंगा-यमुना-संगम)। मेघदूत (50, 63) में बतलाया गया है कि गंगा दक्षिण-पूर्वाभिमुख प्रवाहित होती हुयी बंगाल की खाड़ी में गिरती हैं।

गर्ग-आश्रम—यह आश्रम रायबरेली जिले में असनी के सामने गंगा के उस पार स्थित था। कुछ लोगों का मत है कि यह कुमायूँ के एक जंगल में स्थित था।

गोमती—विष्णुस्मृति (85, 43) में इस नदी का वर्णन है।

गोरैय्या—यह घोर नदी (गौरायस) द्वारा सिंचित प्रदेश का नाम है।[32] सिकंदर गोरैय्या से होकर गुजरा था और घोर नदी को पार करके अस्सकेनोई के देश में प्रविष्ट हुआ था।

गोविसना—(कु-पि-संग-ना)—यहाँ पर दो बौद्ध विहार थे जिनमें 100 से अधिक हीनयान भिक्षु रहते थे।[33]

हड़प्पा—विस्तार के लिए दृष्टव्य, आर्क्यॉलॉजिकल सर्वे ऑव इंडिया के

---

[20] टॉलेमीकृत ऐंश्येंट इंडिया, 115.

[29] रैप्सन, ऐंश्येंट इंडिया, पृ० 81.

[30] कार्माइकेल लेक्चर्स, 1918, पृ० 54.

[31] मैक्रिडिल, ऐंश्येंट इंडिया ऐज डिस्क्राइब्ड बाई टॉलेमी, पृ० 116.

[32] टॉलेमी, ऐंश्येंट इंडिया, पृ० 109-110.

[33] वाटर्स ऑन युवान-चुवाङ्, I, पृ० 330-31.

मुखपत्र, ऐंश्येंट इंडिया, नं०3, जनवरी, 1947, पृ० 59 और आगे पर प्रकाशित आर० ई० एम० व्हीलर का लेख, हड़प्पा, 1946.

हरियूपिया[34]—यह अभ्यावर्त्तिन चायमान द्वारा वृशिवन्तों की पराजय का स्थल था। लुडविग के अनुसार यह यव्यावती के तट पर स्थित एक नगर था।[35] हिलेब्रांत की धारणा है कि यह क्रुमु (क्रुमु) की एक सहायक नदी इर्याब (हलियाब) थी किंतु यह संदिग्ध है।[36]

हस्तिनापुर—यह कुरु जनपद की प्राचीन राजधानी थी। इसका और अधिक विस्तृत विवरण मेरी पुस्तक इंडोलॉजिकल स्टडीज, भाग, IV, अध्याय, III, में दिया गया है।

हिमवंत—हिमालय पर्वत पाँच योजन विस्तृत था। यह 84,000 शिखरों से मंडित था जिसके चारों ओर 500 नदियाँ प्रवाहित होती थीं। हिमालय क्षेत्र में सात बड़ी झीलें थीं जिन्होंने 150 योजन का क्षेत्र आवृत कर रखा था।[37] कालगिरि,[38] दद्दर[39] एवं रजतपब्बत[40] सभी हिमालय क्षेत्र से संबंधित थे। रघुवंश (IV, 71) के अनुसार रघु हिमालय पर चढ़े थे।

हूण देश—रघु वंक्षु (या आक्सस) तथा इसकी सहायक नदियों के तट पर स्थित हूणों के देश में गये थे। रघु ने हूणों को पराजित किया था। वंक्षु की घाटी सिन्धु घाटी के समीप थी जो अपने केसर के लिए प्रख्यात थी।[41]

इंदपत्त—विधुर-नरेश ने यहाँ के एक ब्राह्मण को जो वाराणसी के राजा का पुरोहित था, एक जटिल प्रश्न के समाधान के लिए भेजा था। वह अनेक स्थानों का भ्रमण करता हुआ धीरे-धीरे वाराणसी गया।[42] इंदपत्त-नरेश कोरव्य ने अपने पुत्र को एक प्रसिद्ध गुरु द्वारा कलाओं की शिक्षा प्राप्त करने के लिए तक्कसिला

---

[34] **ऋग्वेद, VI,** 27. 5.

[35] **ऋग्वेद, अनुवाद,** 3. 1. 58.

[36] **वैदिक इंडेक्स,** II, 499.

[37] **पंचसूदनी, III, पृ०** 35.

[38] **जातक, VI,** 302.

[39] **वहीं, II, 67; III,** 16.

[40] **वही, II,** 67.

[41] **रघुवंश, IV,** 67.

[42] **जातक, V,** 59.

भेजा था।[43] राजा धनञ्जय ने अपने पुराने सैनिकों को अवमानित करके नवागंतुकों के प्रति अनुकूलता प्रदर्शित की थी। वह एक अशांत सीमांत प्रांत में युद्ध करने गया था। उसके पुराने एवं नवीन सैनिकों ने उसकी कोई सहायता नहीं की, फलतः उसकी पराजय हुई। इंद पत्त लौटने पर उसने अनुभव किया कि उसकी पराजय नवागंतुकों के प्रति अनुकूलता प्रदर्शित करने के कारण हुयी थी।[44] धनंजय कोरव्व इंदपत्त (इन्द्रप्रस्थ) का राजा था। विधुरपण्डित जिन्होंने संपूर्ण कलाओं का ज्ञान तक्कसिला में प्राप्त किया था, उसके कुल-गुरु और मंत्री बने थे और उसे सांसारिक एवं आध्यामिक विषयों में शिक्षाएँ दिया करते थे।[45]

इसधर—यह सिनेरु (मेरु पर्वत) को परिवृत्त करने वाली सात पहाड़ियों में से एक है।[46]

जालंधर—चीनी इसे शी-लान-ता-लो कहते हैं। वहाँ पर पचास से अधिक विहार थे जिनमें 2,000 से अधिक भिक्षु रहते थे।[47]

कैलास—जम्बुदीवपण्णत्ति, सु० 70, पृ० 2 के अनुसार इस पर्वत को अठ्ठाव्य कहते थे। कालिदास के अभिज्ञान-शाकुन्तलम (पृ० 237) के अनुसार इसे हेमकूट भी कहा जाता था।

कंबोज—ऋग्वेद में कंबोजों का वर्णन नहीं है। परोक्ष साक्ष्य द्वारा इस अनुमान को पुष्ट किया जा सकता है कि इन लोगों की गणना ऋग्वेद-युग के वैदिक आर्यों में की जाती थी।[48] कंबोज भारत के सुदूर पश्चिमोत्तर में था जिसकी राजधानी द्वारका थी।[49] मैक्रिंडिल के अनुसार कंबोज अफ़गानिस्तान था जिसे युवान-च्वाङ ने काओ-फु (कम्बु) कहा है।[50] कुछ विद्वानों की धारणा है कि काम्बोज संभवतः तिब्बत था। ईलियट ने बतलाया है कि कंबोज लोग एक अज्ञात जन थे जो संभवतः तिब्बत या इसके सीमांत देशों के निवासी

---

[43] वही, V, पृ० 457.

[44] जातक, III, पृ० 40.

[45] वही, VI, पृ० 255; तुलनीय, धूमकारी जातक, नं० 413, भाग, III.

[46] जातक, VI, पृ० 125.

[47] वाटर्स, ऑन युवान-च्वाङ्, I, पृ० 296.

[48] तुलनीय, ऋग्वेद, I, पृ० 102; वैदिक इंडेक्स, I, पृ० 138.

[49] रीज डेविडस, बुद्धिस्ट इंडिया, पृ० 28.

[50] अलेक्जेंडर्स इनवैजन, पृ० 38.

थे।[51] कुछ लोगों ने इन्हें राजपुर[52] में अवस्थित बतलाया है। रघु ने कंबोजों को पराजित किया था[53] और उन्होंने कंबोज से सुंदर घोड़े और मणि-कंचन उपहार-स्वरूप प्राप्त किया था।[54]

कंसभोग—इसे कंस राज्य से समीकृत किया जाता है, असितंजना जिसकी राजधानी थी।[55]

कनखल—विष्णुस्मृति (85, 14) में इसका वर्णन है। कालिदास ने अपने मेघदूत (पूर्वमेघ, 50) में इसका उल्लेख किया है।

कण्णमुण्ड—यह हिमालय की एक झील है।[56]

कपिश—इसकी परिधि 4000 ली से अधिक थी। यहाँ पर इमारती लकड़ी और विविध प्रकार के फलों के वृक्ष एवं अन्न उपजते थे। कपिश में 100 से अधिक विहार थे जिनमें 6000 से अधिक भिक्षु थे जो मुख्यतया महायान संप्रदाय के थे।[57] कपिश कफिर हो सकता है जो आधुनिक काफिरिस्तान के रूप में सुरक्षित है। वहाँ पर एक विशाल विहार था जिसमें तीन सौ से अधिक हीनयान भिक्षु थे।[58]

कालञ्जर—यह उत्तर प्रदेश के बाँदा जिले में स्थित एक सुप्रसिद्ध पहाड़ी किला है जो चंदेलों का एक केंद्र था।[59]

काम्पिल्य (पालि कंपिल)—इसका वर्णन वाजसनेयी संहिता (XXIII, 18) में भी है।

काञ्चनगुहा—यह हिमालय की एक गुफा है।[60]

काण्व (कण्व)—कुछ लोगों की धारणा है कि यह आश्रम हरिद्वार (आधुनिक

---

[51] ईलियट, हिंदुज्म ऐंड बुद्धिज्म, I, पृ० 268; फाउचर, आइकोनोग्रेफी बुद्धिके, पृ० 134.

[52] महाभारत, VII, 4-5 कर्ण, राजपुरमगत्वा कंबोजा निर्जितास्तया।

[53] रघुवंश, IV, पृ० 69-70.

[54] रघुवंश, IV, 70; रोचक विवरण के लिए दृष्टव्य, ज्यॉग्रेफिकल आस्पेक्ट ऑव कालिदासज वर्क्स, सेक्शन, I.

[55] जातक, IV, पृ० 79.

[56] जातक, II, पृ० 104.

[57] वार्टर्स, आन युवान-च्वाङ्, I, पृ० 123.

[58] वही, I, पृ० 124.

[59] एपि० इं०, XXXII, भाग, III, जुलाई, 1957.

[60] जातक, I, पृ० 491-92.

हरद्वार) से 30 मील पश्चिम में स्थित था। कुछ लोगों ने इसे राजस्थान में कोटा से 4 मील दक्षिण-पूर्व में चंबल नदी के तट पर स्थित बतलाया है। कुछ लोगों का मत है कि यह नर्मदा के तट पर स्थित था।[61]

कान्यकुब्ज––पाँचवीं शती ई० में फा-ह्यान ने कान्यकुब्ज में दो विहार देखे थे जिनके अंतेवासी हीनयान संप्रदाय के थे।[62]

कारपकव––यह यमुना-तट पर स्थित एक स्थान था।[63]

कारापथ––कालिदास ने अपने रघुवंश (XV, 90) में इसका वर्णन किया है। यह मल्लों के देश में स्थित प्रतीत होता है।[64]

कारोती––यह शतपथ ब्राह्मण (IX, 5, 2, 15) में वर्णित एक स्थान या संभवतः एक नदी है जहाँ पर तुरकावषेय ने अग्नि-चयन किया था।[65]

काशी––विष्णुस्मृति (85. 28) में इसका वर्णन है। काशी का एक विशद विवरण मोतीलाल बनारसीदास द्वारा प्रकाशित मेरी 'एंश्येंट इंडियन ट्राइब्स' (1926) नामक पुस्तक के प्रथम अध्याय में दिया गया है।

काश्मीर (कश्मीर)––यह ऊँचे एवं दुरारोह पर्वतों से परिवृत्त एक पठार पर स्थित है। इस देश का दक्षिणी एवं पूर्वी भाग हिंदुओं और पश्चिमी भाग विविध राजाओं के अधीन था। इसका उत्तर एवं पूरब का एक भाग खोतान के तुर्कों एवं तिब्बत का था। भोटेश्वर-शिखर से तिब्बत होकर कश्मीर की दूरी लगभग 300 फरसख है[66]। अलबेरूनी का मत है कश्मीर के निवासी पदयात्री थे। उनके पास कोई वाहन––पशु या हाथी नहीं थे। उनमें आभिजात्य

---

[61] **लाहा, अर्ली इंडियन मॉनेस्टरीज, पृ० 5; अग्निपुराण, अध्याय, 109; पद्मपुराण, अध्याय, 99.**

[62] **लेग्गे,-ट्रावेल्स ऑव फाह्यान, पृ० 53-54.**

[63] **पंचविंश ब्राह्मण, XXV, 10,23; तुलनीय, अश्वलायन श्रौतसूत्र, XII, 6; शांखायन श्रौतसूत्र, XIII, 29. 25; कात्यायन श्रौतसूत्र, XXIV, 6; 10; वेबर, इंडिशे स्टूडियेन, I, 34; वैदिक इंडेक्स, I, पृ० 149.**

[64] **रघुवंश, संपादक, नन्दर्गिकर, तृतीय संस्करण, 1897; नोट्स, पृ० 322.**

[65] **वैदिक इंडेक्स, I, पृ० 151.**

[66] **1 फरसख-4 मील; अलबेरुनी ने अपने फरसख को चार अरबी मीलों के बराबर-771. 1093 अँग्रेजी मीलों को बराबर माना है। विस्तृत विवरण के लिए द्रष्टव्य, लाहा, अल्बेरुनीज नालेज ऑव इंडियन ज्यॉग्रेफी, पृ० 6, पा० टि० 1.**

वर्ग के लोग मनुष्यों के कंधों पर ढोयी जाने वाली पालकियों में यात्रा करते थे। वे अपने देश की प्राकृतिक शक्ति के लिये विशेष व्यग्र रहते थे और इसीलिए वे उसके प्रवेश-द्वारों की सुरक्षा के लिये बहुत सावधानी रखते थे। उसने आगे बतलाया है कि प्राचीन काल में वे अपने देश में एक या दो विदेशियों, विशेषरूप से यहूदियों को प्रवेश करने की आज्ञा दिया करते थे किंतु उस समय वे किसी अपरिचित हिंदू को प्रवेश करने की आज्ञा नहीं देते थे।[67] कश्मीर में प्रवेश करने का सबसे अच्छा ज्ञात मार्ग सिन्धु एवं जैलम (झेलम) के बीचों-बीच स्थित बब्रहान नगर से है। अद्धिस्तान इसकी राजधानी थी। इसका आशय श्रीनगर से है।[68] कश्मीर शहर चार फरसख क्षेत्र पर झेलम नदी के दोनों तटों पर स्थित है। अल-बेरूनी को गाजना एवं पंजाब में अपने दीर्घकालीन प्रवास की अवधि में कश्मीर के विषय में सूचना संकलित करने का अवसर मिला था। कश्मीर की सीमा पर स्थित लौहूर किले से उसने अपने व्यक्तिगत परिचय का उल्लेख किया है जिसका तादात्म्य लोहारा महल से किया जा सकता है। इसकी स्थिति पीरपंजल पर्वत-माला[69] के दक्षिणी ढाल पर स्थित वर्तमान लोहारिन से लक्षित की जा सकती है। अल्-बिरूनी ने कश्मीर का वृत्तांत अपनी पुस्तक तहकीकी-हिन्द के XVIII वे अध्याय (I, पृ० 206 और आगे) में दिया है।

केदार—विष्णुस्मृति में (85.17) इसका वर्णन हुआ है। गणपति के काल के दो अभिलेखों में भी इसका वर्णन है।[70]

किटागिरि—समन्तपासादिका, पा० टे० सो०, पृ० 613 के अनुसार यह एक देश है।

कोतेर—इस पर्वत के तल में किसी प्राचीन दुर्ग के कोने में संकुलित बारह मंदिर के अवशेष हैं। जैसा कि कनिंघम ने बतलाया है[71], यह उत्तरी भारत का एक जीर्ण दुर्ग था।

क्रौञ्च—यह तैत्तिरीय आरण्यक (1.31.2) में वर्णित एक पर्वत है।

क्रुमु—यह ऋग्वेद (V, 53.9; X, 75.6; लुडविग, कृत ऋग्वेद का

---

[67] अल्बेरुनी, इंडिया, I, पृ० 206-207.

[68] लाहा, अल्बेरुनीज नालेज ऑव इंडियन ज्यॉग्रेफी. पृ० 10.

[69] ज० ए० सो० बं०, 1899, एक्स्ट्रा नं० 2, पृ० 22.

[70] एपि० इं०, XXXII, भाग, VII.

[71] एं० ज्यॉ० इं०, पृ० 145, 682-683.

अनुवाद 3.200) में वर्णित एक नदी है जिसे सिन्ध की एक पश्चिमी सहायक नदी आधुनिक कुरम से समीकृत किया जाता है।[72]

कुब्जाम्रक—यह हरिद्वार या इसके समीप स्थित कोई पुण्य स्थल है। यहाँ पर रैभ्य का आश्रम था।[73]

कुलिन्ड्राइन (किलिन्ड्राइन)—कनिंघम ने इसकी पहचान जालन्धर से की है।[74] इसमें विपाशा की द्रोणी के ऊपरी भाग द्वारा निर्मित कुलूट देश सम्मिलित था।[75]

कुलूट (कि, यु-लु-टो)—यहाँ पर लगभग 20 विहारों में 1000 भिक्षु थे जिनमें अधिकांश महायान धर्म का अध्ययन करते थे।[76]

कुरु-जांगल—रामायण (अयोध्याकाण्ड, LXXII; तुलनीय महाभारत, सभापर्व, XIX, पृ० 793-94; आदिपर्व, CIX, 4337-40) में इसका उल्लेख है। पाण्डव भी यहाँ आये थे जिन्होंने यहाँ पर स्थित काम्यक वन को भी देखा था।

कुरुक्षेत्र—कालिदास (मेघदूत, पूर्वमेघ, 48) ने कुरुक्षेत्र का रणक्षेत्र के रूप में वर्णन किया है जहाँ पर कौरव-पाण्डव लड़े थे।

कुसावती—कालिदास ने अपने रघुवंश (XV, 97) में इसका वर्णन किया है।

लमग़ान—काबुल नदी के उत्तरी तट पर स्थित यह एक छोटा सा प्रदेश था।[77]

लंपाक—लंप, टॉलेमी द्वारा वर्णित लंबटाई[78], लैन, पो)—कनिंघम[79] ने इसे काबुल के पूर्वोत्तर में कपिसेने से 100 मील पूर्व में स्थित आधुनिक लमग़ान से समीकृत किया है। इससे व्यावहारतः आधुनिक काफिरिस्तान में हिंदुकुश के

---

[72] रॉथ, निरुक्त, एरलांटुरेंगेन, 43; त्सिमर, आल्टिंडिशेज लेबेन, 14.

[73] महाभारत, वनपर्व, 84, 10; मत्स्यपुराण, 22, 65; पद्मपुराण, I, 32, 5.

[74] एं० ज्यॉ० इं०, 157.

[75] टॉलेमी, ऐंश्यॅट इंडिया, पृ० 109-110.

[76] बील, बुद्धिस्ट रिकार्ड्स ऑव द वेस्टर्न वर्ल्ड, I, पृ० 177.

[77] मैक्रिडिल, ऐंश्यॅट इंडिया ऐज डिस्क्राइब्ड बाई टॉलेमी, (मजूमदार संस्करण), पृ० 106.

[78] वही, 1927, पृ० 106.

[79] एं० ज्यॉ० इं०, 1924 संस्करण, पृ० 49-50.

दक्षिण में लंबगाई (Lambagai) से लास्सेन द्वारा प्रस्तावित इस स्थान का समीकरण पुष्ट होता है। युवान-च्वाङ यहाँ आया था और उसने यहाँ दस से अधिक बौद्ध विहार और कुछ महायान भिक्षु देखे थे।[80]

लोहरकोट्ट—यह कश्मीरी ग्रंथ राजतरंगिणी में वर्णित लोह-कोट दुर्ग ही है। कुछ लोग इसकी पहचान लौहुर नामक किले से करते हैं।[81]

महावृष—यह एक कबीले का नाम है और इसका वर्णन अथर्ववेद (V, 22, 4.5.8) में मूजवंतों के साथ हुआ है। ब्लूमफील्ड का सुझाव है कि यह नाम अपनी भौगोलिक स्थिति की अपेक्षा अधिकतर अपनी ध्वनि एवं अर्थवत्ता के कारण चुना गया था।[82] महावृष देश में[83] रैक्वपर्ण नामक एक स्थान स्थित बतलाया जाता है। हृतस्वाशय महावृषों का राजा था।[84] बौधायन श्रौतसूत्र (II, 5) में महावृषों का वर्णन है।[85]

मैनाकगिरि—तैत्तिरीय आरण्यक (1.31.2) में इसका वर्णन है।

मनोर अवसर्पण—महाकाव्य में इसका नाम नौबंधन है। यह उस पर्वत का नाम है जिस पर मनु की नाव रुकी थी।[86]

मनोसिला—यह हिमालय में अनोतत्त झील के पास स्थित एक पर्वत है।[87]

मंदार—कालिदास ने इस पर्वत को हिमालय में स्थित बतलाया है। उन्होंने इसे कैलास और गन्धमादन के समीप अवस्थित बतलाया है।[88] मेगस्थनीज़ एवं एरिअन इसे मल्लुस नाम से जानते हैं जो भागलपुर से 30 मील दक्षिण में और बंसी से तीन मील उत्तर में भागलपुर जिले की बंका तहसील में स्थित था। पार्जिटर ने बतलाया है कि किरातों का मुख्य देश कैलास, मंदार और हैम नामक तीन पर्वतों में था।[89]

---

[80] वाटर्स, ऑन युवान-च्वाङ्, I, पृ० 181.

[81] इं० ऐं०, 1897, द कासेल ऑव लोहर।

[82] हिम्स ऑव द अथर्ववेद, 446.

[83] छान्दोग्य उपनिषद्, IV, 2. 5.

[84] जैमिनीय उपनिषद ब्राह्मण, III, 40. 2.

[85] वैदिक इंडेक्स, II, 142-143 भी दृष्टव्य।

[86] शतपथ ब्राह्मण, 1. 8. 1. 8; वैदिक इंडेक्स, II, 130.

[87] जातक, I, 232; III, 379.

[88] कुमारसंभव, VIII, 23, 24, 29, 59.

[89] मार्कंडेयपुराण, पृ० 322, पा० टि०, मैक्रिंडिल कृत ऐंश्येंट इंडिया ऐज डिस्क्राइब्ड बाई टॉलेमी, पृ० 110 भी दृष्टव्य।

मरुद-वृधा—रॉथ एवं त्सिमर के अनुसार यह नदी अकेसिनीज (असिक्नी) और हाइडैस्पीज़ (वितस्ता) का संयुक्त प्रवाह है जो परुष्णी (रावी) से अपने संगम तक प्रवाहित होती है।[90]

मतिपुर—(मो-ति-पु-लो)–यह बिजनोर जिला या इसका पूर्वी भाग है।[91] यहाँ पर 10 से अधिक बौद्ध विहार थे जिनमें 800 से अधिक भिक्षु थे जो अधिकांशत: सर्वास्तिवाद संप्रदाय के थे।[92] यहाँ पर एक लघु विहार था जहाँ पर गुणप्रभ ने सौ से अधिक भाष्य लिखे थे। युवान-च्वाङ यहाँ आया था।

मानस-सरोवर—यह पश्चिमी तिब्बत में कैलास पर्वत में स्थित है।

मानिकयाल—यह वह स्थान था जहाँ बुद्ध ने अपना शरीर एक भूखी बाघिनी को खाने के लिये दे दिया था। तक्षशिला के दक्षिण-पूर्व में यह दो दिन की यात्रा और उद्यान की राजधानी के दक्षिण-पूर्व में 8 दिन की यात्रा की दूरी पर स्थित था।[92अ]

मेहतनू—यह सिन्धु की एक सहायक नदी रही होगी जो सिन्धु में क्रुमु (कुरम) एवं गोमती (गुम्ती) के पहले इसमें मिलती थी।[93]

मेरु—तैत्तिरीय आरण्यक (I, 71. 3) में एक पर्वत के रूप में इसका वर्णन है। इसकी पहचान सर्वोत्तम पर्वत-शिखर सिनेरु से की गयी है। यह सात दिव्य पर्वतमालाओं से परिवृत्त था।[94] यह 68,000 लीग ऊँचा था।[95]

मुचलिन्द—यह हिमालय की एक झील है।[96]

---

[90] ऋग्वेद, X, 75. 5; त्सुर लिटरेटुर उंड गेशिस्टे डेस वेद, 138 और आगे; आल्टिंडिशेज लेबेन, 11. 12; ऑन सम रिवर नेम्स इन द ऋग्वेद नामक स्टाइन का शोध-पत्र जो कमेमोरेटिव एसेज प्रेजेंटेड टु आर० जी० भंडारकर, पृ० 22 में प्रकाशित है।

[91] वाटर्स, ऑन युवान-च्वाङ्, II, 338.

[92] वही, I, पृ० 322.

[92] (अ) वाटर्स, ऑन युवान-च्वाङ्, I, , पृ० 255.

[93] ऋग्वेद, X, 75. 6; वैदिक इंडेक्स, II, 180.

[94] लाहा, ज्यॉग्रेफी ऑव अर्ली बुद्धिज्म, पृ० XVI.

[95] धम्मपद कामेंट्री, I, पृ० 107; जातक, I, पृ० 202, इसमें इसे एक पर्वत कहा गया है।

[96] जातक, VI, पृ० 518.

मुनि-मरण—यह एक स्थान का नाम है जहाँ वैखानसों की हत्या की गयी थी।[97]

नगर—यहाँ पर अनेक बौद्ध विहार थे किंतु भिक्षु कम ही थे। यहाँ पर एक विशाल स्तूप था जिसमें बुद्ध का एक दंतावशेष था।

नगरहार (न-की-लो-हो)—यह पूर्व से पश्चिम में लगभग 600 ली एवं उत्तर से दक्षिण में 250 या 260 ली था।[98]

नैमिषारण्य—विष्णुस्मृति (85.13) में इसका वर्णन है। कालिदास ने अपने रघुवंश (XIX, 2) में नैमिष का वर्णन किया है।[99] इसे उत्तर प्रदेश में वर्त्तमान नीमसार से समीकृत किया जाता है।

नन्दिग्राम—कालिदास ने अपने रघुवंश (XII, 18) में इसका वर्णन किया है जो अयोध्या का एक उपकंठ था जहाँ राम के वनवास-काल में भरत रहते थे।

नेपाल—काली नदी नेपाल की पश्चिमी सीमा है। काली-गण्डकी नदी कश्मीर को नेपाल से पृथक करती है।[100]

नील पर्वत—महाभारत के अनुशासनपर्व में (25.13) एक तीर्थस्थान के रूप में इसका वर्णन है। यह वह टीला है जिस पर पुरुषोत्तम का मंदिर स्थित है।[101]

पण्डुकेश्वर—यह उत्तर प्रदेश के कुमायूँ मंडल के गढ़वाल जिले में श्रीनगर से 54 मील दूर पूर्वोत्तर में स्थित है।[102]

पावा—विविधतीर्थकल्प (पृ० 44) के अनुसार मज्झिमपावा को अपावा-पुरी कहा जाता था। चूँकि यहाँ पर महावीर की मृत्यु हुयी थी इसलिए इसका नाम बदलकर पावापुरी कर दिया गया था।[103]

---

97 पंचविंश ब्राह्मण, XIV, 4. 7.

98 बील, बुद्धिस्ट रिकार्ड्स ऑव द वेस्टर्न वर्ल्ड, I, पृ० 91.

99 द्रष्टव्य, पा० वा० काणे, हिस्ट्री ऑव द धर्मशास्त्र, भाग, IV, पृ० 783.

100 एस० के० आयंगर, ऐंश्येंट इंडिया ऐंड साउथ इंडियन हिस्ट्री ऐंड कल्चर, भाग, I, पृ० 343.

101 पद्मपुराण, IV, 17. 23. 35.

102 एपि० इं० जिल्द, XXXI, भाग, VI, अप्रैल, 1956.

103 ज० चं० जैन, लाइफ इन ऐंश्येंट इंडिया ऐज डिपिक्टेड इन द जैन कैनन, 268.

प्लक्ष-प्राश्रवण (प्लक्ष प्रश्रवण)—यह उस स्थल का नाम है जहाँ सरस्वती नदी अदृश्य हो जाती है।[104]

प्रकाश—यह ताप्ती एवं गोमती नदियों के संगम पर धुलिया से 25 मील पश्चिमोत्तर में स्थित है।[105]

प्रयाग—बौद्ध टीकाकार बुद्धघोष के अनुसार यह गंगा-तट पर स्थित एक घाट है।[106]

पुष्कलावती—कालिदास ने अपने रघुवंश (XV, 89) में बतलाया है कि इस नगर की स्थापना पुष्कल ने की थी और यह उसकी राजधानी थी।

राश (दंतवर)—कनिंघम के अनुसार इस जिले को अर्श (संस्कृत उरश) जिले से समीकृत किया जा सकता है। यवान-च्वाङ यहाँ आया था और उसने इसे तक्षशिला एवं कश्मीर के मध्य स्थित बतलाया है। इस चीनी तीर्थयात्री ने इसे उ-ला-शी कहा है।[107]

सरभू (सरयू)—विष्णुस्मृति (85.32) में इसका उल्लेख है। हॉपकिंस ने इसे पश्चिम की एक नदी माना है।[108]

सरस्वती—विष्णुस्मृति (85.27) में इस नदी का वर्णन है। मेघदूत (पूर्वमेघ, 49) में भी इसका वर्णन है।

सरावती—रघुवंश (XV, 97) में इसका उल्लेख है। इसका तादात्म्य श्रावस्ती (आधुनिक साहेठ-माहेठ) से किया जा सकता है जो बहराइच एवं गोंडा जिले में स्थित है।

शतद्रु—शतद्रु या आधुनिक सतलज नदी का तट, जिसका वर्णन विष्णुस्मृति (85.47) में हुआ है, धार्मिक अनुष्ठानों के लिए पुनीत माना जाता है। ऐतिहासिक युगों में इस नदी ने अपना प्रवाह-पथ अत्यधिक बदला है।[109]

---

[104] पञ्चविंश ब्राह्मण, XXV, 10. 16. 22; जैमिनीय उपनिषद् ब्राह्मण, IV, 16. 12.

[105] जर्नल ऑव द न्युमिस्मेटिक सोसाइटी ऑव इंडिया, XVII भाग, II, 1955.

[106] पपञ्चसूदनी, पा० टे० सो०, I, पृ० 178.

[107] टॉलेमी ऐंश्यंट इंडिया पृ० 118.

[108] रिलीजंस ऑव इंडिया पृ० 34.

[109] इंपीरियल गजेटियर्स ऑव इंडिया, 23 179; तुलनीय, त्सिमर आल्टिंडिशेज लेबेन, 10. 11.

सागल—सौ से अधिक हीनयान भिक्षुओं वाले यहाँ के विहार में वसुबंधु ने अभिधर्मकोषव्याख्या (शेंग-यी-ति-लुन) की रचना की थी।[110]

सारनाथ—युवान-च्वाङ के समय में यह एक विहार-केंद्र था क्योंकि उसने यहाँ कोई 1500 बौद्ध भिक्षु देखे थे जो सभी संमतिय संप्रदाय के थे।[111] सारनाथ विहार वरणा नदी से 10 ली पूर्वोत्तर में स्थित था।

सिक्किम—यह दार्जलिंग जिले के उत्तर में स्थित है। इस समय इसका क्षेत्र 3000 वर्ग मील है जो उत्तर से दक्षिण में लगभग 80 मील और पूरब से पश्चिम लगभग 40 मील है। यह हिमालय में स्थित है। यह एक छोटा देश है जिसमें विश्व के कतिपय सर्वोच्च पर्वत स्थित हैं। इसके प्राकृतिक भूगोल एवं जलवायु की विविधता को देखकर किसी को यहाँ के विशालकाय अवधाव एवं भूमि-स्खलन पर आश्चर्य नहीं करना चाहिए। नेपाली सीमा के पश्चिम में कंचनजंगा के उत्तर में एक बहुत ऊँचा गिरि-कूट है। कंचनजंगा सिक्किम में सर्वोच्च अगम्य ऊँचाई है।[112]

सिन्धु—सिन्धु नदी या इण्डस का वर्णन अथर्ववेद में (III, 13.1; IV, 24.2; X, 4.15; XIII, 3.50) हुआ है। ऋग्वेद में भी इसका उल्लेख है (I, 97.8; II, II. 9; III, 53.9)। कालिदास ने अपने मेघदूत (पूर्वमेघ, 29) एवं मालविकाग्निमित्र (पृ० 102) में इसका उल्लेख किया है।

श्रुघ्न—श्रुघ्न जिसे चीनी लोग सु-लु- कि, न-न कहते हैं, देहरा जिले और अंबाला जिले के पूर्वोत्तरी भाग का वाचक था जिसमें संभवतः सहारनपुर जिले का एक भाग एवं देहरा का प्रतिस्पर्श करते हुये कुछ प्रदेश संमिलित थे।[113]

सुभगवन—यह उकट्ठा का एक सुरम्य जंगल था। यहाँ के परिवेश का रूमानी वातावरण होने के कारण लोग वहाँ उत्सव मनाने जाया करते थे। यह एक प्राकृतिक कुंज नहीं थी।[114]

सुसर्तु—ऋग्वेद (X, 75.6) में वर्णित यह एक नदी है। यह सिन्धु की एक सहायक नदी है।

---

[110] **वाटर्स, ऑन युवान-च्वाङ्, I, पृ० 291**

[111] **वही, II, पृ० 48**

[112] **विस्तृत विवरण के लिए द्रष्टव्य, इंट्रोड्यूसिंग इंडिया, भाग, 1, (रायल एसियाटिक सोसाइटी द्वारा प्रकाशित), पृ० 136 और आगे।**

[113] **वाटर्स, ऑन युवान-च्वाङ्, II, 337-38.**

[114] **पंपचसूदनी, I, पृ० 11.**

सुवास्तु—ऋग्वेद में (VIII, 19.37; निरुक्त, IV, 15) में इस नदी का वर्णन है। यह आधुनिक स्वात नदी है।

श्वेत्या—ऋग्वेद (X, 75.6) में इसका वर्णन है। यह सिन्धु की एक सहायक नदी प्रतीत होती है।[115]

तक्षशिला—जैनग्रंथ आवश्यक चूर्णी (पृ० 180) के अनुसार यह गन्धार जनपद की राजधानी थी। कालिदास के रघुवंश (XV, 89) के अनुसार तक्ष ने तक्षशिला की स्थापना की थी। तक्षशिला के भीर टीले से जो यहाँ के तीन नगरों में सर्वप्राचीन था, 1924, ई० में 300 ई० पू० के एक मुद्रा-कोष एवं आभूषण कोष की उपलब्धि यहाँ से प्राप्त तिथिपरक प्रथम निश्चयात्मक साक्ष्य था। 1945 में इसी स्थान से इसी प्रकार का एक और कोष प्राप्त हुआ था। इनमें स्थानीय उत्पत्ति के तत्त्व और पश्चिमी एशिया से गृहीत शैली में दो विचक्षण रत्न मिले हैं और जो इस भारतीय सीमांत क्षेत्र के सांस्कृतिक तत्वों की एक मिश्रित उत्पत्ति अभिव्यंजित करते हैं। जनवरी-फरवरी, 1945 में भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण (आर्कु० स० इंडिया) द्वारा किये गये उत्खनन में 18 मुड़ी हुयी छड़दार रजत-मुद्राएँ, कुछ सोने चाँदी के आभूषण, दो आयोनिया की यूनानी मणियाँ, एक एक नीलम या नीलमणि और स्फटिक के मनके उपलब्ध हुये थे।[116]

तमसावन विहार (त-मो-सु-फ-न)—युवान-च्वाङ यहाँ आया था। यहाँ पर सर्वास्तिवाद संप्रदाय के 300 से अधिक भिक्षु थे। वे हीनयान मत के गंभीर अध्येता थे।[117]

त्रिकूट—संभवतः यह पंजाब में स्थित एक पर्वत है।[118]

टोकेरोइ देश—टॉलेमी ने टोकेरोई जनों का वर्णन किया है जिनकी पहचान बाख्त्रीजनों के एक महत्त्वपूर्ण वर्ग—तुखारों से की जाती है।[119]

---

[115] त्सिम्मर, आल्टिंडिशेज लेबेन, 14.15.

[116] दृष्टव्य, ऐंश्येंट इंडिया भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण का मुखपत्र, नं० 1, जनवरी, 1946, पृ० 27 और आगे पर प्रकाशित, जी० एम० यंग का लेख 'ए न्यू होर्ड फ्रॉम तक्सिला (भीर माउंड)'; ऐंश्येंट इंडिया, नं० 4, जुलाई, 1947, जनवरी, 1948, पृ० 41 और आगे में अ० घोष का लेख, तक्सिला (सिरकप), 1944-45 भी दृष्टव्य।

[117] वाटर्स, ऑन युवान-च्वाङ्; I, पृ० 294.

[118] जातक, IV, पृ० 438.

[119] लाहा, ट्राइब्स इन ऐंश्येंट इंडिया, पृ० 396.

त्रिककुद (त्रिककुभ)—यह हिमालय में स्थित तीन शिखरों वाला एक पर्वत है जिसकी पहचान आधुनिक त्रिकोट से की जाती है।[120]

त्रिपलक्ष—यह उस स्थान का नाम है जहाँ दृषद्वती यमुना के निकट अदृष्ट होती है।[121]

तूर्घ्न—तैत्तिरीय आरण्यक (V, 1) में इसका वर्णन कुरुक्षेत्र के उत्तरी भाग के रूप में किया गया है।[122]

उच्चशृगविषय—इसे बेलारी जिले के हरपंदकी तालुक में स्थित उच्चंगी दुर्ग नामक वर्तमान गाँव से समीकृत किया जाता है।[123]

उपदकपब्बत—यह हिमालय का एक पहाड़ है।[124]

उक्कट्ठ—यह मुख्य कोशल में था। शुभघड़ी के भीतर बनकर पूर्ण हो जाने के लिए इसका निर्माण रात में मशालों के प्रकाश में किया गया था और इस कारण इसका यह नाम पड़ा है।[125] कोशल-नरेश पसेनदि ने यह नगर पोरवरसाति या पोक्खरसादि को उसकी विद्वत्ता के लिए दिया था।[126]

उपकारी—उत्तर पञ्चाल से गंगा-तट के मार्ग पर स्थित यह पञ्चालराष्ट्र का एक नगर था।[127]

ऊर्णावती—यह ऋग्वेद में वर्णित (X, 75.8) सिन्धु की एक सहायक नदी है।

उत्तरकौशल—यह रघु एवं उनके उत्तराधिकारियों की राजधानी थी[128]। कालिदास ने अपने रघुवंश (IV, 70; IX, 17) में इसे कोशल भी कहा है।

---

[120] **अथर्ववेद**, IV, 9. 8.

[121] **पंचविंश ब्राह्मण**, XXV, 13. 4.

[122] **वेबर, इंडिशे स्टुडियेन**, I, पृ० 78; **वैदिक इंडेक्स**, I, पृ० 318.

[123] **एपि० इं०**, XXXII, भाग, V.

[124] **जातक**, V, 38.

[125] **पपंचसूदनी**, I, पृ० 10.

[126] **सुमंगलविलासिनी**, 4, 1, 44–45.

[127] **जातक**, VI, 450, 458, 427, 430.

[128] **रघुवंश**, V, 31; XIII, 61; 79; XIV, 29; XVI; 11-29; XVIII; 36.

वंक—यह हिमालय में एक पर्वत है।[129] कुछ लोगों ने इसे वेपुल्ल पर्वत का एक प्राचीन नाम माना है।

वरणावती—अथर्ववेद (IV, 7.1) में इसका उल्लेख है। लुडविग ने इसे गंगा नदी ही माना है।[130]

वाल्मीकि-आश्रम—रामायण (उत्तरकाण्ड, अध्याय, 58) में इस आश्रम में वाल्मीकि के सम्मान में निर्मित एक मंदिर का उल्लेख है।

वेत्रवती—यह नदी पारिपात्र पर्वत से निकलती थी। कालिदास ने अपने मेघदूत (पूर्वमेघ, 24) में इसका वर्णन किया है।

वेत्तवती—चारुदत्त ने इस नदी को वेत्र-लता से पार किया था।[131]

वेय्यढढ़गिरि—यह पहाड़ी गंधमादन के पास स्थित थी (आवश्यकचूर्णी, पृ० 165)।

विनीता—इसे अयोध्या भी कहा जाता था और यह हिंदुओं के सात तीर्थ-स्थानों में से एक था।[132]

विपाशा (वि-पाश, बंधनरहित)—ऋग्वेद (III, 33.1.3; IV, 30.11) में विपाश का वर्णन है। निरुक्त (IX, 26) के अनुसार इस नदी का प्राचीन नाम उरुञ्जिरा था। इस नदी ने प्राचीन काल से अपना प्रवाह-पथ बहुत अधिक बदला है।[133]

वृन्दावन—यह यमुना-तट पर गोवर्धन के पास है।[134] कालिदास ने अपने रघुवंश (VI, 50) में इसका वर्णन किया है।

---

[129] जातक, VI, पृ० 491.

[130] ऋग्वेद (अनुवाद) 3, 201; तुलनीय, आल्टिडिशेज लेबेन, 20; वैदिक इंडेक्स, II, पृ० 244.

[131] तुलनीय, जैन सूयगडंगचूर्णी, पृ० 239.

[132] विस्तृत विवरण के लिए दृष्टव्य, लाहा, हिस्टॉरिकल ज्यॉग्रेफी ऑव ऐंश्येंट इंडिया, पृ० 69 और आगे।

[133] इंपीरियल गजेटियर ऑव इंडिया, 7, 138; त्सिमर, आल्टिडिशेज लेबेन, 11; स्टाइन, ऑन सम रिवर नेम्स इन द ऋग्वेद, पृ० 22; कमेमोरेटिव एसेज प्रेजेंटेड टु आर० जी० भंडारकर; पूर्वोक्त ग्रंथ के पृ० सं० 93 और आगे पर प्रकाशित सरदेसाई का लेख, लैंड आव सेवन रिवर्स।

[134] भागवत पुराण, VI, 11, 28, 36.

यामदाग्नि-आश्रम—यह आश्रम उत्तर प्रदेश के गाजीपुर जिले में ज़मनिया में स्थित था।

दक्षिणी भारत

ऐवरमलाई—यह मदुराई जिले के पलनी तालुक में ऐयमपालैयम नामक गाँव में स्थित एक पहाड़ी है।[135]

अमुदालपाडु—यह आलमपुर तालुक में है जहाँ से विक्रमादित्य प्रथम के अभिपत्र उपलब्ध हुये थे।[136]

अण्डवरम्—यह अण्डनात्तुवेलान का संक्षिप्त रूप है। इसमें पेरुमनलुर चेल्लुर, तिरुमाडवनूर, कुवलैयसिंगनल्लूर और पेरुमुर संमिलित है।[137]

अंधपुर[138]—यह एक नगर है। कुछ लोगों का मत है कि यह आंध्रों की राजधानी थी और कुछ लोग इसे संभवतः बेजवाड़ा का प्राचीन नाम मानते हैं।

अंधवरम्—यह आंध्र राज्य के श्रीकाकुलम जिले में स्थित एक गाँव है जहाँ से इन्द्रवर्मन के ताम्रपत्र उपलब्ध हुये थे।[139]

आंध्रमण्डल—(अन-तो-लो)—यहाँ पर 20 बौद्ध विहार थे जिनमें 3000 से अधिक भिक्षु निवास करते थे। राजधानी के निकट यह सुरुचिपूर्वक नक्काशा एवं अलंकृत किया हुआ, मीनारों एवं आहातों से युक्त एक विशाल विहार था जिसमें बुद्ध की एक सुंदर प्रतिमा थी।[140]

अरिकमेडु—यह भारत के पूर्वी समुद्र तट पर पांडिचेरी से दो मील दक्षिण में, उष्णकटिबंधीय कोरोमंडल तट पर स्थित है। यहाँ के कुछ स्थानों पर 1945 में भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण विभाग ने उत्खनन किया था। यहाँ के उत्खनन के परिणाम बहुत महत्त्वपूर्ण हैं।[141]

---

135 एपि० इं०, XXXII, भाग, VII.

136 वही, XXXII, भाग, IV.

137 वही, XXXII, भाग, VI, अप्रैल, 1958.

138 जातक, I, 111.

139 एपि० इं०, VI; XXX, भाग, I, पृ० 37.

140 वाटर्स, ऑन युवान-च्वाङ्, II, पृ० 209.

141 दृष्टव्य, आर्कयॉलॉजिकल सर्वे ऑव इंडिया, ऐंश्येंट इंडिया, नं० 2, जुलाई, 1946, पृ० 17 और आगे।

आभोर देश—यह दक्षिणापथ में स्थित था। यहाँ पर वैरसामी आये थे।[142]

बादामि (वातापि)—640 ई० के लगभग यह चालुक्यों की राजधानी थी। नरसिंहवर्मन ने बादामी को नष्ट किया था।[143]

भञ्जभूमि—इसकी पहचान उड़ीसा में मयूरभंज से और मिदनापुर में इसी नाम के एक परगना से की जाती है। इसकी प्राचीनता अज्ञात है।[144]

चन्द्रगिरि—यह पहाड़ी सेरिंगपतम के समीप है।

चोल—युवान-च्वाङ के अनुसार यहाँ के बौद्ध विहार जीर्ण हो गये थे। कुछ विहारों में भिक्षु रहते थे।[144a]

दद्दर—जैन ग्रंथ नायाधम्मकहाओ (पृ० 98) के अनुसार यह देश अपने चंदन के लिए प्रसिद्ध था।

दक्षिणापथ—(या दक्खिणावह)—यह जैनियों का एक महान केंद्र था। यहाँ पर वैरसामो[145] आये थे। दक्षिणापथ उस संपूर्ण क्षेत्र का नाम था जो गंगा के दक्षिण में एवं गोदावरी के उत्तर में स्थित था जिसमें वह गये थे।[146]

दर्दुर (दुर्दर)—वेलुवन या मलय पर्वतमाला के मध्य यह एक पहाड़ी थी। संभवत: यह नीलगिरि है दोदाबेट्टा जिसका सर्वोच्च शिखर है।[147] महाभारत के अनुसार (II, 52, 34) यह पहाड़ी चोल एवं पाण्ड्य राजाओं से संबंधित थी।[149]

द्राविड—युवान-च्वाङ के अनुसार द्राविड़ की परिधि 6000 से अधिक थी और इसकी राजधानी कान-चिह्-पु-लो की परिधि 30 ली से अधिक थी। वहाँ पर सौ से अधिक बौद्ध विहार थे जिनमें स्थविर संप्रदाय के 10,000 से अधिक भिक्षु निवास करते थे।[149]

---

142 बृहत्कथाकोष, 138 और आगे; आवश्यक चूर्णी, पृ० 397.

143 एस० के० आयंगर, ऐंश्येंट इंडिया, पृ० 371.

144 इंडियन कल्चर, XII, पृ० 41.

144a वाटर्स ऑन युवान-च्वाङ्, II, पृ० 224.

145 आवश्यक चूर्णी, पृ० 404.

146 विनय महावग्ग, V, 13; विनयचुल्लवग्ग, I, 18.

147 ज० रा० ए० सो०, 1894, पृ० 231 और आगे; तुलनीय, पार्जिटर, ज्यॉग्रेफी ऑव रामाज एक्जाइल, ज० रा० ए० सो०. 1894, पृ० 263.

148 दृष्टव्य, महाभारत, XIII, 165, 32; रामायण, लंकाकांड, 26-42, रघुवंश IV, 51.

149 वाटर्स, ऑन युवान-च्वाङ्, II, पृ० 226.

एडेदोर—यह उत्तर में कृष्णा और दक्षिण में तुंगभद्रा नदी के मध्य स्थित भू-खंड था और इसमें रायचूर जिले का एक बड़ा भाग संमिलित था।[150]

गंगवाड़ी—प्राचीनकाल में दक्षिण भारत में विकसित यह एक जैन राज्य था। यह अत्यंत रुचिकर था और इसने महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा की है। इसका नाम-करण गंगवंशीय राजाओं के आधार पर हुआ है जिनके राज्य का यह एक अंग था और जिसके अंतर्गत् वर्तमान मैसूर प्रदेश का एक विशाल भाग था। यह 96,000 वाला देश था। इसकी पहली राजधानी कुवलाल थी जिसका नाम कालांतर में बदलकर कोवलाल और फिर कोलाल कर दिया गया था। यह मैसूर के पूर्वी भाग और पालार नदी के पश्चिम में स्थित वर्तमान कोलार है। कावेरी गंगवाड़ी की प्रमुख नदी है।[151]

गोदावरी—विष्णुस्मृति (85.42) में इस बड़ी दक्षिण-भारतीय नदी का उल्लेख है। यह खनिज धातुओं में संपन्न बतलायी जाती है।[152] रावण ने इसी स्थान से सीता का अपहरण किया था। आवश्यक चूर्णी में वर्णित (पृ० 547) बेण्णा इसकी एक सहायक नदी थी। मंदाकिनी, जिसे मञ्जीरा भी कहा जाता था, गोदावरी की दक्षिणी सहायक नदी थी।[153]

गोकर्ण—कालिदास ने गोकर्ण का वर्णन दक्षिणी-भारत के एक तीर्थ स्थान के रूप में किया है।[154]

गोली—यह गुंटुर जिले के पलनाड तालुक में कृष्णा नदी की एक सहायक गोल्लेरु नदी के तट पर स्थित एक गाँव है। इस गाँव में एक स्तूप के भग्नावशेष है और इसकी वेदिका पर जातक-मंदिरों एवं बुद्ध के जीवन की कहानियों को प्रदर्शित करने वाले अनेक उच्चित्र हैं।[155]

गुहेश्वरपाटक—यह भौमकार राजाओं की राजधानी थी। इसे अति संभवतः आधुनिक जयपुर से समीकृत किया जा सकता है।[156]

---

[150] एपि० इं०, जिल्द, XXXIV, भाग, IV, पृ० 165.

[151] राइस, गंगवाड़ी, कंमेमोरेटिव एसेज प्रेजेंटेड टु आर० जी० भंडारकर, पृ० 237 और आगे।

[152] रामायण, अरण्यकाण्ड, अध्याय, 7 व 8.

[153] वही, अरण्यकाण्ड, अध्याय, 73.

[154] रघुवंश, VIII, 33.

[155] दृष्टव्य, बि० च० लाहा, माई इंडोलॉजिकल स्टडीज, भाग, II, पृ० 145.

[156] एपि० इं०, XXIX, भाग, IV, अक्टूबर, 1951.

हौनेहल्ली—यह मैसूर राज्य के उत्तरी कनारा जिले के सिरसी ताल्लुक में है।[157]

जंबुकेश्वर—त्रिचिनापल्ली के समीप जंबुकेश्वर मंदिर में अनेक नक्काशियों से युक्त एक मंडप है। इसके गोपुरम् सब से पुराने हैं जो 1250 ई० में उत्तरकालीन चोल या प्रारंभिक पाण्ड्य राजाओं के शासनकाल में बने प्रतीत होते हैं।[158]

जयंतमंगल—आलवायी नदी की दोनों प्रशाखाओं के मध्य स्थित यह आधुनिक चैन्नमंगलम है।[159]

कलिंगनगर—चीनी इसे क-लेंग-के नाम से जानते थे। यह अतिसंभवत: नगर ही है।[160] कालिदास ने कलिंग एवं उत्कल को दो पृथक राज्य माना है।[161] उत्कल की सीमा पूर्व में कपिशा नदी तक और पश्चिम में मेकलों के राज्य तक फैली हुयी थी।[162] यहाँ पर 10 से अधिक बौद्ध विहार थे जिनमें 500 भिक्षु रहते थे जो महायान स्थविर संप्रदाय के विद्यार्थी थे।[163] सुक्म की स्थिति के वर्णन से, जिसमें मगध प्रदेश के पूर्व के क्षेत्र और दक्षिण में गंगा के दक्षिण की ओर कलिंग कीसीमा तक के क्षेत्र संमिलित प्रतीत होते हैं, कलिंग की सीमा स्पष्ट होती है जो गंगा से पश्चिम की ओर कम से कम गंगा की रूपनारायण बाहु से प्रारंभ होती है जिसके मुहाने पर ताम्रलिप्ति (आधुनिक तामलुक) का प्राचीन बंदरगाह स्थित है।

कण्डराड—यह पूर्व में गोदावरी जिले में पिठपुरम के समीप स्थित एक गाँव है जहाँ पर प्रोलयनायक का विलास दानपत्र उपलब्ध हुआ था।[164]

कण्णपेण्णा (वेण्णा)—यह महिष्मक राज्य में एक नदी थी।[165]

कण्टियूर—यह प्राचीन काल में पश्चिमी समुद्रतट पर स्थित एक संपन्न

---

[157] एपि० इं०, जिल्द, XXXIV, भाग, IV, पृ० 205.

[158] रॉयल एसियाटिक सोसायटी बंगाल द्वारा 1947 में प्रकाशित इंट्रोड्यूसिंग इंडिया, भाग, I, पृ० 8.

[159] बि० च० लाहा वाल्युम, I, पृ० 302.

[160] एपि० इं०, भाग, XXX, भाग, I, जनवरी, 1953, पृ० 26.

[161] रघुवंश, IV, पृ० 38.

[162] वही, IV, पृ० 38.

[163] वाटर्स, ऑन युवान-च्वाङ्, II, पृ० 198.

[164] एपि० इं०, जिल्द, XXXII, भाग, VI, अप्रैल, 1958.

[165] जातक, V, पृ० 162-63.

नगर था। यह कायंकुलम राजाओं की राजधानी थी जो यादव वंश के थे।[166]

करडिकल—यह लिङ्गसुगूर के समीप करडकल ही है।[167]

कौरालक—फ्लीट ने इसका रूप कैरलक और केरल परिवर्तित कर दिया है।[168]

कवाटपुर—कुछ लोगों ने इस नगर को कोरकई से समीकृत किया है। यह उत्कृष्ट मोतियों के लिए विख्यात् है।[169]

कविट्ठ—यह गोदावरी-तट पर एक वन है।[170]

कावेरी—यह नदी मलय-गिरि से निःसृत है जो अगस्त्य के लिए पवित्र था। निर्मल जल से परिपूर्ण यह एक दिव्य नदी थी।[171] रघु ने इसे पार किया था।[172]

काविरिपट्टिनम (कावेरीपट्टिनम)—करिकल नामक एक उत्साही राजा ने कावेरी-तट पर स्थित इस स्थान को अपनी राजधानी बनाया था और उसने इस नदी के तटों को ऊँचा तथा नहरें निकलवा करके बाढ़ से इस नगर की रक्षा की थी।[173]

केरल देश—कालिदास ने अपने रघुवंश (IV, 54) में इस देश का वर्णन किया है जहाँ पर रघु की सेना का आगमन सुनकर स्त्रियों ने अपने आभूषण उतार कर फेंक दिये थे।

कीलूर—यह दक्षिणी अर्काट जिले में तिरुक्कोरिलूर तालुक में है।[174]

किष्किन्ध्या—धुलेव से लगभग 4 मील दक्षिण-पूर्व में कल्याणपुर नामक

---

166 बि० च० लाहा वाल्युम, I, पृ० 298.

167 एपि० इं०, XXXIV, भाग, IV, पृ० 165.

168 एस० के० आयंगर, ऐंश्येंट इंडिया ऐंड साउथ इंडियन हिस्ट्री ऐंड कल्चर, I, पृ० 219.

169 इंडियन कल्चर, I, पृ० 584.

170 जातक, V, पृ० 123, 133.

171 रामायण, किष्किन्ध्याकाण्ड, 41, 15.

172 रघुवंश, IV, पृ० 45.

173 लाहा, ट्राइब्स ऑव ऐंश्येंट इंडिया, पृ० 189; एस० के आयंगर, ऐंश्येंट इंडिया, पृ० 93.

174 एपि० इं०, XXXII, भाग, III, जुलाई, 1957.

आधुनिक गाँव के पास एक प्राचीन नगर के विस्तृत भग्नावशेषप्राचीन किष्किन्ध्या नामक स्थल को लक्षित करते हैं।[175] बाल्मीकि ने किष्किन्ध्या का सुंदर वर्णन प्रस्तुत किया है जिसमें सुसज्जित एवं सुनिर्मित भवन थे जिनमें वानर स्त्रियाँ एक उच्च जीवन स्तर व्यतीत करती थी।[176]

कोलत्तिरि—यह मलाबार का एक अत्यंत महत्त्वपूर्ण प्राचीन राज्य था। यह इलायची के लिए प्रसिद्ध था।[177]

कोलुपर्तनी—इसकी पहचान आधुनिक श्रीकाकुलम जिले से की जाती है।[178]

कोंकान—चीनी इसे कुंग-कन-न-पु-लो कहते थे। युवान-च्वाङ के अनुसार वहाँ पर सौ से अधिक बौद्ध-विहार और 10,000 से अधिक बौद्ध भिक्षु रहते थे जो हीनयान एवं महायान संप्रदायों के छात्र थे।[179]

कोट्टयम—यह राज्य उत्तरी मलाबार के पूरब की ओर स्थित है।[180]

क्रौञ्चालय—यह दक्षिण भारत का एक उल्लेखनीय वन था।[181]

कुम्भकोनम्—इसका प्रसिद्ध नाम तिरुक्कुडमुक्कु है।[182] कुम्मकोनम के मंदिर में दक्षिण-भारत के अन्य मंदिरों की भाँति एक सरोवर और एक गोपुर है।

महाबलिपुरम्—इसे मामल्लपुरम या मावलिवरम भी कहते हैं। पल्लव-युग में यह धार्मिक एवं सांस्कृतिक पुनरुद्धार का एक महान केंद्र था। इसका नामकरण महामल्ल नरसिंहवर्मन नामक एक पल्लव-नरेश के आधार पर हुआ था जो सातवीं शती ई० में काञ्ची का एक शक्तिशाली राजा था।

महाराष्ट्र—(मो-हा-ला-च,आ)—इस देश की परिधि 6000 ली थी और इसकी राजधानी की परिधि 30 ली से अधिक थी। राजधानी के बाहर एवं भीतर पाँच अशोक स्तूप बनवाये गये थे।[183]

महेन्द्राचल—बाण कृत हर्षचरित (सप्तम उच्छ्वास) के विवरण की पुष्टि

---

[175] **एपि० इं०, भाग, I, XXX, जनवरी, 1953, पृ० 4.**

[176] **इंडियन कल्चर, I, पृ० 584.**

[177] **बि० च० लाहा वाल्यूम, I, पृ० 306.**

[178] **एपि० इं०, XXXIV, भाग, VI, पृ० 190.**

[179] **वाटर्स, ऑन युवान-च्वाङ्, II, पृ० 237.**

[180] **बि० च० लाहा वाल्यूम, I, पृ० 306.**

[181] **इंडियन कल्चर, भाग, I, पृ० 584.**

[182] **एपि० इं०, XXXII, भाग, VI, अप्रैल, 1958.**

[183] **वाटर्स, ऑन युवान-च्वाङ्, II, पृ० 239.**

जिसमें महेन्द्रपर्वत को मलयपर्वत से संबंधित बतलाया गया है—चैतन्यचरितामृत से भी होती है।[184]

महिम्सक—यह एक राज्य है जिसकी राजधानी सकुल है।[185]

महोदयपुर—इसे अलवाई नदी के तट पर स्थित आधुनिक तिरुवन्चिकुलम से समीकृत किया जाता है। यह पेरुमलों का केंद्र था।[186]

मलकेटक—यह गाँव मैसूर राज्य के गुलबर्ग जिले में वर्तमान मलखेद के समान प्रतीत होता है।[187]

मलयगिरि—कालिदास ने अपने रघुवंश (IV, 46) में इसका वर्णन किया है।

मुसुनिक—यह देवेन्द्रवर्मन तृतीय (शुंग संवत् 306) के मुमुनिक दानपत्र द्वारा प्रदत्त एक गाँव है जिसे मुसुनूरु से समीकृत किया गया है।[188]

नागार्जुनिकोण्ड—यह पहाड़ी आंध्र-राज्य के गुंटुर जिले के पलनाड तालुक में स्थित है। यह कृष्णा नदी के दाहिने तट पर छायी हुयी है। नागार्जुन-पहाड़ी, जो एक विशाल चट्टानी पहाड़ी है, मचेरिया रेलवे स्टेशन से 16 मील पश्चिम में स्थित है। इस उल्लेखनीय स्थान का अन्वेषण 1926 में हुआ था। यहाँ पर ईंटों के कई टीले एवं संगमरमर के स्तंभ उपलब्ध हुये थे। कुछ स्तंभों पर प्राकृत भाषा में एवं दूसरी तथा तीसरी शताब्दी ई० की ब्राह्मी लिपि में अभिलेख उत्कीर्ण है। यहाँ से उपलब्ध वस्तुओं में बहुसंख्यक भग्न विहार अर्धवृत्ताकार मंदिर, स्तूप, अभिलेख, मुद्राएँ, पुरावशेष, मृण्भांड, मूर्तियाँ और अमरावती शैली में 400 से अधिक भव्य अध्युच्चित्र हैं। नागार्जुनिकोण्ड से प्राप्त अभिलेखों से यह प्रकट होता है कि दूसरी एवं तीसरी शताब्दी ई० में विजयपुरी नामक प्राचीन नगर अवश्यमेव दक्षिण भारत का एक सबसे बड़ा एवं अत्यंत महत्त्वपूर्ण बौद्ध सन्निवेश रहा होगा। स्तूप, विहार एवं मंदिर बड़ी ईंटों से बने थे; ईंटें मिट्टी के गारे से चुनी गई थीं और दीवालों पर पलस्तर था। इन पक्के भवनों का अलंकरण एवं गढाई या संचकन सामान्यतया गचकारी से किया गया था और ये भवन सिर से पैर तक चूने से पुते हुये थे। नागार्जुनिकोण्ड का प्रत्येक विहार स्वयं में पूर्ण था। विहार में ईंटें की दीवाल से आवेष्टित एक आयताकार प्रागंण होता था। केंद्र में पत्थर

---

[184] **विस्तृत विवरण के लिए द्रष्टव्य, इंडियन कल्चर, भाग, I, पृ० 581.**

[185] **जातक, I, पृ० 356, V, पृ० 163.**

[186] **बि० च० लाहा वाल्यूम, I, पृ० 303.**

[187] **एपि० इं०, जिल्द, XXXII, भाग, VII.**

[188] **वही, भाग, XXX, खण्ड. I, जनवरी. 1953, पृ० 26.**

की फर्श वाला एक महाकक्ष होता था जिसकी छत पत्थर के स्तंभों पर आधारित थी। घेरे के चारों ओर बाहरी दीवालों पर अंत्याधृत भिक्षुओं के लिए कोठरियों की एक पंक्ति थी जिसके सामने प्रायः एक दलान होती थी। कुछ कोठरियाँ भंडार कक्ष और कुछ चैत्यों के रूप में प्रयुक्त होती थीं और वहाँ पर यर्थाथतः एक विशाल कमरा था जो भोजनशाला के काम आती थीं। इस प्रकार के छः विहार खोदे गये थे। मंदिर के पूर्व में एक विस्तृत क्षेत्र में विहारों के तीन स्कंध खोदे गये थे जिनमें प्रत्येक स्कंध में पाँच कोठरियों की सामान्य व्यवस्था थी। इन स्कंधों के केंद्र में एक सुनिर्मित मंडप था। पहले कोठरियों के दक्षिणी स्कंध का उत्खनन किया गया था। प्रत्येक कोठरी में एक द्वार था। पाँचवीं कोठरी के पूरब में एक कमरा विशेषतः एक स्नानागार था। विहार के पूर्वी स्कंध या बाजू में भी पाँच कोठरियों की इसी प्रकार की व्यवस्था दृष्टिगत होती है। मंदिर के पश्चिम में पाँच कोठरियों की पंक्ति स्थित है। दीवालों पर यत्रतत्र एक जैसे पलस्तर के चिन्हों से यह व्यंजित होता है कि मूलतः इस पर सर्वत्र पलस्तर था।[189]

नेलकुण्ड—इसकी पहचान चित्रदुर्ग जिले में स्थित नलकुण्ड से की जाती है जहाँ पर चालुक्य अभिनवगुप्त का नलकुण्ड दानपत्र उपलब्ध हुआ था।[190]

नील—यह महाजव नदी एवं पन्चाप्सर झील के मध्य स्थित एक वन था।[191]

नीला—इसे पोनानि नदी से समीकृत किया जाता है जो मलाबार की एक प्रसिद्ध नदी है।[192]

पक्षितीर्थ—यह वेदगिरीश्वर देवता के मंदिर एवं उस पहाड़ी के लिये सुविख्यात है जो निकटवर्ती क्षेत्रों का सब से प्रसिद्ध भूचिह्न है। पहाड़ी पर स्थित मंदिर जिसके समीप पवित्र चीलों को नित्य मध्याह्न वेला में चुगाया जाता है, पल्लवयुगीन है।

पम्पा—ऋष्यमुखपर्वत के सन्निकट यह एक झील थी।[193]

---

[189] विस्तृत अध्ययन के लिए दृष्टव्य, ए०एच०लांगहर्स्ट, द बुद्धिस्ट ऐंटिक्विटीज आँव नागार्जुनिकोण्ड, मद्रास प्रेसीडेंन्सी, (मे० आर्क० सं० इं०, नं० 54 और आर्क० स० इं०, मेमायर नं० 71, 1938)।

[190] एपि० इं०, XXXII, भाग, V.

[191] रामायण, III, अध्याय, 14 और आगे।

[192] बि० च० लाहा वाल्यूम, I, पृ० 305.

[193] रामायण, अरण्यकाण्ड, अध्याय, 73, पृ० 10 और आगे।

पञ्चाप्सरस—यह एक झील थी जो उत्तर की ओर दण्डक-वन के प्रारंभिक छोर पर स्थित थी।[194]

पाण्ड्य—रघुवंश (VI, पृ० 59-65) में पाण्ड्यों का उल्लेख है जिनकी राजधानी उरगपुर थी।

पारावत—यह दक्खन में एक विहार था जहाँ पाँचवीं शताब्दी ईस्वी में फा-ह्यान गया था। यह विहार एक विशाल चट्टान को तराश कर बनाया गया था। यह पाँच मंजिल का था। पहली मंजिल गजाकार थी जिसमें शिला में 500 कक्ष; दूसरी सिंहाकार थी जिसमें 400 कक्ष; तीसरी अश्वाकार थी जिसमें 300 कमरे; चौथी वृषाकार जिसमें 200 कमरे और पाँचवीं कबूतर या पारावत के आकार की थी जिसमें 100 कमरे थे।[195]

पेद्द-बम्मिडि—यह आंध्र में श्रीकाकुलम जिले के नरसन्नपेत तालुक में स्थित था।[196]

पेरुंबुलि.ल्—यह रामनाथपुरम से लगभग नौ मील उत्तर-पर्व में स्थित है। यह मद्रास के मदुराई जिले के डिंडिगुल तालुक में है।[197]

प्रश्रवन-गिरि—यह बालि की राजधानी के ठीक बाद स्थित था। इसकी एक गुहा में बालि-वध करने के बाद राम ने विश्राम किया था।[198] यह पहाड़ी आधुनिक बेलारी जिले में और हांपी के निकट कहीं पर स्थित हो सकती है।[199]

पुष्पगिरि—यह आंध्र-राज्य में कुड्डापा जिले में कोटलूरु का एक ग्राम था जहाँ से यादव सिंघन के काल के पुष्पगिरि अभिलेख उपलब्ध हुये थे।[200]

राजराजमण्डलम्—इसमें कम से कम पाण्ड्य एवं केरल देश (मदुरा एवं त्रावणकोर के भाग) का एक भाग संमिलित है।[201]

रामनाथपुरम्—यह दक्षिण-रेलवे की तिरुचिरपल्ली-मदुराई लाइन पर स्थित

---

[104] **इंडियन कल्चर, भाग, I, पृ० 582.**

[195] **लेग्गे, ट्रावेल्स ऑव फा-ह्यान, पृ० 96-97.**

[196] **एपि० इं० जिल्द, XXXI, भाग, VI, जुलाई, 1956.**

[197] **वही, जिल्द, XXXII, भाग, VI, अप्रैल, 1958.**

[198] **रामायण, किष्किन्ध्याकाण्ड, पृ० 27.**

[199] **इंडियन कल्चर, भाग, I, पृ० 581.**

[200] **एपि० इं०, जिल्द, XXX, भाग, I, पृ० 32.**

[201] **एस० के० आयंगर, ऐंश्येंट इंडिया ऐंड साउथ इंडियन हिस्ट्री ऐंड कल्चर, I, पृ० 685.**

डिंडिगुल रेलवे स्टेशन से छः मील ठीक पूर्व में स्थित है जहाँ से एक पाण्ड्य अभिलेख उपलब्ध हुआ था।[202]

रेयूरु—इस गाँव को मेल-मुण्डराष्ट्र में स्थित बतलाया जाता है। मुण्डराष्ट्र में कोवूरु तालुक का अधिकांश भाग और आंध्रप्रदेश राज्य के नेल्लोर जिले के उत्तरी एवं दक्षिणी क्षेत्र के समीपवर्ती भाग संमिलित थे।[203]

ऋष्यमुख—इसकी एक गुहा में अपने भाई बालि के भय से सुग्रीव ने स्वयं अपने को छिपाया था।

सह्याद्रि—रघु ने सह्याद्रि पर्वत को मलय एवं दर्दुर पर्वतों के मध्य स्थित पालघाट-रिक्ति से होकर पार किया था।[204] कुछ लघु पहाड़ियाँ यथा, त्रिकूट, ऋष्यमुख और गोमंत इससे संबंधित हैं।

सँगलूद—(**सँगलद**)—यह अकोला जिले में है।[205]

सिद्धेश्वर—यह गाँव कटक जिले में वैतरणी के तट पर जैपुर (प्राचीन विरजातीर्थ) के समीप स्थित है। इस गाँव का नाम देवता के नाम से ग्रहण किया गया है।[206]

सिंहपुर—तमिल ग्रंथ सिलप्पधिकरम एवं मणिमेखलाई के अनुसार यह स्थान कलिंग की दो राजधानियों में से एक था जिसे अरिपुर भी कहा जाता था। इसे उत्तर कलिंग में काञ्ची विषय की दक्षिणी सीमा पर अवस्थित बतलाया जा सकता है।[207]

सिररंबकम—यह चिंगलपुत जिले के तिरुवल्लूर तालुक में स्थित एक गाँव है जहाँ पर परमेश्वरवर्मन का अभिलेख उपलब्ध हुआ था।[208]

श्रावण-बेलगोल—यहाँ पर चन्द्रबेट्ट नामक पहाड़ी के शिखर पर जैन देवता गोमतेश्वर की एक बड़ी प्रतिमा है।

---

[202] एपि० इं०, XXXII, भाग, VI.

[203] वही, XXIX, भाग, IV, 1951.

[204] रघुवंश, IV, 51, 52.

[205] एपि० इं०, XXIX, भाग, I, अक्टूबर, 1951.

[206] वही, XXIX, भाग, IV, अक्टूबर, 1951.

[207] एस०के० आयंगर, ऐंश्येंट इंडिया ऐंड साउथ इंडियन हिस्ट्री ऐंड कल्चर, I, पृ० 269, पा० टि०।

[208] एपि० इं०, XXXII, भाग, V.

तंजोर (तंजई)—यह एक गाँव का नाम है।[209] तंजौर के मंदिरों में चण्डेश्वर का एक मंदिर है। यह चोल नरेशों, नायक शासकों एवं महाराष्ट्र के राजाओं की राजधानी थी। यह अपने महान् ब्रहदीश्वर (बृहदेश्वर) मंदिर के लिये विख्यात् है जो भारत का सब से ऊँचा मंदिर है। तंजौर के राजराजेश्वर या श्री बृहदीश्वर मंदिर का निर्माण राजराज महान् (985-1014 ई०) ने कराया था।[210] बृहदेश्वर मंदिर में एक बहुत बड़ा शिवलिंगम है। यह 216 फीट ऊँचा है और भारतीय स्थापत्य का एक अद्भुत नमूना है। चारों ओर से यह एक बड़ी परिखा से परिवेष्ठित है। विशालकाय पाषाण-निर्मित नंदि वृष इस बड़े मंदिर के सामने बैठा हुआ प्राप्त होता है। मंदिर में पाषाण-निर्मित भीमकाय तोरण एवं मंडप है। मंदिर का निर्माण राजा राजेन्द्र चोल के काल में हुआ था।[211] तंजौर का यह भव्य मंदिर दक्षिण भारतीय शिल्पकला की शैली के ग्यारहवीं शताब्दी के विकास का प्रतिनिधित्व करता है।[212] लगभग 1000 ई० में निर्मित तंजौर का यह मंदिर (200 फीट ऊँचा) द्रविड़ कला की पराकाष्ठा है।[213] पर्सी ब्राउन ने लगभग 1750 ई० के तंजौर के सुब्रह्मण्य मंदिर का एक चित्र प्रकाशित किया है।[214]

होयसल नरेश सोमेश्वर एवं रामनाथ के अभिलेख सुदूर दक्षिण में तंजौर तक पाये जाते हैं।[215] पुञ्जई को (तंजोर जिले) किडारमगोण्डान कहा जाने लगा था।[216] तंजोर का प्राचीन नगर, मद्रास से लगभग 218 मील दक्षिण-पश्चिम में कावेरी नदी पर स्थित है।

---

[209] सा० इं० इं, I, पृ० 92; एपि० इं०, XXVII, भाग, VII, जुलाई, 1948, चतुरानन पंडित का तिरुवोंरियूर अभिलेख।

[210] जे० एम० सोमसुंदरम, द ग्रेट टेंपुल ऐट तंजोर, 1935, प्रस्तावना।

[211] पी० वी० जगदीश अय्यंर, साउथ इंडियन श्राइंस, पृ० 87-88; लाहा, होली प्लेसेज ऑव इंडिया, पृ० 41.

[212] इंट्रोडयूसिंग इंडिया, भाग, I, रॉयल एशियाटिक सोसायटी बंगाल द्वारा प्रकाशित, पृ० 8.

[213] ओ० ब्रुहल, इंडियन टेंपुल्स, नोट्स।

[214] इंडियन आर्किटेक्चर, इंग्लिश ऐंड हिंदू, प्लेट, LXVI,

[215] मद्रास आर्क्यॉलॉजिकल रिपोर्ट, 1896-97.

[216] वही, 1925, 188, 191, और 196.

तिरुमलि-शै—यह पूनामल्ली के समीप स्थित है जो इसी नाम के एक वैष्णव अलवर के कारण पुनीत माना जाता था।[217]

तिरुप्परुट्ठिकुनरम—यह काञ्ची के निकट एक गाँव है। यह किसी समय प्रसिद्ध एक जैन केंद्र का अवशेष है। यहाँ पर अब महावीर को समर्पित एक रुचिर जैन मंदिर है।[218]

तिरुसूलम—यह एक गाँव है। यहाँ का शिव-मंदिर चोल-युग का है और इसमें ग्यारहवीं शताब्दी ई० के अभिलेख हैं।[218अ]

तिरुवदत्तुराई—यह दक्षिण अर्काट जिले में है।

तोण्डमण्डलम्—काञ्ची एवं वेंगडम (तिरुपति) दोनों ही इसमें संमिलित हैं।[219]

त्रिकूट—कालिदास ने सह्य पर्वतमाला से संबंधित इस पहाड़ी का वर्णन किया है।[220] भागवतपुराण में इसका वर्णन मेरु या सिनेरु पर्वत के नीचे स्थित एक पर्वत के रूप में हुआ है (V, 16.26)।

वैतरणी (वेतरिणी)—जैन साहित्य में इस नदी का वर्णन वेतरिणी के रूप में हुआ है।[221]

वनवासी—जराकुमार के पौत्र, जियसत्तु ने इस नगर पर शासन किया था।[222]

वरदा—कालिदास ने अपने मालविकाग्निमित्र (V, 1, 13) में इसका वर्णन किया है।

वानमयी—कोट्टयम के पूरब की ओर यह एक नदी है। इसके तट पर एक मंदिर स्थित है।[223]

---

[217] श्रीनिवासाचारी, हिस्ट्री ऑव द सिटी ऑव मद्रास, XXIII,

[218] वही, XXII.

[218अ] श्रीनिवासचारी, हिस्ट्री ऑव द सिटी ऑव मद्रास, XXIII.

[219] एस० के० आयंगर, ऐंश्येंट इंडिया ऐंड साउथ इंडियन हिस्ट्री ऐंड कल्चर I, पृ० 522.

[220] रघुवंश, IV, पृ० 59.

[221] सूयगडंग चूर्णी, पृ० 159 एवं उत्तराध्ययन सूत्र, 19, 59.

[222] निसीथ-चूर्णी, 8, पृ० 502.

[223] बि० च० लाहा वाल्यूम, I, पृ० 307.

वेंकितंगु—यह त्रिचूर के पश्चिम में एक गाँव है। यहाँ पर शंकरनारायण का प्रसिद्ध मंदिर है।[224]

विलिञ्जम—कुछ लोगों के अनुसार इसे दक्षिण त्रावणकोर में इसी नाम के एक मछवारे गाँव से समीकृत किया गया है।[225]

वडगेरी—यह भूतपूर्व हैदराबाद राज्य में था। यह चालुक्य विक्रमादित्य चतुर्थ के शासनकाल से संबंधित था।[226]

पूर्वी भारत

अङ्ग—कालिदास ने अपने रघुवंश में इस राज्य का उल्लेख किया है (VI, 27-29)।

बल्लभपुर—यह हुगली जिले की सेरमपुर तहसील में है। यह एक गाँव है जहाँ पर राधावल्लभ का मंदिर है।[227]

भद्दिलपुर—इसे हजारीबाग जिले में हंटरगंज से लगभग 6 मील दूर कुलुहा पहाड़ी के निकट भडिया नामक एक गाँव से समीकृत किया जाता है। यहाँ पर अरिष्टनेमि आये थे।[228]

भोगनगर—बुद्ध यहाँ पर रहते थे। वहाँ से वह पावा गये। यह स्थान पावा के समीप है।[229]

चन्द्रनाथ—इसके निकट अन्य पुण्य मंदिरों में यहाँ से तीन मील उत्तर में लबनाख्या का मंदिर और तीन मील दक्षिण में बरबकुंड का मंदिर है।

चयवन-आश्रम—यह आश्रम बिहार में शाहाबाद में स्थित था[230] किंतु कुछ लोगों के अनुसार यह पयोष्णी नदी के समीप सतपुड़ा पर्वतमाला में स्थित था।[231]

दुर्वासा-आश्रम—ग्रियर्सन की धारणा है कि यह गया जिले की नवादा तहसील

---

[224] **बि० चं० लाहा वाल्यूम, I, पृ० 304.**

[225] **एपि० इं०, XXXII भाग, VI, अप्रैल, 1958.**

[226] **वही, XXXIV, भाग, IV, पृ० 193.**

[227] **लाहा, होली प्लेसेज ऑव इंडिया, पृ० 2.**

[228] **अंतगडदसाओ, 34, पृ० 7 और आगे।**

[229] **दीघ, II, 123, और 126.**

[230] **स्कन्दपुराण, अवन्तीखण्ड, अध्याय, 57.**

[231] **पद्मपुराण, अध्याय, 8.**

में रजौली से सात मील पूर्वोत्तर में दुवौर में स्थित था (ग्रियर्सन कृत, नोटस ऑन द डिस्ट्रिक्ट ऑव गया)।

गंगा (गैन्ज़ीज)—गंगा की प्रथम एवं महती पश्चिमी सहायक नदी विष्णु-स्मृति (85.9) में वर्णित मुख्य यमुना नदी है।

गया—इसका वर्णन विष्णुस्मृति (85, 4, 66) में है।

हरिकेल—यह एक पूर्वी देश है जिसे कुछ लोगों ने वङ्ग से समीकृत किया है।[232]

जह्नु-आश्रम—यह पूर्वी भारत में भागलपुर के पश्चिम में सुल्तानगंज में था। गैवीनाथ महादेव का मंदिर जो इस तपोवन में है गंगा के नल से निकली हुयी एक शिला पर सुल्तानगंज के सामने स्थित है।[233]

कलुहा या कौलेश्वरी पहाड़ी—यह हजारीबाग जिले में हंटरगंज थाने के अंतर्गत् है। यह हंटरगंज से लगभग छः मील दूर पर स्थित है।[234]

कर्णसुवर्ण—यहाँ पर 2000 से अधिक भिक्षुओं से युक्त दस से अधिक बौद्ध विहार थे। ये भिक्षु संमतिय संप्रदाय के थे।[235]

कौशिकी—कालिदास ने अपने कुमारसम्भव में (VI, 33) महाकौशिकी नदी का वर्णन किया है।

कामरूप—इसे प्राग्ज्योतिष भी कहते हैं।[236]

केंदुलि—यहाँ पर जयदेव का मंदिर है जिसका निर्माण बर्दवान के महाराज कीर्तिचन्द बहादुर की माता ने कराया था।

किरातदेश—कालिदास ने अपने रघुवंश (IV, 76) में किरातों का उल्लेख किया है जो ब्रह्मपुत्र की पूर्वी घाटी में रहते थे। टॉलेमी के अनुसार वे उत्तरापथ में रहते थे।[237] उनका सन्निवेश पूर्वी क्षेत्र में भी था। टॉलेमी ने किरातों के देश

---

[232] इंडियन कल्चर, XII, पृ० 89.

[233] लाहा, अर्ली इंडियन मानेस्टरीज, पृ० 5; मार्टिन, इंडियन इंपायर, III, पृ० 37; ज० ए० सो० बं० XXXIII, पृ० 360; आर्क० स० रि०, XV, 21

[234] एपि० इं०, XXX, भाग, III, पृ० 84.

[235] वाटर्स, ऑन युवान-च्वाङ्, II, पृ० 191; तुलनीय, बील, लाइफ ऑव युवान-च्वाङ्, पृ० 131.

[236] एपि० इं०, XXXII, भाग, VI, अप्रैल, 1958; विस्तृत अध्ययन के लिए दृष्टव्य, इंडियन कल्चर, II, पृ० 153-54.

[237] मैक्रिंडिल, ऐंश्येंट इंडिया, पृ० 277.

को किर्रहेडिया कहा है। श्रीमद्भागवत (11.4.18) में उन्हें आर्यावर्त्त के बाहर रहते हुये बतलाया गया है।

कोटुंबर—यह मलमल के लिए प्रसिद्ध एक देश है।[238]

कुक्कुटाराम—यहीं पर अशोक ने 1000 भिक्षुओं को बुलाया था और उन्हें संघ की आवश्यक वस्तुएँ दी थी। युवान-च्वाङ ने बतलाया है कि यह विहार स्पष्टतः एक प्राचीन विहार था जिसमें घण्टाकार एवं आमलक स्तूप थे।[239]

मगध—कीकट[240] मगध का पर्यायवाची था (सेंट पीटर्सबर्ग डिक्शनरी)। यास्क के अनुसार यह अनार्यो के एक देश का नाम था।[241] त्सिमर का यही मत है।[242] वेबर का मत है कि कीकट लोग मगध में[243] रहने वाले आर्यजन थे। कीकट की पहचान निश्चित रूप से नहीं की जा सकती।[244]

मंदारन—यह हुगली जिले में स्थित एक गाँव है जहाँ पर एक प्राचीन हिंदू दुर्ग के अवशेष उपलब्ध होते हैं जो पत्थर की दीवालों से घिरा हुआ और परिखा से परिवृत्त मिट्टी का वृत्ताकार एक विशाल टीला है। दक्षिण से होने वाले आक्रमणों से देश की प्रतिरक्षा करने वाला यह एक सीमांत दुर्ग था।

नवद्वीप—यह भागीरथी के पश्चिमी तट पर जलंगी से इसके संगम के ठीक सामने स्थित है। वर्त्तमान नवद्वीप नगर नदिया जिले में कुलिया नामक प्राचीन गाँव के स्थल पर स्थित है। यह $3\frac{1}{2}$ वर्ग मील क्षेत्र पर फैला हुआ है।[245] 1485 ई० श्री चैतन्य यहाँ पर उत्पन्न हुये थे।

नालंदा—पपञ्चसूदनी (III, 52) में इसका उल्लेख एक नगर के रूप में हुआ है जो अधिकतर भिक्षाटन के लिये था।

---

[238] जातक, VI, पृ० 47.

[239] वाटर्स, ऑन युवान-च्वाङ् II पृ० 98 और 101; तु० दीपवंस (संपादक बि० च० लाहा, अध्याय, 7, 57-59).

[240] ऋग्वेद, III, 53, 14.

[241] निरुक्त, VI, 32.

[242] अल्टिंडिशेज लेबेन, 31, 118.

[243] इंडिशे स्टुडियेन, I, पृ० 186.

[244] ओल्डेनबर्ग, बुद्ध, पृ० 402-403; हिलेब्रांत, वेदिशे माइथॉलॉजी, I, पृ० 14-18; वेदिक इंडेक्स, , पृ० 159.

[245] विस्तृत विवरण के लिए दृष्टव्य, लाहा, होली प्लेसेज ऑव इंडिया, पृ० 5-6.

निश्चिीरा—वाराहपुराण (85) में निश्वीर पाठ है। अतिसंभवतः यह कौशिकी नदी से संबंधित है जिसके साथ प्रायः इसका वर्णन किया जाता है।[246]

पौण्ड्रवर्धनभुक्ति—पुण्ड्रवर्धन में बंगाल के दीनाजपुर, माल्दह, राजशाही और बोगरा तथा रंगपुर (बांगला देश) के पश्चिमी भाग संमिलित थे।[247] करतोया नदी अब भी जलपाईगुड़ी एवं पूर्णिया की सीमा है।

पार्श्वनाथ—दंतर परगना की कुलुहा पहाड़ी पर बौद्ध और जैन अवशेष स्थित हैं। उल्लेखनीय अवशेषों में महुदी पहाड़ी पर स्थित चार उल्लेखनीय मंदिर हैं।[248]

पाटलिपुत्र—कालिदास के अनुसार पुष्पपुर अज के समय में स्थित था।[249]

प्राग्ज्योतिष—कालिदास के अनुसार यह लौहित्य नदी या ब्रह्मपुत्र के तट पर स्थित था।[250] कामरूप के बलवर्मन तृतीय के हावड़ा घाट अभिपत्रों में कामरूप, प्राग्ज्योतिषपुर और लौहित्यवारिधि—सभी का वर्णन है।[251]

राजगह—इसे उसभपुर भी कहा जाता था जहाँ महावीर आये थे।[252] निम्नलिखित उल्लेख द्रष्टव्य हैं : ज० बि० उ० रि० सो०, IV, 1918, पृ० 113-135; ज० ए० सो० बं०, (लेटर्स), XV, 1949, पृ० 65 और आगे; राजगिर, 1950, लें० अ० घोष—ऐंश्येंट इंडिया (बुलिटिन ऑव द आर्क्यॉलॉजिकल सर्वे ऑव इंडिया, नं० 7, जनवरी, 1951, पृ० 66 और आगे। प्रसिद्ध बौद्ध भाष्यकार बुद्धघोष ने राजगह के अंतोनगर एवं बहिनगर का वर्णन किया है।

शान्तिपुर—यह नदिया जिले की रानाघाट तहसील में स्थित एक कस्बा है। वर्ष पर्यंत विशेषतः कार्तिक-पूर्णिमा (अक्टूबर-नवंबर) पर होने वाली राश-जात्रा पर्व के अवसर यहाँ तीर्थयात्री आया करते हैं। कुशल बुनकरों द्वारा सुनिर्मित धोतियों एवं साड़ियों के लिए प्रसिद्ध यह एक व्यापारिक नगर है।[254]

---

[246] लाहा, ज्यॉग्रेफिकल एसेज, पृ० 93.

[247] इंडियन कल्चर, भाग, I, पृ० 426.

[248] लाहा, होली प्लेसेज ऑव इंडिया, पृ० 49.

[249] रघुवंश, VI, पृ० 24.

[250] वही, IV, 81.

[251] एपि० इं०, XXXII, भाग, VI.

[252] विवागसूय, II, पृ० 2.64.

[253] सारत्थप्पकासिनी, पा० टे० सो०, I, 313.

[254] लाहा, होली प्लेसेज ऑव इंडिया, पृ० 6-7.

सीताकुण्ड—यह कुंड अब नहीं है किंतु इस स्थान पर अब भी शंभुनाथ का मंदिर है।

तपोदा—यह बेभार पहाड़ी के नीचे एक विशाल झील थी। झील से निकलने वाली सरिताओं का जल गरम था। यह नागों का क्रीड़ा स्थल था। इसका जल इसलिए गरम था क्योंकि यह राजगह के नीचे स्थित लोहकुंभी नामक पहाड़ी से होकर बहता था।[255]

तारकेश्वर—यह हुगली जिले की सेरमपुर तहसील में स्थित एक महत्त्वपूर्ण गाँव था। यहाँ पर आर्कषण की प्रमुख वस्तु रेलवे स्टेशन से लगभग 500 गज की दूरी पर स्थित शिव-भगवान या तारकेश्वर का लिंग मंदिर था। वर्ष पर्यंत हिंदू तीर्थयात्री इस मंदिर में आते रहते हैं। यहाँ पर समय-समय पर कई धार्मिक पर्व होते हैं।

ताम्रलिप्ति—यहाँ भी युवान-च्वाङ आया था। उसके अनुसार यहाँ पर दस से अधिक बौद्ध विहार थे जिनमें 1000 से अधिक भिक्षु रहते थे।[256]

उत्तराप—यह मही नदी के उत्तर में स्थित क्षेत्र था। इसे अंगुत्तराप भी कहा जाता था क्योंकि यह मही नदी के उस पार स्थित अंगदेश का भाग था।[257]

वंशावाटी—वस्तुतः वहाँ पर तीन मंदिर हैं जिनमें विष्णु-मंदिर सर्वप्राचीन है। यहाँ की अधिष्ठातृ देवी हंसेश्वरी हैं जिसकी प्रतिमा नीम की लकड़ी की है[258] जो नीले रंग में पुती हुयी है। वह एक कमल-पुष्प पर बैठी हुयी हैं जिसका नाल लेटे हुये शिव की नाभि से निकलता है।[259]

वङ्ग—कालिदास ने वङ्ग को गंगा एवं ब्रह्मपुत्र के डेल्टा में स्थित बतलाया है।[260]

वर्धमानपुर (वद्धमानपुर)—इसकी पहचान आधुनिक बर्दवान से की जाती

---

[255] **समन्तपासादिका, II, 512.**

[256] **वाटर्स, ऑन युवान-च्वाङ्, II, पृ० 190.**

[257] **लाहा, इंडोलॉजिकल स्टडीज, भाग, II, पृ० 334-35.**

[258] **नीम** Melia Azadirechta Linn **है जो अपनी कठोरता के लिए विश्रुत है तुलनीय, विनय, I, 152; अंगुत्तर, I, पृ० 32; जातक, II, पृ० 105-106.**

[259] **लाहा, होली प्लेसेज ऑव इंडिया, पृ० 2-3.**

[260] **रघुवंश, IV, 36.**

है। यहाँ पर महावीर आये थे। वहाँ पर विजयवद्धमान नामक एक उपवन था।[261]

वरेन्द्र—इसे वरेन्द्री भी कहा जाता है। यह उत्तर बंगाल का नाम था। संध्याकरनंदी द्वारा विरचित रामचरित में इसका उल्लेख है।[262]

बसंतपुर—यह मगध का एक गाँव था।[263] कुछ लोगों ने इसे पूर्णिया जिले में स्थित बसंतपुर नामक गाँव से समीकृत किया है।[264] अपनी रानी धारिणी के साथ जियसत्तु यहाँ शासन करता था।[265]

वेदेह-(विदेह)—कालिदास ने अपने रघुवंश (XII, 26) में इसका वर्णन किया है। यह राज्य एवं राजधानी दोनों का नाम था।[266] विदेह देश आर्यावर्त्त का सब से पूर्वी छोर था। इसकी राजधानी मिथिला थी।

विक्रमशिला—द्रष्टव्य, ज० ए० सो० बं०, V, न्यु०सप्ली०, नं० I, पृ० 1-13.

विश्वामित्र-आश्रम—कुछ लोगों की धारणा है कि यह कौशिकी नदी या आधुनिक कोसी के तट पर स्थित था। रामायण में बतलाया गया है (बालकाण्ड, अध्याय, 26) कि बक्सर का चरित्रवन विश्वामित्र ऋषि का आश्रम था। महाभारत के अनुसार (शल्यपर्व, अध्याय, 43) यह आश्रम सरस्वती नदी के तट पर स्थित था।

पश्चिमी भारत

अगस्त्य-आश्रम—यह आश्रम गढ़वाल में रुद्रप्रयाग से लगभग 20 मील दूर पर स्थित था। कुछ लोगों का मत है कि यह वैदूर्यपर्वत या सतपुड़ा पहाड़ी पर स्थित था।[267]

अनूपनिवृत—कालिदास ने अपने रघुवंश (VI, 43) में इसका उल्लेख किया है जिसकी राजधानी माहिष्मती थी।

---

[261] विवागसूय, 10, 56.

[262] एपि० इं०, XXXII, भाग, VI, अप्रैल, 1958.

[263] सूय निर्युक्ति, II, 6, 190 और आगे।

[264] डिस्ट्रिक्ट गजेटियर, पूर्णिया, 1911, पृ० 185.

[265] आवश्यकचूर्णी, पृ० 334.

[266] रघुवंश XI, पृ० 36.

[267] महाभारत, वनपर्व, अध्याय, 88; लाहा, अर्ली इंडियन मानेस्टरीज, पृ० 6.

अपरान्त—रघु की सेना पश्चिमी-घाट तक भारत के संपूर्ण पश्चिमी समुद्र-तट पर विजय प्राप्त करने के लिये आयी थी।[268]

अशोकतीर्थ—महाभारत के वनपर्व (88.13) में इसका वर्णन है। यह सूर्पारक आधुनिक सोपारा के निकट स्थित है।

भरुकच्छ—चीनी इसे पो-लु-का-चे-पो कहते हैं।

चित्रकूटवन—यह चित्रकूट के समीप एक जंगल था और कालिदास के रघुवंश (XII, 9) के अनुसार यह दण्डकारण्य का एक भाग था।

दण्डक-वन—कालिदास ने दण्डकारण्य का उल्लेख किया है जो कलिंग देश की सीमाओं तक फैला हुआ एक विस्तृत जंगल था।[269] कालिदास के रघुवंश (XII, 15.24; XIII, 47) के अनुसार जनस्थान दण्डकारण्य का एक भाग था। इसकी स्थिति आदि के लिये द्रष्टव्य, ज० बां० ब्रां० रा० ए० सो०, 1917, पृ० 14-15.

दशपुर—कालिदास ने अपने मेघदूत (पूर्वमेघ, 47) में इसका वर्णन किया है।

देवराष्ट्र—इसकी पहचान महाराष्ट्र के सतारा जिले से की जाती है।[270]

द्वारावती—द्रष्टव्य, महाभारत का शान्तिपर्व, CCCXLI, 12955; हरिवंश, CXIII, 6265-66; पार्जिटर द्वारा अनूदित मार्कण्डेय पुराण, पृ० 340, पाद टिप्पणी। कुछ लोगों के अनुसार द्वारका के आसपास का क्षेत्र आनर्त्त कहा जाता था, जब कि अन्य लोगों की धारणा है कि यह बडनगर का परिवर्ती जिला है।[271] कहा जाता है कि राजा शल्व ने द्वारावती पर आक्रमण किया था किंतु कृष्ण ने उसकी हत्या कर दी थी।[272]

एरण्डपल्ल—द्रष्टव्य, एस० के० आयंगर, ऐंश्येंट इंडिया ऐंड साउथ इंडियन हिस्ट्री ऐंड कल्चर, I, पृ० 163. अभी हाल में इसका तादात्म्य विशाखापटनम

---

[268] रघुवंश, IV, 53.

[269] वही, XII, 9.

[270] एस० के० आयंगर, ऐंश्येंट इंडिया ऐंड साउथ इंडियन हिस्ट्री ऐंड कल्चर, I, 163.

[271] लाहा, ट्राइब्स ऑव ऐंश्येंट इंडिया, पृ० 389; बांबे गजेटियर, I, 1, 6.

[272] महाभारत, वनपर्व, अध्याय, 14; पार्जिटर कृत मार्कण्डेय पुराण का अनुवाद, पृ० 349.

जिले के एलमांचिलि और कलिंग नगर के साथ स्थापित किया गया है (वही, पृ० 219)।

जेरखेड—यह महाराष्ट्र में पश्चिमी खानदेश जिले के शतदल तालुक में एक गाँव है। यह ताप्ती की सहायक नदी गोमी के किनारे स्थित है।[273]

कच्छ (आधुनिक कच्छ)—यहाँ के जल-दस्यु समुद्र में जल-पोतों पर डकैती डालते थे।[274]

कौब—साधारणतया इसे गवा या गोआ माना जाता है।[275]

कुंभवती—यह दण्डकी की राजधानी है।[276] कुछ लोगों ने इसे नासिक में स्थित बताया है।

लारान—अल्बेरुनी के अनुसार यह भारत का एक तटवर्ती स्थान है।[277]

महाबल—इसे सतारा जिले में महाबलेश्वर से समीकृत किया जाता है।[278]

मोटा माचियाला—यह महाराष्ट्र में मोटा माचियाला विषय में ऐवरेली से लगभग 6 मील पूर्वोत्तर में स्थित एक गाँव है।

पञ्चवटी—कुछ लोगों ने इसकी पहचान आधुनिक नासिक से की है।[280]

रैवतक पहाड़ी—यह गुजरात में जूनागढ़ के निकट थी। यह प्रभास के पास था।

रामतीर्थ—पां० वा० काणे की हिस्ट्री ऑव धर्मशास्त्र, पृ० 795 भी दृष्टव्य है।

सोमनाथ (सोमेश) तथा सोमनाथदेवपट्टन—एपि० इं०, XXXII में भाग, VII, भी दृष्टव्य।

सुराष्ट्र—यह आधुनिक काठियावाड़ है। युवान-च्वाङ के अनुसार इसकी परिधि 4000 ली से अधिक थी। इसमें 50 से अधिक विहार थे जिनमें 3000

---

[273] **एपि० इं०, XXXII, भाग, III, जुलाई,** 1957.

[274] **अल्बेरुनीज इंडिया, I, पृ०** 208-209.

[275] **टॉलेमी कृत ऐंश्येंट इंडिया, पृ०** 181.

[276] **जातक, III, पृ०** 463.

[277] **लाहा, अल्बेरुनीज नालेज ऑव इंडियन ज्यॉग्रफी, पृ०** 1.

[278] **पद्मपुराण, VI,** 113, 29.

[279] **एपि० इं०, XXXI, भाग, VI, जुलाई,** 1956.

[280] **इंडियन कल्चर, I, पृ०** 584.

से अधिक भिक्षु रहते थे जो अधिकांशतः महायान स्थविर संप्रदाय के थे।[281] कई जैन ग्रंथों में वर्णित बारवी सुराष्ट्र या सुरट्ठ की राजधानी थी।[282]

ऊर्जयत—श्रीनेमि द्वारा इस पर्वत के पवित्रीकरण का उल्लेख कल्पसूय (174, पृ० 182) में हुआ है। इस पर्वत पर जल-प्रपात थे और प्रतिवर्ष लोग यहाँ दावतों का आयोजन करते थे। इस पर्वत पर क्रीड़ाएँ होती थी।[283]

वडनगर—इसकी पहचान आनंदपुर से की जाती है जो जैन मुनियों का केंद्र था।[284] जैन पिण्डनिर-टीका (83, पृ० 31) के अनुसार यह विन्ध्य के समीप स्थित था।

वैजयंत—यह दण्डकवन के क्षेत्र में एक नगर था। रामायण के अनुसार (II, 9, 12-13) कैकेयी के साथ दशरथ इन्द्र की सहायता करने के लिए इस नगर में गये थे और उन्होंने शंबर के क्षेत्र को पराधीन बनाया था।

विन्ध्यपादपर्वत—कालिदास ने अपने मेघदूत (पूर्वमेघ, 19) में इसका वर्णन किया है।

मध्य प्रदेश (भू० पू०, मध्य भारत)*

अचलपुर—इस नगर के समीप कण्हा और बेण्णा नामक दो नदियाँ प्रवाहित होती थी।[285] अचलपुर आभीर में स्थित था।

अर्बुद (जैन अब्बुय)[286]—यह जैनियों की एक पुण्य पहाड़ी है।

आबू—यह अर्बु, 'बुद्धिमत्ता की पहाड़ी' है जिसे प्लिनी द्वारा वर्णित माउंट कैपिटेलिया से समीकृत किया जाता है। यह राजस्थान में सिरोही के दक्षिण में राजपूताना-मालवा रेल-पथ पर आबू रोड स्टेशन से सत्रह मील पश्चिमोत्तर में और बंबई से 442 मील उत्तर में स्थित एक प्रसिद्ध पहाड़ी है। यहाँ पर पाँच

---

* मध्यभारत का प्राचीन प्रांत वर्तमान मध्यप्रदेश, राजस्थान, महाराष्ट्र, गुजरात एवं दक्षिण-पश्चिम उत्तर-प्रदेश में समाविष्ट हैं। —अनूदक

[281] वाटर्स, ऑन युवान-च्वाङ्, II, पृ० 248.

[282] नायाधम्मकहाओ, 5, पृ० 68.

[283] जैन, लाइफ इन ऐंश्येंट इंडिया, पृ० 346.

[284] सूयगडंगचूर्णी, पृ० 253.

[285] आवश्यक-टीका, पृ० 514.

[86] बृहत्भागवत, I, 3150.

मंदिर हैं जिनमें दो विशेषरूप से यथा—विमलशाह का मंदिर एवं वतुपाल तथा तेजपाल का मंदिर उल्लेखनीय है।

बाँगला—एपि० इं०, जिल्द, XXXI, भाग, VII, जुलाई, 1956 द्रष्टव्य।

बार्ले—यह अजमेर से लगभग 7 मील पूरब में स्थित एक गाँव है।[287]

भिलसा—(भैल्लस्वामीपुर)—द्रष्टव्य, एपि० इं०, XXXII, भाग, III, जुलाई, 1957.

बिलैगढ़—यह मध्य प्रदेश के रायपुर जिले में है।[288]

चित्रकूट—इसका वर्णन महाभारत के वनपर्व (85.58) एवं रामायण (II, 54, 28-29, 93.8) में भी हुआ है। वामनपुराण (45, 99) एवं मत्स्य-पुराण (114.25) में भी इसका उल्लेख है।

देवपालपुर—मऊ से 27 मील पश्चिमोत्तर में स्थित अतिसंभवतः यह आधुनिक दिपालपुर है।[289]

दशार्ण—इसे स्थूल रूप से मालवा से समीकृत किया जाता है जिसकी राजधानी विदिशा थी।

दोसरोन—यह दशार्णों द्वारा निवसित क्षेत्र की एक नदी है।[290]

दुगौड—यह ओरछा-टीकमगढ़ मार्ग पर टीकमगढ़ से कोई 15 मील दूर पर स्थित आधुनिक डिगौरा है। ओरछा-टीकमगढ़ का राजकुल डिगौरा, प्राचीन दुगौड़ से आया था।[291]

जुराहखो—1335 ई० में इब्नबतूता यहाँ आया था और उसने इसे खजुर कहा है। उसने झील को लगभग एक मील लंबा बतलाया है जिसके चारों ओर मूर्तियों के मंदिर थे। दसवीं शती ई० के चंदेल राजाओं के मंदिर यहाँ पर बुंदेलखंड के घने जंगलों में निकटतम रेलवे स्टेशन से 85 मील दूर पर पाये जाते हैं।

कुरुद—यह मध्य प्रदेश के रायपुर जिले व तहसील में रायपुर से लगभग 27 मील पूर्वोत्तर में स्थित है।[292]

---

[287] एपि० इं० जिल्द, XXXII, भाग, VII.

[288] एपि० इं०, जिल्द, XXIX, भाग, IV, अक्टूबर, 1951, कल्चुरि प्रतापमल्ल के बिलैगढ़ अभिपत्र।

[289] एपि० इं०, XXXII, भाग, III, जुलाई, 1957.

[290] मैक्रिंडिल, टॉलेमीज़ ऐंश्येंट इंडिया, पृ० 71, मजूमदार संस्करण।

[291] एपि० इं०, XXX, भाग, III, पृ० 89.

[292] वही, XXXI, भाग, VI, अप्रैल, 1956.

मांधाता (मानधातरि या मांधातृदुर्ग)—द्रष्टव्य एपि० इं०, XXXII, भाग, III, जुलाई, 1957.

नर्मदा—विष्णुस्मृति (85.8) में इसका वर्णन है। शतपथ ब्राह्मण (xii, 8.1.17; 9.3.1) के अनुसार इसे रेवा कहा जाता था। इस नदी का वर्णन कालिदास के मेघदूत (पूर्वमेघ, 19) में भी है।

नागह्रद—इसे एकलिङ्गी के समीप नागदा से समीकृत किया जाता है।[293]

निषध—कालिदास ने निषध को बरार के पश्चिमोत्तर में स्थित बतलाया है।[294]

पद्मावती—कुछ लोगों के अनुसार यह पदम-पवाया है जहाँ से कुछ दुर्लभ रजत-मुद्राएँ प्राप्त हुयीं थीं।[295]

पल्ली—यह राजस्थान के जोधपुर में स्थित आधुनिक पालि नामक शहर ही है।[296]

पर्णाशा—यह नदी पारियात्र पर्वत से निकलती है। पर्णाशा या वर्णाशा को चर्मण्वती (चंबल) की सहायक नदी आधुनिक बनास से समीकृत किया जाता है।[297]

पारिपात्रपर्वत—ब्युलर का मत है कि पारिपात्र पर्वत मालवा में विन्ध्य पर्वत माला का एक अंग है।[298]

रखदेव—यह राजस्थान में उदयपुर (रियासत) के मगरा के अंतर्गत् उदयपुर शहर से लगभग 40 मील दक्षिण में और खेरवाड़ा छावनी से 10 मील पूर्वोत्तर में स्थित एक गाँव है। यहाँ पर आदिनाथ या रखभराथ का पवित्र प्रसिद्ध जैन मंदिर है।[299]

---

[293] वही, XXXI, नं० 33.

[294] रघुवंश, XVIII, 1.

[295] जर्नल ऑव द न्युमिस्मेटिक सोसायटी ऑव इंडिया, जिल्द, XVII, 1955, भाग, II.

[296] एपि० इं०, जिल्द, XXXI, भाग, VI, नं० 33.

[297] लाहा, ट्राइब्स ऑव एंश्येंट इंडिया, पृ० 379; पां० वा० काणे, हिस्ट्री ऑव द धर्मशास्त्र, IV, पृ० 789.

[298] सै० बु० ई०, 14, 2, 3, 146, 147; वेदिक इंडेक्स, II, पृ० 126, पा० टि०।

[299] लाहा, होली प्लेसेज ऑव इंडिया, पृ० 53.

रनपुर—राजस्थान में जोधपुर के (रियासत) देसुरी के अंतर्गत् जोधपुर शहर से लगभग 88 मील दक्षिण-पूर्व में और राजपूताना-मालवा रेल पथ के फलना स्टेशन से लगभग 14 मील पूर्व-दक्षिण -पूर्व में स्थित यह एक विख्यात जैन मंदिर है।[300]

रामटेक (रामगिरि)—कालिदास ने अपने मेघदूत (पूर्वमेघ, I) में रामगिरि का वर्णन किया है जिसकी पहचान रामटेक से की जाती है।

शंबूक-आश्रम—यह नागपुर के उत्तर में रामटेक में था। शंबूक तपस्या करने वाला एक शूद्र था और इसीलिए राम ने उसका वध किया था।

शिप्रा—इस नदी को विशाला भी कहते थे।[301] इस नदी के तट पर उज्जयिनी नगर स्थित था।[302]

श्रीपुर—अधिक उल्लेखों के लिए द्रष्टव्य, एपि० इं०, जिल्द, XXXI, भाग, VII, जुलाई, 1956.

तुंबवन—यह जैन वज्रस्वामी का जन्म स्थान था।[303] यह अवन्ती में स्थित था।

उदयगिरि—उदयगिरि की गुहाओं एवं उनके स्थापत्य की विशेषताओं का पूर्ण विवरण विक्रम वाल्यूम, 1948, पृ० 377 और आगे पर प्रकाशित डी० आर० पाटिल के निबंध "द मानुमेंटस ऑव उदयगिरि हिल्स" में दिया गया है।

उज्जैन—कालिदास ने परोक्षतः उज्जयिनी का उल्लेख किया है जहाँ पर महाकाल का मंदिर था।[304]

वैराट—वैराट के जैन मंदिर में ऊँची दीवाल से परिवृत्त एक आयताकार उन्मुक्त प्रांगण और पूर्व में प्रवेशद्वार के सम्मुख सुंदर नक्काशीदार खंभों का एक अलिंद है। आँगन की दक्षिणी दीवाल में भीतर की ओर एक विशाल उत्कीर्ण पट्ट था जिसे सर्वप्रथम डा० दे० रा० भंडारकर ने देखा था। वैराट अशोक के ज्ञात अकेले शिला पट्ट अभिलेख, जिसे भाब्रू शिलालेख कहते हैं, के लिए प्रसिद्ध हैं, जो एसियाटिक सोसायटी, कलकत्ता में सुरक्षित है।

---

[300] लाहा, होली प्लेसेज ऑव इंडिया पृ० 54.

[301] मेघदूत, पूर्वमेघ, 27-29.

[302] मेघदूत, पूर्वमेघ, 27, 29, 31.

[303] ज० चं० जैन, लाइफ इन ऐंश्येंट इंडिया, पृ० 344.

[304] रघुवंश, VI, 32; 36. विस्तृत विवरण के लिए विक्रम वाल्यूम (1948), पृ० 281 और आगे भी द्रष्टव्य।

वशिष्ठ-आश्रम—कुछ लोगों ने इस आश्रम को बरिपद से 32 मील दूर कुतिंग में स्थित बतलाया है।[305]

वेदिस (विदिशा)—इस प्राचीन नगर को कालिदास ने मेघदूत के पूर्वमेघ (24-25) के माध्यम से अमर बना दिया है। जैन अनुयोगद्वार (30, पृ० 137) में इसका वर्णन वैदिश के रूप में हुआ है।

विदर्भ—कालिदास ने अपने रघुवंश (V, 39; VII, 2, 13, 20) में इसका वर्णन किया है जिसके ऊपर भोजवंश का शासन था। अपने सूयगडंग-चूर्णी में (पृ० 240)। जैनियों ने इस देश का उल्लेख किया है (पृ० 240)।

विन्ध्य—वशिष्ठ धर्मशास्त्र (I,9) में विन्ध्य पर्वत को आर्यावर्त की दक्षिणी सीमा बतलाया गया है। विन्ध्य पर्वत, जिसे जैन जंबुद्दीवपण्णति में वैताढ्य कहा गया है, भारत को दो भागों में विभक्त करता है : उत्तरार्ध जिसे आर्यावर्त्त कहते हैं और दक्षिणार्ध जिसे बाद में दक्षिणात्य कहा गया है।[306] यह वशिष्ठ-धर्मशास्त्र में प्राप्त वर्णन से असंगत है।

---

[305] एपि० इं०, XXV, भाग, IV, अक्टूबर, 1939.

[306] I, 12. भारहे वासे वेय्यढढे नामम पव्वये; पण्णत्तेः उत्तरद्ध भारहवासस्स दहिणेणम दहिणभरहवासस्स उत्तरेणम।

VII

पारिभाषिक शब्द

A

Ambassador	राजदूत
Accredited	प्रत्यायित
Acute Angle	न्यूनकोण
Arched	मेहराबदार, डाटदार
Apex	शीर्ष, चोटी, शिखर
Aisles	परिक्रमा-पथ, पार्श्व
Autonomous	स्थायत्तशासी (गणतंत्र-जन)
Ally	संश्रित राष्ट्र
Archer	धनुर्धर
Architecture	वास्तुकला, स्थापत्य, वास्तु-शिल्प
Astronomers	ज्योर्तिविद
Altitude	ऊँचाई, उन्नतांश
Afluent (River)	सहायक सरिता
Abacus	शीर्ष-फलक, फलक
Antechamber	उपकक्ष, उपशाला
Architectural	स्थापत्य संबंधी
Artisan	दस्तकार, कारीगर
Arched-roof	डाटदार छत
Arch	चाप, डाट, मेहराब
Agent	अभिकर्त्ता

B

Base	आधार, पेंदा
Bed (River)	नदी-तल
Bead	मनके

Bas relief	अध्युच्चित्र
Bay	खाड़ी
Buffer state	अन्तःस्थ राज्य
Balustrade	जंगला, वेदिका
Bulla	बुल्ला
Bulge	उभार
Bolts	काबले
Back-doors	पृष्ठद्वार
Bowl	कटोरा
Boulder	गोलाश्म, गोला पत्थर
Belt	कटिबंध, मेखला

C

Coast	समुद्र-तट
Cosmology	संसृति-विज्ञान
Convex	उत्तल
Consumer	उपभोक्ता
Coast-line	तटरेखा
Circular Arc	वृत्ताकार चाप
Convexity	उन्नतोदरत्व
Corridor	गलियारी, संपथ
Cones	शंकु
Creed	पंथ, मत
Causeway	सेतु
Constituted	गठित
Cluster	झुंड, गुच्छा
Course (River)	प्रवाह-पथ
Confines	परिरोध
Compendia	सार-संग्रह, संग्रह
Chronicle	इतिवृत्त
Confederation	प्रसंघक-कुल, गण, संघ
Clan	कुल
Corporation	पौरसंघ, निगम

Chapel	पूजागृह
Commodity	माल, पण्य
Compilation	संकलन
Circular	वृत्ताकार
Charter	शासपत्र
Cell	कोशिका
Cells	कोठरी
Capital	शीर्ष
Crystaline	मणिभ
Cliff	भृगु चट्टान, खड़ी चट्टान
Craftsman	शिल्पी
Classic	अभिजात
Cubical	घातीय

D

Delta	डेल्टा
Diameter	व्यास
Door-jamb	चौखट का बाजू
Detached	विश्लिष्ट, पृथक
Dysentry	पेचिश
Document	दस्तावेज, प्रलेख
Duties	उत्पादन-शुल्क
Doab	दोआब
Dome	गुंबद
Delegates	प्रतिनिधि
Depression	धसकन
Drainage	जलनिस्तारण-प्रणाली
Design	नमूना

E

Endowment	धर्मस्व, धर्मदाय
Equilateral triangle	समबाहु त्रिभुज
Epigraphical	पुरालेख संबंधी, पुरालिपि संबंधी
Ethnography	मानवजाति-शास्त्र

Emporium	पण्यशाला, मंडी, भंडार
Enclosure	अहाता, घेरा, बाड़ा
Etymology	व्युत्पत्ति
Elevation	उठान, उत्थापन
Equilateral	समबाहु
Estuary	सागर-संगम, वेलासंगम
Edge	किनारा
Edit	संपादन करना

F

Fossiliferrous	प्रस्तरिल तल, जीवाश्म युक्त
Floral designs	फुलकारी
Fall (of a river)	उद्गम
Foot hills	तराई
Fault	भ्रंश, विभंग
Fold	स्तरभ्रंश
Fresco	भित्ति चित्र
Facade	मुहार
Forearms	प्रबाहु, हाथ
Fork	द्विशाख भूमि, दुशाख-भूमि, काँठा
Flat	सपाट, चपटा मैदान
Frontier	अंतस्थ
Foot-track	पगडंडी
Foot	पाद

G

Granite	स्फटिक प्रस्तर, ग्रेनाइट, कणाश्म
Gorge	कृशधारायुक्त दर्रे, नदकन्दर, तंगघाटी
Glacier	हिमनद
Gate	द्वार, फाटक, कपाट
Geographical area	भौगोलिक क्षेत्र
Gulf	खाड़ी, आखात
Gallery	दीर्घा
eGological time	भू-वैज्ञानिक काल

Guild	श्रेणी
Governor	राज्यपाल
	H
Hall	हाल, महाकक्ष
Hordes	ओर्दु
Highway	राजपथ, महापथ
Horizontal line	पड़ी रेखा
Hamlet	पल्ली
Harbour	बन्दरगाह, पत्तन
Handbook	पुस्तिका
Heretical	विधर्मी
Heresy	अपधर्म
Heterodoxy	वामपंथी
	I
Island	द्वीप
Inverted angle	उलटा त्रिभुज
	J
Jaundice	पांडुरोग
	K
Khondalite	खोंडलाइट
	L
Lime stone	चूर्ण प्रस्तर
Laterite	मखरला
Lapis-lazuli	लाजावर्द
Label	लेखपाल, नाममत्र
Legend	आख्यान
Lower	अवर, निचला
Lily seeds	खाद्य-कुमुदिनी
	M
Mesozoic	मध्यजीवकल्पीय
Metamorphic	परिवर्तनशील चट्टान
Manner	शिष्टाचार

Mythological	पौराणिक
Meridian of longitude	देशांतर कयाम्योत्तर
Mortar	गारा, मसाला
Moulding	ढलाई, गढ़ाई
Medal	लामबंदी, युद्धसन्नाह पदक
Metal-road	पक्की सड़क
Merchandize	व्यापारिक माल
Mines	खान

N

Nux-vomica	कुचला

O

Official	सरकारी, अधिकारिक, राजकीय
Oblong	आयताकार
Overseas	समुद्रान्तर, समुद्रपार
Onyx	सुलेमानी पत्थर
Octagonal	अठपहल, अष्टभुज, अष्टकोणीय

P

Palaeozoic	पुराजीवकल्पीय
Plateau	पठार
Postern	पृष्ठद्वार
Primogeniture	ज्येष्ठाधिकार
Polish	ओप
Plate	फलक
Peninsula	प्रायद्वीप
Plaster	पलस्तर
Painting	चित्रकला, चित्रण
Polished	ओपदार
Perpendicular	लंबवत्
Pedastal	पादपीठ, आधार
Pillar	स्तंभ,खंभा
Portico	ओसारा, प्रमुख, ड्योढी
Porch	द्वार-मंडप

Pottery	मृद्मांड
Perforated Pottery	छिद्रिल मृद्भांड
Producer	उत्पादक
People	जन, लोग
Pent-roof	एक ओर ढालू छत
Punch Marked Coins	आहत मुद्राएँ
Pinnacled Buildings	कलश-मंडित भवन, कंगूरेदार भवन

Q

Quadrilateral	चतुर्भुज
Quadrangular	चतुःष्कोणीय
Quarter	चतुर्थक

R

Ridge	कूटक
Rock	शिला
Rock island	शैल द्वीप
Reptile	सरीसृप
Railing	वेदिका
Recite	पाठ
Rhomoboid	संप्रतिभुज
Relief	उच्चित्र
Rock salt	खनिज नमक
Race	प्रजाति
Royalty	अधिशुल्क
Roof	छत, पृष्ठ
Reclamation	भूमि उद्धरण
Rib	मेहराबदार छत की डाट
Relic-casket	अस्थि मंजूषा
Region	प्रदेश, क्षेत्र, इलाका
Rock-basin	चट्टानी तलैय्या
Relevant data	संबद्ध दत्त सामग्री

S

Supplement	परिशिष्ट

Sheets (of water)	जल-विस्तार
Shelf	परिकक्ष
Shaft	नाल
Stucco	गचकारी, गच
Statue	मूर्ति
Shrub	झाड़ी
Spire	शिखर
Support	अवलंब
Strip	पट्टी
Slab	पटिया, शिलापट्टी
Sub-himalayan	अधःहिमालय
Sepulchural	समाधि-परक
Stone	बालुकाश्म, बलुआ पत्थर
Sculpture	मूर्तिकला
Scroll	मरगोल
Sovereignty	प्रभुसत्ता
Sedimentary origin	कल्कयुक्त उत्पत्ति वाले
Steep	दुरारोह, ढालू, सीधा ढाल, खड़ा ढाल
Spurs	पर्वत-प्रक्षेप
Subordinate servants	अधीनस्थ कर्मचारी, अनुचर
Sediment	अवसाद, तलछट
Sandy	रेतीला
Supersede	अधिक्रमण करना
Set of	कुलक
Square	वर्गाकार
Shrine	चैत्य, गर्भगृह

T

Tangential thrust	स्पर्शरेखीय संभंग
Tertiary	तृतीय जीवकल्प
Tope	स्तूप
Trap	फंदा
Table land	अधित्यका, उच्चसम भूमि, पठार

Triangular — त्रिभुजाकार
Topography — स्थानवृत्त
Topographical — स्थानवर्णन संबंधी
Triangle — त्रिभुज, त्रिकोण
Tectonic — विर्वतनिक
Threshold — देहली, प्रवेशद्वार
Transfer (of property) — हस्तान्तरण
Terracotta plaques — मृण्फलक
Towers — अट्टालक, बुर्ज
Territorial division — क्षेत्रिक संभाग
Tribe — जन, कबीला
Tribal — जन या कबीले से संबंधित
Typical — प्रकारात्मक

U

Unequal quadrilateral — विषम चतुर्भुज
Upper — ऊपरी, उच्चतर

V

Vassal — सामन्त
Vase — कलश
Vaults — मेहराब
Verandah — बराम्दा
Votive label — पूजापरक लेपपत्र या नामपत्र
Vinegar — सिरका

W

Wall — दीवाल
Watch tower — प्रहरी स्तंभ
Wing — पक्ष, स्कंघ, बाजू

Z

Zone — प्रदेश

शब्दानुक्रमणिका

अ

ख

घ

च

थ

द

फ

ब

य

ल

व

श

स

ह